

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया सुधाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्-

॥ श्री-स्थानाङ्गसूत्रम् ॥

STHANANG
SŪTRAM

(तृतीयो भागः)

नियोजक

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-
पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

प्रकाशकः

मद्रासनिवासी-श्रीमान् सेठ श्री-खीवराजजी सा. चोरडिया
तत्प्रदत्त - द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथमा-आवृत्ति
प्रति १२००

वीर-संघत्
२४२१

विक्रम-संघत्
२०२१

ईसवीसन
१९६५

मूल्यम्-रु० २५-०-०

भगवानु ठेकाणुं :
श्री अ. ला. प्रवे. स्थानकेवासी
नेन शास्त्रोद्धार समिति,
ठे. गरेडियाकुवा रोड,
राजकोट, (सौराष्ट्र).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्र कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्र इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्यः ३. २५=००

प्रथम आवृत्ति : अत १२००
वीर संवत् : २४६१
विक्रम संवत् २०२२
धसवीसन १९६५

: मुद्रक :
भण्डिलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धीकांटा रोड, अमदावाद.

आद्यमुखीश्री



श्रीमान् सेठश्री खीमराजजी सा. चोरडिया

श्रीमान् सेठ श्री खीमराजजी सा. चोरडियाका संक्षिप्त जीवन चरित्र

संसारके विशाल प्रांगणमें कार्यरूपी क्रीडा करते हुए धिरलेही पुरुष असीमें सफलताके भागी बनते हैं। दानवीर महोदय श्रीमान् खीमराजजी साहब, चोरडिया उन उन्नायकोंमें से है, जिन्होंने अपनी सुकार्यदक्षता एवं सुव्यवस्थासे, अच्छी उन्नति की।

आपका जन्म सं. १९७१ मिति आसोज सुदि ९ को हुआ। आपकी निवास नागोरके समीप चन्दावतोंका नोखा है। इस नोखा गांवके नवनिर्माणमें चोरडिया परिवारका महत्वपूर्ण योग रहा है। आपके पिता स्व० श्रीमान् सीरे-मलजी साहब चोरडियाका आप पर धार्मिकताका अच्छा असर पडा। बचपनसे ही आप प्रतिभाशाली छात्रोंमेंसे थे। अतः स्वल्प समयमेंही शिक्षा समाप्त कर व्यापारक्षेत्रमें उतर पडे जिसमें से आरने अच्छी सफलता प्राप्त की। पिताके स्वर्गवासके पश्चात् आप मद्रास चले गये। आपकी वैज्ञानिक बुद्धिके कारण थोड़ेही दिनोंमें इस कार्यमें कुशलता प्राप्त कि "खीमराज मोटर्स-जिसमें वेड-फोर्ड ट्रक, एम्बेसडरकार टेम्पो, ओटोरिक्शा और वेल्या स्कुटरकी एजेन्सियां हैं। आपने अपने जीवनमें व्यवसायिक कार्योंमें अतिशय उन्नति की। आप मद्रासके एक प्रभुत्व श्रीमन्त व्यवसायी हैं।

आप स्थानकवासी जैन धर्मानुयायी एवं उदार धर्मप्रेमी सज्जन हैं। सार्वजनिक जनहितके कार्योंमें पूरी दिलचस्पी रखते हैं। उदारचेता है। साहित्य-रसिक होनेके साथ साथ धार्मिक नित्यनियम व व्रत, उपवास आदि तपश्चर्यामें भी अच्छी रुचि रखते है।

जैन हाइस्कूलमें २१००)की लागतका एक हॉल बनवाकर अपने अपनी शिक्षाप्रेमका अच्छा परिचय दिया। आपकी ओरसे मद्रासमें 'खीमराज डीस्पें-

न्सरी चलती है। नोखामें दूसरे सज्जनोंकी मददके साथ 'सिरेमल जोरावर-मल' 'हेल्थसेन्टर' चल रहा है। दानकी ओर आपका झुकाव इतना अधिक है कि कोई भी व्यक्ति किसी प्रकारकी सहायताके लिये आपके पास पहुंचता है तो वह निराश नहीं लौटता है। आप जहां वही भी जाते हैं वहांकी संस्थाओंको कुछ न कुछ सहायता जरूर करते हैं। विद्यादानमें आपकी ओरसे हजारों रुपये लगते हैं। कई छात्रालयोंको आपकी ओर आर्थिक सहायता मिलती है।

जैन साहित्य प्रकाशन कार्यमें आपकी बड़ी दिलचस्पी है। कई ग्रन्थोंके प्रकाशनमें आपका आर्थिक सहयोग रहा है। आगम प्रकाशनकी जब आपसे चर्चा की गई तो आपने स्वयमेव पांच हजार रुपयेकी महान सहायता प्रदान करनेकी उदारता प्रगट की।

आप स्वयं धर्म प्रवृत्त हैं और धार्मिक कार्योंमें तन मन व धनसे सदा आगेवान रहते हैं। यही कारण है कि स्थानकवासी समाजमें और ओसवाल समाजमें आपका नाम सर्वोपरि आगेवान पुरुषोंमें बड़े सन्मानके साथ आता है। समाजसुधार तथा जन जागृतिके कामोंमें आपकी अच्छी रुचि है।

आपने अ० भा० स्वे० स्था० शास्त्रोद्धार समितिको आगम प्रकाशनके हेतु ५०००) रुपया प्रदान कर स्थाईसदस्यता स्वीकार की है, अतः समिति आपका हार्दिक आभार मानती है।

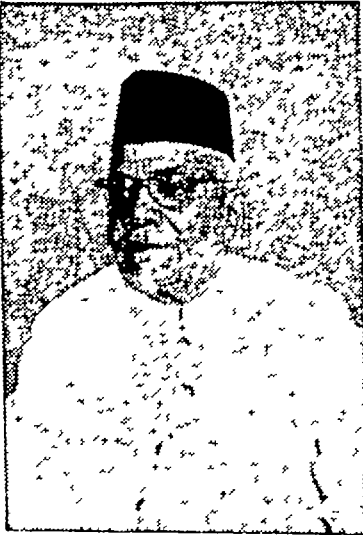
આદ્યમુરખીશ્રીઓ



શ્રી શાંતિલાલ મંગલદાસભાઈ
અમદાવાદ



(સ્વ) શ્રી શામળભાઈ વેલળભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ



શ્રી રામળભાઈ શામળભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ) શ્રી હરખચ દ કાલીદાસ વારિયા
ભાણવડ.



(स्व) शेठश्री धारशीलाध चवणुलाल
बारसी.



डोडारी हरगोविंद जेयंदलाध
राजकोट.



(स्व) शेठश्री दिनशलाध कांतिलाल शाह
अमदावाद.



स्व. शेठश्री आत्माराम भाळुकुलाल
अमदावाद.

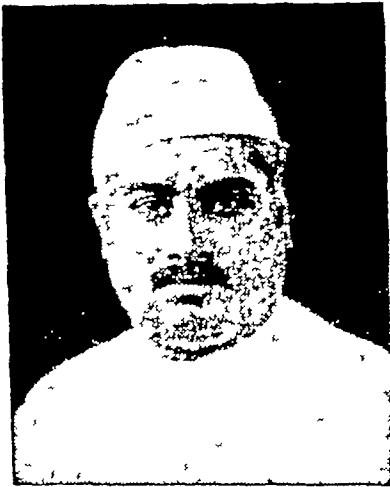
આઘમુરખીશ્રીઓ



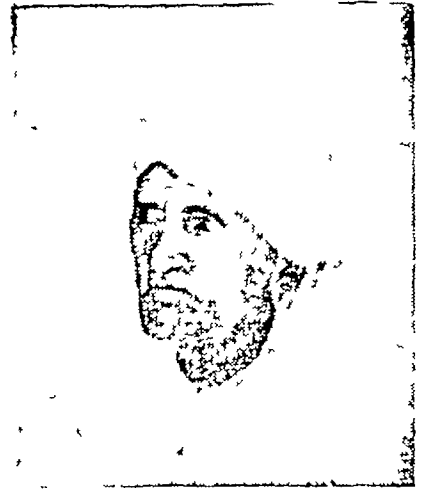
(સ્વ.) શેઠશ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ



(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ



ગ્રહશ્રી જ્ઞેસિંગભાઈ પોચાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



સ્વ. શ્રીમાન્ શેઠશ્રી સુકનચંદ્ર સા.
બાલિયા પાલીમારવાડ.

આત્મચરિત્રશ્રીઓ



- ૧ વચ્ચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન્ મૂલચંદ્રજી
જવાહીરલાલજી ખરડિયા
- ૨ ખાબુમા બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી ખરડિયા
- ૩ ઉભેલા સૌથી નાનાભાઈ પૂનમચંદ ખરડિયા

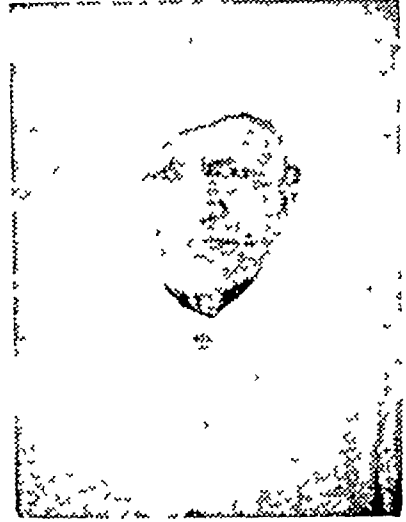


શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી લાલચંદ્રજી સા. લુષ્ટિયા
તથા શેઠશ્રી જ્વંતરાજજી લાલચંદ્રજી સા

આધમુરખીશ્રીઓ



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી



શ્રી વૃજ્ઞાલ દુર્લભ પારેખ
રાજકોટ.



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
ખંભાત.



વચ્ચે બેઠેલા
લાલાજી કિશનચંદજી સા જોહરી
ઉભેલા સુપુત્ર ચિ મહેતાખચંદજી સા. જૈન
નાના - અનિલકુમાર જૈન (દોષતા)



स्व. शेठ ताराचंदजी साहेब गेलडा
मद्रास.

श्री स्थानाङ्गसूत्र भा. तीसरे की
विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क

विषय

पृष्ठाङ्क

स्था. ४ तीसरा उद्देश

| | | |
|----|--|---------|
| १ | उदकदृष्टान्तसे चार प्रकारके भावोंका निरूपण | १-५ |
| २ | पक्षीके दृष्टान्तसे चार प्रकारके पुरुषजातका निरूपण | ५-१४ |
| ३ | दृष्टान्त सहित पुरुषजातका निरूपण | १४-१६ |
| ४ | दृष्टान्त सहित श्रमणोपासकके आश्वास-विश्राम का निरूपण | १७-२५ |
| ५ | फिरभी पुरुष विशेषका निरूपण | २५-३२ |
| ६ | भावसे जीवोंका निरूपण | ३२-३४ |
| ७ | छेश्या का निरूपण | २५-३६ |
| ८ | यानादिके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ३६-४३ |
| ९ | युग्म-वृषभादि के दृष्टान्तसे दार्ष्टान्तिक पुरुषजात का निरूपण | ४४-४६ |
| १० | सारथीके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ४७-५१ |
| ११ | गजके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ५२-५६ |
| १२ | पुष्पके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ५६-५७ |
| १३ | जातिसम्पन्नादि पुरुषजातका निरूपण | ५८-६६ |
| १४ | चार प्रकारके फलके स्वरूपका निरूपण | ६६-६८ |
| १५ | चार प्रकारके पुरुषजातका निरूपण | ६८-७८ |
| १६ | चार प्रकारके आचार्यके स्वरूपका निरूपण | ७९-८३ |
| १७ | निर्ग्रन्थके स्वरूपका निरूपण | ८३-८८ |
| १८ | श्रमणोपासकके स्वरूपका निरूपण | ८८-९२ |
| १९ | महावीरस्वामीके श्रमणोपासकोंके सौधर्म कल्पस्थित अरुणाभ त्रिमानकी स्थितिका निरूपण | ९३- |
| २० | मनुष्यलोकमें देवोंके आगमन-आना और अनाग- मन्-नहीं आनेके कारणोंका निरूपण | ९४-१०८ |
| २१ | लोकान्धकार-एवं लोकोद्धोत के कारणोंका निरूपण | १०८-११३ |

| | | |
|----|---|---------|
| २२ | दुःस्थित साधुकी दुःखशय्या और सुस्थित साधुकी सुखशय्याका निरूपण | ११४-१३१ |
| २३ | चार प्रकारके पुरुषजात विषयक चौदह चतुर्भङ्गीका निरूपण | १३२-१५७ |
| २४ | कन्यकके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | १५८-१७६ |
| २५ | अप्रतिष्ठान आदि नरकोंका आयाम और विष्कम्भसे साम्य का निरूपण | १७६-१७९ |
| २६ | ऊर्ध्व-अधस्तीर्यग्लोकके द्विशरीरि जीवोंका निरूपण | १७९-१८३ |
| २७ | हीसत्व-आदि चार प्रकारके पुरुषजातका निरूपण | १८३-१८५ |
| २८ | चार प्रकारके अभिग्रहका निरूपण | १८५-१८९ |
| २९ | चार प्रकारके शरीरका निरूपण | १८९-१९३ |
| ३० | चार प्रकारके अस्त्रिकायसे उत्पद्यमान वादरकायसे लोकरूपत्वका निरूपण | १९३-१९७ |
| ३१ | चतुर्विध अस्तिकायादिकोंका प्रदेशाग्रतुल्यत्व आदिका निरूपण | १९८-१९९ |
| ३२ | पृथिवीकाय आदि चारोंका सूक्ष्मशरीरके अदृश्यत्व का निरूपण | १९९-२०३ |
| ३३ | जीव और पुद्गलके गतिधर्मका निरूपण | २०३-२०५ |
| ३४ | दृष्टान्तके भेदों का कथन | २०६-२५८ |
| ३५ | अधोलोक-ऊर्ध्वलोकमें रहे हुवे अन्धकार और उद- द्योत के कारणोंका निरूपण | २५९-२६१ |
| | चौथे स्थानका चौथा उद्देशः— | |
| ३६ | प्रसर्पकोंका निरूपण | २६२-२६५ |
| ३७ | नारकोंके आहारका निरूपण | २६५-२६६ |
| ३८ | तिर्यक्-मनुष्य-और देवोंके आहारका निरूपण | २६६-२६९ |
| ३९ | आशीविष-सर्पों के स्वरूपका निरूपण | २६९-२७२ |
| ४० | व्याधिके भेदों का निरूपण | २७३-२७७ |
| ४१ | चिकित्सकके स्वरूपका निरूपण | २७७-२८८ |
| ४२ | व्रण आदि-दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | २८९-२९९ |
| ४३ | क्रियावादी वगैरह तीर्थिकोंके स्वरूपका निरूपण | ३००-३०३ |
| ४४ | मेघके-दृष्टान्त द्वारा पुरुषजातका निरूपण | ३०३-३१८ |

| | | |
|----|--|---------|
| ४५ | करण्डकके दृष्टान्तसे आचार्यादिकोंका निरूपण | ३१८-३२० |
| ४६ | वृक्षके दृष्टान्तसे आचार्यके स्वरूपका निरूपण | ३२२-३२५ |
| ४७ | मत्स्यादिके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ३२६-३२७ |
| ४८ | क्षुद्रप्राणियोंका निरूपण | ३३७-३४० |
| ४९ | पक्षीके दृष्टान्तसे भिक्षुकका निरूपण | ३४०-३४१ |
| ५० | पुरुषजातका निरूपण | ३४१-३४८ |
| ५१ | चार प्रकारके दिव्यादि संवासका निरूपण | ३४८-३५२ |
| ५२ | अमुरादि चार प्रकारके अपध्वंसका निरूपण | ३५३-३६३ |
| ५३ | प्रब्रज्याके स्वरूपका निरूपण | ३६३-३७५ |
| ५४ | सज्ञाके स्वरूपका निरूपण | ३७५-३७८ |
| ६५ | कामके स्वरूपका निरूपण | ३७९-३८० |
| ५६ | उदकके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ३८१-३९२ |
| ५७ | कुम्भके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण | ३९२-४०५ |
| ५८ | उपसर्गके स्वरूपका निरूपण | ४०६-४१३ |
| ५९ | कर्म विशेषका निरूपण | ४१३-४१८ |
| ६० | चार प्रकारके संघके स्वरूपका निरूपण | ४१८-४२१ |
| ६१ | चार प्रकारकी बुद्धिके स्वरूपका निरूपण | ४२१-४३२ |
| ६२ | जीवके स्वरूपका निरूपण | ४३२-४३५ |
| ६३ | जीवके अन्तर्गत पुरुषविशेषका निरूपण | ४३६-४४१ |
| ६४ | द्वीन्द्रिय जीवोंको असमारममाण और समारममाण के संयमासंयमका निरूपण | ४४२-४४४ |
| ६५ | नैरयिक जीवोंकी क्रियाका निरूपण | ४४५-४४६ |
| ६६ | क्रियावान् जीवका विद्यमान गुणोंका नाश और अवि- द्यमान गुणोंका प्रकट होनेका कथन | ४४६-४५२ |
| ६७ | धर्मद्वारका निरूपण | ४५२-४५३ |
| ६८ | नारकत्वादिके साधनभूत कर्म द्वारका निरूपण | ४५४-४५८ |
| ६९ | वाद्यादिके भेदोंका निरूपण | ४५९-४६७ |
| ७० | सनत्कुमारादिकोंके विमानोंके स्वरूपका निरूपण | ४६८-४७१ |
| ७१ | जलगर्भका निरूपण | ४७२-४७४ |
| ७२ | मानुषीके गर्भका निरूपण | ४७५-४७८ |
| ७३ | चार प्रकारके काव्योंके स्वरूपका निरूपण | ४७९-४८० |

| | | |
|-----|--|---------|
| ७४ | समुद्घातके स्वरूपका निरूपण | ४८१- |
| ७५ | लब्धि के स्वरूपका निरूपण | ४८२- |
| ७६ | भगवान् महावीरके पूर्वधरोंका निरूपण | ४८३ |
| ७७ | कल्पोंके स्वरूपका निरूपण | ४८४- |
| ७८ | समुद्ररूप क्षेत्रका निरूपण | ४८५-४८६ |
| ७९ | कपायोंके स्वरूपका निरूपण | ४८६-४९० |
| ८० | कर्मपुद्गलोंके चयनादि निमित्तोंका निरूपण पांचवें स्थानका पहला उद्देशा | ४९१-४९४ |
| ८१ | पांच प्रकारके महाव्रतोंका निरूपण | ४९५-५०३ |
| ८२ | वर्णादिका निरूपण | ५०४-५११ |
| ८३ | संयमके विषयभूत एकेन्द्रिय जीवोंका निरूपण | ५११-५१४ |
| ८४ | अवधिदर्शनके क्षोभके कारणोंका निरूपण | ५१४-५२१ |
| ८५ | केवलज्ञान दर्शनमें क्षीय न होनेका निरूपण | ५२१-५२२ |
| ८६ | नैरयिक आदिकोंके शरीरका निरूपण | ५२२-५३० |
| ८७ | शरीरगतधर्मविशेषका निरूपण | ५३०-५५२ |
| ८८ | निर्ग्रन्थोंको महानिर्जरादिकी प्राप्तिके कारणका निरूपण | ५५२-५५६ |
| ८९ | आज्ञाके अविराधनके कारणका निरूपण | ५५६-५६१ |
| ९० | पांच प्रकारके विग्रहस्थानका निरूपण | ५६२-५६८ |
| ९१ | विषयादि स्थानोंका निरूपण | ५६९-५७१ |
| ९२ | देवोंके पांच प्रकारका निरूपण | ५७१-५७२ |
| ९३ | देवोंके परिचारणाका निरूपण | ५७३-५७५ |
| ९४ | देवोंके अग्रमहिपियोंका निरूपण | ५७५- |
| ९५ | चमरेन्द्रादिकोंके अनीक और अनीकाधिपतियोंका निरूपण | ५७६-५८४ |
| ९६ | प्रतिघातका निरूपण | ५८५-५८८ |
| ९७ | उत्तरगुणोंके भेदोंका निरूपण | ५८८-५८९ |
| ९८ | परीषह सहनेका निरूपण | ५९०-६०२ |
| ९९ | हेतु और अहेतुके स्वरूपका निरूपण | ६०२-६१० |
| १०० | तीर्थकरोंके चयनादिका निरूपण | ६१०-६१८ |

शुद्धि पत्र

सुज्ञ पाठकगण

सन्निवय निवेदन है कि शास्त्रोंमें मुफ और प्रिटिंग सम्बन्धी कंई गलती होना संभवित हैं, जो सुज्ञ वाचकवृन्द नीरक्षीर न्याय से समझ कर पढलेगे, पर जो शास्त्रीय गलती रह गई है जो देखनेमें अगर सुज्ञ वाचकजन द्वारा दृष्टि-गोचर हुई हैं, इनका शुद्धिपत्र देनेमें आता है।

| सूत्रका नाम | पृ. | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|--------------------------------|-----|--------|--|---|
| समवायङ्ग सूत्र | १६४ | ५ | राः खलु बलदेवो द्वादश वर्ष सहस्राणि सर्वायुषं | रामः खलु बलदेवो द्वादश वर्षशतानि सर्वायुषं |
| ” | ” | १६ | वारह हजार वर्ष-वारहसौ वर्ष | |
| ” | ” | २८ | १५२२ वर्ष— | १५२२ वर्ष |
| ज्ञातधर्मकथाङ्ग सूत्र भा. २ | २६१ | १ | पहली पंक्ति पूरी होने पर | त्रैमासिकीं पद छूट गया है सो त्रैमा- सिकीं यह पद बढाकेपढे’ आठवीं भिक्षुप्रतिमाके अनन्तर प्रथम सात- दिकरात प्रमाणवाली नववीं भिक्षुप्रतिमा यह पाठ छूटा है सो ‘नववीं भिक्षु पडिमा’ वहां इतना झोडके पढें |
| ज्ञातधर्म कथाङ्गसूत्र भा. ३ | ३९७ | १७ | प्रवचनसिद्ध | प्रवचनविरुद्ध |
| ” | ” | २१ | प्रवचनसिद्ध | प्रवचनविरुद्ध |

| | | | | |
|----------------------------|--------|-----|-------------------------------------|-------------------|
| ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. २ | | १४७ | १७ मद्यपानमें आतक्त-निद्राजनक | |
| " " | | | द्रव्यमें आसक्त | |
| " " | | १४७ | २६ मद्यपानभां - निद्राजनक | द्रव्य |
| | | | आसक्त | भां आसक्त |
| ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. ३ | ३३४ | ३ | भगवताऽऽव्यक्त-भगवताऽनुयोगद्वारे | |
| ज्ञातधर्मकथाङ्ग भा. ३ | ३३४ | १७ | आवश्यकसूत्रमें अनुयोगद्वारसूत्रमें | |
| " " | | १६ | आवश्यकसूत्रभां अनुयोगद्वार सूत्रभां | |
| अन्तकृद्दशाङ्गसूत्र | २९५ | १० | दसदस | दसअष्ट |
| अन्तकृद्दशाङ्गसूत्र | २९५ | ११ | | सत्तमत्रग्गे तेरस |
| | | | | उद्देसगा, इतना |
| | | | | पाठ छूट गपाहै |
| | | | | सो वहां समझ |
| | | | | लेवें |
| आचारांगसूत्र भा. २ | १२२ | ८ | नेत्त परिष्णाणा | नेत्तपरिष्णाणा |
| | | | अपरिहीणा फरस- | अपरिहीणा जीह |
| | | | परिष्णाणा अपरि | परिष्णाणा अप- |
| | | | हीणा | रिहीणा फरिस- |
| | | | | परिष्णाणा |
| | | | | अपरिहीणा |
| आचारांग सूत्र भा. २ | २८१ | १४ | निगानवे | अट्टानवे |
| " | | २६ | न०वाणु | अट्टाशुं |
| दशाश्रुतस्कंध | ४३० | २० | कालकरके | कालकरके |
| | | | त्रैवेयक आदि | देवलोकमें से |
| दशाश्रुतस्कंध | ४३० | २६ | काल करीने | काल करीने |
| | | | त्रैवेयकआदि | देवलोकभांन |
| ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा. २ | ७३०—२१ | | शुषुशिलक चैत्य | शुषुशिलक चैत्य |
| | | | (जैन देरासर) - | उद्यान अगीथो |

॥ श्री धीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-वासीलालं प्रतिविरचितया
सुधाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

श्री-स्थानाङ्गसूत्रम्

(तृतीयो भागः)

गतो द्वितीयोद्देशः, तत्र जीवक्षेत्रपर्याया उक्ताः, प्रारभ्यमाणे तृतीयोद्देशके
तु जीवपर्याया उच्यन्ते, इत्येवं सम्बन्धेनायातस्यास्येदमाद्यं सूत्रम्—

मूलम्—चत्वारि उदगा पण्णत्ता, तं जहा-कहमोदए १,
खंजणोदए २, वालुओदए ३, सेलोदए ४। एवामेव चउव्विहे
भावे पण्णत्ते, तं जहा-कहमोदगसमाणे १, खंजणोदगसमाणे
२, वालुओदगसमाणे ३, सेलोदगसमाणे ४,

कहमोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ णेर-
एसु उव्वज्जइ, एवं जाव सेलोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे
कालं करेइ देवेषु उव्वज्जइ । सू० १ ॥

चौथे स्थानके तीसरा उद्देशा प्रारम्भ—

“ दूसरा उद्देशा समाप्त हो चुका इस में जीव-और क्षेत्र की
पर्याय कही गई है, अब-प्रारभ्यमाण तृतीय उद्देशे में केवल जीव की
ही पर्याय कही जायेगी. इसी सम्बन्ध को लेकर आगत इस उद्देशे का
आद्य सूत्र है—“ चत्वारि उदगा पण्णत्ता ”-इत्यादि—१

थोथा स्थानना त्रीण उद्देशानो प्रारंभ

भीजे उद्देशक पूरो थयो तेमां एव अने क्षेत्रनी पर्याय कडेवामां
आवी. उवे शइ थता आ त्रीण उद्देशामां मात्र एवनी पर्यायानुं कथन
करवामां आवशे. आगता उद्देशा साथे आ प्रकारने संभंध धरावता आ
उद्देशानुं प्रथम सूत्र आ प्रभाण्णे छे—“ चत्वारि उदगा पण्णत्ता ” इत्यादि—

छाया—चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कर्मोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकम् ४. एवमेव चतुर्विधो भावः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—कर्मोदकसमानः १, खञ्जनोदकसमानः २, वालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमानः ४।

कर्मोदकसमान भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकेपूपपद्यते, एवं यात्रु शैलोदकसमानं भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति देवेपूपपद्यते ॥सू०१॥

टीका—“ चत्वारि उदगा ” इत्यादि अत्रैतस्मादुदकसूत्रात् पूर्वं यदेकं राजिसूत्रं तद्द्वितीयोद्देशे गतम् उदकानि - जलानि, चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कर्मोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकं ४ चेति । तत्र कर्मोदकं—कर्मप्रधानमुदकं, यत्र प्रविष्टं पादाद्यङ्गं कर्ममवाहुल्येन सहसाऽऽक्रण्डं न शक्यते, तत् १। तथा—खञ्जनोदकं—खञ्जनं—दीपादीनां कज्जलं. तच्च पादादि-लेपकारककर्मविशेषरूपमेव, तत्प्रधानमुदकं खञ्जनोदकम्, तच्च लग्नं सत् चर-

सूत्रार्थ—जल चार प्रकार के कहे गये हैं, कर्मोदक-१ खञ्जनोदक-२ वालुकोदक-३ शैलोदक-४ । भाव चार प्रकारका कहा गया है, जैसे—कर्मोदक समान-१ खञ्जनोदक समान-२ वालुकोदक समान-३ और शैलोदक समान-४ । कर्मोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुवा जीव यदि कालवश होना है, तो—वह नरक में उत्पन्न होता है, इस तरह से यावत्—शैलोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुवा जीव यदि काल वश होता है तो—वह देवों में उत्पन्न होता है ।

टीकार्थ — कर्म प्रधान जो उदक होता है वह—कर्मोदक है. ऐसे कर्मोदक में फसा हुवा पैर आदि शारीरिक अङ्ग सहसा उस से खींचा नहीं जा सकता है । दीपादिकों के कज्जल—स्याही का नाम खञ्जन है, यह—पादादि कों में लिप्त करने पर

सूत्रार्थ—उदक (जल) चार प्रकारनुं कहुं छे—(१) कर्मोदक, (२) अंज्जोदक, (३) वालुकोदक अने (४) शैलोदक, जलनी जेभ भाव पक्षु चार प्रकारना कहुं छे—कर्मोदक समान, (२) अंज्जोदक समान, (३) वालुकोदक समान अने शैलोदक समान कर्मोदक समान भावमां प्रवेशेला जव जे भरषु पामे छे, तो नारकोमां उत्पन्न थाय छे, परन्तु शैलोदक समान भावमां प्रवेशेला जव जे भरषु पामे छे, तो देवोमां उत्पन्न थाय छे

टीकार्थ—कर्मभयुक्त पाणीने कर्मोदक कहे छे. जेवां कर्मोदकमां (कादवमां) जे पग आदि कोय अंग इसायुं होय तो तेने सरणताथी जेथी लथ शकतुं नथी तेमां इसायेल प्राणी अहार नीकणवानो प्रयत्न जेभ वधु करे तेभ तेमां वधारे ने वधारे भूपतुं नय छे. द्विपादिकेना काज्जले अंजन कहे छे. आ

णादिकं मलिनो करोति पुनर्जलादिना विशोधयते २। तथा—वालुकोदकं—वालुका-
प्रसिद्धा, तत्प्रधानमुदकं वालुकोदकम्, तच्च पादाद्यङ्गे लग्नं शुष्कं च ततोऽङ्गस-
ञ्चालनमात्रेण वालुका दूरीभवति ३। तथा—शैलोदकं—शिखाः—पाषाणाः, तासां
विकाराः शैलाः—शर्कराः ‘कंकर’ इति भाषाप्रसिद्धाः, तत्प्रधानमुदकं शैलोदकं,
शैलास्तु चिकणाः, ते पादादि स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं कुर्वन्तोऽपि कर्दमादिवन्न लेपं
कुर्वन्ति ४। इत्युदकदृष्टान्तसूत्रम् ।

अथ दार्ष्टान्तिकभावसूत्रमाह—“ एवामेव—त्यादि—एवमेव—कर्दमाद्युदकव-
देव, भावः—जीवस्य रागादि परिणामः. स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—रुदमोदक-

कर्दम विशेष का जैसा होना है अर्थात्—कज्जल को मथकर इस से
पैर आदिकों में यदि लेप किया जाता है, तो वह भी कर्दम जैसा ही
चिपक जाता है—और उस स्थान को काला कर देता है इसकी प्रधानता
वाला जो उदक है वह—खज्जनोदक है। यह खज्जनोदक भी यदि कहीं
पर लग जाता है, तो वह भी उस स्थान को मलिन कर देता है, फिर
पानीसे उसे साफ करने पर शुद्ध हो जाता है। वालुकाप्रधान जो
उदक है वह—वालुकोदक है, यह—वालुकोदक भी यदि कहीं अङ्ग में
लग जाय, और-शुष्क हो जाय, तो वह वालुका अङ्ग सञ्चालनमात्र से ही
दूर हो जाती है। तथा—जिस जल में शैल-पत्थर के कंकड़ प्रधान होते हैं
वे—शैलोदक हैं, कङ्कड़ चिकने होते हैं वे—चरण-पग आदि से स्पृष्ट होने
पर कुछ दुःख तो देते हैं तो भी कर्दम आदि के जैसे चिपकते नहीं हैं।

काज्जलने पाणीनी साथे घुग्गिने जे लेप तैयार थाय तेने डाय, पग आदि पर
लागाववाथी काहवनी जेम ज ते अंगोने काणा करी नाणे छे आ प्रकारना
अंजननी प्रधानतावाणा पाणीने अंजनोदक कडे छे आ अंजनोदकने जे
जग्याओ स्पर्श थाय छे ते जग्या पशु मलिन थछंनय छे, परन्तु ते अघने
पाणीनी महदधी साक्ष करी शक्य छे वालुकाप्रधान जे पाणी छे तेने वालु-
कोदक कडे छे. आ प्रकारनुं रतिमिश्रित पाणी शरीरना कोठ पशु लागने के
कोठ पशु वस्तुने लागवाथी शरीरना ते लाग अथवा ते वस्तु साथे रेती
थोटी नय छे, परन्तु जेबुं पाणी सूक्ष्म नय छे के तुरतज शरीरना सञ्चा-
लन मात्रथी ज अने वस्तुने अंजेरवाथी ज ते रेती भरी नय छे जे
पाणीमां कांकरा डोय छे ते पाणीने शैलोदक कडे छे. ते कांकरा पर पग पड
वाथी सडेज पीडा तो थाय छे, पशु ते कांकरा काहव आदिनी जेम शरीर
थोटी जतां नथी. “ एवामेव ” छत्यादि—जेम पाणीना थार प्रकार छे, तेम

समानः १, खञ्जनोदकसमानः २, बालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमान ४
 श्रेति । भावे कर्दमोदकादि समानत्व च लेपवत्त्वेन, तत्र कर्दमोदकसमानो भावः—
 यथा कर्दमोदके लग्नो महता प्रयासेन विमोच्यते तथा भावोऽपि १, तथा—
 खञ्जनसमानो भावः—यथा खञ्जनं (कञ्जलं) लग्नं—लिप्तं कर्दमापेक्षया किञ्चिदा-
 यासेनापनीयते तथा भावोऽपि तथा—बालुकोदकसमानो भावः—यथा बालुकाऽङ्गे
 लग्नाऽल्पेन प्रयासेनापनीयते, तथा भावोऽपि ३, तथा—शैलोदकसमानोभावः—

“ एवामेव ”—इत्यादि, जल की चतुर्विधता जैसे जीव के राग परि-
 णाम भी चार प्रकार के होते हैं । जैसे—कोई एक रागादि परिणाम
 कर्दमोदक समान है, कोई एक खञ्जनोदक समान, तो कोई एक रागादि
 परिणाम बालुकोदक समान, और—कोई एक रागादि परिणाम शैलो-
 दक के समान होता है ।

भाव में यह कर्दमोदक आदि से समानता प्रकट की गई है, वह—
 लेपकारक होने के कारण चिकनाहट—चिकनापन से प्रगट की गई है ।
 इन में कर्दमोदक समान जो भाव होता है, वह—कर्दम जैसे अङ्ग में
 लग जाता है और—अति प्रयास से छुड़ाया जाता है, उसी तरह दूर
 किया जाता है । जो—खञ्जनोदक समान भाव होता है, वह—जैसे खञ्जन
 लग जाने पर किञ्चित् प्रयास से ही कर्दम को अपेक्षा दूर कर दिया
 जाता है, उसी तरह दूर किया जाता है । तथा—बालुकोदक समान जो
 भाव होता है वह जैसे बालुका अङ्ग में लग जाने पर अल्प ही प्रयास

रागपरिणामना पञ्च चार प्रकार छे. कोर्ध अेक रागादि परिणाम कर्दमोदक
 समान छोय छे, कोर्ध अेक खञ्जनोदक समान, तो कोर्ध अेक बालुकोदक समान
 तो कोर्ध अेक रागादि परिणाम शैलोदक समान छोय छे.

लावमां कर्दमोदक आदिनी साथे जे समानता प्रकट करवामां आवी छे
 तेनु कारणु अे छे के कर्दम आदिनी जेम तेमां यिकाश छोवाने कारणु तेने
 कारणु आत्मा कर्मोना अन्ध करे छे जेम शरीर पर लागेना कदवने अति
 प्रयासथी हर करी शक्य छे, तेम कर्दमोदक समान लावने पणु अति प्रया-
 सथी हर करी शक्य छे जेम कदव करतां अंजन (कञ्जल) ना उाधने
 वधारे सहेलाधथी हर करी शक्य छे, तेम खञ्जनोदक समान लावने पणु
 कर्दमोदक समान लाव करतां वधारे सरणताथी हर करी शक्य छे. जेम शरीरे
 योटेनी रती अल्प प्रयासथी ज हर करी शक्य छे, तेम बालुकोदक समान
 लावने थोडा प्रयासथी ज हर करी छे. जेम पथर, कांकरा आदिना पाहा-

सुधा टीका स्या०४ उ०३ सू०२ पश्चिदृष्टान्तेन चतुर्विधपुरुषजातनिरूपणम् ५

यथा शैलाः=पाषाणशर्कराः पादादौ स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं जनयन्ति न तु लिप्यन्ते,
तथा भावोऽपि ४।

एतद्भावचतुष्टयानुप्रविष्टजीवस्य फलमाह—“ कर्दमोदकसमानं ” - इत्यादि,
क्रमेण चतुर्णां फलं-नैरयिक-तिर्यङ्-मनुष्य-देवगतिप्रारूपं बोध्यम् । सू० १ ।

अनन्तरं भाव उक्तः, साम्प्रत भाववत्पुरुषजातं दृष्टान्तप्रदर्शनपुरस्सर
निरूपयति—

मूलम्—चत्तारि पक्खी पणत्ता, तं जहा—रुयसंपन्ने णाम-
मेगे णो रुवसंपन्ने १, रुवसंपन्ने णाममेगे णो रुयसंपन्ने २,
एगे रुवसंपन्नोऽवि रुयसंपन्नेऽवि ३, एगे नो रुयसंपन्ने नो
रुवसंपन्ने ४ । एवासेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं
जहा—रुयसंपन्ने णाममेगे णो रुवसंपन्ने १-४, । १ ।

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—पत्तियं करेमीतेगे
पत्तियं करेइ १, पत्तियं करेमीतेगे अपत्तियं करेइ २, अप्पत्तियं

से दूर कर दी जाती है, उसी तरह दूर कर दिया जाता है, और—जो
भाव शैलोदक समान होता है वह जैसे—पाषाण शर्करा पादादिकों में
स्पृष्ट होने पर कुछ दुःख देती है किन्तु—चिपकती नहीं है, उसी तरह
चिपकता नहीं है । इन चार प्रकार के भावों में प्रविष्ट जीव क्रम गतिसे
नैरयिक-तिर्यञ्च मनुष्य और देवोंमें जाता है । अर्थात् कर्दमोदक जैसे मलीन
भाववाला नरकमें, और खज्जनोदक समान भाववाला तिर्यञ्चमें और
वालुकासमान भाववाला मनुष्य में एवं शैलोदक समान भाववाला
देवताओं में जाता है ॥ सू० १ ॥

दिकाने २पश्चि यतां सडेज पीडा थाय छे पशु ते कांकरा आदि पगनी साथे
थोटी जतां नथी, जे ज प्रमाणे शैलोदक समान लाव आत्माभा थोटी जता
नथी—स्थिर यतां नथी. आ यार प्रकारता लावोमां प्रविष्ट जे कभशः नैर-
यिक, तिर्यञ्च, मनुष्य अने देवोमां उत्पन्न थाय छे. अर्थात् कर्दमोदक जेवा
मलीन लाववाणेो नरकमां, तेम ज काज्जण जेवा लाववाणेो तिर्यञ्चमां अने
वालुका रेती समान लाववाणेो मनुष्यमां अने शैलोदक समान लाववाणेो
देवोमां उत्पन्ने थाय छे. ॥ सू. १ ॥

करेमीतेगे पत्तियं करेइ ३, अपत्तियं करेमीतेगे अपत्तियं करेइ ४ । २ ।

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-अप्पणो णाममेगे पत्तियं करेइ णो परस्स १, परस्स णाममेगे पत्तियं करेइ णो अप्पणो ० २, । ३ ।

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-पत्तियं पवेसामी-तेगे पत्तियं पवेसेइ १, पत्तियं पवेसामीतेगे अपत्तियं पवेसेइ ० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-अप्पणो णाममेगे पत्तियं पवेसेइ णो परस्स, १, परस्स णाममेगे पत्तियं पवेसेइ णो अप्पणो २-४ ॥ सू० २ ॥

जाया—चत्वारः पतिङ् प्रज्ञाः, तद्यथा—रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो रुतसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि रुतस

अत्र सूत्रकार दार्ष्टान्तिक भावसे पुरुषजात का निरूपण करते हैं—

चत्तारि पङ्क्या पणत्ता-इत्यादि-२

सूत्रार्थ-पक्षी चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे-कोई एक पक्षी ऐसा होता है, जिस का शब्द तो आनन्द दायक होता है पर-वह स्वयं सुन्दर आकार वाला नहीं होता है-१ । कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर है पर-उसका शब्द आनन्द दायक नहीं होता है-२ । कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में भी सुन्दर होता है और-

इसे सूत्रकार स्थान्त अने दार्ष्टान्तिक सूत्रों द्वारा पुरुषोत्तम प्रकारके प्रकट करे हैं " चत्तारि पङ्क्या पणत्ता " इत्यादि—

सूत्रार्थ-पक्षीत्वा नीचे प्रस्तावे चार प्रकार कहे है-(१) कोई एक पक्षी ऐसे है जो रूप में तो सुन्दर है पर-स्वयं सुन्दर नही, (२) कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर है पर-उसका शब्द आनन्द दायक नहीं होता है, (३) कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में भी सुन्दर होता है और-

म्पन्नोऽपि ३, एको नो रूतसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि - पुरुष जातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रूतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४। १॥

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—प्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति १, प्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति २, अप्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति ३, अप्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति ४। २।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आत्मनो नामैकोऽप्रीतिकं करोति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं करोति नो आत्मनः ४, । ३।

शब्द भी उसका आनन्द दायक होता है—३ और—कोई एक पक्षी ऐसा होता है. जो—नतो बोलने में और—न देखने में सुन्दर होता है—४

इसी प्रकार पुरुष जात चार हैं कोई एक ऐसा होता है जिसका शब्द आनन्द दायक होता है किन्तु—आकार सुन्दर नहीं होता है—१ कोई पुरुष ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर, पर—बोलने में नहीं—२ कोई एक ऐसा होता है जो बोलने में भी और—आकार में भी सुन्दर होता है—३ कोई एक न तो बोलने में—न देखने में सुन्दर होता है—४ फिर भी—चार प्रकार के पुरुष होता हैं, जैसे—कोई एक ऐसा होता है जो—“मैं प्रीति करूं”—ऐसा निश्चय करके प्रीति करता है—१ कोई एक मैं प्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी प्रीति नहीं करता है—२ कोई एक पुरुष “मैं अप्रीति करूं” ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति नहीं करता है—३

पक्षु सुंदर डोय छे अने तेनो अवाञ्च पक्षु आनंददायक डोय छे. (४) केअ एक पक्षी अेबुं डोय छे के जेनो अवाञ्च पक्षु मधुर डेतो नथी अने देभाव पक्षु सुंदर डेतो नथी.

अे व प्रभावे पुरुष पक्षु चार प्रकारना डोय छे. (१) केअ एक पुरुषनी वाणी आनंददायक डोय छे, पक्षु देभाव सुंदर डेतो नथी (२) केअने देभाव सुंदर डोय छे पक्षु वाणी मधुर डोती नथी. (३) केअनी वाणी पक्षु मधुर डोय छे अने देभाव पक्षु सुंदर डोय छे. (४) केअनी वाणी पक्षु भीडी डोती नथी अने देभाव पक्षु सुंदर डेतो नथी पुरुषना आ प्रभावे पक्षु चार प्रकार पडे छे—(१) केअ एक पुरुष अेवो डोय छे के जे प्रीति करवानो निश्चय करीने प्रीति करी शके छे. (२) केअ प्रीति करवानो निश्चय करवा छतां प्रीति करतो नथी. (४) केअ पुरुष अप्रीति करवानो निश्चय करीने अप्रीति व करे छे.

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकः प्रीतिकं प्रवेशयति प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकोऽप्रीतिकं प्रवेशयति० ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आत्मनो नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो स्वस्य २-४ ॥ सू० २ ॥

कोई एक मैं अप्रीति करूं ऐसा निश्चय कर के अप्रीति ही करता है-४

फिरभी-पुरुष जात चार हैं, जैसे-कोई एक ऐसा होता है जो-अपने प्रति प्रीति करता है, परके प्रति नहीं-१ कोई एक परके प्रति प्रीति करता है, अपने प्रति नहीं-२ कोई एक अपने, और-परके प्रति भी प्रीति करता है-३ एक कोई नतो अपने प्रति न परके प्रति ही प्रीति करता है-४-३। फिरभी-पुरुष चार हैं, कोई एक अपने स्नेह को परचित्तमें प्रविष्ट कराऊं ऐसा निश्चय करके परचित्तमें अपने स्नेहको स्थापित करता है-१ कोई एक अपने स्नेहको परचित्त में प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी परचित्त में अपनी प्रीति प्रविष्ट नहीं करता है-२ एक ऐसा होता है जो परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी प्रीति को प्रविष्ट करता है-३ कोई एक परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय न करके उसके चित्त में अपनी अप्रीति ही प्रविष्ट करता है-४-४

पुरुषना आ प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे-(१) डोछ ओक पुरुष ओवो डोय छे के ने पोताना प्रत्ये प्रीति राणे छे, अन्य तरफ प्रीति राणतो नथी. (२) डोछ पुरुष ओवो डोय छे के ने परप्रत्ये प्रीति राणे छे पणु पोताना प्रत्ये राणतो नथी (३) डोछ स्व अने पर अन्ने प्रत्ये प्रीति राणे छे. (४) डोछ स्व के पर के.छ प्रत्ये प्रीति राणतो नथी.

पुरुषना आ प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे-(१) डोछ पोताना स्नेहने परचित्तमां प्रविष्ट कराववानो निश्चय करीने परचित्तमां पोताना प्रत्ये स्नेह उत्पन्न करावी शके छे (२) डोछ पोताने भाटे परचित्तमां प्रीति उत्पन्न कराववानो निश्चय करवा छतां परचित्तमां पोताना प्रत्ये प्रीति उत्पन्न करावी शकतो नथी (३) डोछ पुरुष परचित्तमां अप्रीति उत्पन्न कराववानो निश्चय करवा छता पणु पोताना प्रत्ये प्रीति उत्पन्न करावे छे. (४) डोछ ओक पुरुष परचित्तमां अप्रीति उत्पन्न कराववानो निश्चय करीने अप्रीति उत्पन्न करे छे.

टीका—“ चत्वारि पक्षी ”—त्वादि-सप्तम्, नवरं-रुतं-शब्दः, रूपं च सर्वेषां पक्षिणां भवत्येव, अत एतद्द्वयं विगिष्टमेव गृह्यते, एवं च रुतं-श्रवणाऽऽह्लादको मनोज्ञशब्दस्तेन सम्पन्नो-युक्तः एकः पक्षी भवति, परन्तु नो रूपसम्पन्नः-सुन्दराऽऽकारी न भवति, कोकिलवत्, इति प्रथमो भङ्गः १।

तथा—पुरुषजात चार हैं, कोई एक तो ऐसा होता है जो, अपने चित्त में प्रीति को प्रविष्ट करता है, पर-परके चित्त में प्रीति को प्रविष्ट नहीं करता है-१ कोई एक ऐसा होता है जो परचित्त में प्रीति को स्थापित करता है, अपने चित्त में नहीं-२ कोई एक ऐसा होता है जो अपने चित्त में प्रीति को स्थापित करता है, और-परचित्त में भी-३ और-कोई एक अपने चित्त में भी और-परचित्त में-भी स्थापित नहीं करता है-४-४

टीकार्थ—इस सूत्र में पक्षी का दृष्टान्त देकर पुरुष चार प्रकार प्रकट किये गये हैं. उस सम्बन्ध में ऐसा कथन जानना चाहिये कि—रुत, शब्द, आवाज, बोली पक्षियों का होता है, और रूप भी पक्षियों का होता है, परन्तु-यहां जो ये दो बातें प्रकट की गई हैं, इस से ये दोनों विशिष्ट रूप से गृहीत हुवे हैं। तथा च-जो मनुष्यों के श्रोत्रेन्द्रियो का आनन्ददायक होता है ऐसा मनोज्ञ शब्द और जो रूप रुचिर-सुन्दर आकार वाला होता है उसे ऐसा मनोज्ञ रुत और-रूप से समझना चाहिये। इस प्रकार समझ कर फिर इस दृष्टान्त सूत्र का इस

पुरुषना आ प्रभाषे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) केछ अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने पोताना चित्तमां तो प्रीति उत्पन्न करी शके छे पणु परना चित्तमां प्रीति उत्पन्न करावी शक्ते नथी (२) केछ पुरुष परमां प्रीति उत्पन्न करावी शके छे पणु पोताना चित्तमा प्रीतिने स्थापित करी शक्ते नथी. (३) केछ अेउ पुरुष पोताना अने परना, अन्नेना चित्तमां प्रीति स्थापित करी शके छे (४) केछ पुरुष पोताना चित्तमां पणु प्रीतिने स्थापित करी शक्ते नथी अने परना चित्तमां पणु प्रीतिने स्थापित करी शक्ते नथी.

टीकार्थ—पडेवा सूत्रमां पक्षीनु दृष्टान्त आपीने चार प्रकारना पुरुषो प्रकट कर-वामां आव्या छे. पक्षाओमां अवाज (जोली, शब्द) अने इप अन्नेने सदृलाव डोय छे. परन्तु अर्ही ते अन्ने आमताने विशिष्ट इपे अडणु कर वामा आवेव छे अर्ही ‘ इप ’ पदथी अेवु समजवुं नेछअे के मनुष्योनी दृष्टिने अभे तेवुं मनोज्ञ (रुचिर) इप अने ‘ शब्द ’ पदथी मनुष्योनी कर्णेन्द्रियने मनोज्ञ लागे अेवो मधुर अवाज अडणु थवे नेछअे.

एकः—कश्चित् पक्षी रूपसम्पन्नः—सुन्दराऽऽकारो भवति, किन्तु नो रत्नसम्पन्नः साधारणशुकवत्, इति द्वितीयो भङ्गः २। एको रत्नरूपोभयसम्पन्नो भवति मयूरवत्; इति तृतीयो भङ्गः ३। एको नो रत्नसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नश्च भवति काकवत्, इति चतुर्थो भङ्गः ४।

“ एवामेव ” इत्यादि—एवमेव=पक्षिवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रत्नसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्न इत्यादि । अत्रेदं बोध्यम्—पुरुषो हि लौकिकलोकोत्तरभेदेन द्विधा । तत्र लौकिकपुरुषपक्षे चत्वारो भङ्गा एव बोध्याः, तथाहि—एकः पुरुषः प्रियवादित्वेन रत्नसम्पन्नः—मनोजगद्व्युक्तो भवति, किन्तु

प्रकार से अर्थ करना चाहिये । कोई एक पक्षी ऐसा है कि—उसकी आवाज सुरीली-मीठी, आकर्षक, आनन्ददायक, कर्णप्रिय होती है, परन्तु वह रूप सम्पन्न नहीं होता, जैसे—कोकिल—कोयल ? कोई एक देवने में इतना सुन्दर कि दर्शकोंका मन खींचले, किन्तु—उसका शब्द आकारका अनु रूप नहीं, जैसे—साधारण शुक, (तोता) २ कोई एक उभय था, (दोनों तरहसे) सुन्दर होता, जिसका शब्द भी कर्ण सुखावह और—रुचिररूप भी, जैसे—मोर—३ कोई एक दोनों प्रकारसे ठीक नहीं होता है शब्दसे भी—रूप से भी, जैसे—कौवा—४ इस दृष्टान्त का समन्वय पुरुषों के साथ करते हुवे सूत्रकारने पुरुषमें चार प्रकारका भेद कहा है । पुरुष लौकिक—अलौकिक भी होते हैं, सो इन लौकिक पुरुषोंमें पक्षी सम्बन्धी चार भङ्ग होंगे । जैसे—कोई एक प्रिय स्त (शब्द) सम्पन्न होता है किन्तु—रूप से सम्पन्न नहीं—१ कोई एक सुन्दर रूप वाला है, तो—सुन्दर बोलचाल

આ દષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો પક્ષીઓના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ પક્ષીને અવાજ મધુર, કર્ણપ્રિય હોય છે, પણ તે દેખાવમાં સુંદર હોતું નથી. દા. ત. કોયલ. (૨) કોઈ એક પક્ષીને દેખાવ મનોહર હોય છે પણ તેનો અવાજ મીઠો હોતો નથી દા. ત. સામાન્ય પોપટ. (૩) કોઈ એક પક્ષીને અવાજ પણ કર્ણપ્રિય હોય છે અને દેખાવ પણ મનોહર હોય છે. દા. ત. મોર. (૪) કોઈ એક પક્ષીને અવાજ પણ કર્કશ હોય છે અને દેખાવ પણ ખરાબ હોય છે. દા. ત. કાગડો.

પક્ષીની જેમ પુરુષના પણ ચાર પ્રકારો પડે છે—પુરુષ લૌકિક પણ હોય છે અને અલૌકિક પણ હોય છે. લૌકિક પુરુષોના પણ પક્ષી જેવા ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઈ એક પુરુષને અવાજ કર્ણપ્રિય હોય છે પણ તે સુંદર હોતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ રૂપની અપેક્ષાએ સુંદર હોય છે પણ તેની

यथोक्तरूप रहितत्वेन नो रूपसम्पन्नः—सुन्दराऽऽकारवान् न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १। तथा—एकः पुरुषो रूपसम्पन्नो भवति न तु रूतसम्पन्नः, इति द्वितीयः । २।

एको रूतसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि भवति । इति तृतीयः । ३। एको न रूतसम्पन्नो नापि रूपसम्पन्न इति चतुर्थः । ४। लोकोत्तरपुरुषपक्षेत्वेवं, तथाहि—एकः साधुपुरुषो रूतसम्पन्नः — रूतेन — जिनप्ररूपितशुद्धधर्मदेशनादिप्रबन्धरूपशब्देन सम्पन्नो—युक्तो भवति, किन्तु रूपसम्पन्नः—रूपेण — लोचाल्पकेशशिररक्तत्व—तपः कृशीकृतशरीरत्व—मलमलिनकायत्याऽल्पोपकरणत्वप्रभृतिसाधुचितरूपेण सम्पन्नो न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १। एवमेवावशिष्टं भङ्गत्रयमपि यथायोग्यं बोध्यम् । १।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—प्रीतिकं—प्रीतिरेव प्रीतिकं—प्रेम करोमीति निश्चित्य एकः प्रीतिकं करोति १, एकः—अन्यस्तु प्रीतिकं करो-

वाला नहीं—२ कोई एक देखने में भी सुहावना और बोल से भी—३ कोई एक गधा—गदहा; और—ऊट जैसा न तो शब्द से—न तो रूप से सुन्दर होता है—४ । अब लोकोत्तर में घटाना हैं—कोई एक साधु (शब्द) से (जिनप्रणीत धर्मदेशना से) सम्पन्न होता है, किन्तु—रूप से—लोच करना, अल्प केशोंसे युक्त शिरवाला होना, तप से कृश शरीर वाला होना, शरीर संस्कार वर्जित होना, अल्पोपकरण रखना, आदि साधुचित सम्पन्न नहीं होता है—१ इसी प्रकार शेष भङ्ग त्रय को—यथायोग्य समझना चाहिये ४ । “ चत्वारि पुरिसजाया ”—इत्यादि सूत्र स्पष्ट है । यहाँ—प्रीतिक शब्द का अर्थ प्रेम है. प्रीति शब्द से स्वार्थ में ही कन्

वाणी आनंददायक होती नथी. (३) कोई एक पुरुष देखावतां पशु सुंदर होय छे अने तेनी वाणी पशु भीठी होय छे (४) कोई एक पुरुषनी वाणी पशु मधुर होती नथी अने देखाव पशु सुंदर होतो नथी. हवे लोकोत्तर पुरुषोना आर प्रकार प्रकट करवाभा आवे छे—(१) कोई एक साधु रूतथी (जिन प्रणीत धर्मदेशनाथी) संपन्न होय छे, परन्तु इप संपन्न होतो नथी अटवे के होय करवे, अल्प केशोथी युक्त शिरवाणो होवुं, तपथी कृश शरीर वाणो होवुं, शरीर संस्कारविहीन होवुं, अल्पोपकरण राखवा, आदि साधु चित इपथी संपन्न होतो नथी. अे न प्रमाणे आधीना त्रय प्रकारो पशु समल देवा.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि सूत्रनो अर्थ स्पष्ट छे. अडीं प्रतिक शब्द प्रेमना अर्थमां वपराये छे. ‘ प्रीति ’ पदने स्वार्थ ‘ कन् ’ प्रत्यय लगा

मीति निश्चित्यापि अप्रीतिकं करोति २, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमीति निश्चित्य प्रीतिकं करोति येन केनापि कारणेन पूर्वभावपरिवर्तनात् ३, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमिति निश्चित्य अप्रीतिकं करोति ४।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः आत्मनः-स्वस्य प्रीतिकम्-आनन्दं भोजनवस्त्रादिभिः करोति-सम्पादयति स्वार्थपरायणत्वात्, किन्तु परस्य-अन्यस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिर्नो करोति, इति प्रथमो भङ्गः १। एकः पुरुष परस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिः करोति परमार्थपरायणत्वात् मोहवत्त्वाद्वा, किन्तु आत्मनः-स्वस्य नो करोति, इति द्वितीयः २। एकः

प्रत्यय होने से बना है, “ मैं प्रेम करूं ” मन में निश्चय करके कोई एक पुरुष प्रीति करता है-१ कोई पुरुष तो प्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति करता है-२ अप्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी कोई एक प्रीति करता है, क्योंकि-उसमें किसी कारण से तब तक परिवर्तन होता है-३ कोई एक अप्रीति करूं निश्चय करके अप्रीति करता है-४। “ चत्वारि पुरिसजाया ”-इत्यादि स्पष्ट है, इस में ऐसा प्रगट किया गया है कि-कोई एक पुरुष स्वार्थ परायणतासे अपने आपको ही भोजन-वस्त्र आदि से सुसज्जित करनेमें आनन्द मानता है, औरोंको भी तथा सुसज्जित करने में नहीं-१ कोई एक पर को ही भोजन वस्त्रादिकों से परपरायणता के कारण आनन्दित होता है, क्योंकि-हो सकता है-उसके प्रति वह मोहवाला हो, परन्तु-अपने प्रति इस प्रकार के ख्याल से रहित होता है-२

उवाची ‘ प्रीतिक ’ शब्द अन्यो छे. “ हुं प्रेम करु ” आवे। निश्चय करीने केरि व्यक्ति प्रीति करे छे (२) “ हुं प्रेम करु ” आ प्रकारने निश्चय करीने पणु केरि पुरुष अप्रीति करे छे (३) “ अप्रीति करुं ” आ प्रकारने निश्चय करीने केरि पुरुष प्रीति करे छे कारणु के केरि कारणुथी तेनामां परिवर्तन थय लय छे (४) “ अप्रीति करुं ” आ प्रकारने निश्चय करीने केरि पुरुष अप्रीति करे छे.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि आ सूत्रमां नीचे प्रमाणे आर प्रकाशना पुरुषो कथा छे—(१) केरि अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने स्वार्थी स्वभावने कारणे पोते न सुंदर सुंदर लोचनेो वडे पोताने न तृप्त करतो डोय छे अने सुंदर वस्त्रादिथी पोताना शरीरने विलुपित करतो डोय छे अने तेमां न आनंद मानतो डोय छे, पणु परने ते वस्तुओ आपीने आनंद मानतो नथी. (२) केरि अेक पुरुष परने वस्त्रादि आपीने आनंद प्राप्तो डोय छे. मोडादिकने कारणे अेवुं संलवी शके छे. पणु पोताने भाटे अेवा आलथी रहित डोय छे. (३) केरि अेक पुरुष स्वार्थ अने परमार्थ पराय

પુરુષ' આત્મનઃ પરસ્ય ચ પ્રીતિક્ ભોજનાઽઽચ્છાદનાદિભિઃ કરોતિ સ્વાર્થપરમાર્થપરાયણત્વાત્, ઇતિ તૃતીયઃ ૩। તથા-એકઃ પુરુષો ન સ્વસ્ય પ્રીતિક્ કરોતિ ન ચ પરસ્ય, સ્વાર્થપરમાર્થરહિતત્વાદિતિ ચતુર્થઃ ૪।

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરમ્-એકઃ પુરુષઃ પ્રીતિક્-સ્વસમ્બન્ધિ પ્રેમ પરકીયચિત્તે પ્રવેશયામીત્યેવં નિશ્ચિત્ય પ્રીતિક્ પરચિત્તે પ્રવેશયતિ-સ્થાપયતિ ૧, એકઃ પુરુષઃ પ્રીતિક્ પ્રવેશયામીત્યેવ નિશ્ચિત્યાપિ કેનાપિ કારણેન પૂર્વભાવપરિવર્તનાદપ્રીતિક્ પરચિત્તે પ્રવેશયતિ ૧, એકઃ પુરુષોઽપ્રીતિક્ પરચિત્તે પ્રવેશયામીત્યેવં નિશ્ચિત્યાપિ પ્રીતિક્ પ્રવેશયતિ ૩। એકઃ પુરુષસ્તુ અપ્રીતિક્ પરચિત્તે પ્રવેશયામીત્યેવમપ્રીતિક્ પરચિત્તે પ્રવેશયતિ દ્વેપયતીતિભાવઃ ૪।

કોઈ એક ઉભય ધા. સ્નાર્થ-ઔર પરમાર્થ પરાયણતાસે અપને ઔર પર દોનો કો ભોજન વસ્ત્રાદિ સે આનન્દ સમ્પન્ન ઘનાયે રખતા હૈ-૩ કોઈ એક સ્વાર્થ ઔર-પરમાર્થ વશ્ચિન હોને કે કારણ ભોજન વસ્ત્રાદિ ઢારા અપને આપકો-ઔર-ઔરોં કો મી આનન્દ યુક્ત કરને કરાને સે વશ્ચિન રખતા હૈ-૪ “ ચત્તારિ પુરિસજાયા ”-ઇત્યાદિ સ્પષ્ટ હૈ, ઇસ મેં-યહ સમજાયા ગયા હૈ કિ-કોઈ એક સ્વસમ્બન્ધિત સ્નેહ કો પરકીયચિત્ત મેં પ્રવેશ કરાઝં ” નિશ્ચિત કરકે પરચિત્ત મેં સ્થાપિત કરતા હૈ-૧ કોઈ એક પુરુષ અપના સ્નેહ “ પરચિત્ત મેં સ્થાપિત કરું ” નિશ્ચય કરકે મી કિસી કારણ સે પૂર્વ ભાવ પરિવર્તન હો જાને પર પરચિત્તમેં અપ્રીતિ કો હી સ્થાપિત કરતા હૈ-૨ કોઈ એક “ અપ્રીતિ કો હી સ્થાપિત કરું ” નિશ્ચય કરકે ફિર મી વહ પ્રીતિ કો હી પરચિત્ત મેં સ્થાપિત કરતા હૈ-૩

ભુતાને કારણે પોતે પણ સુદર ભોજન, વસ્ત્રાદિથી આનંદ માને છે અને ખીજને પણ ભોજન, વસ્ત્રાદિ આપીને આનંદ કરાવે છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ સ્વાર્થ અને પરમાર્થથી રહિત હોવાને કારણે પોતાને પણ ભોજન વસ્ત્રાદિ ઢારા આનંદ કરાવને નથી અને અન્યને પણ એ રીતે આનંદિત કરતો નથી

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ આ સૂત્રમાં ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે. (૧) કોઈ એક પુરુષ “ અન્યના ચિત્તમાં મારા પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરાવું ” આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને અન્યના ચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરી દે છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરવાને નિશ્ચય કરવા છતાં પણ કોઈ કારણે પૂર્વ ભાવમાં પરિવર્તન થઈ જવાથી પરચિત્તમાં અપ્રીતિ જ સ્થાપિત કરે છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः आत्मनः-स्वस्य चित्ते प्रीतिकं प्रवेशयति, किन्तु परस्य चित्ते प्रीतिकं नो प्रवेशयति, इति प्रथमो भङ्गः १। शेषभङ्गत्रयं पूर्ववद्वोधयम् । सू० २ ।

पुनः सदृष्टान्तं पुरुषजातं निरूपयति—

मूलम्—चत्वारि रूक्खा पण्णत्ता, तं जहा-पत्तोवए १, पुप्फो-वए २, फलोवए ३, छायोवए ४ । एवामेव चत्वारि पुरिस-जाया पण्णत्ता, तं जहा-पत्तोवगरुक्खसमाणे १, पुप्फोवगरुक्ख-समाणे २, फलोवगरुक्खसमाणे ३, छायोवगरुक्खसमाणे ४। सू० ३।

छाया—चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पत्रोपगः १, पुष्पोपगः २, फलो-पगः ३, छायोपगः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-पत्रोपग-कोई एक परचित्त में अभीति स्थापित करू निश्चय करके पूर्व विचार के अनुसार अभीति को ही परकीय चित्त में स्थापित करता है—४

“ चत्वारि पुरिसजाया ”—इत्यादि स्पष्ट हैं, इस में कहा गया है कि-कोई एक अपने ही चित्त को प्रसन्न रखता है परचित्त को नहीं—१ शेष भङ्ग त्रय पूर्व की तरह जानना चाहिये—॥ सू० २ ॥

“ पुनः सूत्रकार सदृष्टान्त पुरुषजातकी प्रहणना करते हैं—

“ चत्वारि रूक्खा पण्णत्ता ”—३

सूत्रार्थ—चार प्रकारके वृक्ष कहे गये हैं, जैसे-कोई एक वृक्ष पत्रोपग होता है, १ कोई एक पुष्पोपग होता है, २ कोई एक फलोपग होता है, ३

परचित्तमां अभीति स्थापित करवाने। निश्चय करवा छतां पणु प्रीति न स्थापित करे छे (४) कोठ अेक पुरुष परचित्तमां अभीति स्थापित करवाने विचार करीने पूर्व भाव अनुसार अभीति न स्थापित करे छे.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि. आ प्रकारे पणु पुरुषेणा आर प्रकार क्ख्या छे. (१) कोठ अेक पुरुष पोताना चित्तने न प्रसन्न राणे छे. अन्यना चित्तने प्रसन्न राणतो नथी भाडीना त्रणु प्रकारे आगला सूत्रमां क्ख्या प्रभाणु न समथ लेवा ॥ सू० २ ॥

वृक्षना दृष्टान्त द्वारा सूत्रकार पुरुषना प्रकारेनी प्रहणना करे छे—

“ चत्वारि रूक्खा पण्णत्ता ” इत्यादि—(सू. ३)

सूत्रार्थ—वृक्षना आर प्रकार क्ख्या छे(१) कोठ वृक्ष पत्रोपग (पत्रयुक्त) होय छे, (२) कोठ वृक्ष पुष्पोपग होय छे. (३) कोठ वृक्ष इलोपग होय छे,

વૃક્ષસમાનઃ ૧, પુષ્પોપગવૃક્ષસમાનઃ ૨, ફલોપગવૃક્ષસમાનઃ ૩, છાયોપગવૃક્ષસમાનઃ ૪। સૂ૦ ૩।

ટીકા—“ ચત્તારિ સ્વઘ્વા ” ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરં-પત્રોપગઃ-પત્રાણ્યુપગન્છત્તિ-પ્રાપ્નોતીતિ પત્રોપગઃ-પત્રયુક્તઃ, એવં પુષ્પોપગાદયસ્ત્રયઃ ૪। “ એવામેવ ” ઇત્યાદિ-એવામેવ-પત્રોપગાદિ વૃક્ષવદેવ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞાનિ, તથથા-પત્રોપગવૃક્ષસમાનઃ ૧, પુષ્પોપગવૃક્ષસમાનઃ ૨, ફલોપગવૃક્ષસમાનઃ ૩, છાયોપગવૃક્ષસમાનઃ ૪। પત્રોપગાદિવૃક્ષસમાનત્વં લૌકિકાનાં લોકોત્તરાણાં ચ પુરુષાણાં સંમવતિ । તત્ર લૌકિકપક્ષે-યથા પત્રોપગવૃક્ષઃ પત્રમાત્રેણ જનમુપકરોતિ તથૈવ તત્સમાનઃ પુરુષો વચનમાત્રેણ જનમુપકરોતીતિ પ્રથમઃ ૧। પુષ્પોપગવૃક્ષો યથા પુષ્પેણ

ઔર-કોઈ એક છાયોપગ હોતા હૈ, ૪ । હસી પ્રકાર સે પુરુષજાન ચાર કહે ગયે હૈ, જૈસે-કોઈ એક પુરુષ પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હોતા હૈ, ૧ કોઈ એક પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન હોતા હૈ, ૨ કોઈ એક ફલોપગ વૃક્ષ સમાન હોતા હૈ, ૩ ઔર કોઈ એક પુરુષ છાયોપગ વૃક્ષ સમાન હોતા હૈ, ૪ ।

હસ સૂત્રકા તાત્પર્ય એસા હૈ કિ-કોઈ એક વૃક્ષ એમા હૈ જો પત્રોપગ પત્રો સે યુક્ત હોતા હૈ, ૧ કોઈ એક વૃક્ષ પુષ્પોપગ-પુષ્પોસે સંયુક્ત હોતા હૈ, ૨ કોઈ એક વૃક્ષ એસા હોતા હૈ જો ફલોપગ, ફલો સે યુક્ત હોતા હૈ, ૩ ઔર-કોઈ એક વૃક્ષ એસા હોતા હૈ જો છાયોપગ-છાયા સે યુક્ત હોતાહૈ, ૪ હનકે સમાન ચાર પુરુષ હોતેહૈ હસકા તાત્પર્ય હૈ કિ-કોઈ એક લૌકિક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો, પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હોતા હૈ, અર્થાત્-જૈસે પત્રોપગ વૃક્ષ કેવલ અપને પત્રો સે હી જન-ઉપકાર કરતા હૈ ઁસી પ્રકાર પુરુષ ઁમી કેવલ વચન સે હી જનોં કા ઉપકાર કરતા હૈ, ૧ પુષ્પો-

અને (૪) કોઈ વૃક્ષ છાયોપગ હોય છે એ જ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) કોઈ પુરુષ પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૨) કોઈ પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૩) કોઈ ફલોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે અને (૪) કોઈ છાયોપગ વૃક્ષસમાન હોય છે.

આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે. (૧) કોઈ એક વૃક્ષ પાનથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઈ વૃક્ષ પુષ્પથી યુક્ત હોય છે, (૩) કોઈ વૃક્ષ ફલોથી યુક્ત હોય છે અને (૪) કોઈ વૃક્ષ છાયાથી યુક્ત હોય છે. વૃક્ષની જેમ પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ-જેમ પત્રોપગ વૃક્ષ પોતાના પાન વડે જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે, એ જ પ્રમાણે કોઈ એક લૌકિક પુરુષ પોતાની વાણી દ્વારા જ લોકોનું ભલું કરે છે.

જનમુપકરોતિ તથૈવ તત્સમાનઃ પુરુષઃ કષ્ટનિવારણોપાયપ્રદાનેનોપકારી ભવતિ, इति द्वितीयः २। फलोपगवृक्षः फलप्रदानेन यथा विशिष्टोपकारको भवति, तथैव तत्समानः पुरुष आपद्गतान् जनानर्थीदि प्रदानेनोपकरोतीति तृतीयः ३। तथा-छायोपगवृक्षो यथा छायाया जनानां सन्तापं हरति, तथैव तत्समानः पुरुष आश्रयप्रदानादिनाऽऽपद्गतान् जनानुपकरोति, इति चतुर्थः ४।

लोकोत्तरपक्षेतु यः सूत्रदानेन जनमुपकरोति स पत्रोपगवृक्षसमानः । १। यः पुनरर्थप्रदानेनोपकरोति स पुष्पोपगवृक्षसमानः । २। यस्तु सूत्रार्थोभयप्रदानेनोपकरोति स फलोपगवृक्षसमानः । ३। यः पुनर्जन्मजरामरणारूपाऽपायाद् रक्षति स छायोपगवृक्षसमान इति । सू० ३ ॥

પગ પુરુષ કષ્ટ નિવારણ ઉપાય પ્રદાન કરતા હૈ જૈસે-પુષ્પોપગ વૃક્ષ અપને પુષ્પોં સે જનકા ઉપકાર કરતા હૈ, ૨ તથા-ફલોપગ વૃક્ષ સમાન વહ પુરુષ હૈ જો આપદ્ગતોં કો અર્થાદિ પ્રદાન સે ઉસકા ઉપકારક હોતા હૈ જૈસે-ફલોપગ વૃક્ષ અપને ફલોં સે ચલતે જનોં કા ઉપકાર કરતા હૈ, ૩ છાયોપગ વૃક્ષ કા જૈસા વહ પુરુષ હોતા હૈ જો-આશ્રય પ્રદાન ઢારા ઉપકાર કરતા હૈ, જૈસે-છાયોપગ વૃક્ષ છાયાસે જનોં કા સન્તાપ કરતા હૈ, ૪ લોકોત્તર પુરુષ ઇન વૃક્ષોં કે સમાન હોતે હૈં-જો લોકોત્તર પુરુષ સૂત્ર દાન સે જન ઉપકારક હોતા હૈ વહ પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હૈ, ૧ જો અર્થ પ્રદાન સે ઉપકારક હોતા હૈ વહ પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન હૈ, ૨ જો સૂત્ર

(૨) પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ પુષ્પોપગ વૃક્ષ પે તાના પુષ્પોથી જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે, તેમ કેઈ પુરુષ કષ્ટ નિવારણના ઉપાય બતાવીને લોકોને ભલું કરે છે. (૩) ફલોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેવી રીતે ફલોપગ વૃક્ષ પોતાના ફલો આપીને જનોં આવતાં લોકોને ઉપકાર કરે છે, તેમ કેઈ પુરુષ અર્થોદિનું પ્રદાન કરીને લોકોને ઉપકાર કરે છે.

(૩) છાયોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ કેઈ વૃક્ષ પોતાના છાયડામાં લોકોને આશ્રય આપે છે તેમ કેઈ પુરુષ આશ્રય પ્રદાન કરીને પણ લોકોને ઉપકાર કરે છે. અથવા સંતાપ દૂર કરે છે

લોકોત્તર પુરુષોને વૃક્ષોની સાથે આ પ્રમાણે સરખાવી શકાય—

(૧) જે લોકોત્તર પુરુષ સૂત્રદાન દ્વારા જન ઉપકારક હોય છે, તેને પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૨) જે અર્થપ્રદાન દ્વારા ઉપકારક થાય છે, તેને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૩) સૂત્ર અને અર્થ બંને દ્વારા ઉપકાર કરનાર લોકોત્તર પુરુષને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૪) જે

अथ श्रमणोपासकस्याऽऽश्वासं सदृष्टान्तमाह—

मूलम्—भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पणत्ता, तं जहा—जत्थ णं अंसाओ अंसं साहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते १, जत्थवि य णं उच्चारं वा पासवणं वा परिट्टावेइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते २, जत्थवि य णं णागकुमा- रावासंसि वा सुवण्णकुमारावासंसि वा वासं उवेइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते ३, जत्थवि य णं आवकहाए चिट्ठइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते ४। एवामेव समणोवासगस्स चत्तारि आसासा पणत्ता, तं जहा—जत्थ णं सीलव्वयगुणव्वय- वेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं पडिवज्जेइ तत्थवि अ से एगे आसासे पणत्ते १, जत्थवि य णं सामाइयं देसावगासियं सम्ममणुपालेइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते २, जत्थवि य णं चाउइसट्टमुहिट्टपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेइ, तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते ३, जत्थवि य णं अपच्छिममारणंतिअसंलेहणाजोसणाजूसिए भत्तपाणपडियाइ- विखए पाओवगए कालमणवकंखमाणे विहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पणत्ते ४ ॥ सू० ४ ॥

अर्थ दोनों से जन कल्याण करता है वह फलोपग वृक्ष समान है, ३ और जो जन्म जरा मरण रूप अपार्षो से बचाता है, संरक्षण करता है वह लोकोत्तर पुरुष छायोपग समान है, ४ ॥ सू० ३ ॥

जन्म, जरा अने मरणु इय अपार्षोथी गथावे छे, ते लोकोत्तर पुरुषने छायोपग वृक्ष समान छी शक्य छे. ॥ सू० ३ ॥

छाया—भारं खलु वहमानस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—यत्र खलु अंसादंसं संहरति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु उच्चारं वा प्रस्रवणं वा परिष्ठापयति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः २, यत्रापि च खलु नागकुमारावासे वा सुपर्णकुमारावासे वा वासमुपैति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु — यावत्कथया — तिष्ठति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ४। एवमेव श्रमणोपासकस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—यत्र खलु शीलव्रतगुणव्रत — विरमणप्रत्याख्यानपोषधोपवासान् प्रतिपद्यते तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु सामायिकं

“अत्र सूत्रकार सदृष्टान्त श्रमणोपासकको अश्वासन देते हैं—

सूत्रार्थ—“भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पणत्ता”—इत्यादि—४ एक स्थान से दूसरे स्थान तक भार पहुंचाने वाले पुरुषों के लिये चार विश्राम कहे गये हैं जैसे—वह अपने भार को जहाँ पर एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर रखता है, एक विश्राम, १ वह जहाँ—दृष्टी, या, पेशाब की बाधा दूर करता है, दूसरा विश्राम, २ तीसरा विश्राम वहाँ कहा गया है, जहाँ कि नागकुमाराऽऽवास में, या—सुपर्णकुमारावासमें वह टहर जाता है, ३ चौथा विश्राम वहाँ कहा गया है जहाँ उसे भार पहुंचाने के लिये कहा गया है पहुंच कर भारको उतारेगा, ४। इसी तरह ये चार (आवास.) विश्राम श्रमणोपासक के भी है—एक आवास वह जबकि—शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण, अनर्थदण्डविरमण, प्रत्याख्यान, और—पोषधोपवास को स्वीकार करता है, १ दूसरा विश्राम वह कहा

इसे सूत्रकार दृष्टान्त द्वारा श्रमणोपासकने आश्वासन दे छे—

“भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पणत्ता ” इत्यादि—

सूत्रार्थ—एक स्थानेथी भीजे स्थाने भार वहन करीने लथ जनार पुरुष भाटे चार विश्रामस्थान कथा छे. पडेके विश्राम ते छे के न्यां ते पोताना भार (गेज) ने एक जला परथी भीज जला पर भूके छे भीजे विश्राम ते छे के न्यां ते आडा, पेशाब रुप कुहरती डाजत हर करी शके छे. त्रीजे विश्राम जे छे के न्यां नागकुमारावास अथवा सुपर्णकुमारावास रुप केठ स्थानमां ते थोडा समय थोली जय छे. थोथो विसामे जे छे के न्यां ते जेजे पडेयाडवाने डाय त्या पडेयीने जेजेने कायमने भाटे जला परथी उनारी नाजे छे.

जे ज प्रभाजे श्रमणोपासकने भाटे पणु चार विश्रामस्थान (आवास) कथां छे—(१) शीलव्रत, गुणव्रत, अनर्थदण्ड विरमण, प्रत्याख्यान अने पोषधोपवास अडणु करवा रुप पडेहुं विश्रामस्थान समजवुं. (२) सामायिक, देशा-

देशावकाशिकं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः २, यत्रापि च खलु चतुर्दशपटम्बुद्विष्टपूर्णिमासीषु प्रतिपूर्णं पौषधं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु अपश्चिममरणान्तिकसलेखनाजो-
पणाजुष्टो भक्तपानप्रत्याख्यातः पादपोषगतः कालमनवकाङ्क्षन् विहरति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः । सू० ४ ।

टीका—“ भारं णं ” इत्यादि—भारं धान्यादीनां वहमानस्य—एकरमात् रथानादपरस्थानं प्रापयतः पुरुषस्य आश्वासा—विश्रामाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तत्तथा—यत्र—यस्मिन्नवसरे, ‘ खलुः ’ वाक्यालङ्कारे सर्वत्र अंसात्—अंसे एकरमात् स्कन्धात् अपरंस्कन्धं संहरति—भार प्रापयति, तत्रापिच—स्कन्धात्, स्कन्धान्तरे भारस्य नयनावसरेऽपि च तस्य—भारवाहकस्य एकः—प्रथमः, आश्वासः प्रज्ञप्तः

गया है जबकि सामायिक देशावकाशिक का सप्रयत्न रीतिसे वह—पालन करने लगता है, २ तीसरा विश्राम उसका वह कहा गया है जब वह चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, और—पूर्णिमा तिथियों में पौषध का पूर्ण रूप से पालन करता है, ३ तथा चौथा आवास वह कहा गया है जब वह मरणकाल सम्बन्धिनी अपश्चिम संलेखना को धारण कर लेता है भक्तपान का प्रत्याख्यान कर देता है. और—अपने काल की आकाङ्क्षा रहित हुवा पादपोषगमन “ संथारा ”—जाला होता है, ४

टीकार्थ—दृष्टान्तमें आये भारवाहकके विश्राम जैसा श्रमणोपासकके चार आवासका तात्पर्य है कि—जो व्यक्ति साधुजनों की सुश्रूषा करता है वह सेवक श्रमणोपासक कहलाता है, जिस प्रकार भारवाहक भारसे अक्रान्त रहता है उसी प्रकार श्रमणोपासक भी सावद्यव्यापार रूप से अक्रान्त होता है । भारवाहक भार को निश्चित स्थानपर पहुंचाने

वकाशिकतुं सम्यक् रीते पालनं करवुं ते णीने विश्रामं छे (३) आठम, चौदश, पूर्णिमा अने अमावास्यानी तिथिओमां पौषधमतनुं सारी रीते पालनं करवुं ते त्रीने विश्रामं छे. (४) मरणकाण नष्टक आवता अपश्चिम सलेखना धारण करवी, आहार पाणीना प्रत्याख्यान करवा, अने मृत्युनी आकांक्षा राज्या विना पादपोषगमन सथारे करवा इय ये थे। विश्रामं समञ्जवे।

टीकार्थ—दृष्टान्त सूत्रमा दर्शाववामां आवेला भारवाहकना चार विसामा नेवा श्रमणोपासकना पणु चार विसामा कहां छे. ने व्यक्ति श्रमणोनी सुश्रूषा करे छे तेने श्रमणोपासक कहे छे नेम भारवाहक भारथी अक्रान्त रहे छे ने प्रमाणे श्रमणोपासक पणु सावद्य व्यापार इय भारथी अक्रान्त होय छे. नेम

૧૧ | યત્રાપિ ચ ઉચ્ચારં વા પ્રસૂવણં વા પરિષ્ઠાપયતિ-નિવારયતિ, તત્રાપિ ચ તસ્ય ઇકઃ-અપરો દ્વિતીય ઇત્યર્થઃ, આશ્વાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ૨ | યત્રાપિ ય 'નાગકુમારાવાસે વા સુપર્ણકુમારાઽઽવાસે વા' અત્ર નાગકુમારાઽઽવાસ-સુપર્ણકુમારાઽઽવાસયોરુપ-લક્ષણતયાઽન્યેઽપિ દેવાવાસા ગૃહ્યન્તે, તેન - નાગસુપર્ણકુમારાદિદેવવિગેપસ્ય આવાસ-સ્થાને ઇત્યર્થઃ, વાસમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, તત્રાપિ ચ તસ્યૈકઃ-અન્યસ્તુ-તીય ઇત્યર્થઃ, આશ્વાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ૩, યત્રાપિ ચ સ્થાને સ્વલુ આપકથયા-આપનમ્ આપઃ-પ્રાપણં તસ્ય કથા, તયા મારસ્વામિના મારપ્રાપણવિષયે યસ્ય સ્થાનસ્ય નિર્દેશઃ કૃતસ્તદનુસારેણ મારવાહકો મારમવતાર્ય તિષ્ઠતિ-સ્થિતોમવતિ તત્રાપિ ચ તસ્ય ઇકઃ-અપરશ્ચતુર્થ ઇત્યર્થઃ આશ્વાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ | યદ્વા- 'યાત્કથયા' ઇતિ ચ્છાયા, યાત્કથ-યત્પરિમાણસ્ય સ્થાનસ્ય કથા કૃતા-કથનં કૃતં મારસ્વામિના, તદનુસારેણ ચ યત્ર મારં સ્થાપયતીત્યાદિ પૂર્વવદ્બોધ્યમ્ ૪ | ઇતિ |

इति दृष्टान्तमत्रम् ।

अथ दाष्टान्तिकमत्रम्—

“ एवामेवे ”—त्यादि - एवमेव=मारवाहकस्याऽऽश्वासवदेव, श्रमणोपास-कस्य-श्रमणानां-साधूनाम् उपासकः-सेवकः श्रमणोपासकः=श्रावकः, तस्य साव-द्यव्यापारमाराऽऽक्रान्तस्य आश्वासाः-तद्विमोचनेन विश्रामाः-चित्तसमाधिरूपाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः । अयं भावः-श्रमणोपासको जिनाऽऽगमसम्बन्धविमलीकृतबुद्धि-तया ' नरकनिगोदादि विविधदुःखपरम्परानुसारात्परिग्रहौ हेयाविति

તક કે સિલસિલે મેં બીચ બીચમેં વિશ્રાન્તિ લેના ચલના હૈ, ઉસી પ્રકાર શ્રમણોપાસક બી સાવચ વ્યાપાર કો છોડને કે લિચે ઉમકા પરિત્યાગ કરને કે લિચે અપને ત્યાગ કો ઉત્તરોત્તર વઢાતા હૈ વસ યહી હસકા વિશ્રામ હૈ | વિશ્રામ ચિત્ત સમાધિ રૂપ હોના હૈ, યચપિ-શ્રમણોપાસક જિનાગમ કે સમ્બન્ધ સે, ગુર્વાદિકોં કે સદુપદેશોંસે નિર્મલ બુદ્ધિ હોકર ' આરમ્મ '—ઔર પરિગ્રહ નરક નિગોદ આદિ વિવિધ દુઃખ પરમ્પરા કા જનક હૈ, દેખ્ત્ર બી રહા હૂં—આરમ્મ, પરિગ્રહોં સે અબી તક અકલ્યાણ

ભારવાહક ભારને નિશ્ચિત સ્થાને પહોંચાડતા સુધીમાં વચ્ચે વચ્ચે વિસામા લેતો રહે છે, એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસક પણ સાવધવ્યાપારને છોડવાને માટે—તેમનો પરિત્યાગ કરવાને માટે ધીરે ધીરે ત્યાગની માત્રા વધારતો જાય છે ખસ, એજ તેનો વિશ્રામ છે. વિશ્રામ ચિત્તસમાધિ રૂપ હોય છે. જો કે શ્રમણોપાસક જિનાગમના સંબંધથી, ગુરૂ આદિના સદુપદેશોથી એટલું તો સમજી શકે છે કે “ આરંભ અને પરિગ્રહ નરક નિગોદ આદિ વિવિધ દુઃખ પરંપરાના જનક છે. આરંભ પરિગ્રહ આદિને કારણે હું સુધી માફ અક-

जानन्नपि दुर्दमेन्द्रियमटपटलवशीभूतस्तत्र प्रवर्तमानः समय सन्तापकलापमुपैति,
भात्रयति चैवम्—

“ हियए जिणाणं आणा, चरियं मह एरिसं अपुन्नस्स ।

एयं आलप्पाल, अव्वो ? दूरं विराञ्चयइ । १ ।

हयमग्घाणं नाणं, हयमग्घाणं मणुस्समाहप्पं ।

जे किल लद्धविवेया, विचेट्ठिमो बालवालव्व । २ ।

ही होता चला आ रहा है, कल्याणाभिलाषो मेरे लिये अवश्य हेय त्याज्य है, ऐसा जान लेना है । तथापि—दुर्दम इन्द्रिय ससूह रूप नटो से वशी भून होकर प्रवृत्त तो होना है फिर भी आसक्ति से नहीं, किन्तु—गरभ लोहेका तवाको पकडनेके लिये जैसे डरता डरता अपनी प्रवृत्ति करता है । उस प्रवृत्ति में मोद युक्त नहीं होता है । किन्तु—पश्चात्ताप ही करता है क्योंकि—उसकी विचारधारा उस समय ऐसी हो जाती है—

“ हियए जिणाणं आणा ”—इत्यादि.

अरे ? मैं कितना नासमझ हूँ जो मेरे हृदय में जिनेन्द्रदेव की आज्ञा विराजित होने पर भी मेरा चरित्र—रहन सहन ऐसा बन रहा है. मेरा यह ज्ञान किस कामका जब कि ज्ञानके रहने पर भी मेरा मनुष्यभव मेरे हाथों नष्ट किया जा रहा है, मैं तो—सर्वथा अज्ञानी जैसा ही अपनी प्रवृत्ति करने में अभी तक लगा हुआ हूँ, इस प्रकार

व्याणु ञ थतुं रधुं छे कव्याणुनी अलिदाषा राधना अेवा भारे भारे तो ते अवश्य डेय (त्याज्य) छे ” छतां पणुं दुर्दम इन्द्रिय समूह इप लटोथी परास्त थछने तेमां प्रवृत्त तो थाय छे. परन्तु तेमां आसक्ता थछने प्रवृत्ति करतो नथी पणुं गरभ लोढाना तवाने पकडनानी जेम उरता उरता पोतानी प्रवृत्ति करे छे. ते प्रवृत्तिथी आनंद पाभतो नथी, पणुं तेना हृदयमां पश्चात्ताप ञ कर्या करे छे, कश्चु के ते समये तेनी विचारधारा आ प्रकारनी डोय छे—

“ हियए जिणाणं आणा ” इत्यादि—

“ अरे ! हुं केवो अणुसमणुं छुं के भारा हृदयमां जिनेन्द्र देवनी आज्ञा विराजित छोना छतां पणुं भारुं चरित्र अने रडेणीकरणी आ प्रकारना थनी गयां छे. भारुं आ ज्ञान शा कामतुं छे ? कश्चु के आ ज्ञान डोवा छतां पणुं हुं भारे मनुष्य भव भारे हाथे ञ इंगट शुभावी रह्यो छुं ? हुं तो त्रिलोक अज्ञानी डोढं अेवी रीते भारी प्रवृत्तिमां लल सुधी लीन रह्या ञ कइं छुं. ” आ प्रकारनी लावनाथी ओतप्रोत थयेला ते श्रम-

छाया—“ हृदये जिनाममाज्ञा चरित्रं ममेदृशमपुण्यस्य ।

एतदालप्यालम् अव्यो (अहो-आश्चर्य) दूरं विसंवदति । १ ।

हतमस्माकं ज्ञानं हतमस्माकं मनुष्यमाहात्म्यम् ।

यत् किल लब्धविवेका विचेष्टामहे बालवाला इव । २ । ” इति,

इत्थं भावयतस्तस्य चत्वार आश्वासा भवन्तीति । तद्यथा-यत्रापि खलु-
यस्मिन्नवसरे शीलव्रत-गुणव्रत-विरमण-प्रत्याख्यान-पोषधोपवास-तत्र शीलं-
चित्तसमाधिरूप, व्रतानि-स्थूलप्राणातिपात-विरमणादीनि पञ्च गुणव्रते-दिग्ब्रतो-
पभोगपरिभोगव्रतरूपे, विरमणम्-अनर्थदण्डविरमण रागादिविरमणं वा, प्रत्या-
ख्यानानि-नमस्कारसहितादीनि, पोषधोपवासः-अष्टम्यादिपर्वदिवसेष्वहारादि-
त्यागः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तान् प्रतिपद्यते-स्वीकरोति, तत्राधिक-शील-
व्रतादि स्वीकारेऽपि । तस्य-श्रावकस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ।

यत्रापि च खलु सामायिकं-समः-समत्वं रागद्वेषरहितत्वेन सर्वेषु जीवेषु
रसमानत्वं, समशब्दस्यात्र भावप्रधाननिर्दिष्टत्वात्, तस्याऽऽयः-प्राप्तिः समायः-

की भावना से ओतप्रोत बने हुवे इस श्रमणोपासक के चार आवास
होते हैं । इनमें इसका सर्व प्रथम आवास उस समय होता है, जब यह
चित्त समाधि रूप शीलको, स्थूल प्राणातिपात विरमण आदि पांच व्रतों
को, दिग्ब्रत उपभोग परिभोग रूप गुणव्रतों को, और-अनर्थदण्ड विर-
मण रूप विरमण को, अथवा—रागादि विरमण को तथा-नमस्कार
सहित पोषधोपवास को-अष्टमी आदि पर्व दिनों में आहारादि त्याग
को स्वीकार करता है—१

द्वितीय विश्राम तब होता है, जब-यह सामायिक को, तथा-देशा-
वकाशिक को धारण कर लेता है, रागद्वेष रहित होकर सब जीवों में

श्रमणोपासकना नीचे प्रमाणे चार आवास (विश्राम) होय छे-श्रमणोपासकने
सावध व्यापारना त्याग इप पडेये। विश्राम आ प्रकारने होय छे-त्यारे ते
चित्तसमाधि इप शीलने, स्थूल प्राणातिपात विरमण आदि पांच व्रताने, दिग्-
ब्रत उपभोग परिभोग इप गुणव्रताने, अने अनर्थदण्ड विरमणइप विरमणने,
अथवा रागादि विरमणने तथा नमस्कार सहित पोषधोपवासने-आठम आदि
पर्व दिनोमां आहारादि त्यागने स्वीकार करे छे।

भीजे विश्राम आ प्रकारने होय छे-त्यारे ते सामायिक तथा देशा-
वकाशिकने धारण करे छे, त्यारे सावध व्यापारना त्याग इप भीजे विश्राम

प्रवर्धमानशरदचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षणज्ञानादिलाभः, यद्वा - सम - साम्यं समभावजनितः प्रतिक्षणमपूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुभूत आत्मपरिणामः, तस्य आयो-
लाभः समाऽऽयः, स प्रयोजनमस्येति सामायिक व्रतम्, यद्वा-समस्याऽऽयो
यस्मात् तत् समाय तदेव सामायिकम्, तत् यत्र स्थितः श्रावकः श्रमणभूतो भवति,
तत् सावद्ययोगपरिवर्जननिरवद्ययोगप्रतिसेवनलक्षणं सामायिकमुच्यते । उक्तंच-

“ सामायिकं गुणानामाधारः खमिव सर्वभावानाम् ।

न हि सामायिकहीनाश्रणादिगुणान्विता येन । १ ।

तस्माज्जगाद भगवान् सामायिकमेव निरूपमोपायम् ।

शरीरमानसानेकदुःखनाशस्य मोक्षस्य । २ । ” इति,

सामायिकविवरणं विस्तरत उपासकदशाङ्गमूत्रस्यास्मत्कृतागार-धर्मसंजीवनी
टीकातोऽवसेयम् ।

अपनी समानता की भावना का नाम सम है, सम शब्द भावप्रधान है,
सम प्राप्ति समाय है । यह-समाय प्रवर्धमान शरच्चन्द्र चान्दनी जैसा
प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादि का लाभ रूप होता है ।

अथवा—समनाम, साम्य का है, यह-साम्य समभाव जनित-
आत्मपरिणाम है, और-यह प्रतिफल अनिर्वचनीय कर्मनिर्जराका हेतु
होता है, इस समका जो आय-लाभ है वह समाय है यह समाय
जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है । अथवा-समका लाभ जिससे
होता है वह-समाय है, यह-समाय ही सामायिक है । इस सामायिक
में स्थित श्रावक श्रमण समान होता है, क्योंकि- सामायिक व्रत सावद्य
योगका परिवर्जन-और निरवद्य योगका प्रति सेवनरूप होता है । कहा
भी है— ‘ सामायिकं गुणानामाधार ’—इत्यादि, इस सामायिक का

प्राप्त थाय છે. રાગદ્વેષથી રહિત થઈને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે સમાનતાની લાવના
રાખવી તેનું નામ ‘ સમ ’ છે ‘ સમ ’ શબ્દ ભાવપ્રધાન છે સમ પ્રાપ્તિનું
નામ ‘ સમાય ’ છે તે સમાય પ્રવર્ધમાન શરદ્ ચન્દ્રની ચાન્દની સમાન પ્રતિ-
ક્ષણ વલક્ષણ જ્ઞાનાદિના લાભરૂપ હોય છે અથવા ‘ સમ ’ એટલે ‘ સામ્ય ’
તે સામ્ય સમભાવ જનિત આત્મપરિણામ છે, અને તે પ્રતિપળ અનિર્વચનીય
કર્મનિર્જરાના કારણ રૂપ બને છે. આ સમનો જે આય (લાભ) છે તેનું નામ સમ ય
છે આ સમાય જેનું પ્રયોજન છે, તે સામાયિક છે અથવા સમનો લાભ જેનાથી થાય
છે તે સમાય છે, અને તે સમાય જ સામાયિક છે આ સામાયિકની આરાધના
કરતો શ્રાવક શ્રમણ સમાન હોય છે, કારણ કે સામાયિક વ્રત સાવધયોગના
પરિવર્જન રૂપ અને નિરવ તિસેવન રૂપ હોય છે. કહ્યું પણ છે
કે—“ સામાયિક આ સામાયિકનું વિશેષ વિવરણ

तथा-देशावकाशिकं-देशे दिग्ब्रतगृहीतस्य द्विकपरिमाणस्य विभागे अवकाशो-
ऽवस्थानं विषयो यस्य तद्देशावकाशं, तदेव देशावकाशिकं, तत् दिग्ब्रतगृहीतस्य
द्विकपरिमाणस्य प्रतिदिनं संक्षेपकरणलक्षणं सर्वद्वत-संक्षेपकरणलक्षणं वा मध्यक्-
सावधानतया अनुपालयति, तत्रापि च=सामायिकदेशावकाशिकानुपालनेऽपि च
तस्य एव आश्वासः प्रज्ञप्तः २।

यत्रापि च चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु-चतुर्दशी, अष्टमी, उद्दिष्टा=अमावास्या,
पौर्णमासी-पूर्णिमा, एतासु तिथिषु प्रतिपूर्णं-सम्पूर्णमहोरात्रं पोषथ सम्पगनुमा-
लपति, तत्रापि-चतुर्दश्यादितिथिषु प्रतिपूर्णपोषथानुपालनेऽपि च तस्यैव आश्वासः
प्रज्ञप्तः ३।

यत्रापि च खलु श्रमणोपासकः अपश्चिममरणान्तिरुसंलेखना-जोषणाजुष्टः-
पश्चाद्-अन्ते भवा पश्चिमा. न विद्यते पश्चिमा-अन्तिमा यस्या सा अपश्चिमा=
सा चामौ मरणान्तिरुसंलेखना-मरणमधीवर्तितपोविशेषः, तस्या जोषणा-सेवनं
तथा जुष्ट-सेवितः-युक्तो वा, जुष्टा अरश्चिममरणान्तिरुसंलेखनाजोषणा येन
स तथा, क्तान्तस्थात्र परनिपातः। तथा-मरुतपानप्रत्याख्यातः-प्रत्याख्याते-

विशेष विवरण मने उपासक दशाङ्ग सूत्रकी अगार संजीवनी टीका में
लिखा है वहां देखें। दिग्ब्रत में की गई दिशाओं में आने जाने की
मर्यादा को प्रतिदिन संक्षिप्त करना, अथवा-सर्व ब्रतोंको संक्षिप्त करना
इसका नाम-देशावकाशिक ब्रत है, इस सामायिक एवं-देशावकाशिक
ब्रत को सम्पक् रूप से पालना द्वितीय आवासविश्राम स्थान कहा गया
है, २। जहाँ-चतुर्दशी, अष्टमी, आदि पर्वतिथियों में सम्पूर्ण अहोरात्र
का जो पोषथ ब्रत पालन किया जाता है वह-उपासक का तीसरा
आवास-विश्रामस्थान है, ३ जहाँ श्रमणोपासक अपश्चिम-सर्वान्तिम-
मरणान्तिक संलेखना रूप तप विशेष का प्रीतिपूर्वक सेवन करता है,

उपासकदशांग सूत्रनी अगारसंजीवनी टीकां मे 'लजेष्टु' छे, ते त्वांथी
वांथी लेवुं. अमुक नियत दिशां अवर अवरनी मर्यादाने प्रतिदिन संक्षिप्त
करवी अथवा सर्व ब्रताने संक्षिप्त करवा तेनुं नाम देशावकाशिक ब्रत छे आ
सामायिक अने देशावकाशिक ब्रतनुं सम्पक् रीते पालन करवुं, अने अंथीनुं
विश्रामस्थान कहुं छे. श्रमणोपासकनु विश्रामस्थान-अठम, औदश अ द्वि पर्व
तिथीयोमां संपूर्ण अहोरात्र (दिनरात) तुं अ पोषथब्रत करवामां आवे छे,
ते तेनुं त्रीनुं विश्रामस्थान छे (४) अपश्चिम (अन्तिम)-मरणान्तिक संले-
खना इप तपविशेषतुं प्रीतिपूर्वक सेवन करवु, आरे प्रकाशना आहारना परि-

त्यक्ते भक्तपाने येन स तथा=त्यक्तभक्तपान इत्यर्थः, अत्रापि क्तान्तस्य परमयोगः ।
 तथा-पादपोषगतः-पादपो-दृक्षः स इव निर्व्यापारतया उपगतः-पादपोषगमन-
 नामकानशनविशेषं प्रतिपन्नः, तथा कालं-मरणकालम्-अनवकाङ्क्षन्-अनभिल-
 पन्, विहरति-सर्वतो निवृत्तस्तिष्ठतीति भावः, तत्रापि च तस्य एक आश्वासः
 प्रज्ञप्तः ४। (सू० ४) ।

पुनः पुरुषविशेषं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—उदिओदिण
 णाममेगे १, उदियत्थमिण् णाममेगे २, अत्थमिओदिण् णाम-
 मेगे ३, अत्थमियत्थमिण् णाममेगे ४। भरहे राया चाउरंत-
 चक्कवट्ठी णं उदिओदिण् १, बंभदत्ते णं राया चाउरंतचक्कवट्ठी
 उदिअत्थमिण् २, हरिण् सबले णाममणगारेणं अत्थमिओदिण्
 ३, काले णं सोयरिये अत्थमिअत्थमिण् ४। सू० ५ ।

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उदितोदितो नामैकः
 १, उदितास्तमितो नामैकः २, अस्तमितोदितो नामैकः ३, अस्तमितास्तमितो
 नामैकः ४; भरतो राजा चातुरन्तचक्रवर्ती खलु उदितोदितः १, ब्रह्मदत्तः खलु

तथा—भक्त पानका प्रत्याख्यान करता है, एवं—प्ररणाशंसा रहित हो
 कर पादपोषगमन नामक अनशन विशेष को सर्वतोभाव से धारता
 है वह-श्रमणोपासकका चौथा आवास-विश्राम स्थान है ॥ सू०४ ॥

“ पुनः पुरुष विशेषका निरूपण—

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि— ५

सूत्रार्थ—चार पुरुषजात कहे गये हैं, जैसे-प्रथम उदितोदित १ उदितास्त-
 मित-२ अस्तमितोदित-३ और-अस्तमितास्तमित-४ ।

त्याग पूर्वक भरणुनी आकांक्षापी रहित णनीने पादपोषगमन नामना संथारानुं
 सर्वतो भाव पूर्वक आराधन करनुं, ते श्रमणोपासकनुं योथुं विश्रामस्थान छे ॥ सू० ४ ॥

पुरुष विशेषनुं सूत्रकार निरूपणु करे छे—

‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—(सू. ५)

‘ सूत्रार्थ—चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) उदितोदित, (२) उदितास्तमित, (३)
 अस्तमितोदित अने (४) अस्तमितास्तमित

राजा चातुरन्तचक्रवत् उदितास्तमितः २, हरिकेशवलो नामानगरः खलु अस्तमितोदितः ३, कालः ख सौकरिकः अस्तमितास्तमितः। (मू० ५) ।

टीका—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—स्पष्टम्—नवरम्—एकः पुरुषः उदितोदितः—पूर्वमुदितः — उत्तमकुलवत्समृद्धिपुण्यकर्मादिभिरभ्युदयं प्राप्तः पश्चादपि उदितः—अमन्दानन्द सन्दोहरूपमोक्षोदयं प्राप्त उदितोदितः, एतादृशं पुरुषमुदाहरति—‘ भरहे राये ”—त्यादि—यथा—चातुरन्त—चक्रवर्ती—चत्वारः—दिक्त्रये समुद्राः एकस्यां हिमवांश्च अन्ताः—अवधयो यस्याः सा चातुरन्ता पृथिवी,

चातुरन्त चक्रवर्ती भरत नरेश उदितोदित ये, १ चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त उदितास्तमित ये, २ हरिकेश नामके अनगर अस्तमितोदित ये, ३ एवं—सूकरका शिकार करनेवाला कालसौकरिक अस्तमितास्तमित था, ४ ।

टीकार्थ—इस सूत्रद्वारा जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं, उनके सम्बन्ध में स्पष्टीकरणयों हैं—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो—उत्तम कुल में जन्म लेना, वल समृद्धि से सम्पन्न होना, तथा—पुण्यकर्मादिका अनुभव करना आदि अभ्युदय को पहले से जन्म से ही प्राप्त करता है, और बाद में भी वह अत्यन्त आनन्द समूह—अव्याबाध—मोक्षोदय को प्राप्त कर लेता है, इस प्रथम भङ्गमें चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभनन्दन भरतराजा हुवे हैं। तीन दिशाओंमें समुद्र और एक दिशामें हिमवान् ये चार जिसके अन्त हैं अवधिर्था हैं, ऐसी चतुरन्ता पृथिवी का जो स्वामी हों वे चातुरन्त हैं, तथा—चक्रसे छत्रं डमें वर्तन करना (राजकरना)

चातुरन्त चक्रवर्ती भरतराज उदितोदित होता चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त उदितास्तमित होता हरिकेश नामका अणुगार अस्तमितोदित होता, अने सूकरको शिकार करनेवाला कालसौकरिक अस्तमितास्तमित होता,

आ चार प्रकारका पुरुषोक्तं स्पष्टीकरण आ प्रमाणे समञ्जसु—

(१) उदितोदित—कोई एक पुरुष जेवा होय छे के जे उत्तम कुलमां जन्म ले छे, जग समृद्धि आदिथी संपन्नता, पुण्यकर्माने अनुभव आदि अभ्युदय जन्मथी ज प्राप्त करे छे, अने आ मनुष्यत्वतुं आयुथ पूई करीने अत्यन्त आनन्ददायक, अव्याबाध मोक्षोदयने पण प्राप्त करे छे. चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभनन्दन भरत राजने आ प्रकारका पुरुष उही शक्य त्रयु दिशा—ओमां समुद्र अने एक दिशामां हिमवान् पर्वत, आ चार जेनां अन्त (अवधि—६६) होय छे जेवी चातुरन्ता पृथिवीने जे स्वामी होय तेने

अयं (स्वामी) चातुरन्तः, स चासौ चक्रवर्ती-चक्रेण सह वर्तत इत्येवंशिलश्चक्रवर्ती च चातुरन्तचक्रवर्तीभरतः-ऋषभनन्दनःप्रसिद्धो राजा खलु उदितोदितोबोधः१।

तथा-एकः पुरुषः उदितास्तमितः-उदितश्चासावस्तमितश्च तथा=पूर्व सूर्य इवोदितः पश्चात् सकलसमृद्धिभ्रष्टत्वाद् दुर्गतिप्राप्तत्वाच्च अस्तमितो भवति। यथा-ब्रह्मदत्तश्चातुरन्त द्वादश चक्रवर्ती राजा, स हि पूर्व सुकुलोत्पन्नत्वादिना निज-बाहुबलोपार्जितमहासाम्राज्यत्वेन चाभ्युदितः पश्चाच्चानुचितकारणज्जातकोप ब्राह्मणप्रयुक्तपशुपाल प्रक्षिप्तधनुर्गोलिकाघातभगनेत्रगोरुकत्वेन कालधर्मप्राप्त्य-नन्तरं सप्तमनरके प्रतिष्ठानाख्यनरकावासस्य महातीव्रवेदनानुभवेन चास्त-मित इति २।

जिसका स्वभाव हों वे चक्रवर्तीहैं, ऐसे चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभदेव तीर्थ करके पुत्र राजा भरत उदितोदित कहे गये हैं। तथा-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो उदितास्तमित होता है पहले वह सूर्य जैसा उदित होता है-पश्चात्-सकल समृद्धि से भ्रष्ट होजाने से और दुर्गतिमें पतित होने से अस्तमित हो जाता है-२ ऐसा चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्म-दत्त हुआ है, यह पहले अच्छे कुलमें उत्पन्न हुआ, वहाँपर उसने अपने बाहुबल प्रतापसे पट्ट खण्डकामहान् साम्राज्य स्थापित कर लिया, चक्रवर्ती बन गया, पश्चात् किसी अनुचित निमित्तवश उत्पन्न कोपसे युक्त हो गया, इत्यादि और सब कथन इसकी कथामें निबद्ध हैं। बादमें यह मर कर सप्तम नरकमें अप्रतिष्ठान नामक नरकावासकी महा तीव्र वेदनाको अनुभव करता करता अस्तमित हो गया। इस

चातुरन्त कहे छे अकथी वर्तन करवाने केने स्वभाव डोय तेने अकवती कहे छे. जेवा चातुरन्त अकवती ऋषभदेव तीर्थकरना पुत्र राजा भरतने उदि-तोदित कहेवामां आवेख छे

(२) उदितास्तमित पुरुष-कोई पुरुष पड़ेलां सूर्य जेवो उदित अथवा अक्युदय संपन्न डोय छे, पण पाछणथी सकल समृद्धि गुभावी जेसवाथी अने दुर्गतिमां जवाथी अस्तमित (अक्युदयविहीन) थछ जय छे. चातुरन्त अकवतीं ब्रह्मदत्त राजने आ प्रकारमां गण्वावी शकय. पड़ेलां तो ते सारा कुणमां उत्पन्न थयो हुतो. तेजे पोताना आहुणजना प्रतापथी छ अउनु मडान साम्रान्त्य स्थाप्युं-अकवतीं थछ गयो. त्यार आह कोछ अनुचित निमित्तथी उत्पन्न थयेला कोधने अधीन थयो, इत्यादि कथन तेनी कथामांथी जण्णी लेवुं. त्यार आह ते मरीने सातमी नरकना अप्रतिष्ठान नामना नरकासमां उत्पन्न थछने मडा तीव्र वेदनाने अनुभव करवा लाग्यो आ रीते ते अस्तमित थछ

તથા—એકઃ પુરુષઃ અસ્તમિતોદિતઃ—અસ્તિમિતથાસાવુદિતથ તથા=પૂર્વે હીન-કુલોત્પન્નત્વ — દુર્ભગત્વાદિનાઽસ્તમિતઃ—અવનતઃ, પશ્ચાત્ સમૃદ્ધિસુકીર્તિસુગતિ-લાભાદિનોદિતો ભવતિ, યંથા—હરિકેશવલઃ—તદાચ્યઃ અનગારઃ—સાધુરભૂત, સ હિ જન્માન્તરોપાર્જિતનીચગોત્રકર્મપ્રાપ્તચાણ્ડાલકુલત્વેન દૌર્ભાગ્યદારિદ્ર્યા-કુલત્વેન ચાસ્તમિતોઽપિ પશ્ચાત્ પ્રવ્રજિતો નિશ્ચલચરણગુણવશીકૃતદેવત્વેન પ્રસિદ્ધિ સુગતિલાભેન નોદિતોઽભૂત્ ।૩।

તરહ ઉદિત હોકર અસ્તમિત હોનેવાલા પ્રાણી હસ દ્વિતીય ભક્ષમે પરિ-ગણિત હોતા હૈ । હસ કથાકો વિસ્તૃત રુપમે મૈને ઉત્તરાધ્યયનકી પ્રિય-દર્શિની ટીકાકે ૧૩વે અધ્યયન ૭૨૫ પૃષ્ઠમે લિખ્વાહૈ વહાં દેગ્વલે । કોઈએક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો પહેલે હીન કુલમે ઉત્પન્ન હુવા દુર્ભગત્વ-દુર્ગ-ત્યાદિમે અસ્તમિત રહા વાદ મે સમૃદ્ધિ-સુગતિ-સુકીર્તિ લાભસે ઉદિત હો જાના હૈ, જૈસે-હરિકેશવલ અનગાર । હસને જન્માન્તરમે ઉપા-ર્જિત કર્મોદયસે ચાણ્ડાલ કુલમે જન્મ લિયા ઓર દૌર્ભાગ્ય દારિદ્ર્યાદિસે આકુલ રહા વાદમે પ્રવ્રજિત હોકર ચારિત્ર આરાધનાકી જિસસે મરણકા-લમે કાલકર દેવપર્યાય સે ઉત્પન્ન હુવા । યહ ચારિત્ર ૩. કે ઘારહવે અધ્યયન મે કથિત હૈ એસા વ્યક્તિ અસ્તમિતોદિત કહા ગવા હૈ ૩।

ગયો. આ રીતે ઉદિત થઈને અસ્તમિત થતા જીવનું આ બીજા ભાગમાં પ્રતિ-પાદન કરવામાં આવ્યું છે પહેલાં અભ્યુદય અને પછી પતન-પામતાં પુરુષના આ ભાગમાં સમાવેશ થાય છે. પ્રહ્લદત્તની કથા ઉત્તરાધ્યયનની પ્રિયદર્શિની ટીકાના ૧૩ માં અધ્યયનના ૭૨૫ માં પાના પર આપી છે, તે ત્યાંથી તે વાંચી લેવી.

(૩) અસ્તમિતોદિત પુરુષ—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં દુર્ગતિમાં હોય અને ત્યાંથી હીનકુલમાં ઉત્પન્ન થાય, અને ત્યારબાદ સમૃદ્ધિ, સુકીર્તિ, અને સુગતિ પામે તે એવા પુરુષને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે એવો પુરુષ પતનના પંથ તરફથી ઉત્થાનને પથે વળે છે હરિકેશવલ અણુગાર આ પ્રકારના પુરુષ થઈ ગયા. તેમણે જન્માન્તરમાં ઉપાર્જિત પાપકર્મોના ઉદયથી ચાંડાલ કુળમાં જન્મ લીધો હતો, તેઓ અતિશય દારિદ્ર્યથી પીડાતા હતા, પણ ત્યારબાદ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરીને ચારિત્રારાધના કરીને મનુષ્યભવનું આશુ પૂર કરીને દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ ગયા તેમની કથા પણ અન્ય ગ્રન્થોમાંથી વાંચી લેવી એવા પુરુષને ‘અસ્તમિતોદિત’ કહે છે.

तथा—एकः पुरुषः अस्तमितास्तमितः—अस्तमितश्चासावस्तमितस्तथा= पूर्वमधार्मिकाधर्मानुरागाधर्मसेव्यधर्मिष्ठाधर्माख्यायधर्मराग्यधर्मप्रलोक्यधर्मजौवि दुष्कुलोत्पन्नत्व सावद्य व्यापारत्वादिना कीर्तिसमृद्धिरूपतेजोरहितत्वात् सायंकालसूर्यइवास्तमितः पश्चादपि दुर्गतिगमनादस्तमितो भवति, यथा— निश्शीलो निर्मर्यादो निष्ठुरो निष्करुणः कालः—तदाख्या सौकरिकोऽस्तमितास्तमितोऽभूत्, स हि सूकरैश्वरतीति सौकरिकः—सूकरमृगयाकारीति यथार्थे प्रति दिने पञ्चशतमहिषघातको दुष्कुलोत्पन्नत्वात् सकललोकनिन्दितत्वात् अकृत्यकारित्वाच्च पूर्वमस्तमितः पश्चादपि मृत्वा सप्तमपृथिवी गत इति अस्तमित इति । ४ । (सू० ५) ।

तथा कोई एक पुरुष अस्तमित होकर अस्तमितही बना रहता है, ऐसा पुरुष अधार्मिक अधर्मरागी—अधर्माख्यायी—अधर्मानुष्ठाता—अधर्म जीवी होता है और सर्वदा सावद्यव्यापारसे कीर्ति—समृद्धि—रूप—तेजोरहित बनकर सायं सूर्य के समान अस्तमित बन जाता है । और फिर बादमें भी दुर्गति गमनसे अस्तमित बन जाता है । इसमें दृष्टान्तभूत कालसौकरिकहै, यह निश्शील—मर्यादारहीत था दयाहीन था सूकरकी शिकारका प्रेमी था, जोकि—प्रतिदिन पांचसौ भैसा का घात करता था, दुष्कुलोत्पन्न होनेके नति सकलजनों द्वारा निन्दित था, और अकृत्यकारी था इस कारण यह पहलेही से अस्तमित हुआ और बादमें भी मरकर सप्तम पृथिवीमें गया—अस्तमित बना रहा ॥सू.५

(४) अस्तमितास्तमित पुरुष—कोई एक पुरुष पड़ेदां पणु अस्तमित (अव्युद्यविहीन) होय छे अने पछी पणु अस्तमित न रहे छे. अये पुरुष अधार्मिक, अधर्मरागी, अधर्माख्यायी, अधर्मानुष्ठाता अने अधर्मलुवी होय छे; अने सर्वदा सावद्य व्यापारमां प्रवृत्त रहेवाने कारणे कीर्ति, समृद्धि, इय अने तेज रहित न रहेवाने कारणे सायंकालिन सूर्यसमान अस्तमित न भनी लय छे. वणी भरीने दुर्गतिमां नवाने लीधे अस्तमित न थालु रहे छे. कालसौकरिकने आ प्रकारमा गणुवी शकय. ते नि.शील—मर्यादाविहीन हतो. दयाहीन हतो, सूवरना शिकारने शोभीन हतो, ते दररोज ५०० पाडाने घात करतो हने, हीन कुगमां नन्मेदो होवाथी सकण नने तेनी निंदा करता हता अने अकृत्यकारी हतो. आ रीते पड़ेदां पणु ते अस्तमित हतो अने आभी जिहगी पणु अये न रह्यो. ते भरीने सातमी नरकमां उत्पन्न थयो, आ रीते तेणु दुर्गति इय अस्तमिता प्राप्त करी. । सू. ५ ।

તે એવં ત્રિચિત્રભાવૈશ્ચિન્ત્યન્તે તે સર્વ એવ જીવાશ્ચતુર્ણુ રાશિશ્ચવતરન્તીતિ
ત પ્રદર્શયિતુમાહ—

મૂલમ્—ચત્તારિ જુમ્મા પળ્લન્તા તં જહા-કલ્ડજુમ્મે ?
તેઓએ ૨, દાવરજુમ્મે ૩, કલિઓએ ૪ । સૂ૦ ૬ ।

છાયા—ચત્તારો યુગ્માઃ પજ્જાતાઃ, તત્તયા—કૃતયુગ્મઃ ૧, ઝ્યોજઃ ૩, દ્વાપર
યુગ્મઃ ૨, કાલ્યોજઃ ૪ । (સૂ૦ ૬) ।

ટીકા—“ચત્તારિ જુમ્મા” ઇત્યાદિ=યુગ્માઃ—રાશિવિશેષાઃ ચત્તારઃ પ્રબ્રહ્માઃ
તથથા—કૃતયુગ્મઃ—ચતુષ્કાપહારેણ અપક્રિયમાણશ્ચતુઃપર્યવસિતો રાશિઃ ૧ । તથા—
ઝ્યોજઃ—ત્રિપર્યવસિતો રાશિઃ ૨, દ્વાપરયુગ્મઃ—દ્વિપર્યવસિતો રાશિઃ ૩, કલ્યોજઃ—

હસ પ્રકારકે વિચિત્ર ભાવોંસે જીવ વિચારે જાતે હૈં, વે હી સય
જીવ ચાર રાશિયોંમેં અવનરિત હોતેહૈં, યહી જ્ઞાન અવ સૂત્રકાર પ્રદર્શિત
કરતે હૈં—“ચત્તારિ જુમ્મા પળ્લન્તા—” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—યુગ્મ ચાર કહે ગયે હૈં, એક—કૃત યુગ્મ ૧ દ્વિતરા—ઓજ—૨
ત્રીસરા દ્વાપર યુગ્મ—૩ ઓર ચૌથા—કલ્યોજ—૪

ટીકાર્થ—યુગ્મ શબ્દસે યહા રાશિ વિશેષ ગૃહીતહૈં, વે યુગ્મ ચાર પ્રકારકે
જો કહે ગયે હૈં ડસકા તાત્પર્ય એસા હૈ—જિસ રાશિમેં ચારકો ઘટાને
પર અન્તમેં ચાર હી વચતે હોં વહ કૃતયુગ્મ રૂપ રાશિ હૈ, જિસ રાશિમેં
ત્રીનકો ઘટાને પર ત્રીનહી વચતે હોં વહ રાશિ ઝ્યોજ હૈ, જિસ રાશિમેં
સે દો કો ઘટાને પર દોહી વચે વહ રાશિ દ્વાપર યુગ્મ હૈ, ઓર જિસ
રાશિમેંસે એકકો ઘટાને પર અન્તમેં એક હી વચતા હૈ વહ—રાશિ કલ્યોજ
હૈ । યહાં ગણિતકી પરિભાષામેં યુગ્મ શબ્દ સે સમ રાશિ ઓર—ઓજ

વિવિધ ભાવોની અપેક્ષાએ છવોની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર સઘળા
છવોને ચાર રાશિઓમાં વિભક્ત કરી નાણે છે—“ચત્તારિ જુમ્મા પળ્લન્તા”
ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—યુગ્મ ચાર કહ્યા છે—(૧) કૃત યુગ્મ, (૨) ઝ્યોજ, (૩) દ્વાપર યુગ્મ,
અને (૪) કલ્યોજ

‘યુગ્મ’ પદ અહીં રાશિવિશેષનું વાચક છે તેના ચાર
પ્રકારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—જે રાશિમાં ચારને ઘટાવવાથી અન્તે
ચાર જ વધે છે તેને કૃતયુગ્મ રૂપ રાશિ કહે છે. જે રાશિમાં ત્રણને ઘટાવ-
વાથી અન્તે ત્રણ જ વધે છે તે રાશિને ઝ્યોજ કહે છે જે રાશિમાં બેને
ઘટાવવાથી બે જ વધે છે તે રાશિને દ્વાપર યુગ્મ કહે છે જે રાશિમાં એકને
ઘટાવવાથી અન્તે એક જ વધે છે તે રાશિને કલ્યોજ કહે છે અહીં ગણિ-
તની પરિભાષામાં યુગ્મ શબ્દથી સમરાશિ અને ઝ્યોજ શબ્દથી વિષમરાશિ

एकपर्यवसिती राशिः । ४ । इह गणितपरिभाषायां युग्मशब्देन समराशिरुच्यते, ओजशब्देन-तु विषमराशिः । इति सिद्धान्तः । सू० ६ ॥

उक्तराशीन् नारकादिषु निरूपयितुमाह—

मूलम्—नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पणत्ता, तं जहा- कडजुम्मे १, तेओए २, दावरजुम्मे ३, कलिओए ४, एवं असुरकुमाराणं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउ-काइयाणं वाउकाइयाणं सव्वेसिं जहा णेरइयाणं । सू० ७ ।

छाया—नैरयिकाणां चत्वारो युग्माः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृतयुग्मः १, ज्योजः २, द्वापरयुग्मः ३, कल्पोजः ४ । एवमसुरकुमाराणां यावत् स्तनितकुमाराणाम्, एवं पृथिवीकायिकानाम् अर्कायिकानां तेजस्कायिकानां वायुकायिकानां सर्वेषां यथा नैरयिकाणाम् । (सू० ७)

टीका—“नेरइयाणं चत्तारि” इत्यादि-स्पष्टम् । नवरं-नैरयिकादारभ्य वैमानिक पर्यन्ताश्चतुर्विंशति दण्डकस्थाः सर्वेऽपि जीवाः कृतयुग्मादि श्रतुर्विधा एव भवन्ति जन्म-मरणाभ्यां न्यूनाधिकत्वसम्भवात् । (सू० ७)

शब्दसे विषम राशि कही जाती है, तथा-लोकमें कृतयुग्मादि शब्दसे तो सत्ययुग आदि युग चतुष्टय कहा जाता है । सू० ६ ॥—

अथ सूत्रकार उक्त राशियोंका निरूपण नरकादिकोमें करते हैं—

“नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पणत्ता” इत्यादि ७ ॥

नैरयिकों के चार युग्म होते हैं, कृतयुग्म-१ ज्योज-२ द्वापर युग्म ३ और कल्पोज-४ इसी तरह-असुर कुमारोंसे लेकर यावत् स्तनित-कुमार तक पृथिवीकायिक-अर्कायिक-तेजस्कायिक-वायुकायिकों में

कडेवाभां आवे छे; तथा लोकभां कृतयुग्म आदि शब्द द्वारा सत्ययुग आदि चार युग न अहण्ण थाय छे ॥ सू० ६ ॥

हवे सूत्रकार उपर्युक्त राशिओतुं नारकादिकोमां निरूपण करे छे—

“नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पणत्ता” इत्यादि—

नारकाता चार युग्म होय छे-(१) कृतयुग्म, (२) ज्योज, (३) द्वापर युग्म अने (४) कल्पोज. ये न प्रमाणे असुरकुमारोथी लघने स्तनितकुमारो सुधीना, पृथ्वीकायिक, अर्कायिक, तेजस्कायिक अने वायुकायिकोमां पण्ण चार युग्म कहे छे. आ कथननो भावार्थ ये छे के नारक आदि चार प्रकारना

પુનર્જીવાનેવ ભાવૈર્નિરૂપયતિ—

મૂલ્મ- ચત્તારિ સૂરા પળ્લગ્ત્તા, તં જહા--સ્વંતિસૂરે ૧, તવસૂરે
૨, દાણસૂરે ૩, યુદ્ધસૂરે ૪। સ્વંતિસૂરા--અરહંતા ૧, તવસૂરા--
અણગારા ૨, દાણસૂરે--વૈશ્રવણે ૩, યુદ્ધસૂરા-વાસુદેવા ૪। સૂ૦ ૮।

જાયા—ચત્તાર: સૂરા: પ્રજ્ઞા:; તથા-ક્ષન્તિશૂર: ૧, તપ:શૂર: ૨, દાન-
શૂર: ૩, યુદ્ધશૂર: ૪। ક્ષન્તિશૂરા:-અર્હન્ત: ૧, તપ:શૂરા:-અનગારા: ૨, દાન
શૂર:-વૈશ્રવણ: ૩। યુદ્ધશૂરા:-વાસુદેવા: ૪। (સૂ૦ ૮)।

ટીકા—“ ચત્તારિ સૂરા ” ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરં-શૂરા: -વીરા:, ક્ષાન્તિ:-
ક્ષમા-તત્ર શૂર:, एवं તપ: શૂરાદયો વોધ્યા: ૧ ક્રમેણ તાનુદાદરતિ-‘ સ્વંતિસૂરા ’
ઇત્યાદિ-ક્ષાન્તિશૂરા:-અર્હન્ત: શ્રીમહાવીરસ્વામિવત્ ૧, તપ:શૂરા:-અનગારા:-

ચાર યુગ્મ કહે ગયે હૈં । તાત્પર્ય એસા હૈં કિ-નૈરયિક આદિ ચાર પ્રકારકે
યુગ્મ વાલે હો કારભી જન્મ-માર્ગ લેકર ન્યૂનાધિક હોતે રહતે હૈં । સૂ. ૭।

અથ સૂત્રકાર ભાવોંકો લેકર જીવોંકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

“ ચત્તારિ સૂરા પળ્લગ્ત્તા ” ઇત્યાદિ ૮

સૂત્રાર્થ-શૂર ચાર પ્રકારકે હોતે હૈં, ક્ષાન્તિશૂર-૧ તપ:શૂર-૨ દાનશૂર
-૩ ઓર યુદ્ધશૂર-૪ इनमें-ક્ષાન્તિશૂર અર્હન્ત હૈં-૧ તપ:શૂર-અન-
ગાર હૈં-૨ દાનશૂર-વૈશ્રવણ હૈં-૩ યુદ્ધશૂર-વાસુદેવ હૈં ૪

ટીકાર્થ-ક્ષાન્તિમેં અગ્રેભરકો ક્ષાન્તિશૂર, તપસ્થામેં પ્રધાનકો તપ:શૂર, દાન
દેનેમેં જો હિવકિચાહટ નહીં કરે વે દાનશૂર, યુદ્ધમેં નામ કમાનેવાલે કો
યુદ્ધશૂર કહતે હૈં । ઇસી જ્ઞાનકો સૂત્રકારને દૃષ્ટાન્ત દેકર સમજાયા હૈં,

યુગ્મ (રાશિ) વાળા હોવા છતાં પણ જન્મ-મરણની અપેક્ષાએ ન્યૂનાધિક
થતાં રહે છે. । સૂ. ૭ ।

હવે સૂત્રકાર ભાવોંની અપેક્ષાએ જીવોંની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ ચત્તારિ સૂરા પળ્લગ્ત્તા ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-શૂર ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) ક્ષાન્તિશૂર, (૨) તપ:શૂર, (૩) દાન-
શૂર અને (૪) યુદ્ધશૂર ક્ષાન્તિશૂર અર્હન્ત હોય છે, તપ શૂર અણુગાર હેય
છે, દાનશૂર વૈશ્રવણ છે અને યુદ્ધશૂર વાસુદેવ છે

ટીકાર્થ—ક્ષાન્તિ પ્રધાન પુરુષને ક્ષાન્તિશૂર, ઉચ તપસ્થા કરનારને તપ:શૂર, દાન
આપવામાં જે પાછો પડતો નથી તે દાનશૂર અને યુદ્ધમાં વીરતા બતાવના-
રને યુદ્ધશૂર કહે છે. અર્હન્ત મહાવીર પ્રભુ ક્ષાન્તિ (ક્ષમા) માં શૂર ગણાયા,

साधवः धन्यनामानगारवत् २, दानशूरः-वैश्रवणः-कुवेराख्य उत्तरदिग्भोरूपालः, तस्य तीर्थङ्कगादिजन्मपारणक-प्रभृतिकल्याणकेषु रत्नवृष्टिकारित्वात्, प्रभुसेवक-दैन्यदूरीकरत्वाच्च । उक्तं च-“ वेसमणवयणसंपेरिया उ ते तिरियजंभगा देवा ।

कोडिगसो हिरण्णा, रयणाणि य तत्थ उवणेति ।१।”

छाय —“ वैश्रवणवचनसंपेरितास्तुते तिर्यग्जृम्भका देवाः ।

कोट्यग्रगो हिरण्यानि रत्नानि च तत्रोपनयन्ति । १ । ” इति,

युद्धशूरा वासुदेवाः श्रीकृष्णवत्, तस्य पट्टचधिकशतत्रयसंख्य-युद्धेषु विज-यित्वात् । (सू० ८) ।

पुनर्जीवानेव भावैर्निरूपयति-

मूलम्-चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-उच्चे णाममेगे उच्चच्छंदे १, उच्चे णाममेगे णीअच्छंदे २, णीए णाममेगे उच्चच्छंदे ३, णीए णाममेगे णीयच्छंदे ४। ॥ सू० ९ ॥

छाया — चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-उच्चो नामैक उच्चच्छन्दः

अर्हन्त महावीर स्वामी क्षान्ति क्षमामें शूर कहे गये हैं १ धन्य नामक अनगारकी तरह साधुजन तपःशूर होते हैं-२ उत्तरदिक्रूपाल कुवेर दानशूर हैं-३ यह कुवेर आदिके जन्म कल्याणके अवसर पर और पारणक आदि समयमें रत्नोंकी वर्षा करता है, इसलिये-इसे दानशूर कहा गया है उम समय यह प्रभु सेवकके भेदभावको दूर कर देता है । कहाभी हैं-वेसमाणवयणसंपेरिया-इत्यादि कृष्णकी तरह वासुदेव युद्धशूर होते है श्री कृष्ण तीनसौ साठ युद्धमें विजयी हुवे हैं ॥ सू० ८ ॥

पुनः भावोंको लेकर सूत्रकार जीवोंको ही निरूपण करते हैं-

“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ”-इत्यादि ९

पुरुष जात चार कहे गये हैं, उच्च उच्चच्छन्दवाला-१ उच्च नीच

धन्य नामना अशुभार जेवा साधुओ तपःशूर गणाय छे उत्तर दिशानो दिक्-पाल दानशूर गणाय छे आ कुवेर तीर्थ करना जन्म कल्याणक, पारणा आदि अवसरे रत्नानी वृष्टि करे छे तेथी तेने दानशूर कह्यो छे ते समथे तेस्वाभी अने सेवकना लेहसावने हर करी नापे छे, कहु पणु छे के-“ वेसमण वयण संपेरिया ” इत्यादि कृष्णनी जेम वासुदेव युद्धशूर छाय छे श्री कृष्णे उ६० युद्धोमां विजय प्राप्त कयो हुतो । सू ८ ।

भावोनी अपेक्षाओ सूत्रकार एवोनु विशेष निरूपणु करे छे-

“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि-

चार प्रकारना पुरुषो कह्यो छे-(१) उच्च उच्च छन्दवाणो, (२) उच्च

१, उच्चो नामैको नीचच्छन्दः २, नीचो नामैक उच्चच्छन्दः ३, नीचो नामैको नीचच्छन्दः ४ । (सू० ९) ।

टीका—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-स्पष्टम् । नवरम्-एकः कश्चित् पुरुषः उच्चः-शरीरकुलसमृद्ध्यादिभिर्महान्, उच्चच्छन्दः-उच्चच्छन्दोऽभिप्रायो यस्य स तथा=उत्कृष्टाभिप्रायवान् भवति, औदार्यादिसम्पन्नत्वात् १, तथा-एकः-अन्यः पुरुषः उच्चोऽपिसन् नीचच्छन्दः-अपकृष्टाभिप्रायवान् भवति मलिनविचारत्वात् २, तथा-एकः-अपरः पुरुषः नीचः-शरीरकुलविभवादिभिर्हीनोऽपि उच्चच्छन्दो भवति ३, तथा-एकः-इतरः पुरुषस्तु नीचो नीचच्छन्दो भवति ४। सू० ९।

अनन्तरं नीचाभिप्राय उक्तः स च लेश्याविशेषाद्भवतीति लेश्यां निरूपयति-

मूलम्-असुरकुमाराणां चत्वारि लेसाओ पणत्ताओ, तं जहा -कणहलेसा १, णीललेसा २, काउलेसा ३, तेउलेसा ४।

छन्दवाला-२ नीच उच्च छन्दवाला-३ एवं नीच नीचछन्दवाला-४ तात्पर्य यह है कि जो पुरुष शरीर-कुल-समृद्धि आदि से महान् महान् होता हुआ भी उदारता आदि गुणों से युक्त होने के कारण अभिप्राय से महान् होता है वह-प्रथम भङ्गमें परिणत हुआ है । तथा-जो शरीर-कुलादिसे महान् होता हुआ भी मलिन विचार वाला होने के कारण अपकृष्ट अभिप्रायवाला होता है, वह-द्वितीय भङ्ग में गिना गया है । तथा-जो शरीर-कुल-विभव आदि से हीन होता हुआ भी उन्नत विचार वाला होता है वह-तृतीय भङ्ग में गिना गया है । और-जो शरीर-कुल-आदि से हीन होता है-और अभिप्राय से भी हीन होता है-वह चतुर्थभङ्ग में-लिया गया है ॥ सू० ९ ॥

नीच-छन्दवाणो, (३) नीच उच्च छन्दवाणो अने (४) नीच नीच छन्दवाणो.

इवे आ चारे प्रकारनुं स्पष्टीकरण् करवाभां आवे छे-(१) केछ पुरुष अवेो डोय छे के ने शरीर, कुल अने समृद्धिनी अपेक्षाअे पण् महान् डोय छे अने उदारता आदि गुणोथी युक्त डोवाने कारणे विचारोनी अपेक्षाअे पण् महान् डोय छे (२) केछ पुरुष शरीर, कुल आदिनी अपेक्षाअे महान् डोवा छतां मलिन विचार, दोष आदिने कारणे अधम डोय छे. (३) केछ ३प अवेो डोय छे के ने शरीर, कुल, समृद्धि आदिनी अपेक्षाअे हीन डोवा छतां पण् उन्नत विचारोवाणो डोय छे. (४) केछ पुरुष शरीर, कुल, वैभव आदिनी अपेक्षाअे पण् हीन डोय छे अने औदार्य आदि गुणो अने विचारोनी अपेक्षाअे पण् हीन न डोय छे. । सू. ९ ।

एवं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउवणस्सइका-
इयाणं वाणमन्तराणं सव्वेसिं जहा असुरकुमाराणं ॥सू०१०॥

छाया—असुरकुमाराणां चतस्रो लेश्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृष्णलेश्या १,
नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवं यावत् स्तनितकुमाराणाम्।
एवं पृथिवीकायिकानामव्वनस्पतिकायिकानां व्यन्तराणां यथा असुरकुमाराणाम्।
॥ सू० १० ॥

टीका—“ असुरकुमाराणं ” इत्यादि—असुरकुमाराणां लेश्याः—लिङ्ग्यते-
श्लिष्यते कर्मणा संबध्यते जीवो याभिस्ता लेश्याः—कर्मणा सह सम्बन्धे हेतुभूता
आत्मपरिणामविशेषाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कृष्णलेश्या—कृष्णावासौ लेश्या
कृष्णलेश्या १, एव नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवम्—अनेन
प्रकारेण स्तनितकुमारान्तानां देवानां चतस्रो लेश्या बोध्याः। एताश्चतस्रो लेश्या
असुरकुमारादिस्तनितकुमारान्तानां द्रव्यतो भवन्ति। भावतस्तु सर्वेषां देवानां पञ्च-

नीच अभिप्रायवाला होना—यह लेश्या विशेष से होता है, अतः—
अब सूत्रकार लेश्या की प्ररूपणा करते हैं—

“ असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ ”—इत्यादि-१०

टीकार्थ—असुरकुमारों को चार लेश्याएं कही गई हैं। जिसके द्वारा जीव
कर्मों से बद्ध होना है वह लेश्या है। यह लेश्या कर्म के साथ सम्बन्ध
होने में हेतु है—आत्मा का परिणाम विशेष है। कृष्णलेश्या, नीललेश्या,
कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, ये लेश्याएं असुरकुमारों को जैसे होती हैं।
वैसे—स्तनितकुमार तक के देवों को भी होती हैं। इन में ये लेश्याएं
द्रव्य की अपेक्षा से कही गई हैं, क्योंकि—भाव की अपेक्षा तो छे के—

विचारो अथवा लावोमां नीयता लेश्याविशेषेने कारणे उत्पन्न थाय छे.
तेथी सूत्रकार लेश्याओनी प्ररूपणा करे छे.

“ असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ ” इत्यादि—

टीकार्थ—असुरकुमाराओं में चार लेश्याओंने सहभाव डोय छे. जेना द्वारा आत्मा
कर्मों वडे बद्ध थाय छे, तेतुं नाम लेश्या छे कर्मनी साथे आत्मानो संबध
करवामां आ लेश्या कारणभूत अने छे. अष्टले के ते आत्माना परिष्णाम विशेष
रूप डोय छे. असुरकुमाराओं कृष्ण, नील, कापोत अने तेजोलेश्याने सहभाव
डोय छे स्तनितकुमार पर्यन्तना अवनपतिओमां पणु आ चार लेश्याओने।
सहभाव डोय छे तेमनामां द्रव्यनी अपेक्षाओ आ चार लेश्याओने सहभाव
समन्वयो. लावनी अपेक्षाओ तो छओ छ लेश्याओने—कृष्ण, नील, कापोत,

લેશ્યા શુક્રલેશ્યા સહિતાઃ પૂર્વોક્તાશ્વતસ્ર इति पद् लेश्या भवन्ति । तथा असुरकुमाराणाम्—एवमेव पृथिवीकायिकानाम् अप्कायिकानां वनस्पतिकायिकानां सर्वेषां व्यन्तराणां च चतस्रश्चतस्रो लेश्या बोध्याः । पृथिव्यव्वनस्पतिषु देवानामुत्पत्तिसंभवात्तेषां तेजोलेश्याऽपि भवतीति चतस्रो लेश्याः प्रोक्ता इतिः।सू० १०।

अनन्तरोक्तलेश्या विशेषेण मनुष्या विचित्रपरिणामा भवन्तीति यानादिदृष्टान्तचतुर्भङ्गिकाभिः पुरुषान् दर्शयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जाणा पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, जुत्ते णाममेगे अजुत्ते २, अजुत्ते णाममेगे जुत्ते ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ! जुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४ । १।

चत्तारि जाणा पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए, जुत्ते णाममेगे अजुत्तपरिणए० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए० ४ । २।

चत्तारि जाणा पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तरૂવે ૧, જુત્તે ણામમેગે અજુત્તરૂવે ૨, અજુત્તે ણામમેગે જુત્તરૂવે ૩, અજુત્તે ણામમેગે અજુત્તરૂવે ૪। એવમેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા પણત્તા, તં જહા--જુત્તે ણામમેગે જુત્તરૂવે૦ ૪ । ૩।

છર્વો કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત, પીત, તેજ, પદ્મ, શુકલ લેશ્યાં લેશ્યાં હોતી હૈં । અસુરકુમારોં કે જૈસે હી પૃથિવીકાયિક-અપ્કાયિક, વનસ્પતિકાયિક, ઔર-વ્યન્તરોં કો બી ચાર લેશ્યાં હોતી હૈં । પૃથિવી-અપ્, તેજસ્કાયિકોંમેં દેવોંકી ઉત્પત્તિ સમ્ભાવનાસે તેજોલેશ્યા હોતીહૈં।સૂ.૧૦।

તેજે, પદ્મ અને શુકલ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો, વનસ્પતિકાયિકો અને વાનવ્યન્તરોમાં પણ અસુરકુમારો જેવી ચાર લેશ્યાઓનો જ સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો અને તેજસ્કાયિકોમાં દેવોની ઉત્પત્તિની સભાવનાની અપેક્ષાએ તેજેલેશ્યાનો સદ્ભાવ કદ્યો છે. । સૂ. ૧૦।

ચત્તારિ જાણા પળ્ણત્તા, તં જહા-જુત્તે ણામમેગે જુત્તસોહે૦
 ૪। એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા પળ્ણત્તા, તં જહા-જુત્તે ણામ-
 મેગે જુત્તસોહે૦ ૪। સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—ચત્તારિ યાનાનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ, તદ્ધથા-યુક્તં નામૈકં યુક્તં ૧, યુક્તં
 નામૈકમયુક્તમ્ ૨, અયુક્તં નામૈકં યુક્તમ્ ૩, અયુક્તં નામૈકમયુક્તમ્ ૪। એવમેવ
 ચત્તારિ પુરુપજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ, તદ્ધથા-યુક્તો નામૈકો યુક્તઃ, યુક્તો નામૈકોઽયુક્તઃ।

ચત્તારિ યાનાનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ, તદ્ધથા-યુક્તં નામૈકં યુક્તપરિણતં, યુક્તં નામૈક-
 મયુક્તપરિણતમ્ ૦ ૪। એવમેવ ચત્તારિ પુરુપજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ, તદ્ધથા-યુક્તો
 નામૈકો યુક્તપરિણતઃ ૪,

ચત્તારિ યાનાનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ, તદ્ધથા-યુક્તં નામૈકં યુક્તરૂપં ૧, યુક્તં નામૈક-

અનન્તરોક્ત લેશ્યા વિશેષ સે મનુષ્ય વિચિત્ર પરિણામવાલે હોતે
 હૈં, અતઃ-અચ સૂત્રકાર યાનાદિ દૃષ્ટાન્ત કી ચતુર્ભઙ્ગી દ્વારા પુરુષોં કી
 પ્રરૂપણા કરતે હૈં—“ ચત્તારિ જાણા પળ્ણત્તા ”-ઇત્યાદિ-૧૧

હસ સૂત્ર કૈ અન્તર્ગત ચાર સૂત્ર હૈં । યાન ચાર કહે ગયે હૈં-યુક્ત
 યુક્ત-૧ યુક્તાઽયુક્ત-૨ અયુક્તયુક્ત-૩ અયુક્તાઽયુક્ત-૪, એસે હી
 યુક્તયુક્ત આદિ કૈ ભેદ સે પુરુષ ભી ચાર પ્રકાર કૈ હૈં ।

ફિરભી—યાન ચાર પ્રકારકૈહૈં-યુક્તયુક્ત-પરિણત-૧ યુક્તાઽયુક્ત-
 પરિણત-૨ અયુક્તયુક્ત-પરિણત-૩ ઓર - અયુક્તાઽયુક્ત - પરિણત-૪
 હસી પ્રકારસે યુક્તયુક્ત પરિણત આદિ ભેદવાલે પુરુષ ભી ચાર હોતેહૈં ૪,

(૨) ફિરભી—યાન ચાર હૈં, યુક્ત યુક્ત-રૂપ, ૧ યુક્તાયુક્ત-રૂપ, ૨

લેશ્યાવિશેષના સહલાવે કરીને મનુષ્ય વિચિત્ર પરિણામવાળો થાય છે તેથી
 હવે સૂત્રકાર યાનાદિના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા ચાર પ્રકારના પુરુષોની પ્રરૂપણા કરે
 છે—“ ચત્તારિ જાણા પળ્ણત્તા ” ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રમા ચાર સૂત્રોને સમાવી લીધા છે. યાનના ચાર પ્રકાર કહ્યા
 છે-(૧) યુક્તયુક્ત, (૨) યુક્તાઽયુક્ત, (૩) અયુક્તયુક્ત, (૪) અયુક્તાઽયુક્ત એ ૪
 પ્રમાણે યુક્તયુક્ત આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ હોય છે. (૧)
 યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે. (૧) યુક્ત યુક્તપરિણત, (૨)
 યુક્તાયુક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત
 એ ૪ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્તયુક્ત પરિણત આદિ ચાર ભેદ છે ।૨।

યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) યુક્તયુક્ત ૩૫, (૨)

મયુક્તરૂપમ્ ૨, અયુક્તં નામૈકં યુક્તરૂપમ્ ૩, અયુક્તં નામૈકમયુક્તરૂપમ્ ૪।
 एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तो नामैको.युक्तरूपः० ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तां नामैक युक्तशोभम् ० ४, एवमेव
 चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तो नामैको युक्तशोभः ४। सू० ११॥

ટીકા—“ ચત્તારિ જાણા ” ઇત્યાદિ-યાનાનિ-શકટાદીનિ, ચત્તારિ પ્રજ્ઞ-
 પ્તાનિ, તદ્યથા-એકં યાનં યુક્ત-વલીવર્દાદિભિઃ સયુક્ત તત્ પુનર્યુક્તં-સકલસામ-
 ગ્રીસહિતં, યદ્વા-પૂર્વકાલેઽપરકાલે ચ વલીવર્દાદિભિર્યુક્તં ભવતિ, ઇતિ પ્રથમો
 મન્નઃ ૧। એકં વલીવર્દાદિભિર્યુક્તં સદપિ અયુક્તં-સામગ્રીરહિતમ્ અપરકાલે વલી
 વર્દાદિયોગરહિતં વા ભવતિ । ઇતિ દ્વિતીયો મન્નઃ । ૨ । તથા-એકં વર્તમાનકાલે

અયુક્તયુક્ત-રૂપ, ૩ અયુક્તાઽયુક્ત-રૂપ, ૪, इसी प्रकार से पुरुष भी
 युक्तयुक्त-रूप आदि चार प्रकार के होते हैं-४, । ३ ।

फिर भी—यान चार प्रकारके हैं, युक्त युक्त-शोभावाले-१ युक्ताऽ-
 युक्त-शोभावाले-२ अयुक्तयुक्त-शोभावाले-३ अयुक्तायुक्त शोभावाले
 ४, इसी प्रकार से पुरुष भी चार प्रकार के हैं, जैसे-युक्तयुक्त शोभा-
 वाला-१ आदि-(४)

ટીકાર્થ—કોઈ એક યાન (પ્રવહણ) એસા હોના હૈ જો-વલી
 વર્દ આદિ સે મી યુક્ત હોતા હૈ ઓર-સકલ સામગ્રી સે મી યુક્ત હોતા
 હૈ । અથવા—પૂર્વકાલ મેં મી, ઓર-અપરકાલ મેં મી વલીવર્દાદિકોં સે
 યુક્ત હોતા હૈ, યા-કિયા જાતા હૈ—૧ કોઈ એક યાન વલીવર્દાદિ નોં સે
 યુક્ત હોતા તો હૈ. પર-યાન સામગ્રી સે રહિત હોના હૈ—૨ અથવા—પૂર્વ

युक्त अयुक्त ३५, (३) अयुक्त युक्त ३५ અને (३) अयुक्त अयुक्त ३५
 એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્ત યુક્ત ૩૫ આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા । ૩।

યાનના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) યુક્તયુક્ત શોભાવાળું,
 (૨) યુક્ત અયુક્ત શોભાવાળું (૩) અયુક્ત યુક્ત શોભાવાળું અને (૪) અયુક્ત
 અયુક્ત શોભાવાળું એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ ‘યુક્ત યુક્ત શોભાવાળો’
 આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા. । ૪।

હેવે પહેલા સૂત્રના ચાર ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં
 આવે છે (૧) કોઈ એક યાન (રથ, ગાડું આદિ વાહન) બળદ
 આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને સકળ સામગ્રીથી પણ યુક્ત હોય છે
 અથવા પહેલાં બળદાદિથી યુક્ત રહે છે અને પછી પણ યુક્ત જ રહે છે.
 (૨) કોઈ એક યાન બળદોથી યુક્ત હોય છે પણ અન્ય સામગ્રીથી રહિત
 હોય છે અથવા પહેલાં બળદ આદિથી યુક્ત હોય છે પણ પછી તેમનાથી
 રહિત બની જાય છે (૩) કોઈ એક યાન વર્તમાન કાળે તો બળદ આદિથી

अयुक्तं—सामग्रीरहितं बलीवर्दीदियोगरहितं वा सदपि अपरकाले युक्तं भवतीति तृतीयो भङ्गः । ३ । तथा—एकं वर्तमानकाले अयुक्तं. भविष्यत्कालेऽप्ययुक्तं भवतीति चतुर्थो भङ्गः । ४ ।

“ एवामेव ”—त्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः युक्तः—समृद्ध्यादिभिः सम्पन्नः, पुनरपि युक्तः—सदाचारादिभिः सम्पन्नो भवति, यद्वा—पूर्व युक्तः—धनादिभिः सम्पन्नः, स एव पश्चादपि युक्तः—धनादिभिः सम्पन्नो भवति, इति साधारणपुरुषमाश्रित्य प्रथमभङ्ग व्याख्या १, एवं शेषास्तु योऽपि भङ्गा बोध्याः ४। साधुपुरुषमाश्रित्य तु—पूर्व युक्तः—द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सहितः, स एव पश्चादपि युक्तः—तथाभूतः, इति प्रथमो भङ्गः १। तथा—एको

काल में बलीवर्दादि से युक्त होता है और—अपरकाल में नहीं—२ तथा—कोई एक यान वर्तमान काल में तो सामग्री से—अथवा बलीवर्दादिकों के योगसे रहित होता है, बाद में—युक्त हो जाता है—३, कोई एक रथादियान वर्तमान—और भविष्यत् काल में भी बलीवर्दादिकों के, या—सामग्रियों के योग से रहित ही बना रहता है—४, इसी प्रकार से पुरुष जात भी चार होते हैं, जैसे—कोई एक जन्मकाल से ही समृद्धि सम्पन्न होता है. और—सदाचार आदि से भी—१ अथवा—जो पहले से भी सम्पन्न होता है. और—बाद में भी अपने अन्तिम काल तक भी धनादि सम्पन्न बना रहता है, यह प्रथम भङ्ग साधारण पुरुष को लेकर बनाया गया है। इसी प्रकार शेष भङ्ग त्रय भी साधारण पुरुष को लेकर कथित कर लेना चाहिये। साधु पुरुषों को आश्रित करके इन भङ्गों का व्याख्यान इस प्रकार है—कोई एक पुरुष साधु बनते समय में द्रव्यलिङ्ग,

रहित होय छे पणु भविष्यमां तेमनाथी युक्त भनी नय छे. (४) कोर्ध् अेक रथादि यान वर्तमान काणे पणु भणद आदिथी रहित होय छे अने भविष्यमां पणु भणदादिथी रहित न रहे छे.

अेन प्रभाणु पुरुषो पणु आर प्रकारना होय छे—(१) कोर्ध् पुरुष न्म-काणथी न समृद्धि संपन्न पणु होय छे अने सदाचार संपन्न पणु होय छे अथवा न पडेता पणु समृद्धि, सदाचार आदिथी युक्त होय छे अने पोताना भरणुकाण पर्यन्त पणु तेनाथी युक्त न रहे छे आ पडेता लागे। सामान्य पुरुषनी अपेक्षाअे समनवे, अेन प्रभाणु आकीना त्रणु भांगा पणु समणु शकय अेवां छे साधु पुरुषोने आ आर लागे आ प्रभाणु

युक्तः—पूर्वं द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सम्पन्नो भवति, स पश्चाद् अयुक्तः—भाव
लिङ्गेन रहितो भवति, यथा जमाल्यादिर्निह्वः, उभाभ्यां वा रहितो भवति, यथा
संयमपतितः कण्डरीकादिः । इति द्वितीयो भङ्गः २। तथा—एकः पुरुषः अयुक्तः—
द्रव्यलिङ्गेन रहितोऽपि युक्तो—भावलिङ्गेन युक्तो भवति, यथा प्रत्येकबुद्धादिः ।
इति तृतीयो भङ्गः ३। तथा—एकः पुरुषः पूर्वमयुक्तः—द्रव्यभावलिङ्गेरहितः, पश्चा-
दपि अयुक्तस्तथैव भवति, यथा गृहस्थादिः । इति चतुर्थो भङ्गः ४।

“ चत्वारि जाणा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—युक्तं वलीवर्णादिभिः, युक्तपरि-
णतम्—सत्सामग्र्या युक्तभावप्राप्तम् इति प्रथमो भङ्गः १। तथा युक्तं वलीवर्णा-
या—भावलिङ्ग से युक्त होना है, वही यदि उसी लिङ्ग से अपने जीवन-
काल तक भी युक्त बना रहता है तो—ऐसा वह प्रथम भङ्गवाला है—१
तथा—कोई एक साधु पुरुष प्रव्रज्या लेते समय तो द्रव्यलिङ्ग से या-
भावलिङ्ग से युक्त हो जाता है, पर—आगे चलकर यदि वह उस लिङ्ग
से—भाव लिङ्ग से—रहित हो जाता है जमालिनिह्व की तरह अथवा-
कण्डरीक की तरह दोनों लिङ्गों से रहित हो जाता है, तो ऐसा वह
साधु पुरुष द्वितीय भङ्ग में गिना गया है—२ तथा—जो प्रत्येक बुद्ध आदि
की तरह द्रव्यलिङ्ग से रहित हुवा भी भावलिङ्ग से सहित होता है
उसकी अपेक्षा तृतीय भङ्ग है—३ तथा—गृहस्थादि की तरह जो पहले
भी द्रव्यलिङ्ग, या—भावलिङ्ग से रहित हो, और—बाद में भी वह वैसा
ही बना रहे तो—इसकी अपेक्षा चतुर्थ भङ्ग है, ४। द्वितीय सूत्रगत चार
भङ्ग इस प्रकार से व्याख्यान करना चाहिये—जैसे—कोई एक रथादियान

लाशु पडे छे—(१) केठ अक पुरुष साधु जनती वभते द्रव्यलिङ्ग के भाव
लिङ्गथी युक्त होय छे अने पोताना जवन काण परन्त अक लिङ्गथी युक्त
रहे छे (२) केठ अक पुरुष दीक्षा अंगीकार करती वभते द्रव्यलिङ्गथी के
भावलिङ्गथी युक्त होय छे, परन्तु आगण ज ॥ ते लिङ्गथी—भावलिङ्गथी
रहित थरु नय छे तेवा पुरुषने भीज सांगाभां गणुावी शक्य छे जेभके—
जभादि निह्व अथवा कंडरिक्ती जेम जन्ने लिङ्गथी रहित थरु जनारने
पणु भीज सांगाभां गणुावी शक्य छे, प्रत्येक बुद्ध आदिनी जेम द्रव्यलिङ्गथी
रहित होवा छतां भावलिङ्गथी युक्त होय जेना साधुने त्रीज सांगाभां गणुावी
शक्य छे, (४) तथा गृहस्थादिनी जेम जे पडेला पणु द्रव्यलिङ्ग अथवा
भावलिङ्गथी रहित होय छे पछी पणु जेवे जे आधु रहे छे तेने जेथा
सांगाभां गणुावी शक्य छे.

દિમિઃ, અયુક્તપરિણતં—સત્સામગ્રીવર્જિતમ્ ૨, इति द्वितीयो भङ्गः २। एवं शेषमङ्ग
 द्वयमपि बोध्यम् ४।

“ एवामेव ” इत्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञातानि, तद्यथा—एकः
 पुरुषः युक्तो=द्रव्यभावलिङ्गसम्पन्नः पश्चादपि युक्तपरिणतः—युक्तभावापन्नो भवति,
 इति प्रथमो भङ्गः । १ । एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः पश्चाद् अयुक्तपरिणतः=भावलिङ्ग-
 रहितो भवति, यथा जमाल्यादि निहवः । उभाभ्यां वा रहितो भवति यथा कण्ड-
 रीकः । इति द्वितीयो भङ्गः । २ । तथा—एकः पुरुषः अयुक्तः—पूर्वं द्रव्यलिङ्गरहितः

ऐसा होता है जो—बलीवर्द आदिकों से युक्त होता है. और—प्रशस्त-
 अच्छी, सामग्री से भी युक्त रहता है, तथा—कोई एक रथादियान
 बलीवर्दादिकों से युक्त होता हुवा भी सत्सामग्री से रहित होता है, २
 इसी तरह से शेष दो भङ्गों को भी समझ लेना चाहिये—४। इसी तरह
 चार पुरुष जात कहे गये हैं—काइ एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्य-
 भाव लिङ्ग से सम्पन्न होने से युक्त होता है, और पश्चात्—भी वह युक्त
 भाव से युक्त होता है, ऐसा यह—प्रथम भङ्ग है, १ द्वितीय भङ्ग इस
 प्रकार से है, जैसे कोई एक पुरुष पहले युक्त होता है, द्रव्य भाव लिङ्ग
 से सहित होता है, पश्चात्—वह अयुक्त परिणत हो जाता है, भावलिङ्ग
 से रहित हो जाता है, यथा—जमालि-आदि निहव, या—दोनों लिङ्गों से
 रहित हो जाता है जैसे—कण्डरीक ऐसा वह द्वितीय भङ्ग है, २ तृतीय
 भङ्ग इस प्रकार है, जैसे कोई एक पुरुष अयुक्त-पहले द्रव्यलिङ्ग से रहित

બીજા સૂત્રના ચાર ભાંગાનુ સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક રથાદિયાન એવુ હોય છે કે
 જે બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને પ્રશસ્ત સામગ્રીથી પણ યુક્ત રહે છે (૨)
 કોઈ એક રથાદિયાન બળદાદિથી યુક્ત હોવા છતાં પણ પ્રશસ્ત સામગ્રીથી રહિત
 હોય છે ત્રીજા અને ચોથા નંબરના ભાગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા,
 એજ પ્રમાણે પુરુષોના ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય
 છે કે જે દ્રવ્ય-ભાવ લિંગથી સંપન્ન હોવાને કારણે યુક્ત હોય છે અને
 પછી પણ તે પુરુષ તે ભાવથી સંપન્ન જ રહે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ
 પહેલાં યુક્ત હોય છે—દ્રવ્યભાવ લિંગથી સંપન્ન હોય છે પણ પાછળથી તે
 અયુક્ત પરિણત થઈ જાય છે—એટલે ભાવલિંગથી રહિત થઈ જાય છે જેમ કે
 જમાલિ આદિ નિહવ. અથવા બન્ને લિંગથી પણ રહિત થઈ જાય છે જેમ કે
 કંડરીક આ પ્રકારનો બીજો ભાગો સમજવો.

પશ્ચાદ્ યુક્તપરિણતો-દ્રવ્યમાવલિજ્ઞ સમ્પન્નો ભવતિ, યથા-પ્રત્યેકબુદ્ધાદિઃ । इति तृतीयो भङ्गः । ३ । तथा-एकः पूर्वमयुक्तः सन् पश्चादप्ययुक्तपरिणतो भवति, यथा-गृहस्थः, इति चतुर्थो भङ्गः ४ । एषा चतुर्भङ्गी विशिष्टपुरुषमाश्रित्य । सामान्य पुरुषमाश्रित्य तु-एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः=धनधान्यादि सम्पन्नः, पश्चादपि युक्तपरिणतो भवतीति प्रथमो भङ्गः । १ । एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः पश्चाद् अयुक्तपरिणतो-धनधान्यादिरहितो भवतीति द्वितीयो भङ्गः । २ । एवं शेषमङ्गद्वयमपि बोध्यम् ।

હોતા હૈ પશ્ચાત્-વહ યુક્ત પરિણત-દ્રવ્યલિજ્ઞ સે સમ્પન્ન હો જાતા હૈ જૈસે-પ્રત્યેક બુદ્ધ આદિ એસા યહ તૃતીય ભઙ્ગ હૈ, ૩ । ચતુર્થભઙ્ગ ઇસ પ્રકાર હૈ, જૈસે-કોઈ એક પહેલે સે બી અયુક્ત હોના હૈ ઓર પશ્ચાત્ બી અયુક્તપરિણત બના રહતા હૈ જૈસે-ગૃહસ્થ એસા યહ ચતુર્થ ભઙ્ગ હૈ, ૪ । યહ-ઇસ પ્રકારકી ચતુર્ભઙ્ગી, વિશિષ્ટ પુરુષકો આશ્રિત કરકે કહી ગઈ હૈ ।

અવ સામાન્ય પુરુષ કો આશ્રિત કરકે યહી ચતુર્ભઙ્ગી ઇસ પ્રકાર સે હૈ-જૈસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોના હૈ જો પહેલે બી ધનધાન્યાદિ સે સમ્પન્ન હોના હૈ, ઓર વાદ મેં બી વસા હી સમ્પન્ન બના રહ જાતા હૈ, યહ પ્રથમ ભઙ્ગ હૈ, ૧ દ્વિતીય ભઙ્ગ ઇસ પ્રકાર હૈ-કોઈ એક પુરુષ પહેલે તો ધનધાન્યાદિ સમ્પન્ન હોતા હૈ વાદ મેં ડસસે રહિત હો જાતા હૈ, ૨ તૃતીય ભઙ્ગ ઇસ પ્રકાર હૈ-જૈસે-કોઈ એક પુરુષ પહેલે તો ધનધાન્યાદિ રહિત હોતા હૈ ઓર-વાદ મેં સમ્પન્ન હો જાતા હૈ, ૩ તથા-ચતુર્થ ભઙ્ગ

ત્રીજો ભાંગો—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે, પરંતુ પાછળથી યુક્ત પરિણત-દ્રવ્યલિંગથી સંપન્ન થઈ બીજા છે જેમ કે પ્રત્યેક બુદ્ધ વગેરે.

ચોથો ભાંગો—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે અને પાછળથી પણ અયુક્ત પરિણત જ ચાલુ રહે છે. જેમ કે ગૃહસ્થ આ પ્રકારની ચતુર્ભંગી વિશિષ્ટ પુરુષોને આધારે કહેવામાં આવી છે સામાન્ય પુરુષોની અપેક્ષાએ એ જ ચતુર્ભંગીને આ પ્રમાણે ઘટાવી શકાય

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ધનધાન્ય આદિથી સંપન્ન હોય છે અને ત્યારબાદ પણ જીવનપર્યાન્ત તેનાથી યુક્ત જ ચાલુ રહે છે. (૨) કોઈ પુરુષ પહેલાં ધનધાન્યાદિથી યુક્ત હોય છે પણ પાછળથી તેનાથી રહિત બની બીજા છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં ધન-ધાન્યાદિથી રહિત હોય છે પણ પાછળથી ધનધાન્યથી સંપન્ન બની બીજા છે

“ चत्वारि जाणा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-युक्तं बलीवर्दीभिः युक्तरूपं-सुरचिताऽऽकारं भवति १, युक्तं सदपि अयुक्तरूप सुन्दरसंस्थानवर्जितम्, एवं शेष-भङ्गद्वयं बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तो-धनादिभिः ज्ञानादिगुणैर्वा सम्पन्नः सन् युक्तरूपः-उचितवेषः, यद्वा-सुरचितवेषो भवति। इति प्रथमो भङ्गः। १। शेष-भङ्गत्रयमेवमेव बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तः-गुणैर्युक्तः युक्तशोभः-युक्ता-उचितां शोभा यस्य स तथा भवति १। एवं शेषभङ्गत्रयमपि ४। ॥ सू० ११ ॥

इस प्रकार है-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो-पहले भी धनधान्य रहित-होता है, और बाद में भी धनधान्य रहित बना रहता है-४।

“ चत्वारि जाणा ”—इत्यादि, सूत्रार्थ स्पष्ट है, तात्पर्य इसका यह है कि—कोई एक रथादियान ऐसा होता है जो बलीवर्द आदि से युक्त होता है, और-युक्त रूपवाला सुरचित रुचिर आकारवाला भी होता है ? द्वितीय भङ्ग में-जैसे कोई एक रथ ऐसा है जो, बलीवर्द आदि, वाहन से युक्त होता हुआ भी अयुक्त रूपवाला (सुन्दर-सुरुचिर आकारवाला नहीं) होता है, २ इसी तरह शेष ३-४-भङ्गों को भी समझना। इसी प्रकार पुरुष भी चार होते हैं, जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि युक्त हुआ भी ज्ञानादि गुणवाला होता है, और-उचित वेषवाला होता है, अथवा-सुरचित वेषवाला होता है। द्वितीय भङ्ग में-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि सम्पन्न तो होता है

(४) कौं अक पुरुष पडिला पणु धनधान्याद्विथी रडित डीय छे अने पाछणथी. पणु तेनाथी रडित न रडे छे. “ चत्वारि जाणा ” इत्यादि सूत्रार्थ स्पष्ट छे दृष्टान्त सूत्रने लावार्थ आ प्रमाणे छे-(१) कौं अक रथादि यान अण्ड आद्विथी पणु युक्त डीय छे अने युक्तरूप सम्पन्न-सुरचित रुचिर आकारवाणुं पणु डीय छे. (२) कौं अक रथादि यान अण्ड आद्विथी युक्त डीवा छतां अयुक्तरूपवाणुं डीय छे अटले के सुंदर अने सुरुचिकर आकारवाणुं डीतुं नथी अणु प्रमाणे पाकीना अे लांगाने लावार्थ पणु समलु शकय अेवे छे

अणु प्रमाणे पुरुषो पणु चार प्रकारना डीय छे—

(१) कौं अक पुरुष धनाद्विथी पणु युक्त डीय छे, ज्ञानाद्विथी पणु सम्पन्न डीय छे अने उचित वेषवाणो-सुरचित वेषवाणो पणु डीय छे.

(२) कौं अक पुरुष धनाद्विथी सम्पन्न डीवा छतां अयुक्त रूपवाणो डीय छे अटले के ज्ञानादि गुणैर्वा रडित, उचित वेषथी रडित अथवा

इति यः नदृष्टान्त पुरुषदाष्टान्तिकसूत्राणि ॥

मूलम्—चत्वारि जुग्मा पणत्ता, तं जहा-जुत्ते णाममेगे जुत्ते
४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-जुत्तेणाम-
मेगे जुत्ते ४, । ५। एवं जहा जाणेण चत्वारि आलावगा तथा
जुग्मोणवि, पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया जाव सोहेत्ति ॥सू०१२॥

छाया—चत्वारो युग्य प्रज्ञप्ता, तद्यथा-युक्तं नामैकं युक्तम् ४, एवमेव
चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-युक्तो नामैको युक्तः ४, एवं यथा यानेन

पर-अयुक्तरूपवाला होना है—ज्ञानादि गुणवाला, या-उचित वेषवाला,
या-सुरचित वेषवाला नहीं होता है। अवशिष्ट दो भंग भी इसी तरह
से समझ लेना चाहिये। इसी प्रकार से कोई एक पुरुष ऐसा होता है,
जो ज्ञानादि गुणों से युक्त होता है और-उचित शोभावाला भी होता
है यह प्रथम भङ्ग है, १ अवशिष्ट तीन भङ्ग भी इसी प्रकार से जान
लेना चाहिये ॥ सू०११ ॥

अथ पुनः सूत्रकार दृष्टान्त और-पुरुषदाष्टान्तिक सूत्रों को कहते हैं -
“ चत्वारि जुग्मा-पणत्ता ”—इत्यादि—१२

सूत्रार्थ—युग्य चार कहे गये हैं, युक्तयुक्त, १ युक्ताऽयुक्त,
२ अयुक्तयुक्त, ३ और - अयुक्ताऽयुक्त, ४। ऐसे पुरुष भी
चार कहे गये हैं - जैसे - युक्तयुक्त, १ इत्यादि। यान के जैसे
युग्य के साथ भी युक्तयुक्त परिणत, युक्तरूप, युक्तशोभा. आदि पदों
को जोड़कर चार आलापक बन जाते हैं ऐसा समझ लेना चाहिये।

सुरचित वेषथी रक्षित डोय छे भाकीना जे लांगा पणु अेन प्रभाणे समल
शकाय अेवां छे

यानना “ युक्तयुक्त शोभावाणुं ” आदि चार लांगा सरण छे
पुरुषना पणु अेवां न चार लांगा समनवा नेम के (१) केअ अेक
पुरुष ज्ञानादि गुणोथी युक्त डोय छे अने उचित शोभावाणे पणु डोय
छे. भाकीना त्रणु लांगा पणु आ पडेवा लागाने आधारे समल लेवा. सू ११।
इवे सूत्रकार दृष्टान्त अने दार्ष्टान्तिक पुरुषना सूत्रेणु निरूपणु करे
करे छे— “ चत्वारि जुग्मा पणत्ता ” इत्यादि—

युग्य (वाहनने जेचनार के उपादनार अणद अथवा पुरुष) चार
प्रकारना डोय छे—(१) युक्तयुक्त, (२) युक्तायुक्त, (३) अयुक्तयुक्त अने
(४) अयुक्तायुक्त अेन प्रभाणे पुरुषो पणु चार प्रकारना डोय छे.

चत्वार आलापकास्तथा युग्येनापि । प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि यावत् शोभेति ।
॥ सू० १२ ॥

टीका—“ चत्वारि जुग्गा ” इत्यादि—युग्या-युगं-रथं वहन्तीति युग्या= वृषभाश्वादयः, यद्वा-युग्मानि-द्विहस्तप्रमाणानि चतुरस्राणि सवेदिकानि सालङ्काराणि गोल्लदेप्रसिद्धानि जम्पानानि तानि चत्वारि मज्ञप्तानि, तद्यथा- एकं युक्तं-

इसी तरह से पुरुष भी चार प्रकार के होते हैं ऐसा प्रारम्भ करके युक्त-शोभा तकके समस्त भङ्गों को पुरुष सम्बन्धी चतुर्भङ्गी में कह देना चाहिये । युक्तयुक्त, १ युक्ताऽयुक्त, २ अयुक्तयुक्त, ३ अयुक्तायुक्त, ४ युक्तयुक्त-परिणत, १ युक्तायुक्त-परिणत, २ अयुक्तयुक्तपरिणत, ३ अयुक्ताऽयुक्त-परिणत, ४ युक्तयुक्त-रूप, १ युक्तायुक्त-रूप-२ अयुक्तयुक्त-रूप, ३ अयुक्तायुक्त-रूप, ४ युक्तयुक्त-शोभासम्पन्न, १ युक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, २ अयुक्तयुक्त शोभासम्पन्न, ३ और-अयुक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, ४, इस प्रकार से सब १६ भङ्गों को युग्य दृष्टान्त में और-पुरुष दाष्टान्तिक में प्रतिपादक ये सूत्र हैं ।

इस सूत्र में -- “ युगं-रथाङ्गं (प्रवहणाङ्गं) शिविकाङ्गं वा वहन्ति-इति युग्याः, ४ इस व्युत्पत्ति के अनुसार युग्य शब्द से वृषभादि, या -- मनुष्य गृहीत होते हैं । क्योंकि-

(१) युक्तयुक्त भाडीना त्रयु प्रकार उपर मुञ्जम समञ्जवा.

याननी जेम युग्यनी साथे पणु युक्त, युक्तपरिणत, युक्तइप अने युक्तशोभा अदि पढेने जेडीने चार आलापक भनी जय छे जेञ्ज प्रभाणु पुरुष विषयक पणु चार आलापक अने छे जेम समञ्जवुं. आरीने पुरुष विषयक चार अतुलंगी अने छे

युग्य विषयक पढेदी अतुलंगी तो उपर आपनामां आवी छे. डवे भीणु अतुलंगी प्रकट करवामा आवे छे-(१) युक्तयुक्त परिणत, (२) युक्तायुक्त परिणत, (३) अयुक्तयुक्त परिणत अने (४) अयुक्तायुक्त परिणत.

त्रीणु अतुलंगी-(१) युक्तयुक्त इप, (२) युक्तायुक्त इप, (३) अयुक्तयुक्त इप अने (४) अयुक्तायुक्त इप.

चोधी अतुलंगी-(१) युक्तयुक्त शोभासपन्न, (२) युक्तायुक्त शोभासपन्न (३) अयुक्तयुक्त शोभासपन्न, अने (४) अयुक्तायुक्त शोभासपन्न.

आ प्रकारनी चार अतुलंगीओ पुरुषना विषयमां पणु समञ्जवी. आ सूत्रमां “ युग रथाङ्गं (प्रवहणाङ्गं) शिविकाङ्गं वा वहन्ति इति युग्या. ” आ व्युत्पत्ति अनुसार युग्य शब्दथी भणद आदि प्राणी अथवा पादभी आदि

वाहनोऽऽरोहणसामग्र्या सहितं सत् पुनर्युक्तं-वेगादिसम्पन्नमिति प्रथमो भङ्गः । १ । शेषमङ्गत्रयं स्वयमूह्यम् ४। एवमेव लौकिके लोकोत्तरे च पुरुषे चत्वारो भङ्गा बोध्याः ४। एवम्=अमुना प्रकारेण यानेन यथा=यानत्रद् युग्येनाऽपि युक्त-युक्त-परिणत-युक्तरूप-युक्तशोभादिघटिताश्चत्वार आलापका बोध्याः । प्रतिपक्षः-दाष्टान्तिकस्तथैव=पूर्ववदेव, तत्र 'पुरुषजातानि चत्वारि' इत्युपक्रम्य 'युक्त-शोभ'-पर्यन्ताः सर्वेऽपि भङ्गा वक्तव्या इति । तथाहि—युक्तं युक्तं १ युक्तमयुक्तम् २ अयुक्तं युक्तम् ३ अयुक्तमयुक्तम् ४। युक्तं युक्तपरिणतं १, युक्तमयुक्तपरिणतम् २, अयुक्तं युक्तपरिणतम् ३, अयुक्तमयुक्तपरिणतम् ४। युक्तं युक्तरूपं, १ युक्तमयुक्तरूपम् २, अयुक्तं युक्तरूपम् ३, अयुक्तमयुक्तरूपम् ४। युक्तं युक्तशोभं १, युक्तमयुक्तशोभम् २, अयुक्तं युक्तशोभम् ३, अयुक्तमयुक्तशोभम् ४। इति युग्यदृष्टान्ते पुरुषदाष्टान्तिकेऽपि च सूत्रणीयमिति पर्यवसितम् ॥सू०१२॥

मूलम्—चत्वारि सारही पणत्ता, तंजहा--जोयावइत्ता णाममेगे णो विजोयावइत्ता १, विजोयावइत्ता णाममेगे णो जोया-

द्विहस्तप्रमाणोपेत चौकोर वेदिका सहित अलङ्कारयुक्त "जम्पान" "पालखी" विशेष, जोकि गोल्ल देशमें प्रसिद्ध है वे भी "युग्य" हैं । इसमें प्रथम भङ्ग इस प्रकार घटित करना चाहिये-जैसे कोई एक युग्य ऐसा होता है, जो युक्त वाहन पर आरोहण करनेकी साधन-सामग्री सहित होता है. और वेग आदि से भी सम्पन्न होता है यह युक्त युक्त इस प्रथम भङ्गवाला युग्य है-१ अवशिष्ट भङ्गोंकी घटना स्वयं कर लेना चाहिये-४ इसी तरह लौकिक एक [अलौकिक] लोकोत्तर पुरुषों में चार भङ्ग जानना चाहिये ॥सू०१२॥

उपाठनार मनुष्य गृहीत थाय छे जे के जे हाथना प्रमाणवाणी गोल्ल देशमां थोपूथु वेदिका सहितनी अलंकारयुक्त "जम्पान" (पालखी विशेष)ने पथु युग्य कहे छे. पथु अही ते थडथु करवानी नथी.

युग्यना पडेला भांगानो भावार्थ—डोढ थोके युग्य (अण्ड आदि) डोय छे के जे युक्त-वाहन पर आरोहण करवानी साधन सामग्रीथी युक्त डोय छे अने वेग आदिथी पथु युक्त डोय छे आ "युक्तयुक्त" नामनो पडेला भांगो थयो. भाङ्गना भांगानो भावार्थ पथु जते ज समथु देयो. जे प्रमाणे लौकिक पुरुषो अने लोकोत्तर पुरुषोने अनुवक्षीने पथु आर अनुसंगी समथु देवी. ॥ सू. १२ ॥

वइत्ता २, एगे जोयावइत्तावि विजोयावइत्तावि ३, एगे जोयावइत्ता णो विजोयावइत्ता ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—जोयावइत्ता णाममेगे णो विजोयावइत्ता० ४। एवामेव चत्तारि हया पणत्ता, तं जहा—जुत्ते, णाममेगे जुत्ते, जुत्ते, णाममेगे अजुत्ते० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, एवं जुत्तपरिणए, जुत्त-रूवे, जुत्तसोहे, सव्वेसिं पडिवक्खो पुरिसजाया । सू० १३ ॥

छाया—चत्वारः सारथयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—योजयिता नामैको नो वियो जयिता १, वियोजयिता नामैको नो योजयिता २, एको योजयिताऽपि वियो-जयिताऽपि ३, एको नो योजयिता नो वियोजयिता ४। एवमेव चत्वारि पुरुष-जातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—योजयिता नामैको नो वियोजयिता० ४, एवमेव

“ चत्तारि सारही पणत्ता ” इत्यादि—१३

सारथी चार प्रकारके होते हैं, जैसे कोई एक सारथि योजयिता होता है वियोजयिता नहीं होता है—१ कोई एक वियोजयिता होता है योजयिता नहीं—२ कोई एक योजयिता—वियोजयिता भी—३ और कोई एक न तो योजयिता, न वियोजयिता होता है—४ ऐसे ही पुरुष भा चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष योजयिता होता है वियोजयिता नहीं—१ इत्यादि—४

“ चत्तारिसारही पणत्ता ” इत्यादि— सू. १३।

सारथिना नीचे प्रमाणे चार प्रकार छे—(१) केअ अके सारथि योज-यिता डोय छे, वियोजयिता डोतो नथी. (२) केअ अके सारथि वियोजयिता डोय छे पणु योजयिता डोतो नथी, (३) केअ अके सारथि योजयिता पणु डोय छे अने वियोजयिता पणु डोय छे. केअ अके सारथि योजयिता पणु डोय छे, अने वियोजयिता पणु डोय छे. (४) केअ अके सारथि योजयिता पणु डोतो नथी अने वियोजयिता पणु डोतो नथी. अने प्रमाणे पुरुषो पणु चर प्रकारना डोय छे—(१) केअ अके पुरुष योजयिता डोय छे, पणु वियोज-यिता डोतो नथी, इत्यादि चार प्रकार समजवा

चत्वारो ह्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः, युक्तो नामैकोऽयुक्तः ४, एवमेव चकारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः, एवं युक्त-परिणतः, युक्तरूपः, युक्तशोभः, सर्वेषां प्रतिपक्षः पुरुषजातानि । मू० १३ ।

टीका—“ चत्वारि सारथी ” इत्यादि — सारथयः—रथवाहकाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको योजयिता—रथाऽश्वादीनां संलग्नोकर्ता भवति किन्तु नो वियोजयिता—रथाऽश्वादीनां पृथक्कर्ता न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एको वियोजयिता भवति नो योजयिता, इति द्वितीयः । २ । एको योजयिता भवति वियोजयिताऽपि, इति तृतीयो भङ्गः । ३ । एको नो योजयिता भवति नो वियोज-

इसी प्रकारसे चार प्रकारके 'ह्य' कहे गये हैं, जैसे कोई एक ह्य (घोडा) युक्त युक्त होता है—१ इत्यादि—४ । इसी प्रकार ४ चार पुरुष जात कहे गये हैं, जैसे युक्त युक्त इत्यादि—४ । इसी प्रकार युक्त परिणत—युक्तरूप और युक्त शोभा सम्पन्न ये सब पद जोड़कर यहाँ भङ्ग रचना कर लेनी चाहिये

नात्पर्य' इस सूत्रका ऐसा है—रथवाहक नाम सारथिका है ये चार प्रकार के कहे गये हैं सो उनमें कोई एक सारथि ऐसा होता है जो रथ में अश्व आदिकों का संलग्न ही करता है किन्तु—रथसे उन अश्वदिकों को अलग नहीं करता है इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है । तथा—कोई एक सारथि ऐसा होना है जो केवल रथादिकोंसे अश्वदिकोंको अलग ही करता है उन्हें उसमें संलग्न-जोड़ना नहीं करता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है—२ तथा—कोई एक सारथि ऐसा होना है जो रथादिकों को योजित और वियोजित भी करता है ऐसा यह तृतीय भङ्ग है—३ तथा—कोई एक सारथि

अथ प्रमाणे घोडाना पशु चार प्रकार कथा छे—(१) कोछ ओक घोडा युक्तयुक्त होय छे, इत्यादि चार प्रकार समझवा पुरुषना पशु युक्तयुक्त आदि चार प्रकार समझवा अथ प्रमाणे युक्तपरिणत, युक्तरूप अने युक्तशोभा संपन्न, आ पदेने जेडीने पशु भीछ तथु यनुभ'गी दृष्टान्तसूत्र अने दार्ष्टान्तिक पुरुषसूत्र विषे समञ्च लेवी.

आ सूत्रनेो भावार्थ' आ प्रमाणे छे—रथ चलावनारने सारथि कडे छे. तेना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कथा छे—(१) कोछ ओक सारथि अवेो ह्य छे के जे रथ साथे अश्वादिकेने जेडे छे अरे। पशु तेमने रथथी छूटा करतो नथी (२) कोछ ओक सारथि अश्वादिकेने रथथी अलग करे छे पशु तेमने रथ साथे जेडतो नथी. (३) कोछ ओक सारथि अश्वादिकेने रथ साथे जेडे छे पशु अरे अने तेमने वियोजित (अलग) पशु करे छे (४) कोछ

यिता, इति चतुर्थोभङ्गः४॥ चतुर्थभङ्गनिर्दिष्टः सारथिस्तु अश्वादोन् चालयत्येवेति ।

“ एवमेवे ”—त्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
एको योजयिता—संयमयोगेषु साधूनां प्रवर्तयिता भवति किन्तु नो वियोजयिता—
अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता न भवति, इति प्रथमः १। तथा—एको वियो-
जयिता—अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता भवति किन्तु नो योजयिता—संयमयो-
गेषु प्रवर्तयिता न भवतीति द्वितीयः । २। तथा—एको योजयिताऽपि—संयमयो-
गेषु प्रवर्तयिताऽपि वियोजयिताऽपि—अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिताऽपि भवति,

ऐसा होता है जो—अश्वादिकों को रथमें न तो संलग्न करता है और
न उससे उन्हें दूर—पृथक् ही करता है यह चतुर्थ भङ्ग है—४ यह
चतुर्थ भङ्गवाला सारथि केवल अश्वादिकों को चलाता है ।

इसी तरहसे पुरुषजात जो चार कहे गये हैं उनका तात्पर्य ऐसा
है—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो संयमयोगोंमें साधुजनोंको
प्रवृत्त ही करता है किन्तु—अनुचित कार्यमें प्रवृत्त को वहांसे हटाने-
वाला नहीं होता है, ऐसा यह प्रथम भङ्ग है—१ तथा कोई एक साधु पुरुष
ऐसा ही होता है जो—अनुचित कार्यमें प्रवृत्त हुवे जनों को वहांसे हटाने-
वाला ही होता है किन्तु—संयमयोगोंमें प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होता
होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है—२ तथा—कोई एक साधुपुरुष ऐसा
है जो संयमयोगोंमें प्रवृत्ति भी कराता है और अनुचित
कार्योंमें प्रवृत्तों को वहांसे हटाता भी है यह—ऐसा तृतीय भङ्ग है—३

એક સારથી અશ્વાદિકોને રથ સાથે યોજિત પણ કરતો નથી અને તેમને
રથથી વિયોજિત (અલગ) પણ કરતો નથી. આ ચોથા પ્રકારનો સારથિ માત્ર
અશ્વાદિકોને અથવા રથને ચલાવવાનું કામ જ કરે છે.

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ બે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે, તેમનું હવે સ્પષ્ટી
કરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઈ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે
સાધુઓને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત જ કરાવે છે, પણ અનુચિત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત
થયેલા સાધુને તેમ કરતા અટકાવતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુપુરુષ એવો
હોય છે કે જે અનુચિત કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થયેલા માણસોને તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ
કરતા અટકાવે છે, પણ તેમને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત કરનારો હોતો નથી.
(૩) કોઈ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે માણસોને સંયમયોગોમાં
પ્રવૃત્ત પણ કરે છે અને અનુચિત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થનારને તે કાર્ય કરતાં
અટકાવે છે પણ ખરો. (૪) કોઈ એક સાધુ પુરુષ એવો હોય છે કે જે

इति तृतीयः । ३ । तथा-एकौ नो योजयिता नो वियोजयिता भवति, स च साधारणशक्तिसम्पन्नो मुनिः ४। इति चतुर्थः ४। इति लोकोत्तरपुरुषमपेक्ष्य व्याख्यानम् । साधारणपुरुषत्रिवक्षायां तु-एकौ योजयिता-व्यचिन् कार्ये प्रवर्तयिता भवति, किन्तु नो वियोजयिता-ततो निवर्तयिता न भवतीति प्रथमः । १। एवं शेषभङ्गत्रयमपि बोध्यम् ४।

“ एवमेव हया ” इत्यादि—एवमेव=यानवदेव हयाः - अश्वाः चत्वारः प्रज्ञताः, तत्रया-“ युक्तो नामैक ” इत्यादि । एतत्सूत्रं यानसूत्रवद् व्याख्येयम् ।

तथा-कोई एक साधु पुरुष ऐसा भी होता है जो न संघषयोगोंमें प्रवृत्ति कराता है और न अनुचित कार्योंमें फसेको वहांसे हटाता ही है ऐसा चतुर्थ भङ्गवाला कोई एक साधारण शक्तिशाली मुनिजन होता है-४ इस प्रकारका यह व्याख्यान इन चार भङ्गोंका लोकोत्तर पुरुष की अपेक्षा लेकर किया गया है । साधारण पुरुषकी अपेक्षासे इनका व्याख्यान ऐसा है—जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो किसी कार्यमें किसीको प्रवृत्त करानेवाला ही होता है उससे उसे निवृत्त करानेवाला नहीं-१ अवशिष्ट तीन भंग इन्ही तरहसे समझ लेना चाहिये-४ एवामेव—इत्यादि यानके समान हय अश्वके भी चार प्रकार होते हैं जैसे कोई एक तो ऐसा अश्व होता है जो पहले भी रथादिमें जोता जाता है और बादमें भी-१ कोई एक पहलेही जोता

લોકોને સયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત પણ કરતો નથી અને અનુચિત કાર્ય કરનારને તેમ કરતા અટકાવતો પણ નથી કોઈ સાધારણ શક્તિશાળી મુનિને આ ચોથા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે. આ ચાર ભાંગાનું કથન લોકોત્તર પુરુષની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે. હવે સામાન્ય પુરુષની અપેક્ષાએ ચારે ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે.

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કોઈ કાર્યમાં કોઈ વ્યક્તિને પ્રવૃત્ત કરાવનાર જ હોય છે, પણ તેમાંથી તેને નિવૃત્ત કરાવનાર હોતો નથી, આપ્રીના ત્રણ ભાંગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા.

“ एवामेव ” इत्यादि—याननी जेम अश्वना પણ ચાર પ્રકાર હોય છે—(૧) કોઈ એક અશ્વ એવો-હોય છે કે જે પહેલાં પણ રથાદિની સાથે બેડી શકાય છે અને પછી પણ બેડી શકાય છે. (૨) કોઈ એક અશ્વ પહેલાં બેડી શકાય છે પણ પછી બેડી શકાતો નથી. (૩) કોઈ એક અશ્વ એવો

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव=हयवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैक इत्यादि लौकिकलोकोत्तरपक्षमनुसृत्य व्याख्येयम् ।

“ एवं जुक्तपरिणत ” इत्यादि । एवं—यानवद् “ युक्तपरिणतो युक्तरूपो युक्तशोभः ” इत्येतैः पदैः साकं हयमूत्रचतुर्भङ्गी बोध्या ४। “ सव्वेसि ”—सर्वेषां प्रत्येकं भङ्गांश्चतुरश्चतुरः कृत्वाः एकैकभङ्गचतुष्टयस्य ‘ पडिवक्त्रो ’ प्रतिपक्षो—दाष्टान्तिको भणनीयः । तत्र को दाष्टान्तिकः ? इत्यपेक्षायामाह—‘ पुरिसजाया ? इति । पुरुषजातानि—पुरुषजातरूपो दाष्टान्तिकः सर्वेषां भणनीय इति । सू० १३ ।

मूलम्—चत्वारि गया पणता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवंजहा हयाणं तथा गयाणं भाणियवं, पडिवक्त्रो तहेव पुरिसजाया । सू० १४ ।

जाता बादमें नहीं—२ कोई एक पहले भी, बादमें भी, और भी समयमें जोता जाता है—३ तथा—कोई एक ऐसा होता है जो नतो पहले, न बादमें ही जोता जाता है—४ । अथवा—इन युक्तयुक्त आदि भङ्गोंकी व्याख्या यान जैसी जाननी चाहिये और—यानके समान ही ‘ युक्त परिणत ’ ‘ युक्तरूप ’ और ‘ युक्त शोभा सम्पन्न ’ इन पदोंको घटित करके हय चतुर्भङ्गा जाननी चाहिये । और प्रत्येक चतुर्भङ्गी के समान प्रतिपक्ष दाष्टान्तिक जो पुरुषजात हैं वे भी चार प्रकारके हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ सू० १३ ॥

डाय छे के जे पडेवां जेडी शकतो नथी पणु पधी जेडी शकय छे. (४) डोर्ध अेक अश्व अेवो डाय छे के जेने पडेवां पणु जेडी शकतो नथी अने पधी पणु जेडी शकतो नथी. अथवा आ युक्तायुक्त आदि लांगाओनी व्याख्या यानना सूत्रमां कहा प्रमाणे ज समजवी. अने याननी जेभ ज युक्तपरिणत, युक्तरूप अने युक्तशोभा संपन्न आ पढाने योजवाथी अश्व विषयक भीण त्रणु अतुर्भंगी, पणु णनावी शकय छे, अश्वविषयक जेवी आर अतुर्भंगी कही छे जेवी ज आर अतुर्भंगी दाष्टान्तिक पुरुष विषे पणु समण देवी जेधजे. ॥ सू १३ ॥

छाया—चत्वारो गजाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः ४ एवं यथा हयानां तथा गजानामपि भणितव्यं, प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि । सू० १४ ।

टीका—“ चत्वारि गया ” इत्यादि—सुगमम् ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्याद्यपि स्पष्टमेव ।

“ एवं जहा-हयाणं ” इत्यादि—एवम्=इत्थं—प्रदर्शितक्रमेणेत्यर्थः, यथा हयानां युक्तादिपदयोजनाया प्रत्येकं चत्वारश्चत्वारो भङ्गा भणिताः, तथा=तेन क्रमेण गजानामपि युक्तादि शोभान्तपदचतुष्टययोजनापुरस्सरं प्रत्येकं भङ्गचतुष्टयं भणितव्यम् ।

“ पडिवक्खो- तहेव पुरिसजाया ” पुरुषनातरूपादाप्टीतिकोऽपि तथैव भणितव्यः । सू० १४ ।

मूलम्—चत्वारि जुग्गायरिया पणत्ता, तं जहा-पंथजाइ णाममेगे णो उप्पहजाई १, उप्पहजाई णाममेगे णो पंथजाई २, एगे पंथजाई वि उप्पहजाईवि ३, एगे णो पंथजाई णो उप्पहजाई ४, एवामेव चत्वारि पुरिसजाया । सू० १५ ।

“ चत्वारि गया पणत्ता ”—इत्यादि १४

सूत्रार्थ—गज-हाथी चार प्रकारकेहैं, युक्तयुक्त-१ युक्ताऽयुक्त-२ अयुक्त-युक्त-३ और अयुक्तायुक्त-४ । ऐसे ही पुरुष जान भी युक्तयुक्त आदिके भेदसे चार कहे गये हैं ४।

टीकार्थ—हयोंकी युक्तादि पद योजनासे बनाई गई चतुर्भङ्गी के जैसे युक्तादी पदसे लेकर युक्त शोभासम्पन्न तरु के पदोंकी योजना से गजोंकी चतुर्भङ्गी बना लेनी चाहिये । और साथ साथ पुरुष जात भी चार हैं इन सब सूत्रोंका व्याख्यान हयसूत्र जैसा कर लेना चाहिये ॥सू० १४॥

सूत्रार्थ—“ चत्वारि गया पणत्ता ” इत्यादि—

गज (हाथी) चार प्रकारना कहे छे—(१) युक्तयुक्त, (२) युक्तायुक्त, (३) अयुक्तयुक्त अने (४) अयुक्तायुक्त अेज प्रमाणे पुरुषना पण्युक्तयुक्त आदि चार प्रकार समजवा.

टीकार्थ—अश्वनी जेम ज युक्तपरिणत, युक्तइप अने युक्त शोभासंपन्न, आ पदोने योजवाथी गजविषयक भील त्रयु चतुर्भङ्गी पण्यु अने छे अेज प्रकारनी भील त्रयु चतुर्भङ्गी दार्ष्टान्तिक पुरुष विषे पण्यु समजवी. हयसूत्र (सू १३)ना जेवो ज आ सूत्रनो लावार्थ समजवे। सू. १४

छाया—चतस्रो युग्याऽऽचर्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पथियायि नामैकं नो उत्पथयायि १, उत्पथयायि नामैकं नो पथियायि २, एकं, पथियाय्यपि उत्पथयाय्यपि ३, एकं नो पथियायि नो उत्पथयायि ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि । सू० १५ ॥

टीका—“ चत्वारि जुग्गायरिया ” इत्यादि — युग्याऽऽचर्याः — युगं—रथं वहतीति युग्यमश्वादि वाहनं तस्याऽऽचरणान्याचर्याः—वहनक्रियाः गमनक्रियाः वा चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—“ पंथजाई ” इत्यादि—एकं युग्यम्—अश्वादिवाहन पथियायि—पन्थानं—मार्गयति=गच्छतीत्येवं शीलं तथा भवति, किन्तु नो उत्पथयायि—उत्सृष्टः—त्यक्तः पन्थाः उत्पथ.=कुमार्गः, तं गच्छतीत्येवंशीलं मुत्पथयायि न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा—एकम् उत्पथयायि भवति, किन्तु नो पथियायि, इति द्वितीयः । २ ।

“ चत्वारि जुग्गायरिया पण्णत्ता ” — इत्यादि १५

सूत्रार्थ—युग्याचर्या चार कही गई हैं, पथियायी नो उत्पथयायी—१ उत्पथयायी नो पथियायी—२ पथियायी भी—उत्पथयायीभी—३ और नो पथियायी नो उत्पथयायी—४ । इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं

भावार्थ—युग्यपदसे रथ वहन करनेवाले अश्वादि वाहन यहाँ गृहीत हुये हैं, इनकी जो वहनक्रिया या गमनक्रिया है वह आचर्या पदसे गृहीत है । इसे चार प्रकार होनेका तात्पर्य ऐसा है—कोई अश्वादि वाहन ऐसा होता है जिसका स्वभाव मार्गसे चलनेका कुमार्गसे नहीं होता है — १ यह पथियायी मार्ग में चलनेवाला का प्रथम भङ्ग है कोई एक ऐसा होता है जो कुमार्ग से चलने का स्वभाववाला होता है मार्ग से नहीं, २ यह द्वितीय भङ्ग है ।

“ चत्वारि जुग्गायरिया पण्णत्ता ” इत्यादि—

युग्याचर्या (अश्वादिनी गमन क्रिया) चार प्रकारनी कही छे—(१) पथियायी नो उत्पथयायी, (२) उत्पथयायी नो पथियायी, (३) पथियायी अने उत्पथयायी (४) नो पथियायी नो उत्पथयायी अने प्रमाणे पुरुषोना पथु चार प्रकार कही छे.

भावार्थ—युग्य अटले रथादिने जे यनार अश्वादि ते अश्वादिनी जे पडन क्रिया अथवा गमनक्रियाने ‘आचर्या’ कहे छे तेना चार प्रकार डवे स्पष्ट करवामां आवे छे—(१) कोछ अश्वादि युग्य डाय छे जे मार्गे आलवाना स्वभाववाणुं डाय छे—कुमार्गे आलतुं नथी. (२) कोछ अश्वदि वाडन कुमार्गे न आलवाना स्वभाववाणुं डाय छे. मार्गे ते आलतुं न थी, (३)

तथा—एकं पथियाय्यपि भवति, उत्पथयाय्यपि, इति तृतीयः । ३ ।

तथा—एकं नो पथियायि भवति नो उत्पथयायि, इति चतुर्थः । ४ ।

यद्यपि सामान्यसूत्रे युग्यस्याचर्याश्चतुर्विभजनीयत्वेनोक्तास्तथापि आश्रया-
ऽऽश्रेययोरभेदविवक्षया चर्याऽऽश्रयो युग्यमेव चतुर्विधत्वेनोक्तमिति । इति
द्रव्ययुग्यपक्षे । भावयुग्यपक्षे तु—युग्यशब्दस्योपचारिकत्वेन युग्यसदृशा इत्यर्थः,
तत्सादृश्यं च संयमयोगभारवोद्धृतया साधुषु ग्राह्यं, तेषामाचर्या युग्याचर्याश्च-
तस्रः प्रज्ञप्ता इत्यर्थो बोध्यः, अत्रापि युग्यपदलक्षितस्य साधोराचर्याद्वारेण चातु-
र्विध्यं, तत्र प्रथमः पथियायी अप्रपत्तः, सदनुष्ठापितत्वात् १, उत्पथयायी लिङ्गी

तथा—कोई अश्वदि वाहन ऐसा होता है जो मार्गसे जानेका स्वभाव-
वाला होता है और कुमार्गसे भी—३ ऐसा यह तृतीय भङ्ग है । कोई एक
अश्वदि न मार्गसे—न कुमार्गसे जानेका स्वभाववाला होता है—४
यद्यपि इस सामान्य सूत्रमें युग्यकी आचर्या चार प्रकार से कही गई है
फिर भी आश्रय और आश्रेय में अभेद विवक्षासे आचर्याके आश्रय-
भूत युग्यही चार प्रकारके कहे गये हैं ऐसा समझना चाहिये । यह
कथन द्रव्य युग्यके पक्षमें किया है, भावयुग्यके पक्षमें इन भङ्गोंका
यों कथन करना चाहिये । युग्य शब्दको औपचारिक मानके युग्य जैसा
जो हों वे युग्य हैं, ऐसे युग्य साधु होते हैं, क्योंकि—ये संयम भारको
बहन करते हैं अतः इनमें—युग्य सादृश्य है इनकी चर्या युग्याचर्या
है । यहां चर्या द्वारा युग्य पदोपलक्षित साधुमें चतुर्विधता इस

कोई अश्वदि वाहन मार्ग पर थधने आलवाना स्वभाववाणुं पणु डोय
छे अने कुमार्गे आलवाना स्वभाववाणुं पणु डोय छे (४) कोई एक अश्वदि
(युग्य) मार्गे थधने नराना स्वभाववाणुं पणु डोतुं नथी अने कुमार्गे
आलवाना स्वभाववाणुं पणु डोतुं नथी, जे के आ सामान्य सूत्रमां युग्यनी
आचर्या (अश्वदिनी गमनक्रिया) चार प्रकारनी कडी छे, छतां पणु आश्रय
अने आश्रेयमां अलेदोपचारनी अपेक्षासे आचर्याना आश्रयभूत युग्य (अश्व
दिनां) न अडी चार प्रकार समनरा लेधसे. आ कथन द्रव्ययुग्यने
अनुलक्षीने करवामां आण्यु छे, ल वयुग्यनी अपेक्षासे आ सांगाओतुं कथन
आ प्रमाणे थपुं लेधसे युग्य शब्दने औपचारिक गण्णीने युग्य जेवा जे
डोय तेने पणु युग्य कडी शकय. संयमभारतुं बहन करनार साधुने न
सेवां युग्यसमान गण्णी शकय. सेनां साधुनी आचर्याने युग्याचर्या कडी शकय
अडी आचर्या द्वारा युग्य पदोपलक्षित साधुमां अतुर्विधतातुं आ प्रमाणे

असदनुष्ठायित्वात् २, उभययायी प्रमत्तः, उभयानुष्ठायित्वात् ३, अनुभययायी सिद्धः, अनुभयानुष्ठायित्वादिति ४।

“ एवामेवे ”—त्यादि—एवमेव—युग्यवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुषः पथियायी—सुशास्त्रज्ञानसम्पन्न—सुगुरुपदिष्टसुदेवाऽऽ-
राधनादिमार्गगामी भवति, किन्तु नो उत्पथयायी—कुशास्त्रज्ञानोपहतकुगुरुपदिष्ट
कुदेवाऽऽराधनादिकुपथगामी नो भवति ? एवं शेषमङ्गत्रयं बोध्यम् । ४।

प्रकार है—कोई एक साधु ऐसा होता है जो पथियायी सदनुष्ठान करनेवाला अप्रमत्त होता है—१ कोई एक असदनुष्ठान करनेवाला उत्पथयायी प्रमत्त होता है—१ केवल साधुलिङ्गधारी होता है—२ कोई एक सद्-असद् अनुष्ठान करनेवाला उभययायी प्रमत्त और अप्रमत्त भी होता है—३ कोई एक अनुभययायी होता है क्योंकि—वह उभय प्रकारके अनुष्ठानमें एक काभी अनुष्ठान करनेवाला नहीं होता है ऐसा वह सिद्ध होता है—४ । युग्य के सम्बन्ध से सम्बद्ध पुरुष जातभी चार होते हैं, जैसे—कोई एक पुरुष पथियायी होता है सुशास्त्र ज्ञान सम्पन्न गुर्वादि उपदेशसे सुदेवकी आराधना आदिके मार्गमें गमन स्वभाव-
वाला होता है, परन्तु उत्पथयायी नहीं होता है कुशास्त्रज्ञानसे उपहत कुगुरु द्वारा प्रतिपादित कुदेवाराधन आदि कुमार्गमें जानेवाला नहीं होता है—१ इसी प्रकारसे शेष तीन भङ्ग भी समझना चाहिये । यद्वा

प्रतिपादन करी शक्य—(१) कोई एक साधु एवे। होय छे के ने पथियायी होय छे ओटवे के सदनुष्ठान करनारे। अप्रमत्त संयत होय छे (२) कोई एक साधु एवे। होय छे के ने असदनुष्ठान करनार उत्पथयायी प्रमत्त होय छे ओटवे के देवण वेषधारी साधु ज होय छे. (३) कोई एक साधु सदनुष्ठान अने असदनुष्ठान करनारे। उभययायी प्रमत्त अने अप्रमत्त होय छे (४) कोई एक साधु अनुभययायी होय छे, कारण के ते सदनुष्ठान पणु करतो नथी अने असदनुष्ठान पणु करतो नथी. एवे। ते सिद्ध होय छे

युग्यना दृष्टान्तने अनुश्य चार प्रकारना पुरुषो होय छे—(१) कोई एक पुरुष पथियायी होय छे ओटवे के सुशास्त्रज्ञानसंपन्न, गुरु आदिना उपदेश श्रुति मार्गे अने सुदेवनी आराधनाने मार्गे गमन करवाना स्वभाव-
वाणो होय छे, परन्तु उत्पथयायी होतो नथी, ओटवे के कुशास्त्रज्ञानने कुमार्गे, कुगुरु प्रतिपादित कुदेवाराधना आदि कुमार्गे गमन करनारे होतो नथी. एण प्रमाणे पाकीना त्रणु भांगा पणु समणु देवा.

યદ્વા-પથ્યુત્પથ્યશબ્દો સ્વસિદ્ધાન્ત-પરસિદ્ધાન્તપરો, ગત્યર્થસ્ય 'યા' ધાતોઃ 'યે ગત્યર્થાસ્તે જ્ઞાનાર્થાઃ' ઇતિ વોધાર્થકત્વમપિ, તતશ્ચાયમર્થઃ-પથિયાયી-સ્વસિદ્ધાન્તજ્ઞાયા, ઉત્પથયાયી-પરસિદ્ધાન્તજ્ઞાયાયીતિ, શેષં પ્રાગ્વદ્દૂહનીયમ્ । સૂ૦ ૧૫ ।

મૂલમ્-ચત્તારિ પુષ્કા પળ્ગત્તા, તં જહા-રૂવસંપન્ને ણામમેગે ણો ગંધસંપન્ને ૧, ગંધસંપન્ને ણામમેગે ણો રૂવસંપન્ને ૨, ઇમે રૂવસંપન્નેત્રિ ગંધસંપન્નેત્રિ ૩, ઇમે ણો રૂવસંપન્ને ણો ગંધસંપન્ને ૪। એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજ્ઞાયા પળ્ગત્તા તં જહા-રૂવસંપન્ને ણામમેગે ણો સીલસંપન્ને ૪। સૂ૦ ૧૬ ।

છાયા—ચત્તારિ પુષ્પાણિ પ્રત્પન્તાનિ, તદ્વથા રૂપસમ્પન્નં નામૈકં નો ગન્ધસમ્પન્નં ૧, ગન્ધસમ્પન્નં નામૈકં નો રૂપસમ્પન્નમ્ ૨, એકં રૂપસમ્પન્નમપિ ગન્ધવપથી ઔર ઉત્પથ્યે યે દો શબ્દ સ્વસિદ્ધાન્ત પરસિદ્ધાન્ત પરક હૈં, ક્યૌંકિ ગત્યર્થક ધાતુ જ્ઞાનાર્થક મી હોતા હૈ, યહાં—“ યા ” ધાતુ ગત્યર્થક હૈ અતઃ—યહ વોધાર્થક મી હો સકના હૈ, હસલિયે—“ પથિયાયી ” હસ મજ્જકા અર્થ સ્વસિદ્ધાન્તાસ્તુપ્રાયાયી, તથા—“ ઉત્પથયાયી ” હસકા પરસિદ્ધાન્તપ્રાયાયી એસા મી અર્થ હોતા હૈ । હસ પ્રકારકા અર્થ કરકે શેષ મજ્જ મી સમજ્જ લેના ચાહિયે ॥સૂ૦૧૫॥

“ચત્તારિ પુષ્કા પળ્ગત્તા ઇત્યાદિ” —૧૬

સૂત્રાર્થ—ચાર પ્રકારકે પુષ્પ કહે ગયેહૈં, જૈસે કોઈ એક પુષ્પ એસા હોતા હૈ જો કેવલ રૂપ સમ્પન્ન હી હોતા હૈ—ગન્ધ સમ્પન્ન નહીં—૧ કોઈ એક પુષ્પ કેવલ ગન્ધસમ્પન્નહી હોતા હૈ રૂપ સમ્પન્ન નહીં—૨ તથા—કોઈ

અથવા—‘ પથી ’ પદ સ્વસિદ્ધાન્તવાચક અને ‘ ઉત્પથ્ય ’ પદ પરસિદ્ધાન્તવાચક છે, કારણ કે ગત્યર્થક ધાતુ જ્ઞાનાર્થક પણ હોય છે અહીં ‘ યા ’ ધાતુ ગત્યર્થક હોવાથી વોધાર્થક પણ સંભવી શકે છે. તેથી “ પથિયાયી ” એટલે સ્વસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી અને “ ઉત્પથયાયી ” એટલે પરસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી, આ પ્રકારનો અર્થ પણ થાય છે આ પ્રકારના અર્થને અનુલક્ષીને યાકીના ભાંગા સમજી લેવા જોઈએ. । સૂ ૧૫ ।

“ ચત્તારિ પુષ્કા પળ્ગત્તા ” ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારના કૂલો કહ્યાં છે—(૧) કોઈ એક કૂલ રૂપ સંપન્ન હોય છે, પણ ગંધસંપન્ન હોતું નથી. (૨) કોઈ કૂલ માત્ર ગંધસંપન્ન જ હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતું નથી. (૩) કેઈ એક કૂલ રૂપસંપન્ન પણ હોય

सम्पन्नमपि ३, एकं नो रूपसम्पन्नं नो गन्धसम्पन्नम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुष-
जातानि-प्रवृत्तानि-तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४, । सू० १६।

टीका—“ चत्वारि पुष्पा ” इत्यादि—पुष्पाणि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
एकं पुष्पं रूपसम्पन्नं—दर्शने सुन्दरं भवति, किन्तु नो गन्धसम्पन्नं=सुगन्धि न
भवति १, एवं शेषभङ्गत्रयं स्वयं विवरणीयम् । ४। क्रमेण पलाश-बकुल-जाती-
बदरीपुष्पाणि तद्दुदाहरणानि ।

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव=पुष्पवदेव चत्वारि
पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषो रूपसम्पन्नः=सुन्दरसंस्थानवान्
भवति, किन्तु नो शीलसम्पन्नः—सद्वृत्तवान् न भवति १, एवं शेषभङ्गत्रिकं स्वय-
मूहनीयम् ४। । सू० १६ ।

एक पुष्प रूपसम्पन्न भी और गन्ध सम्पन्न भी होता है—३ और कोई
एक नतो रूपसम्पन्न न गन्ध सम्पन्न ही होता है—४ इसी प्रकारसे पुरुष
जात भी चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष रूपसम्पन्न होता है
पर—शील सम्पन्न नहीं—१ इत्यादि—४

सूत्रमें पुष्प सम्बन्धी चतुर्भङ्गीका तात्पर्य है कि कोई एक पुष्प
रूप सम्पन्न तो होता है अर्थात्—देखनेमें सुहावना होता है किन्तु—
सुगन्धवाला नहीं, जैसे पलाश पुष्प १ इसी प्रकारसे शेष भङ्गत्रय बनाते
समय दृष्टान्त के स्थान पर बकुल जाती-बदरिका पुष्पोंको रख लेना
चाहिये—४ इसी तरहसे पुरुषजातमें कोई एक पुरुष देखनेमें अति

छे अने गंधसंपन्न पक्षु डोय छे. (४) कोय ओक डूल रूपसंपन्न पक्षु डोतुं
नथी अने गंधसंपन्न पक्षु डोतुं नथी.

ओज प्रभाणे पुरुषो पक्षु थार प्रकारना डोय छे—(१) कोय ओक
पुरुष रूपसंपन्न डोय छे पक्षु शीलसंपन्न डोतो नथी ओज प्रभाणे भाकीना
त्रक्षु लांगा पक्षु समल देवा.

पुष्प विषयक यतुलं गीतुं स्पष्टीकरण—(१) कोय ओक पुष्प देभावमां
सुंदर डोय छे. पक्षु सुगंधवाणुं डोतुं नथी. जेमके पलाश पुष्प.

ओज प्रभाणे भाकीना त्रक्षु लांगा पक्षु समल देवा. गंधसंपन्न न
रूपसंपन्न पुष्प तरीके अडुल पुष्प गण्वावी शकाय. गंध अने रूपसंपन्न
पुष्पमां गुलाभ पुष्प गण्वावी शकाय. न गंध संपन्न अने न रूपसंपन्न
डूलमां बदरिका पुष्प गण्वावी शकाय. ओज प्रभाणे पुरुषोना थार प्रकार नीये
प्रभाणे समजवा—

मूलम्—चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—जाइसंपन्ने
णाममेगे णो कुलसंपन्ने० ४। ॥१॥

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, जाइसंपण्णे णाममेगे णो
बलसंपन्ने, बलसंपन्ने णाममेगे णो जाइसंपन्ने० ४, (२) । एवं
जाईए रूवेण ४ चत्वारि, आलावगा (३), एवं जाईए सुएण
४ (४), एवं जाईए सीलेण ४ (५), एवं जाईए चरित्तेण
४ (६), एवं कुलेण बलेण ४ (७), एवं कुलेण रूवेण ४
(८), एवं कुलेण सुएण ४ (९), कुलेण सीलेण ४ (१०), कुलेण
चरित्तेण ४ (११) ॥

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—बलसंपण्णे णाम-
मेगे णो रूवसंपण्णे ४ (१२) एवं बलेण सुएण ४ (१३)
एवं बलेण सीलेण (१४) एवं बलेण चरित्तेण ४ (१५)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—रूवसंपन्ने णाम-
मेगे णो सुयसंपण्णे ४ (१६) एवं रूवेण सीलेण ४ (१७)
रूवेण चरित्तेण ४ (१८)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—सुयसंपन्ने णाम-
मेगे णो सीलसंपण्णे ४ (१९) एवं सुएण चरित्तेण य ४ (२०)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—सीलसंपन्ने णाम-
मेगे णो चरित्तसंपन्ने ४ (२१) एया एक्खवीसं चउभंगीओ
भाणियद्वा ॥ सू० १७ ॥

सुन्दर परन्तु सद्वृत्तिवाला नहीं होता है १ बाकीके तीन भद्र स्वयं
समझना चाहिये ॥१६॥

(१) डेअर अेक पुरुष देभावमां अति सुकर डोय छे, पणु सद्वृत्तिवाणे
डोतो नथी, अेअ प्रभाणे णाकीना त्रषु प्रकारे पणु समअ लेवा. ॥सू. १६॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः ४ (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न, बलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः ४ (२) एवं जात्या रूपेण चत्वार आलापकाः (३) एवं जात्या श्रुतेन ४ (४) एवं जात्या शीलेन ४ (५) एवं जात्या चारित्र्येण ४ (६) एवं कुलेन बलेन ४ (७) एवं कुलेन रूपेण ४ (८) एवं कुलेन श्रुतेन ४ (९) कुलेन शीलेन ४ (१०) कुलेन चारित्र्येण ४ (११)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४ (१२) एवं बलेन श्रुतेन ४ (१३) एवं बलेन शीलेन ४ (१४) एवं बलेन चारित्र्येण ४ (१५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रूपसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः ४ (१६) एवं रूपेण शीलेन ४ (१७) रूपेण चारित्र्येण ४ (१८)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—श्रुतसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४ (१९) एवं श्रुतेन चारित्र्येण च ४ (२०)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्र्यसम्पन्नः ४ (२१) एत एकविंशतिश्चतुर्भङ्गा भणितव्याः । सू० १७ ॥

टीका—अथ पुष्पस्यैव दार्ष्टान्तिरूपानि पुरुषमूत्राणि प्राह—

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—स्पष्टम् । एकः पुरुषो जातिसम्पन्नः—उत्तमजातिको भवति, परन्तु नो कुलसम्पन्नः—उत्तमकुलसम्पन्नो न भवति १, एकः कुलसम्पन्नो भवति न जातिसम्पन्नः २, एक उभयसम्पन्नः ३, एक उभयवर्जितो भवति ४। इति प्रथमा चतुर्भङ्गी । १॥

“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि—१७

पुरुष जात चार है जातिसम्पन्न नो कुल सम्पन्न-१ अर्थात् कोई एक उत्तम जातिवाला होता है पर उत्तम कुलका नहीं-१ दूसरा कोई एक उत्तम कुलका होता है पर उत्तम जातिका नहीं-२ कोई एक पुरुष उत्तम कुलका भी और उत्तम जातिका भी होता है-३ तथा-कोई एक पुरुष उभय वर्जित होता है न उत्तम कुलका न उत्तम जातिका ४

“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि—

आर प्रकारना पुरुषो क्ख्या छे—(१) केध पुरुष उत्तम जातिवाणो डोय छे, पणु उत्तम कुणवाणो डोतो नथी. (२) केध उत्तम कुणवाणो डोय छे पणु उत्तम जातिवाणो डोतो नथी (३) केध अेक पुरुष उत्तम कुणवाणो पणु डोय छे अने उत्तम जातिवाणो पणु डोय छे. (४) केध अेक पुरुष उत्तमकुण रडित अने उत्तम जाति रडित डोय छे. । १।

પુનઃ “ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ— સ્પટ્મ્. એકઃ પુરુષો જાતિસમ્પન્નો ભવતિ ક્લિન્તુ નો વલસમ્પન્નઃ—વીર્યસમ્પન્નો ન ભવતિ ૧, એકો વલ સમ્પન્નો ભવતિ નો જાતિસમ્પન્નઃ ૨, એક ઉભયસમ્પન્નઃ ૩, એક ઉભયવર્જિતો ભવતિ, ઇતિ દ્વિતીયા ચતુર્ભક્તી । ૨ ।

“ એવં જાઈએ રૂવેણ ” ઇતિ—એવમ્=અમુના પ્રકારેણ જાત્યા સહ રૂવેણ યુક્તાશ્ચત્વાર આલાપકા વોધ્યાઃ ? તથાહિ—જાતિસમ્પન્નો નામૈકો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૧, રૂપસમ્પન્નો નામૈકો નો જાતિસમ્પન્નઃ ૨, એકો જાતિસમ્પન્નોઽપિ રૂપસમ્પન્નોઽપિ ૩, એકો નો જાતિસમ્પન્નો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૪। ઇતિ તૃતીયા ચતુર્ભક્તો ૩।

“ એવં જાઈએ સુણ ” ઇતિ—એવમ્=અનન્તરોક્તપ્રકારેણ જાત્યા સહ શ્રુતેન યુક્તાશ્ચત્વાર આલાપકાઃ, તથાહિ—જાતિસમ્પન્નો નામૈકો નો શ્રુતમ્પન્નઃ ૧,

ફિરમી—પુરુષજાતિ ચાર કહે ગયે હૈં જૈસે—કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈં જો જાતિ સમ્પન્ન હોતા હૈં, પર વલ સમ્પન્ન નહીં—૧ અર્થાત્ વીર્ય સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈં । કોઈ વલસમ્પન્ન હૈં પર—જાતિ સમ્પન્ન નહીં—૨ કોઈ એક ઉભય સમ્પન્ન હોતા હૈં—૩ ઓર કોઈ એક ઉભયવર્જિત હોતા હૈં—૪ એવં જાઈએ રૂવેણ—ઇત્યાદિ ઇસી પ્રકાર તરહસે જાતિકે સાથ રૂપને યુક્ત ચાર આલાપક જાનના ચાહિયે, જૈસે કોઈ એક પુરુષ જાતિસે સમ્પન્ન હોતા હૈં પર રૂપસે સમ્પન્ન નહીં—૧ કોઈ એક રૂપસે સમ્પન્ન હોતા હૈં પર જાતિ સમ્પન્ન નહીં—૨ કોઈ એક જાતિ ઓર રૂપસે મી સમ્પન્ન હોતા હૈં—૩ કોઈ એક ન તો જાતિ સમ્પન્ન હી ન રૂપ સમ્પન્ન હીહોતા હૈં—૪ “ એવં જાઈએ સુણ ” ઇસી તરહસે જાતિસે શ્રુતસે યુક્ત ચાર આલાપક હોતે હૈં, જૈસે કોઈ એક પુરુષ

નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન (વીર્યસંપન્ન) હોતો નથી. (૨) કોઈ બળસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ બળસંપન્ન અને જાતિસંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી. । ૨ ।

“ એવં જાઈએ રૂવેણ ” એજ પ્રમાણે જાતિની સાથે રૂપના યોગથી ચાર વિકલ્પો અને છે, જેમકે (૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. । ૩।

“ એવં જાઈએ સુણ ” એજ પ્રમાણે જાતિ અને શ્રુતના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા અને છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે,

श्रुतसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि श्रुतसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो श्रुतसम्पन्नः ४। इति चतुर्थीचतुर्भङ्गी । ४।

“ एवं जाइए सीलेण ” इति—एवं—पूर्वोक्तरीत्या जात्या सह शीलेन युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः, तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः १, शीलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इति पञ्चमी चतुर्भङ्गी ५।

“ एवं जाइए चरित्तेण ” इति—एवं पूर्वोक्तप्रकारेण जात्या सह चारित्र्येण युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः, तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो चारित्र्यसम्पन्नः १, चारित्र्यसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि चारित्र्यसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो चारित्र्यसम्पन्नः ४। इति षष्ठी चतुर्भङ्गी ६।

जातियुक्त होता है पर श्रुतसे सम्पन्न नहीं—१ कोई एक श्रुतसम्पन्न होता है तो जातिसम्पन्न नहीं—२ कोई एक जातिसे भी और श्रुतसे भी सम्पन्न होता है—३ और कोई एक न तो जातिसम्पन्न न श्रुतसम्पन्न होता है—४।

“ एवं जाइए सीलेण ”—इत्यादि इसी प्रकार शीलयुक्त जातिके चार आलापक होते हैं, कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है पर—शील सम्पन्न नहीं—१ कोई एक पुरुष शील सम्पन्न होता है तो जाति सम्पन्न नहीं—२ कोई एक जाति और शील सम्पन्न भी होता है—३ कोई एक न तो जाति सम्पन्न ही होता है न शील सम्पन्न ही—४।

“ एवं जाइए चरित्तेण ”—इसी प्रकार जातिके साथ चरित्रसे युक्त चार भङ्ग होते हैं, जैसे कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है तो चारित्र्य

पणु श्रुतसंपन्न डोतो नथी (२) डोड श्रुतसंपन्न डोड डे, पणु ढतिसंपन्न डोतो नथी (३) डोड ढतिसंपन्न पणु डोड डे अने श्रुतसंपन्न पणु डोड डे (४) डोड ढतिसंपन्न पणु नथी डोतो, अने श्रुतसंपन्न पणु डोतो नथी । ४।

“ एव जाइए सीलेण ” अणु प्रभाणु ढति अने शीलना डोगथी नीडे प्रभाणु आर ढांगा अने डे—(१) डोड अड पुरुष ढतिसंपन्न डोड डे, पणु शीलसंपन्न डोतो नथी. (२) डोड शीलसंपन्न डोड डे, पणु ढतिसंपन्न डोतो नथी. (३) डोड ढतिसंपन्न पणु डोड डे अने शीलसंपन्न पणु डोड डे डे. (४) डोड ढतिसंपन्न पणु डोतो नथी अने शीलसंपन्न पणु डोतो नथी. । ५।

“ एवं जाइए चरित्तेण ” अणु प्रभाणु ढति अने आरित्रना डोगथी नीडे प्रभाणु आर ढांगा अने डे—(१) डोड पुरुष ढतिसंपन्न डोड डे पणु आरित्रसंपन्न डोतो नथी. (२) डोड आरित्रसंपन्न डोड डे पणु ढति-

“ एवं कुलेण बलेण ” इति—एवं कुलेन सह बलेन युक्ता अपि चत्वारो भङ्गा बोध्याः, तथाहि—कुलसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न १, बलसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः २, एकः कुलसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो कुलसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः ४ इति सप्तमी चतुर्भङ्गी । ७ ।

“ एवं कुलेण रूपेण ” इति—एवं कुलेन सह रूपेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः, इत्यष्टमी चतुर्भङ्गी । ८ ।

एवं कुलेन सह श्रुतेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा । इति नवमी । ९ ।

सम्पन्न નહી—૨ કોઈ એક ચારિત્ર સમ્પન્ન હોતા હૈ તો જાતિ સમ્પન્ન નહી—૨ કોઈ એક જાતિ સમ્પન્ન હોતા હૈ ઓર ચારિત્ર સે મી—૩ કોઈ એક જાતિ—ચારિત્ર ઉભયસે વિકલ હોતા હૈ—૪ । “ एवं कुलेण बलेण ”—इसी प्रकार कुल और बलके योगसे चार भङ्ग होते हैं, कोई एक पुरुष कुल सम्पन्न होता है तो बल सम्पन्न नहीं—१ कोई एक बल सम्पन्न होता है तो कुल सम्पन्न नहीं—२ कोई एक कुल सम्पन्न होता है और बल सम्पन्न भी—३ कोई एक न तो बल सम्पन्न न कुल सम्पन्न ही होता है—४ “ एवं कुलेण रूपेण ”—इसी प्रकार कुल और रूपसे चार भङ्ग होते हैं । कोई एक पुरुष कुल सम्पन्न होता तो रूपसम्पन्न नहीं—१ कोई एक रूप सम्पन्न होता है तो कुलसम्पन्न नहीं—२ कोई एक उभय सम्पन्न होता है—३ कोई एक उभय विहीन होता है—४ ।

સંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી વિહીન હોય છે. ૧૬।

“ एवं कुलेण बलेण ” એજ પ્રમાણે કુળ અને બળના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ પુરુષ કુળસંપન્ન હોય છે, પણ બળસંપન્ન હોતો નથી, (૨) કોઈ બળસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ બળ અને કુળ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી. ૧૭।

“ एवं कुलेण रूपेण ” એજ પ્રમાણે કુળ અને રૂપના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ કુળસંપન્ન તો હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ કુળસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. ૧૮। એજ પ્રમાણે કુળ અને શ્રુતના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે. ૧૬।

કુલેન સહ શીલેન યુક્તાશ્વત્વારો ભજ્ઞા ઇતિ દશમી । ૧૦ ।

કુલેન સહ ચારિત્રેણ યુક્તાશ્વત્વારો ભજ્ઞા દ્વયેકાદશી । ૧૧ ।

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—પુનઃ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—વલસમ્પન્નો નામૈકો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૧. સ્પસમ્પન્નો નામૈકો નો વલસમ્પન્નઃ ૨, એકો વલસમ્પન્નોઽપિ રૂપસમ્પન્નોઽપિ ૩, એકો નો વલસમ્પન્નો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૪। ઇતિ દ્વાદશી । ૧૨ ।

“ એવં વલેણ સુણ ” ઇતિ—એવં વલેન સહ શ્રુતેન યુક્તા અપિ ચત્તારો ભજ્ઞા વોધ્યાઃ ઇતિ ત્રયોદશી । ૧૩ ।

“ એવં વલેણ સીલેણ ” ઇતિ—એવં વલેન સહ શીલેન યુક્તાશ્વત્વારો ભજ્ઞા વોધ્યાઃ । ઇતિ ચતુર્દશી । ૧૪ ।

इसी प्रकार कुल और श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते हैं—४ इसी प्रकार कुल शीलसे भी चार भङ्ग होते हैं—४ इसी प्रकार कुल चारित्र युक्त चार भङ्ग होते हैं—४ इस प्रकारसे यहां तक ग्यारह चतुर्भङ्गी है । ११

પુનશ્ચ—“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ”—પુરુષ જાત ચાર હૈં, જૈસે કોઈ એક પુરુષ વલ સમ્પન્ન હૈ તો રૂપ સમ્પન્ન નહીં—૧ કોઈ એક રૂપ સમ્પન્ન હોતા હૈ તો વલ સમ્પન્ન નહીં—૨ કોઈ એક વલ સમ્પન્ન ઓર રૂપ સમ્પન્ન બી હોતાહૈ—૩ કોઈ એક ન તો વલ સમ્પન્ન ન રૂપ સમ્પન્ન હોતા હૈ—૪, ૧૨

“ એવં વલેણ સુણ ”—इसी प्रकार वल श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते हैं—४, १३

“ એવં વલેણ સીલેણ ”—ऐसे वल और शील संयोगसे चार भङ्ग होते हैं—४, १४

એજ પ્રમાણે કુળ અને શીલના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે. ૧૧૦।

એજ પ્રમાણે કુળ અને ચારિત્રના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે ૧૧૧।
આ રીતે અહીં સુધીમાં ૧૧ ચતુર્ભંગી પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ચાર પ્રકારના પુરુષો હોય છે— ૧) કોઈ પુરુષ બળસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ બળ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે. (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી ૧૧૨।

“ એવં વલેણ સુણ ” એજ પ્રમાણે બળ અને શ્રુતના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે. ૧૧૩।

‘ એવં વલેણ સીલેણ ’ એજ પ્રમાણે બળ અને શીલના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે. ૧૧૪।

“ એવં વલેણ ચરિત્તેણ ” ઇતિ—એવં વલેન સહ ચારિત્રેણ યુક્તાશ્વત્વારો મદ્ગા વોધ્યાઃ । ઇતિ વશ્વદશી । ૧૫ ।

“ ચત્તારિ પુરિમજાયા ” ઇત્યાદિ—પુનઃ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞાનિ તથા—રૂપસમ્પન્નો નામૈકો નો શ્રુતસમ્પન્નઃ ૧, શ્રુતસમ્પન્નો નામૈકો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૨, એકો રૂપસમ્પન્નોઽપિ, શ્રુતસમ્પન્નોઽપિ ૩, એકો નો રૂપસમ્પન્નો નો શ્રુતસમ્પન્નઃ ૪ । ઇતિ પોટ્તી । ૧૬ ।

“ એવં રૂવેણ સીલેણ ” ઇતિ—એવં રૂપેણ સહ શીલેન યુક્તાશ્વત્વારો મદ્ગા વોધ્યાઃ । ઇતિ સમદશી । ૧૭ ।

“ રૂવેણ ચરિત્તેણ ” ઇતિ—રૂપેણ સહ ચારિત્રેણ યુક્તાશ્વત્વારો મદ્ગા વોધ્યાઃ । ઇત્યાદશી । ૧૮ ।

“ ચત્તારિ પુરિમજાયા ” ઇત્યાદિ—પુનઃ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞાનિ, તથા—શ્રુતસમ્પન્નો નામૈકો નો શીલસમ્પન્નઃ ૧, શીલસમ્પન્નો નામૈકો નો શ્રુત-

“ એવં વલેણ ચરિત્તેણ ”—હસી પ્રકાર વલ ચારિત્રસે ચાર મદ્ગા હોતે હૈં—૪, ૧૬

‘ચત્તારિ પુરિમ જાયા’—પુરુષ જાત ચાર કહે ગયેહૈં, જૈસે કોઈ એક પુરુષ રૂપ સમ્પન્ન હોતા હૈં શ્રુત સમ્પન્ન નહીં—૧ કોઈ એક શ્રુત સમ્પન્ન હોતા હૈં રૂપ સમ્પન્ન નહીં—૨ કોઈ એક રૂપ ઓર શ્રુત સમ્પન્ન હી—૩ ઓર કોઈ એક દોનોસે રહિત હોતા હૈં—૪, ૧૬ “ એવં રૂવેણ સીલેણ ” હસી પ્રકાર રૂપ શીલ સે યુક્ત ૪ મદ્ગા હોતે હૈં, ૧૭ “ રૂવેણ ચરિત્તેણ ” હમી તરહ રૂપ ચારિત્ર યુક્ત ૪ મદ્ગા હોતે હૈં—૧૮

“ એવં વલેણ ચરિત્તેણ ” એજ પ્રમાણે બળ અને ચારિત્રના યોગથી ચાર ભાંગા અને છે. ૧૫

“ ચત્તારિ પુરિમ જાયા ” પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ રૂપસમ્પન્ન હોય છે, પણ શ્રુતસમ્પન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ શ્રુતસમ્પન્ન પણ હોય છે પણ રૂપસમ્પન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ શ્રુતસમ્પન્ન પણ હોય છે અને રૂપસમ્પન્ન પણ હોય છે, (૪) કોઈ રૂપસમ્પન્ન પણ હોતો નથી અને શ્રુતસમ્પન્ન પણ હોતો નથી ૧૬

“ એવં રૂવેણ સીલેણ ” એજ પ્રમાણે રૂપ અને શીલના યોગવાળા ચાર ભાંગા અને છે. ૧૭ “ એવં રૂવેણ ચરિત્તેણ ” એજ પ્રમાણે રૂપ અને ચારિત્રના યોગથી પણ ચાર ભાંગા અને છે. ॥ ૧૮ ॥

सम्पन्नः २, एकः श्रुतसमानोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो श्रुतसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इत्येकोनविंशति चतुर्भङ्गी । १९।

“ एवं सुणए चरित्तेण य ” इति—एवं श्रुतेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः । इति विंशतितमा चतुर्भङ्गी । २० ।

“ चत्तारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः १, चारित्रसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्न २, एकः शीलसम्पन्नोऽपि चारित्रसम्पन्नोऽपि ३, एको नो शीलसम्पन्नो नो चारित्रसम्पन्नः ४। इत्येकविंशतितमा चतुर्भङ्गी । २१। इत्थं जाति १

पुनश्च—“ चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता ” पुरुष जान चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष श्रुत सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं—१ कोई एक शील सम्पन्न होता है तो श्रुतसम्पन्न नहीं—२ कोई एक श्रुत सम्पन्न भी शील सम्पन्न भी होता है—३ कोई एक न तो श्रुत सम्पन्न न शील सम्पन्न होता है—४ १९

“ एवं सुणए चरित्तेणय ”—इसी प्रकार श्रुत चारित्र युक्त ४ भङ्ग होते हैं—२०

पुनश्च—“ चत्तारि पुरिसजाया ”—इत्यादि पुरुष जान चार हैं, जैसे कोई एक मनुष्य शील सम्पन्न होता है चारित्र सम्पन्न नहीं—१ कोई एक चारित्र सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं—२ कोई एक शील से चारित्र से भी सम्पन्न होता है—३ कोई एक न तो शीलसे न चारित्रसे ही सम्पन्न होता है—४ यह एकैसवीं चतुर्भङ्गी है । इस प्रकार

“ चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता ” पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पथ पडे छे—(१) कोछ ओक पुरुष श्रुतसंपन्न होय छे पणु शीलसंपन्न होतो नथी. (२) कोछ शीलसंपन्न होय छे पणु श्रुतसंपन्न होतो नथी (३) कोछ श्रुत अने शील अन्नेथी संपन्न होय छे (४) कोछ श्रुत अने शील अन्नेथी विहीन होय छे. १९६।

“ एवं सुणए चरित्तेणय ” अत्र प्रमाणे श्रुत अने चारित्रना योगथी चार भांगा अने छे । २०।

“ चत्तारि पुरिसजाया ” पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) कोछ पुरुष शीलसंपन्न होय छे पणु चारित्रसंपन्न होतो नथी. (२) कोछ चारित्रसंपन्न होय छे, पणु शीलसंपन्न होतो नथी. (३) कोछ शील अने चारित्र अन्नेथी संपन्न होय छे. (४) कोछ शील अने चारित्र अन्नेथी विहीन होय छे. आ २१ भी अतुलंगी छे. १२१।

कुल २ वल ३ रूप ४ श्रुत ५ शील ६ चारित्र्ये ७ तिपरसप्तके परम्परं द्विकसंयो-
गेनैकं त्रिंशत्तुर्भङ्गिकाः २१ भङ्गितव्याः । एषां व्याख्या सुगमा । सू० १७ ।

मूलम्—चत्वारि फला पण्यत्ता, तं जहा—आमलगमहुरे १,
सुदिश्रामहुरे २, खीरमहुरे ३, खंडमहुरे ४। एवामेव चत्वारि आय-
रिया पण्यत्ता, तं जहा—आमलगमहुर फलसमाणे जाव खंडमहुर-
फलसमाणे ॥ सू० १८ ॥

छाया—चत्वारि फलानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आमलकमधुरं १, मृद्वीकामधुरं
२, क्षीरमधुरं ३, खण्डमधुरम् ४। एवं चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आमल-
कमधुरफलसमानः यावत् खण्डमधुरफलसमानः । सू० १८ ॥

टीका—“ चत्वारि फला ” इत्यादि—फलानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
आमलकमधुरम्—आमलकी—धात्रीतरुविशेषः, तस्या इदम् (फलं) आमलकं, तदिव
जाति-१ कुल-२ वल-३ रूप-४ श्रुत-५ शील-६ और चारित्र्य इन
सात पदोंमें परस्पर द्विक संयोगसे ये २१ चतुर्भङ्गी होती हैं सुगम हैं । १७

“ चत्वारि फला पण्यत्ता ”—इत्यादि

फल चार प्रकारके हैं—आमलक मधुर-१ मृद्वीक मधुर-२ क्षीर
मधुर-३ खण्ड मधुर-४ इसी प्रकार आचार्य भी चार प्रकारके हैं, आमलक
मधुर फल समान-१ यावत् कोई एक खण्ड मधुर फल समान-४ ।
इस सूत्र द्वारा प्रतिपादित आमलक मधुरका तात्पर्य ऐसा है—आम-
लकी नामका एक वृक्ष विशेष होता है, इसका दूसरा नाम धात्रीतरु
है इस का जो फल है वह आमलक है । जो फल इसका जैसा मधुर

आ रीते (१) ऋति, (२) कुण, (३) अण, (४) इप, (५) श्रुत, (६)
शील अने (७) चारित्र्य आ सात पदोंको अनुक्रमे पछीना पदो साथे द्विक
संयोग करवाधी कुल २१ चतुर्भङ्गी अने छे. लावार्थ सुगम छे ॥सू १७॥

“ चत्वारि फला पण्यत्ता ” इत्यादि (सू. १८)

इहना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) आमलक मधुर, (२)
मृद्वीक मधुर (३) क्षीरमधुर अने (४) अंडमधुर अने प्रमाणे आचार्यना
पद्य “ आमलक मधुर इह समान ”धी लक्षने ‘ अंडमधुरइहसमान ’
पर्यन्तना चार प्रकार समजवा. आमलक मधुरने लावार्थ नीचे प्रमाणे
छे—आमलकी (आंणजानुं आड) नामनुं अके वृक्ष थाय छे. तेनुं गीजुं नाम

तदेव, वा, मधुरमामलकमधुरम् १, तथा-मृद्धीकामधुरं-मृद्धीका=द्राक्षा सेव सैव वा मधुरं तथा २, तथा-क्षीरमधुरं क्षीरं-दूग्धं तदिव मधुरं क्षीरमधुरम् ३, तथा-खण्डमधुरं-खण्डं=शर्करा तदिव मधुरं खण्डमधुरम् ४, क्रमेणैमानि चत्वारि अल्प-बहु-बहुतर-बहुतममधुराणि भवन्ति ।

“ एवामेव चत्वारि आयरिया ” इत्यादि-एवमेव-उक्तफलवदेव आचार्या-श्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आमलकमधुरफलसमानः, यावत्पदेन ‘ मृद्धीकामधुरफलसमानः, क्षीरमधुरफलसमानः ’ इति पदद्वयग्रहणम्, तथा-खण्डमधुरफलसमान इति । तत्राऽऽमलकमधुरफलसमानः-आमलकवन्मधुर यत्फलं तत्तुल्यः, यथाऽऽम-

है वह आमलक मधुर है या स्वयं वही एक फल मधुर है-१ इस लिये वह आमलक मधुर (फल) है । कोई एक फल मृद्धीका मधुर होता है, मृद्धीका दाखका नाम है, द्राक्ष जैसा जो मधुर हो वह मृद्धीका मधुर है-२ या यों कहिये कि मृद्धीका स्वयं ही एक मधुर फल है । कोई एक क्षीर मधुर होता है, क्षीर-दूधका नाम है दूध जैसा मीठा जो हो वह क्षीर मधुर फल है-३ कोई एक खण्ड मधुर होता है, शर्कर जैसा मधुर होनेसे खण्ड मधुर फल होता है-४ ये सब क्रमशः अल्प बहु बहुतर, और बहुतम मधुरवाले होते हैं । इसी प्रकारसे आचार्यभी चार प्रकारके होते हैं, इनमें कोई एक आचार्य आमलक मधुर फल समान होता है, आमलकके जैसे मधुर फल समान होता है, जैसे आमलक तुल्य मधुर फलमें अल्प माधुर्य होता है वैसे ही उसमें भी उपशमादि गुण अल्प मात्रामें होता है अतः-ऐसे आचार्यको आमलक मधुर

‘ धात्रीतरु ” छे. तेना इणने आमलक (आमणु) कडे छे. तेना जेवां मधुर स्वादने आमलक मधुर कडे छे ते पोते ज अेक मधुर इण छे

मृद्धीकामधुरनेा लावार्थ-मृद्धीका अेटले द्राक्ष द्राक्ष जेवां मधुर रसने मृद्धीका कडे छे अथवा अेम कही शकाय के द्राक्ष पोते ज अेक मधुर इण छे.

दूध जेवां मीठा इणने क्षीर मधुर इल कडे छे. शर्कर जेवां मधुर इणने षण्डमधुर इण कडे छे आ यारे अनुक्रमे अल्प, णहु, णहुतर अने णहुतम मधुरतावाणा डोय छे.

अेज प्रमाणे आचार्य पणु यार प्रकारना डोय छे-(१) डोथ अेक आचार्य आमलक मधुर इल समान डोय छे जेम आमलक समान इणमां अल्प माधुर्य डोय छे, अेज प्रमाणे डोथ आचार्यमां उपशम आदि गुणो अल्प मात्रामां डोय छे ते कारणे अेवा आचार्यने आमलक मधुर इणसमान कही छे. अेज प्रमाणे जे आचार्यजन णहु मात्रामां, णहुतर मात्रामां अने

लकमधुरफलेऽल्पं माधुर्यं तथाऽऽचार्येऽपि अल्प एवोपशमादिगुण इति तत्समान
आचार्यो व्यवहोयते, एवं बहुबहुतर बहुतमोपशमादिगुणसम्पन्नेष्व्वाचार्येषु मृद्धी
कामधुरफलादि समानत्वं बोध्यम् ४। ॥ सू० १८ ॥

मूलम्—चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—करेइ णाम-
मेगे वेयावच्चं णो पडिच्छइ १, पडिच्छइ णाममेगे वेयावच्चं
णो करेइ २, एगे पडिच्छइवि करेइवि ३, एगे नो पडिच्छइ
नो करेइ ४।

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—अट्टकरे णाममेगे
णो माणकरे १, माणकरे णाममेगे णो अट्टकरे २, अट्टकरेऽवि
माणकरेऽवि ३, एगे णो अट्टकरे णो माणकरे ४,

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—गणट्टकरे णाममेगे
णो माणकरे० ४,

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—गणसंगहकरे णाम-
मेगे णो माणकरे० ४,

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—गणसोहाकरे णाम-
मेगे णो माणकरे० ४,

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—गणसोहिकरे
णाममेगे णो माणकरे० ४।

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—रूवं णाममेगे जहइ

फलसे उपमित किया गया है। इसी प्रकारसे जो आचार्यजन बहुमात्रा
में, बहुतर मात्रामें, बहुतम मात्रामें उपशमादि गुणोंसे युक्त होते हैं
उनमें क्रमशः मृद्धीका मधुर फलादि समानता जाननी चाहिये ॥सू० १८॥

गहुतम मात्रामा उपशमादि शुष्णोथी सपन्न डोय छे, तेमने अनुकमे मृद्धीका
(द्राक्ष) मधुर, क्षीरमधुर अने अंड (साकर) मधुर इण समान समजवा. ।सू. १८।

णो धम्मं १, धम्मं णाममेगे जहइ णो रूवं २, एगे रूवंपि जहइ धम्मंपि जहइ ३, एगे णो रूवं जहइ णो धम्मं ४।

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--धम्मं णाममेगे जहइ णो गणसंठिइं० ४,

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--पियधम्ममे णाममेगे णो दढधम्ममे १, दढधम्ममे णाममेगे णो पियधम्ममे २, एगे पियधम्ममेवि दढधम्ममेवि ३, एगे णो पियधम्ममे णो दढधम्ममे ४। सू०१९॥

छाया--चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--आत्मवैयावृत्त्यकरो नामैको नो परवैयावृत्त्यकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--अर्थकरो नामैको नो मानकरः १, मानकरो नामैको नो अर्थकरः २, एकोऽर्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो अर्थकरो नो मानकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--गणार्थकरो नामैको नो मानकरः० ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा गणसङ्ग्रहकरो नामैको नो मानकरः४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोभाकरो नामैको नो मानकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोधिकरो नामैको नो मानकरः४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--रूपं नामैको जहाति नो धर्मं १, धर्मं नामैको जहाति नो रूपम् २, एको रूपमपि जहाति धर्ममपि जहाति ३, एको नो रूपं जहाति नो धर्मम् ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा--मियधर्मा नामैको नो दढधर्मा १, दढधर्मा नामैको नो मियधर्मा २, एकोः मियधर्माऽपि दढधर्माऽपि ३, एको नो मियधर्मा नो दढधर्मा ४। सू० १९ ॥

टीका--“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि--पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि तद्यथा--एकः--कश्चित् पुरुषः आत्मवैयावृत्त्यकरः--आत्मनः--स्वस्य वैयावृत्त्यं--भक्त-

पुनश्च--“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” १९

टीकार्थ--पुरुष चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आत्म वैयावृत्त्यकर होता है, भक्तपानसे स्वयंकीही सहायता

“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि--

टीकार्थ--पुरुषता न.वे प्रमाणे चार प्रकार पणु कइया छे--(१) कोछ ओछ पुरुष ओयो डोय छे के ने आत्मवैयावृत्त्यकर डोय-छे. ओटवे के लक्ष्मण आदि

પાનાદિભિઃ સાદાચ્ચં કરોતીત્યેવંશીલ આત્મવૈયાવૃત્ત્યકરો ભવતિ કિન્તુ નો પર-
વૈયાવૃત્ત્યકરો ભવતિ, સ ચાઽન્નમ્નો વિસમ્ભોગિહો વા ૧, ઇતિ પ્રથમો મદ્ગ ૧,
તથા-પરવૈયાવૃત્ત્યકરો નામૈકો નો આત્મવૈયાવૃત્ત્યકરઃ, સ ચ સ્વાર્થનિરપેક્ષઃ ૨,
તથા-एक आत्मवैयावृत्यकरोऽपि परवैयावृत्यकरोऽपि, स च स्थविरकल्पिकः ૩,
તથા-एको नो आत्मवैयावृत्यकरो नो परवैयावृत्यकरोः, स चानशनविशेषप्रतिप-
न्नादिः ૪। भक्त पानादि वर्जकः इति ॥

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रहृतानि,
तद्यथा -एकः पुरुषो वैयावृत्यं परस्य करोत्येव, किन्तु नो प्रतीच्छति--स्वस्य वैया
वृत्यं परतो न वाञ्छति निःस्पृहत्वात् १, तथा--प्रतीच्छति नामैको वैयावृत्य नो

करनेका स्वभाववाला है, परकी सहायता करनेका स्वभाववाला नहीं
होता है-१ ऐसा जन यातो आलसी, या विसंभोगिक होता है-१
तथा-कोई एक भोजन पान आदिसे परकी सहायता करनेवाला होता
है अपनी सहायता करनेवाला नहीं होता है, ऐसा व्यक्ति स्वार्थ
निरपेक्ष होता है-२ तथा-कोई एक भोजन पान आदिसे अपनी और
परकी सहायता करनेका स्वभाववाला होता है, ऐसा व्यक्ति स्थविर
कल्पित होता है-३ और कोई एक पुरुष न आत्मवैयावृत्यकर होना
है न पर वैयावृत्यकर ही ऐसा वह अनशन विशेष को धारण क्रिये
हुवे व्यक्ति विशेष होता है-४

“ चत्वारिपुरिस जाया ” पुनश्च—पुरुष चार प्रकारके है, जैसे
कोई एक पुरुष परका वैयावृत्य करता है किन्तु अपना वैयावृत्य दूसरोंसे

द्वारा पोतानी જે સેવા કરનારો હોય છે, અન્યને તે બાબતમાં સહાયતા
કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી એવો પુરુષ કા તેઃ આબધુ અથવા
તો વિસંભોગિક હોય છે. (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભોજનાદિ
દ્વારા અન્યની સહાયતા કરનારો હોય છે. પોતાની બતની જે સેવા કરનારો
હોતો નથી એવી વ્યક્તિ નિઃસ્વાર્થ હોય છે (૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય
છે કે જે ભોજનાદિથી પોતાની અને પરની સહાયતા કરનારો હોય છે એવી
વ્યક્તિ સ્થવિર કલ્પિક હોય છે (૪) કોઈ વ્યક્તિ એવી હોય છે કે જે
આત્મવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી અને પરવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી.
અનશન વિશેષને ધારણ કરનાર કોઈવિશિષ્ટ સાધુને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ
એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરતું વૈયાવૃત્ય કરે છે, પણ અન્યની પાસે

करोति, आचार्योग्लानो वा २। तथा-एको वैयावृत्त्यं करोत्यपि प्रतीच्छत्यपि, स च स्थविरविशेषः ३, तथा-एको वैयावृत्त्यं नो करोति नो प्रतीच्छति, स च जिनकल्पिकादिः ४, इति ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तत्रथा-एकः पुरुषोऽर्थकरः-अर्थान् करोतीत्येवंशीलस्तथा=राजादीनां दिग्गयात्रादौ तथोपदेशतो हितप्राप्त्यहितपरिहारादिकारी भवति, किन्तु नो मानकरः-मानं-गर्वं करोतीत्येवंशीलस्तथा=‘ कथमहमनभ्यर्थितो राजादीनेवं कथयिष्यामीत्य-भिमानो न भवति. अपितु तदहितो भवति, स च सन्मन्त्री नैमित्तिको वा १,

नहीं करवाता है, क्योंकि-वह व्यक्ति निःस्पृह होता है-१ कोई एक अपना वैयावृत्त्य करवाता है पर औरोंका वैयावृत्त्य स्वयं नहीं करता है ऐसा वह यातो आचार्य, या ग्लान होता है-२ कोई एक वैयावृत्त्य करता भी है और अपना भी वैयावृत्त्य परोंसे करवाता है, ऐसा स्थविर विशेष होता है-३ कोई एक न तो वैयावृत्त्य करता है न अपना वैयावृत्त्य करानाही चाहता है ऐसा जिनकल्पक आदि होता है ।-४

“ चत्वारि पुरिसजाया ”—इत्यादि पुनश्च—पुरुष चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष अर्थकर होता है मानकर नहीं, अर्थात् राजा आदिकोंके साथ दिग्गयात्रा आदिके समयमें उस प्रकारके उपदेश से उनका हित प्राप्तिकारी और अहित परिहारकारी होता है पर अहङ्कारका करनेवाला नहीं होता है, अर्थात् वह ऐसा अहङ्कार नहीं करता है कि

पोतानुं वैयावृत्त्यं करावतो नथी, कारणके ते पुरुष निःस्पृह उ.य. छे. (२) कोष व्यक्तित्वात् उ.य. छे. के ले अन्यनी पासे पोतानुं वैयावृत्त्यं करावे छे, पणु पोते अन्यनुं वैयावृत्त्यं करती नथी आचार्य अथवा ग्लान (मांदा साधुने आ प्रकारमां गणुवी शक्य. (३) कोष पुरुष परनुं वैयावृत्त्यं पणु करे छे अने अन्य द्वारा पोतानुं वैयावृत्त्यं पणु करावे छे. स्थविर विशेषणो आ लांगामां समावेश करी शक्य छे. (४) कोष पुरुष अवे उ.य. छे. के ले परनुं वैयावृत्त्यं पणु करतो नथी अने पोतानुं वैयावृत्त्यं करावतो पणु नथी. जिन कल्पित आदिने आ प्रकारमां गणुवी शक्य छे

“ चत्वारि पुरिसजाया ” पुरुषना नीचे प्रमाणे पणु चार प्रकार पडे छे— कोष अके पुरुष अर्थकर उ.य. छे. पणु मानकर उ.य. नथी. अट्टके के द्विविध्य आदि समये राजा आदिने योग्य सलाह आपीने तेमनुं हित करनार अने अहितपरिहारी उ.य. छे, पणु अहङ्कार करनार उ.य. नथी आ कथनो

तथा-मानकरो नामैको नो अर्थकरः=अभिमानकरो भवति किन्तु नो अर्थकरः-
परहितादिरूपमर्थ न करोति, स च विद्यादिगुणाभिमानो २, तथा-एकः अर्थक-
रोऽपि, मानकरोऽपि, स चाभिमानो मन्त्री, अभिमानि मित्रं वा ३, तथा-एको
नो अर्थकरो नो मानकरः, स च गुणवर्जितो जनः ४।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रवृत्तानि,
तद्यथा-एकः पुरुषो गणार्थकरः-गणस्य-साधुसमुदायस्यार्थ-भक्तपानादि प्रयो-
जनं करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरः-‘ कथमहमप्रार्थितो गण-
स्यार्थं करिष्यामी’त्येवमभिमानकारी न भवति प्रार्थनामन्तरेणैव तस्य गणोपका-

“ में विना पूछे राजादिकोंसे ऐसा कैसे करूं ” ऐसा अभिमानो नहीं
होना है किन्तु अभिमान रहित होता है। ऐसा वह पुरुष या तो सन्मन्त्री
या नैमित्तिक (ज्योतिषी) होता है-१ कोई एक मानका होता है अर्थ-
कर नहीं-२ ऐसा व्यक्ति विद्यादिगुणाऽभिमानो होता है, क्योंकि-
वह परहितादि रूप अर्थ को नहीं करता है। कोई एक अर्थकर और
माणकरभी होता है। ऐसा अभिमानो वह मन्त्री, या मित्र होता है-३
कोई एक अर्थकरभी नहीं मानकरभी नहीं, ऐसा वह गुणवर्जित जन
होता है-४ “ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि पुनश्च-पुरुष चार है, जैसे
कोई एक पुरुष गणार्थकर होता है मानकर नहीं, साधु समुदायका
नाम गण है इस गणके भक्तपान आदि प्रयोजनों साधनेका स्वभाव-

भावार्थ आ प्रमाणे छे—ते अवेो अडकार करते नथी छे “ विना पूछे
भारे राजदिकने शा भाटे सलाह आपवी जेऽछे ” ते अवेो निदालिभानी
डोय छे के राज न पूछे तो पण तेनुं छित थाय अवेी सलाह आपतो न
रडे छे. केछ सन्मन्त्री अथवा नैमित्तिकने (ज्योतिषी) आ प्रकारमां गणुवी
शकाय. (२) केछ पुरुष मानकर डोय छे पण अर्थकर डोतो नथी विद्यदि-
गुणनु अलिमान करनार पुरुष आ प्रकारने डोय छे, कारण के ते परहितादि
इप अर्थ (कार्य) करते नथी पण अडकार न करते डोय छे. (३) केछ
अर्थकर पण डोय छे अने मानकर पण डोय छे. अलिभानी मन्त्री अथवा
अलिभानी मित्रने आ बांगामां भूकी शकाय (४) केछ अर्थकर पण डोतो
नथी अने मानकर पण डोतो नथी गुणहीन जनने आ प्रकारमां भूकी शकाय.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि पुरुषना आ प्रमाणे चार प्रकार पण
पडे छे—(१) केछ अेक पुरुष गणार्थकर डोय छे पण मानकर डोतो नथी.
साधु समुदायने गण कडे छे ते गणुना आहार पाणी आदि प्रयोजनेने

रित्वात् १, तथा-मानकरो नामैको नो गगार्थकरः २, तथा-एको गणार्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो गणार्थकरो नो मानकरः ४ एते सुगमाः । उक्तंच-
 अनन्तरं गणस्यार्थ उक्तः, स च सङ्ग्रहरूप इति गणसङ्ग्रहकरसूत्रमाह-
 “ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-
 एको गणसङ्ग्रहकर-गणस्य-गच्छस्य द्रव्यत आहारादिना भावतो ज्ञानादिना
 सङ्ग्रहं करोतीत्येवशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मान-
 करो नामैको नो गगमङ्ग्रहकरः २, तथा-एका गणसङ्ग्रहकरोऽपि मानकरोऽपि
 ३, एको नो गणसङ्ग्रहकरो नो मानकरः ४।

वाला होता है “ बिना कहे सुने गणका प्रयोजन कैसे साधू ” ऐसा
 अभिमानकारी नहीं क्योंकि—वह तो प्रार्थना के बिना ही गणहित
 साधन का स्वभाववाला है, १ कोई एक मानकर होता है पर-गणार्थ
 कर नहीं, २ कोई एक गणार्थकर भी मानकर भी होता है, ३ तथा-
 कोई एक नतो गणार्थकर न मानकर ही होता है, ४ ए सब सुगम हैं । गण
 संग्रह रूप होता है अब सूत्रकार गण संग्रह सूत्रका कथन करते हैं-“ चत्वारि
 पुरिसजाया ”-पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष गण-
 गच्छ का संग्रह कर होता है, द्रव्य की अपेक्षा आहारादि द्वारा और,
 भाव की अपेक्षा ज्ञानादि द्वारा संग्रह करने का स्वभाव वाला होता
 है, किन्तु, मानकर नहीं होता है, १ कोई एक मानकर होता है गण-
 संग्रहकर नहीं, २ कोई एक गणसंग्रह कर भी मानकर भी होता है,
 ३ कोई एक नतो-गणसंग्रहकर न मानकर ही होता है, ४।

साधवाना स्वभाववाणो डोय छे. कोथ कडे तो न गणुडित साधवाने षट्ठे
 कोथना कडेथानी अपेक्षा राख्या विना ते गणुडित साधवाने तत्पर रडे
 छे. (२) कोथ ओक साधु मानकर डोय छे पणु गणुार्थकर डोतो नथी (३)
 कोथ ओक साधु गणुार्थकर पणु डोय छे अने मानकर पणु डोय छे. (४) कोथ
 साधु गणुार्थकर पणु डोतो नथी अने मानकर पणु डोतो नथी अर्थ सुगम छे.

गणु संग्रह रूप डोय छे, तेथी डवे सूत्रकार गणुसंग्रह सूत्रनु कथन
 करे छे—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषाणा नीचे प्रमाणे चार प्रकार
 पणु पडे छे—(१) कोथ पुरुष गणुसंग्रहकर (गच्छ संग्रहकर) डोय छे
 ओठ्ठे छे द्रव्यनी अपेक्षाये आहारादि द्वारा अने भावनी अपेक्षाये ज्ञानादि
 द्वारा संग्रह करवाना स्वभाववाणो डोय छे, पणु मानकर डोतो नथी. (२)
 कोथ ओक पुरुष मानकर डोय छे पणु गणुसंग्रहकर डोतो नथी. (३) कोथ
 गणुसंग्रहकर पणु डोय छे अने मानकर पणु डोय छे. (४) कोथ गणुसंग्रहकर
 पणु डोतो नथी अने मानकर पणु डोतो नथी.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एको गणशोभाकरः—गणस्य=साधुसमुदायस्य—अनवद्यसाधुसमाचारी-प्रवर्तनया चादित्व-धर्मोपदेशित्व-नैमित्तिकत्व-विद्यासिद्धित्वादिना वा शोभां करो-तीत्येवंशीलस्यया भवति, किन्तु नो मानकरः—तदभिमानकारी न भवति विनैवा-श्रयर्धनया गणशोभाकरणपरायणत्वाद् निरहङ्कारत्वाद्वा १, तथा—मानकरो नामैको नो गणशोभाकरः २, एको गणशोभाकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो गणशो-भाकरो नो मानकरः ४। इति ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एको गणशोधिकरः—गणस्य शार्धि-समुचितप्रायश्चित्तदानादिना शोधनं

पुनश्च - “ चत्वारि पुरिसजाया ” - इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे - कोई एक पुरुष गण साधुसमुदाय की अनवद्य - निर्दोष साधु समाचारी की प्रवर्तना से, चादित्व गुण से, धर्मोपदेश करने से, नैमित्तिकत्व से, या-विद्यासिद्धित्व आदि से शोभा करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु—“ नो मानकर ” मानकर नहीं होता है इस बात का अभिमान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है, क्योंकि—वह बिना कहे खुने ही गण की शोभा करने में तल्लीन रहता है, अथवा अहङ्कार बिना का होता है ऐसा यह प्रथम भंग है, १ कोई पुरुष मानकर होता है गण शोभाकर नहीं, २ कोई एक गण की शोभाकर भी होता है और—मानकर भी, ३ कोई एक न गणकी शोभाकर होता है और—न मानकर ही होता है, ४ “ चत्वारि पुरिसजाया ”—पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे—कोई एक गण

“ चत्वारि पुरिसजाया ” आ प्रकारे पुरुषेणा चार प्रकार पडे छे—

(१) कोठ अेक पुरुष अनवद्य (निर्दोष) साधु समाचारीनी प्रवर्तना द्वारा, चादित्व गुणु द्वारा, धर्मोपदेश द्वारा, नैमित्तिकत्व वडे, अथवा विद्यासिद्धित्व आदि वडे गणुनी (साधुसमुदायनी) शोभा वधारनार डोय छे परन्तु “ नो मानकरः ” (अे वातनु अभिमान करनार) डोतो नथी कारणु के ते कोठनी विनैतिनी अपेक्षा राभ्या विना गणुनी शोभा वधारवाने तत्पर रडे छे अने तेनाभा अहङ्कार डोतो नथी. (२) कोठ पुरुष मानकर डोय छे. पणु गणु शोभाकर डोतो नथी. (३) कोठ पुरुष गणुशोभाकर पणु डोय छे अने मानकर पणु डोय छे. (४) कोठ पुरुष गणुशोभाकर पणु डोतो नथी अने मानकर पणु डोतो नथी.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” पुरुषेणा नीचे प्रभाणु चार प्रकार पडे छे—कोठ अेक पुरुष गणुशोधिकर डोय छे—अेटले के समुचित प्रायश्चित्त

करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, यद्वा-अकल्पनीयत्वसंशयाधिष्ठिते भक्तपानादौ अन-
भ्यर्थित एव गृहस्थगृह गत्वा पृच्छादिना गणस्य भक्तादिपदार्थस्य शुद्धिं करोती-
त्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मानकरो नामैको नो
गणशोधिकरः २, तथा-एको गणशोधिकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो
गणशोधिकरो नो मानकरः ४।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञातानि,
तद्यथा-एको रूपं-माधूनां वेपं जहाति-राजादिकारणेन त्यजति, किन्तु नो धर्म-

शोधि कर होता है, समुचित प्रायश्चित्त दान आदि द्वारा गण की शुद्धि
करने का स्वभाव वाला होता है, यद्वा आहारादि में, अकल्पनीयता की
संशीति (संदेह)हो जाने पर बिना कहे खुले ही जो गृहस्थके घर पर जा
कर उसका निर्णय कर के उस गण सम्बन्धी अज्ञीत भक्तादि पदार्थ
की शुद्धि करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु-“ नो मानकरः ”
मानकर नहीं होता है, १ भान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है,
१ कोई एक पुरुष मानकर होता है पर-गणशोधि कर नहीं होता है,
२ कोई एक ऐसा होता है जो गण शोधिकर भी होता है और-मान-
कर भी होता है, ३ और-कोई एक न तो गणशोधिकर होता है, न मान-
कर ही होता है, ४। पुनश्च-“ चत्वारि पुरिसजाया ”-इत्यादि. पुरुष
जान चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष राजादि विशेष कारण

आदि द्वारा गणनी शुद्धि करवाना स्वभाववाणो डोय छे, अथवा आहारादिमां
अकल्पनीयतानो स देड उत्पन्न थतां न केधना कहेवानी राड जेया विना,
गृहस्थने घर न्धने तेना निर्णय करीने, ते गणने भाटे वडोरी लाववामां
आवेस आहारपाणीनी शुद्धि करवाना स्वभाववाणो डोय छे. पणु “नो मानकरः”
पणु मानकर डोतो नथी-अडंकार करवाना स्वभाववाणो डोतो नथी. (२)
कोध पुरुष मानकर डोय छे पणु गणशोधिकर डोतो नथी. (३) कोध गणशोधिकर
पणु डोय छे अने मानकर पणु डोय छे (४) कोध गणशोधिकर पणु डोतो
नथी अने मानकर पणु डोतो नथी.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” पुरुषना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पडे छे—
(१) कोध ओक साधु ओवेो डोय छे के ने राजादिना लयना कारणे वेपना
त्याग करे छे, पणु आरित्र धर्मना त्याग करतो नथी. (२) कोध ओक साधु

चारित्र्यलक्षणं त्यजति वोटिकमध्यस्थित वोटिकवेपधारि (बौद्धसाधु) मुनिवत् १, एको धर्मं त्यजति नो रूपं, निहववत् २, एको रूपधर्मोभयं त्यजति उत्पद्मजितवत्-भूत-पूर्वं गृहीतसयमगृहस्थवत् ३, एको नो रूपं जहाति नो धर्मं जहाति मुसाधुवत् ४।
 से वेप को छोडता है चरित्र धर्म नहीं, १ वोटिक (बौद्ध) वेपधारी वोटिक मध्य में स्थित मुनि जैसे । कोई एक धर्म छोडना है वेप नहीं, २ निहव जैसे । कोई एक दोनों को छोड देता है, ३ गृहस्थ के जैसे । कोई एक धर्म, और वेप में एक को भी नहीं छोडता है, ४ सन्चे साधु जैसे ।
 पुनश्च—“ चत्तारि पुरिसजाया ”—पुरुषजात चार होते हैं, जैसे—“ जिनाज्ञा धर्म का परित्याग कर देता है पर-गच्छ मर्यादा नहीं ” तात्पर्य है कि—
 “ योग्य साधु समुदाय को श्रुत देना चाहिये ” तीर्थंकर की आज्ञा है, इस आज्ञा की उपेक्षा कर के वृहत्कलादि विशिष्ट श्रुत अन्य गच्छवाले साधु को नहीं देना है. प्रवर्तक द्वारा प्रवर्तित अपनी ऐसी गच्छ मर्यादा का अनुसरण करता है वह जिनाज्ञा विराधरु होकर धर्मका परित्याग करता है पर-गणस्थिति का परित्याग नहीं करना है ऐसा वह प्रथम भङ्ग है, १। कोई एक गणस्थिति का परित्याग करता है, धर्म का नहीं, २ वह-योग्य साधुओं को श्रुत देनेवाला होता है । कोई एक धर्म-और

એવો હોય છે કે જે ધર્મ છોડે છે, પણ વેપ છોડતો નથી, જેમકે નિહવ (૩) કોઈ એક સાધુ વેપ પણ છોડે છે અને ધર્મ પણ છોડે છે (૪) કોઈ એક સાધુ વેપ પણ છોડતો નથી અને ધર્મ પણ છોડતો નથી જેમકે સત્ય સાધુ

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધર્મનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરતો નથી—“ જિનાજ્ઞાધર્મનો પરિત્યાગ કરી નાખે છે પણ ગચ્છમર્યાદાનો પરિત્યાગ કરતો નથી. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—તીર્થંકરની એવી આજ્ઞા છે કે યોગ્ય સાધુ સમુદાયને શ્રુતદાન દેવું જોઈએ. આ આજ્ઞાની ઉપેક્ષા કરીને બૃહત્કલાદિ વિશિષ્ટ શ્રુતનું અન્ય ગચ્છવાળા સાધુને તે દાન દેતો નથી, પણ પ્રવર્તક દ્વારા પ્રવર્તિત એવી પોતાની ગચ્છમર્યાદાનું તે અનુસરણ કરે છે આ પ્રકારનો સાધુ જિનાજ્ઞાનો વિરાધક હોવાને કારણે ધર્મનો પરિત્યાગ કરનારો ગણાય છે પણ ગણની મર્યાદાનું પાલન કરનારો હોવાને કારણે ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગકર્તા ગણાતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી તે યોગ્ય સાધુઓને શ્રુતદાન દેતો હોય છે. (૩) કોઈ ધર્મ અને ગણ-

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—ए नो धर्म—जिनाज्ञारूपं जहाति—त्यजति, किन्तु नो गणसंस्थितिं गणस्य—स्वगच्छस्य संस्थितिं=स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तितमर्यादां न जहाति । इहायं विवेकः—तीर्थङ्करा एवमुपदिशन्ति—“ सर्वेभ्यो योग्यसाधुभ्यः श्रुतं दातव्यमिति तदाज्ञामुपेक्ष्य बृहत्कल्पादि विशिष्टश्रुतमन्यगच्छीयाय न देयमिति स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तितमर्यादामनुसरन् योऽन्यगच्छीयाय श्रुतं न ददाति स धर्मं त्यजति, जिनाऽऽज्ञाविराधकत्वात्, नो गणसंस्थितिम्, इति प्रथमो भङ्गः । १ । एकः पुरुषो गणसंस्थितिं जहाति नो धर्मं, स च योग्येभ्यः श्रुतदायकः, इति द्वितीयः २ । एको धर्मगणसंस्थित्युभयं जहाति, स चायोग्येभ्यः श्रुतदायकः इति तृतीयः । ३ । एको नो धर्मं जहाति नो गणसंस्थितिं, स च श्रुताव्यवच्छेदार्थपरगच्छस्थं साधुं स्वगणमर्यादायां संस्थाप्य श्रुतदायी । इति चतुर्थः । ४ ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः प्रियधर्मा—प्रियो धर्मो यस्य स तथा=प्रीतिभावेन सुखेन च धर्मस्वीकारको भवति, किन्तु नो दृढधर्मा—दृढत्वाभावाद् विपदि धर्मात् प्रचलितो भवति,—

गण स्थिति दोनों का परित्याग करता है, ३ ऐसा वह-अयोग्यों को श्रुत देने वाला होता है, ३। कोई एक पुरुष न तो-धर्म का, न गण स्थिति का परित्याग करता है, ४। पुनश्च--“ चत्वारि पुरिसजाया ”-इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष धर्मप्रिय होता है-प्रीति भावसे सानन्द धर्मको स्वीकार कर लेता है, किन्तु-‘नो दृढ धर्मा,’ विपत्तिमें धर्मसे विचलित हो जाता है, अतः—दृढ धर्मा नहीं होता है, १। कोई एक पुरुष आपत् काल में भी अङ्गीकृत धर्म का परित्याग नहीं

स्थिति अन्नेना परित्याग करे छे अयोग्य व्यक्तिअने श्रुतदान देनेअने आ प्रकारमा भूझी शक्य. (४) केछ अेक साधु धर्माने पणु परित्याग करते नथी अने गणुस्थितिने पणु परित्याग करते नथी

“ चत्वारि पुरिसजाया ’ पुरुषना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहे छे—(१) केछ अेक पुरुष धर्मप्रिय होय छे—प्रीतिभावथी आनंदपूर्वक धर्माने स्वीकारी ले छे, परन्तु “ नो दृढधर्माः ” दृढधर्मा होतो नथी—अेटले के विपत्तिमां धर्मथी विचलित थछ अनारे होय छे.

તથા—એકો દૃઢધર્મા-આપદ્યપિ સ્વીકૃતધર્મા પરિત્યાગેન સ્થિરધર્મા ભવતિ, કિન્તુ નો પ્રિયધર્મા-સુखेन ધર્મસ્વીકારી ન ભવતિ, યતઃ સ કષ્ટેન ધર્મં ગૃહ્ણતિ, ૨। એકઃ પ્રિયધર્માઽપિ દૃઢધર્માઽપિ ૩, એકો નો પ્રિયધર્મા નો દૃઢધર્મા ધા

અસ્યાયમર્થઃ—દ્વિતીયો દુઃखेन ધર્મમુદ્ગ્રાહ્યતે=ધર્મગ્રહણં કાર્યતે, તુ=પુન-રસૌ ગૃહીતં ધર્મં તીરં=પારં નયતિ=યાવજ્જીવનં સવિધિ તમન્નુતિષ્ઠતીતિતૃતીયઃ ઝમયાન્તઃ=પ્રિયધર્મત્વ-દૃઢધર્મત્વોભયસ્વભાવઃ કલ્યાણઃ=ગોખનો ભવતિ ૩। ચરમઃ અન્તિમશ્ચતુર્થસુ પ્રતિક્રુપઃ=નિપિદ્ધો નિત્વારિત્વ દ્વિત્યર્થઃ । સૂ૦ ૧૯ ।

મૂલ૨—ચત્તારિ આચરિયા પપ્પણ્ણત્તા, તં જહા-પવાયણાચરિણામસેમે ણો ઉવટ્ટાવણાચરિણ ૧, ઉવટ્ટાવણાચરિણ ણામસેમે ણો કરતા હૈ (સ્થિર ધર્મધારી હોતા હૈ,) પર-સહસા સુગ્ગ સે ધર્મ કા સ્વીકાર નહીં કરતા હૈ, ક્ષયોંકિ એસા વ્યક્તિ વહુત કુચ્છ શોચ સમજ્જ કર ધર્મ ગ્રહણ કરતા હૈ, ૨ કોઈ એક પ્રિયધર્મા ઓર દૃઢધર્મા ધી હોતા હૈ, ૩ કોઈ એક પુરુષ ન તો પ્રિયધર્મા હી ન દૃઢધર્મા હી હોતા હૈ, ધા હસકા તાત્પર્ય હૈ-કિ યહાં જો દ્વિતીય પુરુષ હૈ વહ-સરલતાસે ધર્મકો નહીં ગ્રહણ કરતા હૈ, વહુત હી શોચ સમજ્જ કર ઉસે સ્વીકાર કરતા હૈ, ઓર-જવ સ્વીકાર કર લેતા હૈ તો ફિર યાવજ્જીવન ઉસકા વહ સવિધિ પાલન કરતા। અન્ય પદોં કા ભાવ સુગમ હૈ, ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવા હોય છે કે જે ગમે તેવી આકૃત આવે તો પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી (સ્થિર ધર્મધારી હોય છે), પણ પૂર્ણ વિચાર કર્યા વિના ધર્મને અંગીકાર કરતો નથી (૩) કોઈ પુરુષ પ્રિય ધર્મા પણ હોય છે અને દૃઢ ધર્મા પણ હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ પ્રિયધર્મા પણ હોતો નથી અને દૃઢધર્મા પણ હોતો નથી કહ્યું પણ છે કે—

અહીં જે બીજા પ્રકારનો પુરુષ કહ્યો છે તે સરળતાથી ધર્મને ગ્રહણ કરતો નથી-ધણે જે વિચાર કરીને ધર્મને સ્વીકારે છે. આ રીતે ધર્મને સ્વીકાર્યા બાદ તે ગમે તેવી પરિસ્થિતિમાં પણ વિધિપૂર્વક, આજીવન તેનું પાલન કરે છે. બાકીના પદોનો ભાવ સુગમ છે ॥ સૂ ૧૯ ॥

पद्वायणायरिण् २, एगे पद्वायणायरिण्वि उवट्टावणायरिण्वि ३,
एगे णो पद्वायणायरिण् णो उवट्टावणायरिण् धम्मायरिण् ४।

चत्तारि आयरिया पणत्ता, तं जहा--उद्देशणायरिण् णाम-
मेगे णो वायणायरिण्, धम्मायरिण् ० ४,

चत्तारि अंतेवासी पणत्ता, तं जहा--पद्वायणंतेवासी णाम-
मेगे णो उवट्टावणंतवासी १, धम्मंतेवासी ४,

चत्तारि अंतेवासी पणत्ता, तं जहा--उद्देशणंतेवासी णाम-
मेगे णो वायणंतेवासी १, धम्मंतेवासी ० ४, । सू० २० ॥

छाया-चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-प्रव्राजनाऽऽचार्यो नामैको नो उपस्था-
पनाऽऽचार्यः १, उपस्थापनाऽऽचार्यो नामैको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यः २, एकः
प्रव्राजनाऽऽचार्योऽपि उपस्थापनाऽऽचार्योऽपि ३, एको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यो नो
उपस्थापनाऽऽचार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-उद्देशनाऽऽचार्यो नामैको नो वाचनाऽऽ-
चार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-प्रव्राजनाऽन्तेवासी नामैको नो उपस्था-
पनाऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-उद्देशाऽन्तेवासी नामैको नो वाचना
ऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी ० ४। ॥मू० २० ॥

टीका—“ चत्तारि आयरिया ” इत्यादि — आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः,
तद्यथा-एकः प्रव्राजनाऽऽचार्यः-प्रव्राजना-प्रव्रज्यादानं तथा आचार्यो भवति,
किन्तु नो उपस्थापनाऽऽचार्यः-उपस्थापना-शिष्ये महाव्रताऽऽरोपणं तथा आचार्य

“ चत्तारि आयरिया पणत्ता ”-इत्यादि, २० ॥

आचार्य चार कहे गये हैं, जैसे — कोई एक आचार्य
ऐसा होता है जो — प्रव्राजनाचार्य होता है — उपस्थापनाचार्य
नहीं, १ दीक्षा देने द्वारा जो आचार्य होता है वह —
प्रव्राजनाचार्य है, तथा-शिष्य में महाव्रतोंका आरोपक जो हों वह-उपस्था-

“ चत्तारि आयरिया पणत्ता ” इत्यादि (२०)

आचार्यना नीचे प्रमाणे चार प्रकार उद्धा छे—(१) केअ ओक आचार्य
ओवां डोय छे के ने प्रव्रजनाचार्य डोय छे, यणु उपस्थापनाचार्य डोय

उपस्थापनाऽऽचार्यः=शिष्ये महाव्रताऽऽरोपको न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।
 एक उपस्थापनाऽऽचार्यो भवति न तु प्रव्रजनाऽऽचार्यः । इति द्वितीयः । २ ।
 एक उभयाऽऽचार्यो भवति । इति तृतीयः । ३ । एको नोभयाचार्यः, न द्वि
 धर्माऽऽचार्यो भवति । इति चतुर्थः ४ ।

“ चत्वारि आयरिया ” इत्यादि—पुनराचार्याश्रमवारः प्रज्ञानाः, तद्यथा—
 एक उद्देशनाऽऽचार्यः—उद्देशनम्—अज्ञादिपठनाधिकारित्वकरणम्, तेन तत्र चाऽऽ-
 पनाचार्य है, अर्थात् छेदोपस्थापनीय चारित्र्य देनेवाला उपस्थापनाचार्य
 है । कोई एक आचार्य शिष्य में महाव्रतों का आरोपण करने से उप-
 स्थापनाचार्य होता है, प्रव्रजनाचार्य नहीं, २ ऐसा द्वितीय भङ्ग है ।
 तथा-कोई एक प्रव्रजना से, और शिष्य में महाव्रतों की आरोपणासे
 दोनों तरहोंसे आचार्य होना है, ३ ऐसा तृतीय भङ्ग है । तथा-कोई एक
 आचार्य न तो प्रव्रजना से, न उपस्थापनासे आचार्य होना है, ४ यह
 चतुर्थ भङ्ग है । कहा भी है—“ धम्मो जेणुवडट्टो-” इत्यादि. पुनश्च—
 “ चत्वारि आयरिया, -इत्यादि आचार्य चार प्रकार के होते हैं, जैसे—
 कोई एक आचार्य, ऐसा होना है जो, उद्देशनाचार्य होना है, आचा-
 राङ्गादि ग्यारह अङ्गादिकों को पढ़ने का अधिकारी करना, इसका नाम
 उद्देशन है, इस उद्देशन से अथवा—इस उद्देशन में जो-आचार्य होना
 है वह—उद्देशनाचार्य है, किन्तु—वह वाचनाचार्य नहीं होता है १ ऐसा यह

नयी दीक्षा अंगीकार करवाने लीधे आचार्य धनारने प्रव्रजनाचार्य कहे
 छे, तथा शिष्योभां महाव्रतानुं आरोपण करवाने उपस्थानाचार्य कहे छे.
 ओटले के छेदोपस्थापनीय चारित्र्य धनारने उपस्थापनाचार्य कहे छे. (२) केछ
 ओक आचार्य शिष्योभां महाव्रतानुं आरोपण करवाने कारण्णे उपस्थापनाचार्य
 डोय छे पणु प्रव्रजनाचार्य डोता नथी. (३) केछ ओक शिष्योभां प्रव्रजित
 करवाने कारण्णे प्रव्रजनाचार्य पणु डोय छे अने महाव्रतानुं आरोपण करवाने
 कारण्णे उपस्थापनाचार्य पणु डोय छे (४) केछ ओक आचार्य प्रव्रजनानी
 अपेक्षाओ पणु आचार्य डोता नथी अने उपस्थापनानी अपेक्षाओ पणु
 आचार्य डोता नथी

“ चत्वारि आयरिया ” इत्यादि—आचार्यना नीचे प्रमाणे पणु यार
 प्रकार पडे छे—(१) केछ ओक आचार्य अेवां डोय छे के ने उद्देशनाचार्य
 डोय छे, पणु वाचनाचार्य डोता नथी. आ कथनने लावार्थ नीचे प्रमाणे
 छे—आचाराङ्गादि अगियार अंगोनु अध्ययन करवाने अधिकारी करवो तेनुं

चार्य उद्देशनाऽऽचार्यो भवति, किन्तु वाचनाऽऽचार्यो न भवति १, शेषास्त्रयो भङ्गाः सुगमाः ४। तत्रोभयरहितो धर्माऽऽचार्यो ज्ञेय इति ।

“चत्वारि अंतेवासी” इत्यादि अन्तेवासिनः—अन्ते=गुरोः सन्निधौ (गुरोराज्ञायां) वसन्तीत्येवंशीला अन्तेवासिनः=शिष्याः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः प्रव्राजनया-दीक्षयाऽन्तेवासी तथा=दीक्षितो भवति, किन्तु नो उपस्थापनाऽन्तेवासी—उपस्थापना—पञ्चमहाव्रतसंपारोपणा तत्र तथा चाऽन्तेवासी तथा=महाव्रताऽऽरोपणाशिष्यो न भवति १, एक उपस्थापनाऽन्तेवासी भवति परन्तु प्रव्राजनाऽन्तेवासी न

प्रथम भङ्ग है। इस सम्बन्ध के बाकी के तीन भङ्ग सुगम हैं। जैसे—कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो वाचनाचार्य होता है उद्देशनाचार्य नहीं, २ कोई एक उद्देशनाचार्य और वाचनाचार्य भी होता है, ३ कोई एक न तो उद्देशनाचार्य न वाचनाचार्य ही होता है, ४ यह चतुर्थ भङ्ग है। “चत्वारि अंतेवासी”—अन्तेवासी चार होते हैं, गुरु की सेवा में रहने वाला शिष्य अन्तेवासी कहा जाता है, कोई एक प्रव्राजनान्तेवासी होता है पर-उपस्थापनान्ते वासी नहीं होता है, जो दीक्षासे अन्तेवासी होता है वह-प्रव्राजनान्तेवासी कहा गया है, और-जो पञ्चमहाव्रतों की आरोपणा में, या-आरोपणा से अन्तेवासी होता है वह-उपस्थापना अन्ते वासी कहा गया है, इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है, १ कोई एक

नाम उद्देशन छे आ उद्देशननी अपेक्षाये अथवा आ उद्देशनमां ने आचार्य डोय छे तेने उद्देशनाचार्य कडे छे अने सूत्रादिनुं पठन(अध्ययन) करावनारने वाचनाचार्य कडे छे.

कोई एक आचार्य अंवां डोय छे के ने वाचनाचार्य डोय छे, पण उद्देशनाचार्य डोता नथी (३) कोई एक आचार्य अंवां डोय छे के ने उद्देशनाचार्य पण डोय छे अने वाचनाचार्य पण डोय छे. (४) कोई एक आचार्य उद्देशाचार्य पण डोता नथी अने वाचनाचार्य पण डोता नथी.

“ चत्वारि अंतेवासी ” गुरुणी समीपे रहैनार शिष्यने अन्तेवासी कडे छे. ते अन्तेवासीना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे.

(१) कोई एक प्रव्राजनान्तेवासी डोय छे पण उपस्थापनान्तेवासी डोतो नथी ने शिष्य दीक्षाने करण्णे अन्तेवासी गणाय छे, तेने प्रव्रजनान्तेवासी कडे छे. ने शिष्य पांच महाव्रतानी आरोपणाने करण्णे अन्तेवासी गणाय छे तेने उपस्थापनान्तेवासी कडे छे आ पडेदो लागे छे.

भवति २, एकः प्रव्राजनान्तेवास्यपि उपस्थापनान्तेवास्यपि भवति ३, एको नो प्रव्राजनाऽन्तेवासी भवति नापि चोपस्थापनाऽन्तेवासी भवति, चतुर्थभङ्गस्थः शिष्यो धर्मान्तेवासी धर्ममात्रस्वीकारे शिष्यो भवति, यद्वा धर्माभिलाषितयोपागतश्चतुर्थो बोध्यः ४। इति ॥

“ चत्वारि अन्तेवासी ” इत्यादि—पुनरन्तेवासिनश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एक उद्देशनान्तेवासी—उद्देशनेन=अङ्गादिपठनाधिकारित्वकरणेन शिष्यो भवति, किन्तु नो वाचनाऽन्तेवासी—वाचना—गुरुभ्यः श्रवणमधिगमो वा, तथा तत्र वाऽन्तेवासी तथा न भवति १, एको वाचनाऽन्तेवासी भवति, नो उद्देशनाऽन्तेवासी

अन्तेवासी है जो कि-उपस्थापनासे अन्तेवासी होता है, प्रव्राजनासे नहीं, यह द्वितीय भङ्ग है, २ कोई एक अन्तेवासी ऐसा होता है जो प्रव्राजनासे भी और-उपस्थापनासे भी, यह तृतीय भङ्ग है, ३ कोई एक प्रव्राजनासे भी-उपस्थापनासे भी उभय था अन्तेवासी नहीं होता है, ऐसा वह शिष्य धर्मान्तेवासी होता है धर्म मात्र के स्वीकार से शिष्य होता है, ऐसा यह चौथा भङ्ग है, ४ जो धर्माभिलाषा से युक्त हो कर गुरु के पास में शिष्यत्व अङ्गीकार करता है, वह भी इस चतुर्थ भङ्ग वाला होता है, । पुनश्च—“ चत्वारि अन्तेवासी—” अन्तेवासी चार कहे गये हैं, जैसे—कोई एक अन्तेवासी उद्देशनसे-अङ्गादि पठनाधिकारित्व करने से अन्तेवासी—शिष्य होता है, पर-वाचना से गुरु के पास श्रवण से या-अधिगमसे अन्तेवासी नहीं होता है, ऐसा यह-उद्देशनान्ते वासी नो वाचनान्ते वासी नामका प्रथम भङ्ग है, १ तथा-कोई एक अन्तेवासी

(२) કોઈ એક ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી હોય છે, પણ પ્રવ્રાજનાન્તેવાસી હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાન્તેવાસી પણ હોય છે અને ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી પણ હોય છે (૪) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તેવાસી હોતો નથી અને ઉપસ્થાપનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તેવાસી હોતો નથી એવા શિષ્યને ધર્માન્તેવાસી કહે છે, કારણ કે માત્ર ધર્મના સ્વીકારની અપેક્ષાએ જ તે અન્તેવાસી ગણાય છે.

“ ચત્તારિ અન્તેવાસી ” અન્તેવાસીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક અન્તેવાસી ઉદ્દેશનાન્તેવાસી હોય છે પણ વાચનાન્તેવાસી હોતો નથી. એટલે કે અંગાદિનું પઠન કરવાને અધિકારી હોય છે, પરંતુ વાચનાની અપેક્ષાએ—ગુરુની સમીપે શ્રવણની અપેક્ષાએ અથવા અધિગમની અપેક્ષાએ અન્તેવાસી હોતો નથી. એવો આ “ ઉદ્દેશનાન્તેવાસી નો વાચનાન્તેવાસી ” આ પહેલો ભાગો છે.

२, एक उद्देशनाऽन्तेवास्यपि भवति वाचनाऽन्तेवास्यपि ३, एको नो उद्देशनाऽन्ते-
वासी नापिच वाचनाऽन्तेवासी भवति ४। तत्र चतुर्थभङ्गस्थोऽन्तेवासी को भव-
तीत्याह—“ धम्मन्तेवासी ”—ति, धर्मान्तेवासी—धर्मशिष्यः, धर्ममात्राभिलाषितयो-
पपन्नो वा । ४ । इति ॥ सू० २० ॥

मूलम्--चत्तारि णिग्गंथा पणत्ता, तं जहा--राइणिये समणे
णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए धम्मस्स
अणाराहए भवइ १, राइणिए समणे णिग्गंथे अप्पकम्मे अप्प-
किरिये आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ २, ओमराइ-
णिए समणे णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए
धम्मस्स अणाराहए भवइ ३, ओमराइणिए समणे णिग्गंथे
अप्पकम्मे अप्पकिरिए आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ ४।

चत्तारि णिग्गंथीओ पणत्ताओ, तं जहा--राइणिया समणी
णिग्गंथी एवं चेव ४,

वाचनान्तेवासी होता है-उद्देशनान्तेवासी नहीं, ऐसा यह द्वितीय भङ्ग
है, तथा-कोई एक अन्तेवासी उद्देशनसे भी-वाचनासे भी अन्तेवासी
होता है, ३ यह तृतीय भङ्ग है । एवं-कोई एक अन्तेवासी न तो उद्दे-
शना से, और-न वाचना से ही अन्तेवासी होता है, ऐसा अन्तेवासी
धर्मशिष्य होता है, धर्ममात्र की अभिलाषा से युक्त हो कर वह शिष्य
बनता है, ऐसा यह चतुर्थ भङ्ग है, ४ ॥ सू०२० ॥

(२) कोई एक अन्तेवासी वाचनान्तेवासी होय छे, पण उद्देशनान्तेवासी
होतो नथी. (३) कोई एक अन्तेवासी उद्देशनान्तेवासी पण होय छे अने
वाचनान्तेवासी पण होय छे. (४) कोई एक शिष्य उद्देशनान्तेवासी पण
होतो नथी अने वाचनान्तेवासी पण होतो नथी. अयेवा अन्तेवासी धर्म-
शिष्य होय छे. मात्र धर्मनी अभिलाषाथी युक्त थवाने कारणे न ते शिष्य
अन्थे होय छे. ॥ सू. २० ॥

ચત્તારિ સમ્મણોવાસગા પળ્લતા, તં જહા-રાઙ્ગિણ્ણ સમ-
ણોવાસણ્ણ મહાકરુમે તહેવ ૪,

ચત્તારિ સમ્મણોવાસિયાઓ પળ્લતાઓ, તં જહા-રાઙ્ગિણિયા
સમ્મણોવાસિયા મહાકરુમા તહેવ ચત્તારિ ગમા । સૂ૦ ૨૧ ॥

છાયા-ચત્વારો નિર્ગન્થાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-રાત્નિકઃ શ્રમણો નિર્ગન્થો મહાકર્મા
મહાક્રિયઃ અનાતાપી અસમિતો ધર્મસ્થાનારાધકો ભવતિ ૧, રાત્નિકઃ શ્રમણો
નિર્ગન્થોડ્ડલ્પકર્માડ્ડલ્પક્રિયઃ આતાપી સમિતો ધર્મસ્થાડ્ડરાધકો ભવતિ ૨, અવમ-
રાત્નિકઃ શ્રમણો નિર્ગન્થો મહાકર્મા મહાક્રિયોડ્ડનાતાપી અસમિતો ધર્મસ્થાડ્ડરા-
ધકો ભવતિ ૩, અવમરાત્નિકઃ શ્રમણો નિર્ગન્થોડ્ડલ્પકર્માડ્ડલ્પક્રિય આતાપી સમિતો
ધર્મસ્થાડ્ડરાધકો ભવતિ ૪।

ચત્તારો નિર્ગન્થયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-રાત્નિકી શ્રમણા નિર્ગન્થી એવમેવ ૪,
ચત્વારઃ શ્રમણોપાસકાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-રાત્નિકઃ શ્રમણોપાસકો મહાકર્મા
તથૈવ ૪।

ચત્તસઃ શ્રમણોપાસિકાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-રાત્નિકી શ્રમણોપાસિકા મહાકર્મા
તથૈવ ચત્વારો ગમાઃ । સૂ૦ ૨૧ ॥

ટીકા—“ ચત્તારિ ણિગ્ગંથા ” ઇત્યાદિ-નિર્ગન્થાઃ-વાહ્યાભવન્તરગ્ગન્થરહિતાઃ
સાધવશ્ચત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-રાત્નિકઃ-રત્નૈઃ-ભાગતો જ્ઞાનાદિલક્ષણે વ્યવહર-
તીતિ રાત્નિકઃ-જ્ઞાનાદિરત્નવ્યવહારસમ્પન્નો વૃહત્પર્યાયઃ પર્યાયજ્યેષ્ઠ ઇત્યર્થઃ,

ટીકાર્થ—“ ચત્તારિ ણિગ્ગંથા પળ્લતા ”-ઇત્યાદિ- ૨૧ ॥

નિર્ગન્થ ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં, જૈસે - કોઈ એક
નિર્ગન્થ શ્રમણરાત્નિક પર્યાય જ્યેષ્ઠ હોના હૈ, દીક્ષાપર્યાય
કી અપેક્ષા જ્યેષ્ઠ હોતા હૈ, તપશ્ચરણશીલ હોતા હૈ નિર્ગન્થ-

“ ચત્તારિ ણિગ્ગંથા પળ્લતા ” ઇત્યાદિ—(૨૧)

શ્રમણ નિર્ગન્થના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગન્થ રાત્નિક હોય છે એટલે કે દીક્ષાપર્યાયની
અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠ હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે, બાહ્ય અને આભ્યન્તર
પરિશ્રદ્ધોથી રહિત હોય છે, પરન્તુ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની સ્થિતિની

श्रमणः-तपश्चरणशीलः, निर्ग्रन्थः, महाकर्मा-महान्ति-गुरुणि स्थित्यादिभिस्ता-
दृशप्रमादलक्षितानि कर्माणि=ज्ञानाऽऽवरणीयादीनि यस्य स तथा, महाक्रियः=
महती-बृहती क्रिया-कर्मबन्धहेतुभूता कायिक्यादिका यस्य स तथा, अनातापी-
आसमन्तात् तापयति-शीतोष्णादिसहनलक्षणमातापनां करोतीत्येवंशील आतापी,
न आतापीत्यनातापी=शीतोष्णादिपरीषहसहनकरणवर्जितः मन्दश्रद्धत्वात्, अत
एव असमितः-समित्तिभिः ऐर्यापथिक्यादिमीरहितः साधुः धर्मस्य-दुर्गतिपत-
ज्जन्तुसमुद्धरणपरायणस्य चारित्रलक्षणस्य अनाराधकः-आराधयतीत्याराधकः स
न भवतीति तथा भवति, इति प्रथमो निर्ग्रन्थो ज्ञेयः । १ ।

तथा-रात्निकः-पर्यायज्येष्ठः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्मा-लघुकर्मा, अल्प-
क्रियः-अल्पा क्रिया कायिक्यादिका यस्य स तथा, आतापी-परीषहसहनधीरः,

बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है, परन्तु फिर भी वह ज्ञाना-
वरणीयादि कर्मोंकी स्थितिकी अपेक्षासे महा कर्मा होता है कर्मबन्ध हेतुभूत
प्राणातिपात आदि कायिकी क्रियाएँ जिसकी सहती होती है. मन्द
श्रद्धावाला होनेसे शीत उष्ण आदि परीषहोंको जीतनेसे रहित होता
है असमित होता है-ईर्यापथिकी आदि समितियोंके पालनेसे विहीन
होता है और इसीसे दुर्गतिमें पडते हुवे जीवोंके उद्धरण करनेमें तत्पर
ऐसे चारित्ररूप धर्मका वह आराधक नहीं होता है ऐसा वह प्रथम
प्रकारका निर्ग्रन्थ है-१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ रात्निक दीक्षापर्यायकी
अपेक्षा ज्येष्ठ होता है श्रमण-तपश्चरणशील होता है निर्ग्रन्थ बाह्य आभ्य-
न्तर परिग्रहका त्यागी होता है, पर लघुकर्मा होता है, कायिकी आदि
अल्प क्रियावाला होता है, आतापी होता है, परीषहोंको सहनेमें धीर

अपेक्षासे ते महाकर्मा होय छे. ते कारणे कर्मबन्धना कारणे इप प्राणातिपात
आदि कायिकी क्रियाओथी अधिक प्रमाणमां ते युक्त होय छे, मन्द श्रद्धा-
वाणो होवाने कारणे शीत, उष्ण आदि परीषहोने लुतवाने असमर्थ होय
छे, असमित होय छे-ईर्यापथिकी आदि समित्योना पालनधी विहीन होय
छे अने ते कारणे दुर्गतिमां पडता लुवोना उद्धार करवाने समर्थ ओवा
चारित्ररूप धर्मोने ते आराधक होतो नधी आ पडेला प्रकारो निर्ग्रन्थ समजवो.

(२) कैथ ओक श्रमण निर्ग्रन्थ रात्निक होय छे-दीक्षापर्यायनी अपेक्षासे
न्येष्ठ होय छे, तपश्चरण शील होय छे अने बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रहोने
त्यागी होय छे, परन्तु ते लघुकर्मा होय छे कायिकी आदि अल्प क्रियावाणो
होय छे, आतापी होय छे-परीषहोने सहन करवामां धीरवीर होय छे, अने

અત એવ સમિતઃ—સમિતિગુણસમ્પન્નથ ભવત્યતો ધર્મસ્યાઽઽરાધકો ભવતિ ૨।
 इति द्वितीयो निर्ग्रन्थः २। तथा—अवमरात्निकः—अवमो—लघुः पर्यायेण स चासौ
 रात्निकोऽवमरात्निकः—लघुपर्यायः, श्रमणो निर्ग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियोऽनातापी
 अत एवासमितो भवत्यत एव च धर्मस्याऽनाराधको भवति । इति तृतीयो निर्ग्रन्थः
 ३। तथा—अवमरात्निकः—लघुरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी
 अत एव समितोऽत एव धर्मस्याऽऽराधको भवति । इति चतुर्थो निर्ग्रन्थः । ४ ।

વીર હોતા હૈ, સમિત હોતા હૈ—સમિતિ ગુણ સમ્પન્ન હોતા હૈ અતઃ
 वह धर्माराधक होना है, यह द्वितीय प्रकारका श्रमणनिर्ग्रन्थ है—२
 कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघुपर्यायवाला होता
 है तपश्चरणशील होता है बाह्य—आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है,
 फिरभी महाकर्मा होता है, महा क्रियावाला होता है, अनातापी होता
 है, अतएव—असमित होता है और इसी कारण वह धर्मका आराधक
 नहीं होता है—ऐसा यह तृतीय प्रकारका श्रमण निर्ग्रन्थ है—३ कोई
 एक श्रमण निर्ग्रन्थ अवमरात्निक होता है—दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु
 पर्यायवाला होता है तपश्चरणशील होता है बाह्याऽभ्यन्तर परिग्रहका
 त्यागी होता है, पर वह अल्प कर्मा होता है, अल्प क्रियावाला होता
 है आतापी होता है, समित होता है, इसलिये वह धर्मका आराधक
 होता है—४ ।

અમિત હોય છે—ધર્માપચિક્રી આદિ સમિતિઓનું પાલન કરનાર હોય છે, તે કારણે
 તે નિર્ગ્રન્થ ધર્મારાધક હોય છે બીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના આ લક્ષણો સમજવા.

હવે ત્રીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રન્થના લક્ષણો બતાવવામાં આવે છે—
 કેઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ લઘુપર્યાયવાળો હોય છે,
 તપશ્ચરણશીલ હોય છે અને બાહ્ય—આભ્યન્તર પરિગ્રહોથી રહિત હોય છે,
 પરન્તુ તે મહાકર્મા હોય છે, મહાક્રિયાવાળો હોય છે, અનાતાપી હોય
 છે, પરીપહોને સહન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તે કારણે તે અસમિત
 હોય છે અને એજ કારણે તે ધર્મને આરાધક હોતો નથી.

ચોથા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રન્થના લક્ષણો હવે પ્રકટ કરવામાં આવે
 છે—કેઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ‘અવમરાત્નિક’ હોય છે. એટલે કે લઘુ
 દીક્ષાપર્યાયવાળો હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે, અને બાહ્ય—આભ્યન્તર
 પરીગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પરન્તુ તે લઘુકર્મા હોય છે, અલ્પક્રિયાવાળો
 હોય છે, પરીપહોને સહન કરનારો હોય છે અને સમિત હોય છે તે કારણે
 તે ધર્મને આરાધક હોય છે.

“ चत्वारि णिगंथीओ ” इत्यादि—एतद्विवरणं निर्ग्रन्थसूत्रवद्बोध्यम्, इत्यत आह—“ एवं चेव ”—एवमेव—निर्ग्रन्थवदेव भङ्गचतुष्टयं भवनीयम्।

“ चत्वारि समणोवासगा ” इत्यादि—एतदपि श्रमणोपासकसूत्रं निर्ग्रन्थ-सूत्रवद् बोध्यम्, इत्यत आह—“ तहेवे ”—ति-तथैव—यथा निर्ग्रन्था उक्तास्तथैव श्रमणोपासका अपि चतुर्भङ्गीयुक्ता बोध्या इति ।

संक्षेपसे श्रमण निर्ग्रन्थोंके चार भेद इस प्रकारसे हैं—कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ होता हुवाभी अनाराधक होता है—१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ हुवाभी आराधक होता है—२ ।

कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी अनाराधक होता है—३ और एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी आराधक होता है—४ “ चत्वारि णिगंथीओ ’ इत्यादि।

इस सूत्रका विवरण निर्ग्रन्थ सूत्र जैसा जानना चाहिये अतः पूर्वोक्त रूपसेही यहां भङ्ग चतुष्टय कर लेना चाहिये । “ चत्वारि समणोवासगे ” इत्यादि इस श्रमणोपासक सूत्रकी व्याख्या भी पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ सूत्रकी तरह करलेनी चाहिये इसीलिये तहेव ऐसा कहते हुवे सूत्रकार प्रकट करते हैं कि श्रमणोपासकभी निर्ग्रन्थोंके समानही चतु-

७वे श्रमणु निर्ग्रथेना चार लेद सक्षिप्तमां प्रकट करवामां आवे छे.

(१) दीर्घं दीक्षा पर्यायवाणे पणु अनाराधक डोय अवे। श्रमणु निर्ग्रथ.

(२) दीर्घं दीक्षापर्यायवाणे पणु आराधक डोय अवे। श्रमणु निर्ग्रथ.

(३) लघु दीक्षापर्यायवाणे पणु अनाराधक डोय अवे। श्रमणु निर्ग्रथ.

(४) लघु दीक्षापर्यायवाणे पणु आराधक डोय अवे। श्रमणु निर्ग्रथ.

“ चत्वारि णिगंथीओ ” इत्यादि—

चार प्रकारनी श्रमणु निर्ग्रथिणीओ (साधवीओ) डोय छे. आ सूत्रनुं विवरणु निर्ग्रथ सूत्र अनुसार करवुं नेध अे. अेटदे के आ सूत्रमां निर्ग्रथना ने चार प्रकारे क्हा छे, अेवा न प्रकारे श्रमणु निर्ग्रथिणीना पणु समणु लेवा.

“ चत्वारि समणोवासगे ” इत्यादि—

श्रमणोपासकेना पणु चार प्रकार क्हा छे. श्रमणु निर्ग्रथना ने प्रकार आगण क्हेवामां आव्या छे, अेवा न चार प्रकार श्रमणोपासकेना पणु समणुवा. “ तहेव ” आ पद द्वारा अे वात न प्रकट करवामां आवी छे के श्रमणोपासके पणु श्रमणुनिर्ग्रथेनी नेम चार प्रकारना डोय छे.

“ चत्वारि समणोवासिया ” इत्यादि—एतदपि निर्ग्रन्थसूत्रवद् बोध्यम्, अत आह—“ तदेव चत्वारि गमा ”—तथैव—निर्ग्रन्थसूत्रे यथा चत्वारो गमाः= आलापका-भङ्गा उक्तास्तथा श्रमणोपासिकासूत्रेऽपि चत्वार आलापका भणनीयाः ॥ सू० २१ ॥

सूत्रम्—चत्वारि समणोवासगा पणत्ता, तं जहा-अम्मा-पित्तसमाणे १, भाईसमाणे २, मित्रसमाणे ३, सवत्तीसमाणे ४, ११

चत्वारि समणोवासगा पणत्ता, तं जहा-अद्दागसमाणे १, पडागसमाणे २, खाणुसमाणे ३, खरकंटकसमाणे ४ । २ । ॥ सू० २२ ॥

छाया—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तत्रया-मातापितृसमानः १ भ्रातृसमानः २, मित्रसमानः ३, सपत्नीसमानः ४।

भङ्गी युक्त होते हैं । “ चत्वारि समणोवासिया ” इत्यादि इस सूत्रका कथन भी निर्ग्रन्थ सूत्र जैसा करलेना चाहिये निर्ग्रन्थ सूत्रमें जिस प्रकारसे चार आलापक कहे गये हैं उसी प्रकारसे श्रमणोपासिका सूत्रमें भी चार आलापक कहलेना चाहिये ॥सू०२१॥

“ चत्वारि समणोवासगा पणत्ता ” इत्यादि—२२

सूत्रार्थ—श्रमणोपासक चार प्रकारके कहे गये हैं, जैसे कोई एक श्रमणोपासक माता-पिताके जैसा होता है—१ कोई एक श्रमणोपासक अपने भाईके समान होता है—२ कोई एक श्रमणोपासक मित्रके समान होता है—३ और कोई एक श्रमणोपासक सपत्नीके समान होता

“ चत्वारि समणोवासिया ” इत्यादि—श्रमणोपासिका (श्रापिका)ना पणत्त चार प्रकार कइल छे श्रमणु निर्ग्रन्थना जेवा चार प्रकार कइल छे, जेवा चार प्रकार श्रमणोपासिकाना पणत्त समजवा. निर्ग्रन्थ सूत्र जेवुं च कथन श्रमणोपासिका सूत्रमां पणत्त अकण्ठ थवुं लेखिजे. ॥ सू. २१ ॥

“चत्वारि समणोवासगा पणत्ता ” इत्यादि

सूत्रार्थ—श्रमणोपासिकाना नीचे पमाणे चार प्रकार पडे छे—(१) केअ श्रमणोपासक मातापिता समान डोय छे. (२) केअ श्रमणोपासक भाअ जेवेा डोय छे (३) केअ श्रमणोपासक मित्र जेवेा डोय छे (४) केअ श्रमणोपासक सपत्नीना जेवेा डोय छे—जेठवेे के शोकथसमान डोय छे.

चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आदर्शसमानः १, पताकासमानः २, स्थाणुसमानः ३, खरकण्टकसमानः ४।

टीका—“ चत्वारि श्रमणोपासकाः ” इत्यादि—श्रमणोपासकाः—श्रमणानुपासत इति श्रमणोपासकाः=साधुसेवाकारकाः श्रावका इत्यर्थः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—मातापितृसमानः—माता च पिता चेति मातापितरौ तयोस्ताभ्यां वा समान स्तथा=मातापितरौ यथा स्वपुत्रे निर्हेतुकमत्यन्तं वात्सल्यं कुरुतस्तथा यः श्रावकः साधुषु कारणं विनैवैकान्तेन वात्सल्यं करोति समातापितृतुल्यो भवति, अपूर्वधर्मानुरागरञ्जितहृदयत्वात् १, तथा—भ्रातृसमानः भ्राता यथा प्रत्येक-

है—४ पुनश्च—श्रमणोपासक चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक श्रमणोपासक आदर्शके समान होता है—१ कोई एक श्रमणोपासक पताका के समान होता है २, कोई एक श्रमणोपासक स्थाणु के समान होता है—३ कोई एक श्रमणोपासक खरकण्टकके समान होता है—४।

टीकार्थ—श्रमणोंकी जो उपासना करते हैं वे श्रमणोपासक हैं, अर्थात्—साधुजनोंकी सेवा करनेवाले श्रावक श्रमणोपासक हैं। इनमें जो चतुर्विधता है उसका तात्पर्य है कि जैसे मातापिता अपने पुत्रों पर अत्यन्त वात्सल्य रखते हैं उसी प्रकार जो श्रावक साधुओं पर विना कारणही एकान्त रूपसे वात्सल्य रखते हैं, वे श्रावक मातापिताके समान कहे गये हैं। क्योंकि इनका हृदय अपूर्व धर्मानुरागसे रञ्जित

श्रमणोपासकता नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) केछ श्रमणोपासक आदर्श (दर्पण) समान डोय छे. (२) केछ श्रमणोपासक पताका समान डोय छे. (३) केछ केछ श्रमणोपासक स्थाणु (वृक्षतुं कुंडुं—थड) समान डोय छे (४) केछ केछ श्रमणोपासक खरकंटक (पावणना कांटा) समान डोय छे.

टीकार्थ—हुवे आ सूत्रने स्पष्ट करवाभां आवे छे—श्रमणोपासना करनारने श्रमणोपासक (श्रावक) कडे छे ओटले के साधुजनोंनी सेवा करनार श्रावकने श्रमणोपासक कडे छे हुवे तेना चार प्रकारतुं स्पष्टीकरण करवाभां आवे छे जेम मातापिता पौताना संताने प्रत्ये असीम वात्सल्य राखे छे, जेज प्रमाणे साधुओ प्रत्ये केछ पणु प्रकारनी स्पृहा विना अपार वात्सल्य राखनार श्रावकने मातापिता समान कही छे, कारण के तेनुं हृदय अपूर्व धर्मानुरागशी रञ्जित डोय छे. (२) जेम बाछ प्रत्येक कार्यभां सहायक थाय

કાર્યે સહાયકો ભવતિ તથા સાધૂનાં પ્રત્યેકધર્મકાર્યે યઃ શ્રાવકઃ સહાયકો ભવતિ સ ભ્રાતૃસમાનઃ—વન્ધુસદૃશ હત્યર્થઃ, ભ્રાતૃભિશ્ચ ધર્મકાર્યવિષયે સ્મરણાદિકં કર્તવ્યમ્ ઉક્તં ચ—

“ ભવગિહમજ્ઞમ્મિ પમાયજ્વલનજલ્મિભ્રમ્મિ ।

ઉદ્ભવ્ઙ્ જો મુઅંતં સો તસસ જણે પરમવંધૂ ॥૧॥

જ્ઞાયા—“ ભવગૃહમધ્યે પ્રમાદ્જ્વલનજ્વલિતે ।

ઉત્થાપયતિ યઃ સ્વપન્તં સ તસ્ય જનઃ પરમવન્ધુઃ ।૧। ” ઇતિ ।૨।

તથા—મિત્રસમાનઃ—મિત્રતુલ્યઃ—મિત્રં યથા—સદા હિતચિન્તકં ભવતિ તથા યઃ શ્રાવકઃ સાધૂનાં સદા હિતચિન્તકો ભવતિ સ મિત્રસમાનઃ ૩।

ઉક્તંચ—“ કેન રત્નમિદં સૃષ્ટં, મિત્રમિત્યસરદ્વયમ્ ।

આપદાં ચ પરિત્રાણં, સંસારમલનાગનમ્ ।૧॥ ” ઇતિ ।

તથા—સપત્નીસમાનઃ—સપત્ની—૧કસ્વામિકા સ્ત્રી તત્સમાનઃ, સપત્ની યથા સપત્ન્યા દૂષણં ગવેપયતિ અપક્રોતિ ચ, તથા યઃ શ્રાવકઃ સાધુષુ દોષમન્વેપયતિ અપક્રોતિ ચ સ સપત્નીસમાનો ભવતિ ।૪। ॥૧॥

હોતા હૈ—૧ તથા જિસ પ્રકારસે ભ્રાતા પ્રત્યેક કાર્યમે સહાયક હોતા હૈ उसी प्रकारसे जो साधुजनोंके प्रत्येक धर्मकार्यमें सहायक होते हैं, वे श्रावक भ्राताके समान कहे गये हैं—२ परम वन्धुके विषयमें ऐसा कहा गया है “ भवगिह मज्झमि ”—इत्यादि

તથા જિસ પ્રકારસે હિતચિન્તક મિત્ર હોતા હૈ उसी प्रकारसे जो सदा साधुजनोंका हितचिन्तक होना है वे श्रावक मित्रके समान कहे गये हैं । कहा भी है—“ केन रत्नमिदं सृष्टं ” इत्यादि । तथा जिस प्रकारसे सपत्नी (સૌત) સપત્નીકે દૂષણોંકી ઓર નિગાહ રાખતીહૈ उनकी खोजमें रहती है उसका अपकार करती है, उसी प्रकारसे जो श्रावक

છે, એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક ધર્મકાર્યમાં સાધુજનોને સહાયભૂત થનાર શ્રાવકને ભ્રાતા સમાન કહ્યો છે. ઉત્તમ ભ્રાતા વિષે આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

“ ભવગિહમજ્ઞમ્મિ ” ઇત્યાદિ—

એમ મિત્ર પોતાના મિત્રને હિતચિન્તક હોય છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોને હિતચિન્તક હોય છે, તેને મિત્ર સમાન શ્રમણોપાસક કહ્યો છે કહ્યું પણ છે કે—“ કેન રત્નમિદં સૃષ્ટં ” ઇત્યાદિ.

એમ સપત્ની બીજી સપત્નીનાં (શોકયના) દૂષણો જે શોકયા કરે છે, અને તેને અપકાર જે કરે છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોના દોષો જે

पुनः “ चत्वारि समणोवासगा ” इत्यादि—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञसाः, तद्यथा—आदर्शसमानः—आदर्शो—दर्पणः, तेन समानस्तथा=यथा—दर्पणः स्वसन्निहितानर्थान् प्रतिबिम्बितान् यथावत् प्रतिपद्यते, तथा यः श्रावकः साधुभिरुपदिश्यमानान् उत्सर्गापवादादीन् भावान् प्रतिपद्यते—स्वीकरोति स आदर्शसमानः १।

तथा—पताकासमानः—पताका यथा विचित्रपवनेन सर्वतश्चाल्यते तथा यस्य श्रावकस्यानवस्थितबोधो विचित्रदेशनया चाल्यते स पताकासमानः २। तथा—स्थाणुसमानः—तिष्ठतीति स्थाणुः—शङ्कुः, तत्समानः—स्थाणुर्यथा न नम्रीक्रियते नापि चाल्यते तथा यः श्रावकः सुगुरुदेशनया कुतश्चिदपि कदाग्रहात् नम्री क्रियते

साधुजनोके दोषोकाही अन्वेषण किया करते हैं उनकी बुराई—या अपकार करते हैं वे श्रावक सपत्नी समान कहे गये हैं। पुनश्च—आदर्श नाम दर्पण (ऐनक) जैसे अपने समीपवर्ती पदार्थोंके प्रतिबिम्बको धारण करता है उसी प्रकार साधुजन द्वारा उपदिष्ट या उपदिश्यमान उत्सर्ग और अपवादरूप भावोंको जो श्रावक यथावत् स्वीकार करता है वह आदर्शका समान कहा गया है—१ तथा पताका जिस प्रकार विचित्र पवन द्वारा सब ओर से चञ्चल करदी जाती है वैसे जिन श्रावकका अनवस्थित बोध विलक्षण देशनासे नयमिश्रित कथनसे चलायमान किया जा सके वह श्रावक पताका के समान कहा गया है—२ जैसे स्थाणु न कभी चलायमान किया जाता है और न कभी नमाया जा सकता है वैसे तो श्रावक सुगुरुकी देशनासे भी

शोध्यते करे छे, तेमनु अहित न करे छे अथवा तेमने उपकार करे छे, अथवा श्रावकने सपत्नी समान कइयो छे.

श्रमणोपासकेना आदर्श समान आदि चार प्रकारोतुं हुवे स्पष्टीकरण करवाभां आवे छे—(१) आदर्श अटले दर्पणु जेम दर्पणु पोतानी सामेनी वस्तुमेना यथार्थ प्रतिबिम्बने धारणु करे छे, अथवा प्रमाणे साधुजने द्वारा उपदिष्ट अथवा उपदिश्य मान, उत्सर्ग अने अपवाद रूप लावोने जे श्रावक यथार्थ रूपे स्वीकार करे छे ते श्रावकने आदर्श समान कइयो छे. (२) जेम पताका पवन द्वारा चलायमान थाय छे—स्थिरता छोडीने अचलता संपन्न अने छे, अथवा प्रमाणे जे श्रावकना अनवस्थित बोधने विलक्षण देशना द्वारा नयमिश्रित कथन द्वारा चलायमान करी शक्य छे ते श्रावकने पताका समान कइयो छे. (३) जेम स्थाणुने (वृक्षना हूठाने) कही चलायमान करी शक्यते नथी के नमावी शक्यते नथी, अथवा प्रमाणे जे श्रावक सुगुरुनी देशना सांभालवा

नापि च चाल्यते दुर्वोधत्वात् स रथाणुसमानः ३। तथा-खरकण्टकसमानः-
 खराः-तीक्ष्णाः कण्टका यस्मिन् तत् खरकण्टकं वर्चुरवृक्षशाखादि तस्य क्वचिदङ्गे वस्त्रे
 वा लग्नं सन्न केवलमङ्गं वा पटं सहसा मुञ्चति, अपि तु तन्मोचरूपरुपादिकं करा-
 दिषु कण्टकैर्विध्यति, यद्वा खरकण्टयति-लेपवन्तं करोतीति खरकण्टं तदेव खर-
 कण्टकम्-अशुच्यादिवस्तु, तेन समानः खरकण्टकसमानः, यथा खरकण्टकं संस-
 र्गमात्रादेवापनयनकारकं दोषयुक्तं करोति, तथा यः श्रावकः संसर्गमात्रात् साधुं
 ' कुबोधकुशीलतादिजनकत्वेनोत्सूत्रप्ररूपकोऽय ' मित्याद्यसदोपप्रकटनया दोष-
 वन्तं करोति स खरकण्टकसमानः । ४। सू० २२ ।

अपने कदाग्रह अलुचित हठसे पीछे नहीं हटता-टलता है नम्रीभूत
 नहीं होता है ऐसा वह दुर्वोध्य श्रावक रथाणु-टूटा वृक्षके समान
 है-३ जैसे तीक्ष्ण काटोंसे भरपूर बबूल आदिका डाल यदि किसी
 अङ्गमें यो कपडोंमें उलझ जाय तो वह सहसा अलग नहीं होती किन्तु
 उसे छुडानी पडती है ऐसी स्थितिमें वह छुडानेवालोंके हाथको भी
 वेधती है ऐसे पदार्थोंका नाम खरकण्टक है, जो श्रावक इसके समा-
 नताको धारण करे वह खरकण्टक समान है, जैसे खरकण्टक वस्तु
 संसर्ग मात्रसे दोषयुक्त बना देती है वैसे जो श्रावक अपने संसर्ग
 मात्रासेही उस साधुके असदोषोंकी उद्भावना करता हुवा " यह

छतां पणु पोतानो कदाग्रह छोडतो नथी-पोतानी अनुचित वातने न पकडी
 राणे छे-सडेन पणु डूणो (नम्रीभूत) यतो नथी एवा श्रावकने रथाणु समान
 कडे छे. (४) अरकंटक समान श्रमणोपासकनेो लावार्थे -- तीक्ष्ण कांटाओथी
 भरपूर आवण आदिनी डाणी केअ अंगमां के कपडामां लराछं लय तो ते
 सरणताथी अलग यती नथी, पणु प्रयत्नपूर्वक तेने अलग करवी पडे छे
 अने ए वधते अलग करवानो प्रयत्न करनारना डाथमां पणु ते तीक्ष्ण
 कांटा वागी लय छे, आ प्रकारना पदार्थोने अरकंटक कडे छे ने श्रावकनेो
 स्वभाव आ अरकंटकना एवो डोय छे तेने अर समान कडे छे नेम अर-
 कंटकनेो स्पर्श मात्र न दोषयुक्त अथवा व्यथानक यथं पडे छे एन
 प्रमाणे अरकंटक समान श्रावक पोताना संसर्ग मात्रथी साधुमां असदोषोनी
 (ने दोपनुं अस्तित्व न डोय एवा दोषोनी) उद्भावना करे छे. " आ
 साधु कुबोध, कुशीलता आदिनेो जनक डोवाथी उत्सूत्र प्ररूपक छे " इत्यादि
 इये साधुमां जोटा दोषोनुं आरोपणु करनार डोय छे अने कंटकनी नेम

શ્રમણોપાસકપ્રસન્નાન્હીમહાવીરસ્વામિનઃ શ્રમણોપાસકાનામરુણાભવિમાનસ્થિતિ
નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—સમણસ્સ ણં ભગવઓ મહાવીરસ્સ સમણોવાસ-
ગાણં સોહમ્મકપ્પે અરુણાભે વિમાણે ચત્તારિ પલિઓવમાહં ઠિઈ
પણત્તા ॥ સૂં ૨૩ ॥

જાયા—શ્રમણસ્ય સ્વહ મગવતો મહાવીરસ્ય શ્રમણોપાસકાનાં સૌધર્મકલ્પે
અરુણાભે વિમાને ચત્તારિ પલ્યોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તા । સૂં ૨૩ ॥

ટીકા—“ સમણસ્સ ણં ” इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-श्रमणोपासकानां दशानाम्
आनन्द १ कामदेव २ गाथापतिचुलनीपितृ ३ सुरादेव ४ क्षुद्रशतक ५ गाथा-
पति-कुण्डकौलिक ६ सद्दालपुत्र ७ महाशतक ८ नन्दिनीपितृ ९ शालेयिकापितृणा-
१० मुपासकदशाज्ञोक्तानामिति ॥ सूं २३ ॥

કુચોધ-કુશીલતા આદિકા જનકહોનેસે ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપક હૈ ” इत्यादि
रूपसे साधुको दोषवाला कर देता है वह खरकण्टक समानहै ॥सू०२२॥

અથ સૂત્રકાર શ્રમણોપાસકકે પ્રસન્નસેહી શ્રી મહાવીરસ્વામીકે
શ્રમણોપાસકોંકી વિમાનમેં વર્તમાનસ્થિતિકા કથન કરતે હૈ—

“ સમણસ્સ ભગવઓ ” इत्यादि २३

શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરકે શ્રમણોપાસકોંકો સૌધર્મ કલ્પમેં
અરુણાભ વિમાનમેં ચાર પલ્યોપમાકી સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ । ભગવાન્
મહાવીરકે ૧૦ શ્રમણોપાસક થે. આનન્દ-૧ કામદેવ-૨ ગાથાપતિ
ચુલનો પિતા-૩ સુરાદેવ-૪ ક્ષુદ્રશતક-૫ ગાથાપતિ કુણ્ડકૌલિક-૬
સદ્દાલપુત્ર-૭ મહાશનક-૮ નન્દિની પિતા-૯ ઓર શાલેયિકા પિતા-
૧૦ યે इनके नाम उपासकशाङ्गमें कहे गये हैं ॥ सू०२३॥

તેમના હૃદયમાં વ્યથા ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે તે કારણે એવા શ્રાવકને ખર
કંટક સમાન કહ્યો છે ॥ સૂ. ૨૨ ॥

શ્રમણોપાસકોના કથનને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર વૈમાનિક દેવપર્યાયને
પામેલા મહાવીર પ્રભુના શ્રમણોપાસકોની ત્યાંની આયુસ્થિતિની પ્રશ્નણા કરે છે-

“ સમણસ્સ ણં ભગવઓ ઇત્યાદિ સૂ. ૨૩

શ્રમણુ ભગવાન્ મહાવીરના જે શ્રમણોપાસકો સૌધર્મ કલ્પના અરુણાભ
વિમાનમાં દેવપર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે તેમની ત્યાંની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમાની
કહી છે આ પ્રકારના મહાવીર પ્રભુના ૧૦ શ્રમણોપાસકોના નામ આ પ્રમાણે
હતાં—(૧) આનન્દ, (૨) કામદેવ (૩) ગાથાપતિ ચુલની પિતા, (૪) સુરા-
દેવ, (૫) ક્ષુદ્રશતક, (૬) ગાથાપતિ કુંડકૌલિક, (૭) સદાલ પુત્ર, (૮) મહા-
શનક, (૯) નન્દિની પિતા (૧૦) શાલેયિકા પિતા. આ નામે ઉપાસકદશ ગમાં
આપ્યા છે. ॥ સૂ. ૨૩ ॥

देवतासामान्यव्यवहारम्—

मन्त्रं चतुर्हि टायेति अहुणोवचने देवे देवलोकेषु इच्छेत्ता
 सायंसे नैमं तद्वत्सायंनिवृत्तम् एषो चैव णं संवाण्ड हवसाग-
 निवृत्तम्, ये जस अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु दिवेषु काम-
 भोगेषु मुच्छिण्णं मित्रे गतिम् अहुणोवचणे ने णं साणुस्सम्,
 कामभोगे नो अहुण्णो षण्णियाण्ड णो अहुं वंधट् णो णिवाणं
 यद्वत् णो इहवगं पमरेट् १, अहुणोवचने देवे देवलोकेषु
 दिवेषु कामभोगेषु मुच्छिण्णं मित्रे गतिम् अहुणोवचणे तस्स णं
 साणुस्सम् एते चोत्तिवसे दिवेषु एते संकंते भवइ २।

अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु दिवेषु कामभोगेषु मुच्छिण्णं
 मित्रे गतिम् अहुणोवचणे, तस्स णं एवं भवट्-इण्हि गच्छं
 मुच्छिणं गच्छं, नेण कायेगमन्नाडया साणुस्सता कालवम्पुणः
 देवता भवति ३।

अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु दिवेषु कामभोगेषु मुच्छिण्णं
 मित्रे गतिम् अहुणोवचणे, तस्स णं साणुस्सम् संधे पट्टिहं
 पट्टिहं पट्टि भवइ, इहं अ णं साणुस्सम् संधे जाव च्चनारि
 पट्टि संधे तस्सपट्ट हवसागच्छ ४, इधेपहि चतुर्हि टायेति
 अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु इच्छेत्ता साणुस्सं लोमं हवसाग-
 निवृत्तम् एषो चैव णं संवाण्ड हवसागच्छिण्णम् ५।

देवतासामान्यव्यवहारम्

अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु इच्छेत्ता
 सायंसे नैमं तद्वत्सायंनिवृत्तम्, ये जस-
 अहुणोवचणे देवे देवलोकेषु दिवेषु कामभोगेषु
 अमुच्छिण्णं

जाव अणज्झोववण्णे तस्स णं एवं भवइ--अत्थि खलु मम माणु-
स्सए भवे आयरिएइ वा उवज्झाएइ वा पवत्तीइ वा थेरेइ वा
गणीइ वा गणधरेइ वा गणावच्छेएइ वा, जेसिं पभावेणं मए
इमा एयारूवा दिव्वा देविड्डी दिव्वा देवजुई लद्धा पत्ता अभि-
समन्नागया, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जु-
वासामि १ ।

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स
णमेवं भवइ--एस णं माणुस्सए भवे णाणीति वा तवस्सीति
वा अइदुक्करदुक्करकारए, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि
जाव पज्जुवासामि २,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स
णमेवं भवइ--अत्थि णं मम माणुस्सए भवे मायाइ वा जाव
सुणहाइ वा तं गच्छामि णं तेसिमंतिअं पाउब्भवामि, पासंतु
ता मे इममेयारूवं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं लंछं पत्तं
अभिसमन्नागयं ३,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स
णमेवं भवइ--अत्थि णं मम माणुस्सए भवे मित्तेइ वा सहीइ वा
सुहीइ वा सहाएइ वा संगइएइ वा, तेसिं चणं अम्हे अन्नमन्नस्स
संगारे पडिसुए भवइ, जो मे पुठिं चयइ से संबोहेयव्वे, इच्चे-
एहिं जाव संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ४। ॥ सू० २४ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेत् मानुषं लोकं
हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम्, तद्यथा—अधुनोपपन्नो देवो

देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, स खलु मानुष्यकं कामभोगं नो आद्रियते नो परिजानाति नो अर्थं वध्नाति नो निर्दानं प्रकरोति नो स्थितिप्रकल्पं प्रकरोति ?।

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यकं प्रेम व्युच्छिन्नं दिव्यं प्रेम संक्रान्तं भवति । २।

देवोंके अनागमनका कारण—

“ चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे ” इत्यादि २४

सूत्रार्थ—किसी एक देवलोकमें उत्पन्न हुआ देव मनुष्यलोकमें शीघ्र आनेकी इच्छा तो करता है पर इन चार कारणोंसे शीघ्र यहां आ नहीं सकता है । देवलोकमें उत्पन्न होते ही वहांके कामभोगोंमें मूर्च्छित-गृद्ध-ग्रथित-अध्युपपन्न हो जाता है, अतः—मनुष्य सम्बन्धी कामभोगोंको वह आदर दृष्टिसे नहीं देखता है, ये मेरे कामके हैं ऐसा उन्हें नहीं मानता है इनसे मेरा प्रयोजन सिद्ध होगा ऐसी बुद्धि उन्में नहीं करता है, ये पुनः सुझे मिलें ऐसी भावना नहीं करता है और उनमें स्थितिका विकल्पही करता है । यह प्रथम कारण है—१

दूसरा कारण—देवलोकमें उत्पन्न नया देव दिव्य कामभोगोंमें मूर्च्छित-गृद्ध-अध्युपपन्न होकर ऐसा हो जाता है कि उसको भीतरसे मनुष्य सम्बन्धी प्रेम व्युच्छिन्न हो जाता है और दिव्य प्रेम उसमें संक्रान्त हो जाता है—२

—देवाना अनागमननां कारणे—

चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे ” इत्यादि—(सू. २४)

सूत्रार्थ—कोई एक देवलोकमें उत्पन्न थयेदो देव तुरत न मनुष्यलोकमें आववानी इच्छा तो करे छे, पणु आ आर कारणेने लीये तुरत न अही आवी शकतो नथी—(१) देवलोकमें उत्पन्न थतांनी साथे न ते त्यांना कामलोगोमां मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित अने अध्युपपन्न थथ नय छे ते कारणे मनुष्यत्वना कामलोगोने ते आदरनी दृष्टिअे जेतो नथी, ते माटे कामना छे अेषु मानतो नथी, ते कामलोगो द्वारा पोतानुं प्रयोजन सिद्ध थशे अेषु ते मानतो नथी, ते इरी पोताने प्राप्त थाय अेषी लावना सेवतो नथी अने हुं ते काम लोगोने उपलोकता न गनी रहुं, अेषो स्थिति विद्वय पणु ते धर्यतो नथी. आ पडेहुं कारणे छे

णीयुं कारणे—देवलोकमें उत्पन्न थयेदो नवो देव दिव्य कामलोगोमां अेषो तो मनुष्यत्व प्रत्येने प्रेम व्युच्छिन्न (नष्ट) थथ नय छे, अने देव लोक प्रत्येने प्रेम संक्रान्त थथ नय छे.

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽ-
ध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति-इदानीं गमिष्यामि सुहृतेन गमिष्यामि, तेन
कालेन अल्पायुषो मनुष्याः कालधर्मेण संयुक्ता भवन्ति ३,

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितो-
ऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यरूपो गन्धः प्रतिकूलः प्रतिलोमश्चापि भवति, ऊर्ध्व-
मपि च खलु मानुष्यरूपो गन्धो यावत् चत्वारि पञ्चयोजनशतानि हव्यमाग-
च्छति ४। इत्येतैश्चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेद् मानुषं लोकं
हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम् ।

तृतीय कारण-ऐसा है कि देवलोकमें गया-१ उत्पन्नदेव काम-
भोगोंमें मूर्च्छित-गृद्ध-ग्रथित अध्युपपन्न " अब जातो हूं थोड़ी देर
बाद जाऊंगा " आदि विचारता जब तक आना चाहता है उसके
अन्दर-२ यहाँ जो उनके माता-पिता आदि परिवार होते हैं वे तब
तक कालधर्म संयुक्त हो जाते हैं अतः फिर वह नहीं आता है-३

चौथा कारण—कि वह देवलोकमें अधुनोपपन्नदेव वहाँ के दिव्य
काम भोगोंमें जब तल्लीन हो जाता है तब उसे मनुष्यगन्ध प्रतिकूल
विलकुल असनोन्नत जान पड़ती है वह गन्ध मनुष्य लोकसे ऊपर ४-५
सौ युगलियों की अपेक्षा ४०० चारनौ कर्मभूमि की अपेक्षा पांचसौ
योजन तक ऊंची पहुँचती है जो उन्हें रुचती नहीं इससे देव यहाँ
आते नहीं-४

त्रीशुं कारण—देवलोकमां उत्पन्न थयेदो नवेो देव कामलोगोमां येवेो
तो आसक्त, गृद्ध, ग्रथित अने अध्युपपन्न थयं नय छे के " हमणुं न
मनुष्यलोकमां नउ छुं-थेडी वार आ कामलोगो लोगवीने मनुष्यलोकमां
नधश " आ प्रकारनेो विचार करतां करतां येठदो दांणेो समय पसार थयं
नय छे के त्यां सुधीमां तेना माता, पिता आदि सगांसंबंधीयेो काणधर्म
पामी नय छे अने तेमने काणधर्म पायेदा न्णुीने ते देव मनुष्यलोकमां
आववानेो विचार न मांडी वाणे छे

चोथुं कारण—देवलोकमां उत्पन्न थयेदो नवेो देव न्यारे त्यांना काम-
लोगोमां लीन थयं नय छे, त्यारे तेने मनुष्यगंध प्रतिकूल-असनोन्नत लागे
छे. ते गंध मनुष्यलोकनी उपर ४००-५०० येजन सुधी इलायेदी डाय छे
ते गंध नही रुचवाने कारणे ते अहीं आवतो नथी.

ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈરધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ ઇચ્છેન્ માનુષં લોકં હવ્યમાગન્તું શક્નોતિ હવ્યમાગન્તુમ્ , તદ્વથા—અધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ દિવ્યેષુ કામભોગેષુ અપૂર્ણિચ્છિતો યાવત્ અનધ્યુપપન્નઃ, તસ્ય સ્વલુ એવં ભવતિ—અસ્તિ સ્વલુ મમ માનુષ્યકે ભવે આચાર્ય્ય ઇતિ વા ઉપાધ્યાય ઇતિ વા પ્રવર્તી ઇતિ વા સ્થવિર ઇતિ વા ગણી ઇતિ વા ગણધર ઇતિ વા ગણાચ્છેદક ઇતિ વા, યેષાં પ્રભાવેણ મયા હમા એતદ્રૂપા દિવ્યા દેવદ્ધિઃ દિવ્યા દેવદ્યુતિઃ લબ્ધા પ્રાપ્તા અભિસમન્વાગતા, તત્ ગચ્છામિ સ્વલુ તાન્ ભગવતઃ વન્દે યાવત્ પર્યુપાસે ૧।

અધુનોપપન્નો દેવો દેવો દેવલોકેષુ યાવત્ અધ્યુપપન્નઃ, તસ્ય સ્વલુ એવં ભવતિ—એવ સ્વલુ માનુષ્યકે ભવે જ્ઞાનીતિ વા તપસ્વીતિ વા અતિદુષ્કરદુષ્કરકારકઃ તદ્ગચ્છામિ સ્વલુ તાન્ ભગવતો વન્દે યાવત્ પર્યુપાસે ૨।

અધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ યાવત્ અનધ્યુપપન્નઃ, તસ્ય સ્વલુ એવં ભવતિ—અસ્તિ સ્વલુ મમ માનુષ્યકે ભવે માતેતિ વા યાવત્ સ્તુષેતિ વા, તદ્ગચ્છામિ સ્વલુ તેષાપન્તિકં પ્રાદુર્ભવામિ પશ્યન્તુ તાવત્ મે હમામેતદ્રૂપાં દિવ્યાં દેવદ્ધિં દિવ્યાં દેવદ્યુતિં લબ્ધાં પ્રાપ્તામભિસમન્વાગતામ્ ।૩

અધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ યાવત્ અનધ્યુપપન્નઃ તસ્ય સ્વલુ એવં ભવતિ—અસ્તિ સ્વલુ મમ માનુષ્યકે ભવે મિત્રમિતિ વા સખેતિ વા સુહૃદિતિ વા સહાય ઇતિ વા સાહૃતિક ઇતિ વા, તેષાં ચ સ્વલુ અસ્માભિઃ અન્યોન્યં સક્લેતઃ પ્રતિશ્રુતો ભવતિ—યોઽસ્માકં પૂર્વં ચ્યવન્તે સ સમ્વોધયિતવ્યઃ । ઇત્યેતૈઃ યાવત્ શક્નોતિ હવ્ય માગન્તુમ્ ॥ સૂ૦ ૨૪ ॥

ટીકા—‘ ચઉહિ ઠાણેહિ ’ ઇત્યાદિ—

ચતુર્ભિઃ વક્ષ્યમાણૈઃ સ્થાનૈઃ=કારણૈઃ અધુનોપપન્નઃ—અચિરોત્પન્નઃ—તત્કાલોત્પન્ન ઇત્યર્થઃ, દેવો દેવલોકેષુ માનુષં=માનુષ્યસમ્બન્ધિનં લોકં—મર્ત્યલોકં ‘ હવ્ય ’ મિતિ દૈગ્નિશબ્દોઽયં શીઘ્રાર્થકઃ, તેન શીઘ્રમિત્યર્થ, આગન્તુમ્ , ઇચ્છેત્ , નો= નૈવ ચ=પુનઃ નૈવ સ હવ્યં=શીઘ્રમાગન્તું શક્નોતિ, કુનો નાઽઽગન્તું શક્નોતીત્યાહ— “ તદ્વથા ”—અધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ દિવ્યેષુ—મનોજ્ઞેષુ કામભોગેષુ—કામ્યન્ત ઇતિ કામાઃ—કમનીયાસ્તે ચ ભોગાઃ—ભુજ્યન્તે—ઇન્દ્રિયૈઃ સેવ્યન્ત ઇતિ ભોગાઃ=

હમ્ સૂત્રમેં આયે હુવે અધુનોપપન્નક આદિ પદોંકા સ્પષ્ટીકરણ તત્કાલ ઉત્પન્ન કો અધુનોપપન્ન કહા ગયા હૈ હવ્ય શબ્દ શીઘ્રાર્થક હૈ ચાહનાકા વિષયભૂત જો હો વહ કામ હૈ કામહી ભોગ હૈ । ક્યોંકિ

ભાવાર્થ—તત્કાલ ઉત્પન્ન થયેલા દેવને અધુનોપપન્નક દેવ કહે છે. “ હવ્ય ” આ પદ શીઘ્રાર્થક છે. આહનાને વિષયભૂત વસ્તુને કામ કહે છે અને એ કામ જ ભોગરૂપ છે કારણ કે તેમને ઇન્દ્રિયો દ્વારા ભોગવાય છે

शब्दादयश्चेति कामभोगाः, यद्वा-काम्येते इति कामौ=शब्दरूपलक्षणौ च भोगाः-
गन्धरसस्पर्शाश्चेति कामभोगाः, यद्वा-कामानां-कमनीयानां शब्दादीनां भोगाः=
सेवनानि, तेषु सूचिष्ठतः-कामभोगानां विनश्वरत्वादि ज्ञातुमशक्यतया मोहं गतः,
गृद्धः=कामभोगेच्छासमन्वितो घृतसिक्तवह्निरिवाऽतृप्तः, ग्रथितः=कामभोगानुरा-
गरज्जुबद्धः, अध्युपपन्नः-अत्यन्तं विषयपरिभोगाधीनो भवति अत एव स-देवः
खलु मानुष्यकान्-मनुष्यलोकभवान् कामभोगान् नो आद्रियते=आदरं न करोति,

यह इन्द्रियों द्वारा भोगा जाता है अथवा—जिनमें चाहना जाती है
ऐसे शब्दरूप काम हैं तथा गन्ध रस और स्पर्श ये भोग है। अथवा
कामका अर्थ कमनीय है, ऐसे कमनीय शब्दादिकोंका जो भोग है
वह सेवन करना है वह कामभोग है। देव कामभोगोंकी विनश्वरता
जाननेमें असमर्थ होता है, अतः—वे उनका कामभोगोंमें सूचिष्ठत-
मोहंगत हो जाते हैं। कामभोगकी इच्छासे समन्वित हुआ देव घृत-
सिक्त अग्नि जैसे गृद्ध-अतृप्त बन जाता है। ग्रथित कामभोगानुराग
रूपी रस्सीसे वह जकड़ जाता है, और इस तरह वह अन्तमें अध्यु-
पपन्नक अत्यन्त विषयभोगका सर्वथा अधीन बन जाता है। तात्पर्यकि
देवलोकोंमेंसे किसी एक देवलोकमें अधुनोपपन्नक देव वहाँके काम-
भोगोंको इतना अधिक आनन्ददायक मानने लगता है जिससे फिर
वह मनुष्यलोक सस्वन्धी कामभोगोंको बिलकुल असार मानने लगता
है और इस तरहसे वह उनको आदर दृष्टिसे नहीं देखता है कारणकि

अथवा जेनी चाहना थाय छे जेवा शब्द रूप काम होय छे अने गंध,
रस अने स्पर्श, जे लोगरूप छे अथवा कामने अर्थ कमनीय पणु थाय
छे जेवां कमनीय शब्दादिकेने जे लोग छे तेने कामलोग कडे छे देवा
कामलोगोनी विनश्वरता (अनित्यता) लणुवाने असमर्थ होय छे, तेथी तेज्या
ते कामलोगोभां भूचिष्ठत (आसक्त) थर्ष जय छे कामलोगनी धिच्छाथी
युक्त थयेदो देव घृतासिक्त अग्नि समान गृद्ध (अतृप्त, लोलुप) जनी जय
छे. कामलोगरूपी दोरडा वडे जकडावाने कारणे ते तेभां ग्रथित थर्ष जय छे
अने 'अध्युपपन्न' विषय लोगने सर्वथा आधीन जनी जय छे आ कथनने
भावार्थ जे छे के केथ जेक देवलोकांभां उत्पन्ना थयेदो नवे देव (अधुनो-
पपन्नक देव) त्यांभां कामलोगोने जेटलां जधां आनंददायक मानवा लागे छे
के मनुष्यलोकां सभंधी कामलोगो तो तेने जितकूर असार लागे छे, अने
आ रीते ते तेमने आदर दृष्टिथी जेतो नथी कारणे के ते जेवुं मानतो नथी

नो परिजातानि—एते मनुष्यसम्बन्धि कामभोगा अपि मगोपमोग्यपदार्थाः सन्तीति न मन्यते, दिव्यकामभोगापेक्षया तेषां तुच्छत्वात्, तथा—मानुष्यककामभोगेषु नो अर्थ वध्नाति=‘ अमीभिरेतत्प्रयोजन ’ मित्याकारकनिश्चयं न करोति, तथा—तेषु नो निदानम्—‘ एते मे भवन्ति त्वेवमभिलाषं नो प्रकरोति, तथा—नो स्थितिप्रकल्पम्—एषूपभोक्तृत्वेनाहं—तिष्ठामि, यद्वा—‘ ममैते तिष्ठन्ति ’ त्वेवंरूप-मवस्थानविकल्पं न प्रकरोति=न प्रारभते ‘ प्र ’ शब्दस्य प्रारम्भद्योतकत्वात् प्रार-म्भं न करोतीत्यर्थः १। इति प्रथमकारणम् । १ ।

“ अहृणोववन्ने ”—त्यादि—अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु काम-भोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नो भवत्यत एव तस्य देवस्य हृदि खलु

“ ये मनुष्य सम्बन्धी कामभोग भी उपभोग्य पदार्थ हैं ” फिर ऐसा वह उन्हें नहीं समझता है । क्योंकि—वह उन्हें दिव्यकामभोगोंकी अपेक्षा तुच्छ—असार मानने लगता है “ इन मनुष्य सम्बन्धी कामभोगों से मेरा यह प्रयोजन सधेगा इस प्रकार का निश्चय विश्वास फिर वह उनमें नहीं बाधता है । तथा—“ मुझे ये पुनः प्राप्त हों ” ऐसी उनमें अभिलाषभी नहीं करता है “ मैं इसका उपभोक्ता बना रहूँ ” ऐसा वह स्थितिका विकल्प भी नहीं करता है । अथवा—“ ये मेरे पास बने रहें ” ऐसा अवस्थान रहनेका विकल्प तकभी उसे नहीं उठता है, यहाँ “ प्र ” शब्द आरम्भका द्योतक है । इस प्रकारका यह प्रथम कारण है मर्त्यलोकमें स्वर्गसे नहीं आनेका—१ द्वितीय कारणभी ऐसाही है परन्तु—वह देव जब पूर्वोक्त इन विशेषणोंवाला हो जाता है तब

के “ मनुष्य सम्बन्धी कामभोगो पणु उपभोग्य पदार्थो छे, ” कारण के दिव्य कामभोगोनी अपेक्षासे तो ते कामभोगो तेने जिलकुल तुच्छ—असार लागे छे, वणी तेने अबु पणु लागतुं नथी के “ मनुष्यसव सम्बन्धी कामभोगोथी भासुं प्रयोजन सिद्ध थसे ” वणी “ से कामभोगोनी भने इरी प्राप्ति थाय”, सेवी अलिदाषा पणु ते राणतो नथी. “ हुं ते कामभोगोने उपभोक्तता न्णनी रहुं ” सेवे ते स्थितिने विकल्प पणु करतो नथी. अथवा “ ते भारी पासे न्ण कायम रहे ” आ प्रभारने अवस्थान (स्थिति) रहेवाने विकल्प पणु तेना मनमां उद्भवतो नथी. अही “ प्र ” शब्द आरंभने द्योतक छे. आ कारणे ते अधुनोपपन्न देव देवलोकमांथी मर्त्यलोकमां आवतो नथी. अही पडेला कारणे स्पष्टीकरणे पुर्ण थाय छे.

भीन करणुं स्पष्टीकरणे—ते अधुनोपपन्न देव न्यारे मूर्च्छित आदि पूर्वोक्त विशेषणोथी युक्त भने छे, त्यारे मनुष्यसव सम्बन्धी कामभोग

मानुष्यकं प्रेम-मनुष्यभवसम्बन्धिकामभोगानुरागः, व्युच्छिन्नं-विनष्ट, दिव्यं-
देवलोकसम्बन्धि प्रेम संक्रान्तं-प्रविष्टं भवति । इति द्वितीयम् । २ ॥

“ अहुणोवदन्ने ” इत्यादि-प्राग्गत नवरं-तस्यैवं भवति-‘ इण्हि ’ इदानीं
गमिष्यामि-अधुना मर्त्यलोकं यास्यामि, क्रियता समयेनेत्याह-‘ मुहूर्तेन ’ गमि-
ष्यामि, तेन-समयेन मनुष्या अल्पायुषः सन्तः कालधर्मेण-मृत्युना संयुक्ता-
संयुताः मृता भवन्ति, अतो न मानुष्यलोकं समागच्छति । इति तृतीयम् । ३ ।

“ अहुणोवदन्ने ” इत्यादि-प्राग्गत, नवरं-मानुष्यकः-मनुष्यसम्बन्धी गन्धः-

उसके हृदयमें मनुष्यभव सम्बन्धी कामभोगानुराग नष्ट हो जाता
है और देवलोक सम्बन्धी प्रेम प्रविष्ट हो जाता है । अतः-वह चाहता
चाहताभी नहीं आता है

तृतीय कारण भी ऐसाही है परन्तु जब वह देव विशेषणसे युक्त
हो जाता है तब वह शोचता है कि चलो जहां मेरे पूर्वभव सम्बन्धी
माता-पिता आदि परिजन हैं उनसे मिल आऊं फिर शोचता है अभी
चला जाऊंगा तथा-ऐसी जल्दी क्या पडी है ऐसे सोचते-२ समय निकल
जाता है और अन्तमें यहाँ उनके पूर्वभव सम्बन्धी अल्पायुवाले परि-
चित मनुष्य मनुष्यलोकसे काल कर जाते हैं, अतः वह फिर मनुष्य
लोकमें नहीं आता है-३

चतुर्थ कारण भी ऐसाही है परन्तु इसमें पूर्वोक्त विशेषण विशिष्ट

प्रत्येना तेना अनुरागं उत्पन्न थछ जय छे ते कारणे ते मनुष्यलोकमां आव-
पानी छच्छा थवा छतां पणु आवी शकते नथी.

त्रीण करणुनुं स्पष्टीकरणुं—देवलोकमां उत्पन्न थयेला नवा देवना मनमां
अेवी छच्छा थाय छे के “ मत्तरा पूर्वलवना माता, पिता आदिने मणवा माटे
जनुं जेछये ” परन्तु तेने अेम थाय छे के थोडी ज वारमां अडींथी
त्यां जत्रा उपडीश, थोडी वार अडींना कामलोगोने भोगवी लठिं, पछी
मनुष्यलोकमां जवा माटे उपडीश. उतावण करवानी शी जर छे ” आ
प्रमाणे विचार करतां करतां अेटलेो भर्षो-काण व्यतीत थछ जय छे के
मनुष्यलोकमां रडेला तेना पूर्वलवना माता, पिता आदि परिचित व्यक्तियो
तो अदपायुषी होवाने कारणे मनुष्यभव संभंधी आयुष्य पूरूं थछ जवाथी केछ
अन्य गतिमां उत्पन्न थछ गयेल होय छे. आ वात जण्णीने ते मनुष्यलोकमां
आववानेो विचार मांडी वाजे छे.

अेथा करणुनुं स्पष्टीकरणुं—पूर्वोक्त भूच्छित आदि विशेषणवाणे ते

પ્રસિદ્ધઃ ' પ્રતિકૂલઃ પ્રતિલોમઃ ' इत्युभौ समानार्थौ, तदर्थश्च—इन्द्रियमनसोरना-
 हादकृताद् दिव्यगन्धमपेक्ष्य विपरीतवृत्तिः, समानार्थयोर्द्वयोरुपादानं मानुष्यक
 गन्धेऽतिशयितनिकृष्टता सूचनार्थम्, तेन मानुष्यकगन्धो दिव्यगन्धापेक्षयाऽत्य-
 न्तामनोज्ञः, अत एव प्रतिकूलः ' च अपि ' इति ममुच्यते, भवति, स च ' उडु पि
 य " इत्यादि—ऊर्ध्वमपि ऊर्ध्वदेशमपि मानुष्यको गन्धः चत्वारि—कदाचिद्
 भरतादिष्वेकान्तसुषमादौ चत्वारि योजनशतानि, पञ्चेति—एकान्तसुषमातिरिक्ते तु
 पञ्चयोजनशतानि यावत् - अविष्याप्य हव्यमागन्तति=मनुष्यक्षेत्रमागन्तमिच्छुं
 देवं प्रति समुपैति, यतो मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिरश्वां प्रचुरत्वेनौदारिकगरीराणां तद्ग-
 तन्मलानां च पुष्कलत्वेन दुर्गन्धोऽपि वतुर्भवतीति चतुर्थकारणम् । ४। ' इच्चे-
 एहि ' इत्यादि स्पष्टम् ।

વહ દેવ મનુષ્ય સમ્બન્ધી ગન્ધકો પ્રતિકૂલ ઓર પ્રતિલોમ માનને લગતા
 હૈ ક્યોંકિ—દિવ્ય ગન્ધકી અપેક્ષા મનુષ્યગન્ધ ઇન્દ્રિય ઓર મનકો
 આહ્લાદકારક નહીં હોતી હૈ, મનુષ્યગન્ધ દિવ્ય ગન્ધકી અપેક્ષા અત્યન્ત
 અમનોજ્ઞ હોતી હૈ યહી વાત પ્રગટ કરનેકે લિયે સૂત્રકારને પ્રતિકૂલ-
 પ્રતિલોમ સમાનાર્થક હન દોનોં શબ્દોકા પ્રયોગ કિયા હૈ । મનુષ્ય ગન્ધ
 ऊपरमेंभी कदाचित् चार-पांचसौ योजन तक मनुष्यक्षेत्रमें आनेके
 लिये पर्युत्सुक देवोंकी ओर जाती है, भरतादि क्षेत्रोंमें जब एकान्त
 सुषम आदि काल होता है उसमें तो चारसौ योजन तक और जब
 एकान्त सुषमासे अतिरिक्त काल होता है, उस समय पांचसौ योजन
 तक यह गन्ध जाती है । क्योकि—मनुष्य क्षेत्रमें मनुष्य और पञ्चेन्द्रिय
 निर्यञ्चोंकी प्रचुरता होती है, अतः—उनके औदारिक शरीरोंकी और

અધુનોપપન્નક દેવ મનુષ્ય સંબંધી ગન્ધને પ્રતિકૂળ અને અમનોજ્ઞ માનવા
 લાગે છે, કારણ કે દિવ્યગન્ધ મનને આહ્લાદકારક લાગે છે, જ્યારે મનુષ્ય
 ગન્ધ મનને અતિશય અમનોજ્ઞ લાગે છે એજ વાતને પ્રકટ કરવા માટે
 સૂત્રકારે પ્રતિકૂળ-પ્રતિલોમ, આ બે સમાનાર્થક શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે મનુષ્ય
 ગન્ધ ઉપરની બાજુ ૪૦૦ થી ૫૦૦ યોજન સુધી જાય છે મનુષ્યલોકમાં
 આવવાને ઉત્સુક દેવને તે ગન્ધ અમનોજ્ઞ લાગવાથી તે અહીં આવવાને વિચાર
 માંડી વાળે છે. ભરતાદિ ક્ષેત્રોમાં જ્યારે એકાન્ત સુષમ આદિ કાળ હોય છે
 ત્યારે તે ગન્ધ ૪૦૦ યોજન જેવે જાય છે. પણ તે સિવાયના કાળોમાં તે
 તે ગન્ધ ૫૦૦ યોજન જેવે જાય મનુષ્યક્ષેત્રમાં મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય જીવો
 ઘણાં હોય છે. તેમના ઔદારિક શરીરો અને તેમના મળની દુર્ગન્ધ ઉપર

अथाऽऽगमनकारणानि—

“ चउहिं ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्—‘ एवम् ’—एतादृशं वक्ष्यमाण प्रकारक देवस्य मनो भवति, किं प्रकारकं तदाह—“ अत्थिणं ” इत्यादि—अस्ति-विद्यते मम—मे मानुष्यके भवे आचार्यः—प्रतिबोधकप्रव्रज्यादायकोपस्थापकादिः

उनके मलोंकी दुर्गन्धभी पुष्कल रूपसे बहुत होती है। इस प्रकारके ये चार ऐसे कारण हैं जो देवोंको इस मनुष्य लोकमें आनेमें बाधक होते हैं।

अब सूत्रकार देवोंके आगमनका कारण कथन करते हैं—“ चउहिं ” इत्यादि इन कारणोंमें एक कारण ऐसा है कि देवलोकमें अधुनोपपन्न-देव दिव्य कामभोगोंमें अमूर्च्छित यावत् अनध्युपपन्न होता हुआ ऐसा विचार करता है मनुष्य भवमें जब मैं था तबके मेरे यहां आचार्य हैं उपाध्याय हैं प्रवर्ती हैं, स्थविर हैं—गणी हैं—गणधर हैं गणावच्छेदक हैं, मैंने जो ऐसी अनुपम देवर्द्धि देवद्युति लब्ध की है—प्राप्त की है अभिसमन्वागत (उपभोग रूप (सर्वथा) आशीन) की है सो यह उन्हीं का सब प्रभाव है। अतः—उचित है कि मैं चलूं और उनको वन्दना करूं यावत् उनकी पर्युपासना करूं इस प्रकारके विचार से प्रेरित वह देव इस मनुष्य लोकमें शीघ्रही आ सकता है। इस सूत्रमें कथित आचार्यादि पदोंका भाव ऐसा है जो प्रतिबोध देता है प्रव्रज्यादायक होता है उपस्थापक आदि होता है, पांच आचार्योंका स्वयं पालन

४००—५०० योजन सुधी इत्याय छे. आ प्रकारना चार कारणो अधुनोपपन्न देवने मनुष्यलोकमां आववामां बाधक थछ पडे छे.

मनुष्यलोकमां देवाना आगमननां कारणानुं निरूपणु—

“ चउहिं ” इत्यादि, पडेछुं कारणु—देवलोकमां उत्पन्न थयेलो नवे देव दिव्य कामभोगो प्रत्ये अभूर्च्छां लाव आदिथी युक्त थछने जेवो विचार करे छे के—“ मनुष्यलोकमां मारा पूर्वलवना (मनुष्य लवना) आचार्य छे, उपाध्याय छे, प्रवर्ती छे, स्थविर छे, गणी छे, गणधर छे, अने गणावच्छेदक छे तेमना प्रभावथी न भे आ अनुपम देवर्द्धि, देवद्युति आदि लब्धि प्राप्त करेछ छे अने अभिसमन्वागत (मारे आशीन) करेछ छे तो जेव वात उचित गणाय के मारे अर्द्धीथी मनुष्यलोकमां नछने तेमने वंदणु नमस्कार करवा जेछे अने तेमनी पर्युपासना करवी जेछे ” आ प्रकारना विचारथी प्रेराने ते देव तुरत न आ मनुष्यलोकमां आवी शके छे.

आचार्य केने कडेवाय ? जेजो प्रतिबोध दे छे, प्रव्रज्या अंगीकार करावे छे, उपस्थापक आदि होय छे, जेजो पोते पांच आचार्यानुं पालन

ઉપાધ્યાયઃ—અધ્યાપકઃ—સૂત્રાદિદાતા, પ્રવર્તી—પ્રવર્તયતિ આચાર્યોપદિષ્ટેષુ તપો
વૈયાટૃત્યાદિકાર્યેષુ સાધૂનિતિ પ્રવર્તી=પ્રવર્તકઃ, ।

ઉક્તં ચ—

“ તવનિયમવિનયગુણનિહિ પવત્તયા નાણદંસણવરિત્તે ।

સંગહુવગ્ગહકુસલા પવત્તિ પ્યારિસા હુંતિ ॥ ૧ ॥ ”

છાયા—‘ તપો નિયમવિનયગુણનિધયઃ પ્રવર્તકા જ્ઞાનદર્શનચારિત્રેષુ ।

સહ્પ્રહોપપ્રહ્લુશલાઃ પ્રવર્તિન ઇતાદૃશા ભવન્તિ ॥૧॥ ઇતિ ।

સ્થવિરઃ—પ્રવર્તિપ્રવર્તિતાન્ સંયમયોગેષુ સ્થિરઃ સાધૂન્ જ્ઞાનાદિષ્વૈહિકાઽઽ
મુખ્મિત્તાપાયદર્શનતઃ સ્થિરીકરોતીતિ તથા, ગણી—ગણઃ—કૃતિવ્યસાધુસમુદાયઃ
સોઽસ્ત્યસ્યેતિ ગણી, ગણધરઃ—ય આચાર્યસદૃગો ગુર્વાદેશાત્સાધુગણં ગૃહીત્વા
પૃથક્ વિહરતિ સઃ, તથા ગણાચ્છેદકઃ—ગણસ્ય અચ્છેદો વિભાગોઽશોઽસ્યારતીતિ

કરતા હૈ ઓર દૂસરે સાધુઓસે इनका पालन कराता हॆ वह—आचार्य
हॆ । शिष्योंको जो सूत्रादिका अध्ययन कराता हॆ वह उपाध्याय हॆ,
तथा—जो आचार्योपदिष्ट तप—वैयावृत्य—आदि कार्योमें साधुओंको
प्रवृत्ति कराताहॆ वह प्रवर्तौ—प्रवर्तकहॆ । कहाभीहॆ—“ तव नियम विनय
गुणनिहि ” इत्यादि प्रवर्तौ द्वारा प्रवर्तित हुवे साधु जनोंको जो कि संयम
योगोंमें ज्ञानादिकोंमें शिथिल हो रहे हों उन्हें इहलोक-परलोकके अपा-
र्योंका दिग्दर्शन कराकर स्थिर कराताहॆ वह स्थविरहॆ । कितनेक साधु समु-
दायका नाम गण हॆ, यह गण जिसको हॆ वह गणी हॆ, जो आचार्यका
जैसा हो एवं शुरुके आदेश से साधुगणको लेकर पृथक् विहार कराता
हॆ वह—गणधर हॆ । जिसके गणका विभाग—अंश होता हॆ वह गणा-

કરે છે અને બીજા સાધુઓ પાસે તેનું પાલન પણ કરાવે છે તેમને
આચાર્ય કહે છે.

શિષ્યોને સૂત્રાદિનું અધ્યયન કરાવનારને ઉપાધ્યાય કહે છે.

આચાર્યોપદિષ્ટ તપ, વૈયાવૃત્ય, આદિ કાર્યોમાં સાધુઓને પ્રવૃત્ત કરાવનારને
પ્રવર્તી અથવા પ્રવર્તક કહે છે કહું પણ છે કે—“ તવનિયમવિનયગુણનિહિ ”
ઈત્યાદિ. પ્રવર્તક દ્વારા તપ આદિમાં પ્રવર્તિત કરાયેલા જે સાધુઓ સંયમ-
યોગોમાં અને જ્ઞાનાદિકોમાં શિથિલ થઈ રહ્યા હોય તેમને આલોક-પરલોકના
અપાયોનું દિગ્દર્શન કરાવીને તપાદિમાં સ્થિર કરનારને સ્થવિર કહે છે કેટલાક
સાધુઓના સમુદાયનું નામ ગણ છે તે ગણને જે અધિપતિ હોય તેને
ગણી કહે છે. જે આચાર્યના જેવો જ હોય અને શુરુના આદેશથી સાધુ

ગણાવચ્છેદઃ, સ એવ ગણાવચ્છેદકઃ—જિનશાસનપ્રભાવને ગણકાર્યમાશ્રિત્યોદ્ધા-
વને ક્વચિદ્ગમને ક્ષેત્રોપધિગવેષણાસુ ચાવિષાદી સૂત્રાર્થજ્ઞાયકશ્ચ । ઉક્તં ચ—

“ પ્રભાવનોદ્ધાવનયોઃ ક્ષેત્રોપધ્યેષણાસુ ચ ।

અવિષાદી ગણાવચ્છેદકઃ સૂત્રાર્થવિન્મતઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ॥

યેષામ્—આચાર્યાદીનાં પ્રભાવેણ—અનુભાવેન મયા—દેવેન ઇયં—સાક્ષાદનુમૂય-
માના એતદ્રૂપા—એતદ્ રૂપં યસ્યાઃ સા તથા=એતાદૃશી દિવ્યા દેવદ્દિઃ ત્રિમાન-
રત્નાદિરૂપા સુરસંપત્તિઃ તથા—દિવ્યા દેવદ્યુતિઃ—દેવશરીરકાન્તિઃ લબ્ધા=સમુપા-
ર્જિતા, પ્રાપ્તા—અધીના જાતા, અભિસમન્વાગતા—ભોગ્યાવસ્થાં પ્રાપ્તાઽસ્તિ, તત્—
તસ્માત્ કારણાદ્ અહં ગચ્છામિ, ગત્વા ચ તાન્ ભગવતો વન્દે—સ્તૌમિ, ‘યાવત્’—

વચ્છેદક હૈ યહ ગણાવચ્છેદક જિનશાસનકી પ્રભાવનામેં ગણકાર્યકો
લેકર કહીં પર જાનેમેં ઓર ક્ષેત્ર-ઉપધિ ઇનકી ગવેષણા કરનેમે અવિ-
ષાદી—દુઃખ માનનેવાલા નહીં હોતા હૈ, ઓર સૂત્રાર્થવેત્તા હોતા હૈ ।
કહામી હૈ—“ પ્રભાવનોદ્ધારવનયોઃ ” ઇત્યાદિ.

વિમાનરત્ન આદિ રૂપ સુરસંપત્તિ દેવદ્દિઃ એવં દેવશરીર સમ્બન્ધી
કાન્તિ દેવદ્યુતિ હૈ ઇનકા અચ્છી તરહસે ઉપાર્જન કરના સો લબ્ધ હૈ,
ઉસે અપને આધીન કરના સો પ્રાપ્ત હૈ । તથા=ઉસે અપને ભોગ્યમેં
લગાના ઇસકા નામ—અભિસમન્વાગત હૈ, “ વંદે યાવત્ પર્યુપાસે ”
મેં આગત યાવત્ શબ્દસે નમસ્યામિ—સત્કરોમિ—સમ્માનયામિ—કલ્યાણં
મજ્જલં—દૈવતં—ચૈત્યં, ઇન પદોંકા ગ્રહણ હુવા હૈ, સ્તુતિ કરના ઇસકા

ગણુને સાથે લઇને વિહાર કરતો હોય તેને ગણુધર કહે છે. ગણુના વિભાગને
ગણુાવચ્છેદક કહે છે.

એવા ગણુાવચ્છેદના અગ્રેસરને ગણુાવચ્છેદક કહે છે, તે ગણુાવચ્છેદક
જિનશાસનની પ્રભાવનામાં, ગણુકાર્ય નિમિત્તે કોઈ પણ સ્થળે જવામાં, અને
ક્ષેત્ર, ઉપધિ આદિની ગવેષણા કરવામાં અવિષાદી હોય છે—એટલે કે આ કાર્યો
કરવામાં હુંખ માનનાર હોતો નથી અને સૂત્રાર્થનો જ્ઞાતા પણ હોય છે. કેહું
પણુ છે કે—“ પ્રભાવનોદ્ધાવનયોઃ ” ઇત્યાદિ

વિમાન, રત્ન આદિ રૂપ સુરસંપત્તિને દેવદ્દિઃ કહે છે. દેવશરીર સંબન્ધી
કાન્તિને દેવદ્યુતિ કહે છે. તેને સારી રીતે ઉપાર્જિત કરવી તેનું નામ ‘લબ્ધ’
છે તેને પોતાને આધીન કરવી તેનું નામ પ્રાપ્ત છે, અને તેને પોતાના ભોગો-
પશોગમાં લેવી તેનું નામ ‘અભિસમન્વાગત’ છે.

“ વંદે યાવત્ પર્યુપાસે ” આ સૂત્રપાઠમાં વપરાયેલા ‘યાવત્’ પદથી

યાવન્નદ્વેન-નમસ્યામિ-પશ્ચાન્નમનપૂર્વકં નમસ્કરોમિ, સત્કરોમિ-આદરેણ મમ્મા-
નયામિ-અભ્યુત્થાનાદિક્ષણયા ઉચિતપ્રતિપત્ત્યા, કલ્યાણં-કલ્યાણસ્વરૂપાન્ મહાલં
મહાલક્ષ્મણાન્, દેવતં ધર્મદેવસ્વરૂપાન્, ચૈત્યં જ્ઞાનસ્વરૂપાન્ પર્યુપાસને-સેવે
इति प्रथममागमनकारणम् १।

“ અહુનોવવણે ” इत्यादि—पूर्ववत्, नवरम्-णः=वदयमाणः स्वतु मानु-
ष्यके भवे, ज्ञानी-श्रुतज्ञानादिना सम्पन्नः, तपस्वी=तपश्चरणशीलः, अतिदुष्कर-
दुष्करकारकः - कठिनातिकठिनमाभिग्रहतपश्चर्यादि कारकोऽस्ति, तद्गच्छामि
यावत् पर्युपासे । इति द्वितीयमागमनकारणम् २।

“ અહુનોવવણે ” इत्यादि—प्राग्वत्, नवरं-मम मानुष्यके भवे माता
' यावत् ' पदेन ' भायाः वा भज्याः वा भङ्गीः वा पुनाः वा ध्याः वा ' इति
पदानि ग्राह्याणि, तच्छाया-आतेति वा भार्गेति भगिनीति वा पुत्र इति वा दुहि-
तेति वा, स्तुवा-पुत्रभार्या चास्ति, तन्-तस्मान् तेषां=मात्रादिपञ्चिवागणाम्

नाम वन्दना है, पश्चाद् नमनपूर्वकं नमस्कार करना इसका नाम नमस्कार
है । आदर देना इसका नाम सत्कार है, अभ्युत्थानादि रूप उचित प्रति-
पत्ति(सेवा) करना इसका नाम सम्मान है, कल्याणस्वरूप होनेसे आचार्य
आदिकोंको कल्याण, मङ्गलस्वरूप होनेसे मङ्गल धर्मदेव स्वरूप होनेसे
देवत और ज्ञानस्वरूप होनेसे चैत्यरूप कहा गया है, सेवा करनेका
नाम पर्युपासना है । ऐसा यह प्रथम कारण है-१ द्वितीयकारण भी
ऐसाही है, पर हममें ऐसा विचार करता है कि मनुष्यभवमें श्रुत-
ज्ञानादिकसे सम्पन्न ज्ञानीजन हैं तपश्चरणशील तपस्वी जन हैं, और
अति दुष्कर दुष्करकारक-कठिनातिकठिन त्नाभिग्रह तपश्चर्यादिकारक
साधुजन हैं, इसलिये चलें और यावत् उनकी पर्युपासना करें ऐसा

नीचेना सूत्रपाठ गृहीत थये છે-“ नमस्यामि, सत्करोमि, सम्मानयामि, कल्याणं,
मंगलं, देवतं, चैत्यं ”

સ્તુતિ કરવી તેનું નામ વંદણા છે, પાંચે અંગોને નમાવીને નમવું તેનું
નામ નમસ્કાર છે. આદર દેવો તેનું નામ સત્કાર છે, અભ્યુત્થાન આદિ ઉચિત
વિધિ કરવી તેનું નામ સમ્માન છે. આચાર્ય આદિ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોવાથી,
મંગળ સ્વરૂપ હોવાથી, ધર્મદેવ સ્વરૂપ હોવાથી અને જ્ઞાનસ્વરૂપ હોવાથી
તેમને અનુક્રમે કલ્યાણરૂપ, મંગળરૂપ, દેવરૂપ અને ચૈત્યરૂપ કહેવામાં
આવેલ છે. સેવા કરવી તેનું નામ પર્યુપાસના છે.

આ રીતે પહેલા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર ખીજા કારણને
પ્રકટ કરે છે—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો તે નવો દેવ એવો વિચાર કરે છે
કે મનુષ્યલોકમાં શ્રુતજ્ઞાનાદિથી સંપન્ન જ્ઞાનીજનો છે, તપશ્ચરણશીલ તપસ્વીઓ
છે, દુષ્કરમાં દુષ્કર (કઠિનમાં કઠિન) અભિગ્રહ પૂર્વક તપશ્ચર્યાદિ કરનારા
સાધુઓ છે તો મારે ત્યાં જઈને તેમને વંદણા, નમસ્કાર આદિ કરવા જોઈએ

अन्तिकं-समीपं गच्छामि, गत्वा च प्रादुर्भवामि=प्रकटो भवामि ताः=मातादयो मे=मम इमां-प्रत्यक्षामेतद्रूपाम्-एतादृशीं दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं लब्धां प्राप्तामभिसमन्वागतां पश्यन्तु । इति तृतीयमागमनकारणम् । ३।

“अहुणोव्रवण्णे” इत्यादि—प्राग्वत् नवरं-मम मनुष्यके भवे मित्रं पश्चात्स्नेही, सखा-वालवयस्यः, सुहृन्-हितैषी सज्जनः सहायः-सह अयते इति सहायः-सहचरः एककार्यपट्टत्, साङ्गतिकः=सङ्गतिकः=सङ्गतं-परिचयोऽस्त्यस्येति साङ्गतिकः-परिचितोवाऽस्ति, तेषां=मित्रादीनां च खलु अस्माभिः अन्योऽन्यं=परस्परं सङ्केतः प्रतिश्रुतः-प्रतिज्ञात् स्वीकृतो भवतिस्म=आसीत् कीदृशः सङ्केतः ? इत्याह-“जो मे” इत्यादि—यः-जनः मे-अस्माके मध्ये पूर्व-प्राक्च्यवते-देवलोकात् च्युतो भवेत् स जनः सम्बोधयितव्यः-प्रतिबोधनीय’ इति तस्मादहं

यह द्वितीय कारण है—२ तृतीय कारण भी ऐसाही है, पर इसमें वह ऐसा विचार करता है कि मेरे मनुष्यभवके सम्बन्धी माता यावत् भ्राता-भगिनी-पुत्र-पुत्री-पुत्रवधू ये सब है, इसलिये मैं उनके पास जाऊं, वे मेरी ऐसी इस प्रत्यक्षभूत दिव्य देवर्द्धिको एवं दिव्य देवद्युतिको कि जिसे मैंने लब्ध की है प्राप्तकी है अभिसमन्वागत की है देखें, ऐसा यह तृतीय कारण है—३ चतुर्थ कारण भी ऐसा ही है, पर इसमें वह ऐसा विचारता है कि मेरे मनुष्यभवके मित्र हैं, सुहृद्जन हैं, सहायक हैं, साङ्गतिक हैं, उन्होंने हमारे साथ ऐसा सङ्केत किया था ऐसी बात स्वीकार कीथी कि जो कोई भी हमलोगों के बीचमेंसे देवलोकसे पहले चवे वह जन संबोधयितव्य है—

अहीं पर्युपासना पर्यन्तना उपर्युक्त पदो पशु ग्रहणु करवा लोभये. आ कारणे पशु ते अधुनोपपन्न देव मनुष्यलोकमां आवे छे.

त्रीणुं कारणु पशु लगलग अेवुं न छे तेने अेवो विचार आवे छे के मारा पूर्वलवना (मनुष्य लवना) माता, पिता, भाई, भेन, पुत्र, पुत्री, पत्नी वगेरेने मणवा माटे मारे मर्त्यलोकमां नबुं लोभये तेअो मारी आ दिव्य देवर्द्धिं, देवद्युति आदिना लवे दर्शन करे आ रीते पोते लब्ध, प्राप्त अने अभिसमन्वागत करेदी देवर्द्धिं, देवद्युति आदि तेमने अताववाना छेतुथी ते अधुनोपपन्न देव आ मर्त्यलोकमां आववानी ध्येछा करे छे.

अेथुं कारणु—ते अधुनोपपन्न देवने अेवो विचार थाय छे के मनुष्यलोकमां पूर्वलवना मारा मित्रो छे, सुहृद्जनो छे, सहायक छे अने सांगतिक छे तेमणु अने मे’ अरस्परसमां अेवो संकेत कर्यो छेतो—अेवुं वयन आ’थुं छुं के आपणांमांनुं न्ने केअं देवलोकमांथी पडेदां अवे (त्यांनुं

પૂર્વેચ્યુતાન્ સંબોધયિતું મનુષ્યલોકં ગચ્છામિ, સુત્રે 'મે' इत्यार्षत्वादेकवचनम् ।
इति चतुर्थमागमनकारणम् । ४। ॥ सू० २४ ॥

અનન્તરં દેવાઽઽગમનમુક્તં, તત્ર તત્કૃતોદ્ધોતો ભવતીતિ તદ્વિપરીતં લોકા-
ન્ધકારં પ્રાઢ—

મૂલમ્—ચઙહિં ઠાણેહિ ળોગંધયારે સિયા, તં જહા—અરહં-
તેહિં વોચ્છિજ્જમાણેહિં ૧, અરહંતપન્નત્તે ધમ્મે વોચ્છિજ્જમાણે
૨, પુવ્વગણ વોચ્છિજ્જમાણે ૩, જાયતેણ વોચ્છિજ્જમાણે ૪।

ચઙહિં ઠાણેહિં લોઙ્ઙજોણ સિયા, તં જહા—અરહંતેહિં
જાયમાણેહિં ૧, અરહંતેહિં પવયમાણેહિં ૨, અરહંતાણં ણાણુ-
પ્પાયમહિમાસુ ૩, અરહંતાણં પરિણિવ્વાણમહિમાસુ ૪। ઇવં
દેવંધગારે દેવુજ્જોણ દેવસંનિવાણ દવુક્કલિયા દેવકહકહે ।

ચઙહિં ઠાણેહિં દેવિંદા માણુસસં લોગં હવ્વમાગચ્છંતિ,

પ્રતિબોધનીય હૈ, હસલિયે મેં પૂર્વમેં ચવે હુવોંકો સંબોધન કરનેકે લિયે
મનુષ્ય લોકમેં જાઙ્ઙ ।

પશ્ચાત્-સ્નેહીકા નામ મિત્ર હૈ, ચાલ વયરથકા નામ સખા હૈ,
હિતૈપી સઙ્જનકા નામ સુહૃત્ હૈ ઇક કિસી ખી કાર્યમેં સાથ રહનેવાલે
કા નામ સહચર હૈ જિસસે જાન પહિચાન હો ઁસકા નામ સાઙ્ગતિક
હૈ, ઇસા યહ ચૌથા કારણ હૈ ॥ સૂ૦૨૪॥

આયુષ્ય પૂરૂં કરીને કરી મનુષ્યલોકમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય), તે માણસ સંબો-
ધયિતવ્ય—પ્રતિબોધનીય (બોધ પ્રાપ્ત કરવાને યાત્ર) ગણવેા જોઈએ.

આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરિત થઈને પોતાના પહેલાં દેવલોકમાંથી
જેઓ આવેલા છે તેમને સંબોધન કરવાને માટે તે અધુનોપપન્ન દેવ
આ મનુષ્યલોકમાં આવવા ગાડે છે.

ઘણા લાંબા સમયથી જેની સાથે સ્નેહ હોય તેને મિત્ર કહે છે. બાલ્ય-
કાળથી જેની સાથે મૈત્રી હોય તેને સખા કહે છે. હિતૈપી સલ્લજનને સુહૃદ્
કહે છે. કોઈ એક કાર્યમાં સાથે રહેનારને સહચર કહે છે, જેની સાથે ળોગ-
ખાણુ પીછાણુ હોય તેને સાંગતિક કહે છે. ॥ સૂ. ૨૪ ॥

एवं जहा—तिद्वाणे जाव लोगंतिया देवा माणुस्सं लोगं हव्व-
मागच्छेज्जा, तं जहा—अरिहंतेहिं जायमाणेहिं जाव अरिहंताणं
परिनिव्वाणमहिमासु ॥ सू० २५ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु व्यवच्छिद्य
मानेषु १, अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने २, पूर्वगते व्यवच्छिद्यमाने ३, जात-
तेजसि व्यवच्छिद्यमाने ४,

चतुर्भिः स्थानैः लोकोद्द्योतः स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु जायमानेषु १, अर्हत्सु
प्रव्रजत्सु २, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमसु ३, अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ४, एवं
देवान्धकारः, देवोद्द्योतः, देवसन्निपातः देवोत्कलिकाः, देवमलकलः ।

चतुर्भिः स्थानैः देवेन्द्राः मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, एवं यथा त्रिस्थाने
यावत् लोकान्तिका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा—अर्हत्सु जायमा
नेषु यावत् अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ॥ सू० २५ ॥

टीका—“ चउहिं ठाणेहिं ” इत्यादि—चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः—
लोकेऽन्धकारः—द्रव्यतो भावतश्च स्यात्—भवेत्, कैश्चतुर्भिः स्थानैरित्याह—“ तं
जहा ” इत्यादि—तद्यथा—अर्हत्सु—जिनेषु व्यवच्छिद्यमानेषु—निर्वाणं गच्छत्सु द्रव्य-
तोऽन्धकारः स्यात्, तस्योत्पातरूपत्वात्, छत्रभङ्गादौ रजउद्धतवत्, इति प्रथमं
लोकाऽन्धकारस्य कारणम् । १।

तथा—अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने, इति द्वितीयम् । २।

देवकृत उद्द्योत के अभावमें लोकमें किन—किन कारणोंसे अन्धकार
हो जाता है अब सूत्रकार इस बातका कथन करते हैं—

“ चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया ” इत्यादि २४

टीकार्थ—इन चार कारणोंके हो जाने पर लोकमें द्रव्यसे और भावसे
अन्धकार हो जाता है वे चार कारण ये हैं—एक कारण है जिनेन्द्र
देवका निर्वाण प्राप्त कर लेना—१ द्वितीय कारण है—अर्हत् प्रज्ञप्त धर्मका

देवकृत उद्द्योतना अलावे कथां कथां कारणोत्थी लोकमां अन्धकार व्यापी
णय छे, तेनुं हवे सूत्रकार निरूपणु करे छे—

“ चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया ” इत्यादि—(२५)

टीकार्थ—नीचेना चार कारणोंने लीधे लोकमां द्रव्यांधकार अने भावांधकार व्यापी
णय छे—(१) जिनेन्द्र देवना निर्वाणु कणे, (२) अर्हत्त प्रज्ञप्त धर्म व्युच्छिन्न

तथा-पूर्वगते-पूर्वाणि-दृष्टिवादाङ्गभागभूतानि, तेषु गतं प्रविष्टं-तदभ्यन्त-
रीभूतं तत्स्वरूपं यच्छ्रुतं तत्पूर्वगतं, तस्मिन् व्यवच्छिद्यमाने सति लोकेऽन्धकारो
द्रव्यतः स्यात्, तस्योत्पातरूपत्वात्, भावतोऽप्यन्धकारः स्यात्, एकान्तसुपमा-
दावागमादेरभावात् इति तृतीयम् ३। तथा-जाततेजसि बहो दीपादी वा व्यव-
च्छिद्यमाने विध्यायति सति लोके द्रव्यत एवान्धकारः स्यात् । इति चतुर्थम् । ४॥

व्युच्छिन्न विच्छेद हो जाना-२ तीसरा कारण है पूर्वगतज्ञानका व्युच्छिन्न
होना-३ और चौथा कारण है-अग्निका बुझ जाना तात्पर्य इस कथनका
ऐसा है कि जब जिनेन्द्रदेव निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं तब लोकमें
द्रव्यकी अपेक्षासे अन्धकार हो जाता है । यह उत्पातरूप होता है जैसे
छत्र भङ्ग होजाने पर रजका (धूलि) उद्घात होना है, दृष्टिवादके अङ्ग भाग
भूत पूर्व हैं, इनमें प्रविष्ट जो श्रुत है वह पूर्वगत श्रुत है.

इस पूर्वगतको व्यवच्छिद्यमान होने पर लोकमें अन्धकार द्रव्यकी
अपेक्षासे हो जाता है क्योंकि यह उत्पातरूप होता है, भावकी अपेक्षा
भी अन्धकार हो जाता है क्योंकि-एकान्त सुपमादि कालमें आगमा-
दिकका अभाव हो जाता है । तथा-जब वहिका, या दीपादिकका
विच्छेद हो जाता है, ये बुझ जाते हैं तब इनके बुझतेही लोकमें द्रव्यकी
ही अपेक्षा अन्धकार हो जाता है ।

(विनष्ट) यथ नवाथी, (३) पूर्वगतनो विच्छेद यथ नवाथी (४) अग्नि पुञ्जाथ
नवाथी

आ कथननो लावार्थं नीचे प्रमाणे छे—न्यारे जिनेन्द्र देव निर्वाण
पामे छे, त्यारे लोकमां द्रव्यनी अपेक्षासे अंधकार यथ नय छे ते उत्पात
रूप डोय छे नेमके छत्रलग यथ नय त्यारे रजने उद्घात थाय छे, ये न
प्रमाणे छत्रसमान जिनेन्द्र देवतुं अवसान यवाथी लोकमां अंधकार व्यापी नय छे.

दृष्टिवादनो अंगसागलूत पूर्व छे ते पूर्वमां प्रविष्ट ने श्रुत छे तेने
पूर्वगत श्रुत कहे छे. आ पूर्वगतनो विच्छेद यवाथी लोकमा द्रव्यनी अपेक्षासे
अंधकार व्यापी नय छे, कारण के ते उत्पातरूप डोय छे. अने लावनी अपेक्षासे
पणु अंधकार व्यापी नय छे. कारण के एकान्त-सुपमादि कणमां आगमा
दिकनो अभाव डोय छे तथा न्यारे अग्निनो अथवा दीपादिकनो विच्छेद
यथ नय छे, तेओ पुञ्जाथ नय छे त्यारे तेओ पुञ्जातानी साथे न लोकमां
द्रव्यनी अपेक्षासे न अंधकार व्यापी नय छे.

अन्धकारमुक्तोद्घोतमाह—“ चउहिं ठाणेहिं लोउज्जोए ” इत्यादि-चतुर्भिः स्थानैः लोकोद्घोतः—लोके उद्घोतः—प्रकाशः स्यात् . तानि स्थानान्याह—“तद्यथे”—त्यादि—अर्हत्सु—जिनेषु जायमानेषु—उत्पद्यमानेषु देवानामागमनात्स्वरूपेण च लोके प्रकाशो भवति, इति प्रथमं प्रकाशकारणम् १॥

तथा—अर्हत्सु प्रव्रजन्सु—प्रव्रज्यां गृहत्सु वेति द्वितीयम् । २ ।

तथा—अर्हतां—तीर्थकराणां ज्ञानोत्पादमहिमसु—ज्ञानं—केवलज्ञानं तस्योत्पादः—उत्पत्तिः, तस्य महिमानः—माहात्म्यानि तेषु, इति तृतीयम् ३ ।

तथा—अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु देवाऽऽगमनादेव लोके प्रकाशः स्यात् । इति चतुर्थं कारणम् । ४ ।

अन्धकारका कथन कर अब सूत्रकार उद्घोतका कथन करते हैं “ लोउज्जोए ”—इत्यादि चार कारणोंको लेकर लोकमें उद्घोत-प्रकाश होता है, उनमें एक कारण है जिनेन्द्र देवका जन्म होना । दूसरा कारण है अर्हन्त प्रभुका प्रव्रज्या ग्रहण करना । तीसरा कारण है तीर्थङ्करोंको केवलज्ञानका होना । और चौथा कारण है अर्हन्त प्रभुका निर्वाण प्राप्त करना । जिनेन्द्र देव जब उत्पन्न होते हैं तब देवलोकसे देवोंका आगमन होता है तब स्वरूपसे ही लोकमें आलोक-प्रकाश हो जाता है । इसी प्रकारसे जब तीर्थङ्कर प्रभु दीक्षा ग्रहण करते हैं तब भी लोकमें प्रकाश होता है, क्योंकि उस समय भी देवोंका आगमन हुवा करता है । तीर्थङ्कर प्रभुको जब केवलज्ञान उत्पन्न होता है तब उस केवलज्ञानके उत्पत्ति महिमासे समाकृष्ट देवोंका आगमन हो जाता है तब भी लोकमें उद्घोत होता है । इसी तरहसे जब अर्हन्त प्रभु

अन्धकारनु कथन करीने डवे सूत्रकार उघोतनु कथन करे छे—

“ लोउज्जोए ” इत्यादि—नीचेना चार कारणोंने लीधे लोकमां उघोत (प्रकाश) थाय छे—(१) जिनेन्द्र देवना जन्म समये, (२) अर्हन्त प्रभु प्रव्रज्या ग्रहण करे त्यारे, (३) तीर्थङ्करोंने केवलज्ञान थाय त्यारे, (४) अर्हन्त प्रभु निर्वाण पाये त्यारे आ चार प्रसंगे लोकमां प्रकाश थाय छे

न्यारे जिनेन्द्र देवना जन्म थाय छे त्यारे देवलोकमांथी देवानुं आगमन थाय छे त्यारे तेमनी देवद्युतिने कारणे ज लोकमां उघोत (प्रकाश) थाय छे अज प्रभाणु न्यारे तीर्थङ्कर प्रभु दीक्षा ग्रहण करे छे, त्यारे पणु लोकमां प्रकाश थाय छे, कारणे के ते प्रसंगे पणु देवानु आगमन थतुं डाय छे. तीर्थङ्कर प्रभुने न्यारे केवलज्ञान उत्पन्न थाय छे त्यारे पणु लोकमां प्रकाश

“ एवं देवंधगारे ” इत्यादि—एवं=लोकान्धकारवद् देवान्धकारोऽपि भवति-
अर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु देवलोकेऽप्यन्तर्मुहूर्तमन्धकारस्य संभवादिति । तथा-
अर्हतां जन्मादिषु लोकोद्द्योतवद् देवोद्द्योतोऽपि बोध्यः । एवमर्हज्जन्मादिषु-देव-
सन्निपातः-देवानां समूहरूपेण एकत्रीभवनम् । देवोत्कलिका = देवानामेकस्य
पश्चाद् अपरस्य नैरन्तर्येणाऽऽगमनम् । देवकलकलः=देवानां प्रमोदादिजनितः
कलकलः=कोलाहलश्चापि बोध्यः ।

“ चउहिं ठाणेहिं देविंदा ” इत्यादि—देवेन्द्राः चतुर्भिः-अर्हज्जन्मादिभिः
स्थानैः-कारणैः मनुष्यलोकं हव्यमागच्छन्ति । एवम्=अनेन प्रकारेण ‘ यथा

निर्वाणको प्राप्त करते हैं, तब भी निर्वाण महिमा प्रगट करनेके लिये
देवोंका आगमन होता है अतः लोकमें प्रकाश हो जाता है ।

“ एवं देवंधगारे ” इत्यादि देवान्धकारभी लोकान्धकारकी तरह
हुवा करना है अर्हदादि जब व्युच्छिद्यमान हो जाते-निर्वाण प्राप्त
कर लेते हैं तब देवलोकमें भी एक अन्तर्मुहूर्त तक अन्धकार छा जाता
है तथा-अर्हन्तोंके जन्मादि होने पर लोकोद्द्योत जैसे देवोद्द्योत भी
होता है । देवसमूहका एकत्रित होना होता है-देवोत्कलिका भी होती है-
इसी तरह से अर्हन्त के जन्मादि होने के समय देव सन्निपात
होता है देवोंका एकके बाद एकका आना निरन्तर होना है । इसी
प्रकारसे देव कलकल भी होता है-देवोंका प्रमोदजनित कोलाहल भी
होता है । “ चउहिं ठाणेहिं देविंदा ” इत्यादि देव अर्हज्जन्म आदि

થાય છે, કારણ કે દેવગજ્ઞાનની ઉત્પત્તિના મહિમાથી સમાકૃષ્ટ દેવોનું ત્યાં
આગમન થાય છે એજ પ્રમાણે જ્યારે અર્હંત પ્રભુ નિર્વાણ પામે છે ત્યારે
પણ નિર્વાણમહિમા પ્રકટ કરવાને લીધે દેવોનું આ લોકમાં આગમન થાય
છે અને તે કારણે લોકમાં પ્રકાશ થાય છે.

“ एवं देवंधगारे ” इत्यादि—देवान्धकारना कारणे। पणु लोकान्धकारना
कारणे। जेवां ज समजवा. अर्हंतादि ज्यारे निर्वाण पामे छे, त्यारे देवलोकमां
पणु अेक अन्तर्मुहूर्त सुधी अंधकार व्यापीलय छे तथा अर्हंतना जन्मादि
काणे लोकोद्द्योतनी जेम देवोद्द्योत पणु थाय छे एेज प्रमाणे अर्हंतना जन्मादि
काणे देवसन्निपात (देवोतुं अेक स्थणे अेकत्रित थवानुं) अने एेज थार
कारणोने लीधे देवोत्कलिका पणु थाय छे (देवोतुं अेक पछी अेक अे प्रकारे
निरन्तर आगमनने देवोत्कलिका कडे छे) एेज थार कारणोने लीधे देवोना
प्रमोदजनित कोलाहल पणु थाय छे. “ चउहिं ठाणेहिं देविंदा ” इत्यादि—

त्रिस्थाने यावत् लोकान्तिका देवाः 'यथा-येन प्रकारेण त्रिस्थाने=त्रिस्थानके अस्यैव स्थानाङ्गस्य तृतीयस्थाने प्रथमोद्देशके अर्हज्जन्मादिकारणत्रयेण देवेन्द्रादि लोकान्तिकपर्यन्तानां देवानां मनुष्यलोके शीघ्राऽऽगमनमुक्तं, तथाऽत्रापि देवेन्द्रादिलोकान्तिकपर्यन्तानां देवानां तीर्थङ्करजन्मादिकारणचतुष्टयेन मनुष्यलोके शीघ्राऽऽगमनं वाच्यम् । तत्र त्रीणि कारणानि त्रिस्थानकानुरोधेनोक्तानि, इह चतुःस्थानकानुरोधेन परिनिर्वाणमहिमरूपं चतुर्थं कारणमिति विशेषः । ४। इममेव विशेषं दर्शयितुमाह-तं जहा-अरिहंतेहिं जायमाणेहिं ' इत्यादि-॥सू०२५॥

अनन्तरमर्हतां जन्मादिप्रसङ्गेन देवाऽऽगमनमुक्तं, सम्प्रति अर्हतामेव प्रवचने दुःस्थितस्य साधोः दुःखशय्यां सुस्थितस्य सुखशय्यां च निरूपयितुं सूत्रद्वयमाह-

मूलम्-चत्वारि दुहसेजाओ पणत्ताओ, तत्थ खलु इमा पढमा दुहसेजा, तं जहा-से णं मुंडे भवित्ता अगाराओ अण-

रूप चार कारणोंसे बहुतही शीघ्र मनुष्य लोकमें आते हैं । इस तरह जैसा पहले इस स्थानाङ्गके स्थानकके प्रथम उद्देशमें अर्हज्जन्मादि कारणत्रय लेकर देवेन्द्रादि लोकान्तिक तकके देवोंका मनुष्य लोकमें शीघ्रागमन कहा गया है । उसी प्रकारसे यहां परभी देवेन्द्रसे लेकर लोकान्तिक तकके देवोंका तीर्थङ्करके जन्मादिरूप चार कारणोंको लेकर मनुष्यलोकमें शीघ्रागमन कह लेना चाहिये । वहां तीन कारण त्रिस्थानकके अनुरोधसे कहे गये हैं, यहां चतुःस्थानकके अनुरोधसे उन तीन कारणोंके साथ चौथा कारण परिनिर्वाण महिमा रूप है । यही बात-"तंजहा जायमाणेहिं" इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट की गई है ॥ सू०२५॥

अथ चार कारणोंने लीधे देवेन्द्रोतुं मनुष्यलोकमां धणी अ त्वरापूर्वक आगमन थाय छे.

आ स्थानांगसूत्रना त्रिस्थानकना पडेला उद्देशमां अर्ह'तज्जन्मादि त्रय कारणोंने लीधे देवेन्द्रादि लोकान्तिक पर्यन्तना देवाना मनुष्यलोकमां शीघ्र आगमननुं जेवुं कथन करवामां आव्युं छे, जेवुं अ कथन अर्ही पणु देवेन्द्रथी लधने लोकान्तिक पर्यन्तना देवाना तीर्थ'करज्जन्मादि रूप चार.कारणोंने लीधे मनुष्यलोकमां शीघ्र आगमन विषे पणु थवुं जेधअ. त्यां त्रय कारणो प्रकट करवामां आव्या हतां, कारण के त्यां त्रिस्थानकनी प्रकट करवानी हती; परन्तु अर्ही चतुःस्थानकने अधिकार आलतो डोवाथी ते त्रय कारणोनी साथे निर्वाणमहिमा रूप आयुं कारण पणु अर्ही प्रकट करवामां आव्युं छे अथ वात "जहा जायमाणेहिं" इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट करवामां आवेल छे. सू. २५

गारियं पव्वइए णिग्गंथे पावयणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए
 भेयसमावण्णे कलुससमावण्णे णिग्गंथं पावयणं णो सदहइ णो
 पत्तियइ णो रोएइ, णिग्गंथं पावयणं असदहमाणे अपत्तिय-
 माणे अरोएमाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ,
 पढमा दुहसेज्जा १।

अहावरा दोच्चा दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे भवित्ता
 अगाराओ जाव पव्वइए सएणं लाभेणं णो तुस्तइ परस्त
 लाभमासाएइ पीहेइ पत्थेइ अभिलसइ, परस्त लाभमासाए-
 माणे जाव अभिलसमाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघाय-
 मावज्जइ, दोच्चा दुहसेज्जा २।

अहावरा तच्चा दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे भवित्ता
 जाव पव्वइए दिव्वे माणुस्सए कामभोगे आसाएइ जाव अभि-
 लसइ दिव्वे माणुस्सए कामभोगे आसाएमाणे जाव अभिल-
 समाणे मणं उच्चावयं णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, तच्चा
 दुहसेज्जा । ३ ।

अहावरा चउत्था दुहसेज्जा, तं जहा—से णं मुंडे जाव
 पव्वइए तस्स णमेवं भवइ—जया णं अहमगारवासमावसामि
 तथा णमहं संवाहणपरिमदणगात्तभंगगाउच्छोलणाइं लभामि
 जप्पभिइं च णं अहं मुंडे जाव पव्वइए तप्पभिइं च णं अहं
 संवाहण जाव गाउच्छोलणाइं णो लभामि, से णं संवाहण
 जाव गाउच्छोलणाइं आसाएइ जाव अभिलसइ, से णं संवा-

हण जाव गाउच्छोलणाइं आसाएमाणे जाव मणं उच्चावयं
णियच्छइ विणिघायमावज्जइ, चउत्था दुहसेज्जा ॥ ४ ॥ सू०२६ ॥

चत्तारि सुहसेज्जाओ पणत्ताओ, तं जहा-तत्थ खलु इमा
पढमा सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे भवित्ता आगाराओ अण-
गारियं पव्वइए णिग्गंथे पावयणे णिरसंकिए णिक्खंखिए णिवि-
तिगिच्छिए णो भेयसभावणे णो कल्लससमावणे णिग्गंथं पाव-
यणं सदहइ पत्तियइ रोएइ णिग्गंथं पावयणं सदहमाणे पत्ति-
यमाणे रोएमाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघाय-
मावज्जइ, पढमा सुहसेज्जा । १ ॥

अहावरा दोच्चा सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे जाव
पव्वइए सएणं लाभेणं तुस्सइ परस्स लाभं णो आसाएइ णो
पीहेइ णो पत्थेइ णो अभिलसइ परस्स लाभमणासाएमाणे जाव
अणभिलसमाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघायमा-
वज्जइ, दोच्चा सुहसेज्जा । २ ।

अहावरा तच्चा सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे जाव पव्व-
इए दिव्वेमाणुस्सए कामभोगे णो आसाएइ जाव णो अभिल-
सइ दिव्वे माणुस्सए कामभोगे अणासाएमाणे जाव अणभिल-
समाणे णो मणं उच्चावयं णियच्छइ णो विणिघायमावज्जइ,
तच्चा सुहसेज्जा । ३ ।

अहावरा चउत्था सुहसेज्जा, तं जहा-से णं मुंडे जाव
पव्वइए तस्स णं एवं भवइ-जइ ताव अरहंता भगवंतो हइ

आरोग्गा बलिया कल्लसरीरा अन्नयराइं ओरालाइं कल्लाणाइं
 विउलाइं पययाइं पग्गहियाइं महाणुभागाइं कम्मक्खयकारणाइं
 तवोकम्माइं पडिवज्जंति, किमंग पुण अहं अब्भोवगमियं ओव-
 क्कमियं वेयणं णो सम्मं सहामि खमामि तितिक्खामि अहिया-
 सामि ममं च णं अब्भोवगमियं ओवक्कमियं वेयणं सम्मंअसह-
 माणस्स अक्खममाणस्स अतितिक्खमाणस्स अणहियासमा-
 णस्स किं सन्ने कज्जइ १, एगंतसो मे पावे कम्मे कज्जइ, ममं
 च णं अब्भोवगमियं ओवक्कमियं वेयणं सम्मं सहमाणस्स जाव
 अहियासमाणस्स किं मन्ने कज्जइ ? एगंतसो मे णिज्जरा
 कज्जइ, चउत्था सुहसेज्जा ४ सू० २७ ॥

छाया—चतस्रो दुःखशय्याः प्रज्ञप्ताः, तत्र खलु इयं प्रथमा दुःख
 शय्या, तद्यथा—स खलु मुण्डो भूत्वा आगारादनगारितां प्रव्रजितो नैर्ग्रन्थो प्रव-
 चने शङ्कितः काङ्क्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुपसमापन्नो नैर्ग्रन्थं प्रव-

अर्हन्तोके जन्मादि प्रसङ्गको लेकर देवोंका आगमन कहा, अब
 सूत्रकार अर्हंतोंकेही प्रवचनमें दुःस्थित साधुकी दुःखशय्याका और
 सुस्थित साधुकी सुखशय्याका निरूपण दो सूत्रोंसे करते हैं ।

सूत्रार्थ—“ चत्तारि दुहसेज्जाओ पणत्ता ” इत्यादि २६

चार दुःखशय्याएँ कही गई हैं, उनमें यह पहली दुःखशय्या है,
 जैसे कोई एक झनुष्य मुण्डित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थाको
 धारण कर लेता है, अब वह नैर्ग्रन्थप्रवचनमें शङ्कायुक्त होता है, विचि-

अर्हन्तोना जन्मादि प्रसङ्गे देवाना आगमनतुं कथन करवामां आ०युं.
 उवे ओञ्च अर्हन्तोना प्रवचनमां दुस्थित साधुनी दुःखशय्यातुं अने सुस्थित
 साधुनी सुखशय्यातुं सूत्रकार ये सूत्रे द्वारा निरूपण करे छे--

“ चत्तारि दुहसेज्जाओ पणत्ताओ ” इत्यादि--(२६)

सूत्रार्थ—चार दुःखशय्याओ कही छे. पहिली दुःखशय्यातुं स्वइप केअँ ओक
 भनुष्य मुण्डित यधने गृहस्थावस्थाता परित्यागपूर्वकं अणुगारावस्था-अंगीकार
 करी वे छे त्थार भाद ते निश्चैथ प्रवचन प्रत्ये शंका, विचिकित्सा, लेहसमा-

चनं नो श्रद्धधाति नो प्रत्येति नो रोचयति, नैर्ग्रन्थं प्रवचनमश्रद्धधानोऽप्रतियन्
अरोचयमानो मन उच्चावचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, प्रथमा दुःखशय्या । १।

अथाऽपरा द्वितीया दुःखशय्या, तद्यथा-स खलु मृण्डोभूत्वा अगाराद्
यावत् प्रव्रजितः स्वकेन लाभेन नो तुष्यति परस्य लाभमाशयति (आशां करोति)
स्पृहयति प्रार्थयति अभिलपति परस्य लाभमाशयन् यावत् अभिलपन् मन उच्चा-
वचं निर्गच्छति विनिघातमापद्यते, द्वितीया दुःखशय्या । २ ।

कित्सित होता है, भेद समापन्न होता है, कलुषसमापन्न होता है,
नैर्ग्रन्थ प्रवचनको श्रद्धासे नहीं देखना है, उस पर प्रतीति नहीं करता
है, उसे अपने रुचिका विषय नहीं बनाता है । इस तरह नैर्ग्रन्थ प्रवचन
पर श्रद्धा नहीं रखता हुआ उसे प्रतीतिमें नहीं लेता हुआ, उस पर
रुचि नहीं रखता हुआ वह अपने मनको विविध विषयोंमें ले जाता
है, तो ऐसी स्थितिमें धर्मभ्रष्ट होकर वह संसारमेंही परिभ्रमण करने-
वाला होता है यह प्रथम दुःखशय्या है-१ द्वितीय दुःखशय्या इस
प्रकार है, जैसे कोई एक मनुष्य मुण्डित होकर अगारावस्थासे अन-
गारावस्थाको धारण कर लेता है पर वह स्वकीय लाभसे सन्तुष्ट नहीं
होता परके लाभकी आशा करता है-उसकी स्पृहा करता है, प्रार्थना
करता है, अभिलाषा रखता है, इस तरह परके लाभकी अभिलाषावाला
हुवा वह अपने मनको इधर-उधर अनेक विषयोंमें ले जाता है, नो
ऐसी स्थितिमें धर्मभ्रष्ट वह संसारमेंही परिभ्रमण करनेवाला बनता

पन्नता अने कलुषभाव संपन्नताथी युक्त थध जय छे. ते कारणे ते निर्ग्रन्थ
प्रवचन प्रत्ये श्रद्धा राखतो नथी, तेने पोतानी प्रतीतिने विषय बनावतो
नथी, अने तेने पोतानी रुचिने विषय पणु बनावतो नथी आ रीते निर्ग्रन्थ-
प्रवचन पर श्रद्धा नहीं राखतो जेवो, तेनी प्रतीति नहीं करतो जेवो, अने
तेना प्रत्ये रुचि नहीं राखतो जेवो ते श्रमणु निर्ग्रन्थ पोताना मनने विविध
विषयोभां प्रवृत्त थवा हे छे. आ प्रकारनी परिस्थितिमां ते धर्मभ्रष्ट थधने
संसारमां न परिभ्रमणु करनारे थाय छे. आ पडेदी दुःखशय्या समजवी.

धीण दुःखशय्या आ प्रकारनी छे. केध जेक मनुष्य मुण्डित थधने
अगारावस्थाना परित्यागपूर्वक अणुगारावस्था धारणु करे छे; परन्तु ते स्वकीय
लाभथी संतुष्ट थतो नथी, परकीय लाभनी आशा करे छे, तेने माटे स्पृहा
करे छे, प्रार्थना करे छे अने अभिलाषा सेवे छे. आ प्रमाणु परना लाभनी
अभिलाषाथी युक्त थयेदी-ते पोताना मनने अहीं तहीं अनेक विषयोभां

અથાપરા તૃતીયા દુઃસ્વશય્યા, તથા—સ સ્વલુ મુણ્ડો ભૂત્વા યાવત્ પ્રવ્રજિતો દિવ્યાન્ માનુષ્યકાન્ કામભોગાન્ આશયતિ યાવત્ અભિલપતિ દિવ્યાન્ માનુષ્યકાન્ કામભોગાન્ આશયન્ યાવત્ અભિલપન્ મન ઉચ્ચાવચં નિર્ગચ્છતિ વિનિઘાતમાપદ્યતે, તૃતીયા દુઃસ્વશય્યા । ૩ ।

અધાડપરા ચતુર્થી દુઃસ્વશય્યા, તથા—સ સ્વલુ મુણ્ડો યાવત્ પ્રવ્રજિતઃ તસ્ય સ્વલુ એવં ભવતિ—યદા સ્વલુ અહમ્ અગાશ્વાસમ્ આવસામિ તદા સ્વલુ અહં સંવાહનપરિમર્દનગાત્રામ્યક્કગાત્રોત્ક્ષાલનાનિ લભે યત્પ્રભૃતિ ચ અહં સ્વલુ મુણ્ડઃ યાવત્ હૈ, યહ દ્વિતીય દુઃસ્વશય્યા હૈ—૨ તૃતીય દુઃસ્વશય્યા હૈસ પ્રકાર હૈ જૈસે કોઈ એક પુરુષ મુણ્ડિત હોકર અગારાવસ્થાસે અનગારાવસ્થા સમ્પન્ન હો જાતા હૈ અથ યદિ વહ ઉસ અવસ્થામેં મી દિવ્ય મનુષ્ય સમ્બન્ધી કામભોગોંકી આશા કરતાહૈ—યાવત્ અભિલાષા રખતાહૈ તો હૈસ તરહંસે દિવ્ય મનુષ્ય સમ્બન્ધી કામભોગોંકી આશા કરતા હુવા યાવત્ ઉનકી અભિલાષા કરતા હુવા હૈ વહ મનકો ઇધર ઉધરકે અનેક વિષયોંમેં લે જાતા હૈ તો એસી દશામેં ધર્મભ્રષ્ટ હોકર વહ સંસારમેંહી પરિભ્રમણ કરનેવાલા બનતા હૈ—૩ ચતુર્થ દુઃસ્વશય્યા હૈસ પ્રકાર હૈ, જૈસે કોઈ એક મનુષ્ય મુણ્ડિત હોકર અગારાવસ્થાસે અનગારાડવસ્થા સમ્પન્ન હો જાતા હૈ, અથ યદિ વહ હૈસ અવસ્થામેં મી એસા વિચાર કરતા હૈ કિ—જિસ સમય મેં ગૃહસ્થાવસ્થામેં થા ઉસ સમય શરીરકોં દવવાતા થા, ઉસે મલવાતા થા ઉસ પર તેલ આદિકી માલિશ કરવાતા

લભવા હે છે. તો એવી પરિસ્થિતિમાં ધર્મભ્રષ્ટ થયેલો તે નિર્થક સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરનારો થાય છે.

ત્રીજી દુઃસ્વશય્યા આ પ્રકારની જે—કોઈ એક મનુષ્ય મુણ્ડિત થઈને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગપૂર્વક અણુગારાવસ્થા ધારણ કરે છે અણુગારાવસ્થા ધારણ કરવા છતાં પણ જે તે મનુષ્ય સંબંધી કામભોગોની આશા કરે છે, સ્પૃહા કરે છે, પ્રાર્થના કરે છે અને અભિલાષા સેવે છે, તો એ પ્રકારે દિવ્ય મનુષ્ય સંબંધી કામભોગોની આશા, સ્પૃહા, પ્રાર્થના અને અભિલાષા કરતો એવો તે મનને આમ તેમ અનેક વિષયોમાં લમવા હે છે. તો એવી પરિસ્થિતિમાં ધર્મભ્રષ્ટ થઈને તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કરનારો જ બને છે.

ચોથી દુઃસ્વશય્યાનું સ્વરૂપ—કોઈ એક મનુષ્ય મુણ્ડિત થઈને ગૃહસ્થાવસ્થાના ત્યાગપૂર્વક અણુગારાવસ્થા અંગીકાર કરે છે ત્યાર બાદ એવો વિચાર કરે છે કે જ્યારે હું ગૃહસ્થાવસ્થામાં હતો ત્યારે સેવકાદિ પાસે મારા શરીરને દબાવણવતો હતો, ચોળાવતો હતો, તેના પર તેલ આદિનું માલિશ કરાવતો

પ્રવ્રજિત: તત્પ્રભૃતિ ચ સ્વલ્લ અહં સંવાહન યાવત્ ગાત્રોત્ક્ષાલનાનિ નો લભે સ સ્વલ્લ સંવાહન યાવત્ ગાત્રોત્ક્ષાલનાનિ આશયતિ યાવત્ અમિલષતિ સ સ્વલ્લ સંવાહન યાવત્ ગાત્રોત્ક્ષાલનાનિ આશયન્ યાવત્ મન ઉચ્ચાવચં નિર્ગચ્છતિ વિનિઘાતમાપચતે, ચતુર્થી દુ:સ્વશય્યા ૪। સૂ૦ ૨૬।

૨૭ છાયા—ચતસ્ર: સુખશય્યા: પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તત્ર સ્વલ્લ ઇયં પ્રથમા સુખશય્યા, તથથા—સ સ્વલ્લ મુણ્ડો ભૂત્વા આગારાદનગારિતાં પ્રવ્રજિતો નિર્ગન્થે પ્રવચને નિ:શક્લિત: નિષ્કાહ્ક્ષિત: નિર્વિચિકિત્સિત: નો ભેદસમાપન્નો નો કલુષસમાપન્નો

થા, પાનીસે ઉસે સ્વૂબ અચ્છી તરહ નહલાતા થા—સ્નાન કરાતા થા. અબ મેં જવસે મુણ્ડિત યાવત્ પ્રવ્રજિત હો ગયા હું તવસે મુજ્જે નતો ઉસે દવવા-નેકા મોકા મિલતા હૈ ન યાવત્ ઉસે નહલાનેકા મોકા મિલતાહૈ, હસ તરહસે સંવાહ આદિકી વહ આશા કરતા હૈ તો એસી સ્થિતિમેં ઉસકી આશા કરને આદિરૂપ ભાવોંવાલા વહ અપને મનકો અનેક વિષયોંમેં લે જાતા—અત: ધર્મભ્રષ્ટ હોકર સંસારકો હી વઢાતા હૈ યહ ચૌથી દુ:સ્વશય્યા હૈ—૪।

સુખશય્યાએં મી ચાર કહી ગઈ હૈં, ઉનમેં યહ પ્રથમ સુખશય્યા હૈ જૈસે કોઈ પુરુષ મુણ્ડિત હોકર અગારાવસ્થાસે અનગારાવસ્થામેં પ્રવ્રજિત હો જાતાહૈ ઓર વહ નૈર્ગન્થ પ્રવચનમેં શક્લ્યાસે રહિત નિશક્લિત કાહ્ક્ષાસે રહિત નિષ્કાહ્ક્ષિત વિચિકિત્સાસે રહિત નિર્વિચિકિત્સિત ભેદ સમાપન્નસે રહિત—નો ભેદસમાપન્ન, કલુષસમાપન્નસે રહિત—

હતો, અને પાણી આદિ વડે મારા શરીરે ખૂબ જ સારી રીતે સ્નાન કરાવતો હતો, પણ ન્યારથી હું પ્રવ્રજિત થઈ ગયો છું ત્યારથી મને શરીર દબાવ-રાવવાનો મોકો પણ મળતો નથી, શરીરને ચોળાવવાનો, માલિશ કરાવવાનો અને સ્નાન કરવાનો પણ મોકો મળતો નથી. આ રીતે સંવાહન આદિની તે આશા કરે છે. તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તે પોતાના મનની સ્થિરતા શુભાવી બેસે છે અને મનને અનેક વિષયોમાં ભમવા દે છે તે એવો નિર્થક ધર્મભ્રષ્ટ થઈને પોતાના સંસારને વધારે છે. આ ચોથી દુ:ખશય્યા સમજવી.

સુખશય્યાઓ પણ ચાર કહી છે પ્રથમ સુખશય્યાનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ કહ્યું છે—કોઈ એક મનુષ્ય મુંડિત થઈને અગારાવસ્થાના પરિત્યાગ પૂર્વક અણુગારાવસ્થાને સ્વીકાર કરે છે તે નિર્થક પ્રવચન પ્રત્યે શંકા રાખતો નથી, કાંક્ષા રાખતો નથી, વિચિકિત્સા રાખતો નથી, કલુષ સમાપન્ન થતો નથી અને ભેદસમાપન્ન પણ થતો નથી. આ રીતે નૈર્થક પ્રવચન પ્રત્યે નિ:

नैर्ग्रन्थं प्रवचनं श्रद्धाति प्रत्येति रोचयति नैर्ग्रन्थं प्रवचनं श्रद्धातः प्रतियन् रोचयन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, प्रथमा सुखशय्या । १।

अथाऽपरा द्वितीया सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितः स्वकेन लाभेन तुष्यति परस्य लाभं नो आशयति नो स्पृहयति नो प्रार्थयति नो अभिलषति, परस्य लाभमनाशयन् यावद् अनभिलषन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, द्वितीया सुखशय्या । २।

नो कलुषसमापन्न वना हुवा नैर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता है, उस पर प्रीति करता है, उसे अपने रुचिका विषय घनाता है, तो ऐसी स्थितिमें वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनकी श्रद्धावाला वना हुवा उसकी प्रीतिवाला वना हुवा उसकी रुचिवाला वना हुवा, वह अपने मनको इधर-उधरके विषयोंमें नहीं ले जाता है, इसलिये वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक वना हुवा संसारमें परिभ्रमण करनेवाला नहीं बनता है यह प्रथम सुखशय्या है-१ द्वितीय सुखशय्या इस प्रकारसे है जैसे कोई पुरुष मुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाता है, और अपनेही लाभसे सन्तुष्ट रहता है, परके लाभकी आशा नहीं करता है, उसकी स्पृहा-वाञ्छा नहीं करता है, उसकी प्रार्थना नहीं करता है, उसकी अभिलाषा नहीं करना है इस तरह परके लाभकी आशासे रहित वना हुवा

शङ्कित, निःकाङ्क्षित, निर्विचिकित्सित, लेहसमापन्न रक्षित अने क्लृप्तसमापन्नथी रक्षित होवाने कारणे ते निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा राणे छे, तेनी प्रतीति करे छे, तेना प्रत्ये रुचि राणे छे. आ रीते नैर्ग्रन्थ प्रवचन प्रत्ये नेने श्रद्धा उत्पन्न थर छे, तेने पोतानी प्रतीतिने नेने विषय बनाव्ये छे, अने तेने पोतानी रुचिने विषय नेने बनाव्ये छे, अवे ते निर्ग्रन्थ पोताना मनने स्थिर राभी शके छे, तेने गमे ते विषयोभां लभवा हेतो नथी. आ प्रकारे श्रुतचारित्ररूप धर्मनी आराधना करनारे ते निर्ग्रन्थ संसारभां परिभ्रमण करनारे ओटवे के पोताने संसार वधानार होतो नथी.

भीष्म सुभशय्यातुं स्वप्न—केछ ओक पुरुष मुण्डित थरने प्रवचन्या अङ्गीकार करे छे. त्थार भाद ते स्वकीय लालथी न संतुष्ट रहे छे-परकीय लालनी आशा करतो नथी, स्पृहा (वांछा, कामना) राभतो नथी, तेने भाटे प्रार्थना करतो नथी अने तेनी अखिलाषा पणु राभतो नथी आ रीते परकीय लालनी आशा, स्पृहा आदिथी रक्षित अनेवे अवे ते निर्ग्रन्थ पोताना

अथाऽपरा तृतीया सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितो दिव्यान् मानुष्यान् कामभोगान् नो आशयति यावत् नो अभिलषति दिव्यान् मानुष्यान् कामभोगान् अनाशयन् यावद् अनभिलषन् नो मन उच्चावचं निर्गच्छति नो विनिघातमापद्यते, तृतीया सुखशय्या । ३ ।

अथाऽपरा चतुर्थी सुखशय्या, तद्यथा-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितः तस्य खलु एवं भवति-यदि तावत् अर्हन्तो भगवन्तो हृष्टा आरोग्यावल्लिकाः कल्पशयावत् उसकी अभिलाषासे रहित बना हुआ वह अपने मनको व्यर्थके इधर उधर विषयोंमें नहीं ले जाता है वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक बना हुआ संसारमें परिभ्रमण करनेवाला नहीं बनता है, यह द्वितीय सुखशय्या है-२ तृतीय सुखशय्या इसप्रकार है जैसे कोई पुरुष सुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाता है और वह दिव्य मनुष्य कामभोगोंकी आशा नहीं करता है यावत् उनकी अभिलाषा नहीं करता हुआ वह अपने मनको इधर उधरके व्यर्थ विषयोंमें नहीं ले जाता है, इस तरह वह श्रुतचारित्ररूप धर्मका आराधक बना हुआ संसारपरिभ्रमण करनेवाला नहीं बनता है यह तृतीय सुखशय्या है-३ चतुर्थ सुखशय्या इस प्रकार है-जैसे कोई पुरुष सुण्डित होकर यावत् प्रव्रजित हो जाना है, उसके मनमें ऐसा विचार आना है कि जघ हृष्ट-आरोग्य-वल्लिक और कल्प शरीरवाले ऐसे अर्हन्त भगवन्त

मनने नकामा अने अनुचित विषयोंमें लभवा देतो नथी. ते ऋशु श्रुत-चारित्ररूप धर्मनी आराधनामां लीन थयेदो ते निर्ग्रन्थ संसारनुं परिभ्रमणुं करनार थतो नथी पणु अल्प संसारवाणो अने छे त्रीणु सुखशय्या आ प्रकारनी कही छे-कोठ अेक पुरुष सुण्डित थधने प्रमन्या अंगीकार करे छे. त्पार आद ते कही पणु दिव्य मनुष्य संबंधी कामभोगोनी आशा, स्पृहा, अलिवाषा आदि करतो नथी आ रीते दिव्य कामभोगोनी आशा न करनारो, स्पृहा न करनारो अने अलिवाषा न करनारो ते निर्ग्रन्थ पोताना मनने नकामा विषयोंमां आभतेम लभवा देतो नथी. आ प्रकारे श्रुतचारित्ररूप धर्मनुं आराधन करनारो ते श्रमणु निर्ग्रन्थ पोताना संसारने वधारतो नथी. तेने दीर्घ अथवा अनंतकाण पर्यन्त आ संसारनुं परिभ्रमणुं करतुं पडतुं नथी.

चौथी सुखशय्या आ प्रकारनी कही छे-कोठ अेक पुरुष सुण्डित थधने प्रमन्या थहणुं करे छे तेना मनमां अेवो विचार आवे छे के-जे हृष्ट-नीरोगी, अलिवाषा अने कल्प शरीरवाणा अर्हन्त लगवान अन्यतर, उदार,

रीरा अन्यतराणि उदारानि कल्याणानि विपुलानि प्रयतानि प्रगृहीतानि महानु-
भागानि कर्मक्षयकारणानि तपः कर्माणि प्रतिपद्यन्ते किमङ्ग ! पुनरहमभ्युपगमिकी-
मौपक्रमिकीं वेदनां नो सम्यक् सहे क्षमे तितिक्षे अध्यासयामि, मम च खलु
आभ्युपगमिकीमौपक्रमिकीं वेदनां सम्यगसहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षणमा-
णस्यानध्यासयत. किं मन्ये क्रियते ? एकान्तशः (एकान्तेन) मया पापं कर्म
क्रियते, मम च खलु आभ्युपगमिकीमौपक्रमिकीं यावत् सम्यक् सहमानस्य यावत्
अध्यासयतः किं मन्ये क्रियते !, एकान्तशः मया निर्जरा क्रियते, चतुर्थी सुख-
शय्या ।४। सू० २७ ॥

अन्यतर-उदार-कल्याणकारक-विपुल प्रयत प्रगृहीत महानुभाग और
कर्मक्षयकर ऐसे तपोको तपते हैं तो क्या मैं शिरोलुंचनादिजन्य आभ्यु-
पगामिकी वेदनाको एवं औपक्रमिकी वेदनाको अच्छी तरहसे क्यों
नहीं सहन करूँ, और क्यों मैं इससे विचलित परिणतिवाला बनूँ।
यदि मैं इस आभ्युदयिकी और औपक्रमिकी वेदनाको अच्छी तरहसे
सहन नहीं करूँगा, इस पर क्रुपित होऊँगा दीन भाववाला बन जाऊँगा,
इससे विचलित परिणतिवाला हो जाऊँगा, तो फिर मैं क्या करूँगा,
मैं तो एकान्ततः पापी हो जाऊँगा और जो उस वेदनाको अच्छी तरहसे
सहन करूँगा, क्रुपित न होऊँगा दीन भाववाला नहीं बनूँगा एवं
अपने कर्तव्यपथसे विचलित नहीं होऊँगा तो एकान्त रूपसे मेरे

कल्याणकारक, विपुल, प्रयत, प्रगृहीत, महानुभाग अने कर्मक्षयकर अने
तपस्याओ करे छे, तो भारथी शिरोलुचनादि जन्य आभ्युपगामिकी अने
औपक्रमिकी वेदनानु सारी रीते वेदन शा माटे न थछ शके ? तेना प्रत्ये
क्रुपित थवानी शी जर छे ? अनीन लावयुक्त थरने शा माटे हुं तेने
स्वीकारी न लठ ? तेनाथी भारे शा माटे विचलित परिणतिवाणा अनबुं
लेछअ ? ले हुं आ आभ्युपगामिकी अने औपक्रमिकी वेदनाने सारी रीते
सहन नही करे, तेना प्रत्ये क्रुपितलावयुक्त अनीश, दीनलावयुक्त अनीश,
अने विचलित परिणतिवाणा अनीश, तो माइं शुं थशे ? आभ करवाथी तो
हुं अकान्ततः (संपूर्ण रुपे) पापी अनी जरथ. परन्तु ले हुं तेना प्रत्ये
क्रुपित नही अनुं, दीनलावयुक्त नही अनुं, अने भारा कर्तव्य भार्गमाथी
विचलित थया बिना ते वेदनाने समता लावपूर्वक सहन करी लछथ तो
अकान्ततये भारा कर्मांनी निर्जरा थशे आ प्रकारना विचारथी प्रेराने
आभ्युदयिकी अने औपक्रमिकी वेदनाने सहन करनार निर्गथ श्रुतचारित्र्य

टीका—“ चत्वारि दुहसेज्जाओ ” इत्यादि-दुःखशय्याः-दुःखदाः शय्याः दुःखशय्याः, मध्यमपदलोपिसमासोऽत्रबोधयः, दुःखोत्पादिकाः शय्या इत्यर्थः, ताश्च द्रव्यतोऽसमीचीन खट्वादिलक्षणाः, भावतस्तु दुःस्थचित्ततया दुःश्रमगता-स्वभावाः-प्रवचनाऽश्रद्धा १ परलाभप्रार्थना २ कामाऽऽशंसना ३-संवाहनादि प्रार्थना ४ वत्त्वरूपाः, चतस्रः-चतुः संख्याः प्रज्ञप्ताः, ताः क्रमेण प्रदर्शयितुमाह-“ तत्थ ” इत्यादि-तत्र-चतसृषु दुःखशय्यासु मध्ये खलु इयम्-अनुपदं वक्ष्य-माणा प्रथमा दुःखशय्या, तद्यथा-सः-कश्चित् गुरुकर्मा जीवः ‘ णं ’ वाक्यालङ्कारे एवमग्रेऽपि, मुण्डः-लुञ्चितशिरः केशः, भूत्वा अगारात्-गृहात् अनगारिताम्-आगारी-गृही तद्विपरीतोऽनगारी-संयतः, तस्य भावोऽनगारिता, तां तथा=संय-

कर्मांकी निर्जरा होगी इस प्रकारके विचारसे जो आभ्युदयिकी एवं औपक्रमिकी वेदनाको सहता है उसकी यह चतुर्थी सुखशय्या है-४ टीकार्थ-यहां दुःखशय्या पदमें दुःखोत्पादिकी शय्या ऐसा मध्यमपदलोपी समास है । यह दुःखशय्या द्रव्यभाव सेदसे दो प्रकारकी है।

असमीचीन-टूटी फूटी जो खटिया आदि है वे द्रव्यरूप दुःखशय्या हैं, तथा दुःस्थचित्त होनेसे दुःश्रमगता रूप-प्रवचनकी-अश्रद्धारूप-१ परलाभ प्रार्थना रूप-१ कामशंसना रूप एवं संवाहनादिकी चाहना रूप जो भाव हैं वे भावरूप दुःखशय्या हैं ये दुःखशय्याएँ चार प्रकारकी हैं, प्रथम प्रकारकी वह है ।

कि जो कोई गुरुकर्मा जीव केशोंका लुञ्चन करके गृहस्थावस्थासे अनगारावस्थावाला हो जाताहै गृहस्थावस्थाकात्याग कर मुनि बन जाता

धर्मने आराधक होवाने कारणे स सारमां परिभ्रमणु क्करोते नथी. योथी सुभशय्यानुं आ प्रकारनुं स्वइप छे.

टीकार्थ-अही ‘दुःभशय्या’ आ पदमां ‘दुःखोत्पादिकी शय्या’ जेवो मध्यम पदलोपी समास छे ते दुःभशय्या द्रव्य अने लावना लेदथी जे प्रकारनी छे. लांग्या तूट्या भाटला वगेरेने द्रव्यइप दुःभशय्या कडी शक्य. तथा मनना दुःपरिष्णामेने कारणे दुःश्रमणुताइप जे लावो उत्पन्न थाय छे तेमने लाव-इप दुःभशय्या कडी शक्य छे जेवी लावइप दुःभशय्या चार कडी छे—(१) प्रवचन प्रत्ये अश्रद्धाइप दुःभशय्या, (२) परलाभ प्रार्थनाइप दुःभशय्या (३) कामाशंसताइप दुःभशय्या अने (४) संवाहनादिनी याहनाइप दुःभशय्या.

पडैला प्रकारनी दुःभशय्यानुं स्पष्टीकरणु—केछि गुरुकर्मा एव केशोनुं लुञ्चन करीने गृहस्थावस्थाना परित्यागपूर्वक निर्भय पर्यायने स्वीकार करी

તતાં પ્રવ્રજિતઃ-અધિગતઃ પ્રાપ્ત इत्यर्थः, नैर्ग्रन्थे-निर्ग्रन्थः-वाद्याभ्यन्तरग्रन्थि-
 रहिता अर्हन्तः, तेषामिदं नैर्ग्रन्थं, तस्मिन् प्रवचने=शङ्कितः-शङ्कावान् 'आर्हत-
 शासने यदुक्तं जीवादिकं तत् सत्यं वा मिथ्या वे'ति देशसर्वशङ्कावान्, तथा
 काङ्क्षितः-आर्हतमतातिरिक्तमते इच्छावान्-'मतान्तरमपि समीचीनमिति मति-
 मान्, विचिकित्सितः-फले संशययुक्तः, तथा-भेदसमापन्नः-'जिनोक्तं सर्वम्
 इत्यमेव अन्यथा वे'ति बुद्धिभेदवान्, कलुषसमापन्नः-'नैतदेव' मिति विप-
 रीतज्ञानवान् नैर्ग्रन्थं-प्रवचनं नो श्रद्धाति तत्र श्रद्धां न करोतीत्यर्थः, नो
 प्रत्येति-प्रतीतिं न प्रतिपद्यते, नो रोचयति-न रुचिविपयीकरोति, इत्थं नैर्ग्रन्थं

है और फिर भी वह वाद्याभ्यन्तर परिग्रह विहीन निर्ग्रन्थ अर्हन्त
 भगवन्त द्वारा प्रतिपादित प्रवचनमें ऐसी शङ्कावाला बनता है कि
 आर्हत शासनमें जो जीवादिक तत्त्व कहे गये हैं वे सत्य हैं या मिथ्या
 हैं, इस प्रकारसे देशरूपसे या सर्व रूपसे वह शङ्कावाला बनता है,
 तथा-ऐसी शङ्कावाला बनता है कि मनान्तर भी समीचीन हैं, तथा-
 विचिकित्सित फलमें संशययुक्त बनता है भेदसमापन्न बनता है,
 "जिनोक्त तत्त्व आर्हत मतसे अतिरिक्त सबके सब प्रकारसे हैं या-
 अन्यथा हैं" इस प्रकारसे बुद्धि भेदवाला बनता है तथा कलुष समा-
 पन्न होता है यह इस तरहसे नहीं है, इस प्रकारसे विपरीत ज्ञानवाला
 बनता है, इस प्रकारके भावोंसे युक्त होकर वह नैर्ग्रन्थ प्रवचन पर
 श्रद्धा नहीं करता है, उस पर प्रतीति नहीं लाना है, उसे अपनी

લે છે નિર્ગ્રંથ બનવા છતાં વાદ્યાભ્યન્તર પરિગ્રહથી વિહીન એવો તે અર્હન્ત
 ભગવન્ત દ્વારા પ્રતિપાદિત પ્રવચનમાં અશ્રદ્ધા રાખે છે, તેને એવો વિચાર
 આવે છે કે અર્હન્ત શાસનમાં જે જીવાદિક તત્ત્વ પ્રશ્નમાં છે તે શું સત્ય
 છે કે મિથ્યા છે? આ પ્રકારે તે દેશરૂપે (અંશતઃ) અથવા સર્વરૂપે (સંપૂર્ણ
 રૂપે) શંકાવાળો બને છે, તથા તેને એવો સંભ્રમ થાય છે કે અન્ય મત-
 વાદીઓની માન્યતા પણ સાચી હોઈ શકે છે. વળી તે વિચિકિત્સિત બની
 બળ્ય છે એટલે કે ફલની આગતમાં પણ સંશયયુક્ત બની બળ્ય છે તથા તે
 ભેદસમાપન્ન પણ બની બળ્ય છે, એટલે કે જિનોક્ત તત્ત્વ જિનપ્રરૂપિત
 સ્વશાસન અને પરશાસન (અન્ય સિદ્ધાંતો) એક જ પ્રકારની માન્યતા ધરાવે
 છે કે વિરોધ માન્યતા ધરાવે છે, આ પ્રકારની સુબળવણને કારણે બુદ્ધિભેદવાળો
 બની બળ્ય છે, તથા તે કલુષસમાપન્ન બની બળ્ય છે-એટલે કે અર્હન્ત પ્રવચન
 મિથ્યા છે, એવી વિપરીત માન્યતાવાળો બની બળ્ય છે. આ પ્રકારના ભાવોથી

प्रवचनम् अश्रद्धधानः अप्रतियन् अरोचयन् स संयतो मनउच्चात्रचम्=अनेकप्रकारकं त्रिपयम् विविधविषयेषु निर्गच्छति=गमेरत्रान्तर्भावितण्यतया निर्गमयति-नयति, तेन हेतुना स विनिघातं-धर्मभ्रंशं संसारं वा आपद्यते=गप्नोतीति प्रथमा दुःखशय्या १।

“ अहावरा दोच्चे ”—त्यादि - अथ = प्रथमदुःखशय्यानिरूपणानन्तरम् अपरा-द्वितीया दुःखशय्या निरूप्यते, तथाहि-“ से णं ” इत्यादि प्राग्वत्, नवरं-स्वकेन-स्व एव स्वकः-स्वकीयस्तेन लाभेन-भक्तपानादि प्राप्तिरूपेण, नो तुष्यति-सन्तुष्टो न भवति, किन्तु परस्य-स्वातिरिक्तस्य संयतस्य सकाशात् लाभं-भक्तपानादि प्राप्तिरूपम् आशयति=तस्य आशां करोति ‘स मह्यं दारयतीति संभावयति, स्पृहयति-वाञ्छति, प्रार्थयति=याचते, अभिलषति लब्धेऽप्यन्नादौ पुनर्वाञ्छति, शेषं च प्रथमदुःखशय्यासूत्रवद् बोध्यम् । इति द्वितीया दुःखशय्या २।

रुचिका विषय नहीं बनाता है तो ऐसी परिणतिमें वह नैर्ग्रन्थ प्रवचनकी श्रद्धादिसे विहीन बना हुआ संयत विविध विषयोंमें अपने मनको ले जाता है, इस कारण वह “ विनिघात ” को धर्मभ्रष्टताको, या संसारको प्राप्त करता है इस प्रकारकी यह प्रथम दुःखशय्या है-१। द्वितीय दुःखशय्यामें भी ऐसाही कथन जानना चाहिये, परन्तु इसमें वह संयत अपने प्राप्त भक्तपानादिमें संतुष्ट नहीं होता है, किन्तु अपनेसे अतिरिक्त संयतके भक्तपानादिककी आशा करता है कि वह मुझे अपने भक्तपानादिकमें से दे दे बाकीका कथन सूलार्थ जैसा है-२ तृतीय

युक्त थवाने कारणे ते नैर्ग्रन्थ प्रवचन प्रत्ये श्रद्धा राणतो नथी, तेने पोतानी प्रतीतिने विषय षनावतो नथी अने तेमां रुचि पणु राणतो नथी. आ प्रकारनी परिणुतिथी युक्त थयेको अने नैर्ग्रन्थ प्रत्येनी श्रद्धा आदिथी विहीन अनेको ते श्रमणु निर्ग्रन्थ विविध विषयोमां पोताना मनने लभवा हे छे. ते कारणे ते धर्मभ्रष्ट अथवा धर्मने विराधक थर्ष जवाने कारणे संसारमां परिभ्रमणु कर्था करे छे. आ प्रकारनी पडेली लावइप दुःखशय्या छे.

७।७ दुःखशय्यातुं स्वइप—अडीं पणु पडेला दुःखशय्या जेपुं कथन समजपुं. आ दुःखशय्याना वणुंनमां अटली ज विशेषता छे के ते संयत पोताने प्राप्त थयेला आडारपाणी आदिथी संतोष भानतो नथी पणु अन्य संयतने प्राप्त थयेला आडारहिनी आशा करे छे. अटले के ते अेवी अभिलाषा राणे छे के अन्य संयत भने ते आडारादि आपी हे. आडीतु कथन भूणार्थमां कक्षा अनुसार समजपुं.

“ अहावरा तच्च ”—इत्यादि—अथ तृतीया दुःखशय्या निरूप्यते, तथाहि—
 “ से णं ” इत्यादि—पूर्ववत्, नवरं दिव्यान्—देवलोके भवान् मनोज्ञान् वा मानु-
 ष्यकान्—मनुष्यलोकभवान् कामभोगान्—शब्दादीन् विषयान् आशयति—इत्यारभ्य
 अभिलपति ‘ यावत् ’ अभिलषतिपदपर्यन्तं बोध्यम्, शेषं सर्वं स्पष्टम् । इति
 तृतीया दुःखशय्या । ३ ।

“ अहावरा चउत्था ” इत्यादि — अथ—चतुर्थी दुःखशय्या निरूप्यते—
 तथाहि—“ से णं ” इत्यादि—प्राग्बत्, नवरं—यदाऽहम् अगारवासम्—वसत्य-
 त्रेति वासः, अगारं—गृहमेव वासोऽगारवासस्तम् आवसामि=अधितिष्ठामि—तत्राऽऽ
 वसामीत्यर्थः, तदा खलु अहं संवाहनपरिमर्दन—गात्राभ्यङ्गात्रोत्क्षालनानि,—
 तत्र—संवाहनं—शरीरस्य सुखोत्पादको मर्दनविशेषः, परिमर्दनं—पिष्टादिना शरीरो-
 द्घर्तनम् ‘ पीठीकरना ’ इति भाषापसिद्धम्, गात्राभ्यङ्ग—तैलादिनाऽङ्गम्रक्षणं
 शरीरे तैलाभ्यङ्ग इत्यर्थः, गात्रोत्क्षालनं—शरीरस्य जलेन शोधनम्, एतानि लभे=
 अवाप्तगानित्यर्थः, च=पुनः यत्प्रभृति=यस्मात्कालादारम्य ‘ णं ’ इति वाक्याल-

दुःख शय्यामें वह संघत देवलोक सम्बन्धी, या मनुष्यलोक सम्बन्धी
 कामभोगोंकी, शब्दादिक विषयोंकी आशा करता है यहां “अभिलाषा”
 आदि पदोंका सबका सम्बन्ध कथन कर लेना चाहिये—३ ।

चतुर्थ प्रकारकी दुःखशय्या इस प्रकारसे है कि वह संघत गृह-
 स्थाऽवस्थामें भोगे गये चरणद्ववाना आदि संवाहको परिमर्दन—धालीश
 आदि सुखोंको याद करता है और अब संघतावस्थामें उन बातोंका
 लाभ नहीं होता है ऐसा विचारता है—शरीरको सुख उपजे, ऐसे मर्द-
 नका नाम संवाहन है, पीठी करना इसका नाम—शरीरोद्घर्तन है,
 शरीरमें तेलकी मर्दन करना—इसका नाम गात्राभ्यङ्ग है, शरीरका

त्रींशु दुःखशय्या—आ दुःखशय्यातुं कथन भूणार्थं प्रभाषे न समञ्जु
 अङ्गी देवलोके अथवा मनुष्यलोके संघन्धी कामभोगोनी—शब्दादिक विषयोनी
 आशा राभनार संघत पोतानो संसार वधादे छे, ओवुं समञ्जुं

योथा प्रकारनी दुःखशय्या—अङ्गीं ओवा संघतनी वात करी छे के ने
 पोतानी गृहस्थावस्थां लोणवेला अरथु दग्धावस्था आदि रूप संवाहनोने,
 परिमर्दन (मालिश) आदि सुभोने याद करे छे अने संघतावस्थां ओ
 लोणे न भणवाने कारणे मतमां दुःख अनुलवे छे (शरीरने सुभ उपजे
 ओवी रीते तेने दग्धावस्थां तेषुं नाम संवाहन छे शरीरे पीठी, सुभउ आदि
 योणाववी तेषुं नाम शरीरोद्घर्तन छे, शरीरे तेलनुं मालिश करवुं तेषुं नाम

ङ्कारे, 'अहं मुण्डः' इत्यारभ्य प्रव्रजित इत्यन्तं प्राग्बद् बोध्यम्, तावत्प्रभृति-
तस्मात्कालादारभ्य अहं संवाहनादिकं न लभे, शेषं व्याख्यातपूर्वम् । इति चतुर्थी
दुःखशय्या । ४ । सू० २६ ॥

अथ सुखशय्यानिरूप्यते—

टीका—“ चत्वारि सुहसेज्जाओ ” इत्यादि—सुखशय्याः—सुखदाः शय्याः
सुखशय्याः, ता द्रव्यभावभेदेन द्विविधाः, तत्र द्रव्यतस्तथाविधसुखदपर्यङ्गादि-
रूपाः, भावतः स्वस्थचित्तत्वेन सुश्रमणत्वस्वभावाः, ताः प्रवचनश्रद्धा १—परला-
भानिच्छा २—कामानाशंसना ३—वेदनासम्यक्सहनरूपाश्चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तत्र
प्रथमा सुखशय्या—स खलु मुण्डो भूत्वा अनगाराद् अनगारितां प्रव्रजितो नैर्गन्थे
प्रवचने निश्शङ्कितो निष्काङ्क्षितो यावत् नो विनिघातमापद्यत इति । १ । द्वितीया

शोधन जलसे करना, न्हाना स्नान करना इसका नाम गात्रोत्क्षालन
है । बाकी का सब कथन मूल जैसा है ॥ २६ ॥

अब सुख शय्याके विषयमें सूत्रकार कहते हैं, कि सुखशय्या भी
चार प्रकारकी है । यह—सुखशय्या द्रव्य-भावके भेदसे दो प्रकार है,
तथाविध सुखकारक पत्यङ्क-पर्यङ्क आदिरूप द्रव्यसुखशय्या है,
और स्वस्थ चित्तसे सुश्रमण स्वभावरूप भावसुखशय्या है । यह
भावरूप सुखशय्या—प्रवचन श्रद्धारूपसे, परलाभकी इच्छा न करने रूपसे,
और वेदना सम्यक् सहनरूपसे चार प्रकारकी है—इनमें प्रवचन श्रद्धारूप
जो सुखशय्या है वह इस प्रकारसे है, जब मुण्डित होकर कोई पुरुष
गृहस्थावस्थासे अनगारावस्थाको प्राप्त होता है तब वह नैर्गन्थ प्रवचनमें
निश्शङ्कित होता है, निष्काङ्क्षित आदि विशेषणोंवाला है, अतः वह
धर्मश्रद्ध नहीं होता है या संसारमें परिभ्रमण नहीं करता है—१

गात्राभ्यंगं छे, ज्जणी शरीरनी शुद्धि करवा इप स्नानने गात्रोत्क्षालन कडे
छे) भाकीतुं कथन मूलार्थ अनुसार समञ्जुं.

इवे सूत्रकार सुभशय्यातुं निरूपणु करे छे—तेना चार प्रकार कथा
छे. द्रव्य अने लावनी अपेक्षाअे तेना अे प्रकार पडे छे सुभकारक पदंग
आदिने द्रव्यइप सुभशय्या कडी शक्य, अने स्वस्थचित्तनी अपेक्षाअे सुश्रमणु
स्वभावइप लाव सुभशय्या समजवी तेना चार प्रकार नीअे प्रभाणु छे—
(१) प्रवचन श्रद्धाइप (२) परलाभनी अनिच्छा इप, (३) कामलोगो प्रत्ये
अनासक्ति इप अने (४) समता लावे वेदना सहन करवा इप

प्रवचन श्रद्धाइप सुभशय्या—कोई पुरुष मुंडित थईने गृहस्थावस्थाना
त्यागपूर्वक अणुगारावस्था स्वीकारे छे. ते संयत निर्गन्थ प्रवचन प्रत्ये निः-
शंकित, निष्काङ्क्षित आदि पूर्वोक्त लावेथी युक्त मनःपरिणामवाणो रडे छे

तु स खलु मुण्डो यावत् स्वकेन लाभेन तुष्यति परस्य लाभं नो आशयति यावत् नो विनिघातमापद्यते इति । २ । तृतीया तु-स खलु मुण्डो यावत् प्रव्रजितो दिव्यान् मानुष्यकान् कामभोगान् नो आशयति यावत् नो विनिघातमापद्यते इति । एतास्तिस्त्रोऽपि व्याख्यातमायाः । ३ ।

तथा चतुर्थी सुखशय्या एवं बोध्या, तथाहि—स खलु कश्चित् मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां मन्त्रजितः, तस्य प्रव्रजितस्य मनसि खलु एवं भवति—एवं विचारो जायते—यदि तावत् अर्हन्तो भगवन्तो हृष्टाः—हृष्टा इव हृष्टाः—विगतशोक तथा आनन्दिताः, तथा—आरोग्याः=ज्वरादिरोगवर्जिताः, तथा—बलिकाः=बलं

द्वितीया सुखशय्यामें मुण्डित आदि होकर अपने लाभसे ही सन्तुष्ट रहता है परके लाभकी कामना आदि नहीं करता है, अतः वह विनिघातको प्राप्त नहीं होता है—२ तृतीया सुखशय्यामें रहा हुआ वह संयत दिव्य मनुष्य सम्वन्धी कामभोगोंकी चाहना नहीं करता है, उनकी आज्ञा आदिसे बिलकुल रहित हो जाता है अतः वहभी विनिघातको प्राप्त नहीं होता है—३, चौथी सुखशय्यामें वर्तमान संयत मनमें हृष्टादि विशेषणोंवाले अर्हत भगवन्तोंके अन्यतरादि विशेषणों-वाले तपःकर्मोंका चिन्तन करता हुआ अपनेमें औषकमिकी एवं आभ्युपगमिकी वेदनाको सहन आदि करनेकी क्षमताको जागृत करता है ।

तेथी ते श्रुतचारित्ररूप धर्मनी सम्यक् रीते आराधना करीने पोताना संसारने अल्प करी नाणे छे.

परकीय लालनी अनिच्छारूप णीछ सुभशय्या—अहीं ओवा संयतनी वात करी छे के पोताने प्राप्त थयेला आडारादिथी ज संतुष्ट रहे छे. अन्य संयतने प्राप्त थयेला आडारादिनी कामना आदि नापतो नथी. ते कारणे ते पणु धर्मने विराधक बनतो नथी—आराधक ज भने छे अने अल्प संसारवाणे भने छे.

त्रीछ सुभशय्या—अहीं ओवा संयतनी वात करी छे के जे देवसंभंधी के मनुष्य संभंधी कामलोगोनी बिलकुल चाहना करतो नथी ओवा संयत पणु धर्मप्रप्यथतो नथी, पणु धर्मने आराधक बनने पोताने संसार घटाडे छे. चौथी सुभशय्यासपन्न संयत हृष्टादि पूर्वोक्त विशेषणवाणा अर्हत संग्रवतोनी अन्यतर आदि पूर्वोक्त विशेषणवाणा तपःकर्मोंतु चिन्तन करतो थके आभ्युपगमिकी अने आपकमिकी वेदने सहन करवानी क्षमता पोताना मनमा जागृत करे छे

-सामर्थ्यं तच्च चतुस्त्रिंशदतिशयरूपम्, तदेवामस्तीति बलिकाः-चतुस्त्रिंशद्विधा-
तिशयसामर्थ्यवन्तः, तथा-कल्यशरीराः-कल्यो-मोक्षः, तत्प्रापकं शरीरं येषां ते
तथा-तद्भवमोक्षगामिन इत्यर्थः, तपःकर्मणि प्रतिपद्यन्ते, कीदृशानि तानी?-
त्याह - “अन्यराइं” इत्यादि - अन्यतराणि - अन्यतमानि,
अनशनप्रभृतिद्वादशविधतपःकर्मणां मध्ये एकतमानि, तथा -
उदाराणि-अप्राप्तवस्तुप्राप्त्यभिलाषरूपाऽऽशंसा-दोषवर्जितत्वेन प्रधानानि, तथा-
कल्याणानि-शिवसुखजनकानि विपुलानि - बहुदिग्बसेभ्योऽनुष्ठिततया बहूनि-

हृष्टादि विशेषणोंका स्पष्टीकरण इस प्रकारसे है, अर्हन्त भगवन्त
इन वेदनाओंके आने परभी हृष्ट हुवे की तरह हर्षसे युक्त रहे क्लान्त
नहीं बने, अतः उन्हें हृष्ट विशेषणसे विशेषित किया गया है, शोकसे
रहित होनेके कारण उन्हें आनन्दित कहा गया है ज्वरादि रोगसे
वर्जित होनेके कारण उन्हें आरोग्य रूपसे प्रकट किया गया है, तथा-३४
अतिशय रूप सामर्थ्यवाले होनेसे उन्हें बलिक किया गया है, और
तद्भव मोक्षगामी होनेसे उन्हें कल्य शरीरवाला कहा गया है.

तपःकर्म उनके कैसे थे यह बात “अन्यतराणि” पदोंसे प्रकट
की गई है उनके तपःकर्म अनशन आदि १२ प्रकारके तपःकर्मोंमेंसे
एकतम थे, ऐसा इस पदसे प्रकट किया गया है।

“उदार” पदसे प्रकट किया गया है कि अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिकी
अभिलाषा रूप आशंसा दोषसे वर्जित होनेके कारण प्रधान थे।

हुवे आ सूत्रमां आवता हृष्टादि विशेषणानो अर्थ स्पष्ट करवामां
आवे छे—

आ वेदनाओ आवी पडी तयारे अर्हन्त लगवान हर्षथी युक्त रह्या
हता, तेथी तेमने ‘हृष्ट’ विशेषणु लगाउथुं छे, शोकथी रहित होवाने कारणु
तेमने आनन्दित कह्या छे, ज्वरादि रोगोथी रहित होवाने कारणु तेमने
आरोग्यरूप (नीरोगी) कह्या छे अने चोत्रीश अतिशय रूप सामर्थ्य वाणा
होवाने लीधे तेमने बलिक कह्या छे आ ओक ज लव पूरो करीने मोक्षगामी
थनारा होवाथी तेमने कल्य शरीरवाणा कह्या छे.

तेमनां तपःकर्म केवां हतां ते “अन्यतराणि” आदि विशेषणुथी प्रकट
करवामां आवेल छे आ पहने भावार्थ आवे छे के तेमनां तपःकर्मो १२
प्रकारना तपःकर्मो वडे ओकतम रूप भनी गयां हता. “उदार” विशेषणु ओ
प्रकट करे छे के तेमनां तपःकर्मो अप्राप्त वस्तुनी प्राप्तिनी अभिलाषारूप
आशंसा दोषथी रहित होवाने कारणु उत्तम हतां. “कल्याणु” पद द्वारा

पाण्मासिकादीनि, प्रयतानि-प्रकृष्टं-प्रमादातिचारादिरहिततया उत्कृष्टं यातं-यत्नो येषु तानि, तथा=प्रमादादिरहिततत्वेनोत्कृष्टयत्नसम्पन्नानि, तथा प्रगृहीतानि-प्रकृष्टेनादरभावेन स्वीकृतानि, महानुभागानि-महान् अनुभागः-अचिन्त्यातिशयो येषु तानि=महाप्रभावयुक्तानि-कर्मक्षयकारणानि-मोक्षसाधकत्वेन कर्मोन्मूलनहेतु-भूतानि, यदि एतादृशानि तपःकर्माणि-घोरतपांसि, अर्हन्तो भगवन्तः प्रतिपद्यन्ते-आचरणीयत्वेनाङ्गीकुर्वन्ति, तर्हि किमहम् ! पुनरहम् आभ्युपगमिकीम्-अभ्युपगमः-शिरोबोचब्रह्मचर्यादीनां स्वीकारः, तत्र भवा आभ्युपगमिकी, तेन निर्वृत्ता-याऽऽभ्युपगमिकी-ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशोल्लुञ्चनातापनादिरूपा, ताम्, तथा-औपकमिकीम्, उपक्रम्यते=क्षीयते आयुरनेनेत्युपक्रमः=ज्वरातिसारप्रभृतिरोगः,

“ कल्याण ” पदसे यह प्रकट किया गया है कि-वे शिवसुख के जनक थे, “ विपुल ” पदसे यह प्रकट किया गया है जो वे बहुत दिनोंसे अनुष्ठित होनेसे पाण्मासिक आदि रूपसे अनेक थे, “ प्रयत ” पदसे यह प्रकट किया है, ये प्रमादादि रहित होनेसे उत्कृष्टयान सम्पन्न थे, “ प्रगृहीत ” से जाना जाय कि-वे अत्यधिक आदरभावसे स्वीकृत हुए थे, “ महानुभाग ” से इनमें अचिन्त्य अतिशय था ऐसा जाना जाता है अर्थात् महाप्रभावयुक्त थे, तथा-मोक्ष साधनभूत होनेके कारण ये कर्मक्षयके कारणभूत थे, अतः-यह संयत विचारता है कि जब ऐसे २-तपःकर्मांको भगवन्तोंने आचरणीय कोटिमें अङ्गीकार कर लिया है तो क्यों मैं आभ्युपगमिकी, ब्रह्मचर्य, भूमिशयन, केशोल्लुञ्चन, आतापना आदि रूपक वेदनाको, एवं-औपकमिकी-ज्वर अतिसार आदि रोगजन्य

ये वात प्रकट थर्ड छे के ते तपःकर्मां शिव सुखना जनक हुता. “ विपुल ” पदथी ये प्रकट करवामां आभ्युं छे के ते धरुा न द्विसोथी अनुष्ठित होवाथी छ मासिक आदि अनेक लांभा हाणवाणा हुतां “ प्रयत ” पद ये प्रकट करे छे के ते प्रमादादिति रहित होवाने कारणे उत्कृष्ट यान सदश हुतां “ प्रगृहीत ” पद ये प्रकट करे छे के ते तपःकर्मानो आदर लावपूर्वक स्वीकार करवामां आभ्यो हुतो. “ महानुभाग ”थी तेमां अचिन्त्य अतिशयता प्रकट थाय छे ओटवे के ते तपःकर्मां महाप्रभाव युक्त हुतां अने मोक्ष साधनभूत होवाने कारणे तेओ कर्मक्षयना कारणभूत हुतां.

ते संयत ओवो विचार करे छे के आवा आवा तपःकर्माने अर्हंत लगवन्तोओ आचरणीय गणीने ओ अंगीकार करी लीधां हुतां तो आभ्युपगमिकी वेदनाने (ब्रह्मचर्य, भूमिशयन, केशोल्लुञ्चन, आतापना आदि जन्य वेदनाने) अने औपकमिकी वेदनाने (ज्वर, अतिसार आदि रोगजन्य वेद-

तत्र भवा=औपक्रमिकी तां वेदनां सम्यग् नो सहे सुखाद्यविकारकरणेन कथं नो सहनं करोमि?, सम्यग् नो क्षमे कोपाभावेन, तथा-सम्यङ् नो तितिक्षे अदीनभावेन, तथा-सम्यङ् नो अध्यासयामि-अध्यासोऽवस्थानं तं न करोमीत्यध्यासयामि, तस्यामेव वेदनायां निश्चलतया कथं न तिष्ठामि? च=पुनः मम खलु आभ्युपगामिकीम् औपक्रमिकीं च वेदनाम्, असहमानस्य-अक्षममाणस्य, अतितिक्षमाणस्य अनध्यासयतश्च किं 'मन्त्रे' इति मन्ये, अयं वितर्काथो निपातः क्रियते? = किं भवति? इति वितर्के प्राह-"एगंतसो" इत्यादि, मे मम एकान्तश-एकान्तेन-सर्वथा पापं कर्म क्रियते भवति । तथा च तामेव वेदनां सम्यक् सहमानस्य क्षममाणस्य तितिक्षमाणस्य अध्यासयतश्च मम खलु किं क्रियते? - किं भवति?, एकान्तशो मम निर्जरा क्रियते भवति । इति चतुर्थी सुखशय्या । सू० २७ ॥

वेदनाको जो कि-आयुःक्षयका साधन है "नो सहे" भली भांति सुखादिके ऊपर उदासीनता लाये बिना ही मध्यस्थ भावते नहीं सहूं, "नो क्षमे" क्रोधादिका अभाव करके अभिवादनपूर्वक सम्यक् प्रकारसे क्यों न सहूं "नो तितिक्षे" अच्छी तरह बिना दीनता दरसाये क्यों न मध्यस्थ भावसे सहूं, "नो अध्यासयामि" क्यों न उसे सहन करनेके लिये मैं डटा रहूं-अडोल रहूं, यदि मैं ऐसा नहीं करूंगा तो मुझे सर्वथा ज्ञानावरणीयादि कर्मसे दुःखरूपी कैदखानेमें रहना पडेगा मैं कर्मोंसेही लिस बना रहूंगा और जो उस वेदना आदिको सह लेता हूं तो एकान्ततः मेरे कर्मोंकी निर्जरा हो जाती है इस प्रकारकी विचारधारा रूप यह चतुर्थी सुखशय्या है ॥ सू० २७ ॥

नाने) शा माटे हुं समताभावे सहन न करूं? तेने जेवे विचार आवे छे के आ वेदनाज्यो तो कर्मनिर्जरा करीने आयुष्य कर्मनो क्षय करनारी छे. "नो सहे" । तो ते वेदनाने शा माटे समता लावपूर्वक-भुआदि पर उदासीनतानो लाव लाव्या बिना हुं सहन न करूं? "नो क्षमे" क्रोधादिना त्यागपूर्वक अलिवादनपूर्वक तेने केम सहन न करूं। "नो तितिक्षे" अदीन भावे-मध्यस्थ भावे तेने शा माटे सहन न करूं। "नो अध्यासयामि" तेने सहन करवाने शा माटे दृढतापूर्वक तत्पर न भनुं। जे हुं जेवुं नही करूं तो मारे ज्ञानावरणीय आदि कर्मरूपी कारागृहमां दुःख सहन करवुं पडसे-हुं कर्मोनुं आवरणु उठाववाने समर्थ थछ शक्य नही. जे हुं ते वेदना आदिने समता भावे सहन करी लथश तो मारे कर्मोनी एकान्त रूपे निर्जरा थछ नसे. आ प्रकारनी विचार धाराथी प्रेरणने ते धर्मभ्रष्ट थतो नथी, पणु धर्मनो आराधक भनीने पोतानो संसार धटाडे छे. । सू २७ ।

पूर्व दुःखशय्याः सुखशय्याश्चोक्ताः तद्वन्तो गुणरहिता गुणसम्पन्नाश्च भवन्ति, तदर्थं किं करणीयम् ? इति दर्शयितुं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चत्वारि अवायणिज्जा पणत्ता, तं जहा—अविणीए १, विगइपडिबद्धे २, अविओसवियपाहुडे ३, साई ४।

चत्वारि वायणिज्जा पणत्ता, तं जहा—विणीए १, अवि-
गइ—पडिबद्धे २, विओसवियपाहुडे ३, अमाई ४। सू० २८ ॥

छाया—चत्वारोऽवाचनीयाः प्रज्ञाः, तद्यथा, अविनीतः १, विकृतिप्रति-
बद्धः २, अव्यवशमितप्राभृतः ३, मायी ४।

चत्वारो वाचनीयाः प्रज्ञाः, तद्यथा—विनीतः १, अविकृतिप्रतिबद्धः २, व्यव-
शमितप्राभृतः ३, अमायी ४। सू० २८ ॥

टीका—“ चत्वारि अवायणिज्जा ” इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-अवाचनीयाः-
वाचनाया अयोग्याः अविनीतः-विनयरहितः १, विकृतिप्रतिबद्धः-विकृतिः-

ये कही गई दुःखशय्याओंवाले गुणरहित और गुणसम्पन्न जीव
होते हैं इसकेलिये क्या करणीय है इस बातको दिखानेके लिये सूत्र-
कार कहते हैं “ चत्वारि अवायणिज्जा पणत्ता ” इत्यादि २८

चार अवाचनीय कहे गये हैं जैसे अविनीत-१, विकृति प्रतिबद्ध
२ अव्यवशमित प्राभृत-३ और मायी-४, जो वाचनाके अयोग्य होते
हैं वे अवाचनीय हैं। जो विनय रहित होते हैं-वे अविनीत हैं-२
घृतादि रूप विकृति विगयसे जो प्रतिबद्ध होते हैं, आसक्त होते हैं
वे विकृतिप्रतिबद्ध हैं और जिनका आया हुवा तीव्र क्रोध उपशान्त

ઉપશુદ્ધિ દુઃખશય્યાઓવાળા ગુણરહિત અને ગુણસંપન્ન જીવ હોય
છે તેમને માટે શું કરવું જોઈએ તે વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે
છે કે—“ ચત્તારિ અવાયણિજ્જા પણત્તા ” ઇત્યાદિ (૨૮)

ચાર અવાચનીય કહ્યા છે—જેમકે (૧) અવિનીત, (૨) વિકૃતિ પ્રતિબદ્ધ
(૩) અવ્યવશમિત પ્રાભૃત અને (૪) માયી. જે જીવો વાચનાને યાત્ર હોતા
નથી તેમને અવાચનીય કહે છે. જેઓ વિનયરહિત હોય છે તેમને અવિનીત
કહે છે. ધી આદિ ૩૫ વિકૃતિમાં જેઓ પ્રતિબદ્ધ (આસક્ત) હોય છે તેમને
વિકૃતિપ્રતિબદ્ધ કહે છે. જેનો ક્રોધ અતિ તીવ્ર હોય છે જેનો ક્રોધ કોઈ
પથ પ્રકારે ઉપશાન્ત થતો નથી તેને અનુપશાન્ત ક્રોધ સમાપન્ન અથવા તીવ્ર

घृतादिरूपा, तत्र प्रतिवद्धः-आसक्तः २, अव्यवशमितप्राभृतः-अव्यवशमितम्-
अनुपशान्तं प्राभृतं-प्राभृतमिव प्राभृतम्-उपायनवदागतं तीव्रक्रोधरूप वस्तु यस्य
स तथा=अनुपशान्तकोपसम्पन्नः ३, मायी-माया-कपटमस्यास्तीति मायी-छल-
युक्तः ४। इति ।

तथा चत्वारो विनीतादयो वाचनाया योग्या भवन्ति, इति प्रदर्शयति-चत्वारि
वायणिज्जा " इत्यादिना, स्पष्टमेतत्, न्वरं-विनीतः-विनयसम्पन्नः १, अविकृ-
तिप्रतिवद्धः-घृतादिविकृत्यनासक्तः, व्यवशमितप्राभृतः-कोपवर्जितः ३, अमायी-
मायारहितः ४। इति । सू० २८ ।

पूर्वं वाचनीया अवाचनीयाश्च पुरुषा अभिहिताः, सम्प्रति पुरुषाधिकारात्
पुरुषविशेषान् प्रतिपादयितुं चतुर्दश चतुर्भङ्गीप्रतिवद्धं सूत्रप्रबन्धमाह—

मूळम्-चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-आयंभरे णाम-
मेगे णो परंभरे १, परंभरे णाममेगे णो आयंभरे २, एगे आयं-
भरेऽवि परंभरेऽवि ३, एगे णो आयंभरे णो परंभरे ४ (१)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे
दुग्गए १, दुग्गए णाममेगे सुग्गए २, सुग्गए णाममेगे दुग्गए
३, सुग्गए णाममेगे सुग्गए ४ (२)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे
दुव्वए १, दुग्गए णाममेगे सुव्वए २, सुग्गए णाममेगे दुव्वए
३, सुग्गए णाममेगे सुव्वए ४। (३)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे
दुप्पडियाणंदे १, दुग्गए णाममेगे सुप्पडियाणंदे० ४, (४)

नहीं होना है वे अनुपशान्त कोप समापन्न हैं, अर्थात् तीव्र क्रोधी हैं ।
छल-कपटवाले जो होते हैं वे मायी हैं । इनसे विपरीत जो हों, अर्थात्
विनीत आदि होते हैं वे वाचनाके योग्य हैं ॥ सू० २८ ॥

क्षोधी कडे छे वेअो छणकपटवाणा डोय छे तेभने भायी कडे छे अविनीत
आदिथी विपरीत अेटवे के विनीत आदि लोवे वाचनाने योग्य गणाय छे । सू० २८।

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे
दुग्गइगासी १, दुग्गए णाममेगे सुग्गइगासी० ४, (५)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-दुग्गए णाममेगे
दुग्गइं गए १, दुग्गए णाममेगे सुग्गइं गए २, (६)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तमे
१, तमे णाममेगे जोई २, जोई णाममेगे तमे ३, जोई णाम-
मेगे जोई ४। (७)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तम-
बले १, तमे णाममेगे जोइबले २, जोई णाममेगे तमबले ३,
जोई णाममेगे जोइबले ४ (८)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--तमे णाममेगे तम-
बलपलज्जणे १, तमे णाममेगे जोइबलपलज्जणे० ४। (९)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--परिणायकम्मे
णाममेगे णो परिणायसन्ने १, परिणायसन्ने नाममेगे नो परि-
णायकम्मे, २, एगे परिणायकम्मेऽवि परिणायसन्नेऽवि ३।
एगे नो परिणायकम्मे नो परिणायसन्ने ४। (१०)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--परिणायकम्मे
णाममेगे णो परिणायगिहावासे, परिणायगिहावासे णाममेगे
णो परिणायकम्मे० ४। (११)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--परिन्नायसन्ने नाम-
मेगे नो परिन्नायगिहावासे, परिन्नायगिहावासे णाममेगे नो
परिन्नायसन्ने० ४। (१२)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-इहत्थे णाममेगे णो परत्थे १, परत्थे णाममेगे णो इहत्थे० ४। (१३)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-एगेणं णाममेगे वड्डइ एगेणं हायइ १, एगेणं णाममेगे वड्डइ दोहिं हायइ २, दोहिं णाममेगे वड्डइ एगेणं हायइ ३, दोहिं णाममेगे वड्डइ दोहिं हायइ (१४) ॥ सू० २९ ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आत्मम्भरिनामैको नो परभरः १, परभरो नामैको नो आत्मम्भरिः २, एक आत्मम्भरिरपि परभरोऽपि ३ एको नो आत्मम्भरिर्नो परभरः ४। (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा दुर्गतो नामैको दुर्गतः १, दुर्गतो नामैकः सुगतः २, सुगतो नामैको दुर्गतः ३, सुगतो नामैकः सुगतः ४। (२)

पुरुष विशेषोक्ता प्रतिपादन करनेके लिये अब सूत्रकार चतुर्दशभङ्गी प्रतिबद्ध सूत्र प्रबन्धका कथन करतेहैं—“चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता” इत्यादि सूत्रार्थ—पुरुष जात चार कहे गयेहैं जैसे आत्मम्भरि नो परभर १ परभर नो आत्मम्भरि-२ आत्मभर भी परभरभी-३ नो आत्मम्भरि नो परभर-४ ॥ १ ॥

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गत नामवाला १ दुर्गत सुगत नामवाला २ सुगत दुर्गत नामवाला ३ और सुगत सुगत नामवाला ४ (२)

पुरुष विशेषोक्तुं प्रतिपादन करवाने भाटे डवे सूत्रकार १४ लांशाओथी प्रतिबद्ध सूत्रोक्तुं कथन करे छे—“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि—

सूत्रार्थ—चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) आत्मंभरी नो परभर (स्वार्थ साधकने आत्मभरी अने परार्थसाधकने परभर कहे छे) (२) परभर नो आत्मंभरि, (३) आत्मभर अने परभर अने (४) नो आत्मंभरि नो परभर (१)

आ प्रमाणे पणु चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) दुर्गत दुर्गत नामवाणे, (२) दुर्गत सुगत नामवाणे, (३) सुगत-दुर्गत नामवाणे अने (४) सुगत सुगत नामवाणे (२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—दुर्गतो नामैको दुर्व्रतः १, दुर्गतो नामैकः सुव्रतः २, सुगतो नामैको दुर्व्रतः ३, सुगतो नामैकः सुव्रतः ४, (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—दुर्गतो नामैको दुष्प्रत्यानन्दः १, दुर्गतो नामैकः सुप्रत्यानन्दः ४। (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—दुर्गतो नामैको दुर्गतिगामी १, दुर्गतो नामैकः सुगतिगामी० ४। (५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा,—दुर्गतो नामैको दुर्गति गतः १, दुर्गतो नामैकः सुगति गत० ४। (६)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तमो नामैकस्तमः १, तमो नामैको ज्योतिः २, ज्योतिर्नामैकस्तम ३, ज्योतिर्नामैको ज्योतिः ४। (७)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्व्रत १ दुर्गत सुव्रतर सुगत दुर्व्रत ३ और सुगत-सुव्रत ४ (३)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुष्प्रत्यानन्द-१ दुर्गत सुप्रत्यानन्द० (४)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गतगामी-१ दुर्गत सुगतिगामी० ४ (५)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, दुर्गत दुर्गतिगत-१ दुर्गत सुगतिगत० ४ (६)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, तमस्तम स्वरूप १ तमो ज्योतिः स्वरूप २ ज्योतिस्तमः स्वरूप ३ ज्योतिर्ज्योतिः स्वरूप ४ (७)

वर्णा पुरुषना आ प्रभाषे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) दुर्गत-दुर्व्रत, (२) दुर्गत-सुव्रत, (३) सुगत-दुर्व्रत अने (४) सुगत-सुव्रत (३)

आ प्रभाषे पणु चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे—(१) दुर्गत-दुष्प्रत्यानन्द, (२) दुर्गत सुप्रत्यानन्द धत्यादि चार प्रकार. (४)

आ प्रभाषे पणु चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे—(१) दुर्गत-दुर्गतगामी, (२) दुर्गत-सुगतगामी धत्यादि चार प्रकार (५)

आ प्रभाषे पणु चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे—(१) दुर्गत-दुर्गतिगत, (२) दुर्गत-सुगतिगत धत्यादि चार प्रकार (६)

आ प्रभाषे चार प्रकारना पुरुषो पणु कह्या छे—(१) तमस्तम स्वरूप (२) तमो ज्योतिस्वरूप, (३) ज्योतिस्तम स्वरूप अने (४) ज्योति ज्योति स्वरूप (७)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तमो नामैकस्तमोबलः १, तमो नामैको ज्योतिर्वलः २, ज्योतिर्नामैकस्तमोबलः ३, ज्योतिर्नामैको ज्योतिर्वलः ४ (८)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तमो नामैकस्तमोबलः प्रज्वलनः १, तमो नामैको ज्योतिर्वलः प्रज्वलनः ४। (९)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—परिज्ञातकर्मा नामैको नो परिज्ञातसंज्ञः १, परिज्ञातसंज्ञो नामैको नो परिज्ञातकर्मा २, एकः परिज्ञातकर्माऽपि परिज्ञातसंज्ञोऽपि ३, एको नो परिज्ञातकर्मा नो परिज्ञातसंज्ञः ४। (१०)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—परिज्ञातकर्मा नामैको नो परिज्ञातगृहाऽऽवासः १, परिज्ञातगृहाऽऽवासो नामैको नो परिज्ञातकर्मा ० ४। (११)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—परिज्ञातसंज्ञो नामैको नो परिज्ञातगृहाऽऽवासः १, परिज्ञातगृहाऽऽवासो नामैको नो परिज्ञातसंज्ञः ० ४। (१२)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे तमस्तमोबल १ तमो ज्योति बल २ ज्योति तमो बल ३ और ज्योति ज्योतिबल ४ (८)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे तमोबल प्रज्वलन १ तमो ज्योतिबल प्रज्वलन ० ४ (९)

पुनश्च पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात संज्ञ १ परिज्ञात संज्ञ नो परिज्ञात कर्मा २ परिज्ञात कर्मा भी परिज्ञात संज्ञ भी ३ और नो परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात संज्ञ ० ४ (१०)

पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे परिज्ञात कर्मा नो परिज्ञात गृहावास १ परिज्ञात गृहावास नो परिज्ञात कर्मा ० ४ (११)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे परिज्ञात संज्ञ नो परिज्ञात गृहावास १ परिज्ञात गृहावास नो परिज्ञात संज्ञ ० ४ (१२)

पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) तमस्तमो बल, (२) तमो ज्योतिबल, (३) ज्योति तमोबल अने (४) ज्योति ज्योतिबल (८)

पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) तमोबल प्रज्वलन, (२) तमो ज्योतिबल प्रज्वलन इत्यादि चार प्रकार (९)

नीचे प्रमाणे चार पुरुष प्रकार पणु दृष्टा छे—(१) परिज्ञातकर्मा नो परिज्ञात संज्ञ (२) परिज्ञात संज्ञ नो परिज्ञात कर्मा, (३) परिज्ञातकर्मा अने परिज्ञात संज्ञ (४) नो परिज्ञातकर्मा नो परिज्ञात संज्ञ (१०)

पुरुषोना आ प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) परिज्ञातकर्मा नो परिज्ञात गृहावास, (२) परिज्ञात गृहावास नो परिज्ञात कर्मा इत्यादि चार प्रकार. (११)

पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) परिज्ञात संज्ञ

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-इहार्थो नामैको नो परार्थः १, परार्थो नामैको नो इहार्थः० ४। (१३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकेन नामैको वर्धते एकेन हीयते १, एकेन नामैको वर्धते द्वाभ्यां हीयते० ४। (१४) सू० २९।

टीका—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः-कश्चित् पुरुषः आत्मम्भरिः-आत्मानं विभर्ति-पुष्णातीति आत्मम्भरिः-स्वार्थकारको भवति, किन्तु नो परंभरः-परार्थसाधको न भवति, स च जिनकल्पिकः । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-एकः परमरो भवति न तु आत्मम्भरिः, स च परार्थसाधको भगवानर्हन्, तस्य सकलस्वार्थसमाप्त्या परेषां पर-

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे इहार्थ नो परार्थ १ परार्थ नो इहार्थ० ४ (१३)

फिरभी—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे एकसे वर्द्धमान, एकसे हीयमान १ एकसे वर्द्धमान दोसे हीयमान० ४ (१४)

इस २९ सूत्रका सारांश ऐसा है प्रथम इसके सूत्रमें जो पुरुष जात चार प्रकार के प्रकट किये गये हैं, उनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल आत्मंभरि होता है-अपनाही पोषण करने-वाला होता-स्वार्थ साधक होता है परार्थ साधक नहीं होता है अर्थात् स्वार्थी १ इस भंग में जिनकल्पिक साधु आते हैं ।

द्वितीय भंग में परार्थ साधक भगवान् अर्हन्त आते हैं क्योंकि ये आत्मंभरि नहीं होते हैं परार्थ साधक होते हैं । इनमें सकल स्वार्थ

नो परिज्ञात गृह्णावास, (२) परिज्ञात गृह्णावास नो परिज्ञात संज्ञ धत्यादि चार प्रकार (१२)

नीचे प्रमाणे चार प्रकारना पुरुषो पणु कथा छे—धृतार्थ नो परार्थ, (२) परार्थ नो धृतार्थ धत्यादि चार प्रकार (१३)

पुरुषना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) अकर्मा वर्द्धमान अकर्मा हीयमान, (२) अकर्मा वर्द्धमान अने भिमां हीयमान धत्यादि ते चार प्रकारो. (१४)

पडेला सूत्रनो भावार्थ—पडेला भांगनो भावार्थ निचे प्रमाणे छे—कोई एक पुरुष अवे होय छे के ने केवल आत्मंभरि (पोतानुं न पोषणु करनारो अथवा स्वार्थ साधक) होय छे, पणु परार्थसाधक होतो नथी. जिन कल्पिक साधुने आ प्रकारमां गणुवी शकय.

भील भांगनो भावार्थ—कोई एक पुरुष अवे होय छे के ने परार्थ साधक होय छे पणु स्वार्थसाधक होतो नथी. आ प्रकारमां अर्हन्त भगवान

मानन्दसन्दोहप्रापकत्वात् । इति द्वितीयो भङ्गः । २ । तथा—एकः पुरुषः आत्म-
म्भरिः परमरश्च भवति, स च स्वपरार्थकारी स्थविरकल्पिकः, तस्य विहितानुष्ठा-
नेन स्वार्थकारित्वाद् विधिवत् सिद्धान्तदेशनया च परार्थकारित्वात् । इति तृतीयः
। ३ । तथा—एको नाऽऽत्मम्भरिर्न च परमरः, सचोभयानुपकारी सुग्धबुद्धिः
कोऽपि पुरुषः । यद्वा—यथाच्छन्दः । इति चतुर्थ ४ । इदं भङ्गचतुष्टयं लोकोत्तर-
पुरुषमपेक्ष्य । लौकिकपुरुषापेक्षयाऽपि यथायोग्यं भङ्गचतुष्टयं योजयितव्यम् ।
। ४ । (१)

समाप्त हो जाते हैं और ये दूसरों को परमानन्द संदोह के प्राप्त करने-
वाले होते हैं । तृतीय भंग में स्वपरार्थकारी स्थविरकल्पिक आता है
क्योंकि धार्मिक अनुष्ठानों से यह अपना भी भला करता है और
विधिवत् सिद्धान्तकी देशना द्वारा अन्य जीवोंका भी भला करता है ।
चतुर्थ भंगमें स्वपर अनुपकारी कोई भी सुग्ध बुद्धिवाला (विवेक रहित)
पुरुष आता है क्योंकि ऐसा पुरुष न आत्मंभरि होता है और न परका
हित साधक होता है अथवा जो स्वेच्छाचारी होता है वह भी हम
भंगके अन्तर्गत होता है ये इस प्रकार के चार भंग लोकोत्तर पुरुषकी
अपेक्षा से व्याख्यात किये हैं । पर जो लौकिक पुरुष हैं उनकी अपेक्षा
से भी इनका यथायोग्य व्याख्यान करना चाहिये (१)

आवी नय छे कारण्यु के तेवो स्वार्थसाधक होता नथी पणु परार्थसाधक
होय छे परमानन्द संदोह (समूह) प्राप्ति करवावना होय छे.

त्रीण भांगामां स्वार्थसाधक अने परार्थसाधक स्थविर कल्पिकने गणुानी
शकय छे, कारण्यु के धार्मिक अनुष्ठानोथी तेवो पोतानुं पणु ललुं करे छे
अने सिद्धान्तनी देशना द्वारा अन्य लोकोत्तर पणु ललुं करे छे.

स्वपर अनुपकारी केथ पणु सुग्ध बुद्धिवाणा (विवेक रहित) पुरुषने
थेथा भांगामां समावेश थाय छे कारण्यु के तेवो पुरुष आत्मंभरि (स्वार्थ
साधक—पोतानुं हित साधनारे) पणु होतो नथी अने अन्यनुं हित साध
नारे पणु होतो नथी. अथवा जे स्वेच्छाचारी (स्वच्छंदी) होय छे तेने पणु
आ भांगामां समावेश थाय छे. लोकोत्तर पुरुषोनी अपेक्षाये आ चार
भांगानुं प्रतिपादन करवामां आण्युं छे. लौकिक पुरुषोनी अपेक्षाये पणु
आ चार भांगानुं यथायोग्य कथन थपुं लेथये.

અનન્તરં ચતુર્થમન્ને ઉભયાનુપકારી ષોક્તઃ, સ ચ દુર્ગત એવ મ્વિતુમર્હતીતિ દુર્ગતં નિરૂપયિતુમાહ—“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરમ્-એકઃ પુરુષો દુર્ગતઃ-પૂર્વે ધનહીનત્વાત્ જ્ઞાનાદિરત્નહીનત્વાદ્વા દરિદ્રઃ, સ એવ પશ્ચાદપિ દુર્ગતઃ, અથવા-પૂર્વે દ્રવ્યતો દુર્ગતઃ, પશ્ચાદ્ ભારતો દુર્ગતો મ્વતીતિ પ્રથમો મજ્જઃ । ૧ । એવં શેષમજ્જત્રયં વોધ્યમ્ । તત્ર કેવલં સુગતઃ-દ્રવ્યતો ધનસમ્પન્નઃ, ભાવતસ્તુ જ્ઞાનાદિરત્નસમ્પન્નઃ સુગતપદેન વોધ્યઃ । ૧ । (૨)

પૂર્વે દુર્ગત ઁક્તઃ, સ ચ કશ્ચિદ્ વ્રતી મ્વિતુમર્હતીતિ દુર્ગતમ્ત્રં નિરૂપયિતુમાહ—“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરમ્-એકઃ પુરુષઃ દુર્ગતઃ-

યહાં ચતુર્થ મજ્જ મેં જો દોનોંકે અનુપકારી કહ્લા ગયા હે વહ દુર્ગતા (દરિદ્ર)હી હો સક્તાહૈ અતઃઅવ મ્ત્રકાર ઁસ દુર્ગતકી નિરૂપણા કરતે હુમ્ કહતે હૈં કિ કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈં જો પહિલે સે હી ધન હીન હોતા હૈં અથવા જ્ઞાનાદિ રૂપ રત્નસે રહિત હોતા હૈં દરિદ્ર હોના હૈં ઁર ઁગે ચલકર મી એસા હી ધના રહતા હૈં અથવા પહિલે જો દુર્ગત દ્રવ્ય કી અપેક્ષા દરિદ્ર હોતા હૈં ઁાદ મેં ભાવકી અપેક્ષા મી વહ દુર્ગત ઘન જાતા હૈં એસા વહ પુરુષ દ્વિતીય સૂત્રગત પ્રથમ મંગ મેં ગિના ગયા હૈં હસી પ્રકાર સે શેષ મંગત્રય મી કથિત કર લેના ચાહિયે સુગત સુગત નામકા જો યહાં મંગ હૈં ઁસકા તાત્પર્ય એસા હૈં કિ કોઈ એક એસા હોતા હૈં જો દ્રવ્યસે સુગત સંપન્ન હોતા હૈં ઁર જ્ઞાનાદિ રત્નરૂપ ભાવસે મી સંપન્ન હોતા હૈં (૨)

અહીં ચોથા ભાગમાં જે બન્નેના અનુપકારી પુરુષ કહ્યો છે તે દુર્ગતા જે હોઈ શકે છે. તેથી હવે સૂત્રકાર તે દુર્ગતની પ્રશ્નણા કરે છે—

કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલેથી જ ધનહીન હોય છે અથવા જ્ઞાનાદિ રૂપ રત્નોથી રહિત હોય છે-દરિદ્ર હોય છે-અને ભવિષ્યમાં પણ એવો જ ચાલુ રહે છે અથવા પહેલા જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દુર્ગત હોય છે તે પાછળથી ભાવની અપેક્ષાએ પણ દુર્ગત બની જાય છે. એવા પુરુષનો બીજા સૂત્રના પ્રથમ ભાગમાં સમાવેશ થાય છે. એજ પ્રમાણે બાકીનાં ત્રણ ભાગોનો ભાવાર્થ પણ સમજી લેવો.

અહીં “ સુગત-સુગત ” નામનો જે ભાગો છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ સુગત સંપન્ન હોય છે અને જ્ઞાનાદિ રત્નરૂપ ભાવથી પણ સંપન્ન હોય છે.

दरिद्रः सन् दुर्व्रतः—असम्यग्रतो भवति, यद्वा—‘दुव्वए’ इत्यस्य दुर्व्यय इत्यर्थः, स चाऽऽयनिरपेक्षव्ययः, यद्वा—कुस्थानव्यय इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा एकः पुरुषो दुर्गतः सन् सुव्रतः—निरतिचारनियमो भवति, यद्वा—सुव्ययः—सुस्थाने समुचितव्ययकारको भवति । इति द्वितीयः । २ । तथा—एकः सुव्रतः सन् दुर्व्रतो दुर्व्ययो वा भवति, इति तृतीयः । ३ । तथा—एकः सुव्रतः सुव्ययो वा सन् पश्चादपि सुव्रत एव सुव्यय एव वा भवति । इति चतुर्थः । ४ । (३)

“चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एको दुर्गतः सन् दुष्प्रत्यानन्दः—दुःखेन प्रत्यानन्द्यते—आनन्दं प्राप्यत

तृतीय सूत्रगत जो चार भंग हैं दुर्गत दुर्व्रत आदि रूपसे कहे गये हैं उनका तात्पर्य ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दरिद्र होता है और सम्यग्र व्रतसे रहित भी होता है अथवा—“दुव्वए” की संस्कृतच्छाया “दुर्व्यय” ऐसी भी होती है ऐसा व्यक्ति आय निरपेक्ष व्यय करता है अथवा—कुस्थान में व्यय करता है । कोई एक व्यक्ति ऐसा भी होता है जो दुर्गत होता हुआ भी नियतिचार नियम-वाला होता है अथवा—सुस्थानमें समुचित व्यय करनेवाला होता है अथवा अपनी आमदनीके अनुसार व्यय करता है तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो सुव्रत संपन्न होकर भी दुर्व्ययकारक सावध व्यापार में द्रव्यादि लगानेवाला होता है और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुव्रत संपन्न ही होता है और सुव्ययकारक भी होता है (३)

श्रील सूत्रना चार भांगानुं स्पष्टीकरण—(१) दुर्गत—दुर्व्रतने भावार्थ कोष्ठ ओक पुरुष ओवे डोय छे के ने दरिद्र पणु डोय छे अने सम्यग्रव्रतधी रहित पणु डोय छे अथवा “दुव्वए” आ पठनी संस्कृत छया “दुर्व्यय” दुर्व्यय थाय छे आ संस्कृत छया प्रभाणु आ भांगाने नीचे प्रभाणु भावार्थ थाय छे—कोष्ठ पुरुष ओवे डोय छे के ने पोताना धनने दुर्व्यय करे छे अथवा आवकने विचार कर्या विता अर्थ करे छे, अने सम्यग्रव्रतधी पणु रहित डोय छे. (२) कोष्ठ ओक पुरुष ओवे डोय छे के ने दुर्गत डोवा छतां पणु निरतिचार नियमवाणे डोय छे, अथवा सुस्थानभां समुचित व्यय करनारे डोय छे अथवा पोतानी आमदानी प्रभाणु व्यय करनारे डोय छे कोष्ठ ओक पुरुष ओवे डोय छे के ने सुव्रत, संपन्न डोवा छतां पणु दुर्व्यय-कारक सावध व्यापारभां द्रव्यादिने व्यय करनारे डोय छे (३) कोष्ठ ओक पुरुष ओवे डोय छे के ने सुव्रत संपन्न पणु डोय छे अने सुव्ययकारक पणु डोय छे.

इति दुष्प्रत्यानन्दः—उपकारिणा कृतमुपकारं नाभिमन्यते तथाविधो भवति १, तथा—एकः पुरुषो दुर्गतः=दरिद्रः सन्नपि सुप्रत्यानन्दः—उपकृतजनकृतोपकारमन्ना भवति २। एकः सुगतो दुष्प्रत्यानन्दो भवति ३। एकः सुगतः सुप्रत्यानन्दो भवति । ४। (४)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि पञ्चानि, तद्यथा—दुर्गतो नामैकः पुरुषो दुर्गतिगामी—दुर्गति—नरकादिगतिं गमिष्यतीति दुर्गतिगामी=नरकतिर्यगादिक्लमत्रिगमनशीलो भवति १। तथा—एको दुर्गतः सुग-

चतुर्थं सूत्रगतं जो चार भंग प्रकट क्रिये गये हैं—उनका तात्पर्य ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दुर्गत होता है और बड़ी कठिनता से आनन्द को प्राप्त कराया जाता है ऐसा मनुष्य उपकारियोंके उपकार को नहीं मानता है तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दुर्गत तो होता है पर उपकार करनेवाले के उपकारको मानता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत धनादि संपन्न होता है पर वह दुष्प्रत्यानन्द (आनन्दित) नहीं होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत भी होता है सुप्रत्यानन्द भी होता है उपकार करनेवाले के उपकारको माननेवाला भी होता है (४)

पाँचवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है कि एक पुरुष ऐसा भी होता है जो दुर्गत दरिद्र होता है और दुर्गतिगामि नरकादि गतिमें जावेगा ऐसा होता है १ नरक—तिर्यग्

यथा सूत्रना आर लांगानुं स्पष्टीकरषु—(१) कौं अक पुरुष अवेो डाय छे के ने दुर्गत डाय छे अने धणी मुशकेदीथी आन'दित करी शकय अवेो डाय छे अवेो पुरुष उपकारीअना उपकारने न मानतो नथी (२) कौं पुरुष अवेो डाय छे के ने दुर्गत तो डाय छे पणु उपकारीअनेो उपकार माननारेो डाय छे. (३) कौं अक पुरुष अवेो डाय छे के ने सुगत (धनादिथी संपन्न) डाय छे, पणु धणी मुशकेदीथी पुश करी शकय अवेो अथवा उपकारीनेो उपकार न माननारेो डाय छे. (४) कौं अक पुरुष अवेो डाय छे के ने सुगत पणु डाय छे अने सरणताथी पुश करी शकय अवेो अथवा उपकारीनेो उपकार माननारेो पणु डाय छे.

पाँचवां सूत्रना आर लांगानो लावार्थ—(१) कौं पुरुष दुर्गत (दरिद्र) पणु डाय छे अने दुर्गतिगामी (नरकादि गतिमां ननारेो) पणु डाय छे.

(नरक आदि दुर्गतिमां नवाना स्वभाववाणा पुरुषने दुर्गतिगामी कडे

तिगामी-देवादि सुगतिगमनशीलो भवति । २ । तथा-एकः सुगतो दुर्गतिगामी भवति ३ । तथा-एकः सुगतः सुगतिगामी भवति । ४ । (५)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः पूर्वं दुर्गतः पश्चादपि दुर्गति-दुष्टगतिं गतः-प्राप्तो भवति, मृगापुत्रवत् १ । एतद्वर्णनं दुःखविपाकस्य प्रथमाध्ययनतोऽवसेयम् । १ । एकः पूर्वं दुर्गतः पश्चात् सुगति-शोभनगतिं गतो भवति दृढप्रहारिचौरवत् । २ । तथा-एकः सुगतो दुर्गतिं गतो भवति सुभूमनामकाष्टमचक्रवर्तिवत् ३ । तथा-एकः पूर्वं सुगतः पश्चादपि सुगतिं गतो भवति भरतचक्रवर्तिवत् । ४ । (६)

आदि दुर्गतियोंमें जिसके जानेका स्वभाव होता है ऐसा होता है । तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो दुर्गत-दरिद्र तो होता है पर वह सुगतिगामी होता है-देवादि गतियों में जानेके स्वभाववाला होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत धनादि संपन्न होता है और दुर्गतिगामी भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सुगत भी होता है और सुगतिगामी भी होता है ४ (५)

छट्टे सूत्र में जो पुरुषजात कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो मृगापुत्रकी तरह पहिले से भी दुर्गत होता है और पश्चादपि वह दुर्गतिको ही प्राप्त होता है इसके दुःखविपाकका वर्णन विपाक सूत्रके प्रथम अध्ययन से जान लेना चाहिये १, दृढ प्रहारि चौर की तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो दुर्गत होता है और बादमें वह शोभनगतिको प्राप्त होता है २ सुभूमनामक अष्टमचक्रवर्ती की तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता

छे (२) कोछ ओक पुरुष दुर्गत (दरिद्र) तो होय छे पण सुगतिगामी (देवादि गतिओमां गमन करवाना स्वभाववाणो) होय छे. (३) कोछ ओक पुरुष ओवो होय छे के जे सुगत (धनादिथी संपन्न) तो होय छे पण दुर्गतिगामी होय छे (४) कोछ ओक पुरुष सुगत पण होय छे अने सुगतिगामी पण होय छे.

छहा सूत्रना चार लांगाओनुं स्पष्टीकरण—(१) कोछ ओक पुरुष ओवो होय छे के जे मृगापुत्रनी जेम पडैलां पण दुर्गत होय छे अने पाछणथी पण दुर्गतिने प्राप्त करनारो होय छे. तेना दुःख विपाकनुं वर्णन विपाक सूत्रना प्रथम अध्ययनभाथी वांथी लेवुं. (२) दृढप्रहारी चौरनी जेम कोछ ओक पुरुष पडैलां तो दुर्गत होय छे पण पाछणथी सुगतिने प्राप्त करनारो होय छे (३) सुभूम नामना आठमां चक्रवर्तीनी जेम कोछ पुरुष पडैलां

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि पञ्चानि, तत्रथा—एकः पुरुषः तमः—तम इव तमः—पूर्वमन्धकारतुल्यो भवति, ज्ञानरहितत्वात् प्रकागरहितत्वाद्वा, स पश्चादपि तमः—तमःसदृश एव भवतीति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एकः तमः पूर्वं ज्ञानरहितत्वेन प्रसिद्धिरहितत्वेन वा तमस्तुल्यो भवति, स एव पश्चाद् ज्योतिः—ज्योतिरिव ज्योतिः=ज्योतिःसदृशो भवति, उपार्जितज्ञानत्वात् लोके औदार्यादिगुणैः प्रसिद्धिप्राप्तत्वाद्वा इति द्वितीयः । २ । तथा—एको ज्योतिः—पूर्वं ज्ञानसम्पन्नत्वेन ज्योतिस्तुल्यो भवति, स एव पश्चात् तमः—ज्ञानरहितत्वेन तमस्तुल्यो भवति । इति तृतीयः ३ । तथा—एकः पूर्वं ज्योतिः

है जो पहिले तो सुगत होना है बादमें दुर्गतिको प्राप्त हो जाता है ३ तथा भरतचक्रवर्तीकी तरह कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी सुगत होना है और बाद में भी सुगतिगत होना है ४ (६)

सातवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकारके कहे गये हैं—उनका साराँश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी ज्ञान रहित होनेसे अन्धकार के तुल्य होता है और पीछे भी वह अज्ञानी बना रहनेके कारण अन्धकार के जैसा ही बना रहता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो ज्ञानरहित होने से या प्रसिद्धि रहित होने से तमस्तुल्य होता है पर बाद में वही जब ज्ञानका उपार्जन कर लेता है या अपने औदार्य आदि गुणोंसे प्रसिद्धि प्राप्त कर लेता है तब वह ज्योति के जैसा हो जाता है २, तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो ज्ञान संपन्न होने से ज्योति के जैसा होता है और

सुगत होय छे पणु पाछणथी दुर्गतिने प्राप्त करनारे होय छे (४) भरत चक्रवर्तीनी जेम केछ अेक पुरुष अेवो होय छे के जे पडेलां पणु सुगत होय छे अने पाछणथी पणु सुगतिगत पणु होय छे

सातमां सूत्रमां पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार अताव्या छे—(१) केछ अेक पुरुष अेवो होय छे के जे पडेलां पणु ज्ञानरहित होवाने लीये अंधकार समान होय छे अने पछी पणु ते ज्ञानरहित न थालु रहेवाने कारणे अंधकार समान न रहे छे (२) केछ अेक पुरुष अेवो होय छे के जे पडेलां ज्ञानरहित अथवा प्रसिद्धिरहित होवाने कारणे अंधकार समान होय छे पणु त्यारणाद न्यारे ते ज्ञाननुं उपार्जन करी ले छे अथवा पोताना औदार्य आदि गुणोथी प्रसिद्धि प्राप्त करी ले छे त्यारे न्येतिसमान अनी लय छे (३) केछ अेक पुरुष अेवो होय छे के जे पडेलां ज्ञानादिथी संपन्न होवाने कारणे न्येतिसमान होय छे, पणु त्यार णाद केछ निमित्तने लधने

पश्चादपि ज्योतिरेव भवति, सर्वदा ज्ञानप्रकाशसम्पन्नत्वात् । इति चतुर्थः । ४ (७)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तथा—एकः पुरुषः पूर्वं तमः—कुर्मकारितया मलिनस्वभावो भवति स एव पश्चात् तमोबलः—तमः—प्रच्छन्नमज्ञानं बलं सामर्थ्यं यस्य स तमोबलः, यद्वा—तमः—अन्धकार एव बल तत्र वा बलं यस्य स तमोबलो भवति, स चासदाचारवानज्ञानी रात्रिचरो वा चौरादिः, इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एकः पूर्वं तमः—कुर्मकारितया मलिनस्वभावो भवति, स एव पश्चात् ज्योतिर्बलः—ज्योति-ज्ञानं बल यस्य स तथा=ज्ञानबलसम्पन्नः, यद्वा—ज्योतिः—सूर्यादिप्रकाशः, तदेव तत्र

बाद में किसी निमित्त वश ज्ञान रहिन हो जानेसे अन्धकार तुल्य हो जाता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले ज्ञानवाला होनेसे ज्योति के जैसा होता है और बाद में भी वह ज्ञानके प्रकाशसे प्रकाशवाला बना रहनेके कारण ज्योति जैसा ही बना रहता है (७)

आठवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकारके कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले भी दुराचारी होनेसे अन्धकार तुल्य मलिन स्वभाववाला होता है और बाद में भी वह मलिन स्वभाववाला होता है ऐसा वह पुरुष असदाचारवाला होता है अथवा अज्ञानी होता है या रातमें फिरनेवाला चौर आदिजन होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले तो तमः—कुर्मकारी होने से मलिन स्वभाववाला होता है और वही आगे चलकर ज्योतिर्बल—ज्ञान ही है बल जिसका ऐसा होता है अर्थात् ज्ञानबल सम्पन्न हो जाता

ज्ञान अथवा प्रसिद्धिथी रक्षित थछे जवाने कारणे अंधकारसमान जनी जय छे. (५) कोछे ओक पुरुष पडेलां पणु ज नथी युक्त होवाने कारणे ज्योति-समान होय छे अने पछी पणु ज्ञानरूप प्रकाशथी प्रकाशित रडेवाने कारणे ज्योतिसमान ज थालु रडे छे

आठमां सूत्रमां पुरुषेणा नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) कोछे ओक पुरुष ओवो होय छे के जे पडेलां पणु दुराचारी होवाथी अंधकार समान मलिन स्वभाववाणो होय छे अने आगण जतां पणु दुराचारी ज रडेवाने कारणे अंधकारतुल्य मलिन स्वभाववाणो ज थालु रडे छे. ओवो ते पुरुष असदाचारवाणो अथवा अज्ञानी अथवा निशाचर (चोर आदि) होय छे

(२) कोछे ओक पुरुष पडेलां तो दुराचारी (कुर्मकारी) होवाथी मलिन स्वभाववाणो होय छे, पणु आगण जतां ज्योतिर्बला ज्ञान ज जेतुं जल छे

વા બલં યસ્ય સ તથા ભવતિ, સચ પૂર્વં સદાચારમસ્પન્નઃ પશ્ચાદ્ જ્ઞાની, યદ્વા-લુપ્ટકો દિવસચારી, इति द्वितीयः । ૨। તથા-૧૬: પૂર્વં જ્યોતિ-સત્કર્મકારિતયા ઉજ્જ્વલ સ્વભાવમસ્પન્નો ભવતિ, સ એવ પશ્ચાત્ તમોબલઃ-મલિનસ્વભાવતયા અજ્ઞાનચલો-અન્ધકારચલો વા ભવતિ, અયં ચ સદાચારવાન્ અજ્ઞાની કારણાન્તરાદ્વા રાત્રિચરઃ । इति तृतीयः । ૩। તથા-૧૬: પૂર્વં જ્યોતિઃ પશ્ચાદપિ જ્યોતિર્બલો ભવતિ, અયં ચ સદાચારી જ્ઞાની દિવસચારી વા । इति चतुर्थः । ૪। (૮)

હૈ અથવા-જ્યોતિ-સૂર્યાદિકા પ્રકાશહીઠે યલ જિસકા એસા હોતા હૈ, એસા વહ પુરુષ પહેલે અસદાચાર સંપન્ન ફિર જ્ઞાની હોતાહૈ યા-લુપ્ટેગા હો કર દિવસચારી હોતાહૈ ૨, તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતાહૈ જો પહિલે તો જ્યોતિઃ-સત્કર્મકારી હોને સે ઉજ્જ્વલ સ્વભાવ સંપન્ન હોતા હૈ ઓર વાદ મેં વહ તમોબલ-મલિન સ્વભાવવાલા બન જાતા હૈ અજ્ઞાન રૂપ યલવાલા હો જાતા હૈ અથવા અન્ધકાર મેં અપના બલ પ્રકટ કરનેવાલા બન જાતા હૈ એસા પુરુષ સદાચારી અજ્ઞાની જીવ હોતા હૈ, યા કારણાન્તરકો પાકર જાં મનુષ્ય ચૌર બન જાતા હૈ વહ હોતા હૈ-તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો પહિલે ઓ જ્યોતિઃ-સત્કર્મકારી હોને સે ઉજ્જ્વલ સ્વભાવ સંપન્ન હોતા હૈ ઓર વાદ મેં ઓ વહ જ્યોતિર્બલ - જ્ઞાનહી હૈ યલ જિસકા એસા બના રહતા હૈ જ્ઞાનચલ સંપન્ન બના રહતા હૈ અથવા-

તેને અથવા જ્ઞાનસંપન્ન પુરુષને જ્યોતિર્બલ કહે છે) થઈ બધ છે. અથવા સૂર્યાદિકાનો પ્રકાશ જ છે બળ જેતું એવો થઈ બધ છે અથવા સૂર્યાદિકા પ્રકાશમાં જ છે બળ જેતું એવો થઈ બધ છે એવો તે પુરુષ પહેલાં અસદાચાર સંપન્ન પછી જ્ઞાની હોય છે અથવા દિવસચારી હોય છે.

(૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં જ્યોતિસંપન્ન (સત્કર્મકારી) હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ સ્વભાવસંપન્ન હોય છે, પણ આગળ જતાં તે તમોબલ સંપન્ન-મલિન સ્વભાવવાળો બની બધ છે-અજ્ઞાનરૂપ બળવાળો બની બધ છે અથવા અંધકારમાં પોતાનું બળ પ્રકટ કરનારો બની બધ છે એવો પુરુષ સદાચારી અજ્ઞાની હોય છે અથવા કોઈ કારણને લીધે ચોરી કરવાના કાર્યમાં પડી ગયેલો હોય છે (૪) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ સત્કર્મકારી હોવાથી જ્યોતિસંપન્ન હોય છે અને પાછળથી પણ જ્યોતિર્બલ (જ્ઞાન જ છે બળ જેતું) એવો અથવા સત્કર્મકારી હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ સ્વભાવવાળો જ) ચાલુ રહે છે જ્યોતિર્બલ સંપન્નનો આ પ્રકારનો અર્થ પણ થઈ શકે છે-સૂર્યાદિકા પ્રકાશ જ જેતું બળ હોય એવા પુરુષને જ્યોતિર્બલ સંપન્ન કહે છે. અથવા સૂર્યાદિકા

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा एकः पुरुषः पूर्वतमः—दुराचारितया मलिनस्वभावो भवति, स पश्चात् तमोबल परञ्जनः—तमोऽन्धकार एव बलं तमोबलं, यद्वा—तमो मिथ्याज्ञानमेव बलं तमोबलं, तत्र परज्यते=अनुक्तो भवतीति तथा=मिथ्याज्ञानरतिकरः, रात्रि-चरश्चौरो वा, यद्वा—तमेव बलं यस्मिन् यस्य वा स तमोबलः=असदाचारी मिथ्याज्ञानी रात्रिचरश्चौरो वा, तत्र परज्यत इति तमोबलपरञ्जनः—मिथ्याज्ञानिषु-चौरेषु वाऽनुरागवान् । इति प्रथमः । १ ।

सूर्यादिका प्रकाश ही है बल जिसका ऐसा होता है अथवा—सूर्यादि के प्रकाश होने पर है बल जिसका ऐसा होता है ऐसा वह पुरुष सदा-चारी ज्ञानी या दिवसचारी होता है (<)

आठवें सूत्रमें जो पुरुष चार प्रकार के कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहिले से तमः—दुराचारी होने से मलिन स्वभाववाला होता है और पीछे भी तमोबल परञ्जन अन्धकार रूप बल में या मिथ्याज्ञान रूप बलमें ही बना रहता है या मिथ्याज्ञानमें रति करनेवाला बना रहता है ऐसा वह जीव या तो मिथ्यादृष्टि होता है या रात्रिचर—चौर होता है अथवा—तम ही है बल जिसमें—या तमही है बल जिसका ऐसा वह मनुष्य तमोबल है ऐसा वह तमोबल मनुष्य असदाचारी मिथ्याज्ञानी या रात्रिचर—चौर होता है इस तमोबल में जिसका अनुराग होता है वह तमोबल परञ्जन है ऐसा तमोबल परञ्जन मिथ्याज्ञानियोंमें तथा चोरोंमें अनुराग रखने-

प्रकाश यतां न्नेने भण प्राप्त थाय छे जेवा पुरुषने न्ये तिर्णल संपन्न कडे छे. जेवा ते पुरुष सदाचारी ज्ञानी अथवा दिवसचारी डोय छे.

आठमां सूत्रमा नीचे प्रमाणे चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) केरि एक पुरुष जेवा डोय छे के जे पडेदेथी न् तमःसंपन्न (दुराचारी) डोवाथी मलिन स्वभाववाणो डोय छे अने पाछणथी पणु तमोबल पुंरञ्जन (तमोबल प्रभवलन) जेटले के अधकाररूप भलथी अथवा मिथ्याज्ञान रूप भलथी संपन्न रहे छे जेटले के मिथ्याज्ञानमां न् रत रह्या करे छे जेवा एव कां तो मिथ्यादृष्टि डोय छे, अथवा रात्रिचर चौर डोय छे. अथवा तमोबलने अर्थ आ प्रमाणे पणु छे—तम (अधकार)न छे भणरूप जेमां अथवा तम न् छे भण जेतुं जेवा मनुष्यने तमोबल संपन्न कडे छे. जेवा ते तमोबल संपन्न मनुष्य असदाचारी, मिथ्याज्ञानी अथवा निशाचर (चौर) डोय छे. आ तमोबलमां जेने अनुराग डोय छे ते पुरुषने तमोबल परञ्जन कडे

તથા—એકરતમઃ—પૂર્વં દુરાચારિતયા મલિનસ્વભાવઃ સત્યપિ પશ્ચાત્ જ્યોતિર્વલપરજ્જનનઃ—જ્યોતિર્જ્ઞાનં—સૂર્યાદિપ્રકાશો વા, તદેવ વલં જ્યોતિર્વલં, તત્ર પ્રજ્યત ઇતિ તથા=અસદાચારી જ્ઞાનાનુરાગી દિવાચૌરો વા, યદ્વા—જ્યોતિરેવ વલં યસ્ય સ જ્યોતિર્વલો જ્ઞાની દિવાચૌરો વા, તત્ર પ્રજ્યત ઇતિ તથા=જ્ઞાનિપુ દિવાચૌરેષુ વા અનુરાગવાન્ । ઇતિ દ્વિતીયઃ । ૨ ।

તથા—એકો જ્યોતિઃ—સદાચારિતયા સુસ્વભાવઃ સત્યપિ તમોવલપરજ્જનો મિથ્યાજ્ઞાનાદિરતિકરો ભવતિ, સદાચારવાન્ અજ્ઞાની રાત્રિચરોવેતિ । તૃતીયઃ । ૩ ।

તથા—એકો જ્યોતિઃ—પૂર્વં સદાચારિતયા સુસ્વભાવો ભવતિ, પશ્ચાત્ જ્યોતિર્વલપરજ્જનો ભવતિ, અયં સદાચારવાન્ જ્ઞાની દિવાચરો વા । ઇતિ ચતુર્થઃ । ૪ ।

વાલા મનુષ્ય હોતા હૈ ૧ તથા કોઈ એક મનુષ્ય એસા હોતા હૈ જો પહિલે તો તમઃ—દુરાચારી હોનેસે મલિન સ્વભાવવાલા હોતા હૈ ઔર પોછે સે જ્યોતિર્વલ પરજ્જન—સૂર્યાદિકે પ્રકાશરૂપ વલમેં અનુક્ત હોતા હૈ—એસા વહ મનુષ્ય અસદાચારી જ્ઞાનાનુરાગી અથવા દિવાચોર (દિન મેં ચોરી કરને વાલા) હોતા હૈ અથવા — જ્યોતિ હી હૈ વલ જિસકા વહ જ્યોતિર્વલ હૈ એસા જ્યોતિર્વલ જ્ઞાની અથવા દિવાચોર હોતા હૈ હસમેં જો અનુરાગ રક્ષતા હૈ વહ જ્યોતિર્વલ પુરજ્જન હૈ । ૨ । તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો જ્યોતિઃ—સદાચારી હોનેસે સુસ્વભાવવાલા હોતા હૈ ફિર ખી તમોવલ પરજ્જન—મિથ્યા જ્ઞાનાદિ મેં રતિ કરનેવાલા હોતા હૈ એસા વહ મનુષ્ય સદાચારશાલી અજ્ઞાની હોતા હૈ યા રાત્રિચર મનુષ્ય હોતા હૈ । ૩ । તથા કોઈ એક મનુષ્ય એસા હોતા હૈ—જો પહિલે ખી સદાચારી હોનેસે સુસ્વભાવ-

છે. એવો તમોખંડપુરંજન મિથ્યાજ્ઞાનીઓમાં અથવા ચોરોમાં અનુરાગ રાખનારો પુરુષ પણ હોઈ શકે છે. (૨) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં તો તમ.સંપન્ન (દુરાચારી) હોવાથી મલિન સ્વભાવવાળો હોય છે, પણ પાછળથી જ્યોતિર્વલપરંજન—સૂર્યાદિના પ્રકાશરૂપ બળમાં અનુરક્ત થઈ બંધ છે એવો તે મનુષ્ય અસદાચારી જ્ઞાનાનુરાગી અથવા દિવાચર—સાધુ પુરુષ હોય છે. અથવા જ્યોતિ જ જેનું બળ છે તેને જ્યોતિર્વલ કહે છે. એવો જ્યોતિર્વલ કાંતો જ્ઞાની હોય છે અથવા તો દિનચર હોય છે. તેમના પ્રત્યે અનુરાગ રાખનાર મનુષ્યને જ્યોતિર્વલપરંજન કહે છે.

(૩) કોઈ એક પુરુષ જ્યોતિસંપન્ન (સદાચારી) હોવાથી સુસ્વભાવવાળો હોય છે, છતાં પણ તમોખંડપરંજન—મિથ્યાજ્ઞાન આદિ પ્રત્યે અનુરાગ રાખનારો હોય છે. એવો તે મનુષ્ય સદાચારશાળી અજ્ઞાની હોય છે અથવા નિશાચર હોય છે. (૪) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ

यद्वा—“ पलज्जणे ” इति पाठस्य “ प्रलज्जनः ” इतिच्छाया, तत्र-एकः कश्चित् तमः-अप्रसिद्धः तमोबलेन-अन्धकारबलेन संचरन् प्रलज्जते लज्जितो भवतीति तमोबलपलज्जनः, अत्र-प्रथमभङ्गे प्रकाशचारी, द्वितीयभङ्गे अन्धकारचारी, तृतीयभङ्गे प्रकाशचारी, चतुर्थभङ्गे तु कुतोऽपि कारणादन्धकारचार्येवेति । ४ । यद्वा-‘ पज्जलणे ’-ति पाठे ‘ प्रज्वलनः ’ इतिच्छाया, तत्र-अज्ञानबलेन-अन्धकारबलेन वा, ज्ञानबलेन प्रकाशबलेन वा प्रज्वलति-दर्पितो भवति यः स तथा । अत्रापि भङ्गचतुष्टयं संयोज्यम् । (९)

वाला होना है और पीछे ज्योतिर्बल पुरज्जन होता है ऐसा वह मनुष्य सदाचारवाला ज्ञानी मनुष्य होता है अथवा दिवाचर-साधु मनुष्य होता है ४ अथवा “ पलज्जणे ” इसकी संस्कृत छाया-“ प्रलज्जनः ” ऐसी भी होती है इस पक्षमें ऐसा अर्थ होना है कि कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो तमः अप्रसिद्ध होता है और अन्धकार बलसे चलता हुआ लज्जित होता है इस प्रथम भङ्ग में अप्रसिद्धिवाला प्रकाशचारी साधु मनुष्य लिया गया है तथा द्वितीय भङ्गमें अन्धकारचारी चौरादि मनुष्य लिया गया है.

तृतीय भङ्ग में भी प्रकाशचारी साधुजन लिया गया है और चतुर्थ-भङ्ग में भी किसी कारणवश अन्धकारमें ही चलनेवाला मनुष्य लिया है यद्वा-“ पज्जलणे ” इस पाठकी संस्कृत छाया प्रज्वलनः ” ऐसी भी होती है इस पक्षमें जो अज्ञानके बलसे या अन्धकारके बलसे ज्ञानके बलसे

सदाचारी होवाही सुस्वभाववाणो होय छे अने पछी पणु ज्योतिर्बलपुरजन न रहे छे एवो ते मनुष्य सदाचारशील ज्ञानी होय छे अथवा दिवाचर-साधु मनुष्य होय छे. अथवा “ पलज्जणे ” आ पदनी संस्कृत छाया “ प्रलज्जन. ” थाय छे आ संस्कृत छाया लेवाभां आवे तो आर लांगा आ प्रमाणे अने छे—(१) कोछे एक मनुष्य एवो होय छे के जे तमः (अप्रसिद्ध) होय छे अने अंधकाररूप अण्ठी आदतां लज्ज अनुभवे छे आ प्रथम प्रकारमां अप्रसिद्धिवाणो प्रकाशचारी साधुपुरुष गृहीत थयो छे

धीन प्रकारमां अंधकारचारी (निशाचर) चोर आदि गृहीत थया छे. त्रीन भागामां प्रकाशचारी साधुजन गृहीत थया छे. अने यथा भागामां कोछे कारणे आधीन थयने अंधकारमां न आदनारो मनुष्य गृहीत थयो छे. अथवा “ पज्जलणे ” नीसंस्कृत छाया ‘ प्रज्वलन ’ पणु थाय छे. आ संस्कृत छायानी अपेक्षाये विचार करवाभां आवे तो जे अज्ञानना अण्ठी अथवा अंधकारना अण्ठी, ज्ञानना अण्ठी अथवा प्रकाशना अण्ठी प्रज्वलित थाय

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः परिज्ञातकर्मा—ज्ञपरिज्ञया स्वरूपतः परिज्ञातानि—अवगतानि प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिहृतानि कर्माणि=सावद्यरूपाणि येन स तथाभूतो भवति, किन्तु परिज्ञातसङ्गः—परिज्ञाताः संज्ञाः—आहारादि संज्ञा येन स तथाभूतो न भवति, स च रसगृहः संयतः श्रावको वा । इति प्रथमो भङ्गः । १ ॥

तथा—एकः परिज्ञातसंज्ञो भवति, सद्भावनाभावितत्वात्, किन्तु नो परिज्ञातकर्मा भवति सावद्यव्यापारानिमृत्तेः, स च श्रावकः । इति द्वितीयः । २ ।
तथा—एकः परिज्ञातकर्माऽपि परिज्ञातसंज्ञोऽपि भवति, स च प्रकृष्टक्रियावान्

या प्रकाशके बलसे प्रज्वलित होता है—दर्प युक्त होता है ऐसा मनुष्य लिया गया है यहां पर भी भंग चतुष्टय लगा लेना चाहिये (९)

दशवे सूत्रमें जो पुरुषजात चार कहे गये हैं—उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होना है जो परिज्ञातकर्मा होता है—संज्ञापरिज्ञासे सावद्यरूप कर्मा का स्वरूप जान लेता है—और जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग कर देता है परन्तु फिर भी वह आहारादि संज्ञाओं को जिसने जाना है ऐसा नहीं होता है ऐसा मनुष्य रसगृह संयत होना है या श्रावक होना है ? तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होना है जो सद्भावना से आवित होनेके कारण परिज्ञान संज्ञावाला तो होता है पर वह सावद्यव्यापारसे अनिवृत्त होनेसे परिज्ञातकर्मा नहीं होना है २ ऐसा वह मनुष्य श्रावक होता है तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होना है जो सावद्य आदिके स्वरूप को

छे—दर्पयुक्त थाय छे, अत्रो मनुष्य अडुषु करवाभां आव्ये छे, अत्र समञ्जुं. आ दष्टिअे पणु अड्डीं चार लांगाअे। समञ्ज देवा जेधअे.

दसमां सूत्रमां पुरुषेना जे चार प्रकार कहे छे तेनुं स्पष्टीकरणे आ प्रमाणे छे—(१) केध अेक पुरुष अेवो डोय छे के जे परिज्ञातकर्मा डोय छे—अेद्रे के सावद्य इप कर्मांता स्वइपने ज्ञाता डोय छे, अने तेना स्वइपने ज्ञाथिने प्रत्याख्यान परिज्ञाथी तेमने परित्याग करी नाअनासे डोय छे, छतां पणु ते आहारादि संज्ञाअेने ज्ञाकार डोतो नथी. अेवो एव रसगृह (रसज्ञेयुप) संयत डोय छे अथवा श्रावक डोय छे (२) केध अेक पुरुष अेवो डोय छे के जे सद्भावनाथी आवित (युक्त) डोवाने कारणे परिज्ञान संज्ञाअेने तो डोय छे, पणु ते सावद्य व्यापारेमां प्रवृत्त डोवाथी परिज्ञात कर्मा डोतो नथी. अेवो ते मनुष्य श्रावक डोय छे. (३) केध अेक मनुष्य अेवो डोय छे के जे सावद्य आदिना स्वइपने पणु ज्ञाकार डोय छे अने

मुनिः प्रतिमाप्रतिपन्नः श्रमणोपासको वा । इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नो परिज्ञातकर्मा भवति नापिच परिज्ञातपंङ्गः, सचासंयतः । इति चतुर्थः । ४ । (१०)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः परिज्ञातकर्मा—सावद्यव्यापारकरणकारणानुमतिनिवृत्तो भवति, किन्तु परिज्ञातगृहाऽऽवासः=प्रव्रजितो नो भवति, स चाप्रव्रजितो गृहस्थः । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा—एकः परिज्ञातगृहाऽऽवासो भवति किन्तु नो परिज्ञातकर्मा भवति, स च दुष्प्रव्रजितः । इति द्वितीयः । २ । तथा—एकः परिज्ञात-

जाननेवाला भी होना है और परिज्ञान संज्ञावाला भी होना है ऐसा वह प्रकृष्ट क्रियावाला मुनि होता है या प्रतिमा प्रतिपन्न श्रमणोपासक होना है ३ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है न परिज्ञात कर्मा होता है और न परिज्ञात संज्ञावाला ही होता है ऐसा वह मनुष्य असंयत होता है । (१०)

ग्यारहवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं उनका सारांश ऐसा है कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो सावद्यव्यापारको स्वयं नहीं करता है दूसरों से भी नहीं कराना है और करनेवालोंकी अनुमोदना भी नहीं करता है किन्तु प्रव्रजित नहीं होता है ऐसा वह अप्रव्रजित गृहस्थ होता है १ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो अप्रव्रजित गृहस्थ तो होता है पर वह परिज्ञान कर्मा नहीं होता है सावद्यव्यापार को स्वयं करता है दूसरों से कराता है और करनेवालोंकी अनुमोदना करता है ऐसा मनुष्य दुष्प्रव्रजित होता है २ तथा

परिज्ञान संज्ञावाणो पणु डोय छे. ओवो एव प्रकृष्ट क्रियावाणो मुनि डोय छे अथवा प्रतिमाप्रतिपन्न श्रमणोपासक डोय छे. (४) कोछ ओक मनुष्य ओवो डोय छे के ने परिज्ञात कर्मा पणु डोतो नथी अने परिज्ञात संज्ञावाणो पणु डोतो नथी. ओवो ते मनुष्य असंयत डोय छे.

११ मां सूत्रमां ने चार प्रकारना पुरुषो कहे छे, ते चारे प्रकारनुं डवे स्पष्टीकरणु करवामां आवे छे—(१) कोछ ओक पुरुष ओवो डोय छे के ने पोते सावद्य व्यापारेमां प्रवृत्त थतो नथी, अन्यनी पासे सावद्य व्यापारे करवतो पणु नथी अने सावद्यव्यापार करवानी अनुमोदना पणु करतो नथी. छातां पोते प्रव्रजित थतो नथी आवो पुरुष अप्रव्रजित गृहस्थ डोय छे. (२) कोछ ओक पुरुष ओवो डोय छे के ने प्रव्रजित तो डोय छे पणु ते परिज्ञातकर्मा डोतो नथी तेथी ते पोते सावद्य व्यापारे करे छे, अन्यनी पासे सावद्य व्यापारे करवे छे अने सावद्यव्यापारे करनारनी अनुमोदना पणु करे छे. ओवो मनुष्य दुष्प्रव्रजित डोय छे.

कर्माऽपि परिज्ञातगृहाऽऽवासोऽपि भवति, स च साधुः । इति तृतीयः । ३ । तथा-
एको नोपरिज्ञातकर्मा नोपरिज्ञातगृहाऽऽवासश्च भवति, स चासंयतः । इति
चतुर्थः । ४ । (११)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि,
तद्यथा—एकः पुरुषः परिज्ञातसंज्ञो भवति विशिष्टगुणस्थानकत्वात्, किन्तु नो
परिज्ञातगृहाऽऽवासः—त्यक्तगृहाऽऽवासो न भवति, गृहस्थत्वात्, स च प्रतिमाधारी
श्रावक । इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा—एकः परिज्ञातगृहाऽऽवासः—त्यक्तगृहाऽऽवासो भवति संयतत्वात्,
किन्तु नो परिज्ञातसंज्ञः—त्यक्ताऽऽरम्भो न भवति अभावितत्वात्, स च दुष्प्रव-

कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो परिज्ञात कर्मा भी होता है सावध
व्यापारको स्वयं नहीं करता है दूसरोंसे भी नहीं कराता है तथा करने-
वालोंकी अनुमोदना भी नहीं करता है—और परिज्ञात गृहावास भी
होता है प्रव्रजित नहीं होता है ऐसा वह साधु होता है तथा कोई
एक मनुष्य ऐसा होता है जो न परिज्ञात कर्मा भी होता है और
न परिज्ञातगृहावास भी होता है ऐसा वह असंयत होता है । (११)

चारहबे सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गयेहैं उनमें कोई एक
पुरुष ऐसा होता है जो विशिष्ट गुणोंका स्थानक होनेसे परिज्ञात संज्ञा-
वाला होता है किन्तु गृहस्थ होनेसे वह तो परिज्ञात गृहावास—त्यक्त
गृहावासवाला नहीं होता है ऐसा वह प्रतिमाधारी श्रावक होता है
१ तथा कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो परिज्ञातगृहावास होता

(३) कोई एक मनुष्य એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાત કર્મા પણ
હોય છે એટલે કે પોતે સાવધ વ્યાપારો કરતો નથી, કરાવતો નથી અને
કરનારને અનુમોદતો પણ નથી પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ પણ હોય છે—પ્રવ્રજિત
હોય છે એવો તે સાધુ હોય છે

(૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરિજ્ઞાતકર્મા પણ હોતો
નથી અને પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ પણ હોતો નથી એવો તે અસંયત હોય છે. (૧૧)

भारभां सूत्रभां जे चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे तेनुं हवे स्पष्टीकरण
करवाभां आवे छे—

(१) कौं एक पुरुष એવો હોય છે કે જે વિશિષ્ટ ગુણોનું સ્થાનક
હોવાને લીધે પરિજ્ઞાત સંજ્ઞાવાળો હોય છે, પણ ગૃહસ્થ હોવાને કારણે તે
પરિજ્ઞાત ગૃહાવાસ (ત્યક્ત ગૃહાવાસવાળો) હોતો નથી પ્રતિમાધારી શ્રાવકને
આ પ્રકારના ગણાવી શકાય છે. (૨) કોઈ એક મનુષ્ય એવો હોય છે કે

जितः । इति द्वितीयः । २ । तथा—एकः परिज्ञातसंज्ञोऽपि परिज्ञातगृहाऽऽवा-
सोऽपि च भवति, स च साधुः । इति तृतीयः । ३ । तथा—एकः नो परिज्ञात-
संज्ञो नापि च परिज्ञातगृहाऽऽवासो भवति, स च सामान्यगृहस्थः । इति चतुर्थः
। ४ । (१२)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि,
तद्यथा—इहार्थो नामैहो नो परार्थः, तत्र—एकः पुरुषः इहार्थः—इहैव—अस्मिन्नैव
जन्मनि अर्थः—भोगसुखादि प्रयोजनं यस्य स इहार्थः—ऐहिकभोगसुखार्थो, यद्वा—

है—त्यक्त गृहावासवाला होता है क्योंकि—ऐसा वह संयत होता है
परन्तु वह त्यक्त आरम्भवाला नहीं होता है क्योंकि वह अभावित
होता है ऐसा वह दुष्प्रवृत्तित होता है २ तथा कोई एक ऐसा मनुष्य
होता है जो परिज्ञात संज्ञावाला भी होता है ३ ऐसा वह मनुष्य साधु
होता है तथा कोई एक ऐसा भी मनुष्य होता है जो न परिज्ञात संज्ञा-
वाला होता है और न परिज्ञात गृहावासवाला भी होता है ४ ऐसा
वह सामान्य गृहस्थजन होता है । (१२)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इस १३ वें सूत्र द्वारा जो पुरुष जात
चार कहे गये हैं उनका सारांग ऐसा है—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा
होता है जिसका प्रयोजन इसी जन्ममें भोग सुखादिरूप होता है
ऐसा वह पुरुष इहार्थ कहा गया है अर्थात् यह इहार्थ पुरुष ऐहिक

ने परिज्ञात गृहावास (त्यक्त गृहावासवाणो) होय छे, पणु ते त्यक्त आरं-
लवाणो होतो नथी. ओटदे के साधु होवा छतां पणु आरंलना परित्याग
न करी शकनार दुष्प्रवृत्तित ज्वने आ प्रकारने पुरुष कडी शकय छे. (३)
कोध ओक पुरुष ओवो होय छे के ने परिज्ञात संज्ञावाणो, पणु होय छे
अने परिज्ञात गृहावासवाणो पणु होय छे ओवो ज्व संयत (साधु) होय
छे (४) कोध ओक पुरुष ओवो होय छे के ने परिज्ञात संज्ञावाणो पणु
होतो नथी अने परिज्ञात गृहावासवाणो पणु होतो नथी सामान्य गृहस्थ-
जनने आ प्रकारने पुरुष कडी शकय छे. (परिज्ञात गृहावास—गृहावासना
स्वइपने ज्ञाणीने तेना परित्यागपूर्वक प्रवृत्त्या अंगीकार करनार)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि. १३ भां सूत्रभां ने चार प्रकारना
पुरुषो कया छे तेनु स्पष्टीकरण—(१) केध ओक पुरुष ओवो होय छे के ने
आ जन्मना लोगोपलोग इप सुअनी छञ्जवाणो होय छे ओटदे के ऐहिक
भोगसुखार्थी होय छे पणु परलवना देवदोक आदिना सुअनी छञ्जवाणो

‘इहस्थे’ इत्यस्य ‘इहाऽऽस्थः’ इतिच्छाया, तत्पक्षे-इहास्थ इत्यस्य इहैव जन्मनि आस्था-विश्वासो यस्य स तथा=इहलोकप्रतिबद्धो भवति किन्तु न परार्थः-परत्र जन्मनि अर्थः-स्वर्गादिसुखप्रयोजनं यस्य स तथा न भवति, यद्वा-‘परत्थे’ इत्यस्य ‘पराऽऽस्थ’ इतिच्छाया, इति पक्षे परत्र आस्था-विश्वासो यस्य स तथा न भवति, स च नास्तिकः । इति प्रथमो भङ्गः । १ । शेषभङ्गत्रयमेवं संयोजनी-

भोग सुखार्थी होता है यदा-“इहत्थे” शब्दकी छाया “इहस्थः” ऐसी भी होती है इस पक्षमें ऐसा अर्थ होता है-कि कोई एक पुरुष ऐसा होता है कि जिसकी आस्था इसी जन्म पर होती है ऐसा वह ईहार्थ पुरुष “नो परत्थे” परजन्ममें स्वर्गादि सुखका प्रयोजनवाला नहीं होता है अथवा-“परत्थे” की संस्कृत छाया-“परास्थ” ऐसी होगी तब इसका ऐसा अर्थ होगा-कि वह इहास्थ पुरुष परलोकमें विश्वास रखनेवाला नहीं होता है ऐसा वह नास्तिक पुरुष होता है ? शेष ३ भङ्ग इस प्रकारसे बना लेना चाहिये-कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो “परत्थे नो इहत्थे २” परार्थ या परास्थ होता है इहार्थ या इहास्थ नहीं होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो “इहत्थे परत्थे वि” इहार्थ या इहास्थ भी होता है और परार्थ या परास्थ भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा भी होता है जो “नो इहत्थे नो परत्थे” न इहार्थ या इहास्थ होता है और न परार्थ या परास्थ

होता नथी એવા પુરુષને “ઇહાર્થી-નો પાર્થી” રૂપ પડેલા પ્રકારમાં ગણવી શકાય છે અથવા-“ઈહસ્થે” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “इहस्थः” પણ થાય છે. આ સંસ્કૃત છાયાની અપેક્ષાએ પડેલા ભાંગો આ પ્રકારનો બને છે—કેઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આ જન્મ પરઆस्था રાખનારો હોય છે પણ પરભવના સુખાક્રિમાં આસ્થાવાળો હોતો નથી. એવો પુરુષ નાસ્તિક હોય છે. બાકીના ત્રણ ભાંગાઓ આ પ્રમાણે સમજવા—(૨) કેઈ એક પુરુષ “પરત્થે નો ઈહસ્થે” એવો હોય છે કે જે પરલોકના સુખની અભિલાષા અથવા આસ્થાવાળો હોય છે પણ આ લોકના સુખની અભિલાષા અથવા આસ્થાવાળો હોતો નથી. (૩) “ઈહત્થે પરત્થે વિ” કેઈ એક પુરુષ આ લોકના સુખની ઇચ્છા તથા આસ્થાવાળો પણ હોય છે અને પરલોકના સુખની પણ ઇચ્છા અને આસ્થાવાળો હોય છે. (૪) “નો ઈહત્થે-નો પરત્થે” કેઈ એક પુરુષ આલોકના સુખની ઇચ્છા કે આસ્થાવાળો હોતો નથી અને પરલોકના સુખની ઇચ્છા કે આસ્થાવાળો પણ હોતો નથી.

यम् । तत्र द्वितीयमङ्गस्यो वाञ्छवस्वी, तथाविधश्रद्धावान् साधुरां २। तृतीयमङ्गस्यः सुश्रावकः ३। चतुर्थमङ्गस्यस्तु कालसौकरिकादिर्मूर्ढोवेति । ४। (१३)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः एकेन-श्रुतेन वर्धते, एकेन-सम्यग्दर्शनेन हीयते—हीनो भवति, यथोक्तं च—

“ जह जह बहुस्सुओ संमओ य सीसगणसंपरिवुडो य ।

अविणिच्छिओ य समए तह तह सिद्धंतपरिणीओ । १।

छाया—“ यथा यथा बहुश्रुतः संमतश्च शिष्यगणसंपरिवृतश्च ।

अविनिश्चितश्च समये तथा तथा सिद्धान्तप्रत्यनीकः । १। ” इति,

अयमर्थः—पुरुषो यथा यथा बहुश्रुतः—बहुशास्त्रज्ञो भवति, संमतः—जनैरादृतः शिष्यगणसंपरिवृतः—शिष्यगणपरिवेष्टितश्च भवति, स च यदि समये—

होता है द्वितीय मङ्ग में बाल तपस्वीको तथाविध श्रद्धाशाली पुरुष को तृतीय मङ्ग में सुश्रावकको और चतुर्थ मङ्ग में कालसौकरिक आदि अथवा मूढको दृष्टान्तमें रखना चाहिये (१३)

चौदहवें सूत्रमें जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं—सो उनका सारांश ऐसा है कि इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होना है जो एकसे-श्रुतसे तो बढ़ता है अर्थात् स्वाध्याय करते २ या अध्ययन करते २ अपने श्रुतज्ञानको तो बढ़ा लेना है—बहुश्रुत हो जाता है पर वह एकसे-सम्यग्दर्शन से रहित होता है कहा भी है—

“ जह जह बहुस्सुआ ” इत्यादि ॥१॥ इस गाथा का तात्पर्यार्थ ऐसा है—पुरुष जैसे २ बहुश्रुत बहु शास्त्रज्ञ होता है संमतजनों द्वारा

भील भांगामां भावतपस्वीने, ते प्रकारनी श्रद्धावाणा पुरुषने अथवा साधुने भूझी शक्य छे त्रील भांगामां सुश्रावकने अने योथा भांगामां मूढ अथवा कालसौकरिक जेना पुरुषोने भूझी शक्य छे.

चौदहमां सूत्रमां जे चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे तेनुं स्पष्टीकरणु—(१) केधं ओक पुरुष ओवेो डेय छे के जे ओक भावतमां—जेमके श्रुतमां तो आगण वधतेो नय छे ओटवे के स्वाध्याय करतो करतो श्रुतज्ञानमां तो आगण वधतेो नय छे परन्तु भील भावतमां डीयभाणु थतेो रडे छे जेमके सम्यग् दर्शनथी रडित थतेो नय छे. कहुं पणु छे के—“ जह जह बहुस्सुआ ” इत्यादि.

आ गाथानेो भावार्थ नीचे प्रमाणे छे—पुरुष जेम जेम बहुश्रुत—बहु शास्त्रज्ञ थतेो नय छे, संमत (लोकै द्वारा तेना अक्षिप्रायने स्वीकारवामां

सिद्धान्ते अविनिश्चितः—संशययुक्तो भवति तदा स तथा तथा सिद्धान्तप्रत्यनीकः—
सिद्धान्तप्रतिकूलो भवति । १ । इति प्रथमः । १ । तथा—एकः पुरुष एकेन-
श्रुतेनैव वर्धते द्वाभ्यां—सम्यग्दर्शन—विनयभ्यां हीयत इति द्वितीयः । २ । तथा—
एको द्वाभ्यां—श्रुतानुष्ठानाभ्यां वर्धते, एकेन—सम्यग्दर्शनेन हीयते । इति तृतीयः
। ३ । तथा—एको द्वाभ्यां—श्रुतानुष्ठानाभ्यां वर्धते, द्वाभ्यां—सम्यग्दर्शन—विनया-
भ्यां हीयत इति चतुर्थः । ४ । (१)

यद्वा—एक एकेन—ज्ञानेन वर्धते, एकेन—रागेण हीयते, इति प्रथमः । १ ।
तथा—एक एकेन—ज्ञानेन वर्धते दाभ्यां राग-द्वेषाभ्यां हीयते. इति द्वितीयः । २ ।

आहत होता है और शिष्य गणोंसे परिवेष्टित होता है वह यदि
सिद्धान्तमें अविनिश्चित संशययुक्त हो जाता है तो वह कैसे २ सिद्धान्त
प्रत्यनीक—सिद्धान्त प्रतिकूल हो जाता है ?

तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल एक श्रुतसेही तो
बढता है पर सम्यग्दर्शन और विनय इन दोसे रहित होता है २
अर्थात् श्रुतज्ञानकी तो वृद्धि कर लेता है पर सम्यग्दर्शन और विनय
इनकी वृद्धि नहीं करता है इनसे हीन होता है २ तथा कोई पुरुष
ऐसा होता है जो श्रुत और अनुष्ठान इन दो से बढता है पर एक
सम्यग्दर्शन से हीन होता है ३ तथा कोई एक ऐसा होता है श्रुत
और अनुष्ठान इन दोसे बढता है और सम्यग्दर्शन एवं विनय इन
दोसे हीन होता है ४—१

अथवा—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञानसे बढता है—बढा
होता है और एक रागसे हीन होता है ? कोई एक पुरुष ऐसा होता

आवे अवे।) थतो न्य छे, अने शिष्योना समूहथी युक्त थतो न्य छे,
तेम तेम ने ते संशययुक्त पणु थतो न्य तो ते सिद्धान्त प्रत्यनीक—सिद्धान्त
प्रतिकूल पणु थतो न्य छे.

(२) केअ अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने अेकदा श्रुतमां तो वृद्धि
पामतो रडे छे, परन्तु सम्यग् दर्शन अने विनयथी रडित थतो न्य छे.
अेटले के ते श्रुतज्ञान तो वधारि छे पणु सम्यग्दर्शन अने विनयनी वृद्धि
करतो नथी पणु तेनाथी विहीन थतो न्य छे. (३) केअ अेक पुरुष अेवो
डोय छे के ने जेमां श्रुत अने अनुष्ठानमां आगण वधतो न्य छे, पणु
अेकथी सम्यग्दर्शनथी न विहीन थतो न्य छे (४) केअ अेक पुरुष अेवो
डोय छे के ने श्रुत अने अनुष्ठानमां तो वृद्धि करतो रडे छे पणु सम्यग्-
दर्शन अने विनयथी रडित थतो न्य छे. अथवा—(१) केअ अेक पुरुष

તથા ઁકો દ્વાભ્યાં-જ્ઞાન-સંયમાભ્યાં વર્ધતે, ઁકેન-રાગેણ હીયત ઇતિ તૃતીયઃ
 । ૩ । તથા-ઁકો દ્વાભ્યાં-જ્ઞાન-સંયમાભ્યાં વર્ધતે, દ્વાભ્યાં-રાગ-દ્વેષાભ્યાં હીયત
 ઇતિ ચતુર્થઃ । ૪ । (૨)

અથવા-ઁક ઁકેન-ક્રોધેન વર્ધતે, ઁકેન-માયયા હીયતે, ઇતિ પ્રથમઃ । ૧ ।
 તથા-ઁક ઁકેન-ક્રોધેન વર્ધતે, દ્વાભ્યાં-માયા લોભાભ્યાં હીયતે । ઇતિ દ્વિતીયઃ
 । ૨ । દ્વાભ્યાં ક્રોધમાનાભ્યાં વર્ધતે ઁકેન-માયયા હીયત ઇતિ તૃતીયઃ । ૩ ।
 તથા-ઁકો દ્વાભ્યાં=ક્રોધ-માનાભ્યાં વર્ધતે, દ્વાભ્યાં-માયા-લોભાભ્યાં હીયત
 ઇતિ ચતુર્થઃ । ૪ । (૩) (૧૪)

હેં જો ઁક જ્ઞાનસે વઢા હોતા હેં ઁર ઢોસે રાગ ઁવં ઢોષસે હીન હોતા
 હેં ૨ તથા કોઈ ઁક પુરુષ ઁસા હોતા હેં જો જ્ઞાન ઁવં સંયમ સે વઢા
 હોતા હેં ઁર રાગસે હીન હોતા હેં-૩ તથા કોઈ ઁક પુરુષ ઁસા હોતા
 હેં જો જ્ઞાન ઁવં સંયમ સે વઢા હોતા હેં ઁર રાગ ઁવં દ્વેષ સે
 હીન હોતા હેં ૪-૨

અથવા--કોઈ ઁક પુરુષ ઁસા હોતા હેં જો ઁકસે-ક્રોધ સે વઢા
 હોતા હેં વહુત ક્રોધી હોતા હેં ઁર ઁકસે માયાસે હીન હોતા હેં ૧
 તથા-કોઈ ઁક પુરુષ ઁસા હોતા હેં જો ઁકસે ક્રોધ સે વઢા હોતા હેં-ઁર
 ઢોસે માયા ઁર લોભસે હીન હોતા હેં ૨ તથા કોઈ ઁક ઁસા
 પુરુષ હોતા હેં જો ક્રોધ ઁવં માનસે વઢા હોતા હેં ઁર ઁકસે માયાસે
 હીન હોતા હેં-૩ તથા કોઈ ઁક પુરુષ ઁસા હોતા હેં જો ક્રોધ માન
 ઇન ઢોસે વઢા હોતા હેં ઁવં માયા ઁર લોભ ઇનસે હીન હોતા હેં

જ્ઞાનમાં વધતો જાય છે પણ રાગથી રહિત થતો જાય છે. (૨) કોઈ ઁક
 પુરુષ ઁકમાં (જ્ઞાનમાં) વધતો જાય છે, પણ ઁમાં (રાગ અને દ્વેષથી)
 ઘટતો જાય છે. (૩) કોઈ પુરુષ ઁમાં (જ્ઞાન અને સંયમમાં) વધતો જાય
 છે પણ રાગથી રહિત થતો જાય છે. (૪) કોઈ પુરુષ જ્ઞાન અને સંયમમાં
 વધતો જાય છે અને રાગ અને દ્વેષમાં ઘટતો જાય છે.

અથવા—(૧) કોઈ પુરુષ ઁક ખાબતમાં-ક્રોધમાં વૃદ્ધિ કરતો રહે છે
 પણ માયાથી રહિત ખનતો જાય છે. (૨) કોઈ પુરુષના ક્રોધની વૃદ્ધિ થતી
 રહે છે પણ માયા અને લોભની હાનિ થતી રહે છે.

(૩) કોઈ પુરુષના ક્રોધ અને માનની વૃદ્ધિ થતી રહે છે, પણ માયા
 ઘટતી જાય છે. (૪) કોઈ પુરુષના ક્રોધ અને માનની વૃદ્ધિ થતી રહે છે
 પણ માયા અને લોભ ઘટતા જાય છે

अत्रेदं बोध्यं--सामान्येनैकेनेति नपुंसकलिङ्गनिर्दिष्टस्य माययेति विवरणे
मायारूपेण वस्तुना -- पदार्थेनेति लिङ्गसाम्येन भिन्नलिङ्गताशङ्काऽपनोदनीया
(सू० २९)

अथ कन्थकट्टप्रान्तसूत्रम्—

मूलम्-चत्वारि कंथगा पणत्ता, तं जहा-आइन्ने णाममेगे
आइन्ने १, आइन्ने णाममेगे खलुंके २, खलुंके णाममेगे आइन्ने
३, खलुंके णाममेगे खलुंके ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया
पणत्ता, तं जहा-आइन्ने णाममेगे आइन्ने चउभंगो । (१)

चत्वारि कंथगा पणत्ता, तं जहा-आइन्ने णाममेगे आइ-
न्नयाए विहरइ १, आइन्ने णाममेगे खलुंकत्ताए विहरइ ४।
एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-आइन्ने णाम-
मेगे आइन्नयाए विहरइ, चउभंगो । (२)

यदि यहां पर ऐसी आशंका की जाय कि “ एकेन ” यह शब्द सामान्य
रूपसे निर्दिष्ट हुआ है और जो सामान्य रूपसे निर्दिष्ट होता है वह
नपुंसक लिङ्ग होता है अतः जब ऐसी बात है तो फिर आप “एकेन’
से “भाषया” ऐसा विवरण कैसे करते हैं तो इसका समाधान इस
रूपसे कर लेना चाहिये कि “ एकेन भाषा रूपेण वस्तुना ” एक-भाषा
रूप वस्तुसे इस प्रकारसे भाषा वस्तुके साथ लिङ्ग साम्यता आजाने से
भिन्नलिङ्गताकी शङ्का दूर हो जाती है ॥सू. २९॥

शंका—“ एकेन ” आ पद तो नपुंसकलिङ्गत्वं पद छे. छतां आप ते
पद द्वारा “ मायया ” ‘ भाषाथी ’आ प्रकारना श्रीतिंग वाचक शब्दने डेवी
रीते गृहीत करे छे ?

उत्तर—अडी “ एकेन मायारूपेण वस्तुना ” ‘ भाषाथी ’ आ पद
“ भाषाइय अेक वस्तुथी ” आ प्रकारना अर्थत्वं वाचक छे. आ रीते भाषा-
इय वस्तुनी साथे लिङ्गनी समानता आवी जथाथी भिन्न भिन्न लिङ्गतानी
शंकात्वं निवारण थछ जय छे. ॥ सू. २६ ॥

चत्वारि कथगा पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो कुलसंपन्ने० ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो कुलसंपन्ने, चउभंगो । (३)

चत्वारि कथगा पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो बलसंपण्णे० ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो बलसंपन्ने ४। (४)

चत्वारि कथगा पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने ४। (५)

चत्वारि कथगा पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपण्णे० ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-जाइसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपण्णे० ४। (६) एवं कुलसंपन्नेण य बलसंपन्नेण य ४। (७) कुलसंपन्नेण य रूवसंपन्नेण य० ४, (८) कुलसंपन्नेण य जयसंपन्नेण य ४। (९) एवं बलसंपन्नेण य रूवसंपन्नेण य० ४, (१०) बलसंपन्नेण य जयसंपन्नेण य० ४। सव्वत्थ पुरिसजाया पडि-वक्खो । (११)

चत्वारि कथगा पणत्ता, तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपन्ने ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-रूवसंपन्ने णाममेगे णो जयसंपन्ने ४। (१२)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-सीहत्ताए णाममेगे निक्खंते सीहत्ताए विहरइ १, सीहत्ताए णाममेगे निक्खंते

સિયાલત્તાણ વિહરહ ૨, સિયાલત્તાણ ણામમેગે નિક્કલંતે સીહ-
ત્તાણ વિરહહ ૩, સિયાલત્તાણ ણામમેગે નિક્કલંતે સિયાલત્તાણ
વિહરહ ૪ (૧૩) ॥ સૂ. ૩૦ ॥

છાયા—ચત્તારઃ કન્થકાઃ પ્રજ્ઞાઃ, તથથા—આકીર્ણો નામૈક આકીર્ણઃ ૧,
આકીર્ણો નામૈકઃ સ્વલુક્ક ૨, સ્વલુક્કો નામૈક આકીર્ણઃ ૩, સ્વલુક્કો નામૈકઃ
સ્વલુક્કઃ ૪। એવમેવ ચત્તારિ પુરુપજાતાનિ પ્રજ્ઞાતાનિ, તથથા—અકીર્ણો નામૈક
આકીર્ણઃ ૧। ચતુર્ભક્તી । (૧)

ચત્તારઃ કન્થકાઃ પ્રજ્ઞાઃ, તથથા—આકીર્ણો નામૈક આકીર્ણતયા વિહરતિ,
આકીર્ણો નામૈકઃ સ્વલુક્કતયા વિહરતિ ૪। એવમેવ ચત્તારિ પુરુપજાતાનિ પ્રજ્ઞ-
તાનિ, તથથા—આકીર્ણો નામૈક આકીર્ણતયા વિહરતિ ચતુર્ભક્તી ૪। (૨)

ચત્તારિ કથગા પળ્લત્તા ઇત્યાદિ સૂત્ર ૩૦ ॥

સૂત્રાર્થ—કન્થક ચાર પ્રકારકે કહે ગયેહે—એક આકીર્ણ આકીર્ણ ૧ દૂસરા
આકીર્ણ સ્વલુક્ક ૨ તીસરા સ્વલુક્ક આકીર્ણ ૩ ઓર ચૌથા સ્વલુક્ક સ્વલુક્ક
હસી પ્રકારસે પુરુપ જાત મી ચાર કહે ગયે હે—આકીર્ણ આકીર્ણ ૧
ઇત્યાદિ ૪—(૧)

પુનઃ—કન્થક ચાર પ્રકારકે કહે ગયે હે—એક આકીર્ણ આકીર્ણ
રુપસે વિહારી ૧ દૂસરા આકીર્ણ સ્વલુક્ક રુપસે વિહારી ૨, તીસરા
સ્વલુક્ક આકીર્ણ રુપસે વિહારી ૩, ઓર ચતુર્થ સ્વલુક્ક ઓર સ્વલુક્ક
રુપસે વિહારી ૪ હસી તરહસે પુરુપ જાત મી ચાર કહે ગયે હે જૈસે
આકીર્ણ આકીર્ણ રુપસે વિહારી ઇત્યાદિ ૪ (૨)

“ ચત્તારિ કથગા પળ્લત્તા ” ઇત્યાદિ— (સૂ ૩૦)

સૂત્રાર્થ—કન્થક (અથ વિશેષ) ના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) આકીર્ણ—આકીર્ણ,
(૨) આકીર્ણ—ખલુક, (૩) ખલુક—આકીર્ણ અને (૪) ખલુક—ખલુક એજ
પ્રમાણે પુરુપોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. જેમકે ‘ આકીર્ણ—આકીર્ણ ’ વગેરે
ચાર પ્રકાર ઉપર મુજબ સમજ લેવા.

કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—

(૧) આકીર્ણ—આકીર્ણ રૂપે વિહારી, (૨) આકીર્ણ—ખલુક રૂપે વિહારી
(૩) ખલુક—આકીર્ણ રૂપે વિહારી અને (૪) ખલુક—ખલુક રૂપે વિહારી.
એજ પ્રમાણે પુરુપોના પણ “ આકીર્ણ—આકીર્ણ રૂપે વિહારી ” આદિ ચાર
પ્રકાર સંમજવા. ૧૨।

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः
४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैकः, चतु-
र्भङ्गी ४। (३)

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः
४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो
बलसम्पन्नः ४। (४)

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः
४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो
रूपसम्पन्नः ४। (५)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे, जाति संपन्न नो
कुल संपन्न १ कुल संपन्न नो जाति संपन्न २ जाति संपन्न भी और कुल
संपन्न भी ३ और नो जाति संपन्न नो कुल संपन्न ४ इसी प्रकार
से पुरुष जात भी चार कहे गये हैं, जैसे जातिसंपन्न नो कुल
संपन्न इत्यादि ४ (३)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे जातिसंपन्न नो
बलसंपन्न १ बलसंपन्न नो जातिसंपन्न २ जातिसंपन्न भी और बल
संपन्न भी ३ और नो जातिसंपन्न नो बलसंपन्न ४ इसी प्रकारसे पुरुष
जात भी चार कहे गये हैं जैसे—जाति संपन्न नो बलसंपन्न इत्यादि ४—(४)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकार के कहे गये हैं जैसे—जातिसंपन्न नो
रूप संपन्न १ रूप संपन्न नो जाति संपन्न २ जातिसंपन्न भी रूप संपन्न भी

कन्थक (अश्व)ना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पशु कथा छे—(१) जाति-
संपन्न नो कुलसंपन्न, (२) कुलसंपन्न नो जातिसंपन्न, (३) जातिसंपन्न
अने कुलसंपन्न अने (४) नो जातिसंपन्न नो कुलसंपन्न अश्व प्रमाणे
पुरुषोना पशु “जातिसंपन्न नो कुलसंपन्न” आदि चार प्रकार समझवा १३।

कन्थकना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पशु कथा छे—(१) जातिसंपन्न नो
बलसंपन्न, (२) बलसंपन्न नो जातिसंपन्न, (३) जातिसंपन्न अने बल-
संपन्न (४) नो जातिसंपन्न नो बलसंपन्न. अश्व प्रमाणे पुरुषोना पशु
“जातिसंपन्न नो बलसंपन्न” आदि चार प्रकार समझवा १४।

कन्थकना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पशु कथा छे—(१) जातिसंपन्न नो
रूप संपन्न, (२) रूपसंपन्न नो जातिसंपन्न, (३) जातिसंपन्न अने रूप-
संपन्न—२१

चत्वारः कन्थकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः
 ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो
 जयसम्पन्नः ४। (८) एवं कुलसम्पन्नेन च बलसम्पन्नेन च ४, (७) कुलसम्पन्नेन
 च रूपसम्पन्नेन च ४। (८) कुलसम्पन्नेन च जयसम्पन्नेन च ४, (९) एवं बल-
 सम्पन्नेन च रूपसम्पन्नेन च ४, (१०) बलसम्पन्नेन च जयसम्पन्नेन च ४,
 सर्वत्र पुरुषजातानि प्रतिपक्षः । (११)

३ नो जातिसंपन्न नो रूपसंपन्न ४ इमी तरहसे पुरुष जात भी चार
 प्रकार के कहे गये हैं जैसे—जातिसंपन्न नो रूप संपन्न १ इत्यादि ४ (५)

पुनश्च—कन्थक चार प्रकार के कहे गये हैं जैसे—जाति संपन्न नो
 जय संपन्न १ इत्यादि ४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये
 हैं जैसे—जातिसंपन्न नो जयसंपन्न इत्यादि ४—(६) इसी प्रकार से
 कुल संपन्न और बल संपन्न पद से चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (७) इसी
 तरह से कुलसंपन्न और रूपसंपन्न पदसे चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये
 (८) इसी तरहसे कुलसंपन्न और जयसंपन्न पदसे चतुर्भङ्गी बना
 लेना चाहिये (९) इसी तरहसे बलसम्पन्न और रूपसम्पन्न पदसे भी
 चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (१०) इसी तरह से बल सम्पन्न और
 जय सम्पन्न पदसे भी चतुर्भङ्गी बना लेना चाहिये (११) यहाँ सब

संपन्न (४) नो जातिसंपन्न नो रूपसंपन्न अथ प्रभाषे पुरुषोना यत्
 “जातिसंपन्न नो रूपसंपन्न” आदि चार प्रकार समञ्वा. (५)

कन्थकना नीचे प्रभाषे चार प्रकार यत् उक्त्वा छे—(१) जातिसंपन्न नो
 जयसंपन्न इत्यादि चार प्रकार समञ्वा. अथ प्रभाषे पुरुषोना यत् “जाति-
 संपन्न नो जयसंपन्न” इत्यादि चार प्रकार समञ्वा. ।६।

अथ प्रभाषे कुलसंपन्न अने बलसंपन्न पदो वापरीने यत् यतुलंगी
 अनावी लेवी. ।७।

अथ प्रभाषे कुलसंपन्न अने रूपसंपन्न आ अे पदो वापरीने यत्
 चार भांगा उक्त्वा जेधअे. ।८।

अथ प्रभाषे कुलसंपन्न अने जयसंपन्न, आ अे पदो वापरीने यत्
 चार भांगा अनाववा जेधअे. ।९।

अथ प्रभाषे बलसंपन्न अने रूपसंपन्न आ अे पदोना योगधी
 दसमी यतुलंगी अनाववी जेधअे ।१०।

अथ प्रभाषे बलसंपन्न अने जयसंपन्नना योगधी अगियारमी यत्
 लंगी अनाववी जेधअे. ।११।

चत्वारः कन्धकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः ४। (१२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—सिंहतया नामैको निष्क्रान्तः सिंहतया विहरति १, सिंहतया नामैको निष्क्रान्तः शृगालतया विहरति ३ शृगालतया नामैको निष्क्रान्तः सिंहतया विहरति ३, शृगालतया नामैको निष्क्रान्तः शृगालतया विहरति ४। (१३) ॥ सू०३० ॥

टीका—“ चत्वारि कंधगा ” इत्यादि—कन्धकजातीया अश्वविशेषाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः—कश्चिदश्वः आकोर्णः—पूर्वं वेगादिगुणैर्युक्तत्वाज्जातिमान् स मे प्रतिपक्ष दृष्टान्तके—दार्ष्टान्तरूप पुरुष जात कहना चाहिये, पुनश्च—कन्धक चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—रूपसंपन्न नो जयसंपन्न १ इत्यादि ४ भङ्ग इसी प्रकार से पुरुषजात भी चार कहे गये हैं जैसे—रूप सम्पन्न नो जय सम्पन्न इत्यादि ४ भङ्ग (१२)

पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे—सिंह रूपसे निकलकर सिंह रूपसे विहार करनेवाला १ सिंह रूपसे निकलकर शृगालरूपसे विहार करनेवाला २ शृगाल रूपसे निकलकर सिंहरूप से विहार करनेवाला ३ और शृगाल रूपसे निकलकर शृगाल रूपसे ही विहार करनेवाला ४(१३) टीकार्थ—इस ३० वे सूत्रमें ये पूर्वोक्त १३ सूत्र हैं इनमें कन्धकके प्रकारके साथ पुरुष प्रकारकी साम्यता प्रदर्शित की गई है अतः प्रथम सूत्रगत

येन प्रमाणे ‘इय सम्पन्न नो जयसंपन्न’ इत्यादि चार लांभावाणी आरभी अतुलंगी पणु समञ्च देवी. ११२।

दार्ष्टान्तिक पुरुष सूत्रमां पणु आ प्रकारनी न आर अतुलंगी समञ्च देवी लेधये

पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कक्षा छे—

(१) सिंङ् इपे (गृहस्थानासमांथी) नीकणीने सिंङ् इपे विहार करनार, (२) सिंङ् इपे नीकणीने शियाण इपे विहार करनार, (३) शियाण इपे नीकणीने सिंङ् इपे विहार करनार अने (४) शियाण इपे नीकणीने शियाण इपे न विहार करनार ११३।

टीकार्थ—आ ३० मां सूत्रमां चार लांभावाणा उपयुक्ता १३ सूत्रो आपवामां आण्या छे ते सूत्रो द्वारा कन्धकना प्रकारोनी साथे पुरुष प्रकारोनी साम्यता

પશ્ચાદપિ આકીર્ણો ભવતિ । इति प्रथमः । १ । तथा-एकः पूर्वमाकीर्णः पश्चात्तु खलुङ्कः-अविनीतः=विस्मृतशिक्षो भवति । इति द्वितीयः । २ । तथा-एकः पूर्व खलुङ्कः सन्नपि पश्चात् स आकीर्णः-शिक्षकशिक्षया विनयवेगादिगुणसम्पन्नो भवति । इति तृतीयः । ३ । तथा-एकः पूर्वमपि खलुङ्कः पश्चादपि खलुङ्क एव भवतीति चतुर्थः । ४ । (१)

જો ચાર પ્રકારકે કન્યક કહે ગયે હૈં उनका स्पष्टार्थ इस प्रकार से है- कन्यक जातीय अश्व विशेष होता है इनमें कोई एक कन्यक अश्व ऐसा होता है जो पहिले भी वेगादि गुणोंसे युक्त होनेके कारण आकीर्ण जातिवाला होता है, और पीछे भी वह आकीर्ण ही बना रहता है १ तथा-कोई एक कन्यक अश्व ऐसा होता है जो पहिले तो आकीर्ण वेगादि गुणोंसे युक्त होनेके कारण जातिवाला होता है और बादमें वह खलुङ्क-अविनीत हो जाना है-विस्मृत शिक्षावाला हो जाना है २ तथा कोई एक कन्यक अश्व ऐसा होता है कि पहिले तो वह खलुङ्क-अविनीत होता है और बादमें अश्व शिक्षक की शिक्षासे विनय वेग आदि गुणोंसे सम्पन्न हो जाता है और कोई एक कन्यक अश्व ऐसा होता है जो पहिले भी खलुङ्क-अविनीत होता है और बादमें भी खलुङ्क-अविनीत ही बना रहता है ४ इस प्रकारके ये प्रथम सूत्रके चार भङ्ग हँ इसी प्रकारसे पुरुषजात भी जो चार कहे गये हँ-उनका सारांश

પ્રકટ કરવામાં આવી છે. કન્યક જાતિનો એક અશ્વવિશેષ હોય છે. તે અશ્વ સાથે પુરુષોની અહીં જુદી જુદી સરખામણી કરી છે.

પહેલાં સૂત્રમાં જે ચાર પ્રકારના કન્યક કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે સમજવું—(૧) કોઈ એક કન્યક એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે આકીર્ણ જાતિવાળો હોય છે અને પાછળથી પણ આકીર્ણ જ ચાલુ રહે છે.

(૨) કોઈ એક કન્યક એવો હોય છે કે જે પહેલાં વેગાદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે આકીર્ણ-જાતિવાળો હોય છે, પણ પાછળથી ખલુક (અવિનીત અથવા વિસ્મૃત શિક્ષાવાળો) થઈ જાય છે, (૩) કોઈ એક કન્યક (અશ્વ) એવો હોય છે કે જે પહેલાં તો ખલુક (અવિનીત) હોય છે, પણ પાછળથી અશ્વપાલની તાલીમ મળવાથી વિનય, વેગ આદિ ગુણોથી સંપન્ન થઈ જાય છે (૪) કોઈ એક કન્યક અશ્વ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ખલુક (અવિનીત) હોય છે અને પાછળથી પણ અવિનીત જ ચાલુ રહે છે.

અથ પુરુષદાટ્ઠાંન્ટિકમાહ—

“ ંવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ંલ્યાદિ—ંવમેવ—કન્યકવદેવ પુરુષજા-
તાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞસાનિ, તદ્યથા—ંકઃ—કશ્ચિત્ પુરુષ. આકીર્ણઃ—પૂર્વં વિનયાદિ-
ગુણૈર્વ્યાપ્તો ભવતિ, સ પશ્ચાદપિ આકીર્ણઃ=તૈઃ સમ્પન્ન ંવ ભવતિ । ંતિ પ્રથમઃ
। ૧ । તથા—ંકઃ પૂર્વમાકીર્ણઃ સન્નપિ પશ્ચાત્ સ્વલુઙ્કઃ—અવિનીતો ભવતિ, ંતિ
દ્વિતીયઃ । ૨ । તથા—ંકઃ પૂર્વં સ્વલુઙ્કઃ—અવિનીતઃ સન્નપિ પશ્ચાદ્ આકીર્ણઃ=
વિનયાદિગુણવ્યાપ્તો ભવતિ । ંતિ તૃતીયઃ । ૩ । તથા—ંકઃ પૂર્વમપિ સ્વલુઙ્કઃ
પશ્ચાદપિ સ્વલુઙ્ક ંવ તિષ્ઠતીતિ ચતુર્થઃ । ૪ । ંત્યાશયેનાંંહ—“ ચ૩મંગો ”
ંતિ—ંક્તક્રમેણ ચતુર્મઙ્ગી વોધ્યા । ૧ ।

પુનઃ કન્યકદટાન્ટસૂત્રમ્—

“ ચત્તારિ કંથગા ” ંલ્યાદિ—કન્યકાઃ ચત્તારઃ પ્રજ્ઞસાઃ, તદ્યથા—ંકઃ—
કશ્ચિદશ્વઆકીર્ણઃ—પૂર્વં વિનયવેગાદિગુણસમ્પન્નઃ પશ્ચાદપિ સ આકીર્ણતયા—તૈર્ગુ
ંધી ંસા હી હૈ—કિ કોઈ પુરુષ તો ંસા હોતા હૈ કિ પહિલે ંધી વિન-
યાદિ ગુણોસે રહિત હોતા હૈ ંર ંદ મેં ંધી વહ વિનયાદિ ગુણોસે
યુક્ત બના રહતા હૈ ૧ તથા—કોઈ ંક પુરુષ ંસા હોતા હૈ જો પહિલે
તો—આકીર્ણ હોતા હૈ વિનયાદિ ગુણોસે સહિત હોતા હૈ પર ંદમેં
વહ સ્વલુઙ્ક—અવિનીત હો જાતા હૈ ૨, તથા કોઈ ંક પુરુષ ંસા હોતા
હૈ જો પહિલે તો સ્વલુઙ્ક અવિનીત હોના હૈ પર ંદમેં આકીર્ણ વિન-
યાદિ ગુણો સે સહિત હો જાતા હૈ ૩, ંર કોઈ ંક પુરુષ ંસા હોતા
હૈ જો પહિલે ંધી ંર ંદમેં ંધી સ્વલુઙ્ક અવિનીત કા અવિનીત હી
બના રહતા હૈ ?

દ્વિતીય સૂત્રમેં જો કન્યક ચતુર્મંગી કહી ગઈ હૈ ંસકા સારાંશ
ંસા હૈ—કિ કોઈ ંક અશ્વ ંસા હોતા હૈ જો પહિલે વિનય વેગાદિ

ંટાટ્ઠાંન્ટિક પુરુષ સૂત્રમાં પશુ ંજ પ્રકારના ંર ભાંગા ંને છે તે
ંરે ભાંગાનુ ંવે સ્પટીકરણ કરવામાં ંવે છે—

- (૧) કોઈ ંક પુરુષ ંવો હોય છે કે જે પહેલાં પશુ વિનય દિ
ગુણોથી ંક્રા હોય છે ંને પછી પશુ વિનયાદિ ગુણોથી ંક્રા જ રહે છે.
- (૨) કોઈ ંક પુરુષ પહેલા તો આકીર્ણ (વિનયાદિ ગુણોથી સંપન્ન) હોય
છે પશુ પાછળથી ંક્રા (વિનયાદિ ગુણોથી રહિત) થઈ જાય છે. (૩) કોઈ
ંક પુરુષ પહેલા ંક્રા (વિનયાદિ ગુણોથી રહિત) હોય છે, પશુ પાછળથી
આકીર્ણ (વિનય દિ ગુણોથી ંક્રા) જાય જાય છે. (૪) કોઈ ંક પુરુષ પહેલાં
પશુ ંક્રા (અવિનીત) હોય છે ંને પછી પશુ ંક્રા (અવિનીત) જ ચાલુ રહે છે.

ંબી સૂત્રના કન્યકના જે ંર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પટીકરણ ં

पैर्व्याप्ततया विहरति-विचरति । इति प्रथमः । १ । तथा-एकः आक्षीर्णः सन्नपि=
वेगविनयादिगुणसम्पन्नोऽपि खलुङ्कृतया-अविनीततया विहरति, इति द्वितीयः
। २ । तथा-एकः खलुङ्कः-अविनीतः सन्नपि आक्षीर्णतया-आरोहकगुणाद् वेगा-
दिगुणव्याप्ततया विहरति, इति तृतीयः । ३ । तथा-एकः खलुङ्कः-अविनीतः
खलुङ्कृतया-अविनीततया विहरति । इति चतुर्थः । ४ । (२)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवामेव=अनन्तरोक्तकथक-
वदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पूर्वं विनयशीलादिगुणैरा-
क्षीर्णः=व्याप्तः सन् पश्चादपि तैर्गुणैराक्षीर्णतया-व्याप्ततया विहरति । इति प्रथमो
यज्ञः । १ । तथा-एक आक्षीर्णः खलुङ्कृतया विहरति । इति द्वितीयः । २ ।

गुणोंसे सम्पन्न होता है और इसी तरह से वह चाल भी चलता है
तथा कोई एक अश्व ऐसा होता है जो विनय वेगादि गुणोंसे युक्त होता
है पर चलनेमें अविनीत जैसी चाटवाला होता है २ तथा कोई एक
अश्व ऐसा होता है जो अविनीत होता हुआ भी चढनेवाले पुरुष के
गुणके अनुसार अच्छी चाल से चलता है ३ तथा कोई एक अश्व ऐसा
होता है जो अविनीत ही होता है और अविनीत जैसी ही चाल से
चलता है ४ इसी प्रकारसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो विनयशील
आदि गुणों से सहित होता है और उसी तरह भी चाल
चलता है, तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो विनय-
शील आदि गुणोंसे युक्त हुआ भी अविनीत की जैसी चाल चलता

प्रकारतुं छे—(१) केछ अेक कथक अश्व अेवा डाय छे के ने विनय, वेग
आदि गुणैथी युक्त डाय छे अने तेनी याद पणु विनीत डाय छे. (२)
केछ अेक कथक अेवा डाय छे के ने विनय, वेग आदि गुणैथी तो युक्त
डाय छे पणु तेनी याद अविनीत नेवी डाय छे (३) केछ अेक कथक
अेवा डाय छे के ने अविनीत डेवा छतां पणु तेना पर सवार थनार पुरु
षना गुणु पुरार सारी याद यादनारे डाय छे. (४) केछ अेक कथक अश्व
अविनीत पणु डाय छे अने अविनीत नेवी याद यादनारे पणु डाय छे.

अेव प्रमाणे दार्ष्टान्तिक पुरुषना पणु नीचे प्रमाणे यार प्रकार समजना-

(१) केछ अेक पुरुष विनय, शील आदि गुणैथी युक्त डाय छे अने तेनी
याद पणु अेव प्रकारनी डाय छे (२) केछ अेक पुरुष विनय, शील आदि
गुणैथी युक्त डेवा छतां पणु अविनीतना नेवी तेनी यादवानी दणु डाय

तथा-एकः खलुङ्क आकीर्णतया विहरति, इति तृतीयः । ३ । तथा-एकः खलुङ्कः खलुङ्कतया विहरति । इति चतुर्थः । ४ । इत्याशयेनाऽऽह-“ चउभंगो ” इति-प्रदर्शितक्रमेण चतुर्भङ्गी बोध्या । (२)

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

“ चत्वारि कथमा ” इत्यादि—कन्थकाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-जाति-सम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः १, कुलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि कुलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो कुलसम्पन्नः ४। एते सुगमाः । (३)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव-कन्थकवदेव चत्वारि है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होना है अविनीत आहुधी विनयशीलादि गुणोंसे चाल चलता है ३ और कोई एक पुरुष ऐसा भी होता है अविनीत होता हुआ अविनीत की ही चाल चलता है ४ (२)

तृतीय सूत्र कथित जो कन्थक चतुर्भङ्गी है-उसका सारांश ऐसा है-कोई एक कन्थक अश्व ऐसा होता है जो जातिसम्पन्न हुआ भी कुल सम्पन्न नहीं होता है १, कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुल सम्पन्न होने पर भी जातिसम्पन्न नहीं होता है २ कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न भी होता है और कुल सम्पन्न भी होता है ३ कोई एक अश्व ऐसा होता है जो न जाति सम्पन्न होता है और न कुल सम्पन्न भी होता है ४ इसी प्रकारसे कोई एक

छे (३) कोछ ओक पुरुष विनय, शील आदि शुश्रूथी रक्षित होवा छतां पणु तेनी आलवानी ठम विनयशीलादि शुश्रूसंपन्न होय छे. (४) कोछ पुरुष विनय, शीलादि शुश्रूथी युक्त पणु होतो नथी अने विनीतना नेवी आलधी आलतो पणु नथी.

त्रीज सूत्रमां कन्थकना जे यार प्रकार कछा छे तेनुं हवे स्पष्टीकरणु करवामां आवे छे—(१) कोछ ओक कन्थक अश्व ओवो होय छे के जे जाति-संपन्न होय छे पणु कुलसंपन्न होतो नथी (२) कोछ ओक कन्थक अश्व कुलसंपन्न होय छे पणु जातिसंपन्न होतो नथी. (३) कोछ ओक कन्थक अश्व जातिसंपन्न पणु होय छे अने कुलसंपन्न पणु होय छे अने (४) कोछ ओक कन्थक अश्व जातिसंपन्न होतो नथी अने कुलसंपन्न पणु होतो नथी. ओज प्रमाणे पुरुषोना पणु यार प्रकार पडे छे—(१) कोछ पुरुष

પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથથા—જાતિસમ્પન્નો નામૈકો નો કુલસમ્પન્નઃ ૧।
 एवं चतुर्मङ्गी बोध्या । (३)

પુનઃ કન્થકદષ્ટાન્તમૂત્રમ્—

“ ચત્તારિ કન્થગા ” ઇત્યાદિ—ચત્તારઃ કન્થકાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથથા—જાતિ-
 સમ્પન્નો નામૈકો નો વલસમ્પન્નઃ ૧, વલસમ્પન્નો નામૈકો નો જાતિસમ્પન્નઃ ૨,
 एको जातिसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो बलस-
 म्पन्नः । ४ । एते सुगमाः (४)

અથ પુરુષજાતદાર્ઘાન્તિકમૂત્રમ્—

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव—अनन्तरोक्तकन्थकत्र
 देव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तथथा—जातिसम्पन्नो नामैको नो बलस-
 मनुष्य ऐसा होना है जो जाति सम्पन्न हुआ भी कुलसम्पन्न नहीं
 होता है १, कोई एक कुलसम्पन्न होने पर भी जाति सम्पन्न नहीं
 होता है २, कोई एक जाति सम्पन्न भी होता है और कुल सम्पन्न
 भी होता है ३ और कोई ऐसा होता है जो न जातिसम्पन्न होता
 है और न कुलसम्पन्न भी होता है (४)

ચતુર્થ મૂત્રગત જો કન્થક ચાર પ્રકાર કહે ગયે હેં उनका सारांश
 ऐसा है कि कोई कन्थक ऐसा होता है, जो जाति सम्पन्न होने पर भी बल
 सम्पन्न नहीं होता है १, कोई एक ऐसा होता है जो बलसम्पन्न
 होने पर भी जातिसम्पन्न नहीं होता है २, कोई एक ऐसा होता है
 जो जाति सम्पन्न भी होता है और बल सम्पन्न भी होता है ३, तथा
 कोई एक कन्थक ऐसा भी होता है जो न जातिसम्पन्न होता है और

जातिसम्पन्न होय છે પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કેઈ પુરુષ કુલસંપન્ન
 હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કેઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોય
 છે અને કુલસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કેઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી
 અને કુલસંપન્ન પણ હોતો નથી

એથા સૂત્રમાં કન્થક અધના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ
 નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કેઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન હોય છે પણ
 બલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કેઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે બલ-
 સંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કેઈ એક કન્થક એવો
 હોય છે કે જે જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને બલસંપન્ન પણ હોય છે. (૪)

सम्पन्नः १, एवं-वलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि वलसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो वलसम्पन्नः । १। (४)

पुनः कन्थकदृष्टान्तसूत्रम्—

“ चत्वारि कन्थगा ” इत्यादि—कन्थकाश्चत्वारःप्रज्ञाः, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १। रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः-२। एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः । ४। (५)

अथ पुरुषजातदार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव=अनन्तरोक्तकन्थकवद्वैव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १। रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २। एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३। एको नो जातिसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः । ४। (५)

न बल सम्पन्न भी होता हैं इसी प्रकार से पुरुष प्रकार भी घटित कर लेना चाहिये (४)

पंचम सूत्रगत जो कन्थक प्रकार कहे गये हैं वे इस प्रकार से हैं कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न हुआ भी रूप सम्पन्न नहीं होता है १, रूप सम्पन्न हुआ भी कोई एक जाति सम्पन्न नहीं होता २ कोई एक दोनों प्रकार से सम्पन्न होता है और कोई अश्व ऐसा होता है जो न जाति सम्पन्न होता है और न रूप सम्पन्न ही होता है ४ इसी प्रकारकी चतुर्भंगी पुरुष दार्ष्टान्तमें भी घटित कर लेनी चाहिये (५)

कोई एक कन्थक अश्व अथवा डोय छे के जे जातिसंपन्न पणु डोतो नथी अने बलसंपन्न पणु डोतो नथी अने प्रभाणु दार्ष्टान्तिक पुरुषना चार प्रकारो पणु समलु देवा.

पांचमां सूत्रमां कन्थकना जे चार प्रकारो कथा छे तेनुं स्पष्टीकरण नीचे प्रभाणु छे—(१) कोई एक कन्थक अथवा डोय छे के जे जातिसंपन्न डोवा छतां इप संपन्न डोतो नथी (२) कोई एक कन्थक रूपसंपन्न डोय छे पणु जातिसंपन्न डोतो नथी (३) कोई एक कन्थक जाति अने इप अनेथी संपन्न डोय छे अने (४) कोई एक कन्थक जातिसंपन्न पणु डोतो नथी अने रूपसंपन्न पणु डोतो नथी अने प्रभाणु दार्ष्टान्तिक पुरुषना पणु चार प्रकारो समलु देवा.

પુનઃ કન્યકદૃષ્ટાન્તસૂત્રમ્—

“ ચત્તારિ કંથગા ” ઇત્યાદિ—કન્યકાશ્વન્વારઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તદ્ધયા—જાતિસમ્પન્નો નામૈકો નો જયસમ્પન્નઃ ૧, જયસમ્પન્નો નામૈકો નો જાતિસમ્પન્નઃ ૨, એકો જાતિસમ્પન્નોઽપિ જયસમ્પન્નોઽપિ ૩। એકો નો જાતિસમ્પન્નો નો જયસમ્પન્નઃ ૪। એતે સુગમાઃ, નવરં—જયઃ—પરાભિભવઃ । (૬)

અત્ર પુરુષજાતદાર્ષ્ટાન્તિકસૂત્રમ્—

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એવમેવ—અનન્તરોક્તકન્યકવ—દેવ ચત્વારિ પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞતાનિ, તદ્ધયા—જાતિસમ્પન્નો નામૈકો નો જયસમ્પન્નઃ ૧। જયસમ્પન્નો નામૈકો નો જાતિસમ્પન્નઃ ૨। એકો જાતિસમ્પન્નોઽપિ જયસમ્પન્નોઽપિ ૩। એકો નો જાતિસમ્પન્નો નો જયસમ્પન્નઃ ૪ (૬)

છઠે સૂત્રમેં જો કન્યક ચતુર્ભંગી કહી ગઈ છે તે વહ હમ્મ પ્રકાર સે છે જૈસે કોઈ એક કન્યક એસા હોતા છે જો જાતિ સમ્પન્ન હુઆ મી જય સમ્પન્ન નહીં હોતા છે ૧ કોઈ એક કન્યક જય સમ્પન્ન હોને પર મી જાતિ સમ્પન્ન નહીં હોતા છે ૨, કોઈ એક કન્યક ઉભય સમ્પન્ન હોતા છે ૩ ઓર કોઈ કન્યક એસા મી હોતા છે જો જાતિ સમ્પન્ન હી હોતા છે ૪, પરકા અભિભવ કરના હસકા નામ જય છે (૬) હસી પ્રકારસે પુરુષ મી ચાર પ્રકારકે હોતે છે—જૈસે કોઈ એક પુરુષ જાતિ સમ્પન્ન હોતા હુઆ મી જય સમ્પન્ન નહીં હોતા છે. ૧ કોઈ એક જયસમ્પન્ન હોતા હુઆ મી જાતિ સમ્પન્ન નહીં હોતા છે ૨ કોઈ એક જાતિ ઓર જય હન દોનોસે મી સમ્પન્ન હોતા છે ૩ ઓર કોઈ એક પુરુષ જાતિ ઓર જય હન દોનો સે મી સમ્પન્ન નહીં હોતા છે ૪ (૬)

છઠા સૂત્રમાં કન્યકના જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) કોઈ એક કન્યક જાતિસંપન્ન હોય છે પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્યક જયસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્યક જાતિ અને જય બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ એક કન્યક જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ હોતો નથી એજ પ્રમાણે દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—

(૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ જયસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને જયસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જયસંપન્ન પણ હોતો નથી.

“ एवं कुलसंपण्णेण य बलसंपण्णेण य ४ ” इति—एवं—यथा—जातिसम्पन्नेन जयसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्रोक्ता तथा—कुलसम्पन्नेन च बलसम्पन्नेन च चतुर्भङ्गी भणनीया, तथाहि—चत्वारः कन्थकास्तद्वत् चत्वारि पुरुषजातानि च भवन्ति, तद्यथा—कुलसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः १, बलसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः २, एकः कुलसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि, ३, एको नो कुलसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः । ४ । (७)

“ कुलसंपण्णेण य बलसंपण्णेण य ” इति—कुलसम्पन्नेन रूपसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्राग्वद्भणनीयाः, तथाहि—चत्वारः कन्थकाः—तद्वत् चत्वारि पुरु-

सातवे सूत्रमें जैसी जातिसम्पन्न और जयसम्पन्न पदोंको जोड़कर छठे सूत्रमें चतुर्भङ्गी बनाई गई है वैसी है चतुर्भङ्गी कुलसम्पन्न और बलसम्पन्न इन दो पदोंको जोड़कर बनाई गई है, जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो कुलसम्पन्न होता हुआ भी बलसम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक बलसम्पन्न हुआ भी कुलसम्पन्न नहीं होता २ कोई एक कन्थक उभयसम्पन्न भी होता है ३ और कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो न कुलसम्पन्न होता है और न बलसम्पन्न होता ४ इसी प्रकारसे पुरुषों में भी कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कुलसम्पन्न होता हुआ भी बलसम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी कुल सम्पन्न नहीं होता २ कोई एक ऐसा होता है जो उभयसम्पन्न होता है ३ और कोई एक ऐसा भी होता है जो उभय सम्पन्न नहीं भी होता है ४ (७)

सातमा सूत्रमां कन्थक-अश्वना नीचे प्रमाणे चार प्रकार दह्या छे—
 (१) केध अक कन्थक कुलसंपन्न डोय छे, पणु अलसंपन्न डोतो नथी. (२) केध अक कन्थक अलसंपन्न डोय छे, पणु कुलसंपन्न डोतो नथी. (३) केध अक कन्थक कुलसंपन्न पणु डोय छे अने अलसंपन्न पणु डोय छे अने (४) केध अक कन्थक कुलसंपन्न पणु डोतो नथी अने अलसंपन्न पणु डोतो नथी. अणु प्रमाणे दार्ष्टान्तिक पुरुषना पणु नीचे प्रमाणे चार प्रकार पडे छे—

(१) केध पुरुष कुलसंपन्न डोय छे, पणु अलसंपन्न डोतो नथी.
 (२) केध पुरुष अलसंपन्न डोय छे, पणु कुलसंपन्न डोतो नथी. (३) केध कुलसंपन्न पणु डोय छे अने अलसंपन्न पणु डोय छे. (४) केध कुलसंपन्न पणु डोतो नथी अने अलसंपन्न पणु डोतो नथी.

પજાતાનિ મવન્તિ, તથા—કુલસમ્પન્નો નામિકો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૧, રૂપસમ્પન્નો નામિકો નો કુલસમ્પન્નઃ । ૨ । એકઃ કુલસમ્પન્નોઽપિ રૂપસમ્પન્નોઽપિ ૩। એકો નો કુલસમ્પન્નો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૪। (૮)

“ કુલસંપણેગ ય જયસંપણેગ ય ” ઇતિ—કુલસમ્પન્નેન જયસમ્પન્નેન ચ સહ પ્રાગ્વચતુર્ભંગી વાચ્યા, તથાહિ—ચન્વારઃ કન્થકાસ્તદ્વચત્વારિ પુરુષજાતાનિ

આઠવેં સૂત્રમેં જો કુલસમ્પન્ન ઓર રૂપ સમ્પન્ન પદોંકો જોડકર ચતુર્ભંગી પ્રકટ થીં ગઈં હૈં વહ દસ પ્રકારસેં હૈં—જૈસેં કોઈં એક કન્થક એસા હોતા હૈં જો કુલ સમ્પન્ન હોતા હુઆ ઓ રૂપ સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈં ૧ કોઈં એક કન્થક એસા હોતા હૈં જો રૂપ સમ્પન્ન હોતા હુઆ ઓ કુલસમ્પન્ન નહીં હોતા હૈં ૨ કોઈં એક કન્થક એસા હોતા હૈં જો ઉભય સમ્પન્ન હોતા હૈં ૩ ઓર કોઈં એક કન્થક इन दोनों से भी रहित होता है ४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार होंतें हैं जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कूल सम्पन्न होता हुआ भी रूप सम्पन्न नहीं होता है ४ इत्यादि (८)

૯ વેં સૂત્રમેં જો કુલસમ્પન્ન ઓર જય સમ્પન્ન પદોંકો જોડકર ચતુર્ભંગી બનાઈ ગઈં હૈં વહ દસ પ્રકાર સેં હૈં જૈસેં—કોઈં એક કન્થક એસા હોતા હૈં જો કુલ સમ્પન્ન હોતા હુઆ ઓ જય સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈં ૧ કોઈં એક કન્થક જય સમ્પન્ન હોને પર ઓ કુલસમ્પન્ન નહીં હોતા હૈં ૨

આઠમાં સૂત્રમાં કુલસંપન્ન અને રૂપસંપન્નના યોગથી કન્થક વિષયક જે ચાર ભાંગા કહ્યા છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે કુલસંપન્ન હોવા છતાં પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્થક રૂપસંપન્ન હોય છે, પણ કુલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્થક કુળ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ એક કન્થક કુળ અને રૂપ બન્નેથી રહિત હોય છે.

એજ પ્રમાણે ઘર્ષાન્તિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કુળસંપન્ન હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. બાકીના ત્રણ પ્રકારો બીજે જ સમજી લેવા.

નવમાં સૂત્રમાં કુલસંપન્ન અને જયસંપન્નના યોગથી કન્થકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કન્થક એવો હોય છે કે જે કુલસંપન્ન હોય છે, પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ જયસંપન્ન હોય

च भवन्ति, तद्यथा—कुलसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः । २ । एकः कुलसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३ । एको नो कुलसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः । ४ । (९)

“ एवं बलसंपन्नेण य ख्वसंपन्नेण य ” इति—एवं—यथा कुलसम्पन्नेन जयसम्पन्नेन च सह चतुर्भङ्गी प्रोक्ता, तथा बलसम्पन्नेन च रूपसम्पन्नेन च चतुर्भङ्गी भणितव्या, तथाहि—चत्वारः कन्थकास्तद्वत् चत्वारि पुरुषजातानि च भवन्ति, तद्यथा—बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो बल-

कोई एक कन्थक उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई एक कन्थक इन दोनोंसे भी सम्पन्न नहीं होता है ४ इसी प्रकारसे इन चार भंगोंको पुरुषमें भी योजित करके कहना चाहिये (९)

१० वें सूत्रमें जो चतुर्भङ्गी बल और रूप इन दो पदोंकी सम्पन्नता करके बनाई गई है वह इस प्रकारसे है—जैसे कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी रूप सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्थक रूप सम्पन्न होने पर भी बल सम्पन्न नहीं होता है कोई एक उभय सम्पन्न होता है ३ और कोई एक कन्थक ऐसा होता है जो न बल सम्पन्न होता है और न रूपसम्पन्न ही होता है तो जैसे ये चार प्रकारके कन्थक कहे गये हैं। इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो बल सम्पन्न होने पर भी रूप सम्पन्न नहीं होता है तथा कोई एक ऐसा होता है जो रूप

छे पणु कुणसंपन्न डोतो नथी. (३) डोड कुण अने जय अन्नेथी संपन्न डोय छे अने (४) डोड कन्थक कुणसंपन्न पणु डोतो नथी अने जयसंपन्न पणु डोतो नथी.

दार्ष्टान्तिक पुरुषना पणु आ प्रकारना ज चार भांगा (प्रकारे) समलु लेवा जेडजे.

इसमां सूत्रमां अल अने ३प, आ अन्ने पढोना येजथी कन्थक विप-पक जे चतुर्भङ्गी कही छे तेनुं स्पष्टीकरणु नीचे प्रभाणु छे—

(१) डोड अेक कन्थक अलसंपन्न डोय छे पणु ३पसंपन्न डोतो नथी (२) डोड अेक ३पसंपन्न डोय छे पणु अलसंपन्न डोतो नथी. (३) डोड अेक कन्थक उलयसंपन्न डोय छे. (४) डोड अेक कन्थक अलसंपन्न पणु डोतो नथी अने ३पसंपन्न पणु डोतो नथी अेज प्रभाणु पुरुषोना नीचे प्रभाणु पणु चार प्रकार कहा छे—

(१) डोड अेक पुरुष अलसंपन्न डोय छे पणु ३पसंपन्न डोतो नथी.

સમ્પન્નઃ ૨, એકો વલસમ્પન્નોઽપિ રૂપસમ્પન્નોઽપિ ૩, એકો નો વલસમ્પન્નો નો રૂપસમ્પન્નઃ ૪। (૧૦)

“વલસંપન્નેણ ચ જયસંપન્નેણ ચ” ઇતિ—વલસંપન્નેન જયસંપન્નેન ચ સહ પૂર્વવચ્ચતુર્ભંગી વોધ્યા, તથાદિ—ચત્વારઃ કન્યકાસ્તદ્વચ્ચત્વારિ પુરુષજાતાનિ ચ ભવન્તિ, તથથા—વલસમ્પન્નો નામૈકો નો જયસમ્પન્નઃ ૧, જયસમ્પન્નો નામૈકો નો વલસમ્પન્નઃ ૨, એકો વલસમ્પન્નોઽપિ જયસમ્પન્નોઽપિ ૩, એકો નો વલસમ્પન્નો નો જયસમ્પન્નઃ ૪। (૧૧)

સમ્પન્ન હોને પર મીવલ સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈ ૨ શેષ દો મદ્ગ પૂર્વોક્તિ રૂપસે હી જાન લેના ચાહિયે ૪ (૧૦)

ગ્યારહાવે સૂત્રમેં જો “વલ સમ્પન્ન ઓર જય સમ્પન્ન” હન દો પદોંકો જોડકર ચતુર્ભંગી વનાઈ ગઈ હૈ વહ હસ પ્રકારસે હૈ જૈસે—કોઈ એક કન્યક એસા હોતા હૈ જો વલ સમ્પન્ન હુઆ મી જય સંપન્ન નહીં હોતા હૈ ૧ કોઈ એક કન્યક જય સંપન્ન હુઆ મી વલ સંપન્ન નહીં હોતા હૈ ૨ તથા કોઈ એક કન્યક વલ સંપન્ન મી હોતા હૈ ઓર જય સંપન્ન મી હોતા હૈ ૩ ઓર કોઈ એક કન્યક ન વલ સમ્પન્ન હોતા હૈ ઓર ન જય સમ્પન્ન હોતા હૈ ૪ હસી તરહસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો વલસમ્પન્ન હોને પર મી જય સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈ ૧ કોઈ એક એસા હોતા હૈ જો જય સમ્પન્ન હોને પર મી વલ સમ્પન્ન નહીં હોતા હૈ ૨ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો વલ સમ્પન્ન હોતા હૈ ઓર જય સમ્પન્ન મી હોતા હૈ ૩ ઓર કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો ન વલ સમ્પન્ન

(૨) કોઈ એક પુરુષ રૂપસમ્પન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩)

કોઈ ઉભયસંપન્ન હોય છે અને (૪) કોઈ ઉભયથી રહિત હોય છે.

અગિયારમાં સૂત્રમાં બલસંપન્ન અને જયસંપન્નના યોગથી કન્યક વિષયક ચાર ભાંગા આ પ્રમાણે બને છે—(૧) કોઈ એક કન્યક બલસંપન્ન હોવા છતાં પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ એક કન્યક જયસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ એક કન્યક બલસંપન્ન પણ હોય છે અને જયસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ એક કન્યક બલસંપન્ન પણ નથી હોતો અને જયસંપન્ન પણ નથી હોતો.

એજ પ્રમાણે દાર્શનિક પુરુષના પણ નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ બલસંપન્ન હોય છે, પણ જયસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ જયસંપન્ન હોય છે પણ બલસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ

‘ चत्वारि कंथगा ’ इत्यादि—चत्वारः कन्धकाः प्रज्ञाताः, तद्यथा—रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३, एको नो रूपसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४। ‘ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—एवमेव कन्धकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रूपसम्पन्नो नामैको नो जयसम्पन्नः १, जयसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि जयसम्पन्नोऽपि ३, एको नो रूपसम्पन्नो नो जयसम्पन्नः ४। (१२)

अथ प्रव्रजितमुद्दिश्य चतुर्भङ्गीमाह—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः सिंहतया=सिंहसदृशतया—होता है और न जय सम्पन्न होता है ४ इस तरहसे कन्धकोंके चतुर्भङ्गी की तरह पुरुष जात भी चार भङ्गोंवाले होते हैं (११)

१२ वे सूत्रमें जो कन्धक “ रूप सम्पन्न नो जय सम्पन्न ” आदि रूपसे चतुर्भङ्गी कही गई है वह इस प्रकारसे है—जैसे कोई एक कन्धक ऐसा होता है जो रूप सम्पन्न तो होता है पर जय सम्पन्न नहीं होता है १ कोई एक कन्धक ऐसा होता है जो जय सम्पन्न होता है पर रूप सम्पन्न नहीं होता है २ कोई एक कन्धक ऐसा होता है जो रूप सम्पन्न भी होता है और जय सम्पन्न भी होता है ३ तथा कोई एक कन्धक ऐसा भी होता है जो न रूप सम्पन्न होता है और न जय सम्पन्न ही होता है ४ इसी प्रकारके चार भङ्ग पुरुषोंकी चतुर्विधता होने में भी बना लेना चाहिये (१२)

अथ सूत्रकारने प्रव्रजित को लक्ष्यकर इस १३ वे सूत्रमें जो चतुर्भङ्गी बनाई है वह इस प्रकार से है—जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है,

अथसंपन्न पणु डोय छे अने जयसंपन्न पणु डोय छे. (४) कोय अथसंपन्न पणु नथी डोतो अने जयसंपन्न पणु नथी डोतो.

इवे आरमां सूत्रमां “ रूपसंपन्न नो जयसंपन्न ” आदि जे आर कन्धक प्रकारे कथा छे तेनुं स्पष्टीकरणे करवामां आवे छे—(१) कोय अथ अथ रूपसंपन्न डोय छे पणु जयसंपन्न डोतो नथी. (२) कोय अथ जयसंपन्न डोय छे पणु रूपसंपन्न डोतो नथी. (३) कोय अथ रूपसंपन्न पणु डोय छे अने जयसंपन्न पणु डोय छे. (४) कोय अथ रूपसंपन्न पणु डोतो नथी अने जयसंपन्न पणु नथी डोतो.

आ कन्धकविषयक आर लांगा जेवा ज पुरुषविषयक आर लांगा पणु जते ज समञ्ज देवा.

પરાક્રમવૃત્ત્યેત્યર્થઃ, ગૃહાવાસાદ્ નિષ્ક્રાન્તઃ પ્રવ્રજિતઃ=નિર્ગતઃ સન્ સિંહતયા=પરાક્રમ-
વૃત્ત્યૈવ વિહરતિ=ઉદ્યતવિહારેણ વિહરતિ । इति प्रथमः । ૧ । તથા—एकः सिंहतया गृहा-
वासाद् निष्क्रान्तः शृगालतया=शृगालसदृशतया शिथिलवृत्त્યેત્યર્થઃ વિહરતિ ।
इति द्वितीयः । ૨ । તથા—एकः शृगालतया गृहावासाद् निष्क्रान्तः सन् सिंहतया
विहरति । इति तृतीयः । ૩ । एकः शृगालतया गृहावासाद् निष्क्रान्तः शृगालतया
विहरति । इति चतुर्थः । ૪ । (૧૩) ॥ सू० ૩० ॥

પૂર્વ પુરુષાણાં જાત્યાદિ ગુણૈરશ્વાદિસામ્યમુક્તં, સામ્પ્રતમંપ્રતિષ્ઠાનાદીનામા-
યામવિષ્કમ્ભાદિપ્રમાણેન સામ્યમાહ—

મૂલમ્—ચત્તારિ લોગે સમા પળગત્તા, તં જહા—અપહટ્ટાણે
નરણ ૧, જંબુહીવે ૨, પાલણ જાળવિમાણે ૩, સવટ્ટુસિદ્ધે મહા-

જો સિંહકી જૈસી વૃત્તિસે—પરાક્રમવૃત્તિ સે ગૃહાવાસસે નિષ્ક્રાન્ત
હોતા હૈ ઓર એસી હી વૃત્તિસે વહ વિહાર કરતા હૈ ૧ કોઈ એક પુરુષ
એસા હોતા હૈ જો સિંહકી જૈસી વૃત્તિસે તો ગૃહાવાસ સે નિષ્ક્રાન્ત હોતા
પર વહ શૃગાલકી જૈસી વૃત્તિસે—શિથિલ વૃત્તિસે—વિહાર કરતા હૈ ૨
તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો શૃગાલકી જૈસી વૃત્તિસે શિથિલ-
વૃત્તિસે—ગૃહાવાસ સે નિષ્ક્રાન્ત હોતા હૈ પર વહ સિંહકી જૈસી વૃત્તિસે
વિહાર કરતા હૈ ૩ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો શૃગાલકી
જૈસી વૃત્તિસે હી તો ગૃહાવાસ સે નિષ્ક્રાન્ત (પ્રવ્રજિત) હોતા હૈ ઓર
શૃગાલકી જૈસી વૃત્તિસેહી વિહાર કરતા હૈ ૪ (૧૩) ॥ સૂત્ર ૩૦ ॥

૧૩ માં સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રવ્રજિત પુરુષના ચાર પ્રકારોનું કથન કરતી
બે અંતર્ભાગી કહી છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સિંહના જેવી વૃત્તિથી
પરાક્રમ વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળે છે—પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરે છે અને
એવી જ વૃત્તિથી વિહાર કરે છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સિંહના જેવી વૃત્તિથી ગૃહા-
વાસમાંથી નીકળી નય છે. પણ શિયાળના જેવી વૃત્તિથી (શિથિલ વૃત્તિથી)
વિહાર કરે છે

(૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે શિયાળના જેવી વૃત્તિથી
ગૃહાવાસમાંથી નીકળી નય છે, પણ સિંહના જેવી વૃત્તિથી વિહાર કરે છે.

(૪) કોઈ એક પુરુષ શિયાળના જેવી વૃત્તિથી ગૃહાવાસમાંથી નીકળી નય છે
અને શિયાળના જેવી વૃત્તિથી જ વિહાર કરે છે. ॥ સૂ ૩૦ ॥

विमाणे ४। चत्वारि लोके समा सपक्खि सपडिदिस्सि पण्णत्ता,
तं जहा—सीमंतए नरए १, समयक्खेत्ते २, उड्ढविमाणे ३,
ईसीपब्भारा पुढवी ४ ॥ सू० ३१ ॥

छाया—चत्वारो लोके समाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अप्रतिष्ठानो नरकः १,
जम्बूद्वीपो द्वीपः २, पालकं यानविमानं ३, सर्वार्थसिद्धं महाविमानम् । ४ ।
चत्वारो लोके समाः सपक्खं सप्रतिदिक्कं प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—सीमन्तको नरकः १,
समयक्षेत्रम् २, उर्ध्वविमानम् ३ ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ४ ॥ ३१-॥

टीका—“ चत्वारि लोके ” इत्यादि—लोके चत्वारः—चतुःसंख्यकाः पदार्थाः
समाः—प्रमाणतः समानाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा=अप्रतिष्ठानः—तदाख्यो नरकः=नरका-
ऽऽवासः, स च सप्तमनरकपृथिव्यां काल-महाकाल-रौरव-महारौरव-ऽप्रतिष्ठा-
नानां पञ्चानां नरकाऽऽवासानां मध्यवर्ती योजनऋक्षप्रमाणः १, तथा—जम्बूद्वीपो

इस प्रकारसे जात्य दि गुणोंको लेकर पुरुषोंकी समानता अश्वा-
दिकोंके साथ कही अब सूत्रकार अप्रतिष्ठान आदिकोंकी समानता
आयाम विष्कम्भ को लेकर प्रकट करते हैं—

“ चत्वारि लोके समा पण्णत्ता ” इत्यादि सूत्र ३१ ॥

लोकमें ये चार पदार्थ प्रमाणकी अपेक्षा समान कहे गये हैं—उनके
नाम इस प्रकारसे हैं—अप्रतिष्ठान नरक १ जम्बूद्वीप नामका द्वीप २
पालकयान विमान ३ और सर्वार्थ सिद्ध महाविमान ४

अप्रतिष्ठान नामका नरक-नरकावास-सप्तम नरक पृथिवी में
जो पांच ये काल, महाकाल, रौरव, महारौरव और अप्रतिष्ठान नरका-
वास कहे गये हैं उनके मध्यमें है यह एक लाख योजनका प्रमाण-

आ प्रकारे ऋति आदि गुणोनी अपेक्षाये अश्वादिकोनी साथे पुरुषोनी
समानतानुं कथन करीने इवे सूत्रकार अप्रतिष्ठान आदिकोनी समानता, आय.म,
विष्कंभ आदिने अनुलक्षीने प्रकट करे छे—

“ चत्वारि लोके समा पण्णत्ता ” इत्यादि—(३१)

लोकमां आ चार स्थानो प्रमाणोनी अपेक्षाये समान कक्षा छे—(१)
अप्रतिष्ठान नरक, (२) जम्बूद्वीप नामको द्वीप, (३) पालकयान विमान अने
(४) सर्वार्थसिद्ध नामको महाविमान.

सातमी पृथ्वीमां (नरकमां) नीचे प्रमाणे पांच नरकावासो आवेला छे.
(१) काल, (२) महाकाल, (३) रौरव, (४) महारौरव अने (५) अप्रतिष्ठान.
आ अप्रतिष्ठान नामको नरकावास उपरना पांचे नरकावासोनी मध्यमां आवेला

द्वीपः २, तथा—पालकं—पालकदेवनिर्मितं सौधमेन्द्राधिष्ठितं यानविमानं—यात्यने-
नेति यानं तच्च तद् विमानं च यानविमानं, यद्वा—यानाय=गमनाय विमानं यान-
विमानं, न तु शाश्वतम् ३, तथा—सर्वार्थसिद्धनामकं पञ्चानामनुत्तरविमानानां मध्य-
वर्ति विमानम् ४। एते चत्वारः प्रमाणतः समाः सन्ति ।

पुनः सीमन्तकनरकादयश्चत्वारः प्रमाणतः समाः सन्तीत्याह—

“ चत्वारि लोके ” इत्यादि—लोके चत्वार—सीमन्तकनरकावासः सपक्षं—
समानाः पक्षाः=पार्श्वाः पूर्वापरदक्षिणोत्तररूपा दिशो यस्मिन् तत् सपक्षम्=
समानपार्श्वमित्यर्थः, ‘ सपक्षिण ’ इत्यत्रानुत्वार इकारश्च प्राकृतत्वात्, तथा—
सप्रतिदिक्—समानाः प्रतिदिशो—विदिशो यस्मिन् तत् सप्रतिदिक्=समानविदि-
गित्यर्थः, यद्वा—‘ सदृशाः पक्षैः सपक्षं, सदृशाः प्रतिदिग्भिः सप्रतिदिक् ’ इति
विग्रहे सादृश्येऽव्ययीभावः, समासदृश्येऽपि क्रियाविशेषणमेतद्वयम्, तच्चात्यन्त-
साम्यज्ञापनार्थम् । ततश्च सपक्षं सप्रतिदिक् यथा स्थानतथा समाः=प्रमाणतन्मुल्याः

वाला है तथा—जम्बूद्वीप नामका द्वीप पालक विमान जो कि पालक
देवके द्वारा निर्मित होता है और सौधमेन्द्र से अधिष्ठित होता है
ऐसा यानविमान तथा—सर्वार्थ सिद्ध नामक विमान जो कि पांच अनु-
त्तर विमानोंके मध्यमें है वह—इस प्रकारसे ये प्रमाणकी अपेक्षा समान
कहे गये हैं । पालक विमान शाश्वत नहीं होता है क्योंकि सौधमेन्द्र
जब जाता है तब उसका निर्माण होता है।

पुनश्च—सीमन्तक नरक आदि चार भी प्रमाण की अपेक्षा सम
कहे गये हैं उनके नाम इस प्रकारसे हैं—सीमन्तक १ समयक्षेत्र २ उड्डु
विमान ३ और ईषत्प्राग्भारापृथिवी(सिद्धशिला) ४ ये चारों सप्रतिदिक्

छे. तेना विस्तार ऐकं लाघं योजन प्रमाणु क्छो छे. जम्बूद्वीप नामना
द्वीपेना विस्तार पणु ऐकं लाघं योजन प्रमाणु क्छो छे पालक विमान पालक
देवना द्वारा निर्मित थाय छे अने सौधमेन्द्र द्वारा अधिष्ठित होय छे तेना
विस्तार पणु ऐकं लाघं योजन प्रमाणु क्छो छे सर्वार्थसिद्ध नामनुं विमान
पांच अनुत्तर विमानोनी मध्यमां छे तेना विस्तार पणु ऐकं लाघं योजन
प्रमाणु क्छो छे. पालकयान विमान शाश्वत होतुं नथी, कारणु के सौधमेन्द्र
न्यारे जय छे त्यारे तेनुं निर्माणु थाय छे.

वणी सीमन्तक नरक आदि चार स्थाने प्रमाणनी अपेक्षासे सरभां
क्छां छे—ते चारनां नाम नीचे प्रमाणु छे—(१) सीमन्तक, (२) समय क्षेत्र,
(३) उड्डु विमान अने (४) ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी, आ चारे सप्रतिदिक् अने

पञ्चमाः, तद्यथा-सीमन्तकः-तदाख्यो नरकः, स च प्रथमपृथिव्यां प्रथमप्रस्तटे पञ्चचत्पारिशद्योजनशतमहस्रममाणोऽस्ति १, तथा-समयक्षेत्रं-समयः-कालस्तदुप-
लक्षितं क्षेत्रं समयक्षेत्रं=मनुष्यक्षेत्रम् २, उर्ध्वविमानं-सौधमे प्रथमप्रस्तटे एवेदमस्ति
३, ईषत्प्राग्भारा-ईषद्-अल्पो रत्नप्रभाद्यपेक्षया प्राग्भारः-उन्नततादिरूपो यस्यां
सेपत्प्राग्भारा पृथिवी । ४ । ॥ सू० ३१ ॥

अनन्तरमीषत्प्राग्भारा पृथिवी प्रोक्ता, सा चोर्ध्वलोके भवतीत्यूर्ध्वलोकप्रस्ता-
वादिदमाह—

मूलम्—उड्डुलोगे णं चत्तारि बिसरीरा पणत्ता, तं जहा--
पुढविकाइया, १, आउकायिका २, वणस्सइकाइया ३, उराला
तसा पाणा ४ ।

अहोलोगे णं चत्तारि बिसरीरा पणत्ता, तं जहा--एवं
चेव, एवं तिरियलोएवि । ॥ सू० ३२ ॥

और सपक्षहैं। इनमें सीमन्तक नरकावास प्रथम पृथिवीमें प्रथम प्रस्तरमें
है इसका प्रमाण ४५ लाख योजन प्रमाणवाला है यह पृथिवी रत्नप्रभा
आदि पृथिवियोंकी अपेक्षा उन्नतता (ऊँचाई) आदि रूप प्राग्भारमें अल्प
है इसलिये इसका “ ईषत्प्राग्भारा ” ऐसा नाम हुआ है। इन चारोंके
पूर्व पश्चिम दक्षिण और उत्तर दिशारूप पक्ष समान हैं अर्थात् ये
समान पार्श्ववाले हैं, इसलिये इन्हें सपक्ष ऐसा कहा गया है तथा ये
समान विदिशावाले हैं इसलिये इन्हें सप्रतिदिक् कहा गया है। सू० ३१।

सपक्ष छे. सीमन्तक नरकावास पड़ेली पृथ्वी (नरक)ना प्रथम प्रस्तरमां छे-
ते ४५ लाख योजन प्रमाण विस्तारवाणो छे.

मनुष्यक्षेत्रने समयक्षेत्रं कडे छे. काणथी उपलक्षित होवाने कारणे मनुष्य-
क्षेत्रनुं नाम समयक्षेत्र पड्युं छे.

आ समयक्षेत्रने विस्तार पणु ४५ लाख योजन प्रमाण छे. उडुविमान
सौधमकल्पना पड़ेतो प्रस्तरमां रडेहुं छे. तेने विस्तार पणु ४५ लाख
योजन प्रमाण छे. ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी पणु ४५ लाख योजनना विस्तार-
वाणी छे आ पृथ्वी रत्नप्रभा आदि पृथ्वीओ करतां ओंयाई आदि रूप
प्राग्भारमां अल्प होवाने कारणे तेनुं नाम “ ईषत्प्राग्भारा ” छे. ते यारेना
पूर्व, पश्चिम, उत्तर अने दक्षिण दिशाए पक्ष समान छे-अटवे के ते
यारे समान पार्श्ववाणा होवाथी तेमने सपक्ष कडेवामां आवेल छे. तथा
तेओ समान विदिशायुक्त होवाथी तेमने सप्रतिदिक् कडेवामां आवेल छे. सू० ३१

छाया—ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारो द्विशरीराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पृथिवीकायिकाः १, अप्कायिकाः २, वनस्पतिकायिकाः ३, उदारारसप्राणाः प्राणाः ४।

अधोलोके खलु चत्वारो द्विशरीराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एवमेव, एवं तिर्यग्लोकेऽपि । ॥ सू० ३२ ॥

टीका—“उद्धलोगे णं ” इत्यादि—ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारः—चतुःसंख्यका द्विशरीराः—द्वे शरीरे येषां ते तथा, प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पृथिवीकायिकाः—पृथिव्येव कायो येषां ते तथा १, अप्कायिकाः २, वनस्पतिकायिकाः ३, उदाराः—स्थूलाः त्रसाः पञ्चेन्द्रियत्रसाः प्राणाः—प्राणिनः । अयं भावः केषांचित्—पृथिव्यव्वनस्पति

अनन्तर कथित ईषत्प्राग्भारा पृथिवी उर्ध्वलोकमें हैं इसलिये अब सूत्रकार उर्ध्वलोकके वर्णन से यह सूत्र कहते हैं—

उद्धलोगे णं चत्वारि विसरीरा इत्यादि ॥ सूत्र ३२ ॥

ऊर्ध्वलोकमें चार दो शरीरवाले कहे गये हैं—जैसे—पृथिवीकायिक १ अप्कायिक २ वनस्पतिकायिक ३ और उदारत्रसप्राण ४ ।

पुनश्च—अधोलोकमें चार दो शरीरवाले कहे गये हैं जैसे—पृथिवीकायिक १ आदि इसी तरहसे तिर्यग्लोकमें भी समझना चाहिये ।

दो शरीर जिनके होते हैं वे द्वि शरीर हैं इनमें पृथिवीकायिक पृथिवी ही हैं काय जिन्होंका वे पृथिवीकायिक १ इसी तरहसे अप्ही काय जिन्होंका वे अप्कायिक हैं २ वनस्पतिही है शरीर जिन्होंका वे वनस्पतिकायिक हैं—एवं पंचेन्द्रिय प्राणी स्थूल त्रस हैं । इस कथनका भाव

पढेवाना सूत्रमां जे षत्प्राग्भारा पृथ्वीनी वात कस्वामां आवी ते षत्प्राग्भारा पृथ्वी उर्ध्वलोकमां छे ते स णंधने अनुलक्षिने हवे सूत्रकार उर्ध्वलोकतुं चार स्थानकनी अपेक्षाये कथन करे छे—

“उद्धलोगे णं चत्वारि विसरीरा ” इत्यादि ३२

उर्ध्वलोकमां नीचेना चार लोवने जे शरीरवाणा कह्या छे.

(१) पृथ्वीकायिक, (२) अप्कायिक, (३) वनस्पतिकायिक अने (४) उदारत्रसप्राण.

(१) पृथ्वीकायिक आदि उपर्युक्त चार प्रकारे जे समजवा. जेज प्रभाषे तिर्यग्लोकमां पणु जेज चार लोवने जे शरीरवाणा समजवा.

जेमने जे शरीर डाय छे तेमने द्विशरीरी कडे छे. जेमां पढेवा पृथ्वीकायिके कह्या छे. पृथ्वी ज छे काय जेनी जेवा लोवने पृथ्वीकायिक कडे छे अप् (जण)ज छे काय जेमनी जेवा लोवने अप्कायिक कडे छे. वनस्पति ज छे काय जेमनी जेवा लोवने वनस्पतिकायिक कडे छे. अने

કાયિકાનાં સ્થૂલત્રસાનાં ચ પૃથિવ્યાદિરૂપં પ્રથમં શરીરં ભવતિ, જન્માન્તરભાવિ
 ચ માનુષં શરીરં દ્વિતીયમ્, તેષાં દ્વિતીયભવે સિદ્ધિગમનાદિતિ, 'ઉદારા' इति
 વિશેષણેન તેજોત્રાયુરૂપાઃ સૂક્ષ્માસ્ત્રસા નિરાકૃતાઃ, તેષામનન્તરભવે માનુષત્વા-
 પ્રાપ્ત્યા સિદ્ધિગતેરભાવેન શરીરદ્વયાધિકશરીરસમ્ભવાત્ । તથા—'ઉદારાસ્ત્રસાઃ'
 इत्यनेन द्वीन्द्रियादित्रसानामुपस्थितावपि पञ्चेन्द्रिया एव त्रसा गृह्यन्ते, તેષામેવ
 કેષાંચિદનન્તરભવે સિદ્ધિગમનાત્, વિકલેન્દ્રિયાણાં ત્વનન્તરભવે સિદ્ધચમા-
 વાત્ । તદુક્તમ્—“વિગલા લભેજ્જ વિરં ણ હુ કિંચિ લભેજ્જ સુહુમતસા ।”

ऐसा है—कितनेक जीवोंके-पृथिवीकायिकोंके अप्कायिकोंके वनस्प-
 तिकायिकोंके और स्थूलत्रसोंके पृथिव्यादि रूप प्रथम शरीर तो होता
 ही है और द्वितीय शरीर जन्मान्तर भावी मनुष्य शरीर होता है
 क्योंकि ये द्वितीय भवमें सिद्धिमें गमन करते हैं । “उदार” पदसे
 तेजस्कायिक वायुकायिक रूप सूक्ष्मत्रस इनका निराकरण किया गया
 है क्योंकि अनन्तर भवमें मानुषत्वकी अप्राप्तिसे सिद्धि गतिकी प्राप्ति
 नहीं होनेके कारण शरीर इससे भी अधिक शरीर इनमें सम्भवित
 होते है । “उदारास्त्रसाः” इस कथनसे द्वीन्द्रियादिक त्रसोंकी उपस्थिति
 होने पर भी यहाँ पञ्चेन्द्रिय त्रस ही गृहीत हुए हैं क्योंकि इनमेंसे कित-
 नेक त्रसोंका अनन्तर भवमें सिद्धि गतिमें गमन होता है । विकले-
 न्द्रियोंको तो अनन्तर भवमें भी सिद्धिगति प्राप्तिका अभाव रहना है ।
 उक्तं च “विगला लभेज्ज विरं” विकलेन्द्रिय जीव अनन्तर भवमें मनुष्य

पञ्चेन्द्रिय प्राणी स्थूलत्रस છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—કેટલાક
 જીવોને પૃથ્વીકાયિકોને, અપ્કાયિકોને, વનસ્પતિકાયિકોને અને સ્થૂલત્રસોને
 પૃથ્વી આદિ રૂપ પ્રથમ શરીર તો હોય છે જ, અને બીજું શરીર જન્માન્તર
 ભાવી મનુષ્ય શરીર હોય છે, કારણ કે તેઓ બીજા ભવે સિદ્ધિમાં ગમન
 કરે છે “ઉદાર ત્રસ” આ પદના પ્રયોગ દ્વારા તેજસ્કાયિક અને વાયુકાયિક
 રૂપ સૂક્ષ્મ ત્રસનું નિરાકરણ કરવામાં આવ્યું છે, કારણ કે અનન્તર ભવમાં
 મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ ન થવાને લીધે સિદ્ધિગતિની પ્રાપ્તિ નહી થવાથી બે
 કરતાં પણ અધિક શરીરોનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોઈ શકે છે “ઉદારા-
 ત્રસાઃ” આ પદના પ્રયોગ દ્વારા દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસોની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં
 પણ અહીં પંચેન્દ્રિય ત્રસો જ ગૃહીત થયાં છે, કારણ કે એ ત્રસોમાંના કેટ-
 લાક ત્રસોનું અનન્તર ભવમાં સિદ્ધિગતિમાં ગમન થાય છે વિકલેન્દ્રિયોમાં
 (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયોમાં) તો અનન્તર ભવમાં પણ સિદ્ધિ
 ગતિની પ્રાપ્તિનો અભાવ જ રહે છે. કહ્યું પણ છે કે—

હાયા—વિકલા લભેન્ વિરતિં ન ચલુ કિચ્ચિત્ લભેરન્ સૂક્ષ્મત્રસાઃ । ”
 इति, અર્થ માત્રઃ—વિકલેન્દ્રિયા અનન્તરભવે માનુષત્વપ્રાપ્ત્યા વિરતિં-સંયમં પ્રાપ્તું
 શક્નુવન્તિ, ન તુ સિદ્ધિમ્, તયા—સૂક્ષ્મત્રસા અનન્તરભવે માનુષત્વાપ્રાપ્ત્યા કિચ્ચિ-
 દપિ=વિરતિમપિ પ્રાપ્તું ન શક્નુવન્તીતિ ।

भवकी प्राप्ति द्वारा संयमको पा सकते हैं पर वे सिद्धिगतिको नहीं पा सकते हैं तथा जो सूक्ष्मत्रस हैं वे अनन्तर भवमें मानुषत्वकी अप्राप्ति के कारण विरतिको भी नहीं पा सकते हैं । तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि कितनेक पृथिवीकायिक अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीव तथा स्थूल त्रसकायिक जीव जब अपनी गृहीत पर्यायका परित्याग करते हैं तो वे मनुष्य भवमें जन्म लेकर सिद्धिगतिको भी प्राप्त कर सकते हैं परन्तु जो तैजस्कायिक जीव हैं और वायुकायिक जीव हैं वे उस पर्यायसे छुटकर अनन्तरभवमें मनुष्य भवमें नहीं उत्पन्न होते हैं अतः सिद्धिगतिकी प्राप्ति इन्हें हो ही नहीं सकती है तथा विकलेन्द्रिय जीव अनन्तर भवमें मनुष्य पर्याय प्राप्त कर सकते हैं पर वे भी सिद्धि गतिको प्राप्त नहीं कर सकते हैं इस तरह समझकर यह सूत्र लगाना चाहिये पृथिव्यादिकों में जो द्विशरीरता यहां प्रगट की गई है वह

“ विगला लभेज्ज विरहं ” इत्यादि. विकलेन्द्रिय लोको अनन्तर लवમાં મનુષ્યલવની પ્રાપ્તિ દ્વારા સંયમ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, પણ તેઓ સિદ્ધિ ગતિને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તથા જે સૂક્ષ્મત્રસ છે, તે તેો અનન્તર લવમાં માનુ-
 પત્વની અપ્રાપ્તિને કારણે વિરતિ પણ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. આ સમસ્ત
 કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

કેટલાક પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, વનસ્પતિકાયિક અને સ્થૂલત્રસકાયિક
 લોકો ન્યારે પોતાની ગૃહીત પર્યાયનો પરિત્યાગ કરે છે ત્યારે મનુષ્યલવમાં
 જન્મ લઈને સિદ્ધિ ગતિને પણ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. પરન્તુ તૈજસ્કાયિક અને
 વાયુકાયિક લોકો ન્યારે પોતાની ગૃહીત પર્યાયનો પરિત્યાગ કરે છે ત્યારે
 મનુષ્યલવમાં ઉત્પન્ન થતાં નથી. તે કારણે તેમને સિદ્ધિગતિની પ્રાપ્તિ થઈ
 શકતી નથી. વિકલેન્દ્રિય લોકો અનન્તર લવમાં મનુષ્યપર્યાય પ્રાપ્ત કરી શકે
 છે, પણ તેઓ સિદ્ધિગતિને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, આ વાત ધ્યાનમાં લેવાથી
 આ સૂત્ર સમજાવું સરળ પડશે.

પૃથ્વીકાય આદિકોમાં જે દ્વિશરીરતા અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી છે તે ઉપર્યુક્ત ભાવને ધ્યાનમાં લઈને જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે તે લોકોમાં

अनेनैव प्रकारेण अधोलोक-तिर्यग्लोकयोर्द्विशरीराश्चत्वारश्चत्वारो भवन्ति, तत्प्रतिपादनायाऽऽह—“ अधोलोके ण ” इत्यादि स्पष्टम् । ॥ सू० ३२ ॥

पूर्व तिर्यग्लोकद्विशरीराश्चत्वार उक्ताः, साम्प्रतं तिर्यग्लोकाधिकारात्तद्ब्रह्म संयतादिपुरुषं भेदप्रदर्शनपुरस्सरं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-हिरिसत्ते १, हिरिमणसत्ते २, चलसत्ते ३, स्थिरसत्ते ४ ॥ सू० ३३ ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-हीसत्त्वः १, हीमनः सत्त्वः २, चलसत्त्वः ३, स्थिरसत्त्व ४ ॥ सू० ३३ ॥

इसी भावको लेकर प्रकटकी गई है प्रथम शरीर तो इनमें ये जिस शरीरमें वर्तमान हैं वही है और द्वितीय शरीर इनके अनन्तर जन्ममें प्राप्त होनेवाला जो मनुष्य शरीर है उसकी अपेक्षासे कहा गया है। इसी प्रकारसे ये चार २ अधोलोकमें और तिर्यग्लोकमें भी दो दो शरीरवाले हैं ऐसा कथन कर लेना चाहिये ॥ सू ३२ ॥

अब सूत्रकार तिर्यग्लोकके अधिकारसेही तिर्यग् लोकमें उत्पन्न हुए संयतादि पुरुष भेद प्रदर्शन पुरस्सर निरूपण करते हैं—

‘चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता’ इत्यादि सूत्र ३३ ॥

पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे-ही सत्त्ववाला-१ हीमनः सत्त्व-वाला-२ चल सत्त्ववाला ३ और स्थिर सत्त्ववाला-४

वर्तमान, लवमां नो शरीर विद्यमान होय छे ते शरीरने तेमनुं प्रथम शरीर समञ्जुं अनन्तर लवमां मनुष्यशरीर तेमने प्राप्त थवानुं छे, तेने अही द्वितीय शरीर इधे प्रकट करवामां आन्थुं छे आ प्रकारे न पृथ्वीकाय आदि उपर्युक्त चार प्रकारना एवो अधोलोक अने तिर्यग्लोकमां पणुं मण्ये शरीर-वाणा छे, एवुं कथन समञ्जुं ॥ सू ३२ ॥

तिर्यग्लोकने- उपरना सूत्रमां उल्लेख थये छे, ते संबंधने अनुदक्षिने तिर्यग्लोकमां उत्पन्न थयेला संयतादि पुरुषोना लेहोनुं निश्चय करतां सूत्रकार कहे छे के—“ चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता ” इत्यादि—सू ३३

पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणुं कहे छे—(१) ही सत्त्ववाणो, (२) हीमनः सत्त्ववाणो, (३) चल सत्त्ववाणो अने (४) स्थिर सत्त्ववाणो.

टीका—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-हीसत्त्वः-ह्रिया-लज्जया सत्त्वं-परीषदादिसहने वा समराङ्गणे स्थैर्यं बलं वा यस्य स हीसत्त्वः १, तथा-हीमनःसत्त्वः-ह्रिया-परीषदादिसहनात् समराङ्गणाद्वा पराङ्मुखं मामुत्तमकुलोत्पन्नं लोका हसिष्यन्तीति लज्जया मनस्येव न तु काये रोमाञ्चकम्पप्रभृतिचिह्नदर्शनात् सत्त्वं यस्य स वहीमनःसत्त्वः=लोकलज्जानिमित्तमानसधैर्यमम्पन्नः २,

टीकार्थ — लज्जासे जो पुरुष परीषहादिके सहनेमें या समराङ्गणमें स्थिरतावाला या बलवाला होता है वह ही सत्त्ववाला पुरुष कहा गया है १ उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए सुद्धको परीषहादि सहनेसे अथवा समराङ्गणसे पराङ्मुख हुआ देखकर लोग हँसेंगे इस लज्जासे जिसके मनमें ही सत्त्व होता है रोमाञ्च कम्प आदि भीतिके चिह्न देखनेसे जिसके कायमें सत्त्व नहीं होता है ऐसा वह पुरुष वहीमनः सत्त्ववाला कहा गया है २ अर्थात् लोकलाजके निमित्त से जो मानसिक धैर्यसे सम्पन्न होता है वह इस द्वितीय भङ्गमें गिना गया है जिसका सत्त्व परीषहादिके उपस्थित होने पर अस्थिर हो जाना है वह अस्थिर चित्तवाला तृतीय भङ्गमें लिया गया है ३ परीषह आदिके समुपस्थित होने परभी जिसका सत्त्व दृढ रहता है वह चतुर्थ भंगमें गृहीत हुआ है इस प्रकारसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ही सत्त्ववाला होता है-१ कोई एक पुरुष ऐसा होता है

जे पुरुष लज्जाने कारणे परीषहादिकेने सहन करवाने अथवा समराङ्गणमां स्थिरता (अडगता) धारण करवाने समर्थ होय छे तेने वहीसत्त्वयुक्त पुरुष कहे छे.

उत्तम कुलमां उत्पन्न थयेला जेवा मने परीषह आदि सहन करवामां असमर्थ हेभीने अथवा समराङ्गणमांथी पराङ्गमुख थतो जेधने लोका मारी डांसी करे. आ प्रकारनी लज्जाने कारणे जे जेना मनमां सत्त्व (अण) उत्पन्न थाय छे. रोमाञ्च कम्प आदि भीतिना चिह्न जेवाथी जेना शरीरमां सत्त्व उत्पन्न थतुं नथी जेवा पुरुषने वहीमन. सत्त्ववाणो कह्यो छे. अटले हे लोकाजने निमित्ते जे भाणुस मानसिक धैर्यथी संपन्न थाय छे तेने आ भील सांगामा गणुवी शक्य छे, जेतुं सत्त्व (मानसिक अण) परीषहादि सहन करवाना आवी पडे त्यारे अस्थिर थर्ध नय छे जेवा पुरुषने अस्थिर चित्तवाणो कहे छे. परीषहा आवी पडे त्यारे जेतुं सत्त्व दृढ रहे छे तेने स्थिर सत्त्ववाणो कहे छे,

तथा—चलसत्त्वः—चलति=परीषहादिसमुपस्थितौ इति चलम्=अस्थिरं सत्त्वं यस्य स चलसत्त्वः=अस्थिरचित्तः ३। तथा—स्थिरसत्त्वः—स्थिरं—परीषहादिसमुपस्थिता-
वपि दृढं सत्त्वं यस्य स स्थिरसत्त्वः ४। इति । ॥ सू० ३३ ॥

अनन्तरं स्थिरसत्त्व उक्तः, स चाभिग्रहान् प्रतिपद्य परिपालयति चेत्तदा भवतीत्यभिग्रहान् प्रदर्शयितुं चतुःसूत्रीमाह—

मूलम्—चत्वारि सिञ्जपडिमाओ पणत्ताओ (१), चत्वारि
वत्थपडिमाओ पणत्ताओ (२) चत्वारि पायपडिमाओ पण-
त्ताओ (३) चत्वारि ठाणपडिमाओ पणत्ताओ (४) ॥ सू० ३४ ॥

छाया—चतस्रः शय्याप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(१), चतस्रो वस्त्रप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(२),
चतस्रः पात्रप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(३), चतस्रः स्थानप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः(४) ॥ सू० ३४ ॥

जो ह्रीमनः सत्त्ववाला होता है २ कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो
चल सत्त्ववाला होता है ३ और कोई एक मनुष्य ऐसा होता है जो
स्थिर सत्त्ववाला होता है। इस प्रकारसे ये मनुष्यके चार प्रकार
प्रकट किये गये हैं ॥ सू० ३३ ॥

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि “कथित स्थिर सत्त्ववाला
प्राणी तभी होता है कि जब वह अभिग्रहोंको स्वीकार कर यथावत्
उनका परिपालन करता है” अतः वे अभिग्रह इस प्रकारसे हैं—

“चत्वारि सिञ्जपडिमाओ पणत्ताओ” इत्यादि सूत्र ३४ ॥

शय्या प्रतिमा चार कही गई है (१) वस्त्र प्रतिमा चार कही गई है

हवे चारे लांगानुं इरीथी स्पण्ठीकरणुं करेवामां आवे छे—(१) केछ
अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने ह्री सत्त्ववाणेो डोय छे. (२) केछ अेक
पुरुष अेवो डोय छे के ने ह्रीमन' सत्त्ववाणेो डोय छे. (३) केछ अेक
पुरुष अेवो डोय छे के ने चल सत्त्ववाणेो डोय छे. अने (४) केछ अेक
पुरुष अेवो डोय छे के ने स्थिर सत्त्ववाणेो डोय छे आ प्रभाण्णे मनुष्यना
चार प्रकारे अही प्रकट कयां छे. ॥ सू. ३३ ॥

आगला सूत्रमां स्थिर सत्त्वयुक्त पुरुषनी वात करी. एव त्यारे न स्थिर-
सत्त्ववाणेो णनी शके छे के चारे ते अलिग्रहोने धारणु करीने तेनुं विधि
अनुसार परिपालन करे छे. तेथी हवे सूत्रकार ते अलिग्रहोना स्वइपनुं
निइपणु करे छे—“ चत्वारि सिञ्जपडिमाओ पणत्ताओ ” इत्यादि सू ३४

टीकाः—“ चत्वारि सिञ्जपडिमाओ ” इत्यादि—शय्याप्रतिमाः—शय्य-
तेऽस्यामिति शय्या—पीठफलकादिरूपा, तस्याः प्रतिमाः—अभिग्रहरूपाः शय्या-
प्रतिमाः चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा—प्रथमा प्रतिमा ‘ अमुकप्रकारकं पीठफलका
दिकं मया ग्राह्यमिति । १ ।

द्वितीया प्रतिमा—‘ अमुकप्रकारकं पीठफलकादि चेद् द्रक्ष्यामि तदा तदेव
ग्राह्यमिति । २ ।

तृतीया प्रतिमा—‘ अमुकप्रकारकमपि यदि तस्यैव शय्यातरस्थ गृहे भवेत्
तदा ग्राह्यमिति । ३ ।

चतुर्थी तु—अमुकप्रकारकमपि फलकादि यदि यथासंस्कृतमेव स्यात्तदा
ग्राह्यमिति । ४ ।

तत्र प्रथम—द्वितीये प्रतिमे गच्छनिर्गतानां न भवतः, किन्तु तृतीय—चतु-
र्थोऽन्यतरा प्रतिमा भवति । गच्छस्थितानां तु चतस्रोऽपि प्रतिमाः कल्पन्त
इति । १ ।

(२) पात्र प्रतिमा चार कही गई है (३) स्थान प्रतिमा चार कही गई हैं (४)

जिस पर शयन किया जाता है वह शय्या है ऐसी वह शय्या
पीठफलक आदि रूप होती है, इस शय्याकी जो अभिग्रह रूप प्रतिमा
है वह शय्या प्रतिमा है १ यह शय्या प्रतिमा इस रूपसे चार प्रकारकी
होती है—मैं अमुक प्रकारका पीठफलक आदि ग्रहण करूंगा १ अमुक
प्रकारका पीठफलक आदि यदि देखूंगा तो वही ग्रहण करूंगा २ यदि
उसी शय्यातर के घर पर अमुक प्रकारका भी पीठफलक आदि होगा
तो ग्रहण करूंगा ३ अमुक प्रकारका भी पीठफलक आदि यदि यथा
संस्कृत ही होगा तो ही ग्रहण करूंगा ४ इनमें प्रथम और द्वितीय प्रतिमा
गच्छनिर्गत साधुओंके नहीं होती हैं किन्तु तृतीय और चतुर्थीमें से

(१) शय्या प्रतिमा चार कही छे. (२) वस्त्र प्रतिमा चार कही छे. (३)
पात्र प्रतिमा चार कही छे. (४) स्थान प्रतिमा चार कही छे.

जेना पर शयन कराय छे तेनुं नाम शय्या छे. जेवी ते शय्या पीठ-
फलक आदि रुप होय छे, ते शय्यानी जे अभिग्रह रुप प्रतिमा तेने शय्या-
प्रतिमा कहे छे. तेना नीचे प्रमाणे चार प्रकार छे—(१) हुं अमुक प्रकारनुं
पीठफलक आदि ग्रहण करीश. (२) अमुक प्रकारनुं पीठफलक आदि नेछेश
तो, तेने जे ग्रहण करीश. (३) जे जे शय्यातरना घरमां अमुक प्रकारनुं
पण पीठफलक आदि छेशे तो ग्रहण करीश (४) अमुक प्रकारनुं पीठफलक
आदि जे यथासंस्कृत छेशे तो जे ग्रहण करीश. आ चार प्रकारनी प्रतिमा-
जोमांनी पड़ेली अने पीछ प्रतिमाजोनुं आराधन गच्छनिर्गत साधुजो वडे

“ चत्वारि वत्थपडिमाओ ” इत्यादि--वस्त्रप्रतिमाः-वस्त्रग्रहणविषया अभिग्रहाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-अमुकप्रकारकं कार्पासिकादि वस्त्र याचितव्यमिति प्रथमा । १ ।

तथा-यद् दृष्टं तदेव याचनीयमिति द्वितीया । २ । तथाऽन्तरपरिभोगेनोत्तरीयपरिभोगेन वा गृहस्थेन परिभुक्तं वस्त्रं ग्राह्यमिति तृतीया । ३ । तथा-तदेवोत्सृष्टधर्मकं ग्राह्यमिति चतुर्थी । ४ ।

“ चत्वारि पायपडिमाओ ” इत्यादि-पात्रप्रतिमाः-पात्रग्रहणविषयेऽभिग्रहाः, चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-अमुकप्रकारकं मृत्तिकादारुपात्रादि याचितव्यम् । इति प्रथमा १ । तथा-यद् दृष्टं तदेव याचितव्यमिति द्वितीया २ । तथा-गृहस्थस्य

कोई एक प्रतिमा होती है । गच्छस्थित साधुओंको तो चारों प्रकारकी ये प्रतिमाएं कल्प्य हैं (१) चार जो वस्त्र प्रतिमाएँ कही गई हैं वे इस प्रकारसे हैं-जैसे मैं अमुक प्रकारका सूनीया ऊनी वस्त्र मांगूंगा ? या जो देखा है वही मांगूंगा ? या अन्तर परिभोग रूपसे या उत्तरीय परिभोगरूपसे गृहस्थजन द्वारा जो वस्त्र परिभुक्त होगा वही वस्त्र लूंगा ? तथा वस्त्र यदि उत्सृष्ट (फेंकने योग्य) धर्मवाला होगा तो ही लूंगा ? इस तरहसे जो वस्त्र ग्रहण विषयक अभिग्रह हैं वे वस्त्र प्रतिमा हैं । (२) चार जो पात्र ग्रहण विषयक अभिग्रह होते हैं वे पात्र प्रतिमाएँ हैं-जैसे-जो मृत्तिकाका पात्र काष्ठका पात्र तुम्बीका पात्र आदि अमुक प्रकारका होगा तो ही मैं उसे मांगूंगा ? तथा जो मैंने दिखा है वही पात्र मैं

थतु नथी, पणु त्रीणु अने याथीम.थी केाँ अेक प्रतिमानुं न तेमना ठारा आराधन थाय छे. गच्छस्थित साधुओने माटे तो आ आरे प्रकारनी प्रतिमाओ कल्प्य गणाय छे.

चार वस्त्रप्रतिमाओ नीचे प्रमाणे छे—(१) हुं अमुक प्रकारनुं सूतराडि अथवा गरम वस्त्र मागीश. अथवा (२) ने वस्त्र जेथुं छे अेन मागीश अथवा (३) आन्तर परिलोग रुपे अथवा उत्तरीय परिलोग रुपे गृहस्थ जनद्वारा ने वस्त्र परिलुक्ता हुशे अेन वस्त्र स्वीकारीश अथवा वस्त्र उत्सृष्ट धर्मवाणुं हुशे तो न तेना स्वीकार करीश. आ रीते वस्त्रग्रहणु विषयक ने अंलिग्रह छे तेने वस्त्रप्रतिमा कडे छे.

पात्रग्रहणु विषयक अंलिग्रहना चार प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—(१) माटीनुं के काष्ठनुं के तुम्बीनुं पात्र ने अमुक प्रकारनुं हुशे तो न अंहुणु करीश. (२) अथवा ने पात्र मे' देणुं हुशे तेना न स्वीकार करीश, (३)

स्वाङ्गिकं तत्परिशुक्तप्रायं वा द्वित्रेषु पात्रेषु पर्यायेण परिभुज्यमानं पात्रं याचित-
व्यम्' इति तृतीया । ३ । तथोज्झितधर्मकं पात्रं याचितव्यमिति चतुर्थी । ४ । ३ ।

“ चत्वारि ठाणपडिमाओ ” इत्यादि-स्थानप्रतिमाः-कायोत्सर्गाद्यर्थं स्थान-
ग्रहणविषयेऽभिग्रहाः चतस्रः प्रज्ञप्ताः, ता यथा-यत्र स्थानमचित्तमेपणीयमाकुञ्चन-
प्रसारणादिक्रियायोग्यं कुड्याद्यालम्बनसमन्वितं चङ्क्रमणावकाशयुक्तं भवेत् तदे-
वाऽऽश्रयणीयमिति प्रथमा १, चङ्क्रमणावकाशरहितं पूर्वनिर्दिष्टं स्थानं यदि भवेत्तदेवा-
ऽऽश्रयणीयमिति द्वितीया । २ । तथा-कुड्याद्यालम्बनादिरहितं चङ्क्रमणावका-

माङ्गूंगा २ तथा गृहस्थका जो स्वाङ्गिक होगा या परिभुक्त प्राय होगा
या जो दो तीन पात्रों में पर्यायसे परिभुज्यमान हो रहा होगा, वही पात्र
में माङ्गूंगा ३ तथा उज्झित धर्मक पात्र ही माङ्गूंगा ४ अर्थात् उन तीन
प्रकारका पात्र ही साधुओंको कल्पता है, इमलिये तीनका नाम लिया
हैं प्लास्टिक आदि का पात्र लेना नहीं कल्पता ।

(३) कायोत्सर्ग आदिके लिये स्थानग्रहणके विषयमें जो अभिग्रह
होतेहैं वे स्थानप्रतिमाहैं, और ये इस प्रकारसे चार रूप होती हैं-जो स्थान
अचित्त होगा एवणीय होगा आकुञ्चन प्रसारण आदि क्रियाके योग्य
होगा कुड्यादिरूप आलम्बन से समन्वित होगा चङ्क्रमणावकाश युक्त
होगा वही मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह प्रथम स्थान प्रतिमा
है १ यदि पूर्व निर्दिष्ट स्थान चङ्क्रमणावकाश (कारणवश, इधर उधर
फिरने) से रहित होगा तो ही मेरे द्वारा वह आश्रयणीय होगा ऐसी
यह द्वितीय स्थानप्रतिमा है २ तथा-पूर्वोक्त स्थान कुड्यादि (भित्ति)
आलम्बनसे रहित होगा और चङ्क्रमणावकाशसे रहित होता तब ही

अथवा गृहस्थतुं जे स्वाङ्गिक हसे अथवा जे परिलुक्त (वपराशने भाटे
अयोग्य गल्लीने काठी नापेलुं) हसे अथवा जे जे त्रषु पात्रेमां पर्यायनी
अपेक्षाजे परिलुब्धमान थर् रहुं हसे जेपुं ज पात्र हुं लक्षश तथा उज्झित-
धर्मक पात्र ज लक्षश जेटले के उपर्युक्त त्रषु प्रकारना पात्र ज साधुज्जाने
कल्पे छे, तेथी त्रषुना ज नाम अही प्रकट कर्या छे.

कायोत्सर्ग आदिने भाटे स्थानग्रहण करवाना विषयमां जे अलिग्रह थाय
छे तेने स्थानप्रतिमा कडे छे तेना चार प्रकार नीचे प्रमाणे छे—(१) जे
स्थान अचित्त हसे, अेषणीय हसे, आकुञ्चन प्रसारण आदि क्रियाज्जाने योग्य
हसे, किवाल आदि रूप अवलम्बन आधारथी युक्त हसे अने चङ्क्रमणावकाश-
युक्त (कारणवश आम तेम इरवाने योग्य) हसे, जेज स्थान भाटे भाटे
आश्रयणीय थसे. आ प्रथम स्थानप्रतिमानुं स्वइय समज्जुं (२) जे पूर्वोक्त
स्थान चङ्क्रमणावकाशथी रहित (कारणवश आम तेम इरवाने भाटे अयोग्य

शरहितं च पूर्वोक्तमेव यदि स्थानं भवेत् तदेवाऽऽश्रयणीयमिति तृतीया । ३ ।
तथा-यत् स्थानम् आकुञ्चनप्रसारणादिक्रियाया अयोग्यं कुड्यात्रालम्बनरहितं चङ्क्रमणावकाशरहितं च सत् अचित्तमेषणीयं च भवेत्तदाऽऽश्रयणीयमिति चतुर्थी । ४ ।
(४) इति । सू० ३४ ॥

अनन्तरं शरीरचेष्टानिरोध उक्त इति शरीरप्रस्तावादिदं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चत्वारि शरीरगा जीवफुडा पणत्ता, तं जहा-
वेउविष् १, आहारए २, तेयए ३, कम्मए ४ । (१)

चत्वारि शरीरगा कम्मुम्मीसगा पणत्ता, तं जहा--ओरा-
लिए १, वेउविष् २, आहारए ३, तेउए ४ । (२) ॥ सू० ३५ ॥

छाया—चत्वारि शरीरकाणि जीवस्पृष्टानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—वैक्रियम् १,
आहारकं २, तैजसं ३, कर्मणम् ४ । (१)

मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह तृतीय स्थानप्रतिमा है ३ तथा जो स्थान आकुञ्चन प्रसारण आदि क्रिया के अयोग्य होगा कुड्यादि रूप आलम्बनसे रहित होगा एवं चक्रमणावकाशसे रहित होगा अचित्त और एषणीय होगा तब वह मेरे द्वारा आश्रयणीय होगा ऐसी यह चतुर्थी स्थान प्रतिमा है ॥ सू० ३४ ॥

अब सूत्रकार शरीरको लेकर दो सूत्र कहते हैं—

“चत्वारि शरीरगा पणत्ता” इत्यादि सूत्र ३५ ॥

चार शरीर जीवस्पृष्ट कहे गये हैं—जैसे—वैक्रिय १ आहारक २ तैजस ३ और कर्मण ४ (१)

इसे तो ज ते मारा द्वारा आश्रयणीय थसे. आ जीए स्थानप्रतिमा समञ्जी.

(३) ने पूर्वोक्त स्थान दीवाल आदि अवलम्बन (आधार)थी रक्षित इसे अने थङ्कमण्णावकाशथी रक्षित इसे तो ज मारा द्वारा आश्रयणीय थसे आ त्रीए स्थानप्रतिमा समञ्जी. (४) ने पूर्वोक्त स्थाव आकुञ्चन प्रसारण आदिक्रिया-ओने भाटे अयोग्य इसे, दीवाल आदि इप अवलम्बनथी रक्षित इसे अने थङ्कमण्णावकाशथी रक्षित इसे, अचित्त अने एषणीय इसे, तो ते मारा द्वारा आश्रयणीय थसे आ योथी स्थानप्रतिमा समञ्जी. ॥ सू ३४ ॥

इसे सूत्रकार शरीर विषयके ये सूत्रोनुं कथन करे छे—

“ चत्वारि शरीरगा पणत्ता ” इत्यादि—सू ३५

नीचेनां चार शरीर जीवस्पृष्ट कक्षां छे—(१) वैक्रिय, (२) आहारक,
(३) तैजस अने (४) कर्मण्णु ॥ १ ॥

ચત્વારિ શરીરકાણિ કાર્મણોન્મિશ્રકાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તદ્વથા=ઔદારિકં ૧, વૈક્રિયમ્ ૨, આહારકં ૩, તૈજસમ્ ૪ (૨) ॥ મૂ. ૩૫ ॥

ટીકા—“ ચત્વારિ શરીરગા ” ઇત્યાદિ—ચત્વારિ-શરીરકાણિ-શરીરાણ્યેવ શરીરકાણિ, સ્વાર્થે કન્ પ્રત્યયોઽન્ વોઘ્યઃ, જીવસ્પૃષ્ટાનિ-જીવવ્યાપ્તાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તદ્વથા-વૈક્રિયં-વિક્રિયા-વિવિધરૂપકરણં તયા નિર્વૃત્તમ્-અનેકાદ્ભુતાઽઽશ્રયં વિવિધગુણદ્વિં સમ્પ્રયુક્તપુદ્ગલવર્ગણાપ્રારબ્ધં વૈક્રિયમ્ ૧, આહારકમ્-આહિયતે-નિર્વૃત્યતે ચતુર્દશપૂર્વવિદા પ્રાણિદયદ્વિંદર્શન-છદ્મસ્થોપગ્રહણસંશયવ્યુચ્છેદ-રૂપચતુષ્ટયપ્રયોજનવશાદ્ યત્તદાહારકમ્, આહારકશરીરં ચતુઃકૃત્વા મોક્ષો ભવ-

ચાર શરીર કાર્મણ શરીરસે ઉન્મિશ્ર કહે ગયે છે—જैसे-ઔદારિક ૧ વૈક્રિય ૨ આહારક ૩ ઓર તૈજસ ૪ (૨)

જીવ દ્વારાં વ્યાપ્ત જો શરીર છે તે જીવ સ્પૃષ્ટ શરીર છે વિવિધ રૂપ કરના હસકા નામ વિક્રિયા છે હસ વિક્રિયાસે જો શરીર નિર્વૃત્ત હોતા છે વહ વૈક્રિય શરીર છે વહ વૈક્રિય શરીર અનેક અદ્ભુતરૂપોંકા આશ્રયભૂત હોતા છે વિવિધ ગુણોંસે એવં ઋદ્ધિઓંસે સમ્પ્રયુક્ત પુદ્ગલ વર્ગણાઓંસે પ્રારબ્ધ (જિસકા પ્રારંભ ક્રિયા જાય) હોતા છે આહારક શરીર ચૌદહ પૂર્વધારીકેહી પાયા જાતા છે વહ ચૌદહ પૂર્વધારી મુનિ પ્રાણિદયા ઋદ્ધિદર્શન છદ્મસ્થોપગ્રહણ ઓર સંશયવિચ્છેદ હન ચાર પ્રયોજનકે વશસે આહારક શરીરકા નિર્માણ કરતા છે હસ આહારક શરીરકા નિર્માણ ચાર વાર હોતા છે ફિર જીવકા મોક્ષ હો જાતા છે । તેજઃ પુદ્ગલોંકા જો વિકાર છે વહ તૈજસ છે હસકા લિજ્જ ઉષ્મા છે ઓર વહ

નીચેનાં ચાર શરીર કાર્મણ શરીર સાથે ઉન્મિશ્ર કહ્યાં છે—

(૧) ઔદારિક, (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક અને (૪) તૈજસ ॥૨॥

જીવદ્વારા વ્યાપ્ત જે શરીર છે તેમને જીવસ્પૃષ્ટ શરીર કહે છે. વિવિધ રૂપ કરવું તેનું નામ વિક્રિયા છે આ વિક્રિયાથી જે શરીર નિર્વૃત્ત થાય છે તેને વૈક્રિય શરીર કહે છે તે વૈક્રિય શરીર અનેક અદ્ભુત રૂપોનું આશ્રયભૂત હોય છે, વિવિધ ગુણોથી અને ઋદ્ધિઓથી સંપ્રયુક્ત પુદ્ગલવર્ગણાઓથી પ્રારબ્ધ (જેનો પ્રારંભ કરાય) હોય છે.

આહારક શરીરનો સદ્ભાવ ચૌદ પૂર્વધારીમાં જ હોય છે. તે ચૌદ પૂર્વધારી મુનિ પ્રાણિદયા, ઋદ્ધિદર્શન, છદ્મસ્થોપગ્રહણ અને સંશય વિચ્છેદ રૂપ ચાર કારણોને લીધે આહારક શરીરનું નિર્માણ કરે છે.

આ આહારક શરીરનું નિર્માણ ચાર વાર થાય છે, ત્યાર બાદ જીવ મોક્ષમાં આવ્યો જાય છે. તેજ પુદ્ગલોનો વિકાર છે તે તૈજસ છે. તેનું

तीति । २ । तैजस-तेजः पुद्गलानां विकारस्तैजसम्-ऊष्मलिको भुक्ताऽऽहारपरि-
णमनहेतुः शरीरविशेषः । ३ ।

कर्मणं-कर्मणा निवृत्तं कर्मणम्, यद्वा-शरीरनामकर्मण उत्तरप्रकृतिरूपं
कर्म समुदायभूतात् कर्माष्टकाद् भिन्नमेवेति कर्मैव कर्मणम्, इदं च कर्मणश-
रीरं सर्वकर्माधारभूतं धान्यानां कोष्ठवत् सर्वकर्मप्रसवसमर्थम् अङ्कुरादीनां बीज-
वत् ?-कर्मभिर्निष्पन्नं कर्मसु भवं कर्मसृजातं कर्मैव वा कर्मणम् । एतानि वैक्रि-
याऽऽहारकतैजसकर्मणानि चत्वारि जीवेन स्पृष्टान्येव भवन्ति, न तु यथा-
औदारिकं जीवमुक्तमपि भवति मृतावस्थायां तथैतानि । (१)

खाये हुए आहारके परिणामन में हेतु होता है यह कर्मण शरीर कर्मसे
निवृत्त होता है अथवा-शरीर नामकर्मकी उत्तरप्रकृतिरूप जो कर्म
है वह समुदायभूत कर्माष्टकसे भिन्न है इसलिये कर्मरूपही कर्मण
है यह कर्मण शरीर सर्व कर्मोंका आधारभूत होता है जैसे धान्योंका
आधारभूत कोष्ठ-कोठी-आदि होता है समस्त कर्मोंको प्रसव करनेमें
यह समर्थ होता है जैसे अङ्कुरादिकोंको प्रसव करनेमें बीज समर्थ
होता है । कर्मोंसे जो निष्पन्न होता है कर्मोंमें जो होता है अथवा-
कर्मोंके होने पर जो होता है वह कर्मण शरीर है अथवा कर्मोंका
समूहही कर्मण शरीर है । ये चार वैक्रिय आहारक तैजस एवं कर्मण
शरीर जीवसे स्पृष्ट ही होते हैं जैसा औदारिक जीव मुक्त भी होता है
वह मृतावस्थामें होता है उस प्रकारसे ये शरीर नहीं होते है । तात्पर्य

लक्षणे ऽष्मा छे अने ते आधेवा आहारना परिणामनमां कारणभूत अने छे.
कर्मण शरीर कर्मथी निवृत्त होय छे. अथवा शरीर नामकर्मनी. उत्तर
प्रकृति रूप जे कर्म छे ते समुदायभूत कर्माष्टकथी भिन्न छे, तेथी कर्म रूप जे
कर्मण छे. आ कर्मण शरीर सर्व कर्मोनु आधारभूत होय छे. जेम धान्योना
आधारभूत कोठी होय छे जेम कर्मोना आधारभूत कर्मण शरीर होय छे.
जेम अङ्कुरादिनी उत्पत्ति करवाने भीज समर्थ होय छे जेम प्रमाणे समस्त
कर्मोना प्रसव (उत्पत्ति) करवाने कर्मण शरीर समर्थ होय छे. कर्मो द्वारा
जे निष्पन्न थाय छे अथवा कर्मोमां जे होय छे अथवा कर्मोना सहलावमां
जे होय छे ते कर्मण शरीर छे अथवा कर्मोना समूह जे कर्मण शरीर
छे. आ आर-वैक्रिय, आहारक, तैजस अने कर्मण शरीरो जिवथी स्पृष्ट जे
होय छे जेम औदारिक शरीर जिवमुक्त पण होय छे-मृतावस्थांमां पण
होय छे जेम आ शरीरोमां अनतुं नथी. आ कथननुं तात्पर्य जे छे छे

પુનઃ “ ચત્તારિ સરીરગા ” ઇત્યાદિ—ચત્તારિ શરીરકાણિ કાર્મણોન્મિશ્ર-
કાણિ—કાર્મણેન શરીરેણ ઉન્મિશ્રાણિ—યુતાનિ કાર્મણોન્મિશ્રાણિ, તાન્યેવ કાર્મણો-
ન્મિશ્રકાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—ઔદારિકમ્—ઉદારં—પ્રધાનં, પ્રાધાન્યં ચાસ્ય તીર્થ-
કરગણધરશરીરાપેક્ષયા, તતોઽન્યસ્ય અનુત્તરસુરશરીરસ્યાપિ અનન્તગુણહીનત્વાત્,
યદ્વા—ઉદારં—સાતિરેકયોજનસહસ્રમાનત્વાત્, શેષશરીરાપેક્ષયા વૃહત્પ્રમાણમ્, વૃહત્ત્વં

યહ હૈ કિ ઔદારિક શરીર જીવકો ભી છોડકર મૃતાવસ્થામૈ ઘના
રહતા હૈ અતઃ વહ જીવ સ્પૃષ્ટહી હોતા હૈ એસા નહીં કહા જાતા હૈ ઇસ
પ્રકારસે યે ચાર શરીર નહીં હૈ યે તો જીવસ્પૃષ્ટહી હોતે હૈ જીવકે બિના
નહીં રહતે હૈ । ૧

ચાર શરીર જો કાર્મણ ઉન્મિશ્રક(મિલેહુવે)કહે ગયેહૈં સો ઇસકા અભિ
પ્રાય એસાહૈ કિ યે ચાર શરીર કાર્મણ શરીરકે સાથ રહતેહૈં—જહાં કાર્મણ
શરીર હોગા વહાં વૈક્રિય શરીરભી હો સકતા હૈ, જૈસા કિ દેવ ઓર
નારકિયોમૈં વહ હોતા હૈ મનુષ્યો તિર્યંચોમૈં ઉસકે સાથ આહારક શરીર
હોતા હૈ ચૌદ્હ પૂર્વધારીકે ઉસકે સાથ આહારક શરીર હોતા હૈ તથા
તૈજસ ઓર કાર્મણ યે સાથ ર રહતેહી હૈં । જો શરીર ઉદાર પ્રધાન
હોતા હૈ વહ ઔદારિક શરીર હૈ ઔદારિક શરીરમૈં પ્રધાનતા તીર્થકર
ગણધરકે શરીરકી અપેક્ષાસે આતી હૈ ક્યોંકિ ઇસસે ભિન્ન જો અનુત્તર
દેવકા શરીર હૈ વૈક્રિય શરીર હૈ વહાં અનન્ત ગુણહીન હોતા હૈ અથવા
સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રમૈં રહા હુઆ જો મહામત્સ્ય હૈ ઉસકે ઔદારિક શરી-

અવને છે ડયા બાદ મૃતશરીરમાં મૃતાવસ્થામાં પણ ઔદારિક શરીરનો સદ્-
ભાવ કાયમ રહે છે તેથી ઔદારિક શરીર અવસ્પૃષ્ટ જ હોય છે, એવું
કહી શકાતું નથી. પરન્તુ વૈક્રિય આદિ ઉપર્યુક્ત ચાર શરીરો તો અવસ્પૃષ્ટ જ
હોય છે, અવના વિના તેમનું અસ્તિત્વ જ સંભવી શકતું નથી.

ચાર શરીરને જે કાર્મણ ઉન્મિશ્રક કહ્યા છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે
છે—તે ચાર શરીરો કાર્મણ શરીરની સાથે જ રહે છે. જ્યાં કાર્મણ શરીર
હશે ત્યાં વૈક્રિય શરીર પણ હશે. જેમ કે દેવ અને નારકોમાં તે હોય છે.
મનુષ્ય તિર્યંચોમાં તેની સાથે આહારક શરીર હોય છે. ચૌદ પૂર્વધારીને
તેની સાથે આહારક શરીર પણ હોય છે, તથા તૈજસ અને કાર્મણ આ એ
શરીરો તો સાથે સાથે જ રહે છે જે શરીર ઉદાર પ્રધાન હોય છે તેને
ઔદારિક કહે છે. ઔદારિક શરીરમાં પ્રધાનતા તીર્થકર ગણધરના શરીરની
અપેક્ષાએ આવે છે, કારણ કે તેનાથી ભિન્ન જે અનુત્તર દેવનું શરીર છે—
વૈક્રિય શરીર છે તે અનંતગણ હીન હોય છે. અથવા સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રમાં

चास्य भवधारणीयवैक्रियापेक्षया, तदेव औदारिकम् । १। वैक्रियम् २। आहारकम्
३। तैजसम् ४। एतानि शरीराणि कर्मणशरीरयुक्तानि सन्ति ॥ (२) ॥ सू० ३५ ॥

स्पृष्टप्रसङ्गात् सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे पणत्ते, तं जहा-
धम्मत्थिकाएणं १, अधम्मत्थिकाएणं २, जीवत्थिकाएणं ३,
पुग्गलत्थिकाएणं ४। (१)

चउहिं बायरकाएहिं उव्वज्जमाणेहिं लोगे फुडे पणत्ते,
तं जहा-पुढविकाइएहिं १, आउकाइएहिं २, वाउकाइएहिं ३,
वणस्सइकाइएहिं ४। (२) ॥ सू० ३६ ॥

छाया—चतुर्भिरस्तिकायैर्लोकः स्पृष्टः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—धर्मास्तिकायेन १,
अधर्मास्तिकायेन २, जीवास्तिकायेन ३, पुद्गलास्तिकायेन ४, (१)

रकी अपेक्षा औदारिकको उदार बृहत्प्रमाणवाला कहा गया है क्योंकि
उसका प्रमाण शेष शरीरकी अपेक्षा कुछ अधिक एक हजार योजनका
कहा गया है अतः शेष शरीरकी अपेक्षा यह बृहत्प्रमाणवाला होता
है भवधारणीय वैक्रिय शरीरकी अपेक्षासे इसमें बृहत्ता है । सू० ३५ ॥

स्पृष्ट प्रसङ्गसे अथ सूत्रकार दो सूत्र कहते हैं—

“चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे” इत्यादि सूत्र ३६ ॥

यह लोग चार अस्तिकायरूप द्रव्योंसे स्पृष्ट व्याप्त कहा गया है जैसे धर्मा-
स्तिकायसे, अधर्मास्तिकायसे जीवास्तिकायसे और पुद्गलास्तिकायसे १

रहे। जे मडामत्स्य छे तेना औदारिक शरीरनी अपेक्षाअे औदारिकने उदार-
पुढत् प्रमाणवाणुं कडेवामां आण्युं छे, कारणु के तेनुं प्रमाणु आकीना शरी-
रनी अपेक्षाअे १०००. येणन करतां पणु विशेष कहु छे. तेथी शेष शरीर
करतां ते अधिक प्रमाणवाणुं डाय छे भवधारणीय वैक्रिय शरीरनी अपेक्षाअे
तेमां पुढत्ता छे. ॥ सू ३५ ॥

स्पृष्टनी साथे संघटित जे सूत्रानुं छेवे सूत्रकार कथन करे छे—

“चउहिं अत्थिकाएहिं लोगे फुडे” इत्यादि—(सू. ३६)

आ लोक नीचेना चार अस्तिकाय ३५ द्रव्योथी स्पृष्ट (व्याप्त) कही
छे—(१) धर्मास्तिकायथी (२) अधर्मास्तिकायथी (३) जीवास्तिकायथी अने
(४) पुद्गलास्तिकायथी.

ચતુર્ભિર્વાદરકાયૈરુપપદ્યમાનૈર્લોકઃ સ્પૃષ્ટઃ પ્રજ્ઞસઃ, તદ્યથા—પૃથિવીકાયિકૈઃ ૧, અપ્કાયિકૈઃ ૨, વાયુકાયિકૈઃ ૩, વનસ્પતિકાયિકૈઃ ૪। (૨) ॥ સૂ. ૩૬ ॥

ટીકા—“ ચરહિં અત્થિકાઈહિ ” ઇત્યાદિ—ચતુર્ભિઃ અસ્તિકાયૈઃ લોકઃ સ્પૃષ્ટઃ—પ્રતિપ્રદેશં વ્યાપ્તઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા—‘ ધર્માસ્તિકાયૈને ’ ત્યાદિ । (૧)

“ ચરહિં વાયરકાઈહિ ” ઇત્યાદિ—ચતુર્ભિઃ વાદરકાયૈઃ ઉપપદ્યમાનૈર્જીવઃ લોકઃ સ્પૃષ્ટઃ—વ્યાપ્તઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા—પૃથિવીકાયિકૈઃ ૧, અપ્કાયિકૈઃ ૨, વાયુકાયિકૈઃ ૩, વનસ્પતિકાયિકૈઃ ૪। અયં ભાવઃ—વાદરા હિ પૃથિવ્યવ્વાયુવનસ્પતયઃ સર્વતો લોકાદુદ્ધૃત્ય પૃથિવ્યાદિ-ઘનોદધ્યાદિ-ઘનવાતવલયાદિ ઘનોદધ્યાદિષુ સ્વકીયસ્વકીયેષૂત્પત્તિસ્થાનેષ્વન્યતરગત્યા સમુત્પદ્યમાના અપર્યાપ્તકાવસ્થાયામતિવહુત્વાત્ સકલલોકં સ્પૃશન્તિ, તે પુનઃ પર્યાપ્તા વાદરતેજસ્કાયિકાસ્ત્રસાશ્ચ લોકાસંખ્યેયભાગમેવ સ્પૃશન્તિ, ઉક્તં ચ પ્રજ્ઞાપનાયામ્—“ एत्थ णं वादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ” ।

ઉત્પદ્યમાન ચાર વાદર કાયૈસે યહ લોક સ્પૃષ્ટ કહા ગયા હૈ, જૈસે પૃથિવીકાયિકૈસે અપ્કાયિકૈસે વાયુકાયિકૈસે ઓર વનસ્પતિકાયિકૈસે । હનમેં પ્રથમ સૂત્રકા અભિપ્રાય તો સ્પૃષ્ટ હૈ દ્વિતીય સૂત્રકા અભિપ્રાય એસા હૈ—વાદરકાયિક પૃથિવી, અપ્, વાયુ, ઓર વનસ્પતિ જીવ સમસ્ત લોગસે ઉદ્ધર્તના કરકે પૃથિવી આદિકૈમેં—ઘનોદધ્યાદિ વાતવલયાદિકૈમેં અપને ૨ ઉત્પત્તિસ્થાનોમેં કિસી એક ગતિસે ઉત્પન્ન હોતે હુએ અપર્યાપ્તાવસ્થામેં અતિ વહુત હોનેસે સર્વ લોકકી સ્પર્શના કરતે હૈં ઓર જો પર્યાપ્ત વાદર તેજસ્કાયિક જીવ હૈં વે ઓર ત્રસ જીવ લોકકે અસંખ્યાત ભાગકોહી સ્પર્શ કરતેહૈં । ઉક્તં પ્રજ્ઞાપનાયામ્-પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમેં કહાહૈ—“एत्थ णं वादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, उव-

ઉત્પદ્યમાન ચાર વાદર કાયૈથી આલોક સ્પૃષ્ટ કહ્યો છે—(૧) પૃથ્વી કાયિકૈથી, (૨) અપ્કાયિકૈથી, (૩) વાયુકાયિકૈથી અને (૪) વનસ્પતિકાયિકૈથી.

આ બે સૂત્રોમાંથી પહેલાં સૂત્રનો ભાવાર્થ તો સુગમ છે. બીજા સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—વાદરકાયિક પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય એવા સમસ્ત લોકમાંથી ઉદ્ધર્તના કરીને પૃથ્વી આદિકૈમાં—ઘનોદધિ આદિ વાતવલયાદિકૈમાં પેાત પેાતાના ઉત્પત્તિ સ્થાનોમાં કોઈ એક ગતિમાં ઉત્પન્ન થઈને અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઘણા વધારે હોવાથી સર્વ લોકની સ્પર્શના કરે છે. અને જે પર્યાપ્ત વાદર તેજસ્કાયિક એવા છે તેઓ અને ત્રસ એવા લોકના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં કહ્યું છે કે—

“ एत्थ णं वादरपुढविकाइयाणं पज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असं-

छाया—अत्र खलु वाद्रपृथिवीकायिकानां पर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि-
उपपातेन लोकस्य असंख्येयभागे ” । तथा—“ वाद्रपुढविकाइयाणं अपज्जत्त-
गाणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं सव्वलोए ”, छाया—“ वाद्रपृथिवीकायिकानां-
मपर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन सर्वलोके ”, एवमन्वायुवनस्पती-
नाम् । तथा—वाद्रतेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असं-
खेज्जइभागे ” वाद्रतेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, लोयस्स दोसु
उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्ठेय ” छाया—वाद्रतेजस्कायिकानां पर्याप्तानां, स्था-
नानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन लोकस्य असंख्येयभागे, वाद्रतेजस्कायिकानाम्
अपर्याप्तानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, लोकस्य द्वयोर्ध्वकपाटयोः तिर्यग्लोकवत्स्थे

वाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ” यहाँ पर्याप्त वाद्र पृथिवीकायिकोंके स्थान
कहे गये हैं उपपातकी अपेक्षा इनके स्थान लोकके असंख्यातवे भागमें
हैं तथा “ वाद्र पुढवीकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता उववा-
एणं सव्वलोए ” वाद्र पृथिवीकायिक अपर्याप्तकोंके स्थान लोकके
असंख्यातवे भागमें हैं । ये स्थान इनके उपपातकी अपेक्षासे कहे गये
हैं । इसी तरहसे पर्याप्तक अपर्याप्तक अप्कायिक वायुकायिक और
वनस्पतिकायिकोंके उपपत्तिकी अपेक्षासे स्थान जानना चाहिये । तथा—
“ वाद्र तेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पणत्ता उववाएणं लोयस्स
असंखेज्जइभागे वाद्रतेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा
पणत्ता लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरियलोयतट्ठेय ” पर्याप्त
तेजस्कायिक जीवोंके उत्पत्तिस्थान लोकके असंख्यातवे भागमें कहे
गये हैं । अपर्याप्तक वाद्र तेजस्कायिकोंके स्थान ऊर्ध्वकपाटस्थ-तिर्यग-

खेज्जइभागे ” अर्धी पर्याप्त वाद्र पृथ्वीक यिकोंनां स्थान कहां छे. उपपातनी
अपेक्षासे तेमनां स्थान लोकना असंख्यातमां भागमां छे. तथा “ वाद्र
पुढविकाइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता उववाएणं सव्वलोए ” वाद्र पृथ्वी-
कायिकोंना पृथ्वीकायिक अपर्याप्तकोंनां स्थान उपपातनी अपेक्षासे समस्त लोकमां छे.

अने प्रमाणे पर्याप्तक अने अपर्याप्तक अप्कायिक वायुकायिक अने वन-
स्पतिकायिकोंनी उत्पत्तिनी अपेक्षासे स्थान समज्वा लेधये ” तथा—“ वाद्र
तेउकाइयाणं पज्जत्ताणं ठाणा पणत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे वाद्र-
तेउक्काइयाणं अपज्जत्तगाणं ठाणा पणत्ता, लोयस्स दोसु उड्ढकवाडेसु तिरिय-
लोयतट्ठेय ” वाद्र पर्याप्त तेजस्कायिक जीवोंनां उत्पत्तिस्थान लोकना असं-
ख्यातमां भागमां कहां छे. अपर्याप्तक वाद्र तेजस्कायिकोंना उत्पत्तिस्थान
ऊर्ध्वकपाटस्थ तिर्यग्लोकमां कहां छे.

(ऊर्ध्वकपाटस्थतिर्यगलोके) च ” तथा—“ कहिणं भंते ! सुहृमपुढविकाइया जे पञ्जत्तगा जे य अपञ्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्नगा पणत्ता, समणाउसो ! । छाया—क्व खलु भदन्त ! सूक्ष्मपृथिवीकायिकानां पर्याप्तकानामपर्याप्तकानां च स्थानानि प्रज्ञप्तानि, गौतम ! सूक्ष्मपृथिवीकायिका ये पर्याप्तका ये च अपर्याप्तकाः ते सर्वे एकविधा अविशेषा अनानात्वाः सर्वलोकपर्याप्तकाः प्रज्ञप्ताः श्रमणाऽऽयुष्मन् !, एवमन्येऽपि, “ एवं वेहंदियाणं पञ्जत्तापञ्जत्ताणं ठाणा पणत्ता, उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ”, छाया—द्वीन्द्रियाणां पर्याप्तकापर्याप्तकानां स्थानानि प्रज्ञप्तानि, उपपातेन लोकस्या संख्येयभागे, एवं शेषाणामपि ।

लोकमें कहे गये हैं तथा—“ कहिणं भंते ! सुहृमपुढविकाइया जे पञ्जत्तगा जे य अपञ्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्नगा पणत्ता समणाउसो ” हे भदन्त ! पर्याप्तक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथिवीकायिकोंके स्थान कहे गये हैं?—हे गौतम ! जो पर्याप्त अपर्याप्त सूक्ष्म पृथिवीकायिक हैं वे सब एकविध हैं अविशेष हैं नाना नहीं हैं और सर्व लोकमें पर्याप्तक हैं व्याप्त हैं इस प्रकारका कथन इनके विषयमें किया गया है इसी तरह अन्य भी सूक्ष्म जीव जानना चाहिये ।

“ एवं वेहंदियाणं पञ्जत्तापञ्जत्ताणं ठाणा पणत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइभागे ” इसी तरहसे पर्याप्त अपर्याप्त दो इन्द्रिय जीवोंके स्थान कहे गये हैं ये उपपातकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवे

तथा—“कहिणं भंते ! सुहृमपुढविकाइया जे पञ्जत्तगा जे य अपञ्जत्तगा ते सव्वे एगविहा अविसेसमणाणत्ता सव्वलोगपरियावन्नगा पणत्ता समणाउसो ’ हे भगवन् ! पर्याप्तक अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिकानां स्थान कथां कथां छे.

મહાવીર પ્રભુનો ઉત્તર—“ હે શ્રમણાયુષ્મન્ ! હે ગૌતમ ! જે પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિકો છે, તેઓ સૌ એક જ પ્રકારના છે, તેમનામાં વિશેષતા નથી કે વિવિધતા નથી. તેઓ સર્વલોકમાં પર્યાપ્તક-વ્યાપ્ત છે. આ પ્રકારનું કથન તેમને વિષે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. એજ પ્રમાણે અન્ય સૂક્ષ્મ જીવો વિષે પણ સમજવું.

“ “ एवं वेहंदियाणं पञ्जत्तापञ्जत्ताणं ठाणा पणत्ता उववाएणं लोयस्स असंखेज्जइ भागे ” એજ પ્રમાણે પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત દ્વીન્દ્રિય જીવોનાં સ્થાન કહ્યાં છે એટલે કે તે સ્થાનો ઉપપાતની અપેક્ષાએ લોકના અસંખ્યાતમાં

ननु तेजसोऽपि परिणामविशेषलक्षणवादरत्वसत्त्वेन वादरतेजः-कायेनापि उत्पद्यमानजीवस्पर्शो लोके वक्तव्यः, एवं च पञ्चभिर्वादरकायैरुत्पद्यमानैर्लोकः स्पृष्ट इति वक्तव्ये चतुर्भिर्वादरकायैरित्युक्तौ शास्त्रे न्यूनत्वं प्रतिभातीति चेत्-
-श्रूयताम्-यद्यपि सूक्ष्माः पृथिव्यादयः पञ्चापि सर्वलोकात् सर्वलोके समुत्पद्यन्ते, तथापि तत्र वादरतेजसानां सर्वलोकाद्दुव्युत्पद्यमानेषु क्षेत्रे ऋजुगत्या वक्रगत्या च जायमानानामूर्ध्वकपाटद्वये एव वादरतेजस्त्वं व्यवह्रियत इति न सर्वत्र वादर-
तेजस्त्वमिति चतुर्भिर्वादरकायैरित्येवोक्तं न तु पञ्चभिरिति ॥सू० ३६॥

भागमें हैं इसी तरहका कथन शेष जीवोंके उपपात स्थानोंके विषयमें भी जानना चाहिये ।

शंका—तेज भी परिणामविशेष रूप वादरत्वमें रहता है अतः वादर तेजस्कायसे भी उत्पद्यमान जीव स्पर्श लोकमें कहने योग्य है इस तरह उपपद्यमान पांच वादर कार्यों द्वारा लोक स्पृष्ट होता है ऐसा कहना चाहिये था सो ऐसा न कहकर उपपद्यमान चार वादरकार्यों द्वारा लोक स्पृष्ट है ऐसा कथन न्यूनता भरा हुआ प्रतीत होता है ?

उत्तर—यद्यपि पांचोंही सूक्ष्म पृथिव्यादिक जीव सर्वलोकसे समस्त लोकमें उत्पन्न होते हैं तथापि सर्वलोकसे उद्घर्तना करके मनुष्य क्षेत्रमें ऋजुगतिसे या वक्रगतिसे उत्पन्न होते हुए वादर तेजस्कायिकोंका उर्ध्वकपाट द्वयमें ही वादर तेजसरूपसे व्यवहार होता है सर्वत्र नहीं इस कारण चार उत्पद्यमान वादरकार्यों द्वारा यह लोक स्पृष्ट है ऐसा ही कहा गया है पांचोंसे यह स्पृष्ट है ऐसा नहीं कहा गया है ॥सू० ३६॥

लागभां छे, अम समञ्जुं. अज प्रकारनुं कथन भाकीना एवेना उपपात स्थानोना विषयभां पणु समञ्जुं.

शंका—तेज पणु परिणामविशेष इय आदरत्वभां रहे छे तेथी आदर तेजःकायभांथी उत्पद्यमान एवस्पर्श लोकभां कडेवा योग्य छे आ रीते तो अर्धी अणुं कथन थनुं नेधअे के उपपद्यमान पांच आदरकाये द्वारा लोक स्पृष्ट (व्याप्त) थाय छे. आ प्रमाणे कडेवाने अददे “उपपद्यमान चार आदरकाये द्वारा लोक स्पृष्ट छे” आ प्रमाणे कडेवुं ते न्यूनतायुक्त लागतुं नथी ?

उत्तर—ने के पांचे सूक्ष्म पृथ्वीकाय आदि एवे, सर्व लोकभांथी समस्त लोकभां उत्पन्न थाय छे, छतां पणु सर्व लोकभांथी उद्घर्तना करीने मनुष्यक्षेत्रभां ऋजुगतिथी के वक्रगतिथी उत्पन्न थतां आदर तेजस्कायिकोना उर्ध्वकपटद्वयभां अ आदर तेजसइये व्यवहार थाय छे-सर्वत्र नही. ते कारणे तेजस्कायिक सिवायना चार उत्पद्यमान आदरकाये द्वारा आ लोक स्पृष्ट (व्याप्त) छे, अणुं कडेवाभां आण्युं छे-पांचे द्वारा स्पृष्ट डेवानुं कडेवाभां आण्युं नथी. सू ३६

पूर्व चतुर्भिर्लोकैः स्पृष्ट इत्युक्त, सम्प्रति लोकस्य धर्मास्तिकायादीनां च प्रदेशपरिमाणतः परस्परं तुल्यतामाह—

मूलम्—चत्वारि पद्मसङ्गेणं तुल्यता पण्यन्ता, तं जहा-धम्म-
त्थिकाए १, अधम्मत्थिकाए २, लोकागासे ३, एगजीवे ४॥ सू० ३७॥

छाया—चत्वारः प्रदेशाग्रेण तुल्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—धर्मास्तिकायः १,
अधर्मास्तिकायः २ लोकाऽऽकाशः ३, एकजीवः ४॥ सू० ३७ ॥

टीका—“ चत्वारि पद्मसङ्गेणं ” इत्यादि—प्रदेशाग्रेण - प्रदेशपरिमाणेन
चत्वारः तुल्याः—समाः—सर्वेषां धर्मास्तिकायादिकानामेषामसङ्ख्यातप्रदेशत्वेन
समानाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—धर्मास्तिकायः १ अधर्मास्तिकायः २, लोकाऽऽकाशः
३, एकजीवः ४। तत्राऽऽकाशस्यानन्तप्रदेशत्वेन धर्मास्तिकायादित्रयतुल्यत्वं न

अत्र सूत्रकारलोककी और धर्मास्तिकायादिकोंकी प्रदेश परिमाणकी
अपेक्षा परस्परमें तुल्यताका कथन करते हैं—

‘चत्वारि पद्मसङ्गेणं तुल्यता’ इत्यादि सूत्र ३७ ॥

प्रदेश परिणामकी अपेक्षा चार पदार्थ आपसमें तुल्य कहे गये हैं
लोकाकाश के, धर्मास्तिकायके, अधर्मास्तिकाय और एक जीवके असं-
ख्यात प्रदेश होते हैं इस तरह असंख्यात प्रदेशोंकी अपेक्षासे धर्मा-
स्तिकायादिकोंमें समानता प्रकटकी गई है “ लोकाकाश ” ऐसा जो
लोक पदसे विशेषित आकाश कहा गया है उसका कारण ऐसा है कि
आकाशके अनन्त प्रदेश होते हैं अतः धर्मास्तिकायादिके साथ तुल्यता
इसकी घटित नहीं हो सकती है इसलिये धर्मास्तिकायादिकोंके साथ

इसे सूत्रकार लोकनी अने धर्मास्तिकायादिकानी प्रदेश परिमाणनी अपे-
क्षासे परस्परमां तुल्यता प्रकट करे छे—

“ चत्वारि पद्मसङ्गेणं तुल्यता ” इत्यादि (सू ३७)

प्रदेश परिमाणनी अपेक्षा से लोकाकाश, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने
लुवास्तिकायमां समानता कही छे, कारण के लोकाकाशना, धर्मास्तिकायना,
अधर्मास्तिकायना अने एक लुवना असंख्यात प्रदेशो डोय छे. आ रीते
असंख्यात प्रदेशोनी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय अदि चार पदार्थोमां तुल्यता
अभावामां आनी छे.

“लोकाकाश” आ पदमां लोकपदधी विशेषित से आकाश कहेवामां आण्युं
छे तेनुं कारण से छे के आकाशना अनन्त प्रदेशो डोय छे, तेथी धर्मास्तिकाय
पदोरेनी साथे तेनी समानता संभवी शकती नथी. ते कारणे, धर्मास्तिकाया-

स्यादिति लोकपदं योजयित्वा लोकाऽऽकाशपदं प्रोक्तं, तथा सति लोकाऽऽकाश-
स्याप्यसंख्यातप्रदेशत्वेन धर्मास्तिकायादित्रयसाम्यमुपपन्नम् । ' एकजीवे '-
-त्यत्रैकपदानुपादाने सामान्यतया सर्वजीवोपस्थितौ सर्वेषां जीवानामनन्तप्रदेश-
त्वाद् धर्मास्तिकायादित्रयसाभ्यं न स्यादित्येकजीव इति पदमुपात्तम्, तथा सति
एकस्य जीवस्यानन्तप्रदेशत्वाभावेनासंख्यातप्रदेशत्वेन त्रिभिः साम्यमुपपन्नमिति
बोध्यम् ॥ सू० ३७ ॥

पूर्वं 'षट्त्रिंशन्तममूत्रे पृथिव्यादिभिः स्पृष्टो लोकः' इत्युक्तमिति पृथिव्यादीनां
चतुर्णां निकायानामेकं शरीरं सुदृश्यं न भवतीति प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—चउण्हमेगं शरीरं नो सुदस्सं भवइ, तं जहा-
पुढविकाइयाणं १, आउकाइयाणं २, तेउकाइयाणं ३, वणस्सइ-
काइयाणं ४। सू० ३८ ॥

आकाश प्रदेशकी अपेक्षा तुल्यता घटित करनेके लिये "लोकाकाश"
एसा कहा गया है क्योंकि लोकाकाशके असंख्यात प्रदेश कहे गये हैं ।
इसी तरहसे " एक जीव " ऐसा जो पद कहा गया है उसकाभी तात्पर्य
ऐसाही है अर्थात् सर्व जीवोंकी अपेक्षा जीवोंके प्रदेश अनन्त होते हैं
परन्तु एक जीवके प्रदेश असंख्यातही होते हैं अनन्त नहीं होते हैं यदि
जीवके साथ एक पद न दिया जाता सर्व जीवोंकी उपस्थिति हो जानेसे
धर्मास्तिकायादिकोंके साथ जीवकी प्रदेशोंकी अपेक्षा समानता नहीं
बनती अतः धर्मास्तिकायादिकोंके साथ एक विशेषण दिया गया है
क्योंकि एकजीवमें असंख्यात प्रदेशही कहे गये हैं ॥ सू० ३७ ॥

दिकेनी साथे आकाशनी प्रदेशोनी अपेक्षाये तुल्यता घटाववाने भाटे " लोका-
काश " पदने प्रयोग करवामां आये छे, कारणके लोकाकाशना असंख्यात
प्रदेशो कहा छे.

अत्र प्रमाणे " एक जीव " आ पदने प्रयोग करवानुं कारण पणु
नीचे प्रमाणे छे—सर्व जीवोनी अपेक्षाये विचार करवामां आवे तो तेमनां
प्रदेशो अनन्त छे. परन्तु एक जीवना प्रदेशो असंख्यात न होय छे—अनन्त
होता नथी जे 'जीव' पदनी आगण एक विशेषण भूकवामां आयुं न
होत तो सर्व जीवोनी उपस्थिति थछे नवाने कारणे धर्मास्तिकाय आदिकेनी
साथे जीवनी प्रदेशोनी अपेक्षाये समानता न संलपी शकत नही तेथी धर्मा-
स्तिकाय आदिकेनी साथे जीवनी समानता घटाववाने निमित्ते जीव पदनी
आगण 'एक' विशेषण लगाववामां आयुं छे, कारण के एक जीवना असं-
ख्यात प्रदेशो न कहा छे. ॥ सूत्र ३७ ॥

હાયા—ચતુર્ગામેકં શરીરં નો સુદૃશ્યં ભવતિ, તદ્વથા-પૃથિવીકાયિકાનામ્ અપ્કાયિકાનાં ૨, તેજસ્કાયિકાનાં ૩, વનસ્પતિકાયિકાનામ્ ૪। સૂ. ૩૮ ॥

ટીકા—“ ચડ્ઠમેગં ” इत्यादि—चतुर्णाम्-अनुपदं वक्ष्यमाणानां पृथिवी-कायिकादीनाम्, एकं-सूक्ष्मं शरीरं सुदृश्यम्-अनुमानादिगम्यत्वेऽपि प्रत्यक्षं नो भवति, अतिसूक्ष्मत्वात्, केषां चतुर्णामित्याकाङ्क्षायामाह—“ तद्यथे ”-त्यादि,—पृथिवीकાયिकानाम् १, अप्कાયिकानाम् २, तेजस्कायिकानाम्, वनस्पतिकायिकानाम् ४। अत्रैकशब्दः सूक्ष्मवाचकः ।

નનુ વાયોરપિ શરીરં દૃશ્યં ન ભવતીતિ પશ્ચાનામિતિ વક્તવ્યે કથં ચતુર્ણા-મિતિ નિર્દેશઃ કૃત ઇતિ ચેદાહ-વાદરવાયુનાં સૂક્ષ્માણાં પૃથિવ્યવ્વાયુતેજોવનસ્પ-

પૃથિવીવ્યાદિકોંસે લોક સ્પૃષ્ટ હૈ એસા કહા ગયા હૈ-સો અથ સૂત્ર-કાર યહ પ્રકટ કરતે હૈં કિ પૃથિવ્યાદિક ચારોંકા એક શરીર એસામી હૈ જો સુદૃશ્ય નહીં હોના હૈ—“ ચડ્ઠમેગં સરીરં નો સુદસ્સં ” इत्यादि सूत्र ३८ ॥

इन चार पृथिव्यादिकोंका एक शरीर सुदृश्य नहीं होता है वे चार इस प्रकारसे हैं—पृथिवीकायिक १, अप्कायिक २, तेजस्कायिक ३ और वनस्पतिकायिक ४ इनका एक शरीर सुदृश्य नहीं होता है उसका कारण ऐसा है वह अनुमान आदिसे ही गम्य होता है प्रत्यक्षसे गम्य नहीं होता है क्योंकि वह सूक्ष्म शरीर अति सूक्ष्म होना है यहां जो “एक” शब्द प्रयुक्त हुआ है वह इसी सूक्ष्म शरीरका वाचक है ।

શંકા—વાયુકા મી તો શરીર દૃશ્ય નહીં હોતા હૈ ફિર યહાં સૂત્ર મેં “ ચતુર્ણાં ” એસા ન કહકર “ પશ્ચાનામ્ ” એસા કહના ચાહિયે થા

પૃથ્વીકાય આદિકોથી લોક સ્પૃષ્ટ છે, એવું પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે, હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે પૃથ્વીકાય આદિ ચારેનું એક શરીર એવું પણ છે કે જે સુદૃશ્ય હોતું નથી—“ ચડ્ઠમેગં સરીરં નો સુદસ્સં ” इत्यादि—(सू ३८)

(૧) પૃથ્વીકાયિક, (૨) અપ્કાયિક, (૩) તેજસ્કાયિક અને (૪) વનસ્પતિ-કાયિક, આ ચાર પ્રકારના જીવોનું એક શરીર સુદૃશ્ય હોતું નથી, તેનું કારણ એ છે કે તે અનુમાન આદિ દ્વારા જ ગમ્ય (ગાણી શકાય એવું) હોય છે—પ્રત્યક્ષ ભેદ શકાય એવું હોતું નથી કારણ કે તે અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે.

અહીં જે “ એક ” શબ્દ વપરાયો છે તે સૂક્ષ્મ શરીરનો વાચક છે—બાહર શરીરનો વાચક નથી.

શંકા—વાયુનું શરીર પણ દૃશ્ય હોતું નથી. તેથી આ સૂત્રમાં ‘ચારનું એક શરીર દૃશ્ય હોતું નથી’ એમ કહેવાને બદલે ‘પાંચનું એક શરીર

तिकायिकानां पञ्चानामेकमनेकं वा शरीरमदृश्यं भवति । वादरपृथिव्यप्तेजोवनस्प-
तिकायिकानां तु एकमेव शरीरमदृश्यं भवति, अत एव चतुर्णामित्युक्तं, न तु
पञ्चानामिति । वनस्पतयस्त्वह साधारणा एव गृह्यन्ते, तेपामेवैकशरीरस्यादृश्य-
त्वात्, प्रत्येकशरीरस्यतु एकस्यापि दृश्यत्वादिति । सू० ३८ ॥

पूर्वं पृथिव्यादीनां चतुर्णां सूक्ष्मशरीरस्य चक्षुरग्राह्यत्वमुक्तं, साम्प्र-
तमिन्द्रियप्रस्तावाच्छ्रोत्रादिकेन्द्रियचतुष्टयशब्दाद्यर्थचतुष्टयस्येन्द्रियसम्बद्धत्वेनाऽऽ-

सो ऐसा न कहकर “चतुर्णां” ऐसा ही क्यों कहा गया है ?

उत्तर—इस कथनका ऐसा भाव प्रगट करनेके लिये ऐसा कहा
गया कि जो वायुकायिक सूक्ष्म और वादर होतेहैं उनका तो कोईभी शरीर
चाहे वह सूक्ष्म हो या वादर हो सुदृश्य (देखने योग्य) होताही नहींहै परन्तु
जो सूक्ष्म पृथिव्यादि चार हैं उनकाही सूक्ष्म शरीर सुदृश्य नहीं होता
है वादर पृथिव्यादिकोंका वादर शरीर तो सुदृश्य होता है, अतः ये
चार ऐसे हैं कि जिनका एक सूक्ष्म शरीर ही सुदृश्य नहीं होता है
वादर शरीर तो सुदृश्य होता ही है परन्तु वायुकायिकका तो कोई भी
शरीर सुदृश्य नहीं होता है । यहां वनस्पति शब्दसे साधारण वनस्प-
तिकायिक ही गृहीत हुआ है प्रत्येक वनस्पतिकायिक नहीं क्योंकि
उनका ही एक सूक्ष्म शरीर अदृश्य होता है वादर वनस्पतिकायिकका
वादर शरीर तो दृश्य होता है ॥ सू० ३८ ॥

दृश्य ङोतुं नथी अने कडेपु नेधअ

उत्तर—आ कथन प्रकट करवानुं कारण नीचे प्रमाणे छे—वायुकायिक
सूक्ष्म अने वादर अने प्रकारना होय छे. तेमनुं वादर शरीर पण सुदृश्य
ङोतुं नथी अने सूक्ष्म शरीर पण सुदृश्य ङोतुं नथी, आ रीते तेमनुं अके
पण प्रकारनुं शरीर सुदृश्य ङोतुं नथी. परन्तु ने सूक्ष्म पृथ्वीकाय आदि
पूर्वोक्त चार प्रकारना लोवे न छे तेमनां न सूक्ष्म शरीरे। सुदृश्य ङोतां
नथी. वादर पृथ्वीकाय आदिकेना वादर शरीरे। तो सुदृश्य होय छे न.
तेथी पूर्वोक्त पृथ्वीकाय आदि चार न अेवां छे के नेमना सूक्ष्म शरीरे।
सुदृश्य ङोतां नथी—तेमना वादर शरीरे। तो सुदृश्य होय छे न. परन्तु
वायुकायिकेनुं तो केध पण शरीर सुदृश्य ङोतुं नथी अर्ही वनस्पति शब्द
द्वारा साधारण वनस्पतिकायिक न गृहीत थयेन छे, प्रत्येक वनस्पतिकायिक
गृहीत थयेन नथी कारण के तेनुं अके सूक्ष्म शरीर न अदृश्य होय छे—वादर
वनस्पतिकायिकनुं वादर शरीर तो दृश्य होय छे ॥ सू. ३८ ॥

स्मज्ञेयत्वं प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि इंद्रियत्था पुट्टा वेदेति, तं जहा—सोइंद्रियत्थे
१, घाणिंद्रियत्थे २, जिह्वेन्द्रियत्थे ३, फासिंद्रियत्थे ४। सू० ३९।

छाया—चत्वार इन्द्रियार्थाः स्पृष्टा वेद्यन्ते, तद्यथा—श्रोत्रेन्द्रियार्थः १,
घ्राणेन्द्रियार्थः २, जिह्वेन्द्रियार्थः ३, स्पर्शेन्द्रियार्थः ४। ॥ सू० ३९ ॥

टीका—“ चत्वारि इंद्रियत्था ” इत्यादि—चत्वारः—चतुःसंख्यका इन्द्रियार्थाः—
इन्द्रियैर्यन्ते—स्वविषयीक्रियन्त इतीन्द्रियार्थाः = शब्दादयः स्पृष्टाः—इन्द्रियैः
सम्बद्धाः सन्तो वेद्यन्ते—आत्मना ज्ञायन्ते, ते के चत्वार इत्याह—“ तद्यथे ”—
त्यादि—श्रोत्रेन्द्रियार्थः—श्रवणेन्द्रियगोचरः शब्दः १, घ्राणेन्द्रियार्थः घ्राणेन्द्रियगो-

पृथिव्यादिक चारोंका सूक्ष्म शरीर चक्षु इन्द्रिय द्वारा ग्रह्य नहीं
होता है ऐसा कहकर अब सूत्रकार इन्द्रिय प्रस्तावको लेकर ऐसा कथन
करते हैं कि श्रोत्रादिक चार इन्द्रियां ही प्राप्तार्थ प्रकाशक होती हैं
अन्य नहीं—“चत्वारि इंद्रियत्था पुट्टा वेदेति” इत्यादि सूत्र ३९ ॥

चार इन्द्रियों के विषय इन्द्रियोंके साथ स्पृष्ट होकर जाते हैं वे हम
प्रकारसे हैं—एक श्रोत्रेन्द्रियार्थ १, दूसरा घ्राणेन्द्रियार्थ २, तीसरा
जिह्वेन्द्रियार्थ और चौथा स्पर्शनेन्द्रियार्थ ४

इन्द्रियों द्वारा जो अपने विषयभूत बनाये जाते हैं वे इन्द्रियार्थ
हैं ऐसे ये इन्द्रियार्थ शब्दादि रूप होते हैं। ये शब्दादिक विषय जब
इन्द्रियोंके साथ सम्बद्ध होते हैं तभी आत्मा जाने जाते हैं—शब्द श्रव-
णेन्द्रिय गोचर होनेसे श्रोत्रेन्द्रियार्थ (श्रोत्रेन्द्रियका विषय) है गन्ध घ्राणेन्द्रिय

पृथ्वीकाय आदि पूर्वोक्त चारनां सूक्ष्म शरीर चक्षु इन्द्रिय द्वारा ग्रह्य
होता नहीं, आ प्रकारनुं कथन करीने डवे सूत्रकार इन्द्रिय—प्रस्तावने अनु-
लक्षीने ओषुं कथन करे छे के श्रोत्रादिक चार इन्द्रियो न प्राप्तार्थ प्रकाशक
होय छे—अन्य होती नहीं—“ चत्वारि इंद्रियत्था पुट्टा वेदेति ”—(सू ३९)

चार इन्द्रियोना विषय इन्द्रियोनी साथे स्पृष्ट थयने ग्रह्य थाय छे,
ते चार विषयो नीचे प्रमाणे छे—(१) श्रोत्रेन्द्रियार्थ, (२) घ्राणेन्द्रियार्थ (३)
जिह्वेन्द्रियार्थ अने (४) स्पर्शनेन्द्रियार्थ.

इन्द्रियो द्वारा जेने पोताना विषयभूत ग्रह्य भनाववामां आवे छे तेमने
इन्द्रियार्थ कहे छे ते इन्द्रियार्थ शब्दादि रूप होय छे, ते शब्दादिक विषय
न्यारे इन्द्रियोनी साथे सम्बद्ध थाय छे तयारे न आत्मा द्वारा ज्ञानी शक्य
छे, शब्द श्रवणेन्द्रिय गोचर होवार्थी श्रोत्रेन्द्रियार्थ रूप छे, गन्ध घ्राणेन्द्रिय

चरो गन्धः २, जिह्वेन्द्रियार्थः—रसनेन्द्रियगोचरो रसः ३, स्पर्शेन्द्रियार्थः—त्वगिन्द्रियगोचरः स्पर्शः ४, एते चत्वार इन्द्रियार्थाः श्रोत्रादीन्द्रियसम्बद्धा आत्मना ज्ञायन्ते । चक्षुर्मनोभ्यां त्वपृष्ठा एवार्था आत्मना वेद्यन्त इति ' चत्वारि ' इत्युक्तम् । उक्तं च—

“ पुष्टं सुणेइ सहं, रूवं पुण पासइ अपुष्टं तु ।

गंधं रसं च फासं, वद्धपुष्टं वियागरे । १ । ”

छाया—“ स्पृष्टं शृणोति शब्दं, रूप पुनः पश्यत्यस्पृष्टं तु ।

गन्धं रसं च स्पर्शं, बद्धस्पृष्टं व्याकुर्यात् । १ । ” इति, ॥सू० ३९॥

पूर्व जीव—पुद्गलयोरिन्द्रियद्वारेण ग्राह्यग्राहकभाव उक्तः, सम्यग्गति तयोर्गतिधर्म प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं जीवा य पोगगला य णो संचा-
येति बहिया लोमंता गमणयाए, तं जहा—गइअभावेणं १,
णिरुवग्गहयाए २, लुक्खयाए ३, लोमाणुभावेणं ४ ॥सू० ४० ॥

गोचर होनेसे घ्राणेन्द्रियार्थ है, रस रसनेन्द्रिय गोचर होनेसे जिह्वेन्द्रियार्थ है, और त्वगिन्द्रिय गोचर होनेसे स्पर्श, स्पर्शेन्द्रियार्थ है। ये चार ही—शब्द, गन्ध, रस और स्पर्श ही श्रोत्रादीन्द्रियोंके साथ सम्बद्ध होने पर आत्मा द्वारा जाने जाते हैं चक्षु इन्द्रिय और मन इनके द्वारा अपने विषयभूत पदार्थ अपृष्ट हुए ही जाने जाते हैं। अतः “ चत्वारि ” ऐसा कहा गया है। उक्तं च—“ पुष्टं सुणेइ सहं ” इत्यादि ॥ सूत्र ३९ ॥

इस प्रकारसे जीव और पुद्गलका ग्राह्य ग्राहक भाव कहकर अब सूत्रकार इनके गति धर्मकी प्ररूपणा करते हैं—

गोचर होवाथी घ्राणेन्द्रियार्थं ३प छे. रस (स्वाह) रसनेन्द्रिय गोचर होवाथी जिह्वेन्द्रियार्थं ३प छे अने स्पर्शं स्पर्शेन्द्रिय गोचर होवाथी स्पर्शेन्द्रियार्थं ३प छे. आ चार ज-अटंत्वे के शब्द, गंध, रस अने स्पर्शं ज श्रोत्रेन्द्रिय आदिनी साथे सम्बद्ध थाय त्तारे ज आत्मा द्वारा लक्ष्मी शक्य छे अक्षुधन्द्रिय अने मन, आ षेनी साथे स्पृष्ट थया विना ज-अस्पृष्टं रहिने अमना विषय-भूत पदार्थोने तेमना द्वारा लक्ष्मी शक्य छे. कल्लु पल्लु छे के—“ पुष्टं सुणेइ सहं ” इत्यादि ॥ सू. ३९ ॥

आ प्रकारे एव अने पुद्गलने ग्राह्य ग्राहक भाव प्रकट करीने छे सूत्रकार तेमना गति धर्मनी प्ररूपणा करे छे—

छाया—चतुर्भिः स्थानैर्जीवाश्च पुद्गलाश्च नो शक्नुवन्ति बाह्यालोकान्ताद् गमनतायै, तद्यथा—गत्यभावेन १, निरुपग्रहतया २, रूक्षतया ३, लोकानुभावेन ४। ॥ सू० ४० ॥

टीका—“चउहिं ठाणेहिं” इत्यादि—जीवाः पुद्गलाश्च चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैः—कारणैः बाह्यालोकान्ताद्—अलोके गमनतायै—गमनाय—गन्तुं नो शक्नुवन्ति, तद्यथा—गत्यभावेन—गतिरहितत्वेन, लोकान्ताद् परतो जीवपुद्गलानां गति स्वभावविरहात्, अधोगतिस्वभावरहितदीपशिखावत् १, तथा—निरुपग्रहतया—धर्मास्तिकायाभावेन तज्जनितगत्युपष्टम्भविरहात् शकटीप्रभृतिरहितपङ्गुवत् २,

“चउहिं ठाणेहिं जीवाय पोगगलाय” इत्यादि सूत्र ४० ॥

सूत्रार्थ—इन चार कारणोंसे जीव और पुद्गल बाह्य लोकान्तसे अलोकमें जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं—वे चार कारण इस प्रकारसे हैं—गतिका अभाव १ गति साधक कारणका अभाव २ स्निग्ध रहितता ३ और लोकानुभाव ४ ।

टीकार्थ—लोकान्तसे आगे जीव और पुद्गलोंकी स्वभावताका विरह हो जाता है इसलिये वे अलोकमें जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं, ऐसा यह वहाँ न जा सकनेका प्रथम कारण है जैसे दीपशिखाका स्वभाव अधोगतिवाला नहीं होता है, इसी तरहसे लोकान्तमें रहनेवाले जीवका भी ऐसाही स्वभाव है कि जिस कारण वह लोकान्तसे बाहर रहे हुए अलोकमें नहीं जाता है, द्वितीय कारण ऐसा है कि जीव और पुद्गलोंकी गति क्रियामें निमित्त कारण धर्मद्रव्य होता है वह

“चउहिं ठाणेहि जीवाय पोगगलाय” इत्यादि (सू ४०)

सूत्रार्थ—नीचेना चार कारणोंने लीधे ७५ अने पुद्गल लोकान्तमांथी अडार अलोकमां ७४ शकवाने समर्थ थतां नथी—(१) गतिने अभाव, (२) गतिसाधक कारणने अभाव, (३) स्निग्धताथी रक्षितता अने (४) लोकानुभाव.

टीकार्थ—लोकान्तथी आगण ७५ अने पुद्गलोंने गति स्वभावताने विरह (अभाव) थर्ध जय छे. तेथी तेओ अलोकमां ७४ शकवाने समर्थ थतां नथी. आवुं अलोकमां न ७४ शकवानुं पडेकुं कारण समजवुं. जेम दीप शिषाने स्वभाव अधोगतिवाणे छोते नथी, ओज प्रमाणे लोकान्तमां विराजमान ७५ने पणु ओवे ७ स्वभाव थर्ध जय छे के जेना कारणे ते लोकान्तथी अडारना प्रदेशमां (अलोकमां) ७४ शकते नथी. ७५नुं कारण—७५ अने पुद्गलोंने गतिमां धर्मद्रव्य निमित्तइय अने छे. लोकान्तनी अडार

तथा—रुक्षतया—स्निग्धतारहितनया वालुकामुष्टिवत्, पुद्गला हि लोकान्तेषु तथा परिणमन्ति यथा ततः परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति, कर्मपुद्गलयुक्ता जीवा अपि लोकान्तात् परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति, सिद्धजीवास्तु धर्मास्तिकायाभावेनैव लोकान्तात् परतो गन्तुं न शक्नुवन्ति ३, तथा—लोकानुभावेन—लोकमर्यादया विषयक्षेत्रादन्यत्र गन्तुं न शक्नुवन्ति, सूर्यमण्डलवत् ॥ सू० ४० ॥

अनन्तरोक्ता अर्थाः प्रायो दृष्टान्ततः प्राणिनां प्रतीता भवन्तीति दृष्टान्तभेदान् प्रदर्शयितुं पञ्चसूत्रीमाह—

मूलम्—चउद्विहे णाए पणत्ते, तं जहा—आहरणे १, आहरणतद्दोसे २, आहरणतद्दोसे ३, उवण्णासोवणए ४। (१)

धर्मद्रव्य लोकान्तसे आगे नहीं अतः वे उस कारणके अभावसे शकटी (गाडी)आदि गति साधनसे रहित पङ्गुकी तरह आगे अलोकमें नहीं जाते हैं। तथा—वालुका मुष्टिकी तरह स्निग्धतासे रहित होनेके कारण वे लोकान्तसे आगे नहीं जाते हैं—पुद्गलोंका लोकान्तमें ऐसा परिणमन हो जाता है कि जिससे वे उससे आगेको जानेके लिये समर्थ नहीं होते हैं तथा कर्म पुद्गलोंसे जो वहां जीव रहतेहैं वे भी लोकके अन्तसे आगे अलोकमें नहीं जा सकते हैं। तथा जो सिद्ध जीव हैं, वे तो धर्मास्तिकायके अभावसेही लोकके अन्तसे आगे नहीं जा सकतेहैं। चतुर्थ कारण ऐसा है कि जो लोककी मर्यादाही ऐसी बंधी हुई हैं कि अपने विषय क्षेत्रसे आगे सूर्यमण्डलकी तरह जीव और पुद्गल नहीं जा सकते हैं ॥ सू० ४० ॥

अलोकमां धर्मद्रव्येना सद्भावा न नथी. जेम घोडी आदिथी रहित ल'गडो भावस गति करवाने असमर्थ अने छे जेअ प्रभावे गतिक्रियाना साधनइप धर्मद्रव्येने अभावे अलोकमा एव अने पुद्गलोनी गतिक्रिया अटकी नथ छे. त्रीनुं कारण—जेम वालुक (रेती) स्निग्धताथी रहित होय छे तेम तेओ स्निग्धताथी रहित थछे नवाने कारणे लोकान्तनी अहार अलोकमां नछे शकता नथी. पुद्गलोनुं लोकान्तमां एवुं (स्निग्धता रहित) परिणमन थछे नथ छे के जेथी तेओ लोकान्तथी आगण नछे शकवाने समर्थ यतां नथी. तथा कर्मपुद्गलोथी जे एवे त्यां रहे छे तेओ पण लोकान्तनी अहार अलोकमां नछे शकता नथी तथा जे सिद्ध एवे छे तेओ तो धर्मास्तिकायना अभावावने लीधे न लोकान्तथी आगण नछे शकता नथी योथुं कारणे एवुं छे के लोकनी मर्यादा न एवी अंधायेदी छे के सूर्य मंडलनी जेम एव अने पुद्गल पोताना नियत क्षेत्र करतां आगण नछे शकता न नथी. ॥ सू. ४० ॥

आहरणे चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-अवाए १, उवाए २,
उव्वणाकम्मै ३, पडुप्पणविणासी ४। (२)

आहरणतद्दोसे चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-अणुसिट्ठि १,
उवालंभे २, पुच्छा ३, निस्सावयणे ४ (३)

आहरणतद्दोसे चतुव्विहे पणत्ते, तं जहा-अधम्मजुत्ते १,
पडिलोभे २, अत्तोवणीए ३, दुरुवणीए ४ (४) ।

उव्वणासोवणए चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-तव्वत्थुए
१, तयन्नवत्थुए २, पडिनिभे ३, हेऊ ४। (५)

हेऊ चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-जावए १, थावए २,
वंसए ३, लूसए ४।

अहवा-हेऊ चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-पच्चक्खे १,
अणुमाणे २, ओवम्मै ३, आगमे ४।

अहवा-हेऊ चउव्विहे पणत्ते, तं जहा-अत्थि त्तं अत्थि
सो हेऊ १, अत्थि त्तं णत्थि सो हेऊ २, णत्थित्तं णत्थि सो
हेऊ ३, णत्थित्तं णत्थि सो हेऊ ४। ॥ सू० ४१ ॥

छाया—चतुर्विधं ज्ञातं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-आहरणम् १, आहरणतद्देशः २,
आहणतद्दोषः ३, उपन्यासोपनयः ४। (१)

अनन्तरोक्त अर्थ प्रायः दृष्टान्तसे प्राणियोंको समझमें आता है इस
लिये अब सूत्रकार दृष्टान्त भेदोंको प्रकट करनेके लिये पंचसूत्री कहते हैं

“चउव्विहे णाए पणत्ते” इत्यादि सूत्र ४१ ॥

सूत्रार्थ-ज्ञात-दृष्टान्त चार प्रकारका कहा गया है जैसे-आहरण? आह-

अनन्तरोक्ता अर्थ- (विषय) सामान्य रीते दृष्टान्तों द्वारा समझ शक्य
छे. तेथी हवे सूत्रकार दृष्टान्तना लेदो प्रकट करवा निमित्ते नीचेनां पांच
सूत्रों कडे छे—“ चउव्विहे णाए पणत्ते ” इत्यादि (सू ४१)

सूत्रार्थ-ज्ञात (दृष्टान्त) चार प्रकारका कहा छे. ते चार प्रकारो नीचे प्रमाणे छे-

आहरणं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-अपायः १, उपायः २, स्थापनाकर्म ३, प्रत्युत्पन्नविनाशी ४। (२)

आहरणतद्देशश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-अनुशिष्टिः १, उपालम्भः २, पृच्छा ३, निश्चावचनम् ४। (३)

आहारणतद्दोषश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अधर्मयुक्तं १, प्रतिलोम २, आत्मोपनीतं ३, दुरूपनीतम् ४। (४)

उपन्यासोपनयश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-तद्वस्तुकः १, तदन्यवस्तुकः २, प्रतिनिभः ३, हेतुः ४। (५)

हेतुश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-यापकः १, स्थापकः २, व्यसकः ३, लूपकः ४।

अथवा-हेतुश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-प्रत्यक्षम् १, अनुमानम् २, औपम्यम् ३, आगमः ४।

रणतद्देशः आहरणतद्दोषः और उपन्यासोपनय ४ इनमें आहरण चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अपाय १ उपाय २ स्थापना कर्म ३ और प्रत्युत्पन्नविनाशी ४-(२)

आहरणतद्देश भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अनुशिष्ट १ उपालम्भ २ पृच्छा ३ और निश्चावचन ४-(३)

आहरणतद्दोष भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-अधर्मयुक्त १ प्रतिलोम २ आत्मोपनीत ३ और दुरूपनीत ४ (४)

उपन्यासोपनय भी चार प्रकारका कहा गया है जैसे-तद्वस्तुक १ तदन्यवस्तुक २ प्रतिनिभ ३ और हेतु ४ (५)

इनमें हेतु चार प्रकारका कहा गया है जैसे-यापक १ स्थापक २

(१) आहरण, (२) आहरणतद्देश, (३) आहरणतद्दोष, अने (४) उपन्यासोपनय (१)

तेमां आहरणना नीचे प्रमाणे चार प्रकारे छे-(१) अपाय, (२) उपाय,

(३) स्थापनाकर्म अने (४) प्रत्युत्पन्नविनाशी. (२)

आहरणतद्देशना पणु नीचे प्रमाणे चार प्रकारे क्ख्या छे-(१) अनुशिष्ट,

(२) उपालम्भ, (३) पृच्छा, अने (४) निश्चावचन (३)

आहरणतद्दोषना पणु नीचे प्रमाणे चार प्रकारे क्ख्या छे-(१) अधर्म-

युक्त, (२) प्रतिलोम, (३) आत्मोपनीत अने (४) दुरूपनीत. (४)

उपन्यासोपनयना पणु चार प्रकारे क्ख्या छे-(१) तद्वस्तुक, (२) तदन्य-

वस्तुक, (३) प्रतिनिभ अने (४) हेतु.

तेमाथी हेतु चार प्रकारना क्ख्या छे-(१) यापक, (२) स्थापक, (३)

અથવા-હેતુચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા-અસ્તિતત્, અસ્ત્યસૌ હેતુઃ ૧, અસ્તિ તત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુઃ, નાસ્તિ તત્ અસ્ત્યસૌ હેતુઃ ૨, નાસ્તિ તત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુઃ ૪ ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૪૧ ॥

ટીકા-—‘ ચતુર્વિધે જ્ઞાણે ’ ઇત્યાદિ ।

જ્ઞાત (ન્યાયઃ)ચતુર્વિધ પ્રજ્ઞપ્તં તથા-“ આહારણે ” ઇત્યાદિ, આહરણમ્ ૧, આહરણતદ્દેશઃ ૨, આહરણતદ્દોષઃ ૩, ઉપન્યાસોપનયઃ ૪ સામાન્યતો જ્ઞાતં દ્વિવિધં

વ્યંસક ૩ ઓર લૂષક ૪ અથવા હેતુ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ-પ્રત્યક્ષ ૧ અનુમાન ૨ ઔપમ્ય ૩ આગમ ૪

અથવા-હસ પ્રકારસે ઓ હેતુ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ અસ્તિતત્ અસ્તિ અસૌ હેતુઃ ૧ અસ્તિતત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુ ૨ નાસ્તિતત્ અસ્ત્યસૌ હેતુઃ ૩ ઓર નાસ્તિતત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુઃ ૪

વિશેષાર્થ-જ્ઞાત શબ્દકા અર્થ દૃષ્ટાન્ત ઉદાહરણહૈ યહ જો પ્રથમ મૂત્ર ઢારા આહરણ આદિકે ભેદસે ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ ઉસકા તાત્પર્યાર્થ હસ પ્રકારસે હૈ—

દૃષ્ટાન્ત સાધ્યકો વતાનેવાલા હોતા હૈ વહ સાધ્ય સાધનકે સંબંધમે વાદી એવં પ્રતિવાદીકા બુદ્ધિસામ્યકા સ્થાન હોતા હૈ અતઃ સામાન્ય રૂપસે યહ દૃષ્ટાન્ત સાધ્યમ્ય દૃષ્ટાન્ત ઓર વૈધમ્ય દૃષ્ટાન્ત હસ તરહસે દો પ્રકારકા હોતા હૈ સાધ્ય સે વ્યાપ્ત સાધન જહાં દિઝાયા જાતા હૈ વહ સાધ્યમ્ય દૃષ્ટાન્ત હૈ હમકા દૂસરા નામ અન્વય દૃષ્ટાન્ત ઓ

વ્યંસક અને (૪) લૂષક. અથવા હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) પ્રત્યક્ષ, (૨) અનુમાન, (૩) ઔપમ્ય, અને (૪) આગમ.

અથવા હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) ‘ અસ્તિતત્ અસ્તિ અસૌ હેતુઃ ’, (૨) ‘ અસ્તિતત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુઃ ’, (૩) ‘ નાસ્તિતત્ અસ્ત્યસૌ હેતુઃ ’ અને (૪) ‘ નાસ્તિતત્ નાસ્ત્યસૌ હેતુ. ’

વિશેષાર્થ—‘ જ્ઞાત ’ શબ્દ અહીં ઉદાહરણ (દૃષ્ટાન્ત)નો વાચક છે-તે દૃષ્ટાન્તના આહરણ આદિ જે ચાર ભેદો કહ્યા છે તેમનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

દૃષ્ટાન્ત સાધ્યને બતાવનારું હોય છે. તે સાધ્ય સાધનના સંબંધમાં વાદી અને પ્રતિવાદીના બુદ્ધિસામ્યનું સ્થાન હોય છે. તેથી સામાન્ય રીતે તેના સાધ્યમ્ય દૃષ્ટાન્ત અને વૈધમ્ય દૃષ્ટાન્ત નામના બે પ્રકાર પડે છે સાધ્ય દ્વારા વ્યાપ્ત સાધન જ્યાં બતાવવામાં આવ્યું હોય છે તેનું નામ ‘સાધ્યમ્ય દૃષ્ટાન્ત’ છે. તેનું બીજું નામ ‘અન્વય દૃષ્ટાન્ત’ પણ છે કહ્યું પણ છે કે-

साधर्म्यवैधर्म्यभेदात्, यथा—यत्र यत्र धूमस्तत्राग्निर्यथा महानसः, यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोपि न भवति यथा जलाशये । तदुक्तम्—

“ साध्ये नानुगमो हेतोः, साध्याभावे च नास्तित्वा ।

ख्यायते यत्र दृष्टान्तः स साधर्म्यतरो द्विधा ॥१॥

है । उक्त च—“साध्यव्याप्तं साधनं यत्र प्रदर्श्यते सोऽन्वयदृष्टान्तः” जैसे—
 “ यत्र २ धूमस्तत्र तत्राग्निः यथा महानसः यहाँ पर महानस (रसोई-घर) यह अन्वय दृष्टान्त है क्योंकि—धूम और अग्निका साहचर्य सम्बन्ध हम उन दोनोंको महानसमें देखनेके साथ होता है जहाँ २ धूम होता है वहाँ २ अग्नि होनी है इस बातकी प्रतीति हम महानस—रसोई-घरमें उन दोनोंको साथ २ रहनेसे करते हैं—रसोई घरमें धूम भी होता है और अग्नि भी होती है, इसलिये धूम अग्निके बिना नहीं हो सकता है यदि होगा तो वह अग्निके सद्भावमेंही होगा—जैसा कि वह रसोई घरमें है साधनके अभावमें साध्यका अभाव जहाँ प्रकट किया जाता है वह वैधर्म्य व्यतिरेक दृष्टान्त कहलाता है जैसे—“ यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा जलाशयः ” यहाँ पर जलाशय तालाब आदि वह व्यतिरेक दृष्टान्त है क्योंकि जलाशयमें साध्यका वह्निका भी अभाव है और धूमका भी अभाव है यही बात “साध्येनानुगमो हेतोः”

“ साध्यव्याप्तं साधनं यत्र प्रदर्श्यते सोऽन्वयदृष्टान्तः ”

जेम के—“ यत्र यत्र धूमस्तत्रतत्राग्निः यथा महानसः ” अर्थात् महानस (रसोई) अन्वय दृष्टान्त रूप है, कारण के धूम अने अग्निके साहचर्य संबंध आपणु ते अनेने महानसमां नेधये त्वाये समञ्ज शक्य है. “ न्यां न्यां धुमाडो डाय त्यां त्यां अग्नि डाय है, ” आ वातनी प्रतीति आपणु ते अनेने रसोडांमां साथे साथे न्नेवाथी करी शक्ये छीये.—रसोडांमां धुमाडो पणु डाय है अने अग्नि पणु डाय है, तेथी अ वातनी प्रतीति थाय है के अग्नि विना धुमाडो संलवी शकतो नथी, जे धुमाडोने सद्भाव डशे तो अग्निने पणु सद्भाव न् डशे.

साधनने अलावे न्यां साध्यने अभाव प्रकट करवांमां आवे है, अवा दृष्टान्तने ‘वैधर्म्यं व्यतिरेक दृष्टान्त कडे है. जेम के—“ यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा जलाशयः ” अर्थात् तणावने व्यतिरेक दृष्टान्त रूप प्रकट कथुं है, कारण के तंमां साध्यने—अग्निने पणु अभाव डाय है अने साधनने—धुमाडोने पणु अभाव डाय है अन् वात “साध्ये नानुगमो हेतोः” धर्त्यादि श्लोक द्वारा पृष्ट करवांमां आवी है.

અથવા આખ્યાનકં જ્ઞાતં તત્-ચરિતકલ્પિતભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્ ચરિતં
યથા 'નિદાનં દુઃસ્વાય બ્રહ્મદત્તસ્યેવ' કલ્પિતં યથા- 'પ્રમાદવત્તાં પ્રતિવોધ-
નાય "અનિત્યં યૌવનાદિકમ્" ઇત્યાદ્યુપદેશનં; યથા પાણ્ડુપત્રેણ કિશલયાનાં
દેશિતમ્ । તથાહિ--

“ જહ તુભે તહ અમ્હે, તુભે વિ ય હોહિદા જહા અમ્હે ।

અપ્પાહેઙ્ પહંતં, પંડુયપત્તં કિરાલયાણં ॥૧૧॥ ” ઇતિ ।

છાયા--યથા યૂયં તથા વયં, યૂયમપિ ભવિષ્યથ યથા વયમ્ ।

અધ્યાપયતિ (શિક્ષયતિ) પતત્, પાણ્ડુપત્રં કિશલયાનામ્ ॥૧૧॥ ઇતિ ।

હત્યાદિ । હસ શ્લોક દ્વારા પુષ્ટ કી ગઈ હૈ અથવા-જો આખ્યાનક હોતા
હૈ વહ જ્ઞાત હૈ યહ ચરિત ઓર કલ્પિતકે ભેદસે દો પ્રકારકા હોતાહૈજૈસે-
'નિદાનં દુઃસ્વાય બ્રહ્મદત્તસ્યેવ' બ્રહ્મદત્તકી તરહ નિદાનબન્ધ (નિયાણા)
દુઃસ્વકે લિધે હોતા હૈ યહાં બ્રહ્મદત્ત ચરિતરૂપ આખ્યાનક હૈ ક્યોંકિ
યહ પ્રસિદ્ધ હૈ ઓર ઉસેહી યહાં દષ્ટાન્ત રૂપમ્ રહ્યા ગયા હૈ કલ્પિત
આખ્યાનક હસ પ્રકારસે હૈ-જૈસે પ્રમાદપતિત વ્યક્તિયોંકો પ્રતિવોધન
કરવેકે લિધે ઇસા કહવા કિ યૌવનાદિક અનિત્ય હૈ જૈસા કિ પીલે
પત્તોંને-જીર્ણશીર્ણ પત્તોંને-કિશલયોં સે કોંપલોંસે કહા “ જહ તુભે તહ
અમ્હે ” હત્યાદિ । જૈસે તુમ હો વૈસે હમમ્હી થે અવ તુમમ્હી આગે ચલકર
હમ્ જૈસે હો જાઓગે યહાં પાણ્ડુપત્તોં (પીલે પત્તોં)ને કિશલયોં (કોંપલોં)

અથવા—જે આખ્યાનક (ઉદાહરણ) હોય છે તેને જ્ઞાત કહે છે. તેના
ચરિત અને કલ્પિત એવા બે ભેદ પડે છે જેમ કે—“ નિદાનં દુઃસ્વાય બ્રહ્મ-
દત્તસ્યેવ ” “ બ્રહ્મદત્તની જેમ નિદાનબન્ધ દુઃખરૂપ જ હોય છે. ” અહીં
બ્રહ્મદત્ત ચરિતરૂપ આખ્યાનક (દષ્ટાન્ત) છે, કારણ કે તેની કથા જાણીતી છે,
છે, તેથી તેને અહીં દષ્ટાન્ત રૂપે મૂકવામાં આવેલ છે. કલ્પિત આખ્યાનકનું
સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે—

કોઈ પ્રમાદી માણસને પ્રતિબોધિત કરવા માટે આ પ્રમાણે કહેવામાં
આવે છે કે—“ યૌવનાદિક અનિત્ય છે ” આ અનિત્યતા પ્રકટ કરવા માટે
આ પ્રકારનું કલ્પિત દષ્ટાન્ત આપવામાં આવે છે—

પીળાં પદી ગયેલાં પહોંચિ ભુલુંશીલું પહોંચિ-કોંપણેને (નવાં કૂટી
નીકળેલાં પહોંચિને) આ પ્રમાણે કહ્યું—“ જહ તુભે તહ અમ્હે ” ઇત્યાદિ—

“ જેવાં તમે છો એવાં અમે પણ હતાં ભવિષ્યમાં તમે પણ અમારાં
જેવાં જ બની જશો. ” અહીં પીળાં પહોંચિ હરિત કોંપણેને તેમની અનિ-

यद्वा ज्ञातमुपपत्तिमात्रं ज्ञातहेतुत्वात् यथा—“ करमाद् धान्यानि क्रीयन्ते ? यस्मान्मुधान लभ्यन्ते ” । यद्वा—“ किमर्थः धर्मः क्रियते, मुधा कल्याणं न जायते ” इति । अथवा—उपमानमात्रं ज्ञातम्, यथा—सुकुमारः करः कमलवत्, इति । एव-
को जो उपदेश दिया है वह कविने अपनी तरफसे कल्पित किया है अतः इस प्रकारके आख्यानक कल्पित दृष्टान्त हैं । और ये प्रमाद-
पतित व्यक्तियोंके धनयौवनादिक अनित्य हैं इस बातको समझानेके लिये कहे जाते हैं ।

अथवा—ज्ञातको हेतु होनेसे जो उपपत्ति मात्र होता है वह ज्ञात है जैसे—“ कस्मात् धान्यानि क्रीयन्ते ? यस्मात् मुधा न लभ्यन्ते ” यद्वा—“ किमर्थः धर्मः क्रियते ? मुधा कल्याणं न जायते ” तुम्ह धान्यको क्यों खरीद रहे हो ? इस प्रकारके प्रश्नके उत्तरमें कहा है कि विना खरीदे चावल नहीं मिलते हैं अथवा—धर्म क्यों किया जाता है ? विना धर्मको किये कल्याण नहीं होता है इस प्रकारका यह सब कथन उपपत्ति मात्र है, क्योंकि यह ज्ञातकाही हेतु है । अथवा—जो उपमान मात्र होता है वह ज्ञात है जैसे—“ सुकुमारः करः कमलवत् ” कमलकी तरह कर—हाथ सुकुमार है यहां कमल उपमान होनेसे ज्ञात स्वरूप है इस प्रकारसे साध्यके

त्यता विधे उपदेश आपवानी वात कवि कल्पित होवाथा तेने कल्पित दृष्टान्त रूप गणी शक्य. प्रमादपतित व्यक्तिओने धन, यौवन आदिनी अनित्यता भताववा भाटे आ प्रकारनुं दृष्टान्त आपवामां आवे उ

अथवा—ज्ञातना हेतुरूप होवाथा ने उपपत्ति मात्र रूप होय छे, ते ज्ञात छे. नेम के “ कस्मात् धान्यानि क्रीयन्ते ? यस्मात् मुधा न लभ्यन्ते ”

अथवा—“ किमर्थः धर्मः क्रियते ? मुधा कल्याणं न जायते ” तमे धान्यने शा भाटे भरीदि रह्या छे ? ” आ प्रश्नना उत्तर रूपे कहेवामां आवे छे के ते अरिध्या विना योग्य मणता नथी अथवा—“ धर्म ” शा भाटे करवामां आवे छे ? ”

उत्तर—“ धर्म ” कर्था विना अवतुं कल्याणु यतुं नथी. ” आ प्रकारनुं समस्त कथन उपपत्ति मात्र न छे कारणु के ते ज्ञातनो न हेतु छे. अथवा—ने उपमान मात्र होय छे ते ज्ञात छे—नेम के—“ सुकुमारः करः कमलवत् ” “ हाथ कमलना नेवां सुकुमार छे ” अही कमल उपमान होवाथा ज्ञात-स्वरूप छे. आ प्रकारे साध्यना ओधक स्वरूपवणुं ज्ञात उपाधि लेदनी अपे.

મનેકપ્રકારેણ સાધ્યવોધનસ્વરૂપં જ્ઞાતમુપાધિભેદાત્ ચતુર્વિધં ભવતિ “આહરણ” મિત્યાદિ । તત્ર આ=સમન્તાત્ હ્રીયતે પ્રતીતિપથમાનીયતે અજ્ઞાતઃ સાધ્ય-રૂપોડર્થાંનેનેત્યાહરણમ્ અર્થાદ્ યત્ર સ્થલે સમુદિત એવ દાર્ટાંન્ટિકોડર્થઃ પ્રાપ્યતે તદાહરણમ્ યથા-પાપે કાલસૌકરિકસ્યેવેતિ ૧ । દ્વિતીયભેદમાહ-‘ આહરણતદેસે ’ ઇતિ । ‘ આહરણતદેસ ’ ઇતિ । તસ્યાહરણાર્થસ્ય દેશસ્તદેશઃ સ ચ અસૌ આહરણં ચેત્યુપચારાદ્ આહરણતદોપ ઇતિ, અત્ર પ્રાકૃતત્વાદાહરણપદસ્ય પૂર્વનિપાતઃ । અત્રાયમભિસન્ધિઃ યત્ર દૃષ્ટાર્થસ્યૈકેનૈશવયવેન દાર્ટાંન્ટિકાર્થ-સ્યોપનયનં ક્રિયતે તદેશોદાહરણમ્ યથા ચન્દ્ર ઇવ મુખમિતિ, અત્ર હિ દાર્ટાંન્ટે ચન્દ્રે વહવો ધર્માઃ સન્તિ તેભ્ય એકસ્યૈવ સૌમ્યત્વસ્ય મુખે ઉપનયનં ન ત્વાયામ-વિષ્કમ્ભાદીનામિત્યેકદેશેનૈનોપનય ઇતિ ૨ । તૃતીયભેદમાહ-“ આહરણત-

વોધક સ્વરૂપવાલા જ્ઞાત ઉપાધિ ભેદસે ચાર પ્રકારકા પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ-જિસકે દ્વારા અજ્ઞાત સાધ્યરૂપ અર્થ અચ્છી તરહસે પ્રતીતિ માર્ગમેં લાયા જાતા હૈ વહ આહરણ જ્ઞાત હૈ અર્થાત્ જિસ સ્થલમેં સમુદિતહી દાર્ટાંન્ટિકકા અર્થ પ્રાપ્ત ક્રિયા જાતા હૈ વહ આહરણ જ્ઞાતહૈ જૈસે પાપમેં કાલસૌકરિકકા સમુદિત સંપૂર્ણ અર્થ પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । જિસમેં દૃષ્ટાન્તાર્થકે એકહી અવયવસે દાર્ટાંન્ટિક અર્થકા ઉપનયન ક્રિયા જાતા હૈ વહ આહરણતદેશ જ્ઞાત હૈ જૈસે-“ ચન્દ્ર ઇવ મુખમ્ ” મુખ ચંદ્રમાકે સમાન હૈ યહાં દૃષ્ટાન્ત ચંદ્રમેં યદ્યપિ અનેક ધર્મ હૈં પરન્તુ ઉનમેંસે એક સૌમ્ય ધર્મકાહી મુખમેં ઉપનયન આરોપ ક્રિયા ગયા હૈ આયામ વિ-ષ્કમ્ભ (લંબાઈ ચૌડાઈ) આદિ ધર્મોકા નહીં, હસ તરહ દાર્ટાંન્ટકે એક દેશસે જો ઉપનયન હોતા હૈ વહ તદેશાહરણ-આહરણતદેશ જ્ઞાત હૈ ।

ક્ષાએ ચાર પ્રકારતું કહ્યું છે—જેના દ્વારા અજ્ઞાત સાધ્ય રૂપ અર્થની સારી રીતે પ્રતીતિ કરાવાય છે, તેને આહરણ જ્ઞાત કહે છે. એટલે જે સ્થળે સમુદિત જે દાર્ટાંન્ટિકને અર્થ પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે, એવા દૃષ્ટાન્તને આહરણ જ્ઞાત કહે છે. જેમકે પાપમાં કાલસૌકરિકને સમુદિત સંપૂર્ણ અર્થ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. જેમાં દૃષ્ટાર્થના એક જે અવયવથી દાર્ટાંન્ટિક અર્થતું ઉપનયન (આરોપણ) કરવામાં આવે છે તેનું નામ “ આહરણતદેશ જ્ઞાત ” છે જેમ કે-“ ચન્દ્ર ઇવ મુખમ્ ” “ મુખ ચન્દ્રના સમાન છે. ” અહીં ચન્દ્રમાં અનેક ગુણો હોવા છતાં પણ તેમાંથી એક માત્ર સૌમ્ય ગુણનું જે મુખમાં ઉપનયન (આરોપણ) કરવામાં આવ્યું છે-ચન્દ્રની લંબાઈ, પહોળાઈ, વિસ્તાર આદિનું મુખમાં આરોપણ કરવામાં આવ્યું નથી. આ રીતે દાર્ટાંન્ટના એક દેશ (અંશ)થી જે ઉપનયન થાય છે તેને તદેશાહરણ (આહરણતદેશ) કહે છે.

દોષ ” ઇતિ । તરયાહરણસ્ય સાક્ષાત્સમ્યન્થીદોષસ્તદોષઃ સ ચાસૌ આહરણં
ચેતિ આહરણતદોષઃ, ઇદાપિ પ્રાકૃતત્વાદેવાહરણસ્ય પૂર્વનિપાતઃ । યદ્વા-તસ્ય-
આહરણસ્ય દોષો યસ્મિન્ તત્થા આહરણતદોષ ઇતિ । અયમાશયઃ-યત્ સાધ્ય-
વિકલ્લવાદિ દોષ દુષ્ટં તત્-તદોષાહરણમ્ યથા નિત્યઃ શબ્દઃ અમૂર્તત્વાત્ ઘટવ-
દિત્યત્ર દૃષ્ટાન્તે નિત્યત્વમમૂર્તત્વં ચ નાસ્તીતિ સાધ્યસાધન વૈકલ્યં નામ દૃષ્ટાન્ત-
દોષઃ । અથવા સાધ્યસિદ્ધિ સંપાદયન્ દોષાન્તરમપ્યુપનયતિ તદપિ તદોષાહરણમેવ યથા-

“ વરં કૂપશતાદ્વાપી, વરં વાપીશતાત્ ક્રતુઃ ।

વરં ક્રતુશતાત્પુત્રઃ, સત્યં પુત્રશતાદ્વરમ્ ” ॥૧॥ ઇતિ લોકોક્તિઃ,

હસકા તાત્પર્ય એસા હૈ-જો જ્ઞાત ઉદાહરણ સાધ્ય વિકલ આદિ દોષસે
દુષ્ટ હોતા હૈ વહ ઉદાહરણતદોષ-તદોષાહરણ જ્ઞાત હૈ જૈસે-“ નિત્યઃ
શબ્દઃ અમૂર્તત્વાત્ ઘટવત્ ” યહાં “ ઘટ ” યહ જ્ઞાત હૈ હસમેં નિત્ય-
ત્વરૂપ સાધ્ય ઓર અમૂર્તત્વરૂપ સાધન યે દોનોં નહીં પાયે જાતે હૈં
કયોંકિ ઘટ કાર્ય હોનેસે અનિત્ય હૈ ઓર પૌદ્ગલિક હોનેસે વહ સૂર્ત
હૈ । હસ તરહ યહ ઘટ દૃષ્ટાન્ત-જ્ઞાત-સાધ્ય ઓર સાધન દોનોંસે વિકલ
(હીન) હૈ સાધ્ય સાધનસે વિકલ (હીન) હોના યહ દૃષ્ટાન્તકા દોષ હૈ ।
હસ દૃષ્ટાન્ત દોષવાલા ઘટ હૈ, અતઃ યહ ઘટ જ્ઞાત તદોષાહરણ મેદવાલા
હૈ । અથવા-જો જ્ઞાત સાધ્ય સિદ્ધિકો કરતા હુઆ મી દોષાન્તરમેં
સાધ્યસિદ્ધિ કર દેનો હૈ વહ મી તદોષાહરણ જ્ઞાત હૈ જૈસે-“ વરં કૂપ-
શતાદ્વાપી ” ઇત્યાદિ । યહ લોકોક્તિ હૈ હસ કથનસે ઓનાઓંકે મનમેં

હવે આહરણતદોષ (તદોષાહરણ-તદોષ ઉદાહરણ)નો ભાવાર્થ પ્રકટ
કરવામાં આવે છે-જે જ્ઞાત-ઉદાહરણ સાધ્યવિકલ આદિ દોષોથી દુષ્ટ (દુષિત)
હોય છે તેનું નામ ‘ તદોષાહરણ જ્ઞાત ’ છે. જેમકે “ નિત્યઃ શબ્દઃ અમૂર્ત
ત્વાત્ ઘટવત્ ” અહીં “ ઘટ ” એ જ્ઞાત (ઉદાહરણ) છે તેમાં નિત્યત્વ રૂપ
સાધ્ય અને અમૂર્તત્વ રૂપ સાધન એ બન્નેનો સહભાવ દેખાતો નથી, કારણ
કે ઘટ કાર્યરૂપ હોવાથી અનિત્ય નથી અને પૌદ્ગલિક હોવાથી મૂર્ત પણ
નથી. આ રીતે ઘટનું દૃષ્ટાન્ત સાધ્ય અને સાધન બન્નેથી રહિત છે. સાધ્ય
અને સાધનથી વિકલ (હીન) હોવું એજ દૃષ્ટાન્તનો દોષ ગણાય છે. આ
પ્રકારના દૃષ્ટાન્ત દોષવાળો ઘટ (ઘટો) છે. તેથી આ ઘટનું દૃષ્ટાન્ત તદોષા-
હરણ (આહરણતદોષ) ભેદવાળું ગણાય છે

અથવા જે જ્ઞાત (દૃષ્ટાન્ત) સાધ્યસિદ્ધિ કરતું ઘટું પણ દોષાન્તરમાં
સાધ્યસિદ્ધિ કરી નાખે છે તેને પણ તદોષાહરણ જ્ઞાત કહે છે. જેમકે-

अनेन कथनेन श्रोतृणां मनसि संसारकारणेष्वात्मपरिग्रहेष्वपि वापीपुत्रादिषु धर्मजनकत्वं स्थापितमिति भवत्येव तस्यापि-आहरणतदोपतेति । ३ । चतुर्थभेदमाह-‘उवन्नासोवणए’ इति । वादिना स्वाभिमतसाध्यस्य साधनाय हेतूपन्यासे कृते तद्विघटनाय प्रतिवादिना यद् विरुद्धार्थस्योपनयनं क्रियते स उपन्यासोपनयः, यथा आत्मा अकर्ता अमूर्त्तत्वाद्गगनवदिति वादिनोक्ते सति तद्विघटनाय प्रतिवादिनोच्यते यदि गगनदृष्टान्तेन त्वया आत्मनि अकर्तृत्वं साध्यते संसारके कारण आरम्भ एवं परिग्रह रूप वापी पुत्रादिकोर्मे औ धर्मजनकता स्थापित होती है ।

अतः यह आहरणतदोषवाला है तात्पर्य इसका ऐसा है कि यहां क्रतु (यज्ञ) और सत्यके दृष्टान्तसे वापी एवं पुत्रोंमें धर्मजनकता पुष्टकी गई है, अतः ये दोनों दृष्टान्त दृष्टान्तके दोषवाले हैं । “उवन्नासोवणए” यह चतुर्थ भेद है इसका तात्पर्य ऐसा है कि किसी वादीने अपने साध्यको सिद्ध करनेके लिये हेतुका प्रयोग किया और उसे विघटन(निवारण) करनेके लिये प्रतिवादीने विरुद्धार्थका उपनयन किया जैसे-“आत्मा अकर्ता अमूर्त्तत्वात् गगनवत्” ऐसा किसी वादीने-सांख्यने कहा इसके विरुद्ध प्रतिवादीने उसके मन्तव्यको हटानेके लिये ऐसा कहा कि यदि तुम गगनके दृष्टान्तको लेकर आत्मामें अकर्तृत्व सिद्ध करते हो

“वरं कूपशताद्वापी” इत्यादि-आ लोकोक्ति छे. आ कथन द्वारा श्रोता आना मनमां संसारना कारणभूत आरंभ अने परिग्रह रूप वापी पुत्रादिकोर्मां पणु धर्मजनकता स्थापित थाय छे. तेथी आ आहरणतदोषवाणुं दृष्टान्त छे आ कथनतुं तात्पर्य अे छे के अडीं क्तु (यज्ञ) अने सत्यना दृष्टान्त द्वारा वापी (वाप) अने पुत्रोर्मां धर्मजनकता पुष्ट करवामां आवी छे तेथी आ अने दृष्टान्तो दृष्टान्तना दोषवाणां छे.

“उवन्नासोवणए” ‘उपन्यासोपनय’ आ योथा प्रकारने भावार्थ हवे स्पष्ट करवामां आवे छे-कैछ वादीअे पोताना साध्यने सिद्ध करवाने माटे हेतुने प्रयोग कयो तेने तोडी पाडवाने माटे प्रतिवादीअे विरुद्धार्थतुं उपनयन (आरोपण) कयुं, जेभके “आत्मा अकर्ता अमूर्त्तत्वात् गगनवत्” “अमूर्त्त होवाने कारणे आत्मा आकाशनी जेभ अकर्ता छे”, आ प्रकारतुं कथन कैछ सांख्यमतवाणाअे कयुं. तेना आ मततुं षंडन करवाने माटे तेना करतां विरुद्ध अभिप्राय धरावनादे आ प्रमाणे हलील करी. “जे तमे गगनना दृष्टान्तने आधादे आत्मामां अकर्तृत्व सिद्ध करता हो. तो अेज

तदा तेनैव दृष्टान्तेनाभोक्तकृत्वमपि सिद्धयत्, तच्चानिष्टमिति । यथा वा मांस भक्षणम् अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवदिति प्रयोगेण वादिना मांसभक्षणे दोषाभावः प्रतिपाद्यते. तत्र प्रतिवादिना कथ्यते प्राण्यङ्गत्वाविशेषात् स्वपुत्रमांसभक्षणमपि विधेयं स्यादिति आहरणोपन्यासः । यद्वा-यत्किञ्चित्साधर्म्यसादाय प्रवर्तमानं प्रति यत्किञ्चित्साधर्म्येणैव प्रत्यवस्थानमाहरणोपन्यास इति ।

तो इसी दृष्टान्तसे अभोक्तकृत्वभी सिद्ध हो जाना चाहिये क्योंकि गगनमें अकृतृत्व और अभोक्तकृत्व ये दोनों बातें हैं परन्तु सांख्य आत्मामें अभोक्तकृत्व मानता नहीं है यह उसे अनिष्टहै “अकर्ता निर्गुणो भोक्ता आत्मा कपिलदर्शने ” ऐसा उसका कथन है अथवा-ऐसा कहना कि मांस भक्षणं अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवत् ” ओदनकी तरह मांसका भक्षण अदुष्ट है क्योंकि उसकी तरह वह भी प्राणीका अङ्ग है इस प्रकारके कथनमें ओदन दृष्टान्त लेकर प्राण्यङ्ग हेतुद्वारा वादीने मांस भक्षणमें दोषाभाव प्रतिपादित किया तब प्रतिवादीने ऐसा कहा-प्राणीके अङ्गकी अविशेषता होनेसे स्वपुत्रका मांस भक्षणभी विधेय हो जाता है इस तरहसे यह कथन चिरुद्धार्थका उपनयन-उपन्यासोपनय रूप है अथवा चाहे जो कुछ साधर्म्य लेकर प्रवर्तमानके प्रति चाहे किसी साधर्म्यसेही प्रत्यवस्थान करना यह उपन्यासोपनय आहरणोपन्यास है

दृष्टान्त द्वारा आत्मामां अलोक्तृत्व पणु सिद्ध थर्नु न्ने, कारण के आकाशमां अकृतृत्व अने अलोक्तृत्व, आ अन्नेना सहसाव छे ” परन्तु सांख्य मतने माननारा लोको आत्मामां अलोक्तृत्व मानता नथी-अे वात तेमने भाटे अस्वीकार्य छे. “ अकर्ता निर्गुणो भोक्ता, आत्मा कपिलदर्शने ” तेअे तो आत्मामे अकर्ता. निर्गुण अने लोक्ता माने छे. अथवा अेवुं कडेवुं के “ मांस भक्षण अदुष्टं प्राण्यङ्गत्वात् ओदनवत् ” ओदननी जेम मांसनुं लक्षण पणु अदुष्ट छे, कारण के तेनी जेम ते पणु प्राणीनु अंग छे ”

आ प्रकारना कथन वडे ओदन दृष्टान्तने आधार लधने प्राण्यंग हेतु द्वारा वादीअे मांस लक्षणमां दोषना अलावतुं प्रतिपादन कथुं त्त्यारे प्रतिवादीअे अेवी हलील करी के “ प्राणीना अंगनी अविशेषता लोवाधी स्वपुत्रना मांसनुं लक्षण पणु विधेय थर्नु नय छे अेटले के स्वपुत्रनुं मांस आवाने पणु निषेध संलवी शके नही. ” आ रीते आ कथन चिरुद्धार्थना उपनयन (आरोपणु) रूप अेटले के उपन्यासोपनय रूप छे. अथवा-कैध पणु साधर्म्यनी अपेक्षाअे प्रवर्तमानमां कैध पणु साधर्म्य वडे न प्रत्यवस्थापन करवुं तेनु नाम उपन्यासोपनय आहरणोपन्यास छे.

અર્થેપાં પ્રત્યેકં ચાતુર્વિધ્યમાહ-‘ આહરણે ’ ઇત્યાદિ આહરણં ચતુર્વિધં મજ્જંતં તથા-‘ અવાપ્ ’ ઇત્યાદિ । ‘ અવાપ્ ’ અપાયઃ=અનર્થઃ, સ યત્ર દ્રવ્યાદિષુ કથ્યતે તદાહરણમપાયઃ યથા ઇતેષુ દ્રવ્યવિશેષેષ્વસ્ત્યપાયઃ વિવક્ષિતદ્રવ્યાદિવદેવેતિ । અથવા-દ્રવ્યાદીનાં હેયતા કથ્યતે તદાહરણમપાયઃ । અપાયશ્ચતુર્વિધો દ્રવ્યક્ષેત્ર-કાલભાવભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યાદપાયો દ્રવ્યાપાયઃ, દ્રવ્યે અપાયઃ દ્રવ્યમેવ વા અપાયો દ્રવ્યાપાયઃ ઇતદ્દેયતા સાધકમેતત્સાધકં વા આહરણમુચ્યતે તત્ર દ્રવ્યાપાયસ્યાયં પ્રયોગઃ દ્રવ્યાપાયઃ પરિહાર્યઃ દ્રવ્યે વા અપાયો નિરાકરણીયઃ । દેશાન્તરગમનેનો-પાર્જિતદ્રવિણયોઃ ભ્રાતૃવણિજોરિવ (૧)

અથ સૂત્રકારે હન સ્વચક્રે પ્રત્યેકક્રે ચાર ચાર ભેદોંકો પ્રકટ કરતે હુપ કહતે હૈં જો આહરણ જ્ઞાત હૈં વહ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈં જૈસે- “ અવાપ્ ” ઇત્યાદિ અપાય નામ અનર્થકા હૈં યહ અપાય જહાં દ્રવ્યાદિકોમૈં કહા જાના હૈં વહ આહરણકા ભેદ અપાય હૈં જૈસે-વિવક્ષિત દ્રવ્યાદિકી તરહહી ઇન દ્રવ્ય વિશેષોંમૈં અપાય હૈં । અથવા-દ્રવ્યાદિકોંકી હેયતા જિસકે દ્વાગ કહી જાતી હૈં વહ આહરણકા ભેદ અપાય હૈં યહ અપાયશ્ચી દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવકે ભેદસે ચાર પ્રકારકા હૈં દ્રવ્યસે યા દ્રવ્યરૂપ જો અપાય હૈં વહ દ્રવ્યાપાય હૈં દ્રવ્ય કી હેયતાકા સાધક અથવા દ્રવ્યકા સાધક જો ઉદાહરણ હોતા હૈં વ્રહ અપાય આહરણ હૈં દેશાન્તર ગમનસે ઉપાર્જિત દ્રવ્યવાલે દો વૈદ્ય આહર્યોંકી તરહ દ્રવ્યાપાય પરિહાર્ય હૈં યા દ્રવ્યમૈં અપાય નિરાકરણીય

હવે સૂત્રકાર તે પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદોનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—આહરણજ્ઞાતના “ અવાપ્ ” અપાય ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે અપાય એટલે અનર્થ. તે અપાયનું જ્યાં દ્રવ્યાદિકોમાં કથન કરવામાં આવે છે ત્યાં તે આહરણના અપાયભેદ રૂપ હોય છે, જેમકે-વિવક્ષિત દ્રવ્યાદિકોની જેમ જ આ દ્રવ્યવિશેષોમાં અપાય છે અથવા-દ્રવ્યાદિકોની હેયતાનું જેના દ્વારા પ્રતિપાદન કરાય છે તે આહરણના ભેદ અપાયરૂપ છે.

આ અપાય પણ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવના ભેદથી ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે દ્રવ્ય વડે, દ્રવ્યમાં અથવા દ્રવ્યરૂપ જે અપાય છે તેને દ્રવ્યાપાય કહે છે દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકોની હેયતાનું સાધક અથવા દ્રવ્યની હેયતાનું સાધક જે ઉદાહરણ હોય છે તેને અપાય આહરણ કહે છે. પરદેશ જઈને જેમણે ઘણું જ ધન ઉપાર્જન કર્યું હતું એવાં જે વૈશ્યભાઈઓના દૃષ્ટાન્તની જેમ દ્રવ્યાપાય પરિહાર્ય છે અથવા દ્રવ્યમાં અપાય નિરાકરણીય છે.

तथाहि—कस्मिंश्चिन्नगरे द्वौ वणिजौ स्तः तौ देशान्तराद् धनमुपाज्यं गृहस-
मीपमागतौ, तत्रकेन विचारितं भ्रातरं मारयित्वा सर्वमेव धनं नेयं, तत्र द्वयोर्वि-
वादो जातः तदनन्तरं धनं जले प्रक्षिप्तम् तत्र मत्स्येन निगलितं तद्धनम्, मत्स्यश्च
धीवरेण व्यापादितः । तं चान्यः क्रीत्वा स्वगृहे नीतवान् । तद्गृहे मातृपुत्र्यौ
मिलित्वा मत्स्यं विदारयितुमारब्धवत्यौ, तदुदरे तादृशं धनं दृष्ट्वा पुत्र्या माता
व्यापादिताः एतत्सर्वं दृष्ट्वा तौ भ्रातरौ वणिजौ समुत्पन्नवैराग्यौ प्रव्रजितौ ।
तत्परिहारश्च प्रव्रज्या ग्रहणादिति आहरणता चैकदेशेन, उपनयस्य त्यागात् १।

है इस दृष्टान्तका स्पष्टीकरण इस प्रकारसे है—किसी नगरमें दो वैश्य
रहते थे जब वे देशान्तरसे धन उपाजित कर अपने घरके पास आ
पहुँचे तब एकने विचार किया कि भाईको मारकर सब धन ले लेना
चाहिये इतनेमें दोनोंमें विवाद हो गया तब उस धनको जलमें फेंक
दिया वहाँ मत्स्यने उसे निगल लिया, धीवरने उस मत्स्यको पकड़ने से
वह मत्स्य मर गया उस मत्स्य को किसी दूसरेने उससे खरीद लिया जब
वह उसे लेकर घर आया तो माँ और बेटीने मिलकर उसे चीरा चीर-
तेही उसके पेटमें धन देखकर पुत्रीने माँको मार दिया यह सब हाल
देखकर वे दोनों भाई संसार शरीर और भोगोंसे विरक्त होकर प्रव्र-
जित हो गये १ यह द्रव्यापाय परिहार्य है

क्षेत्रसे क्षेत्र में जो अपाय है वह या क्षेत्ररूप जो

हुवे ते दृष्टान्तनुं स्पष्टीकरण करवाभां आवे छे—कैध नगरभां जे
वैश्य रहता हुता. तेज्जे धन कभावा परदेश गया. धनेपोर्जन करीने तेज्जे
पोताने गाभ पाछा करवा भाटे रवाना थया. घरनी पासे आवतां जे अकना
भनभां जेजे. विचार आव्ये के लाधने भारी नाभीने गधुं. धन हुं जे कभजे
करी लठं. आ धनने कारणे जन्ने लाधजे वच्ये लारे अगडा थया. तेमणे
शुस्से थधने ते धनने कैध जणाशयभां ईंकी दीधुं. जणाशयभां रह्ये. कैध
मत्स्य ते धनने गणी गयो. के छे अक भाछीभारे ते भाछज्ञाने पकडीने भारी
नाभ्युं अने तेने कैध जीज भाणुसने वेच्युं. ते भाणुसे ते मत्स्य पोताने
घेर लठं जधने रांधवा भाटे पत्नीने सोप्युं. तेनी पत्नी अने पुत्रीजे ते
मत्स्यना न्यारे टुकडा कर्या त्यारे तेना पेटभांथी पेटुं धन तेभने हाथ लाग्युं
ते धनने भ्रातर पुत्रीजे भाताने भारी नाभी आ समस्त हुकीकत न्यारे
ते वैश्य लाधजेजे ज्ञाणी त्यारे तेभने संसार पर वैराग्यलाव आवी जवाथी
लोगोथी विरक्त थधने तेमणे प्रव्रज्या अंगीकार करी लीधी. आ द्रव्या-
पाय परिहार्य छे.

ક્ષેત્રાપાયમાહ-ક્ષેત્રાત્ ક્ષેત્રે ક્ષેત્રં વા અપાયઃ ક્ષેત્રાપાયઃ યથા સંભવત્યપાયઃ સશત્રુ
ક્ષેત્રે સસર્પગૃહવત્ “ સસર્પે ચ ગૃહે વાસો મૃત્યુરેવ ન સંશયઃ ” ઇતિ । યથા ચ
જરાસન્ધાભિથ પ્રતિવાસુદેવાત્ સંભાવિતાપાયં સૌર્યપુરં પરિત્યક્તવન્તો દશાહાં
ઈતિ । કાલાપાયમાહ-કાલાપાયો યથા-સાપાયકાલવર્જને પ્રયત્નં કુર્યાત્ દ્વૈપા-
યનવત્ યથા-દ્વાદશવર્ષેણ દ્વારકાઃ વિનંક્ષ્યતીતિ નેમિનાથવચનશ્રવણેન દ્વૈપાયનો
દ્વાદશવર્ષલક્ષણસાપાયકાલપરિહારેચ્છયા. ઉત્તરાપથમવૃત્તોઽધૂત્ । ભાવાપાય-
માહ-ભાવાપાયો યથા-કોપભાવં પરિહરેત્ ચણ્ડકૌશિકવદિતિ યથા-સમુત્પન્ન-
જાતિસ્મરશ્ચણ્ડકૌશિકઃ કોપરૂપં ભાવાપાયં પરિહતવાનિતિ । ૧ ।

અપાય હૈ વહ ક્ષેત્રાપાય હૈ જિસ પ્રકાર સર્પ સહિત ગૃહમેં નિવાસ કર-
નેસે મૃત્યુ સંભાવિત હૈ उसी प्रकार शत्रु सहित क्षेत्रमे रहनेसे भी अपाय
संभावित है-“ ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः ” जिस क्षेत्रमें
अपाय संभावित होना है उसे छोड़ देना चाहिये जैसे-जरासंध प्रति
वासुदेवसे संभावित अपायवाले सौर्यपुर नगरको दशाहोने छोड़ दिया था
यह क्षेत्रापाय है अपाय सहित कालके त्यागमें द्वैपायनकी तरह प्रयत्न
करना चाहिये जैसे कि १२ वर्षके बाद द्वारका नगरी नष्ट हो जावेगी
ऐसी भविष्यवाती जब द्वैपायनने नेमिनाथके मुंहसे सुनी तो वे उस
सापायकालको छोड़नेकी इच्छासे उत्तरापथमें चले गये थे यह काला-
पायहै कोपभाव (क्रोध)का चण्डकौशिककी तरह छोड़ देना भावापाय है
चण्डकौशिकको जब जातिस्मरण ज्ञान हो गया तब उसने कोपरूप भावा-

ક્ષેત્ર વડે, ક્ષેત્રમાં કે ક્ષેત્રરૂપ જે અપાય છે તેને ક્ષેત્રાપાય કહે છે.
જેવી રીતે સર્પવાળા ઘરમાં નિવાસ કરવાથી મૃત્યુનો સંભવ રહે છે. એજ
પ્રમાણે શત્રુસહિતના ક્ષેત્રમાં રહેવાથી અપાયનો સંભવ રહે છે. કહ્યું પણ
છે કે-“ સસર્પે ચ ગૃહે વાસો મૃત્યુરેવ ન સંશયઃ ” જે ક્ષેત્રમાં અપાય (અનર્થ)
સંભવિત હોય તે ક્ષેત્રનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. જેમકે-પ્રતિવાસુદેવ જરાસંધ
દ્વારા અપાય (અનર્થ) થવાનો સંભવ લાગવાથી દશાહાંએ સૌર્યપુર છોડી
ઠીધું હતું. આ ક્ષેત્રાપાયના દૃષ્ટાન્તરૂપ સમજવું. કાલાપાયના ત્યાગમાં દ્વૈપાય-
નની જેમ પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. નેમિનાથ ભગવાને એવી ભવિષ્યવાણી
કરવારી કે ૧૨ વર્ષ પછી દ્વારકા નગરીનો નાશ થશે, ત્યારે તે અપાયશુક્ર
ક્ષાણથી બચવાને માટે દ્વૈપાયન ઉત્તરપથમાં ચાલ્યા ગયા હતા. આ કાલા-
પાયનું દૃષ્ટાન્ત છે. ચંડકૌશિકની જેમ કોપલાવનો પરિત્યાગ કરી નાખવો

अथ द्वितीय भेदमाह-‘उवाच’ चि. उपायः प्राप्तव्यपदार्थप्रति पुरुषव्यापारादिरूपा साधनसामग्री, स यस्मिन् द्रव्यादौ उपेये विद्यते इत्यभिधानं, यथा घटादि द्रव्यविशेषेषु साध्येषु विद्यते उपायो विवक्षितद्रव्यवदिति, अथवा यत्रोपादेयता कथ्यते द्रव्यादेस्तदाहरणमुपायः । उपायोपि चतुर्धा द्रव्यक्षेत्रकालभावभेदात् । तत्र द्रव्यस्य सुवर्णादिः प्रासुकोदकादेर्वा उपायः—द्रव्यमेव वा उपाय इति द्रव्योपायः यथाऽस्ति सुवर्णादिषूपायः—उपायेनैव वा सुवर्णादौ प्रयत्नो विधेय इति । अथवा प्रासुकोदकादि द्रव्यमेषणोपायेन ग्रहीतव्यमिति १। एवं क्षेत्रपरिकर्मणा उपायः

पायका परिहार कर दिया था, इस प्रकारसे वे आहरणज्ञातके अपाय भेदके चार भेद हैं ?

आहरण ज्ञातका द्वितीय भेद जो उपाय है—वह इस प्रकारसे है—प्राप्तव्यपदार्थके प्रति जो पुरुष व्यापारादिरूप साधन सामग्री होती है वही उपाय होती है अतः इस द्रव्यादिरूप उपेयमें यह उपाय है ऐसा आहरण उपाय है जैसे घटादि द्रव्य विशेष साध्योंमें विवक्षित मृत्तिकादि द्रव्य उपायरूप होता है अथवा—द्रव्यादिकोंकी जहां उपादेयता कही जाती है वह आहरण उपाय है यह उपाय भी द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे चार प्रकारका है सुवर्णादि द्रव्यका या प्रासुक उदक आदि द्रव्यका जो उपाय है वह या द्रव्यरूप जो उपाय है वह द्रव्योपाय है जैसे—सुवर्णादिकोंके विषयमें उपाय है उपायसेही सुवर्णादिकोंमें प्रयत्न विधेय है अथवा—प्रासुक उदकादि द्रव्य एषणोपायसे

तेनुं नाम लावापाय छे अंडकौशिकने न्यारे नतिस्मरणे ज्ञान उत्पन्न थयुं त्यारे तेणुं केपइय लावापायने परित्याग करी नाभ्यो हुतो. आ रीते अपाय आहरणज्ञातना आर लेहोतुं स्पष्टीकरणे अही संभास थाय छे.

आहरणज्ञात (आहरण उदाहरण)ने जे भीजे उपाय नामने लेह छे तेनुं हवे स्पष्टीकरण करवामा आवे छे—प्राप्तव्य पदार्थने निमित्ते पुरुष व्यापार आदि रूप सामग्री होय छे, तेनुं नाम जे उपाय छे. तथी आ द्रव्यादि रूप उपेयमां (प्राप्तव्य पदार्थमां) आ उपाय छे अमे कडेवुं तेनुं नाम आहरण उपाय छे. जेभके—घटादि द्रव्यविशेष रूप साध्योमां विवक्षित भाटी आदि द्रव्य उपाय रूप होय छे. अथवा—द्रव्यादिकनी जेमां उपादेयता प्रतिपादित थाय छे ते आहरण उपाय छे, ते उपाय पणुं द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावना लेहथी आर प्रहारने कही छे सुवर्णादि द्रव्यने अथवा प्रासुक उदक (पाणी) आदि द्रव्यने जे उपाय छे अथवा द्रव्यरूप जे उपाय छे तेने द्रव्योपाय कडे छे.

ક્ષેત્રોપાયઃ યથા ત્રિવિધતેઽસ્ય ક્ષેત્રસ્ય ક્ષેત્રીકરણોપાયો લાંગલાદિઃ, યદ્વા લાંગ-
લાદિનૈવ પ્રવર્તિતવ્યં તથાત્રિધાન્યક્ષેત્રવદિતિ । અથવા—મિથ્યાત્વસમાક્રાન્તક્ષેત્રસ્ય
સદુપદેશાદ્યુપાયેન સમ્યક્ત્વીકરણમ્ ૨, કાલજ્ઞાનોપાયઃ કાલોપાયઃ યથા અસ્તિ
કાલસ્ય જ્ઞાને ઉપાયો ધાન્યાદેરિવ, યદ્વા જાનીહિ કાલં છાયાદિનોપાયેન તથા-
વિધગણિતજ્ઞવદિતિ । યદ્વા પ્રતિલેખનાદિકાલં જ્ઞાનં કાલોપાયઃ ૩। એવં ભાવો-
પાયો યથા ભાવજ્ઞાનેઽસ્તિ ઉપાયઃ, ભાવં વા ઉપાયતો જાનીયાત્ યથા બૃહત્કુ-

પ્રહણ કરના યાહિયે એસા યહ કથન આહરણ ઉપાયકા પ્રથમ ભેદ
દ્રવ્યોપાય હૈ । ક્ષેત્ર પરિકર્મસે જો ઉપાય હૈ વહ ક્ષેત્રોપાયહૈ જૈસે ક્ષેત્રકો
ક્ષેત્રીકરણ કરનેમૈં ઉપાયરૂપ લાઙ્ગલ (હલ) આદિ હૈં અથવા—જિસ પ્રકાર-
સે અન્ય ક્ષેત્રાદિમૈં લાઙ્ગલ આદિસે પ્રવૃત્તિ કી જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર સે
હિસ ક્ષેત્રાદિમૈંભી ઉસીસે પ્રવૃત્તિ કરની યાહિયે એસા કથન
ક્ષેત્રોપાય હૈ અથવા—મિથ્યા સમાક્રાન્ત ક્ષેત્રકો સદુપદેશનાદિ ઉપાયસે
સમ્યક્ત્વયુક્ત કરના યહ ક્ષેત્રોપાય હૈ ૨ જિસ પ્રકાર ધાન્યાદિકકે જ્ઞાનકા
ઉપાય હૈં ઉસી પ્રકારસે કાલકે જ્ઞાનકા ભી જો ઉપાય હૈં વહ
કાલોપાય હૈં અથવા — જિસ પ્રકાર તથાવિધ ગણિતજ્ઞ
(ગણિતવિદ્યા કો જાનને વાલા) છાયાદિરૂપ ઉપાય સે
કાલકો જાન લેતા હૈં ઉસી પ્રકારસે જો છાયાદિ દ્વારા કાલકો
જાનતા હૈં વહ કાલોપાય હૈં અથવા—પ્રતિલેખનાદિ કાલકા જો જ્ઞાન હૈં
વહ કાલોપાય હૈં ૩ ભાવજ્ઞાનમૈં જો ઉપાય હૈં વહ ભાવોપાય હૈં અથવા—

જેમકે સુવર્ણાદિકોના વિષયમાં ઉપાય છે, ઉપાયઃ દ્વારા સુવર્ણાદિકોમાં
પ્રયત્ન વિધેય છે. અથવા—પ્રાસુક ઉદકાદિ દ્રવ્ય એષણોપાય દ્વારા ગ્રહણ કરવું
જોઈએ, એવું આ કથન આહરણ ઉપાયના પ્રથમ ભેદ (દ્રવ્યોપાય) રૂપ છે.

ક્ષેત્રપરિકર્મ રૂપ જે ઉપાય છે તેનું નામ ક્ષેત્રોપાય છે. જેમકે—આ ક્ષેત્રને
ખેડવાના ઉપાય રૂપ હળ આદિ છે. અથવા—જે પ્રકારે અન્ય ક્ષેત્રાદિમાં હળ
વડે પ્રવૃત્તિ કરવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે આ ક્ષેત્રાદિમાં પણ તેના દ્વારા જ
પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ, એવું કથન ક્ષેત્રોપાય છે. અથવા મિથ્યાત્વયુક્ત ક્ષેત્રને
સદુપદેશ આદિ ઉપાય દ્વારા સમ્યક્ત્વયુક્ત કરવું તેનું નામ ક્ષેત્રોપાય છે.
જેમ ધાન્યાદિકના જ્ઞાનને ઉપાય છે એજ પ્રમાણે કાળના જ્ઞાનને પણ જે
ઉપાય છે તેનું નામ કાલોપાય છે. અથવા—જે પ્રકારે તથાવિધ ગણિતજ્ઞ
છાયાદિ રૂપ વડે કાળને જાણી લે છે એજ પ્રમાણે જે છાયાદિ દ્વારા કાળને
જાણે છે તે કાલોપાય રૂપ છે અથવા પ્રતિલેખના આદિ કાળનું જે જ્ઞાન છે
તેનું નામ કાલોપાય છે. ભાવ-જ્ઞાનમાં જે ઉપાય છે તેનું નામ ભાવોપાય

मारिकावार्ता कथनेन विज्ञातचोरभावाऽभयकुमास्वदिति । अथवा भावेन कल्याणोपायं परिज्ञाय भगवता नेमिनाथेन गजसुकुमालमुनेः कायोत्सर्गार्थं श्मशानगमननिदेशः कृत इति । २ ।

तृतीयभेदमाह—‘ ठवणाकम्म ’ त्ति स्थापनं स्थापना, तस्याः कर्म=संपादनमिति स्थापना कर्म, अर्थात् यद् ज्ञात्वा परमतं प्रदूष्य स्वमतस्य स्थिरीकरणं तत्स्थापनाकर्म ।

एतच्च सूत्रकृताङ्गसूत्रे द्वितीयश्रुतस्कन्धे पुण्डरीकाख्यं प्रथममध्ययनम् । तत्र—काचित्पुष्करिणी स्वल्पजला पङ्कवहुला तन्मध्ये चैकं महत्पुण्डरीकमासीत् तदुद्धरणार्थं चतसृभ्यो दिग्भ्यः समागताश्चत्वारः पुरुषाः पूर्वादिक्रमेण कर्दममा-

उपायसे जो भावका जानना होता है वह भावोपाय है, जैसे बृह-
त्कुमारिकाकी बात कहनेसे अभयकुमारने चोरका भाव जान लिया
था अथवा—भावसे कल्याणके उपायको जानकर भगवान् नेमिनाथने
गजसुकुमार मुनिको कायोत्सर्ग करनेके लिये श्मशान भूमिमें जानेकी
आज्ञा दीथी २

स्थापनाकर्म—स्थापनाका जो कर्म-संपादन है वह स्थापना कर्म
है अर्थात्-परमतको जानकर जो फिर उसमें दूषण बतला कर अपने
मतकी स्थापना की जाती है वह स्थापना कर्म है, यह स्थापनाकर्म
सूत्रकृताङ्ग सूत्रमें द्वितीय श्रुतस्कन्धमें पुण्डरीक नामक प्रथम अध्ययन
रूप है वहां ऐसा प्रकट किया गया है—एक पुष्करिणीके बीचमें जो कि
स्वल्पजलवाली और पङ्कवहुल (बहुत कीचडवाली)थी एक बड़ा पुण्डरीक

छे. अथवा उपाय द्वारा जे लावने जलुवातुं थाय छे तेनुं नाम लावोपाय छे.
जेभके गृहत्कृमारीने वात करवाथी अलयकुमारे चोरना लाव जलुणी लीधा छता
अथवा लाव वडे उदयाणुने उपाय जलुणी लधने नेमिनाथ लगवाने गजसुकुमार
मुनिने कायोत्सर्ग करवा भाटे श्मशान भूमिमां जवानी अनुमति आपी
छती. आ रीते आहरणुज्ञातना उपाय नामना जीज लेहनुं वरुण अडीं
पूईं थाय छे.

इवे आहरणुना त्रीज लेहनुं-स्थापनाकर्मनुं-स्पष्टीकरण करवामां आवे
छे—स्थापनातुं जे कर्म-संपादन छे तेनुं नाम स्थापना कर्म छे. अेटवे के
परमतने जलुणी लधने अने तेमां दूषणो भतावीने पोताना मतनी स्थापना
करवी तेनुं नाम स्थापनाकर्म छे

ते स्थापनाकर्म सूत्रकृतांग सूत्रना द्वितीय श्रुतस्कन्धमां पुण्डरीक नामना
प्रथम अध्ययन इय छे, त्यां अेतुं प्रकट करवामां आणुं छे के-थोडा पाणी
अने घण्टा जे कावथी लरपूर अेक पुष्करिणी (जगशय विशेष)नी वरुजे

गैम प्रवेष्टुमारब्धाः ते च कृततदुद्धरणा एव पङ्के निमग्नाः । अन्यस्तु तटस्थ एवामेस्पृष्टकर्दमोऽमोघवचनस्तदुद्धृतवानिति स्थापनाकर्मणि ज्ञातम् । अत्रोपनयश्चेत्थम्—कर्दमस्थानापना विषयाः, पुण्डरीकं राजादिर्भव्यपुरुषः, परतीर्थिकाश्चत्वारः पुरुषाः तटस्थ एकः पञ्चमः पुरुषः साधुः अमोघवचनं धर्मदेशना पुष्करिणी संसारः, तदुद्धारो निर्वाणमिति । इत्थं परद्रूपणेन स्वमतं स्थापितमिति ज्ञातं स्थापनाकर्ममिति ।

लगा हुआ था उसे लेनेके लिये चार दिशाओंसे चार पुरुष आये थे जिस २ दिशासे आये थे उसी २ दिशावाले कर्दम मार्ग (कीचड़वाले मार्ग)से होकर उस पुष्करिणीमें प्रवेश किया और प्रवेश करके उन्होंने उस कमलको उखाड़ लिया परन्तु वे कीचड़में फंस गये वहीं पर कोई एक मनुष्य और तट पर खड़ा हुआ था, वह अमोघ वचनवाला था अतः उसने उन्हें उस कर्दमसे बाहर निकाल लिया इस प्रकारका यह स्थापनाविषय है, पुष्करिणीके स्थानापन्न संसार है, कमलके स्थानापन्न-कर्ममें ज्ञात है यहाँ इसका उपनय इस प्रकारसे है—कर्दमके स्थापनापन्न राजादि रूप भव्य पुरुष है चार पुरुषोंके स्थापनापन्न परतीर्थिक हैं एक पुरुष जो तट पर खड़ा हुआ है उसके स्थापनापन्न श्री साधु पुरुष है अमोघवचनके स्थापनापन्न धर्मदेशना है और उद्धारके स्थापनापन्न निर्वाण है इस प्रकार परके दूषणसे स्वमतकी स्थापना इस दृष्टान्त द्वाराकी गई है इसलिये यह स्वमतस्थापना कर्म है ।

એક મોટું પુંડરીક (કમલ વિશેષ) ઉગેલું હતું તેને લેવાને માટે ચાર દિશા-માંથી ચાર માણસ આવ્યા. જે જે દિશાઓમાંથી તેઓ આવ્યા હતા તે તે દિશાઓવાળા કર્દમ (કાદવવાળાં) માર્ગે થઈને તેઓ તે પુષ્કરિણીમાં આગળ વધ્યા. અને ગમે તે પ્રકારે તે પુંડરીક પાસે પહોચીને તેમણે તેને તોડી લીધું. પણ કાદવમાં ફસાઈ જવાને કારણે તેઓ તે પુષ્કરિણીમાંથી બહાર નીકળી શક્યા નહીં. તે પુષ્કરિણીને કિનારે કોઈ એક માણસ બેસે હતો તે અમોઘ-વચનવાળો હતો. તેથી તેણે તેમને કોઈ પણ પ્રકારે તે કર્દમ (કાદવ)માંથી બહાર કાઢ્યાં. આ પ્રકારેનું સ્થાપનાકર્મનું આ જ્ઞાત (ઉદાહરણ) છે. અહીં તેનો ઉપનય (આરોપણ) આ પ્રમાણે કરી શકાય છે—કર્દમના સમાન વિષય છે, પુષ્કરિણી સમાન સંસાર છે, કમલ (પુંડરીક) સમાન રાજાદિ રૂપ ભવ્ય પુરુષ છે, ચાર પુરુષો સમાન પરતીર્થિકા છે, કિનારે બેસેલા પુરુષના સમાન સાધુપુરુષ છે, અમોઘવચન સમાન ધર્મદેશના છે અને ઉદ્ધારના સમાન નિર્વાણ છે. આ પ્રકારે પરના દૂષણને પ્રકટ કરીને સ્વમતની સ્થાપના આ દૃષ્ટાન્ત દ્વારા કરવામાં આવી છે. તેથી તે દૃષ્ટાન્ત સ્થાપનાકર્મ રૂપ છે.

तथाहि—अनित्यः शब्दः कृतकत्वात्, अत्र कृतकत्वेन शब्देऽनित्यत्वं साधयति, तत्र कश्चिद्ब्रूते भो ! वर्णात्मके शब्दे कृतकत्वं नास्ति, तेषां नित्यतायाः प्रतिपादनात्, इत्येवं सकलपक्षे हेतुर्न यातीति विभाव्य स्थापनाहेतुवादी वदति वर्णात्मकः शब्दः कृतकः कारणभेदेन भिद्यमानत्वात् घटपटादिवत् यथा स्व स्व कारणभेदाद् घटादयो भिद्यन्ते तथा शुकसारिकादिकारणभेदाद् वर्णात्मकः शब्दोपि भिद्यत एवेति घटादिदृष्टान्तेन वर्णानां कृतकत्वं स्थापितमिति भवत्यत्र स्थापना कर्मेति ॥

अथवा—जैसे—“ अनित्य शब्दः कृतकत्वात् ” इस प्रकारके अनुमान प्रयोगसे कोई वादी शब्दमें कृतकत्व हेतुसे अनित्यकी सिद्धि करता है तब कोई उससे ऐसा कहता है कि वर्णात्मक शब्दमें “ कृतकत्व ” नहीं है क्योंकि—मीमांसककी अपेक्षा उनमें नित्यताका प्रतिपादन किया गया है इस तरह कृतकत्व यह हेतु अपने वर्णरूप सम्पूर्ण पक्षमें नहीं जाता है इस प्रकार सुनकर जो स्थापन हेतुवादी है वह कहता है जो वर्णात्मक शब्द है वह कृतकही होता है क्योंकि कारणभेदसे वह घटपटादिकी तरह भेदवाला होता है जैसे अपने २ कारणके भेदसे घटपटादिकोंमें भेद होता है, उसी तरह शुकसारिका आदिरूप कारणके भेदसे वर्णात्मक शब्दभी भेदवाला होना है इस प्रकार घटादि दृष्टान्तसे वर्णोंमें कृतकताकी स्थापनाकी जानी है इसलिये यह दृष्टान्त स्थापनाकर्म है।

अथवा—“ अनित्यशब्दः कृतकत्वात् ” आ प्रकारना अनुमान प्रयोग द्वारा न्यारे कोठ वादी शब्दमां कृतकत्व हेतुद्वारा अनित्यतानी सिद्धि करे छे, त्यारे कोठ तेने ओवुं कडे छे के वर्णात्मक शब्दमां “ कृतकत्व ” हेतुं नथी, कारण के मीमांसकनी अपेक्षासे तेमनामां नित्यतानुं प्रतिपादन करवामां आओयुं छे. आ रीते कृतकत्वहेतु पोताना वर्णुंइय संपूर्ण पक्षमां नतो नथी. आ प्रकारनी दलील सांभणीने जे स्थापना हेतुवादी छे ते कडे छे के जे वर्णात्मक शब्द छे ते कृतक न होय छे, कारण के कारणलेदथी ते घटपटादिनी जेम लेदवाणे थाय छे जेम पोत् पोताना कारणना लेदथी घटपटादिमां लेद होय छे, ओज प्रमाणे शुक सारिका (पोपट, मेना) आदि इय कारणना लेदथी वर्णात्मक शब्द पण लेदवाणे होय छे. आ प्रमाणे घटादिना दृष्टान्त द्वारा वर्णुंमां, कृतकतानी स्थापना करवामां आवे छे. तेथी तेनुं नाम ‘दृष्टान्तस्थापना कर्म’ छे.

‘प्रत्युत्पन्नविनाशि’ चित्ति=प्रत्युत्पन्नविनाशीति प्रत्युत्पन्नस्य=तत्काले एव जायमानस्य वस्तुनो विनाशो यत्र भवति वाच्यतया स प्रत्युत्पन्नविनाशी यथा-
 यद्यिदं गन्धंस्तुविशेषे शिष्यस्याशक्तिमुपलभ्य दुष्करतपश्चरणविहारान्
 नियोज्य शिष्यस्याशक्तिकारण विनाशनीयमित्येवं प्रत्युत्पन्नविनाशनीयता साध-
 कत्वात्प्रत्युत्पन्नविनाशिज्ञातता भवति । अथवा आत्मा अकर्ता अमूर्तत्वा-
 दिव्यनुमानेनात्मनोऽकर्तृत्वे साधिते अकर्तृत्वापत्तिरुल्लङ्घनदोषस्य विनाशायोच्यते
 आत्मा कथञ्चि भवति कथञ्चिन्मूर्तत्वात्, देवदत्तवदित्यनुमानेन तत्कालोत्पन्नेना-
 त्मनोऽकर्तृत्वमपि नायते इति भवति प्रत्युत्पन्नविनाशिताया ज्ञातमिति समाप्तं
 समेदमाहरणाभियं ज्ञानम् ॥ १ ॥

‘प्रत्युत्पन्नविनाशि’ चित्ति ” प्रत्युत्पन्नका (तत्काल,में ही जायमान वस्तुका
 विनाश जहां पर वाच्यरूप होता है वह प्रत्युत्पन्न विनाशी है जैसे
 कोई गुन वस्तु विशेषमें शिष्यकी अशक्तिको जानकर उसे दुष्कर तप
 चरण विहार आदिमें नियुक्त करता है इस विचारसे कि “ शिष्यकी
 अशक्तिका कारण विनष्ट करना चाहिये ” इस तरह प्रत्युत्पन्नकी
 विनाशनीयताका साधक होनेसे हममें प्रत्युत्पन्नविनाशिज्ञातता
 होती है अथवा—” आत्मा अमूर्त होनेसे अकर्ता है ” इस अनुमान-
 द्वारा आत्मामें अकर्तृत्व साध्य करके इस अकर्तृत्वापत्तिरूप
 दोषको विनाश करनेके लिये जब ऐसा कहा जाता है
 कि आत्मा कथञ्चित् मूर्त होनेसे देवदत्तकी तरह कर्ताभी है, इस प्रकार
 हम तत्कालोत्पन्न अनुमानसे जो आत्माका अमूर्तत्व हटा दिया जाता
 है वह प्रत्युत्पन्न विनाशिताका ज्ञात है । इस प्रकारसे यहां तक आहरणके

“ प्रत्युत्पन्नविनाशि चित्ति ” प्रत्युत्पन्ननो—तत्काले जायमान वस्तुनो विनाश
 त्पत्तां वाच्यरूपेण कथ्यते । तेन दृष्टान्तने ‘ प्रत्युत्पन्नविनाशी ’ कथ्ये छे जेभडे
 कोन गुन वस्तुविशेषमां शिष्यनी अशक्तिने लागीने तेने दुष्कर तपश्चरण,
 विहार आदिमा प्रयुक्त करे छे । आस करवा पछण तेमनो जेवो आल डोय
 से छे “ शिष्यनी अशक्तिनं ज्ञान्य भारे विनष्ट करवुं जेसको ” आ प्रकारे
 प्रत्युत्पन्ननो विनाश करवामां साधक डोवाशी तेमां प्रत्युत्पन्न विनाशी
 न ज्ञात होय छे ।

आत्मा—” आत्मा अमूर्त होवाशी अकर्ता छे, ” आ अनुमान द्वारा
 आत्मामें अमूर्तता साध्य करीने आ अकर्तृत्वापत्ति रूप दोषनो विनाश कर-
 वाने ली जेसके कोन उदाहरण आवे छे “ आत्मा कथञ्चित् (थोडा प्रमा-
 णमां मूर्त होवाशी देवदत्तनी जेस कर्ता छे ”

आ प्रकारे आ अनुमानसे प्रत्युत्पन्न अनुमान वटे आत्मानुं अमूर्तत्व जे हरे
 आ प्रकारे आ प्रत्युत्पन्नविनाशितानुं ज्ञातहोय छे । आ प्रकारे अर्थात्

संप्रति आहरणतद्देशो व्याख्यायते—‘आहरणतद्देशे’ इत्यादि। आहरण-तद्देश-
श्चतुर्विधः अनुशास्त्युपालंमपृच्छा निश्चावचनभेदात्। तत्रानुशास्तिः अनुशासनमनुशा-
स्तिः सद्गुणसंकीर्त्तनेनोपबृंहणम् सद्गुणसंकीर्त्तनमेव यत्र विधेयतयोपदिश्यते सा
अनुशास्तिः, यथाये गुणवन्तस्तेऽनुशासनीया भवति, यथा—चम्पानगर्यां कदाचि
जिनकल्पिको मुनिर्मिक्षार्थं सुभद्रागृहे समागतः तन्नेत्रे रजःकणं पतितं दृष्ट्वा
सुभद्रा स्वजिह्वया तन्निःसारितवती। तत्समये तल्ललाटगतकुङ्कुमविन्दुमुनि
ललाटे संलग्नः। तद् दृष्ट्वा लोके तद्विषये शीलभङ्गशङ्का समुत्पन्ना। तामपनेतुं
सा लोकसमक्षं चालते त आमसूत्रेण कूपाज्जलं निस्सार्य तज्जलाच्छोटनेन शास-

चार भेदोंका कथन समाप्त कर अब आहरणतद्देश का कथन किया
जाता है—यह आहरणतद्देश भी चार प्रकारका कहा गया है अनुशास्ति
१ उपालम्भ २ पृच्छा ३ और निश्चावचन ४ जहां सद्गुण संकीर्त्तनही
विधेयता रूपसे उपदिष्ट होता है वह अनुशास्ति है जैसे—जो गुणवान्
होते हैं वे अनुशासनीय होते हैं—इस पर दृष्टान्त इस प्रकारसे है—

चंपानगरीमें किसी समय जिनकल्पिक मुनि गोचरीके लिये सुभ
द्राके घर पर आये उनकी आंखमें रजःकण(धूलिकण)गिर गया था सुभद्राने
रजःकणको उनकी आंखमेंसे अपनी जीभ द्वारा निकाल दिया निका-
लते समय उसके ललाटकी कुङ्कुमविन्दु मुनिके ललाटमें लग गई इस
बातको देखकर लोकमें उनके शीलभङ्गकी चर्चा प्रारम्भ हो गई इस
चर्चाको—शीलभङ्गकी शंकाको—दूर करनेके लिये सुभद्राने लोकोंके समक्ष

सुधीमां आहरण दृष्टान्तना चार लेहोनुं वर्णन करवामां आण्युं छे.

आहरणतद्देशना दृष्टान्तनुं प्रतिपादन करवामां आवे छे. आहरणतद्देशना
नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) अनुशास्ति, (२) उपालंभ, (३)
पृच्छा अने (४) निश्चावचन ज्यां सद्गुणसंकीर्त्तन न विधेयता इये उपदिष्ट
थाय छे तेनुं नाम अनुशास्ति छे जेभके-जे गुणवान् होय छे ते अनुशास-
नीय होय छे. आ विषयने अनुलक्षिने नीचे प्रमाणे दृष्टान्त छे—

चंपानगरीमां कौं एक समये एक जिनकल्पिक मुनि गोचरी करवा
निमित्ते करता करता सुभद्रा शोकाणीने त्यां पधार्या. तेमनी आंभमां रज (कुण्डु)
पडवाने कारणे तेमांथी आसु नीकणी रक्षा इतां. सुभद्राये पोतानी लुभना
ऐरवा वडे तेमनी आंभमांथी ते रजने काढी नाथी, पण रज काढती वधते
तेना ललाटने कंकुने आंदे. मुनिना कपाणमां लागी गयो. मुनिना कपा-
णमां ते निशान लेधने लोकोमा तेमना शीलभंगनी चर्चा आलवा मांडी आ
शीलभंगनी वात जोटी छे जे साणीत करवाने माटे सुभद्राये काया सूतर

નદેવતામુદ્રિતં ચંપાનગર્યાં ગોપુરત્રયં સમુદ્વાટિતવતી તેન ' અહો ! સુમદ્રા મહા-
શીલવતી '-તિ નગરજનેનાનુશાસિતેતિ ૧। પ્રકૃતે રજઃકળાપનયનરૂપવૈયા-
વૃત્ત્યકરણાદપ્યુપનયઃ સંભવતિ તત્ત્યાગેન ચ નગરજનાનુશાસ્તિમાત્રેણાત્રોપનયઃ
કૃત ઇત્યાહરણતદ્દેશતેતિ । એવમનભિમતાંશત્યાગાદયિમતાંશગ્રહણાદુપનયનમ્ ।
એવમુત્તરેષ્વપિ વિજ્ઞેયમિતિ । અથ દ્વિતીયભેદમાહ-' ઉપાલંભે ' ઇતિ । ઉપાલંભ-
નમ્ ઉપાલંભઃ પ્રકારાન્તરેણાનુશાસનમેવ । તદ્ યત્રાભિધીયતે સ ઉપાલંભઃ યથા-
આસીત્કાચિન્મૃગાવતી નામ્ની સાધ્વી, સા ભગવતો મહાવીરસ્ય સમવસરણસમયે

કચ્ચે મૃતકો ચાલનીમેં બાંધકર ઉસસે કુર્ષ્મસે પાની સ્ત્રીંચા ઓર ઉસ
પાનીકો ચંપાનગરીકે ત્ત્રીન દરવાજોં પર છિડકા, ક્યોંકિ શાસનદેવતાને
ઉન દરવાજોંકો પહિલેસેહી કીલ દિયા થા (વન્દ કર દિયા થા) અતઃ ચે
દરવાજે સ્ત્રુલ ગયે તથ સુમદ્રા મહાશીલવતી હૈ ઇમ પ્રકારસે લોકને
ફિર અનુશાસિત ક્રિયા ?

પ્રકૃતમેં રજઃકળકો નિકાલને રૂપ વૈયાવૃત્ત્ય કરનેસે મ્ત્રી ઉપનય
સંભવિત હોતા હૈ ક્યોંકિ ઉસ રજઃકળકે નિકાલનેસે જો નગરજનોંને
ઉસકી અનુશાસ્તિકી હૈ, ઇતને માત્રસે યહાં ઉપનય ક્રિયા ગયા હૈ, યહ
ઇસ પ્રકાર અનભિમત અંશકે ત્યાગસે ઓર અભિમત અંશકે ગ્રહણસે
ઉપનય હોતાહૈ । ઇસી પ્રકારસે આગેમ્ત્રી જાનનાં ચાહિયે " ઉપાલંભે "
ઉલ્હાના પ્રકારાન્તરસે અનુશાસનહી ઉપાલંભહૈ યહ અનુશાસન જહાં
કહા જાતાહૈ વહ ઉપાલંભહૈ જૈસે કોઈં એક સૃગાવતી સાધ્વીમ્ત્રી, વહ ભગવાન્

વડે ચાલણીને બાંધીને લોકની સમક્ષ તે ચાલણી વડે કૂવામાંથી પાણી ખેંચ્યું.
તે નગરના ત્રણ દરવાજાઓ શાસન દેવતાઓ બંધ કરી દીધા હતા. સુભદ્રાએ
ચાલણી વડે કૂવામાંથી ખેંચેલા પાણીને તે ત્રણે દરવાજા પર છાંટ્યું અને
પાણી છાંટતાની સાથે જ તે દરવાજા ઉઘડી ગયા. ત્યારે લોકોએ કૃતીથી એવું
' અનુશાસિત કથું ' કે સુભદ્રા મહા શીલવતી છે

આ દૃષ્ટાન્તમાં રજને કાઢવા રૂપ વૈયાવૃત્ત્ય કરવા રૂપ ઉપનય પણ
સંભવિત થાય છે, કારણ કે તે રજને કાઢવાથી જે નગરજનોએ તેની અનુ-
શાસ્તિ કરી છે એટલા માત્રથી જ અહીં ઉપનય કરવામાં આવ્યો છે. આ
રીતે અનભિમત અંશના ત્યાગથી અને અભિમત અંશના ગ્રહણથી તેમાં ઉપનય
થાય છે અને પ્રમાણે આગળ પણ સમજી લેવું.

" ઉપાલંભે " પ્રકારાન્તરની અપેક્ષાએ અનુશાસન જ ઉપાલંભ રૂપ છે.
આ અનુશાસન ન્યાં કહેવાય છે તેને ઉપાલંભ કહે છે. તેનું નીચે પ્રમાણે

समागता सविमानचन्द्रादित्यप्रकाशेन कालविभागमज्ञात्वा समवसरणे एव स्थिता, ततस्तद्गमने 'अतिकालोऽय'—मिति संभ्रान्तचित्ता साध्वीभिः सहाय्य-चन्दना समीपे समागता । तथा—'अयुक्तमिदं भवादृशीनामुत्तमकुलसमुत्प-न्नानामित्युपालब्धेति । अत्र कालातिक्रमरूपैकदेशग्रहणाद् आहरणतद्देशतेति ।

अथ तृतीयभेदमाह—'पृच्छा इति ।

पृच्छा प्रश्नः किं कथं केन कृतमित्यादि, सा यत्र विधेयतयोपदिश्यते सा पृच्छा यथा कोणिकः श्रेणिकराजपुत्रो भगवन्तं महावीरं पपच्छ—भदन्त ! अप-रित्यक्तकामाश्चक्रवर्तिनो मृताः क्व यान्ति, भगवता कथितम् सप्तम्यां—पृथिव्याम् ।

महावीरके समवसरणके समयमें आई वहाँ सविमानचन्द्र और सूर्य आदि-के प्रकाशसे कालका ज्ञान नहीं रहा, सो वह समवसरणमेंही बैठी रही इसके बाद जब वह वहाँसे चली तो वह "अतिकालोऽयम्" ऐसा समझकर संभ्रान्तचित्तवाली बन गई, सब साध्वियोंके साथ वह आर्य चन्दनाके पास आई, उसने उसे ऐसा उपालम्भ दिया कि आप जैसी उत्तम कुलोद्भूत साध्वीओंको यह अयुक्त है यहाँ कालातिक्रम रूप एकदेशताके ग्रहणसे आहरणतद्देशता है "पृच्छा"—क्या किया कैसा कियो किसने किया इत्यादि प्रश्नका नाम पृच्छा है यह पृच्छा जहाँ विधेयरूपसे उपदिष्ट होती है वह पृच्छा है जैसे—श्रेणिकराजपुत्र कोणिकने भगवान् महावीरसे पूछा—हे भदन्त ! चक्रवर्ती काणभोगोंका परित्याग

दृष्टान्त छे—मृगावती नामनी कोछ ओक साध्वी હતી. તે કોછ એક વખતે મહાવીર પ્રભુના સમવસરણમાં ગઈ હતી ત્યાં સવિમાન ચન્દ્ર અને સૂર્યના પ્રકાશને લીધે તેને કાળનું જ્ઞાન ન રહ્યું. તેથી તે સમવસરણમાં ઘણી વાર સુધી બેસી જ રહી. ત્યાર બાદ જ્યારે તે ત્યાંથી ચાલી નીકળી ત્યારે "અતિ-કાલોઽયમ્" "ઘણો જ કાળ વ્યતીત થઈ ગયો—ખૂબ મોડું થઈ ગયું" એવું સમજીને સંભ્રાન્ત ચિત્તવાળી બની ગયેલી તે સૌ સાધ્વીઓની સાથે આર્યા ચન્દનાની પાસે આવી ત્યારે તેમણે (આર્યા ચન્દનાએ) તેને એવો ઠપકો આપ્યો કે "આપના જેવી ઉત્તમ કુલોત્પન્ન સાધ્વીઓને માટે ઘણું જ અયુક્ત ગણાય." આ દૃષ્ટાન્તમાં કાલાતિક્રમ રૂપ એકદેશતાના અહણની અપેક્ષાએ આહરણતદ્દેશતા છે.

"પૃચ્છા"—શુ કયું ? કેવી રીતે કયું ? કોણે કયું ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નનું નામ પૃચ્છા છે. આ પૃચ્છા જેમાં વિધેય રૂપે ઉપદિષ્ટ હોય છે તેને પૃચ્છા કહે છે. જેમકે—શ્રેણિક રાજાના પુત્ર કેણિકે મહાવીર પ્રભુને એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો કે "હે ભગવન્ ! ચક્રવર્તીને કામભોગોનો પરિત્યાગ કર્યા વિના મરણ પામે

कोणिकः पृष्ठवान्—अहं क्व यास्यामि ? भगवानाह—पठयाम् । कोणिकः प्राह—
अहं कथं न सप्तभ्यां यास्यामि ? । भगवता कथितम्—चक्रवर्त्तिनस्तत्र गच्छन्ति ।
ततः कोणिकः पप्रच्छ—किमहं न चक्रवर्ती ? ममापि गजाश्वदिकं चक्रवर्ति साधनं
विद्यते । भगवतोक्तम्— तत्र रत्ननिधयो न सन्ति । ततोऽसौ कृत्रिमाणि रत्नानि
कृत्वा भरतक्षेत्रसाधनाय प्रवृत्तः कृतमालिकरूपेण व्यापादितः पृष्ठीं गत
इति । अत्र पृष्ठीपृथिवीगमनरूपानभिमतं शल्यागात् सप्तमीपृथिवीगमनरूप
स्वाभिमतं शग्रहणाद्, आहरणतद्देशतेति ३ ।

क्रिये बिना यदि मर जाते हैं तो वे कहाँ जाते हैं ? तब भगवान्ने कहा
वे सातवीं पृथिवीमें जाते हैं । पुनः कोणिकने पूछा मैं मरकर कहाँ जाऊंगा ?
तब भगवान्ने कहा—तुम मरकर छठी पृथिवीमें जाओगे, पुनः कोणिकने
प्रश्न किया—मैं सातवीं पृथिवीमें क्यों नहीं जाऊंगा ? प्रभुने कहा—
चक्रवर्तीही वहाँ जाते हैं । कोणिकने कहा तो क्या मैं चक्रवर्ती नहीं हूँ ?
मेरे पास भी तो चक्रवर्तीके साधनभूत गज अश्वदिक रत्न हैं । भगवान्ने
कहा तुम्हारे पास रत्न और निधियां नहीं हैं । तब इसने कृत्रिम रत्नोंको
करके भरतक्षेत्रको साधनेके लिये प्रवृत्ति की (और तमस-
गुफा पर पहुँचा,) उसी समय कृतमालिक देवने इसे
मार डाला सो यह छठी पृथिवीमें गया यहाँ छठी पृथिवीमें
गमनरूप अनभिमत अंशके त्यागसे और सातवीं पृथिवीमें गमनरूप
स्वाभिमत अंशके ग्रहणसे आहरणतद्देशता है । “ निश्चावचन ” किसी

तो कथं गतिमां उत्पन्न थाय छे ” त्पारे लगवाने जवाभ आभ्यो—“ सातमी
नरकमां उत्पन्न थाय छे. ” कुण्डिके णीजे प्रश्न पूछयो “ हे लगवन् ! हुं
भरीने कथां जयश ? ” त्पारे लगवाने जवाभ आभ्यो—“ तमे भरीने छठी
नरकमां जशो. ” त्पारे कुण्डिके पूछयुं—“ हे लगवन् ! हुं सातमी नरकमां
शा कारणे नडीं जठि ? ” प्रभुजे जवाभ आभ्यो—“ अकवर्तीं ज भरीने सातमी
नरकमां जय छे. ” त्पारे कुण्डिके पूछयुं “ शुं हुं अकवर्तीं नधी ? भारी
पासे पणु अकवर्तीना साधनरूप गज, अश्वदिक छे. ” त्पारे लगवाने तेने
जेवो जवाभ आभ्यो के “ तभारी पासे रत्न अने निधिजे नधी ” त्पारे
तेजे कृत्रिम रत्नाने अेकत्र करीने भरतक्षेत्रने उतवानी प्रवृत्ति शरु करी.
त्पारे कृतमालिक नामना देवे तेने भारी नाभ्यो. ते भरीने छठी नरकमां
उत्पन्न थयो. आ द्यन्तमां छठी नरकमां गमनरूप अनभिमत अंशना
त्यागनी अपेक्षाजे अने सातमी नरकमां गमनरूप स्वाभिमत अंशना अह-
णुनी अपेक्षाजे आहरणतद्देशता समजवी जेधजे.

ચતુર્થભેદમાહ—‘ નિસ્સાવચણે ’ ઇત્યાદિ ।

નિશ્રયા વચનં નિશ્રાવચનમ્ । અયમાશયઃ કમપિ વિનીતવિનેયમાલંબ્ય યદન્ય પ્રવોધાય વચનં તદ્યત્ર વિધેયતયોચ્યતે તદાહરણં નિશ્રાવચનમ્ । યથા માર્દવાદિ ગુણસંપન્નવિનેયનિશ્રયા અસહમાનાનન્યાન્ વિનેયાન્ પ્રતિ કથનમ્ । યથા ગૌતમ-મભિલક્ષ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય કથનમિવેતિ । યથા સઘઃ પ્રવ્રજિતસ્ય ગાગલિ-મુનેઃ કેવલજ્ઞાનોત્પન્નાવનુત્પન્નકેવલજ્ઞાનત્વેન પરિત્યક્તધૃતિં ગૌતમં પ્રતિ ભગ-વાન્ કથિતવાન્—ચિરસંશ્લિષ્ટોઽસિ ગૌતમ ! ચિરપરિચિતોઽસિ ગૌતમ ! માત્વમ-ધૃતિં કાર્પીઃ ’ ઇત્યાદિ વચનપ્રકારેણ ગૌતમમનુશાસયતા ભગવતાઽન્યેઽપ્યનુશા-સિતા ઇતિ । અત્રાધૃતિરૂપાનભિમતાંશત્યાગાદ્ ધૃતિરૂપાભિમતાંશગ્રહણાદાહરણ તદેશતેતિ ઇત્યાહરણતદેશોદાહરણમ્ ॥ ૨ ॥

વિનીત શિષ્યકો લેકર અન્યકે પ્રવોધનકે લિયે વચન જહાં વિધેય-રૂપસે કહા જાતાહૈ વહ આહરણ નિશ્રાવચનહૈ જૈસે-માર્દવાદિ(કોમલતા) ગુણસંપન્ન વિનેય શિષ્યકી નિશ્રાસે અસહમાન અન્ય શિષ્યોંકે પ્રતિ ગૌતમકો લક્ષ્યકર જૈસા ભગવાન્ મહાવીરને કહા યા, ઉસ તરહસે કહના જૈસે જવ તુરતકે દીક્ષિત ગાગલિમુનિકો કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હો ગયા તવ કેવલજ્ઞાન નહીં હોનેસે પરિત્યક્ત ધૃતિવાલે ગૌતમસે ભગવાન્ને કહા—બહુત દિનોં સંશ્લિષ્ટ હો ગૌતમ ! ચિરપરિચિત હો ગૌતમ ! તુમ અધૃતિકો પ્રાપ્ત મત હોઓ ઇત્યાદિ વચન પ્રકારસે ગૌતમકો અનુશાસિત કરનેવાલે ભગવાન્ને અન્યોંકો ભી અનુશાસિત કિયા યહાં અધૃતિરૂપ અનભિમત

“ નિશ્રાવચન ” કોઈ વિનીત શિષ્યનો દાખલો આપીને અન્યને પ્રયોધિત કરવા નિમિત્તે વિધેય રૂપ જે વચનો કહેવામાં આવે છે તેનું નામ આહરણ-નિશ્રાવચન છે. જેમકે—માર્દવાદિ ગુણસંપન્ન વિનીત શિષ્યની નિશ્રાને સહન ન કરનારા અન્ય શિષ્યોને ગૌતમ સ્વામીને લક્ષ્ય કરીને જે વચનો મહાવીર પ્રભુએ કહ્યા હતાં તે વચનોને નિશ્રાવચન કહે છે. તે પ્રસંગ હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—તુરતના દીક્ષિત ગાગલિ મુનિને બ્યારે કેવળજ્ઞાન થયું ત્યારે પરિત્યક્ત ધૃતિવાળા ગૌતમસ્વામીને મહાવીર પ્રભુએ આ પ્રમાણે કહ્યું હતું—ધણા જ દિનોથી સંશ્લિષ્ટ છો ગૌતમ ! ચિરપરિચિત છો ગૌતમ ! તું અધૃતિસંપન્ન ન થઈશ પરિત્યક્ત ધૃતિવાળા થવું તારે માટે ઉચિત નથી, ” ઇત્યાદિ વચનો દ્વારા ગૌતમને અનુશાસિત કરનાર મહાવીર પ્રભુએ અન્ય મુનિજનોને પણ અનુશાસિત કર્યા હતા અહીં અનભિમત રૂપ અધૃતિ રૂપ

અથ તૃતીયમાહરણતદોષજ્ઞાતમાહ—‘ આહરણતદોષે ’ ઇત્યાદિ । આહરણ-
તદોષઃ, સ ચ ચતુર્ધા—અધર્મયુક્ત—પ્રતિલોમાત્મોપનીત—દુરુપનીતભેદાત્ । તત્ર
પ્રથમભેદમાહ—‘ અધર્મયુક્તે ’ ઇત્યાદિ । યદુદાહરણં પાપામિધાનસ્વરૂપં
કસ્યચિદર્થસ્ય સાધનાયોપાદીયતે યેન ચ પ્રતિપાદિતેન શ્રોતુરધર્મવૃદ્ધિર્જન્યતે
તદધર્મયુક્તમુદાહરણમ્, યથા કથાપ્રસંગે કેનચિદુક્તં સપ્તરાત્રોપિતં કાંસ્યપાત્ર-
સ્થિતં ધૃતં વિપાયતે તચ્છુલા કશ્ચિત્થાવિધં ધૃતં પ્રદેપિણે ભ્રાત્રે દત્વા મારિત
ઇતિ આહરણદોષતા ચાસ્યાધર્મયુક્તત્વાત્—તથાવિધ શ્રોતુરધર્મજ્ઞાનોત્પાદકત્વાચ્ચેતિ ।

અંશકે ત્યાગસે એવં ધૃતિરૂપ અભિમત અંશકે ગ્રહણસે આહરણતદેશતા
હૈ હસ પ્રકારસે આહરણતદેશકા યહ સભેદ કથન હૈ—

આહરણતદોષકા કથન હસ પ્રકારસે હૈ—અધર્મયુક્ત ૧ પ્રતિલોમ ૨
આત્મોપનીત ૩ ઓર દુરુપનીત-૪ યે હસકે ચાર ભેદ હૈ—જો ઉદાહરણ
પાપ કથન સ્વરૂપ હો ઓર કિસી અર્થકી સિદ્ધિકે ક્રિયે દિયા ગયા હૈ
કિ જિમકે પ્રતિપાદિત હોને પર શ્રોતાકો અધર્મવૃદ્ધિ હો જાય, એસા વહ
ઉદાહરણ અધર્મયુક્ત ઉદાહરણ હૈ જૈસે કથા પ્રસંગમે કિસીને એસા કહા
કિ સાત રાત તક કાંસકી થાલીમે રલા ગયા ઘૃત વિષકે તુલ્ય હો
જાતા હૈ હસ વાતકો સુનકર કિસીને એસાહી ક્રિયા ઓર ઉસ ઘૃતકો
અપને દ્રેષી ભાઈકે લિયે દે દિયા તચ વહ ઉસકે જાનેસે મર ગયા હસ
ઉદાહરણમે આહરણદોષતા અધર્મયુક્ત હોનેસે હૈ ।

અનભિમત અંશના ત્યાગ અને ધૃતિરૂપ અભિમત અંશના ગ્રહણની અપેક્ષાએ
આહરણતદેશતા છે, આ પ્રકારે આહરણતદેશતાના ચારે ભેદોનું કથન અહીં
સમાપ્ત થાય છે

આહરણતદોષનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—તેના નીચે પ્રમાણે
ચાર ભેદ છે—(૧) અધર્મયુક્ત, (૨) પ્રતિલોમ, (૩) આત્મોપનીત, અને
(૪) દુરુપનીત

જે ઉદાહરણ પાપકથન સ્વરૂપ હોય, અને કોઈ એવા અર્થનું પ્રતિપાદન
કરવા નિમિત્તે આપનામાં આવ્યું હોય કે જેનું પ્રતિપાદન થઈ જવાથી શ્રોતાની
બુદ્ધિ અધર્મયુક્ત થઈ જાય, એવા ઉદાહરણને અધર્મયુક્ત ઉદાહરણ કહે છે
જેમકે કોઈ એક કથાકારે એવું કહ્યું કે સાત દિનરાત સુધી કાંસાની થાળીમાં
મૂકી રાખેલું ઘી વિષસમાન થઈ જાય છે

આ વાત સાંભળીને કેઈ માણસે એ પ્રમાણે જ કયું—ઘીને કાંસાની
થાળીમાં સાત દિનરાત રાખી મૂક્યું. ત્યાર બાદ તેણે તે ઘી પોતાનો દ્રેષ
કરનાર ભાઈને મારી નાખવા માટે વાપર્યું. તે ઘી ખાવાથી તેનો ભાઈ મરી
ગયો આ ઉદાહરણમાં અધર્મયુક્તતાને કારણે તથા શ્રોતામાં અધર્મજ્ઞાન ઉત્પન્ન
કરનાર હોવાને કારણે આહરણદોષતા છે.

द्वितीयभेदमाह—‘ पडिलोमे ’ इति । प्रतिलोमः=पातिकूल्यं, स यत्रोप-
दिश्यते तत्प्रतिलोमोदाहरणम्, यथा “ व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति
मायाविषु ये न मायिनः ” इत्यादि । यथा चण्डप्रघातं प्रति तदपहृताभयकुमा-
रेण यथा कृतं तद्वत् तद्दोषताचास्य श्रोतुः परापकरणनिपुणबुद्धिजनकत्वादिति ।
अथवा—‘ जीवोऽजीवश्चेति द्वावेव राशी ’ इत्युक्तेऽन्यः कोऽपि तन्निग्रहार्थमाह—
तृतीयोऽपि नोजीवाख्यो राशिरस्ति गृहगोधिकादिच्छिन्नपुच्छवदिति । अस्या
हरणतद्दोषता चोत्सूत्रप्ररूपणादिति । अथ तृतीयभेदमाह—‘ अत्तोवणीए ’
इति । आत्मोपनीतम् आत्मैः उपनीतो वियोजितो यस्मिंस्तत्तथा अर्थात् येन

“प्रतिलोम” प्रतिकूलता जहां उपदिष्ट होती है वह प्रतिलोमोदाहरण है
जैसे—“व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः ”
इत्यादिमें कहा गया है। अथवा—चण्डप्रघातके प्रति उसके द्वारा अपहृत हुए
अभयकुमारने जैसा किया है वैसा करना यह सब प्रतिलोमोदाहरण
है इसमें आहरणतद्दोषता श्रोताको परापकरण (दूसरेको नुकसान
करने) में निपुण ऐसी बुद्धिकी जनकतासे आती है अथवा—“ जीव और
अजीव ऐसी ये दो राशी हैं ” ऐसा कहने पर इसके निग्रह निमित्त
अन्य कोई भी यदि ऐसा कहता है कि नहीं गृहगोधिकादि छिन्न
पुच्छकी तरह नोजीवराशिभी तीसरी राशि है ऐसे कथनमें आहरण-
तद्दोषता उत्सूत्र प्ररूपणासे आई है “ आत्मोपनीत ”—जिसमें आत्मा
स्वयंही उपनीत हो जाय वह आत्मोपनीत है अर्थात्—ऐसा वह ज्ञात

“ प्रतिलोम ”—जेमां प्रतिकूलता उपदिष्ट थाय छे ते उदाहरणने
प्रतिलोमोदाहरण कडे छे, जेभके—“ व्रजन्ति ते-मूढधियः पराभवं भवन्ति माया-
विषु ये न मायिनः ” इत्यादिमां कडेवांमां आयु छे, अथवा पोताने अपहृत
करनार (अपहरण करनार) अउप्रघातनी साथे अलयकुमार जेवुं कथुं जेवुं
करवुं ते प्रतिलोमना उदाहरण रुप छे तेमां आहरणतद्दोषता डोवानुं करण
नीचे प्रभावे छे—आ प्रकारनु उदाहरण श्रोतानी परापकरण (अन्यने नुकसा-
न)मां निपुण जेवी बुद्धिनुं जनक थछ पडे छे, अथवा—“ एव अने अएव
जेवी आ जे व राशी छे ” आ प्रभावे ज्यारे कडेवांमा आवे त्यारे तेना
निग्रह निमित्ते कछ जेवुं कडे के “ गृहगोधिकादि छिन्न पुच्छनी
जेम नोजीवराशि पणु त्रीण राशि छे. ” आ प्रकारना कथनमां उत्सूत्र
प्ररूपणने दीधे आहरणतद्दोषता रखी छे.

“ आत्मोपनीत ”—जेमां आत्मा पोते व उपनीत थछ जय जेवा
उदाहरणने आत्मोपनीत कडे छे, जेटवे के परमतना अउने माटे कछ

ज्ञातेनान्यदीयमतनिराकरणाय परिगृहीतेन स्वकीयमतमेव दुष्टं भवेद् यत्र तद्
 आत्मोपनीतम् । यथा परिपदि केनापि कथितम्—अत्र सर्वे मूर्खा ' इति । अत्र-
 सर्वपदेन स्वात्माऽपि मूर्खतयोपात्त इति । आहरणतदोषता चात्र स्ववचनदोषात् ।
 यथात्रा " सव्वे पाणा न हंतव्वा " सर्वे प्राणिनो न हन्तव्याः अस्य पक्षस्य दूष-
 णाय कश्चिदाह—अभ्यधर्मस्थितास्तु हन्तव्या विष्णुना राक्षसा इव, एवं वदता तेना-
 त्मैव हन्तव्यतया उपनीतः तस्यापि धर्मान्तरस्थितत्वात् । अथवा—केनापि राज्ञा
 पृष्टः—' तडागोऽयं कथमभेद्यो भवति ? ' अन्येन कथितम्—द्वात्रिंशलक्षणे पुरु-
 षेऽत्र निखाते सत्यभेद्यो भवतीति । अमात्येन तु—स एव तत्र तादृशगुणसम्पन्नत्वा-

कि जो अन्य मतके निराकरणके लिये दिया गया है परन्तु उससे स्वयं
 का मतही दुष्ट हो जाय वह आत्मोपनीत है जैसे किसी सभामें किसीने
 कहा—यहां सबही मूर्ख हैं सो इस प्रकारके कथनसे कहनेवालेको भी
 मूर्खता प्राप्त हो जाती है क्योंकि सर्व पदसे वह भी गृहीत हो जाता
 है ऐसे कथनमें आहरणतदोषता स्ववचनदोषसे है अथवा—जैसे—“सव्वे
 पाणा न हंतव्वा ' इस कथनको दूषित करनेके लिये कोई ऐसा कहे कि
 अन्य धर्मस्थित प्राणीको तो विष्णुने जैसे राक्षसोंको मारा है वैसे मार
 देना चाहिये, इस प्रकारके उसके कथनके अनुसार वह स्वयं भी हन्तव्य
 रूपसे उपस्थित हो जाता है क्योंकि वह स्वयं भी धर्मान्तरमें स्थित
 है अथवा—किसी राजाने पूछा—यह तालाब अमोघ कैसे हो सकता है
 तब किसीने कहा—बत्तीस लक्षणोंवाला यदि कोईपुरुष यहां पर जीता गाड़

दृष्टान्त आपवामां आण्युं डोय, परन्तु तेना द्वारा पोताना मतनुं न भ'उन
 थर्ध न्तुं डोय, तो ओवा दृष्टान्तने आत्मोपनीत कडे छे. जेमके डोय सभाभां
 डोय भाणुस ओवुं ओवे के " अहीं भधां भूर्भाओ ओकत्र थाय छे. " तो
 तेना आ कथन द्वारा ते पोते पणु भूर्भ' ठरे छे कारणुके " भधा भूर्भ' छे "
 ओम कडेवामां कडेनार पोते पणु भूर्भ' इये गणुाथ नय छे. आ कथनभां
 स्ववचन दोषने लीधे आहरणतदोषता छे. अथवा—“ सव्वे पाणा न हंतव्वा ”
 “ डोय पणु ओवने डणुवे नोधओ नही, ” आ कथनने दूषित करवानेभाटे
 डोय ओवुं कडे के " जेम भगवान विष्णुओ राक्षसेने मारी नाण्था डता,
 तेम अन्य धर्मस्थित ओवने मारी नाण्वा नोधओ ", आ कथन अनुसार
 तो आपुं कडेनार पणु डणुी नाण्वावने योग्य प्रतिपादित थाय छे, कारणु के
 अन्य धर्मने माननारा डोकेनी दृष्टिओ तो ते पणु विधभी' न छे.

अथवा—डोय राज्ञे पूछ्युं. “ आ तणाव अमोघ केवी रीते भनी
 शके ? ” तयारे डोय ओ ओवे नवाभ आण्ये के “ डोय अत्रीश लक्षणु

निखात इति तेन स्यात्तैव तत्र नियुक्तः स्वस्यैव वचनदोषादत आत्मोपनीतत्वमत्रेति ।

चतुर्थभेदमाह—‘दुरुवणीए’ इति । दुरुपनीतम् दुरुप्रुपनीतं योजितं यस्मिन् इति दुरुपनीतम्—यथा केनचित्कस्मैचित् किमपि पृष्टम् तस्मै तेनासंगत-मुत्तरं प्रदत्तं भवेत्, यथा कस्मैचिद् भिक्षुकाय केनापि पृष्टे सति भिक्षोरसंगत-मुत्तरम्, यथा—

“ भिक्षो ! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे ? किं तेन मद्यं विना,

मद्यं चापि तत्र प्रियं ? प्रियमहो-वाराङ्गनाभिः सह ।

वेश्या-द्रव्यरुचिः कुतस्तत्र धनं ? द्यूतेन-चौर्येण वा,

चौर्यद्यूतपरिग्रहोपि भवतः ? अष्टस्य कान्या गतिः ॥१॥ ” इति ।

पद्मा-केनचिद् द्यूतेन कस्मिंश्चिन् हस्तगतजाले भिक्षुके पृष्टे तेनासंगतमुत्तरं दत्तं यथा—

दिया जाये तो यह तालाब अमोघ हो सकता है, उसकी ऐसी बात सुन-कर अमात्यने उस छोटी बत्तीस लक्षग संपन्न होनेसे वहां गाड़ दिया इस तरह उसने अपने आपकोही अपने वचनदोषसे विपत्तिमें डाल दिया, इस तरह स्ववचनदोषसेही आहरणदोषतामें आत्मोपनीतता आती है “दुरुवणीए” जिसमें उत्तरदाता अपने आपका दुष्ट रूपसे योजित करता है वह दुरुपनीत है अर्थात्—किसीने किसीके लिये कुछ भी पूछा हो, यदि वह उसका असंगत उत्तर देता है तो ऐसी अवस्थामें वह दुरुपनीत कहा जाता है जैसे—किसीने एक भिखारीसे कुछ पूछा तो उसने मांस सेवनकी शंकासे उसको उत्तर कुछ ही दिया जैसे—

“ भिक्षो ! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे ” इत्यादि । हे भिक्षो ! क्या तुम मांसका निषेवण-सेवन करते हो ? उस भिखारीने कहा मद्यके विना

पुरुषनेो अही लोग आश्रयामां आवे तो आ तणाव अमोघ थध शके” तेनां आ शण्डो सासणीने अमात्ये, उरं क्षक्ष्णोथी संपन्न डोवाने धारणे ओवी सदाड आपनारनू व गणिदान आपी दीधुं. आ रीते तेणे पोताना वचनदोषने धारणे पोतानो व जन शुभाओयो आ रीते स्ववचन दोषताने दीधे व आडरणुतदोषतामां आत्मोपनीतता आवी न्य छे

“दुरुवणीए” ‘दुरुपनीत’—जेमा उत्तरदाता पोताने:व इप्रित इये योजित करे छे, तेनुं नाम ‘दुरुपनीत’ छे. जेम डे-डोडने डोड प्रश्न पूछवामां आवे अने ते तेना असंगत ववाव आवे, तो ओवी परिस्थितिमां तेने दुरुपनीत डडेवामां आवे छे जेम डे-डोडजे ओक भिखारीने कथ पूछयुं तो तेणे मांस सेवननी शंकाथी तेने भीले व उत्तर आयो जेम डे—

“ भिक्षो ! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे ” इत्यादि—“ हे भिक्षुक ! शुं तमे मांसनुं

“કન્યાઽઽચાર્યાઽઽઘના તે નનુ શફાવધે જાલમશ્નાસિ મત્સ્યાન્ ?,
તે મે મધોપદશાઃ પિવસિ નનુ ? યુતો વેશ્યયા યાસિ વેશ્યામ્ ?
દત્ત્વાઽઽરીણાં ગલેંઽઽઘ્નિ વચ્ચુ તથ સિપ્તો ? યેપુ સન્ધિવ છિન્દિમ્,
ચૌરસ્ત્વં ? ઘૂતહેતોઃ કિત્તવઽઽઘ્નિ કથં ? યેન દાત્તી સુતોઽઽઘ્નિ” ॥૧॥૩૮૧ ॥

વહઅચ્છાહી નહીં લગતા હૈ,તો કયા મધ્ય સેવનમી કરતે હો ? હાં કરતા હું કિંતુ અકેલા નહીં વહ તો વેશ્યાકે સાથહી પ્રિય લગતા હૈ, તો કયા વેશ્યાકે પાસ મી જાતે હો ? વહ તો દ્રવ્યસે હી પ્રેમ કરનેવાલી હોતી હૈ તો તુમ દ્રવ્ય કહાંસે લાતે હો ? જુઈં ઓર ચોરીસે લાતા હું, તો કયા આપ જુઝાં ઓર ચોરી મી કરતે હો ? હાં, બ્રહ્મ પુરુષની અન્ય ગતિ હી કયા હો સકતી હૈ ? હસમેં કેવલ યહી દિશ્વલાયા ગયાહૈ કિ કિસીકે કુચ્છ પૂછને પર ઉત્તર દેને વાલેને કિતના અધિક અસંગત ઉત્તર દિયાહૈ હસી તરહસે હાથમેં મચ્છી પકડનેકી જાલ લિયે જાતે તુવે મિશ્વારીકો કિસી ધૂર્તને પૂછા તો ઉસને ઉસે હમ પ્રકારકા ઉત્તર દિયા—

“કન્યાઽઽ ચાર્યાઽઽઘના તે” હત્યાદિ । જો કન્યા લેકર ઘૂમનેવાલે હે મિશ્વુક ! તેરી કન્યામેં યે જગહ ૨ હેદ વયોં હો રહે હૈં ? નહીં ૨ વહ તો મચ્છી પકડનેકી જાલ હૈ, તો કયા તૂં મચ્છી મી જાતે હો ? હાં, વહ વિના મધ્યકે અચ્છી નહીં લગતી હૈ, તો કયા તુમ મધ્યમી પીતે હો

સેવન કરો છો ખરા ? તે મિખારીએ કહ્યું મહિરાપાન સિવાય તો તેમાં મળ જ કેવી રીતે પડે ? તો શું તમે મહિરાનું પણ સેવન કરો છો ? હા કહું છું પણ એકલો નહીં તે તો વેશ્યા સાથે જ પ્રિય લાગે છે તો શું તમો વેશ્યા સેવન પણ કરો છો ? તે તો ધનથી જ પ્રેમ કરવાવાળી હોય છે, તો તમે ધન ક્યાંથી લાવો છો ? જુગાર અને ચોરીથી લાવું છું તો શું તમે ચોરી પણ કરો છો ? હા બ્રહ્મ પુરુષની ખીલ ગતી જ શું થઈ શકે ?

આ દષ્ટાન્તમાં કેવળ એજ વાતને પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે એક સામાન્ય પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે કેવી અસંગત વાતો ઉત્તર દેનાર દ્વારા કરવામાં આવી છે । આ પ્રકારનું એક ખીલું દષ્ટાન્ત હવે આપવામાં આવે છે. કોઈએ એક મિખારીને કંઈ પૂછ્યું તો તેણે માંસસેવનની શંકાથી તેને ખીલે જ ઉત્તર આપ્યો જેમ કે—“કન્યાઽઽચાર્યાઽઽઘના તે”—“હું કન્યા-ધારી મિશ્વુક ! તારી કન્યામાં સ્થળે સ્થળે છિદ્ર કેમ દેખાય છે ? નાના આ તો માછલા પકડવાની બળ છે, તો શું ? તમે માછલી પણ ખાવ છો ? હાં પણ તે મધ્ય સેવન વગર ખરાખરા લાગતી નથી તો શું તમે મધ

यत् प्रकृतसाध्यानुपयोगि दार्ष्टान्तिकेन सह साधर्म्याभावात्तद् दुरुपनीतम् ,
यथा नित्यः शब्दः कार्यत्वाद् घटवदित्यत्र दृष्टान्ते घटे नित्यत्वधर्मो नास्ति इति
तत्साधर्म्यात् शब्दस्य नित्यत्वं कथं सिद्धयेत् अनित्यतैव पर्यवस्यतीति तृतीयं ज्ञातम् ३।

अथ चतुर्थं ज्ञातमाह—‘ उवन्नासोवणए .’ इत्यादि ।

‘ उवन्नासोवणए ’ उपन्यासोपनयश्चतुर्धा भवति—तद्वस्तु—तदन्यवस्तु, प्रति-
निभ—हेतु—भेदात् । तत्र प्रथमं भेदमाह—‘ तव्वत्थुए ’ इति तद्वस्तुकम् तदेव=

हांकिन्तु अकेला नहीं वह वेश्याके साथही पीता हूं, तो क्या तुम वेश्याके
यहांभी जाते हो? दुश्मनोंके गले पर पैर रखकर जाता हू,
तुम्हारे दुश्मन कहाँसे हुवे? मैं जिनके घर पर खात लगाता हूं वे मेरे
शत्रु हो जाते हैं । तो क्या तुम चोरीभी करते हो? हां, जुबके लिये सब
कुछ करना पड़ता है ऐसा क्यों करते हो? मैं दासी पुत्र हूं इसलिये ॥१॥
दार्शनिक दृष्टिसे इस दुरुपनीतका तात्पर्य ऐसाही निकलता
है कि जो प्रकृत साध्यमें उपयोगी नहीं होता है अनुपयोगी रहता है
वह दुरुपनीतहै क्योंकि दार्ष्टान्तिकमें इसके साधर्म्यका अभाव रहता है
जैसे—“ नित्यः शब्दः कार्यत्वात् घटवत् ” कार्य होनेसे घटकी तरह
शब्द नित्य है । यहाँ घट दृष्टान्तमें नित्यत्व धर्म नहींहै इसलिये उसके
साधर्म्यसे शब्दमें नित्यता कैसे सिद्ध हो सकती है इससे तो अनि-
त्यताही सिद्ध होती है ३

पणु पीवो छो ? डा, पणु ओकलो नथी पीतो वेश्यानी साथे न पीठ छुं,
तो शुं तमे वेश्याने त्यां पणु नव छो ? डा दुश्मनना गजा पर पग राभीने
नडं छुं, तमारे वणी दुश्मन कथाथी ? हुं जेना धरोभां भातर पाडुं छुं
तेओ मारा दुश्मन जने छे. तो शुं ? तमी भातर पणु पाओ छे । जुगार
भाटे तेम करवुं पडे छे. तो डे धूर्त आवुं तुं शा भाटे करे छे ?
हुं दासीना पुत्र छुं ओ भाटे ? ” आ पणु दुश्पनीतनुं दृष्टान्त छे.

दार्शनिक दृष्टिसे आ दुश्पनीतना लावार्थ ओवो थाय छे के जे प्रकृत
साध्यमां उपयोगी थतुं नथी पणु अनुपयोगी न थछ पडे छे, तेने दुश्पनीत
कडे छे, कारण के दार्ष्टान्तिकनी साथे तेना साधर्म्यना अभाव रडे छे.

जेमके—“ नित्यः शब्दः कार्यत्वात् घटवत् ” “ कार्य होवाथी घट (घडा)नी
जेम शब्द नित्य छे ” अडीं घट दृष्टान्तमा नित्यत्व धर्मने न अभाव
होवाथी तेना साधर्म्य वडे शब्दमां नित्यता केवी रीते सिद्ध थछ शके ? आ
दृष्टान्त वडे तो शब्दमां अनित्यता न सिद्ध थाय छे.

પરોપન્યસ્તસાધનમેવ વસ્તુ. ઇતિ ઉત્તરભૂતં વસ્તુ યસ્મિન્નુપન્યાસોપનયે સ તદ્-
સ્તુકઃ । અથવા તત્ પરોપન્યસ્તં વસ્તુ. ઇતિ તદ્વસ્તુ, તદેવ તદ્વસ્તુકં તેન યુક્ત
ઉપન્યાસોપનયોપિ તદ્વસ્તુક ઇતિ કથ્યતે । યથા કશ્ચિદાહ—મો મોઃ શૃણુત મદીય-
ગ્રામે મહદેકં સરઃ, તત્પરિસરે મહાન્ શાલ્મલીતરુર્વિઘટે તસ્ય યાનિ પર્ણાનિ જલે
પતંતિ તાનિ જલચરા જીવા ભવન્તિ, યાનિ ચ સ્થલે પતન્તિ તાનિ ચ સ્થલચરા
ભવન્તીતિ છોકાનાં કુતૂહલાર્થમિત્યં નિવેદિતમ્, તત્ર તદુપન્યસ્તમેવ તાદૃશતરુ-
પત્રપતનવસ્તુ, અધિકૃત્ય કેનચિદુક્તં મો ? યાનિ પત્રાણિ ભૂમિજલયોરન્તરાલે
પતન્તિ તેપાં કા સ્થિતિરિતિ, ઉપપત્તિમાત્રમુત્તરભૂતં વસ્તુ તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસો-

ચૌથા જ્ઞાત જો ઉપન્યાસોપનયહૈ ત્રહ ચાર પ્રકારકાહૈ જૈસે—તદ્વસ્તુક
૧, તદન્યવસ્તુક ૨ પ્રતિનિભ ૩ ઓર હેતુ ૪ જિસ ઉપન્યાસોપનયમે
પરકે દ્વારા દિયા મયા સાધનહી વસ્તુરુપ હોતા હૈ અર્થાત્ ઉત્તરરુપ હોતા
હૈ વહ તદ્વસ્તુક હૈ । અથવા—પરોપન્યસ્તવસ્તુરુપ વસ્તુકસે યુક્ત જો ઉપ
ન્યાસોપનય હૈ વહ મી તદ્વસ્તુક કહલાતા હૈ; જૈસે કિસીને કહા-
હે માઈઓ ! સુનો મેરે માંવમેં એક વડા મારી તાલાવ હૈ ઉસકે તટ પર
એક વહુત વડા સેમરકા વૃક્ષહૈ ઉસકે પત્તે જિતને જલમેં ગિરતેહૈં વે સવ
જલચર જીવોંકે રુપમેં પરિણતહો જાતે હૈં, ઓર જિતને પત્તે જમીન પર
ગિરતેહૈં વે સવ સ્થલચર જીવોંકે રુપમેં પરિણત હો જાતેહૈં એસા જો ઉસને
કહા સો લોકોંકો કુતૂહલ ઉત્પન્ન કરાનેકે લિયે કહા હસ પર કિસી
દૂસરેને ઉસસે કહા કિ માઈ ! યહ તો વનામો કિ જો પત્તે ભૂમિ ઓર

ચોથા જ્ઞાત (ઉદાહરણ) રૂપ જે ઉપન્યાસોપનય છે, તેના નીચે પ્રમાણે
ચાર પ્રકાર છે—(૧) તદ્વસ્તુક, (૨) તદન્યવસ્તુક, (૩) પ્રતિનિભ અને (૪) હેતુ
જે ઉપન્યાસોપનયમાં અન્યના દ્વારા આપવામાં આવેલું સાધન જે વસ્તુરૂપ
હોય છે એટલે કે ઉત્તર-રૂપ હોય છે, તેનું નામ તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોપનય છે.

અથવા—પરોપન્યસ્ત વસ્તુરૂપ વસ્તુકથી યુક્ત જે ઉપન્યાસોપનય છે
તેને પણ તદ્વસ્તુક કહે છે. જેમકે—કોઈ પુરુષે આ પ્રમાણે કહ્યું—“ હે ભાઈઓ ?
મારા ગામમાં એક ઘણું વિશાળ તળાવ છે. તેના કાંઠા પર એક મોટું સેમર
(શીમળા)નું વૃક્ષ છે. તેનાં જેટલાં પાન પાણીમાં પડે છે, તે બધાં જલચર
જીવો રૂપે પરિણમી જાય છે અને જેટલાં પત્તાં જમીન પર પડે છે તે બધાં
સ્થલચર જીવો રૂપે પરિણમી જાય છે.” તેણે આ પ્રકારનું જે કથન કર્યું
તે લોકોમાં કુતૂહલ ઉત્પન્ન કરવા નિમિત્તે કહેવામાં આવ્યું હતું. ત્યારે
કોઈએ તેને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો—“ એ તો બતાવો કે જે પાન ભૂમિ

पनय इतिः १। द्वितीयभेदमाह—‘ तदन्नवत्थुए ’ इति । परोपन्यस्तवस्तुनो भिन्न मुत्तरभूतं वस्तु यस्मिन्नुपन्यासोपनये स तदन्यवस्तुकः यथा—तत्रैवोदाहरणे जले पतितानि पर्णानि जलचराः इति कथिते तद्विघटनाय पर्णपतनाद् भिन्नमुत्तर-माह—यानि पर्णानि पुनः दण्डादिना पातयित्वा खादति नयति वा स्वगृहं तस्य का गतिः भवति ? न काऽपीत्यर्थः । यद्येवं तर्हि यानि पत्राणि जले स्थले वा

जलके अन्तरालमें गिरते हैं उनकी क्या दशा होती है इस प्रकारका उपपत्ति-भात्र जो उत्तरभूत वस्तु है वही तद्वस्तुक उपन्यासोपनय है क्योंकि कहनेवाले जो सेभरके वृक्षके पत्रोंके गिरनेके बारेमें कहा है उसेही लेकर दूसरेने उससे ऐसा कहा है इस उत्तररूप कथनसे यही सिद्ध किया गया है कि जिस प्रकार अन्तरालपतित पत्र पत्तोंके रूपमें रहते हैं उसी प्रकारसे पानी और स्थलपर पतित पत्र भी पत्तोंकेही रूपमें रहते हैं इस प्रकारका यह उत्तरकथन तद्वस्तुक उपन्यासोपनय है

“ तदन्नवत्थुए ” जिस उपन्यासोपनयमें परोपन्यस्त वस्तुसे भिन्न उत्तरभूत वस्तु होती है, ऐसा वह उपन्यासोपनय तदन्यवस्तुक है । जैसे—इसी पूर्वोक्त उदाहरणमें जब उसने ऐसा कहा कि जलमें पतित पत्ते जलचर हो जाते हैं तो जिन पत्तोंको वह दण्डादिक से गिराकर खाता है या अपने घर पर ले जाता है उसकी क्या हालत होती है ? यहाँ जो

अने जलना अन्तरालमां पडे છે, તેમની શી દશા થાય છે ? ” આ પ્રકારની બે ઉપપત્તિ-ભાત્ર રૂપ ઉત્તરભૂત વસ્તુ છે, તેનું નામ જ તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોપનય છે કારણ કે કહેનાર વ્યક્તિએ સેમર વૃક્ષના પાન પડવાથી તેમનું શું થાય છે તે કહ્યું છે અને બીજી વ્યક્તિએ પણ એ સેમર વૃક્ષના પાન જમીન અને પાણીના અન્તરાલમાં પડવાથી તેમનું શું થાય છે એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે. આ ઉત્તર-રૂપ કથનથી એજ વાત સિદ્ધ કરવામાં આવી છે કે બે પ્રકારે અન્ત-રાલપતિત પત્તાં પાન રૂપે જ રહે છે એજ પ્રમાણે જલપતિત અને સ્થલપતિત પત્તાં પણ પાનરૂપે જ રહે છે આ પ્રકારનું આ ઉત્તર કથન તદ્વસ્તુક ઉપન્યાસોપનય રૂપ છે.

“ તદન્યવસ્તુક ”—બે ઉપન્યાસોપનયમાં પरोपन्यस्त वस्तु करता-भिन्न उत्तरभूत वस्तु-હોય છે, એવા ઉપન્યાસોપનયને તદન્યવસ્તુક કહે છે.

જેમકે-પૂર્વોક્ત ઉદાહરણમાં પડેલી વ્યક્તિએ જ્યારે આ પ્રકારનું કથન કર્યું કે “ જલમાં પડેલાં પત્તાં જલચર રૂપે પરિણમી જાય છે, ” ત્યારે તેને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછી શકાય—“ બે પત્તાંને તમે લાકડી આદિ વડે પાડીને ખાઓ છો અથવા તમારે ઘેર લઈ જાઓ છો તેમની શી હાલત

पतन्ति तान्यपि जलचरजीवत्वेन स्थलचरजीवत्वेन वा भवितुं नार्हन्ति मनुष्याद्याश्रित-
तपत्राणीव । यथा—मनुष्याद्याश्रितानि पत्राणि मनुष्यादिभवयूकादि रूपतया
न सम्पद्यन्ते तथैव जलस्थलपतितानि पत्राण्यपि जलचरस्थलचरजीवत्वेन
भवितुं नार्हन्ति, यदि तानि तथा सम्पद्यन्ते तर्हि मनुष्याद्याश्रितानि पत्राण्यपि
यूकादितया सम्पद्यन्ताम्, मनुष्याद्याश्रितानि तु न तथा भवन्ति, इति जलस्थल-
पतितान्यपि तानि न जलचरत्वेन स्थलचरत्वेन च भवितुमर्हन्तीति ।

तृतीयभेदमाह-‘पडिनिभे’ इति प्रतिनिभ इति यत्रोपन्यासोपनये वादिना उपन्यस्त-

पूछनेवालेने उससे जो पूछा है वह अपने आप गिरे हुए पत्तोंसे भिन्न
रूपसे गिराये गये पत्तोंके विषयमें पूछा है अतः इस प्रकारका यह
भिन्न रूपसे उच्चर पूछना रूप कथन उसका यही वात साधित कर देता
है कि उनकी जैसी वह गति होनेकी वात कहना है, वैसी उनकी गति
नहीं होती है वे तो मनुष्याश्रित पत्तोंकी तरहसेही पत्तोंके रूपमें बने
रहते हैं नतो वे जलचर जीव रूपसे परिणमित होते हैं और न स्थलचर
जीव रूपसे परिणमित होते हैं अर्थात् जिस प्रकारसे मनुष्यादिकोंमें
होनेवाले यूकादि रूपसे वे पत्ते नहीं परिणमते हैं उसी प्रकारसे जल-
स्थल पतित पत्तेभी जलचर स्थलचर जीव रूपसे नहीं परिणम सक्रते
हैं यदि वे उस रूपसे परिणमते होते तो मनुष्याद्याश्रित पत्ते भी यूकादि
रूपसे परिणमित होने चाहिये परन्तु वे तो उस प्रकारसे परिणमित
होते नहीं हैं ।

“ पडिनिभे ”—जिस उपन्यासोपनयमें वादीके द्वारा उपन्यस्त

थाय छे ? ” अर्थात् प्रश्न कर्ताके पडेली व्यञ्जितने के प्रश्न पूछये छे ते पोतानी
जते तूरी पडेलां पत्तांथी सिन्न इपे नीये पाडवाभां आवेलां पान विपे पूछये
छे. तेथी आ प्रकारने आ सिन्न इपे उत्तर जणुवा इप तेनुं कथन जेज
वात सिद्ध करे छे के जेवी रीते मनुष्याश्रित पान जुहे इपे परिणुमतां नथी
जेज प्रभाणे जलपतित पान पणु जलचर जेवे इपे परिणुमन पामतां
नथी, अने स्थलपतित पान स्थलचर जेवे इपे परिणुमता नथी. जेटके
के जेभ मनुष्यादि जेवेनी पासे रडेलां पान यूकादि इपे (जुं लीण आदि
इपे) परिणुमतां नथी, जेज प्रभाणे जण अने स्थलपतित पत्ता पणु जल-
चर अने स्थलचर जेवे इपे परिणुमतां नथी. जे तेओ ते इपे परिणुमतां
डोत तो मनुष्यादिने आश्रित पत्तांओ पणु जुं, लीण आदि इपे परिणुमित
थवां ज जेजये. परन्तु जेवुं अनतुं नथी.

“ पडिनिभे ” “ प्रतिनिभ ”—जे उपन्यासोपनयभां वादी द्वारा उप-

पदार्थस्योत्तरदानाय सदृशमेव वस्तु उपनीयते स प्रतिनिधः, यथा-आसीत्कश्चिद्राजा, स इत्थमघोषयत्-यः अपूर्णं श्लोकं-श्रावयिष्यति तस्मै लक्षं दास्यामि । तच्छ्रुत्वा अपूर्वान् श्लोकान् श्रावयितुं वहवोपि समागता अथावयंश्च श्लोकान् । तच्छ्रुत्वा राजोवाच एते तु मया श्रुता एव, ततोऽन्यः कोपि गत्वा इत्थं गाथामपठत्-

“ तुञ्ज पिया मज्जपिउणो, धारेइ अप्पणयं सयसहसं ।

जइ सुयपुव्व दिज्जउ, अह न सुयं खोरयं देहि ” ॥ १ ॥

छाया- तव पिता मम पितु धारयत्यनून शतसहस्रम् ।

यदि श्रुतपूर्वं ददातु, अथ न श्रुतं कटोरकं देहि ॥ १ ॥

उपस्थित किये गये पदार्थके उत्तर देनेके लिये सदृशही वस्तुका उपनय होना है सदृशही वस्तु उपस्थित की जाती है वह-प्रतिनिध उपन्यासोपनय है जैसे-किसी राजाने ऐसी घोषणाकी-जो सुझे अपूर्व इलोक सुनावेगा उसके लिये मैं एक लाख रुपया प्रदान करूँगा इस उसकी घोषणाको सुनकर अनेक विद्वानोंने अपूर्व २ इलोकोंकी रचना करके उसे उन्हे सुनाया उत्तरमें राजाने कहा-ये इलोक तो मैंने सुनेही हैं तब किसीने जाकर इस गाथाको उसे सुनाया-

“ तुञ्ज पिया मज्ज पियणो ” तुम्हारे पिता पर मेरे पिताके एक लाख रुपया लेना है, यदि यह बात तुमने पहिलेसे सुन रखी है तो १ लाख रुपया सुझे दो और जो नहीं सुनी है तो भी सुझे १ लाख रुपया दो क्योंकि मैंने आपको यह अपूर्व श्लोक सुनाया है ।

न्यस्त उपस्थित करवाना आवेला पदार्थको उत्तर देनेके लिये सदृश (समान) वस्तुको न उपनय थाय छे-अमान वस्तु न उपस्थित कराय छे ते प्रतिनिध उपन्यासोपनय छे. जेभके कौठ अेक रान्ने अेवी न्ढेरात करी के जे कौठ माणुस भने अपूर्व (पडेलां न सांभण्यो डोय अेवे) श्लोक संभणायसे तेने हुं अेक लाख इपीआनुं धनाम आपीश.

आ घोषणा सांभणीने अनेक विद्वानोअे अपूर्व श्लोको अनावीने तेने सांभणाय्या. तेमने रान्ने आ प्रमाणे न्वाण आपते “ आ श्लोक तो अे पडेलां सांभणेला छे ” त्थार भाइ कौठ अेउ माणुसे ते रान्ने पासे न्धने तेने आ श्लोक सांभणाय्ये “ तुञ्ज पिया मज्जपियणो ” धत्याहि-

“ तमारा पिताण पासे मारा पिताण्णा अेक लाख इपीया लेण्णा छे जे आ वात आपे पडेलां सांभणेला डोय तो ते लेण्णा चेठे अेक लाख इपीया आपे, अने आ वात तमे सांभणेला न डोय तो अपूर्व श्लोक सांभणवाना धनाम तरीके भने अेक लाख इपीया आपे.

અપિ ચ—

સ્વસ્તિ શ્રી મોજરાજ ! ત્રિભુવનવિજયી ધાર્મિકસ્તે પિતાઽભૂત,
પિત્રાતે મે ગૃહીતા નવનવતિ યુતા રત્નહોટિર્વદીયા ।

તાસ્ત્યં દેહિ પ્રદેયૈઃ સકલ્લુબ્ધગણે જ્ઞાયતે વૃત્તમેતત્,

નો વા જાનન્તિ નૂનં નવકૃતમથવા દેહિ લક્ષં તત્તો મે ” ॥૧॥૬૩૮

એવં પ્રકારેણ તત્ર નિગૃહીતો રાજા, પ્રતિનિભતા ચાસ્યાસત્યવચનં ત્રુવાણં
પ્રત્યસત્યવચનસ્યૈવોપન્યાસાદિતિ ।

ચતુર્થભેદમાહ — ‘ હેઝ ’ હિતિ, હેતુઃ — યત્રોપન્યાસોપનયે

તથા—“ સ્વસ્તિ શ્રી મોજરાજ ” ઇત્યાદિ । હસ શ્લોકક્રા ભાવ
મ્હી પૂર્વોક્ત શ્લોકકો અનુસારહી હૈ હસમેં મોજરાજકે પિતાકો ત્રિભુવન-
વિજયી ઓર ધાર્મિક પ્રકટ ક્રિયાં મયા હૈ નિન્યાનવે ૯૯ કમોઢ રત્ન
ઉન પર મુજો લેના હૈ એમા કર્જા હસમેં કહા ગયા હૈ અતઃ વહ તુમ
મુજો દો યહ જ્ઞાત યહાં કે સવ વિદ્વાનોંકો જ્ઞાત હૈ ઓર યદિ વે હમ
જ્ઞાતસે અનમિજ્ઞ હૈં તો હમારી કૃતિ યહ અપૂર્વ હૈ અતઃ હસે અપૂર્વ
હોનેકે કારણ આપ હમેં અવની ચોપણાકે અનુસાર ૧ લાખ રુપયા
પ્રદાન કીજિયે ।

હસ પ્રકારસે રાજા નિગૃહીત પરાસ્ત હો જાતાહૈ યહાં હસ કથનમેં જો
પ્રતિનિભતા આઈ હૈ, વહ અમત્ય વચન ઘોલનેકે પ્રતિ “ મૈને વે શ્લોકનો
સુનેહી હૈં—હસ પ્રકારસે કહનેવાલે રાજાકે પ્રતિ અસમ્ય વચનકે ઉપ-
ન્યાસ કરનેસેહી આઈ હૈ, કયોંકિ વાદીકે દ્વારા ઉપન્યસ્ત પદાર્થકા ઉત્તર

તથા—“ સ્વસ્તિશ્રી મોજરાજ ” ઇત્યાદિ. આ શ્લોકનો ભાવાર્થ પણ ઉપ
યુક્ત શ્લોક જેવો જ છે આ શ્લોકમાં ભોજરાજના પિતાને ત્રિભુવનવિજયી
અને ધાર્મિક કૃષ્ણ છે, અને તેમની પાસે પોતાનું (આ અપૂર્વ શ્લોક બના-
વનારનું) ૯૯ કરોડ રત્નનું લેણું છે. મારી આ વાત અહીંના સર્વ પડિતો
જાણે છે. જો તેઓ આ વાતને ન જાણતા હોય તો મારી આ કૃતિ અપૂર્વ
હોવાને કારણે આપે જાહેર કર્યા અનુસાર એક લાખ રૂપીઆનું ધનમ મને
મળવું જોઈએ

આ પ્રકારે રાજા પરાસ્ત થાય છે એમું બનાવવામાં આવ્યું છે.

આ કથનમાં પ્રતિનિભતા કેવી રીતે આવી છે તે હવે સમજાવવામાં
આવે છે—“ મેં ” આ શ્લોક પહેલાં સાંભળેલો છે. ” આ પ્રકારના અસત્ય-
વચન બોલનારની સામે “ મારા બાપાનું તમારા પિતાશ્રી પાસે એક લાખ
રૂપીઆનું લેણું છે ” આ પ્રકારના અસત્ય વચનને ઉપન્યાસ કરવાથી તેમાં
પ્રતિનિભતા આવી છે. કારણ કે વાદીના દ્વારા ઉપન્યસ્ત પદાર્થને ઉત્તર તેના
જેવી જ વસ્તુ વડે અપાયો છે. જેમ પહેલાં રામએ જૂઠાણાને આશ્રય લીધે

पर्यनुयोगस्य (प्रश्नस्य) हेतुरुत्तरतया कथ्यते स हेतुरिति, यथा केनापि कश्चित् पृष्ठः—अहो ! त्वया यथाः किं क्रीयन्ते ? स प्राह—येन सुधैव न लभ्यन्ते, एवं कस्माद् ब्रह्मचर्यादिकमनुष्ठीयते उत्तरमाह—अकृततपसां नरके वेदना भवति । यद्वा—कस्मात्त्वया प्रव्रज्या गृहीता ? तां विना मोक्षो न भवतीति । इह उपपत्तिमात्रमेवेदं ज्ञानत्वेनोक्तमर्थज्ञापकत्वादिति ४।

उसकी जैसी सदृश वस्तुसेही दिया गया है राजाने पहिले झूठ कहा घादमें श्लोक उपस्थित करनेवालोंने भी उसमें उसके जैसाही असत्य वस्तुका उल्लेख कर उसे परास्त किया है।

“हेउ”—जिस उपन्यासोपनयमें पर्यनुयोग-प्रश्नका हेतु उत्तर रूपसे कहा जाता है वह हेतु उपन्यासोपनय है जैसे—किसीने किसी से पूछा तुम यवोंको क्यों खरीद करतेहो ? उत्तरमें उसने कहा ये विना खरीद किये प्राप्त नहीं होतेहैं। ब्रह्मचर्यादिकका पालन क्यों किया जाताहै ? उत्तरमें कहा गया है जो तपस्या नहीं करते हैं उन्हें नरकमें वेदना भोगनी पड़ती है अथवा—तुमने प्रव्रज्या क्यों ग्रहण की है ? उत्तरमें कहा गया है—उसके विना मोक्ष नहीं होता है । इन सब कथनोंमें प्रश्नही उत्तर रूपमें कहा गया है क्योंकि जब पूछनेवालेने ऐसा पूछाहै कि जौ को तुम खरीद क्यों करते हो ? तब उत्तरमें ऐसा कहा गयाहै कि वे विना खरीद किये प्राप्त नहीं होतेहैं इसलिये उन्हें खरीद किया जाताहै इसी तरहसे

होता तेम अपूर्व श्लोक उपस्थित करनार पुरुषे पशु असत्यनो न आश्रय लभते—
लेषा इप असत्य वस्तुनो ते श्लोकमां उद्वेष करीने—ते राजने परास्त कर्थां हतो.

“ हेउ ”—“ हेतु ”—जे उपन्यासोपनयमां पर्यनुयोग प्रश्ननो हेतु उत्तर
इपे कडेवामां आवे छे तेने “ हेतु उपन्यासोपनय ” कडे छे. जेम के—
कोधजे कोधने पूछ्यु—“ तमे नव शा माटे ખરીદ કરો છો ? ”
उत्तर — “ ते ખરીદા વગર મળતા નથી. ” प्रश्न — “ ग्रहणार्थ
आदिनुं पालन शा माटे कराय छे ? ” उत्तर — “ जेजो तपस्या
करता नथी तेमने नरकमां वेदना लोगववी पडे छे. ” प्रश्न—“तमे प्रव्रज्या केम
अडलु करी छे ? ” उत्तर—प्रव्रज्या अडलु कर्थां विना मोक्ष मगतो नथी. ” आ
अर्थां कथनोमां प्रश्न न उत्तर इपे कडेवामां आव्यो छे. कारण के न्यारे
प्रश्नकर्ता जेजो प्रश्न करे छे के “ तमे शा माटे नव ખરીદ કરો છો ? ”
त्यारे उत्तर इपे जेजुं कडेवामां आव्यु छे के “ ખરીદ કર્યાં વિના નવ
મળતા નથી, તેથી તેને ખરીદ કરવામાં આવે છે. ” जे न प्रमाणे अन्य

અથ હેતોશ્ચાતુર્વિધ્યમાહ—‘હેઝ્ચઝ્ચિહે’ ઇત્યાદિ । હેતુઃ—હિનોતિ ગમયતિ
જ્ઞેયમિતિ હેતુઃ સાધ્યનિરૂપિતવ્યાપ્તિમાન્ અન્યથાઽનુપપત્તિ લક્ષણઃ યથા પર્વતો વહ્નિ-
માન્ ધૂમાન્યથાનુપપત્તેરિતિ, તદુક્તમ્—“ અન્યથાઽનુપપન્નત્વં હેતોર્લક્ષણમીરિતમ્-
તદપ્રસિદ્ધિસન્દેહવિપર્યાસૈસ્તદામતા ” ॥ ૧ ॥ અત્ર શ્લોકપૂર્વાર્દ્ધેન હેતોર્લક્ષણમ્,

અન્ય પ્રશ્નોંકે ઉત્તરમેં બી એસાહી સમજના ચાહિયે જો પ્રશ્ન કિયા
ગયા હૈ વહી ઉત્તર રૂપમેં યહાં પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ ।

“હેઝ્ ચઝ્ચિહે” હેતુ ચાર પ્રકારકા કહા ગયાહૈ—યાપક૧, સ્થાપક૨,
વ્યંસક૨ ઓર લૂષક૪ જો જ્ઞેયકા ગમક-વતાનેવાલા હોતાહૈ વહ હેતુહૈ ।
યહ હેતુ અપને સાધ્યકે સાથ અવિનાભાવ સંબન્ધ રૂપ વ્યાપ્તિવાલા હૈ
“સાધ્યાવિનાભાવિત્વેન નિશ્ચિતો હેતુઃ” એસા હેતુકા લક્ષણ કહા ગયાહૈ
જો અપને સાધ્યકે સાથ અવિનાભાવ સંબન્ધવાલા હોતાહૈ વહી હેતુ હોતાહૈ
યહ હેતુ અન્યથાનુપપત્તિ હૈ લક્ષણ જિસકા એસા હોતાહૈ યહાં અન્યથા
શબ્દસે સાધ્યકે વિના લિયા ગયાહૈ ઓર અનુપપત્તિ શબ્દસે હેતુકા નહીં
હોના લિયા ગયા હૈ જૈસે—“ પર્વતોઽયં વહ્નિમાન્ ધૂમાન્યથાનુપપત્તેઃ ” યહ
પર્વત અગ્નિવાલાહૈ ક્યોંકિ ધૂમકી અન્યથા(અગ્નિકે વિના)અનુપપત્તિ હોતાહૈ
વિના અગ્નિ કે ધૂમ હોતા નહીંહૈ, પર વહહૈ, હસસે પર્વતમેં અગ્નિહૈ યહ વાત
પ્રમાણિત-અનુમિત હો જાતીહૈ યહી વાત—“અન્યથાનુપપન્નત્વં હેતોર્લક્ષણ-

પ્રશ્નોના ઉત્તરો વિષે પણ એવું સમજવું નેઈ એ કે જે પ્રશ્ન કરવામાં આવ્યો
છે, તેને જ ઉત્તર રૂપે અહીં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે.

“હેઝ્ ચઝ્ચિહે” હેતુના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧)
યાપક, (૨) સ્થાપક, (૩) વ્યંસક અને (૪) લૂષક.

જે જ્ઞેયને ણતાવનાર હોય છે તેનું નામ હેતુ છે. આ હેતુ પોતાના
સાધ્યની સાથે અવિનાભાવ સંબંધ રૂપ વ્યાપ્તિવાળો હોય છે. “સાધ્યાવિના-
ભાવિત્વેન નિશ્ચિતો હેતુ” એવું હેતુનું લક્ષણ કહ્યું છે. જે પોતાના સાધ્યની
સાથે અવિનાભાવ સંબંધ વાળો હોય છે એનું નામ જ હેતુ છે. તે હેતુ
અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાળો હોય છે. અહીં “અન્યથા” પદ સાધ્ય વિનાનું
વાચક છે અને ‘અનુપપત્તિ શબ્દ હેતુના અભાવનો વાચક છે. એટલે
કે સાધ્યનો અભાવ હોય તો હેતુનો પણ અભાવ જ હોય છે. જેમકે—“પર્વતો-
ઘ્યમ્ વહ્નિમાન્ ધૂમાન્યથાનુપપત્તેઃ” “આ પર્વત અગ્નિવાળો છે, કારણ કે
ધૂમાડાની અન્યથા (અગ્નિ વગર) અનુપપત્તિ જ હોવી નેઈએ એટલે કે ધૂમાડા
વિના અગ્નિ હોતી નથી, ધૂમાડો છે એટલે અગ્નિ પણ હોવી નેઈએ, આ વાત
તેના દ્વારા પ્રમાણિત—અનુમાનિત થઈ જાય છે એજ વાત—“અન્યથાનુપપ-

अपरभागेन तु हेत्वाभासानां लक्षणं प्रतिपादितम् । उपन्यासोपनये उक्तो हेतुः पृष्टस्योत्तररूपमुपपत्तिमात्रम्, अत्र तु अयं साध्य प्रति अन्वयव्यतिरेकज्ञान् दृष्टान्तदर्शितव्याप्तिमान् । असौ यद्यपि एकस्वरूपोपि किञ्चिद्विशेषात् चतुर्धा भवति—यापक—स्थापक—व्यसकलूपकभेदात् । तत्र 'जाइए' इति—यापयति वादिनः कालयापनां यः करोति स यापको हेतुः । यथा सचेतना वायवः पर-प्रेरणेष्वसत्सु तिर्यगनियतत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीरवत्, अत्र हेतुविशेषण

मीरितम्, तदप्रसिद्धिसन्देहत्रिपर्यासैस्तदाभता " इत्य श्लोक द्वारा प्रकटकी गई है । यहाँ श्लोकके पूर्वार्द्धसे हेतुका लक्षण कहा गया है और अपर भागसे हेत्वाभासोंका लक्षण कहा गया है । उपन्यासोपनय में उक्त हेतुका पृष्ट प्रश्नके उत्तररूपमें उपपत्ति मात्र—कथन मात्र होना है परन्तु यहाँ वह साध्यके प्रति अन्वयव्यतिरेक सम्बन्धवाला और दृष्टान्तसे दर्शित व्याप्तिवाला होता है यह यद्यपि एक स्वरूप होता है तो भी किञ्चित् विशेषताको लेकर यापक आदिके भेदसे चार प्रकारका हो जाता है—

जो हेतु, वादीकी कालयापना करता है वह यापक हेतु होता है कालयापक वही हेतु होता है जो विशेषण बहुल होना है ऐसे हेतुके उच्चारण करनेमें वादीको विशेष समय लगता है जैसे—“ सचेतना वायवः परप्रेरणेष्वसत्सु तिर्यगनियतत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीर-वत् ” वायु संचित्त होता है, बिना प्रेरणा ही तिर्यक् और अनियत, गमन करने वाला होने से, गाय के शरीर के समान इस अनुमानप्रयोगमें “गतिमत्त्वात् ” हेतुके “ परप्रेरणे असति

न्नत्वं हेतुर्लक्षणमीरितम् तदप्रसिद्धिसन्देहत्रिपर्यासैस्तदाभता ” आ श्लोक द्वारा प्रकट करवाया आया है अर्थात् श्लोकना पूर्वार्ध द्वारा हेतुनु लक्षण कहेवाया आया है अने अपरार्ध द्वारा हेत्वाभासोंनु लक्षण कहेवाया आया है । उपन्यासोपनयमां उक्त हेतुनु पृष्ट प्रश्नना उत्तर रूपमां उपपत्ति मात्र—कथन मात्र होय है, परन्तु अर्थात् ते साध्यनी साथे अन्वयव्यतिरेक सम्बन्धवाणो अने दृष्टान्त द्वारा दर्शित व्याप्तिवाणो होय है । ते जे के एक न स्वरूप वाणो होय है, छता पण थोडी थोडी विशेषताने लीधे तेना यापक आदि चार लेह कहे है ।

जे हेतु वादीनी कालयापना करे है—धणो काण शुभावे ले है—ते हेतुनु नाम 'यापक हेतु' है, कालयापक जे न हेतु होय है के जे विशेषणानी विपुस्ततावाणो होय है, जेवा हेतुनु उच्चारण करवायां वादीने धणो समय लागे है जेभ के—“ सचेतना वायवः परप्रेरणेष्वसत्सु ” तिर्यगनियतत्वाभ्यां गतिमत्त्वात् गोशरीरवत् ” वायु संचित्त होय है, जीतनी प्रेरणा वगर न तिर्यक् अने अनियतगमन करवावाणो होवाथी आ अनुमान प्रयोगमां “गतिमत्त्वात्” हेतुना आ विशेषणो है—“ परप्रेरणे असति तिर्यगनियतत्वं ” आ अहुल विशेषणो है, आ

बहुलतया प्रतिपादितः दुरधिगमत्वात् कालं यापयति अतो यापको हेतुरिति । यद्वा—काचित्कुलटा स्वपतेः कालयापनां कर्तुं कथितवती—अहो ! सांप्रतमुद्ग्लि-
ण्डानि महार्घाणि जातान्यतस्तानि गृहीत्वा नगरे गच्छ, तत्र एकैकरूप्यकेण एकैकं
लिण्डं देयमिति तद्विक्रयार्थप्रेषणोपायेन जारसेवायां कालयापनां कृतवतीति
यापको हेतुः । अथवा—यो हेतुर्जाटिति साध्यं न प्रत्याययति किन्तु कारुक्षेपेण,
स कालयापकत्वात् यापको हेतुः, यथा—‘ सर्वं वस्तु क्षणिकं सत्त्वात् ’ इत्यत्र

तिर्यगनियतत्वं ” ये बहुल विशेषण हैं विशेषणबहुल हेतु दुरधिगम हो
जाता है—उसका समझना बड़ा कठिन हो जाता है इसलिये ऐसा हेतु
दुरधिगम होनेसे काल यापक होता है अर्थात् प्रनिवादी उस हेतुको
बड़ी देरमें समझ पाता है इसलिये उसके भी कालकी यापना होती
है यद्वा—किसी कुलटाने अपने कालकी यापना करनेके निमित्त पतिसे
ऐसा कहा—देखो इस समय ऊंटके मेंगणाओंकी बहुत कीमत बढ़ गई
है इसलिये तुम उन्हें लेकर नगरमें जाओ और वहां एक २ रुपयामें
उन्हें बेच आओ इस प्रकार उसने अपने पतिको मेंगणों बेचनेके
वहानेसे उसके वापिस आने तकके समयमें अपने समयको उपपत्तिके
साथ काल व्यतीत किया । इस प्रकार यहाँ यह हेतु कालयापक होता
है अथवा जो हेतु शीघ्रतासे अपने साध्यका गमक नहीं होता है, किन्तु
देरीसे अपने साध्यका गमक होता है ऐसा वह हेतु कालयापक होनेसे

प्रकारना विशेषणोनी विपुलतावाणो डेटु दुरधिगम (समन्वेो घण्णो कठिन) थर्ध नय
छे. ते कारण्णे-दुरधिगम डोवाने-कारण्णे अवेो डेटु कालयापक डोय छे-तेने समय
नवामां घण्णो समय लागे अवेो डोय छे. अट्टे के प्रतिवादी ते डेटुने सम-
नवामां घण्णो काल व्यतीत करी-नाणे छे, तेथी तेना कालनी पणु यापनाथाय छे.

अथवा—कोई कुलटाके पोते छिछित समय व्यतीत करवाने माटे तेना
पतिने कहुं—“ डालमां ङांटन लीं डालोनी कीमत पूष न वधी गड छे.
तेथी तमे अत्यारे न आपणुा ङांटना लीं डालो लधने नगरमां लओओ अने
तेने अेक इपीआना अेकना लावे वेथी आवेो ” आ प्रकारे तेण्णे तेना
पतिने ङांटना लीं डालो वेचवाने भडाने गाममां भोकलीमे, ते पाछे करे
त्यां सुधीनेा काल पोताना यारनी साथे व्यतीत कर्यो. आ प्रकारे अही आ
डेटु कालयापक थर्ध पडे छे. अथवा ने डेटु शीघ्रताथी पोताना साध्यनेा
गमक (नणुनारेो) डोतो नथी, पणु घणुा समय पछी पोताना साध्यनेा
नणुनारेो डोय छे अवेो ते डेटु कालयापक डोवाथी यापक इय डोय छे.

सर्ववस्तुनः क्षणिकत्वं साधयितुं बौद्धैः 'सत्त्वात्' इति हेतुरूपन्यस्तः । नहि कश्चित् सत्त्वश्रवणादेव क्षणिकत्वं प्रत्येति, अतो बौद्धाः सत्त्वं क्षणिकत्वेन साधयन्ति, सत्त्व नामार्थक्रियाकारित्वमेव, अन्यथा, बन्ध्यासुतस्यापि सत्त्नप्रसङ्गः, अर्थक्रियाकारित्वं तु नित्यस्यैकरूपत्वान्न कथंचिदपि संभवति, अतो नित्यविद्यस्य क्षणिकस्यैव अर्थक्रियाकारित्वरूपं सत्त्वं सिध्यति । इत्थं च सत्त्वं क्षणिकत्वव्याप्त-

यापक होता है जैसे "सर्व वस्तु क्षणिकं सत्त्वात्" समस्त वस्तुएँ सत्त्व विशिष्ट होनेसे क्षणिकहैं, इस प्रकारके अनुमानसे बौद्धोंने समस्त पदार्थोंमें क्षणिकता-क्षणविनश्वरताकी सिद्धि जो सत्त्व हेतुसेकी है सो इस हेतुके सुनतेही कोईभी व्यक्ति इस हेतुसे पदार्थोंमें क्षणिकताकी प्रतीति झटिति नहीं कर पाताहै अतः फिर वह समझाताहै कि "यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थसत्" जो अर्थक्रियाकारी अर्थरूप क्रियाको करनेवाला होताहै वही परमार्थतः सत् होताहै यदि अर्थ क्रियाकारीकोही सत् न माना जावे तो बन्ध्याके पुत्रमेंभी सत्त्व मानना पड़ेगा अतः जब यह बात मानली जाती है कि जो अर्थ क्रियाकारी होना है वही परमार्थसे सत् है तो फिर जो सर्वथा नित्य पदार्थ है कूटस्थ नित्य है उसमें अर्थक्रियाकारिता आती ही नहीं है, क्योंकि वह नित्य तो एक रूपही होता है यदि उसमें अर्थक्रियाकारिता मानी जावे तो वह फिर एकरूप नहीं रह सकता है एकरूप नहीं रह सकनेसे वह नित्य नहीं

जेभके—“सर्ववस्तु क्षणिकं सत्त्वात्” समस्त वस्तुओं सत्त्वविशिष्ट होवाथी क्षणिक छे,” आ प्रकारना अनुमानथी औधे समस्त पदार्थोंनी क्षणिकता—क्षणलंगुरतानी सिद्धि जे सत्त्वडेउ द्वारा करी छे, ते डेउने सांलणतां जे कोध पणु व्यक्ति ते डेउ द्वारा पदार्थोंमां क्षणिकतानी प्रतीति जेदीथी (तुरत जे) करी शकती नथी तेथी जे तेभणे आ प्रकारे तेनी विशेष स्पष्टता करी छे—“यदेवार्थक्रियाकारि तदेव परमार्थ सत्” “जे अर्थ क्रियाकारी होय छे जे जे परमार्थतः (स्वभावतः) सत् होय छे जे अर्थ क्रियाकारीने सत् न मानवामां आवे तो वंध्या पुत्रमां पणु सत्त्व मानवुं पडशे जेटले के वंध्याने पुत्र होवानी बात पणु स्वीकारवी पडशे. तेथी जे आ बात मानी लेवामां आवे के “जे अर्थ क्रियाकारी होय छे जे जे परमार्थतः सत् इप छे,” तो जे सर्वथा नित्य पदार्थ छे कूटस्थ नित्य छे तेमां अर्थ क्रियाकारिता सभवती जे नथी, कारण के ते नित्य तो जेक इप जे होय छे. जे तेमां अर्थक्रियाकारिता मानवामां आवे तो ते जेक इप रही शकते नथी, अने जेक इप नहीं रही शकवाथी तेने नित्य कडी शकते नथी, कारण के नित्यनुं

મેવ । एवं साध्यसाधने कालो यापितो भवतीति कालयापनाकारिणादयं सत्त्व-
लक्षणो हेतुर्यापक इति । द्वितीयभेदमाह—‘ थावण ’ इति । स्थापयति पक्षं
शीघ्रतया अर्थात् प्रसिद्धव्याप्तिकतया समर्थयतेऽति स्थापको हेतुरिति । यथा पर्वतो-

कहा जा सकता है, क्योंकि नित्यका तो लक्षण “ अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरै
करूपं नित्यं ” अप्रच्युत-नाश न हो उत्पन्न न हो और स्थिर रहे वह
नित्य है ऐसा कहा गया है हमलिये यह मानना पड़ता है कि
अप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकरूपवाले पदार्थमें किसी भी तरहसे न कालकी
अपेक्षासे न देशकी अपेक्षासे अर्थ क्रिया होती है अतः नित्यसे
भिन्न जो क्षणिक पदार्थ है उसमेंही अर्थ क्रियाकारिता आती है और
इसीसे उसीमें सत्त्व व्यवस्थापित होता है इन प्रकारसे सत्त्व और
क्षणिकत्वकी व्याप्ति सिद्ध होकर वह सत्त्व, क्षणिकत्वसेही व्याप्त सिद्ध हो
जाता है । इस प्रकार कहकर वह बौद्ध अपने अभीष्ट साध्यको सिद्ध
करनेमें प्रदत्त सत्त्व हेतुकी सिद्धि करनेमें समय व्यतीत करता है अतः
सत्त्व यह हेतुकाल यापनाकारी होनेसे अपने साध्यकी सिद्धि करानेमें
अधिक समयको खर्च करनेवाला होनेसे यापक होना है—

“ थावण ” जो हेतु अपने साध्यके साथ प्रसिद्ध व्याप्तिवाला होनेसे
शीघ्रताके साथ उमका स्थापक होता है समर्थन करनेवाला होता है
ऐसा वह हेतु स्थापक हेतु होता है । जैसे—“ पर्वनोऽयं वह्निमान् धूम-

લક્ષણુ તેા આ પ્રમાણે કહ્યું છે—“ અપ્રચ્યુતાનુત્પન્નસ્થિરૈકરૂપં નિત્ય ” તેથી
એમ માનવું પડે છે કે “ જેનો નાશ નથી અને જેની ઉત્પત્તિ નથી એવા
સ્થિર રૂપ વાળા પદાર્થમાં કોઈ પણ રીતે-કાળની અપેક્ષાએ અથવા દેશની
અપેક્ષાએ—અર્થક્રિયા હોતી નથી તેથી નિત્યથી ભિન્ન એવો જે ક્ષણિક
પદાર્થ છે તેમાં જ અર્થક્રિયાકારિતા સંભવિત છે અને તેથી જ તેમાં સત્ત્વ
વ્યવસ્થાપિત થાય છે. આ પ્રકારે સત્ત્વ અને ક્ષણિકત્વની વ્યાપ્તિ સિદ્ધ થઈને
સત્ત્વક્ષણિકત્વથી જ વ્યાપ્ત સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે કહીને તે બૌદ્ધ
પોતાના અભીષ્ટ સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં—પ્રદત્ત સત્ત્વ હેતુની સિદ્ધિ કરવામાં
સમય વ્યતીત કરે છે તેથી સત્ત્વરૂપ હેતુ કાળયાપનાકારી હોવાથી પોતાના સાધ્યની
સિદ્ધિ કરાવવામાં અધિક સમય વ્યતીત કરનાર હોવાથી યાપક રૂપ હોય છે.

હવે “ થાવણ ” સ્થાપક હેતુનો અર્થ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—જે
હેતુ પોતાના સાધ્યની સાથે પ્રસિદ્ધ વ્યાપ્તિવાળો હોય છે, અને તે કારણે
શીઘ્રતાથી તેનો સ્થાપક અથવા સમર્થન કરનારો હોય છે, એવા હેતુનું નામ

વહ્નિમાન્ ધૂમાત્, તથા નિત્યાનિત્યં વસ્તુ દ્રવ્યપર્યાયતસ્તથૈવ પ્રતીયમાનત્વાત્
અનયો પ્રતિપાદિતહેત્વોર્જાતવ્યાપ્તિકતયા ઙ્ઙટિત્યેવ સાધ્યસ્ય સમર્થનાત્ ભવતિ
સ્થાપકત્વમુભયોર્હેત્વોઃ । યદ્વા-કસ્મિશ્ચિદ્ ધૂર્તે પરિવ્રાજકે-’ લોકમધ્યભાગે દત્તં
વહુફલં ભવતિ, તચ્ચાહમેવ જાનામિ ઇતિ માયયા પ્રતિગ્રામમન્યાન્યલોકમધ્યં
પ્રરૂપયતિ સતિ તન્નિપ્રહાય કશ્ચિન્મુનિરાહ-મ્હો પરિવ્રાજક ! લોકમધ્યભાગસ્ત્વેકો

વત્વાન્, અથવા નિત્યાનિત્યાત્મકં વસ્તુ દ્રવ્યપર્યાયતસ્તથૈવ પ્રતીય-
માનત્વાત્ ” યહાં ધૂમ ઓર વહ્નિકી “યત્ર ૨ ધૂમસ્તત્ર તત્ર વહ્નિઃ” ઇસ
રૂપસે વ્યાપ્તિ પ્રસિદ્ધ હૈ અતઃ “ ધૂમ ” હેતુ શીઘ્રતાસે અપને સાધ્ય
અગ્નિકા સ્થાપક હોતા હૈ ઇસી પ્રકાર પ્રત્યેક વસ્તુ દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે
નિત્ય ઓર પર્યાયકી અપેક્ષાસે અનિત્ય માની ગઈ હૈ તો ઇસસે યહ
બાત ઙ્ઙટિતિ સ્થાપિત હો જાતી હૈ વસ્તુ નિત્યાનિત્યાત્મક હૈ । અતઃ યે
દોનોં હેતુ અપને સાધ્યકે શીઘ્રતાસે ગમક હોનેકે કારણ ઉસે ઘતાનેમ્
સમર્થ હોનેસે સ્થાપક હોતે હૈ ।

યદ્વા-કિસી ધૂર્ત પરિવ્રાજકને માયાસે એસી પ્રરૂપણા પ્રત્યેક ગ્રામમ્
હરેક લોકકે સમક્ષ કી-કિ લોકકે મધ્ય ભાગમ્ દિયા ગયા દાન
વહુત ફલવાલા હોતા હૈ ઇસ બાતકો કેવલ મ્મ્ હી જાનતાહ્મં તચ ઉસકી
ઇસ પ્રરૂપણાકે નિગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત ઉસસે કિસી મુનિને કહા-મ્હો

સ્થાપક હેતુ છે. જેમકે—“ પર્વતોઽયં વહ્નિમાન્ ધૂમવત્વાત્ ” અથવા—“ નિત્યા
નિત્યાત્મકં વસ્તુ દ્રવ્યપર્યાયતસ્તથૈવ પ્રતીયમાનતાત્વાત્ ” અહીં ધુમાડા અને
અગ્નિની “ જ્યાં જ્યાં ધુમાડો હોય છે ત્યાં ત્યાં અગ્નિ હોય છે ” આ રૂપે
વ્યાપ્તિ પ્રસિદ્ધ છે. તેથી ધૂમરૂપ હેતુ પોતાના અગ્નિરૂપ સાધ્યને શીઘ્રતાથી
સ્થાપક બને છે.

એ જ પ્રમાણે પ્રત્યેક વસ્તુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ નિત્ય અને પર્યાયની
અપેક્ષાએ અનિત્ય મનાય છે તેથી એ વાત શીઘ્રતાથી સ્થાપિત થઈ જાય છે
કે વસ્તુ નિત્યાનિત્યાત્મક છે. આ બંને હેતુ પોતાના સાધ્યને શીઘ્રતાથી ગ્રહણ
કરાવનારા હોવાથી તેમને બતાવવામાં સમર્થ હોય છે તે કારણે આ પ્રકારના
હેતુને સ્થાપક કહ્યો છે અથવા-કોઈ એક ધૂર્ત પરિવ્રાજકે માયાલાવથી યુક્ત
થઈને પ્રત્યેક ગામમાં પ્રત્યેક મનુષ્યની સમક્ષ એવી પ્રરૂપણા કરવા માંડી કે
“ લોકના મધ્ય ભાગમાં અર્પણ કરવામાં આવેલું દાન મહોશ્વલ પ્રદાન કર-
નારું હોય છે, આ વાત કેવળ હું જ જાણું છું ” ત્યારે તેની આ મિથ્યા
પ્રરૂપણાને રોકવાને માટે કોઈ મુનિએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું—“ હે પરિવ્રા-

भवति तत् कथं बहुषु ग्रामादिषु तत्संभव, इत्येवं युक्त्या त्वदर्शितो लोकमध्यभागो न भवतीति पक्षं स्थापितवानिति स्थापको हेतुः । तृतीयभेदमाह—‘ वंसए ’ इति । व्यंसकः—व्यंसयति परान् व्यामोहयतीति व्यंसको हेतुः यथा—केनचित् प्रयुक्तम् अस्ति जीवोऽस्तिघटः इति स्वीकारे जीवघटयोरस्तित्वं समानरूपतया वर्तते इति जीवघटयोरेकता—प्राप्यते अभिन्नशब्दविषयत्वात्, घटशब्दविषयघटस्वरू-

परिव्राजक । लोकका मध्यभाग तो एकही होता है फिर वह प्रत्येक ग्राममें अलग २ रूपमें कैसे संभवित हो सकता है अतः तुम्हारे द्वारा प्रदर्शित लोक मध्यभाग ठीक नहीं है इस तरहसे उसने अपने पक्षको स्थापित कर लिया इस प्रकारसे अपने पक्षका स्थापन करनेवाला हेतु स्थापक होता है ।

“ वंसए ” जो हेतु परको व्यामोहित कर लेना है—व्यामुग्ध कर देता है—वह व्यंसक हेतु है जैसे—किसीने कहा—“ अस्ति जीवः अस्ति घटः ” इस पर किसीने कहा यदि जीव और घटमें समान रूपसे अस्तित्व रहता है तो जीव और घटमें एकता प्राप्त होती है, क्योंकि उन दोनोंका अस्तित्व अभिन्न शब्दका विषयभूत होता है अर्थात् जीव और घटमें रहा हुआ अस्तित्व “ अस्तित्व ” इस एकही शब्दके द्वारा वाच्य होता है जैसे घट शब्दसे घट और घटका स्वरूप वाच्य होता है अतः एक शब्द वाच्य होनेसे घट और घटके स्वरूपमें अभिन्नता

જક! લોકનો મધ્ય ભાગ તો એક જ હોય છે. તો તે પ્રત્યેક ગામમાં અલગ અલગ રૂપે કેવી રીતે સંભવી શકે છે? તે કારણે તમે પ્રત્યેક ગામ લોકના મધ્ય ભાગ રૂપ હોવાની જે પ્રેરણા કરો છો તે મિથ્યા છે” આ રીતે તે મુનિએ પોતાની માન્યતાનું પ્રતિપાદન કર્યું. આ પ્રકારે પોતાના પક્ષનું સ્થાપન કરનારો હેતુ સ્થાપક રૂપ હોય છે.

“ વંસપ ” વ્યંસક હેતુ—જે હેતુ પરને વ્યામોહિત (વ્યામુગ્ધ) કરી નાખે છે તે હેતુનું નામ ‘ વ્યંસક હેતુ ’ છે જેમ કે—કોઈએ એવું કહ્યું કે “ અસ્તિ જીવઃ અસ્તિ ઘટઃ ” “ જીવ પણ છે અને ઘટ પણ છે એટલે કે બંનેનું અસ્તિત્વ છે ” ત્યારે કોઈએ એવી દલીલ કરી કે—“ જીવ અને ઘટમાં જે સમાન રૂપે અસ્તિત્વ રહેલું હોય તો જીવ અને ઘટમાં એકતા પ્રાપ્ત થાય છે, કારણ કે તે બંનેનું અસ્તિત્વ અભિન્ન શબ્દને વિષયભૂત હોય છે—એટલે કે જીવ અને ઘટમાં રહેલું અસ્તિત્વ “ અસ્તિત્વ ” આ એક જ શબ્દ દ્વારા વાચ્ય થાય છે. જેમ ઘટ શબ્દથી ઘટ અને ઘટનું સ્વરૂપ વાચ્ય થાય છે, તે કારણે એક શબ્દવાચ્ય હોવાથી ઘટ અને ઘટના સ્વરૂપમાં અભિન્નતા પ્રાપ્ત

पत्र यदि जीवादौ अस्तित्वात् न स्वीक्रियते तदा जीवादीनामभाव एव स्यात् अस्तित्वाभावात् इति प्रतिवादिनो व्यामोहकरणाद् व्यंसकोय हेतुरिति । कश्चिदन्तराललब्धतित्तिरीयुक्तेन शकटेन नगरप्रविष्टः । तत्रैकेन धूर्तेन कथितम्-शकटतित्तिरी कथं लभ्यते ? तेन ज्ञातम्—‘अयं किल शकटस्थितां तित्तिरीं याचत इत्यभिप्रायेण कथितवान्-तर्पणालोडिकयेति । ततो धूर्तः सतित्तिरिक्

आती है इसी प्रकारसे जीव और घटका अस्तित्व भी एक अस्तित्व शब्दसे वाच्य होने के कारण एकही माना जावेगा और इसकी एकतासे जीव और घटमें भी एकत्व आनेका प्रसङ्ग प्राप्त होगा यदि कहा जावे कि हम जीवादिकमें अस्तित्व स्वीकार नहीं करते हैं तो जीवादिकोंमें अनस्तित्व आनेसे उनका अभावही स्वीकार करना पड़ेगा, अतः इस तरह के कथनसे जो प्रतिवादीका हेतुवादीको व्यामोह उत्पन्न कर देताहै वह हेतु व्यंसक कहा गया है इस पर दूसरा दृष्टान्त इस प्रकारसेभी है—कोई शकटवाहक गाड़ीवान् अपनी गाड़ीको जोतकर किसी दूसरे गाँव जा रहा था रास्तेमें उसने एक तित्तिरी पकड़ कर अपनी गाड़ीमें रखली चलते २ वह किसी नगरमें पहुँच गया वहाँ किसी एक धूर्तने उससे कहा—इस शकट तित्तिरीका क्या लेते हो? अर्थात् शकट तित्तिरी कितनेमें देते हो? तब उसकी बातको सुनकर शकटवाहकने ऐसा समझा कि यह शकटमें रखी हुई इस तित्तिरीको माँग रहा है तब उसने

थाय छे, ओ न प्रभाषे एव अने घटतुं अस्तित्व पणु ओक अस्तित्व शब्द द्वारा वाच्य होनाथी ओक न मानवुं पडशे अने तेनी ओकताने लीधे एव अने घटमां पणु ओकत्व मानवाने। प्रसंग प्राप्त थशे. ले ओम कडे-वामां आवे के अमे एवादिक्ना अस्तित्वने स्वीकार करता नथी, तो एवा-दिकेमां अनस्तित्व प्राप्त थवाने कारणे तेमने अभाव न स्वीकारवो पडशे.”

आ प्रकारना कथन द्वारा प्रतिवादीने हेतु वादीमां व्यामोह उत्पन्न करी नाणे छे, तेथी ते हेतुने वाचक कडेवामां आव्यो छे. आ वातनुं प्रतिपादन करवाने भाटे नीचे प्रभाषे दृष्टान्त आपवामां आव्युं छे—कोई ओक गाडावाणे पोतानुं गाडुं ओडीने कोछ भीजे गाम नछ रह्यो छतो रस्तामां तेणु ओक तित्तिरी पकडी. ते तित्तिरीने पोताना गाडामां मूडीने तेत्यांथी आगण वधयो, अने कोछ ओक नगरमां आवी पडोअ्यो. त्यां कोछ ओक धूर्ते तेने पूछ्युं. “आ शकटतित्तिरीने केटवामां वेचवानी छे?” (आ द्वि अर्थी शब्दप्रयोग छे. (१) शकट साथे तित्तिरी (२) शकटमां रडेवी तित्तिरी) तयारे गाडावा-णाओ तेने कहुं—आ शकटतित्तिरी (गाडामां रडेवी तित्तिरी) हुं तर्पणा

શકટં ગ્રહીતું પ્રૃત્તઃ । તેનોક્તં મદીયમેતત્ શકટમ્ । ધૂર્તેનોક્તમ્—ત્વમેવ શકટ-
તિત્તિરીતિ કથયિત્વા દનવાન્ અતોઽહં શકટમ્પ્રહતાં તિત્તિરીં ગૃહ્ણામીતિ સાક્ષિણ
આહૂય સતિત્તિરીકં શકટં જગ્રાહ । તતો વિવણ્ણઃ શાકટિક્ક ઇતિ શાકટિક્કવ્યા-
મોહકરણાદયં વ્યંસકો હેતુઃ । ચતુર્થભેદમાહ—‘ લૂપ્પ’ ઇતિ । લૂપ્કઃ—લૂપ-
યતિ સ્વળ્ણડયતિ ધૂર્તાપાદિતમનિષ્ઠમિતિ લૂપ્કો હેતુઃ યથા—સ એવ શાકટિકોઽ-
ન્યધૂર્ત્તસમીપે ગત્વા યુક્તિં શિક્ષિત્વા સમાગતસ્તં ધૂર્ત્તમવાદીત્—મોઃ । તર્હિં દેહિ

કહા હસ શકટ તિત્તિરીકો મેં તર્પણાલોડિકા....(સત્તૂ)મેં દેતા હું તવ વહ
ધૂર્ત તિત્તિરી સહિત શકટકો લેને લગા, શકટવાહકને કહા—યહ તુમ કયા
કરતે હો ? ગાડી તો મેરી હૈ તવ ધૂર્તને કહા—તુમનેહી તો “ શકટતિ-
ત્તિરી ” એસા કહકર હસે તર્પણાલોડિકામેં દેના સ્વીકાર ક્રિયા હૈ
હસલિયે મેં શકટ સહિત તિત્તિરીકો લેનાં હું તુમ નહીં ગાનો તો હન
ગવાહોંસે પૂછ લો હસ પ્રકારસે ડસને ડસકી સતિત્તિરીક ગાડીકો લે
લિયા તવ વહ શાકટિક્ક ચિન્તિત હો ગયા હસ તરહસે શાકટિક્કકો
વ્યામોહ કર દેનેકે કારણ યહ વ્યંસક હેતુ હૈ ।

“ લૂપ્પ ” જો હેતુ દ્વારા ધૂર્તજન આપાદિત અનિષ્ટકા સ્વળ્ણન
કર દેતા હૈ એસા વહ હેતુ લૂપ્ક હોતા હૈ—જૈસે જવ ડસ શાકટિક્કકી
વહ ધૂર્ત ગાડી લે લેતા હૈ તવ વહ શાકટિક્ક અન્ય ધૂર્તોંકે પાસ જાતા
હૈ ઓર ડનસે યુક્તિકો સીસકર પુનઃ ડસ ધૂર્તકે પાસ આતા હૈ ઓર

લોડિકામાં (તાવડી કે કડાહી અગર સાયવાને ખટલે) વેચું છું” ત્યારે તે ધૂર્ત ગાડા
તથા તિત્તિરીને લઈને ચાલવા માંડ્યો ત્યારે ગાડાવાળાએ તેને કહ્યું—“આ તમે
શું કરો છો ? મારી ગાડી શા માટે લઈ બંધો છો ? ” પેલા ધૂર્તે જવાબ
આપ્યો—“ તમે જ શકટતિત્તિરી (ગાડું અને તિત્તિરી) તર્પણલોડિકાના
ખટલામાં આપવાની વાત કબુલ કરી છે, તેથી હું શકટ અને તિત્તિરી લઈ
બંધું છું. જો તને મારી વાત માનવામાં ન આવતી હોય તો આ બધાં
સાક્ષીઓને પૂછીને ખાતરી કરી લે ” આ પ્રમાણે તે ધૂર્તે તેના શકટ અને
તિત્તિરીને પડાવી લીધાં. તેથી તે ગાડાવાળો ચિન્તિત થઈ ગયો. આ પ્રકારે ગાડી
વાળાને વ્યામોહિત કરી નાખનારો હોવાને કારણે આ હેતુ વ્યંસકહેતુ રૂપ છે.

“ લૂપ્પ ” લૂપ્ક હેતુ—જે હેતુ ધૂર્તજન દ્વારા આપાદિત અનિષ્ટનું
ખંડન કરી નાખે છે એવા હેતુને લૂપ્ક હેતુ કહે છે. એમ કે—

ઉપર્યુક્ત દેશાન્તમાં ગાડીવાળાની ગાડી તે ધૂર્ત લઈ બંધ છે એમ કહે-
વામાં આવ્યું છે. ત્યારબાદ તે ગાડીવાળો કેઈ બીજા ધૂર્ત પાસે જઈને
ગાડી પાછી મેળવવાની યુક્તિ શીખી લે છે અને ત્યાર બાદ પોતાની ગાડી

मे तर्पणालोडिकामिति । धूर्तेन स्वभार्या प्रोक्ता-अस्मै सक्तूनालोड्य देहीति । तां च तथा कुर्वतीं तद्भार्या गृहीत्यासौ गन्तुं प्रवृत्तोऽवादीच्च धूर्तम्-मदीयेयं भार्या तर्पणमिति सक्तूनालोडयतीति तर्पणालोडिकेति त्वयैव दत्तत्वादिति लूषकोऽयं हेतुः । सचायं जीवघटयोरेकत्वं व्यंसकः स्थापितवान् तत्र लूषको वदति यदि अस्तित्वाविशेषाज्जीवघटयोरेकत्तमापाद्यते तदा सर्वभावानामेवैकत्वं स्यात् यतः सर्वत्रास्तित्ववृत्तेः समानत्वात् नचैवं दृश्यते संभाव्यते वा ततोयं जीव-

कहता है हे भाई लाभो तुम मुझे तर्पणालोडिका दे दो, धूर्त्तने जाकर अपनी भार्या से कहा-तू इसे सक्तू सानकर दे दे । जब वह सक्तू सानने लगी तो यह उस स्त्रीको लेकर चलने लगा और धूर्त्तसे बोला- यह भार्या मेरी है, क्योंकि तर्पणके निमित्त जो सक्तूको सानती है वह तर्पणालोडिका है तर्पणालोडिकाको तुम्हींने मुझे कीमतमें देना स्वीकार कर लियाहै । इस प्रकारसे यह हेतु लूषकहै व्यंसकने जो जीव और घट में पूर्वोक्त रूपसे एकत्व स्थापित किया है अतः लूषक इस पर उससे कहता है कि यदि अस्तित्वकी अविशेषता लेकर तुम जीव और घटमें एकत्वकी स्थापना करते हो तो सर्व भावोंमेंही एकत्व हो जावेगा क्योंकि सर्व भावोंमें अस्तित्व रहता है परन्तु ऐसी बात न कहीं देखी जाती है और न संभवित ही होती है इस तरहसे जीव घटमें एकताका

लघु जनार पेला धूर्त्त भासे जन्ने कडे छे के “ लार्घ, लाओ मने तर्पणालोडिका आपी हो ” त्यारे ते धूर्त्त तेने पोताने घेर लघु गये। अने तेणे पोतानी यत्नीने कछुं—“ तुं कछुक आंधीने आने तर्पणालोडिका दधुं हो ” न्यारे ते कछुक आंधवा भांडी त्यारे पेला गाडीवाणो ते धूर्त्तनी स्त्रीने लघुने आलतो थयो. जतां जतां तेणे ते धूर्त्तने कछुं—“ आ भारी लार्घा छे. ते तर्पणने निमित्ते सत्त (लोटनी कछुक अथवा साथवो) आंधती डती माटे ते तर्पणालोडिका छे. शकटतित्तरीना णहलाभां मने तर्पणालोडिका आपवानी वात ते कण्णु करी डती (अडी तेना णीजे अर्थ लोढी के कडाही थाय छे). आ प्रकारने आ लूषक डेतु सभजवो. व्यंसक डेतु द्वारा लव अने घटभां पूर्वोक्त रूपे जे ऐकत्व स्थापित करवामा आओयुं छे तेनुं लूषक डेतु द्वारा आ प्रमाणे णउत कराय छे जे अस्तित्वनी अविशेषता (समानता) ने लीधे तमे लव अने घटभां ऐकत्वनी स्थापना करता डो, तो सर्व भावोभां पणु ऐकत्व मानवानो प्रसंग उस्थित थरो, कारण के सर्व भावोभां अस्तित्व रडे छे परन्तु ऐवुं कही जेवामां पणु आवतुं नथी अने ऐवुं ऐकत्व संभवित पणु डेतुं नथी. आ प्रकारे लव अने घटभां ऐकतानुं

ઘટયોરેકત્વાપાદનરૂપસ્યાભાવાપત્તિરૂપસ્ય વા પરાપાદિતાનિષ્ટસ્યાનેન લૂપિ-
તત્વાત્ લૂપકો હેતુ ભવતીતિ ।

પુનર્હેતોશ્ચાતુર્વિધ્યમાહ—‘ અહવા હેઝ ચઝવિહે ’ ઇત્યાદિ । અથવા હેતુશ્ચતુ-
ર્વિધ ઇત્યત્ર અથવાશબ્દો હેતોઃ પ્રકારાન્તરઘોતકસ્તતઃ—‘ અથવા હેતુશ્ચતુર્વિધઃ ’
ઇતિ । હિનોતિ ગમયતિ પદાર્થમિતિ હેતુઃ, હીયતેઽધિગમ્યતે પદાર્થોઽનેનેતિ
હેતુઃ પદાર્થાવગમં પ્રતિ પ્રમાણમિતિ । સ ચતુર્વિધઃ પ્રત્યક્ષાનુમાનોપમ્યાગમભેદાત્ ।
તત્ર પ્રથમં ભેદમાહ—‘ પચ્ચક્ષ્વે ’ ઇત્યાદિ । પ્રત્યક્ષમ્-અશ્નુતે વ્યાપ્નોત્યર્થાનિતિ
અક્ષઃ=આત્મા તં પ્રતિ યદ્વર્તતે જ્ઞાનં તત્પ્રત્યક્ષમ્-નિશ્ચયનયતોઽવધિમનઃપર્યયકેવલજ્ઞા-

આપાદન કરનેવાલા અથવા અભાવકી આપત્તિ પ્રકટ કરનેવાલા જો
પરોક્ત અનિષ્ટ હૈ ઉસકો યહ લૂપિન કર દેના હૈ-હટા દેના હૈ હસલિયે
યહ લૂપક હેતુ હૈ

અત્ર અન્ય પ્રકારસેમી હેતુકી ચતુષ્પ્રકારતા પ્રકટ કરનેકે
લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં ।

“અહવા હેઝ ચઝવિહે” ઇત્યાદિ—યહાં અથવા શબ્દ, પ્રકારાન્તરકા
ઘોતક હૈ, જો પદાર્થકા ગમક (બોધક) હોતા હૈ અથવા પદાર્થ જિસકે
દ્વારા જાના જાતા હૈ વહ હેતુ હૈ । યહ હેતુ પદાર્થકે જાનનેમૈં પ્રમાણરૂપ
હોતાહૈ । પ્રત્યક્ષઅનુમાનઉપમાન ઓર આગમકે ભેદસે યહ પ્રમાણરૂપ હેતુ
ચાર પ્રકારકાહૈ ઇનમૈં “પચ્ચક્ષ્વે” પ્રત્યક્ષ પ્રમાણકા સ્વરૂપ ઁસાહૈ જો જ્ઞાન
અક્ષ-આત્માકી પ્રતિ-સહાયતાસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઇન્દ્રિયાદિકોંકી સહા-
યતાસે નહીં વહ પ્રત્યક્ષહૈ ઁસે પ્રત્યક્ષ અવધિ, મનઃપર્યય, કેવલજ્ઞાન યે

આપાદન કરનારું અથવા અભાવની આપત્તિ પ્રકટકરનારું જે પરોક્ત અનિષ્ટ
છે તેને આ પ્રકારનો હેતુ લૂપિત કરી નાખે છે દૂર કરી નાખે છે, તેથી આ
પ્રકારના હેતુને લૂપક હેતુ કહે છે

હવે સૂત્રકાર હેતુના બીજી રીતે પણ ચાર પ્રકાર પ્રકટ કરે છે—
“ અહવા હેઝ ચઝવિહે ” ઇત્યાદિ—અહીં “ અથવા ” પદ પ્રકારાન્તરનું
ઘોતક છે. પદાર્થનો જેના દ્વારા બોધ થાય છે તેનું નામ હેતુ છે. આ હેતુ
પદાર્થને જાણવામાં પ્રમાણ રૂપ હોય છે. આ પ્રમાણ રૂપ હેતુના નીચે પ્રમાણે
ચાર પ્રકાર છે. (૧) પ્રત્યક્ષ, (૨) અનુમાન, (૩) ઉપમાન અને (૪) આગમ.

“ પચ્ચક્ષ્વે ”—પ્રત્યક્ષ પ્રમાણનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે. જે બોધ) અક્ષ-
આત્માની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે. ઇન્દ્રિયોની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થતો
નથી, તેને પ્રત્યક્ષ કહે છે. એવા પ્રત્યક્ષ અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન અને

નાત્મકમ્ । અથવા અક્ષાણિ=ઇન્દ્રિયાણિ, તાનિ પ્રતિ વર્તેતે યત્ તત્પ્રત્યક્ષમ્ વ્યવહારતશ્ચક્ષુરાદિજનિતં જ્ઞાનમ્ । લક્ષણ પુનરિદં તસ્ય—

“ અપરોક્ષતયાર્થસ્ય, ગ્રાહકં જ્ઞાનમીદશમ્ ।

પ્રત્યક્ષમિતરત્ જ્ઞેયં, પરોક્ષં ગ્રહણેક્ષયા ” ॥ ૧ ॥

ગ્રહણેક્ષયા=ગ્રહણાપેક્ષયેત્યર્થઃ । દ્વિતીયભેદમાહ-‘ અણુમાણે ’ ઇતિ । અણુમાનમ્-અણુ=પશ્ચાત્ લિઙ્ગદર્શનવ્યાપ્તિસ્મરણયોઃ પશ્ચાત્ માનં=જ્ઞાનમણુમાનમ્ । લક્ષણમિદમ્—

ત્રીન જ્ઞાન હૈં ઇનમેં પ્રત્યક્ષતાકા યહ કથન નિશ્ચય નયકાં અપેક્ષાસે હૈં વ્યવહાર નયકી અપેક્ષાસે તો જો જ્ઞાન અક્ષ ઇન્દ્રિયોંકી પ્રતિ-સહાયતાસે ઉત્પન્ન હોતા હૈં વહ પ્રત્યક્ષ હૈં એસા પ્રત્યક્ષજ્ઞાન મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન હૈં પ્રત્યક્ષકા લક્ષણ ઇસ પ્રકારસે કહા ગયા હૈં—

“ અપરોક્ષતયાર્થસ્ય ” ઇત્યાદિ । જો સ્પષ્ટ રૂપસે સર્વથા વિગદ-રૂપસે અર્થકા ગ્રાહક હોતા હૈં વહ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ હૈં તથા જો જ્ઞાન સ્પષ્ટ-રૂપસે પદાર્થકા ગ્રાહક નહીં હોતા હૈં વહ પરોક્ષ હૈં ઇસ ગાથાકા તાત્પર્ય એસા હૈં મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન, ઓર કેવલ-જ્ઞાન ઇસ પ્રકારસે જ્ઞાનકે પાંચ ભેદ માને ગયે હૈં । ઇનમેં આદિકે દો જ્ઞાન પરોક્ષ હૈં ઓર વાકીકે ૩ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ હૈં । પ્રત્યક્ષકે ઓ સકલ પ્રત્યક્ષ ઓર વિકલ પ્રત્યક્ષકે ભેદસે દો ભેદ હૈં અવધિ મનઃપર્યય યે દો દેશ પ્રત્યક્ષ હૈં ઓર કેવલજ્ઞાન સકલ પ્રત્યક્ષ હૈં મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુત-જ્ઞાનકો સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ માના ગયા હૈં વૈસે તો યે પરોક્ષ હૈં ।

કેવળજ્ઞાન છે. તેમને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ પ્રત્યક્ષ કહ્યા છે, વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ તો જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે તેને પ્રત્યક્ષ કહે છે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન આ પ્રકારના પ્રત્યક્ષ છે. પ્રત્યક્ષતું લક્ષણ આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

“ અપરોક્ષતયાર્થસ્ય ” ઇત્યાદિ—જે સ્પષ્ટ રૂપે—સર્વથા વિશદ રૂપે અર્થતું ગ્રાહક હોય છે તે જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ ગણાય છે, તથા જે જ્ઞાન સ્પષ્ટ રૂપે પદાર્થતું ગ્રાહક હોતું નથી તેને પરોક્ષ કહે છે આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જ્ઞાનના પાંચ ભેદ કહ્યા છે. મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મન પર્યયજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન તેમાંથી મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ છે અને બાકીનાં ત્રણ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે. પ્રત્યક્ષના પણ બે ભેદ છે—(૧) સકલ પ્રત્યક્ષ અને (૨) વિકલપ્રત્યક્ષ અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યયજ્ઞાન વિકલ પ્રત્યક્ષ (દેશ પ્રત્યક્ષ) છે અને કેવળજ્ઞાન સકલ પ્રત્યક્ષ છે. મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ હોવા છતાં તે બંનેને સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ માનવામાં આવ્યા

“ સાધ્યાવિનાભુવો લિંગાત્, સાધ્યનિશ્ચાયકં સ્મૃતમ્ ।

અનુમાનં તદ્બ્રાન્તં પ્રમાણત્વાત્ સમક્ષત્રત્ ॥ ૧ ॥

ઈતિ । एतादृशं ज्ञान हेतुजनितमिन्द्रियुपचाराद्धेतुरेवानुमानम् ।

તૃતીયભેદમાહ—‘ ઓવમ્મે ’ ઈતિ । ઔપમ્યમ્—ઉપમા=સાદૃશ્યં તત્સાધનમૌપમ્યમ્ । અનેન ગવ્યેન સદૃશોડસૌ ગૌરિતિ સાદૃશ્યપ્રતિપત્તિરૂપમ્, તથોક્તમ્—

“ ગાં દૃષ્ટ્વાડયમરણ્યેડન્યં, ગવ્યં વીક્ષતે યદા ।

ભૂયોડવ્યવસામાન્ય ભાજં વર્તુલકઠ્ઠકમ્ ॥૧॥

તસ્યામેવત્વવસ્થાયાં, યદ્વિજ્ઞાનં પ્રવર્તતે ।

પશુનૈતેન તુલ્યોડસૌ, ગોપિષ્ઠ ઈતિ સોપમા ॥ ૨ ॥ ”

“ અણુમાણે ” લિઙ્ગ દર્શન ઓર વ્યાપ્તિકે સ્મરણકે પશ્ચાત્ જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ અનુમાન હૈ । હસ અનુમાનકા ંસા લક્ષણ કહાહૈ “ સાધ્યાવિનાભુવો લિઙ્ગાત્ ઈત્યાદિ । સાધ્યકે સાથ અવિનાભાવી લિઙ્ગ સે જો સાધ્યકા નિશ્ચાયકુ જ્ઞાન હોતા હૈ, વહ અનુમાનહૈ યહ અનુમાન અભ્રાન્ત હોનેસે સમક્ષ-પ્રત્યક્ષકી તરહ પ્રમાણ માના ગયા હૈ, અનુમાન જ્ઞાન યદ્યપિ હેતુસે જનિત હોતા હૈ પરન્તુ ઉસે જો યહાં હેતુરૂપ કહા ગયા હૈ વહ ઉપચારસે કહા ગયા હૈ

“ ઓવમ્મે ” ગવ્ય (રોઝ) કે સમાન યહ ગાય હૈ ંસી સાદૃશ્ય પ્રતિપત્તિ-સમાનતાકા જ્ઞાન જિસસે હોતા હૈ વહ ઉપમાન પ્રમાણ હૈ સો હી કહા હૈ ।

“ ગાં દૃષ્ટ્વાડયમરણ્યે ” ઈત્યાદિ । કોઈ મનુષ્ય ગાયકો દેખકર જંગલમ્ ગયા, વહાં ઉસને ‘ગવ્ય’રોઝકો દેખા, તો દેખકર ઉસને વિચાર

છે. “ અણુમાણે ” અનુમાન-લિંગદર્શન (લક્ષણુનું દર્શન) અને વ્યાપ્તિના સ્મરણુ બાદ જે જ્ઞાન થાય છે તેનું નામ અનુમાન છે. તે અનુમાનનું નીચે પ્રમાણુે લક્ષણુ કહ્યું છે—“ સાધ્યાવિનાભુવો લિઙ્ગાત્ ” ઈત્યાદિ—સાધ્યની સાથે અવિનાભાવી લિંગથી જે સાધ્યનું નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન થાય છે તે અનુમાન છે. આ અનુમાન અભ્રાન્ત હોવાથી સમક્ષ નેહલે પ્રત્યક્ષની જેમ પ્રમાણુભૂત માનવામાં આંવ્યું છે, અનુમાન જ્ઞાન જે કે હેતુજનિત હોય છે, પરન્તુ તેને અહીં જે હેતુરૂપ કહેવામાં આંવ્યું છે તે ઉપચારની અપેક્ષાએ—ઔપચારિક રીતે કહ્યું છે

“ ઓવમ્મે ” ઉપમાનપ્રમાણુ—“ આ ગાય રોઝ જેવી છે ” એવી સાદૃશ્ય પ્રતિપત્તિ-સમાનતાનું જ્ઞાન જેના દ્વારા થાય છે તે પ્રમાણુને ઉપમાન પ્રમાણુ કહે છે. એ જ વાત “ ગાં દૃષ્ટ્વાડયમરણ્યે ” ઈત્યાદિ ગાથા દ્વારા મકટ કરી છે. કેઈ એક માણુસ ગાયને નેહને જંગલમાં ગયો. ત્યાં તેણુે

चतुर्थभेदमाह—‘ आगमे ’ इति, आगमः—आगम्यन्ते निर्णीयन्ते पदार्थाजने
नेत्यागमः आसवचनसंपादितं विप्रकृष्टार्थविषयकं ज्ञानम् ।

तदुक्तम्—“ दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात्परमार्थाभिधायिनः ।

तस्य ग्राहितयोत्पन्नं ज्ञानं शाब्दं प्रक्रीर्तितम् ” ॥ १ ॥

आसोपज्ञमनुल्लङ्घ्य महष्टेष्टविरोधकम् ।

तत्रोपदेशकृतसर्वं शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ २ ॥ इति ४।

‘ कापथघट्टन ’—मिति कुपथव्यावर्त्तकमित्यथः ’

क्रिया जैसे—गायके अवयव हैं उसका कण्ठ गोल है, इसी तरहसे
इसके भी हैं इस तरहसे अवयवोंकी समानतावाले वर्तुल कण्ठवाले
उस रोझको देखकर यह ऐसा ज्ञान कर लेता है कि इस पशुके तुल्य
गोपिण्ड है, इस तरहका जो उस मनुष्यको ज्ञान हुआहै वह उपमान है

“ आगमे ” पदार्थों का निर्णय जिससे क्रिया जाना है वह आगम
है यह ऐसी आगम शब्दकी व्युत्पत्ति है तात्पर्य इससे यही निकलता
है कि “ आसवचनादिनिबन्धनमर्थज्ञानमागमः ” आसके वचनसे
उत्पन्न हुआ जो विप्रकृष्टार्थका सूक्ष्म अन्तरित और दूरार्थका ज्ञान है
वह आगम है ।

तदुक्तम्—“ दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात् ” इत्यादि । जिसके वचनमें
दृष्ट और इष्ट प्रमाणसे—प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाणसे वाधा नहीं
आती है और जो पदार्थका स्वरूप जैसा है, वैसाही उसे कथन करता

कोई एक शब्द जेथु तेने जेईने तेना मनमां जेवो विचार थयो के—
“ जेवां गायनां अवयवो छे, जेवां ज आ रोजना अवयवो छे. गायनी जेम
रोजनेो कंठ पशु वर्तुणाकार छे ” आ प्रकारे अवयवोनी समानतावाणा अने
वर्तुणाकार कंठवाणा ते रोजने जेईने तेने जेवुं लान थाय छे के आ पशु
समान गोपिंड छे. आ प्रकारनु ते मनुष्यने जे ज्ञान थाय छे ते उपमान इय छे.

“ आगमे ” पदार्थानो निर्णय जेना द्वारा करवामां आवे छे ते आगम
छे, ” जेवी आगम पहनी व्युत्पत्ति थाय छे. तेनुं तात्पर्य नीचे प्रमाणे
छे—“ आसवचनादिनिबन्धनमर्थज्ञानमागम ” आसपुरुषेना (अर्द्धत केव-
दीना) वचन द्वारा उत्पन्न थयेलुं जे विप्रकृष्टार्थनुं सूक्ष्म अन्तरित अने दूरा-
र्थनुं ज्ञान छे, ते आगम छे कहु पशु छे के—“ दृष्टेष्टाव्याहताद्वाक्यात् ”
इत्यादि—जेमनां वचनमां दृष्ट अने इष्ट प्रमाणथी—प्रत्यक्ष अने अनुमान
प्रमाणथी—कोई आधा (वाधा) नउती नथी, अने जे पदार्थाना स्वरूपने जेवुं

પુનરપિ હેતોશ્ચાતુર્વિધ્યમાહ—‘ અહવા હેઝ ચઽઞ્ચિહે ’ ઇત્યાદિ । અત્રત્વન્ય-
થાનુપપન્નત્પલક્ષણહેતુજન્યત્વાદનુમાનમેવ કાર્યે કારણોપચાગત્ હેતુઃ । સ ચતુ-
ર્વિધઃ ચતુર્ભંગીરૂપત્વાત્ । તત્ર પ્રથમં ભેદમાહ—‘ અત્યિત્તં અત્યિ સો હેઝ ’ ઇતિ ।

હૈ એસે આપ્ત પુરુષકે વચનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો યથાર્થ જ્ઞાન હૈ વહ શાન્દ આગમ જ્ઞાન હૈ । યહ આગમ વીતરાગ સર્વજ્ઞ ઓર હિતોપદેશીસે પ્રણીત હોતા હૈ વાદી પ્રતિવાદી ઇસકા સ્વરૂપન નહીં કર સકતે હૈ । પ્રત્યક્ષ ઓર અનુમાન ઇનમેંસે કિસીભી પ્રમાણસે ઇસમેં વાધા નહીં આતી હૈ વસ્તુકે યથાર્થ સ્વરૂપકા યહ પ્રતિપાદક હોતા હૈ સઘ જીવોંકા હિત સાધક હોવા હૈ ઓર મિથ્યામતરૂપ જો કુપય ડસસે દૂર કરાને-
વાળા હોતા હૈ ।

“ અહવા-હેઝચઽઞ્ચિહે ” યહાં અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાલે હેતુસે ઉત્પન્ન હોનેકે કારણ અનુમાનહી કાર્યમેં કારણકે ઉપચારસે હેતુ કહા ગયા હૈ તાત્પર્ય ઇમ કથનકા એસા હૈ કિ અનુમાન જો હોતા હૈ વહ અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાલે હેતુસે ઉત્પન્ન હોતાહૈ, અતઃ ઇસ અનુમાનકા કારણ અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાલા હેતુ હૈ, પરન્તુ યહાં પર જો અનુમાન રૂપ કાર્યકો હેતુરૂપસે કહા ગયા હૈ વહ કાર્યમેં અનુમાનમેં કારણકા અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાલે હેતુકા આરોપ કર લિયા ગયા હૈ, ઇસલિયે

છે એવું જ પ્રકટ કરે છે એવાં આપ્ત પુરુષના વચનથી ઉત્પન્ન થયેલું જે યથાર્થ જ્ઞાન છે તેને આગમ જ્ઞાન કહે છે. આ આગમ વીતરાગ સર્વજ્ઞ અને હિતોપદેશી દ્વારા પ્રણીત હોય છે, વાદી પ્રતિવાદી તેનું ખંડન કરી શકતા નથી. પ્રત્યક્ષ કે અનુમાન પ્રમાણ દ્વારા પણ તેમાં કોઈ પણ વાધા આવતી નથી, તે પદાર્થના યથાર્થ સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરનારું છે, સમસ્ત જીવોનું હિત-સાધક હોય છે અને મિથ્યામત રૂપ જે કુપય છે તેનાથી દૂર કરાવનારું હોય છે.

“ અહવા-હેઝ ચઽઞ્ચિહે ” અહીં અન્યથા અનુપપત્તિ લક્ષણવાળા હેતુ વડે ઉત્પન્ન હોવાને કારણે અનુમાન જ કાર્યમાં કારણના ઉપચારથી હેતુ રૂપ કહ્યું છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—જે અનુમાન થાય છે તે અન્યથા નુપપત્તિ (ખીલ રીતે સાધ્ય વગર ઉત્પત્તિનો અભાવ) લક્ષણવાળું હોય છે તેથી આ અનુમાનનું કારણ અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાળો હેતુ છે, પરન્તુ અહીં અનુમાન રૂપ કાર્યને જે હેતુરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે, તે કાર્યમાં-અનુમાનમાં કારણના અન્યથાનુપપત્તિ લક્ષણવાળા હેતુનું આરોપણ કરીને કહેવામાં આવ્યું છે તે કારણે તેને હેતુ રૂપ કહેવામાં આવ્યું છે એવો આ અનુમાન રૂપ હેતુ ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે—તેમાં પહેલો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—“ અસ્તિ તત્

अस्ति विद्यते तदिति लिङ्गभूतं धूमादिवस्तु इति कृत्वा अस्ति वह्नयादिरूपः साध्यो-
 र्थ्य इत्येवं हेतुरित्यनुमानम् १। द्वितीयभेदमाह—अत्थितं नत्थि सो हेऊ ' इति।
 अस्तित्वं नास्ति स हेतुरिति । अस्तित्वह्निरूपं वस्तु तस्मान्नास्ति वह्निविरुद्धः
 शीतादिरर्थ इत्यपि हेतुरनुमानम् २। तृतीयभेदमाह—' नत्थितं अत्थि सो हेऊ ' इति,
 नास्तित्वमस्ति सो हेतुः, तथा नास्तित्वह्नयादिकोर्थः अतः शीतकाले विद्यते
 शीतादिरर्थ इत्ययमपि हेतुरनुमानम् ३। चतुर्थभेदमाह—' नत्थितं नत्थि सो
 हेऊ ' इति, नास्तित्वं नास्ति स हेतुरिति । तथा नास्ति वृक्षरूपोऽर्थ्य इति नारित
 शिंशपारूपोऽर्थ्यः इत्ययमपि हेतुरनुमानमिति ४। ॥ सू० ४१ ॥

उसे हेतु कह दिया गया है ऐसा यह अनुमान रूप हेतु चार प्रकारका
 है—इनमें प्रथम प्रकार " अस्ति तत् अस्त्यसौ " ऐसा है—इसका तात्पर्य
 ऐसा है कि एक अनुमान ऐसा हो, साधनके होने पर वह्न्यादि रूप
 साध्यवाला होता है १ द्वितीय प्रकार " अस्ति तत् नास्त्यसौ " ऐसा
 होता है इसका भाव ऐसा है कि वह्निरूप वस्तुके होने पर वह्नि विरुद्ध
 शीतादि स्पर्शवाला नहीं होता है २ तृतीय प्रकार—" नास्तित्वं अ-
 स्त्यसौ " ऐसा होता है इसका भाव ऐसा है कि वह्निके अभावमें
 शीतादि स्पर्शवाला होता है और चतुर्थ प्रकार—" नत्थि तं नत्थि "
 ऐसा होता है इसका भाव ऐसा है कि जहाँ वृक्षरूप अर्थका अभाव
 होता है वहाँ शिंशपारूप अर्थका भी अभाव होता है इस तरहसे ये
 सब हेतु अनुमानरूप होते हैं । तात्पर्य इसका ऐसा है—" पर्वतोऽयं वह्नि-
 मान् धूमवत्त्वान् " यहाँ धूमवत्त्व हेतु प्रथम प्रकारवाला है " अत्र शीत-

अस्त्यसौ" अटके के अत्र अनुमान एवं डोय छे के ले साधनना सदृशा-
 वमां वह्नि आदि रूप साध्य वाणुं डोय छे अटके के " धूमाडा रूप साधनना
 सदृशाव डोय तो अग्निना यणु सदृशाव डोय छे, " आ प्रकारना अर्थनुं
 प्रतिपादन करनाडुं डोय छे जीजे प्रकार आ प्रमाणे छे—" अस्ति तत्
 नास्त्यसौ " अटके के वह्नि रूप वस्तुना सदृशावमां वह्निविरुद्ध शीतादि स्पर्श-
 वाणुं डोय नथी.

तीजे प्रकार आ प्रमाणे छे—" नास्तित्वं अस्त्यसौ " अटके के वह्निना
 अभावे शीतादि स्पर्शवाणुं डोय छे

चौथे प्रकार आ प्रमाणे छे—" नत्थि तं नत्थि " छे. अटके के ल्यां
 वृक्ष रूप पदार्थना अभाव डोय छे त्यां शिंशपा रूप (शीसमरूप) अर्थना
 यणु अभाव डोय छे " आ प्रमाणे आ अधा हेतु अनुमान रूप डोय छे.
 आ समस्त कथननुं तात्पर्य नीचे प्रमाणे छे—" पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमवत्त्वान् "
 अही धूमाडाना सदृशाव रूप हेतु प्रथम प्रकारवाणे छे " अत्र शीतस्पर्शो

મૂલમ્—ચતુર્વિદ્ધે સંખ્યાણે પળ્ણત્તે, તં જહા--પડિકમ્મં ૧,
વવહારે ૨, રજ્જુ ૪, રાસી ૪૧ સૂ૦ ૪૨ ॥

છાયા—ચતુર્વિધં સંખ્યાનં પ્રજ્ઞતમ્, તદ્વથા-પરિકર્મ ૧, વ્યવહારઃ ૨,
રજ્જુઃ ૩, રાશિઃ ૪૧ ॥ સૂ૦ ૪૨ ॥

ટીકા—“ ચતુર્વિદ્ધે સંખ્યાણે ” ઇત્યાદિ—સંખ્યાનં-સંખ્યાયતે-ગણ્યતે-
નેનેતિ સંખ્યાનં=ગણિતં, તચ્ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞતમ્, તદ્વથા-પરિકર્મ-સંકલનવ્યવકલન-
યોજન-વિભજનાદિરૂપં પાટીપ્રસિદ્ધમ્ ૧, તથા-વ્યવહારઃ-મિશ્રકવ્યવહારાદિરને-
કવિધઃ ૨, તથા-રજ્જુઃ-રશ્મિઃ, તત્કૃતગણિતં=ક્ષેત્રગણિતમ્ ૩। તથા-રાશિઃ-
ત્રૈરાશિક-પશ્ચરાશિકાદિગણિતમિતિ ૪૧ ॥ સૂ૦ ૪૨ ॥

સ્પર્શો નાસ્તિ અગ્નિ સદ્ભાવત્ ” યહ અગ્નિ સદ્ભાવરૂપ હેતુ દ્વિતીય
પ્રકારવાલા હૈ “ અત્ર અગ્નિર્નાસ્તિ શીતસ્પર્શસદ્ભાવાત્ ” યહ
અનુમાન તૃતીય પ્રકારવાલા હૈ ઓર “ નાસ્ત્યત્ર શિશપા વૃક્ષાભાવાત્ ”
યહ ચતુર્થ પ્રકારવાલા હૈ યહ કેવલ કથનકીર્તી વિચિત્રતા હૈ વૈસે તો
અવિનાભાવી સાધનસે જો મી સાધ્યકા જ્ઞાન હોતા હૈ વહ સવ અનુ-
માન રૂપ હી હૈ ॥સૂ૦૪૧॥

‘ચતુર્વિદ્ધે સંખ્યાણે પળ્ણત્તે, ઇત્યાદિ’ સૂત્ર ૪૨ ॥

જિસસે ગિના જાતા હૈ વહ સંખ્યાન ગણિત હૈ યહ- સંખ્યાન રૂપ
ગણિત ચાર પ્રકારકાહૈ,સંકલન૧,વ્યવકલન૨,યોજન૩ વિભજન૪ આદિ
રૂપ પાટી પ્રસિદ્ધ ગણિત પરિકર્મહૈ, સંકલન નામ ગુણા કરનેકાહૈ, બાંકી
કરનેકા નામ વ્યવકલન હૈ જોડકા નામ યોજન હૈ ઓર ભાગાકારકા

નાસ્તિ અગ્નિસદ્ભાવાત્ ” આ અગ્નિ સદ્ભાવ રૂપ હેતુ બીજા પ્રકારવાળો છે.
“ અત્ર અગ્નિર્નાસ્તિ શીતસ્પર્શસદ્ભાવાત્ ” આ અનુમાન ત્રીજા પ્રકારવાળું છે,
અને “ નાસ્ત્યત્ર શિશપા વૃક્ષાભાવાત્ ” આ ચોથા પ્રકારવાળું અનુમાન છે આ
તો કેવળ કથનની જ વિચિત્રતા (વિવિધતા) છે. આમ તો અવિનાભાવી
સાધન વડે જે કોઈ સાધ્યનું જ્ઞાન થાય છે તે બધાં અનુમાન રૂપ જ હોય
છે ॥ સૂ. ૪૧ ॥

“ ચતુર્વિદ્ધે સંખ્યાણે પળ્ણત્તે ” ઇત્યાદિ—(સૂ. ૪૨) જેમાં ગણિતરી કર-
વામાં આવે છે તેનું નામ સંખ્યાન-ગણિત છે. તે સંખ્યાન રૂપ ગણિત
ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—(૧) સંકલન, (૨) વ્યવકલન, (૩) યોજન અને (૪)
વિભજન. આ ચાર પ્રકારનું ગણિત પરિકર્મ છે. સંકલન એટલે ગુણાકાર,
વ્યવકલન એટલે ણાદબાકી, યોજન એટલે સરવાળો અને વિભજન એટલે
ભાગાકાર મિશ્ર વ્યવહાર આદિ અનેક પ્રકારનું વ્યવહાર ગણિત છે. માપ-

अनन्तरं रज्जुपदेन क्षेत्रगणितमुक्तमिति क्षेत्रसम्बन्धाच्छ्लोकलक्षणक्षेत्रस्य त्रिधा विभक्तस्यान्धकारोद्द्योतावाश्रित्य सूत्रत्रयेण निरूपणामाह—

मूलम्—अहोलोगे णं चत्वारि अंधगारं करोति, तं जहां-
नरगा १, णेरया २, पावाइं कम्माइं ३, असुभा पोगगला ४। (१)

तिरियलोगे णं चत्वारि उज्जोयं करोति, तं जहा--चंदा १,
सूरा २, मणी ३, जोई ४। (२)

उड्डलोगे चत्वारि उज्जोयं करोति, तं जहा-देवा १, देवीओ
२, विमाणा ३, आभरणा ४। (३) ॥ सू० ४३ ॥

छाया—अधोलोके खलु चत्वारि अन्धकारं कुर्वन्ति, तद्यथा-नरकाः १,
नैरयिकाः २, पापानि कर्माणि ३, अशुभाः पुद्गलाः ४। (१)

तिर्यग्लोके खलु चत्वारि उद्द्योतं कुर्वन्ति, तद्यथा-चन्द्राः १, सूर्याः २,
मणयः ३, ज्योतिः ४। (२) ।

ऊर्ध्वलोके खलु चत्वारि उद्द्योतं कुर्वन्ति, तद्यथा-देवाः १, देव्यः २,
विमानानि ३, आभरणानि ४। (३) ॥ सू० ४३ ॥

टीका—“ अहोलोगे णं ” इत्यादि-अधोलोके-अधोवर्तिस्थतलोके ‘खलु’-
वाक्यालङ्कारे, चत्वारि वस्तूनि अनुपदं वक्ष्यमाणानि अन्धकारं कुर्वन्ति, तद्यथा-
नाम विभजनहै। मिश्र व्ययहार आदि अनेक प्रकारका व्यवहार गणित
है रस्सी आदिसे नापने रूप जो गणितहै वह रज्जु गणितहै तथा त्रैरा-
शिक एवं पञ्चराशिक आदि रूप जो गणितहै वह राशि गणितहै। सू० ४२ ॥

रज्जुपदसे जो क्षेत्र गणित कहा गया है सां क्षेत्रके सम्बन्धसे
तीन प्रकारसे विभक्त लोकरूप क्षेत्रके अन्धकार और उद्योतको लेकर
अब सूत्रकार तीन सूत्रोंसे निरूपण करते हैं—

पट्टी आदि वडे भापवा इप ने गणित छे तेनुं नाम रज्जु गणित छे, त्रैरा-
शिक, पंचराशिक आदि इप ने गणित छे तेनुं नाम राशिगणित छे ॥ सू० ४२ ॥

रज्जुपद द्वारा ने क्षेत्र गणितनुं कथन करवाभां आण्युं छे, ते क्षेत्रना
संभंधने अनुलक्षीने छे सूत्रकार त्रये लोकरूप क्षेत्रना अंधकार अने उद्यो-
तनुं निरूपण करवा निमित्ते त्रये सूत्रानुं कथन करे छे—

नरकाः—नरकाऽऽवासाः १, तथा-नैरयिकाः=निरयेमवास्तथा-नारका जीवाः, ते च कृष्णरूपत्वादन्यकारं कुर्वन्ति २, तथा-पापानि-पापजनकानि-कर्माणि-ज्ञानाऽऽवरणीयादीनि अष्टौ मिथ्यात्वाज्ञानरूपभावान्धकारजनकत्वादन्यकारं कुर्वन्ति ३। तथा-अशुभाः=अप्रशस्ताः पुद्गलाः—अन्धकारतया परिणताः सन्तोऽन्धकारं कुर्वन्ति । पुद्गललक्षणं च—

“सद्द्वयारउज्जोओ पहा छायाऽऽतवेह वा ।

वन्नगंधरसा फासा पुगलानं तु लक्षणं ॥१॥”

छाया—“शब्दोऽन्धकार उद्योतः प्रभा छायाऽऽतपो वा ।

वर्ण-गन्ध-रसाः स्पर्शाः पुद्गलानां तु लक्षणम् ।१। इति, एभिर्लक्षणैः

पुद्गला लक्ष्यन्ते । (१)

“अहो लोके णं चत्तारि इत्यादि” सूत्र ४३ ॥

अधोलोकमें ये चार वस्तुएँ अन्धकार करती हैं जैसे—नरक नरका-वास १ नैरयिक-निरयमें रहे हुए नारक जीव २ पापकर्म ज्ञानावरणीय आदि पापजनक कर्म ३ और अशुभ पुद्गल-अप्रशस्त पुद्गल ४ इनमें नारक जीव कृष्णस्वरूप होनेसे अन्धकार करते हैं तथा ज्ञानावरणीय आदि आठ पापकर्म मिथ्यात्व अज्ञान रूप भावान्धकारके जनक होनेसे अन्धकार करते हैं और जो अप्रशस्त पुद्गल होते हैं वे अन्धकार रूपसे परिणत होते हुए अन्धकारको करते हैं पुद्गलका लक्षण इस प्रकारसे है—“सद्द्वयारउज्जोओ” इत्यादि । शब्द अन्धकार उद्योत प्रभा छाया और आतप ये सब पुद्गल द्रव्यकी पर्याय हैं क्योंकि रूप गंध रस और स्पर्श इन गुणोंवाला पुद्गल होता है अतः इन पर्यायोंमें ये सब गुण पाये जाते हैं ।

“अहो लोकेणं चत्तारि” इत्यादि—(सू ४३) अधोलोकमां आ चार वस्तुओ अ धकार करे छे (१) नरक नरकावास, (२) नैरयिक-नरकमां रडेला नारक एवो, (३) पापकर्म-ज्ञानावरणीय आदि पापजनक कर्म अने (४) अशुभ पुद्गल-अप्रशस्त पुद्गलो नारक एवो कृष्णवर्णवाणा डोवाने कारणे अ धकारे करे छे. ज्ञानावरणीय आदि आठ पापकर्म मिथ्यात्व अज्ञान रूप भावान्धकारना जनक डोवाथी अ धकार करे छे. अने जे अप्रशस्त पुद्गलो डोय छे तेओ अ धकार रूपे परिणमित थछने अ धकार करे छे. पुद्गलनुं लक्षण नीचे प्रभाछे छे—“सद्द्वयार उज्जोओ” इत्यादि—शब्द, अन्धकार, प्रभा, छाया अने आतप, आ पुद्गलद्रव्यनी पर्यायि छे, कारणे के पुद्गल रूप, रस, गंध अने स्पर्श, आ गुणोथी युक्त डोय छे. तेथी आ पर्यायोमां ओ अधां गुणो डोय छे.

“ तिरियलोगे णं ” इत्यादि—तिर्यग्लोके ‘ खलु ’ प्राग्वत्, चत्वारि वस्तूनि उद्द्योतं—प्रकाशं कुर्वन्ति, तद्यथा—चन्द्राः १, सूर्याः २, मणयः चन्द्रकान्त-सूर्यकान्तादयः ३, ज्योतिः—वह्निः ४ एते चत्वारस्तिर्यग्लोकप्रकाशं कुर्वन्ति, अन्धकारनाशकत्वात् । (२)

“ उद्दूलोगे णं ” इत्यादि—ऊर्ध्वलोके चत्वारि वस्तूनि उद्द्योतं=प्रकाशं कुर्वन्ति, तद्यथा—देवाः, तैजसशरीरत्वात्, तथा देव्यश्च प्रकाशं कुर्वन्ति, तथा—विमानानि—सौधर्मेशानादीनां देवानां, तथा—आमरणानि—मणिरचितालङ्काराः, एतानि चत्वारि वस्तूनि ऊर्ध्वलोके प्रकाशं कुर्वन्ति ॥ सू० ४३ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकला-पालापक-प्रविशुद्गद्यपद्यनैकप्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक - श्रीशाहूखत्र-पति कोल्हापुरराजपदत्त ‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-कोल्हापुर-राजगुरु बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य--जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री - घासीलालप्रतिविरचितायां ‘ स्थानाङ्गसूत्रस्य ’ सुधाख्यायां व्याख्यायां चतुर्थस्थानस्य तृतीयोद्देशः समाप्तः ॥४-३॥

“ तिरियलोगेणं ” इत्यादि—तिर्यग्लोकमें ये चार वस्तुएँ प्रकाश करती हैं जैसे—चन्द्रमा १ सूर्य २ चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त आदि मणि ३ और ज्योति अग्नि४ ये सब अन्धकारनाशकहैं इसलिये ये तिर्यग्लोकमें प्रकाश प्रदान करती हैं ।

“ उद्दूलोगेणं ” इत्यादि—ऊर्ध्वलोकमें ये चार वस्तुएँ प्रकाश करती हैं जैसे तैजस शरीरवाले होनेसे देव १ देवियां २ सौधर्म ईशान आदि देवोंके विमान और मणिरचित अलङ्कार ॥ सू०४३ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित “ स्थानाङ्गसूत्र ” की सुधा नामकी व्याख्याके चौथे स्थानका तीसरा उद्देशा समाप्त ४-३ ॥

“ तिरियलोगेणं ” इत्यादि. तिर्यग्लोकमां आ चार वस्तुओ प्रकाश करे छे. (१) चन्द्रमा, (२) सूर्य, (३) चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त आदि मणि अने (४) अग्निनी ज्योति आ चार वस्तुओ अधकारनाश करीने तिर्यग्लोकमां प्रकाश प्रदान करे छे.

“ उद्दूलोगेणं ” इत्यादि—ऊर्ध्वलोकमां आ चार वस्तुओ प्रकाश करे छे—(१) देवा, कारणु के तेओ तेजस्वी शरीरवाणो होय छे (२) देवीओ, (३) सौधर्म, ईशान आदि देवोनां विमानो अने (४) मणिरचित अलङ्कारो. ॥सू.४३॥
निर्नायक श्री घासीलालजी महाराज रच्येला “ स्थानाङ्ग सूत्र ” नी सुधा नामनी व्याख्याना योथा स्थानने। तीले उद्देशो समाप्त ॥ ४-३ ॥

॥ અથ સ્થાનાઙ્ગે ચતુર્થસ્થાને ચતુર્થોદ્દેશઃ પ્રારમ્ભ્યતે ॥

ઉક્તસ્તૃતીય ઉદ્દેશઃ, સમ્પતિ ચતુર્થ આરમ્ભ્યતે, પૂર્વોદ્દેશકેન ચ સદાસ્યાયમ-
મિસમ્બન્ધઃ—તૃતીયે વિવિધા માવાશ્વતુઃસ્થાનકતયા પ્રોક્તા, ઇદાપિ વિવિધા एव
માવાશ્વતુઃસ્થાનકતયા નિરૂપ્યન્તે ' इत्यनेन सम्बन्धेन समायातस्यास्योद्देशकस्येदं
प्रथमं सूत्रम्—

મૂલમ્--ચત્તારિ પસપ્પગા પળ્ણત્તા, તં જહા--અણુપ્પન્નાણં
ભોગાણં ઉપ્પાણ્ણત્તા એગે પસપ્પણ ૧, પુઠ્ઠુપ્પન્નાણં ભોગાણં અવિ-
પ્પઓગેણં એગે પસપ્પણ ૨, અણુપ્પન્નાણં સોઠ્ઠુખ્ણાણં ઉપ્પાણ્ણત્તા
એગે પસપ્પણ ૩, પુઠ્ઠુપ્પન્નાણં સોઠ્ઠુખ્ણાણં અવિપ્પઓગેણં એગે
પસપ્પણ ૪ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—ચત્તારઃ પ્રસર્પકાઃ પ્રજ્ઞાસાઃ, તથા—અનુત્પન્નાણાં ભોગાનામુત્પાદયિતા
एकः प्रसर्पकः ૧, પૂર્વોત્પન્નાણાં ભોગાનામવિપ્રયોગેણ એકઃ પ્રસર્પકઃ ૨, અનુત્પન્નાણાં
સૌખ્યાનામ્ ઉત્પાદયિતા એકઃ પ્રસર્પકઃ ૩, પૂર્વોત્પન્નાણાં સૌખ્યાનામવિપ્રયોગેણ
एकः प्रसर्पकः ૪ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—“ ચત્તારિ પસપ્પગા ” ઇત્યાદિ—અસ્યાનન્તરસૂત્રેણાયં સમ્બન્ધઃ—
અનન્તરસૂત્રે દેવા દેવ્યશ્ચ નિર્દિષ્ટાઃ, તે ચ ભોગવન્તઃ સુખિતાશ્ચ ભવન્તીતિ ભોગ-

ચૌથે સ્થાનકા ચૌથા ઉદ્દેશા

તૃતીય ઉદ્દેશ કહા અથ ચતુર્થ ઉદ્દેશ પ્રારમ્ભ હોના હૈ પૂર્વોદ્દેશકે
સાથે હસ ઉદ્દેશકા સમ્બન્ધ એસા હૈ કિ તૃતીય ઉદ્દેશમેં અનેક પ્રકારકે
ભાવ ચાર સ્થાનરૂપસે કહે ગયે હૈં સો યહાં પર મી વિવિધહી ભાવ
ચાર સ્થાનરૂપસે નિરૂપિત કિયે જાતે હૈં, સો હસી સમ્બન્ધસે હસકા
પ્રારમ્ભ હુઆ હૈ.

‘ ચત્તારિ પસપ્પગા પળ્ણત્તા ’ ઇત્યાદિ ॥ સૂત્ર ૧ ॥

ટીકાર્થ—હસ પ્રથમ સૂત્રકા અનન્તર સૂત્રકે સાથે એસા સમ્બન્ધહૈ કિ અન-

ચૌથા સ્થાનનો ચૌથો ઉદ્દેશો

ત્રીજો ઉદ્દેશક પૂરો થયો. હવે ચૌથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ થાય છે. ત્રીજા
ઉદ્દેશક સાથે આ ઉદ્દેશનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે—ત્રીજા ઉદ્દેશમાં અનેક
પ્રકારના ભાવોની ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ પ્રરૂપણ કરવામાં આવી છે આ
ઉદ્દેશમાં પણ વિવિધ ભાવોનું ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

“ ચત્તારિ પસપ્પગા પળ્ણત્તા ” ઇત્યાદિ—(૧)

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો પૂર્વસૂત્ર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે—પૂર્વ દેવમાંસૂત્ર

सुखाश्रयणेन प्रसर्पकभेदान् निरूपयति-तथाहि-प्रसर्पकाः-प्र-प्रकर्षेण सर्पन्ति-
गच्छन्ति भोगाद्यर्थं देशानुदेशं सञ्चरन्ति, यद्वा-आरम्भपरिग्रहतो विस्तारं प्राप्नु-
वन्तीति प्रसर्पकाः जीवाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चित् प्रसर्पको जीवः
अनुत्पन्नानाम् भोगानां-भुज्यन्ते-सेव्यन्ते इन्द्रियैरिति भोगाः-शब्दादयः, तेषां-
शब्दादीनाम्, उत्पादयिता-जनयिता भवति १, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा-एकः प्रसर्पकः पूर्वोत्पन्नानां-प्राक्सम्पन्नानां भोगानां-शब्दादीनाम्
अविप्रयोगेण-अविप्रयोगाय-रक्षणायेत्यर्थः, प्राकृतत्वाच्चतुर्थ्यर्थे तृतीयाविधानात्,
भोगाद्यर्थं प्रसर्पति । २ ।

न्तर सूत्रमें देव और देवियोंका निर्देश हुआ है ये देव देवियां भोग-
युक्त और सुखित होती हैं अनः भोगसुखके आश्रयसे सूत्रकार प्रस-
र्पकोंके भेदोंका निरूपण करते हैं जो प्रकर्ष रूपसे भोगादिकके निमित्त
एकदेशसे दूसरे देशको जाते हैं सञ्चरण करते हैं वे प्रसर्पक हैं अथवा
आरम्भ और परिग्रहसे जो विस्तारको प्राप्त होते हैं वे प्रसर्पक हैं ऐसे
प्रसर्पक जीव होते हैं ये चार प्रकारके कहे गये हैं इनमें एक प्रसर्पक
जीव ऐसा होता है जो अनुत्पन्न भोगोंका उत्पादक होता है इन्द्रियों
द्वारा जो सेवित किये जाते हैं वे भोग हैं ऐसे भोग शब्दादिक होते
हैं यह प्रथम भङ्ग है

एक प्रसर्पक जीव ऐसा होता है, जो पूर्वोत्पन्न शब्दादिरूप भोगोंके
अविप्रयोगके लिये रक्षणके लिये एकदेशसे दूसरे देशमें जाता है २ एक
प्रसर्पक ऐसा होता है जो शब्दादि भोगों द्वारा होनेवाले सुख विशेषोंका
उत्पादयिता होता हुआ एकदेशसे दूसरे देशमें जाता है ३ और कोई

अने देवीअेनो निर्देश थये छे. ते देव, देवीअो लोगयुक्त अने सुभी डोय
छे. आ स'अंधने अनुलक्षीने हवे सूत्रकार लोगसुभ निमित्ते देशविदेशमां
गमन करनारा प्रसर्पकांना लोहोनुं निरूपणु करे छे. जेअो प्रकर्ष इपे लोग-
लोगादिक लोगववाने भाटे अेक देशमांथी थील देशमां नय छे तेभने
' प्रसर्पक ' कडे छे.

अथवा-आरंभ अने परिग्रहमां जेअो वधुने वधु वृद्धियुक्त थता
रडे छे तेभने ' प्रसर्पक ' कडे छे. आवा प्रसर्पक लुवो डोय छे. तेभना
चार प्रकार नीचे प्रमाणे कह्या छे-(१) कैरि अेक प्रसर्पक लुव अेवो डोय
छे के जे अनुत्पन्न लोगोना उत्पादक डोय छे. (२) इन्द्रियो द्वारा जेनुं सेवन
थाय छे ते लोगो छे. अेवा लोगो शब्दादिक इप डोय छे (२) कैरि प्रसर्पक
लुव अेवो डोय छे के जे पूर्वोत्पन्न शब्दादि इप लोगोना रक्षणु भाटे अेक
देशथी थील देशमां स'अरणु करे छे. (३) कैरि प्रसर्पक लुव अेवो डोय छे

તથા—એકઃ પ્રસર્પકોઽનુત્પન્નાનાં સૌહ્યાનાં-શબ્દાદિભોગં સમ્પાન્નપુસ્ત્રવિશેષા-
ણામ્ ઉત્પાદયિતા સન્ પ્રસર્પતિ ૩।

તથા—એકઃ પ્રસર્પકઃ પૂર્વોત્પન્નાનાં સૌહ્યાનામ્ અવિપયોગેણ-રક્ષણાય પ્રસ-
ર્પતિ ૪। પ્રસર્પકાશ્ચ પ્રલોભિન એવ ભવન્તિ, તદુક્તમ્—

“ ધાવઙ્ રોહણં તરહ સાગરં ભમઙ્ ગિરિનિકુંજેસુ ।

મારેઙ્ વંધવંપિ હુ પુરિસો જો હોઙ્ન ધનલુઘ્નો । ૧ ।

અહઙ્ વહું વહઙ્ ભરં, સહઙ્ હુહં પાત્રમાયરઙ્ ધિટ્ટો ।

કુઞ્સીલજાડપચયટ્ટિં ચ, ઓમદ્દુઓ ચયહ । ૨ । ”

છાયા—“ ધાવતિ રોહણં તરતિ સાગરં ભ્રમતિ ગિરિનિકુંજેષુ ।

મારયતિ વાન્ધવમપિ હિ પુરુષો યો ભવેદ્ ધનલુઘ્વઃ । ૧ ।

એક પ્રસર્પક એસા હોતા હૈ જો પૂર્વોત્પન્ન સુસ્ત્રોંકે સંરક્ષણકે લિયે એક-
દેશસે દૂસરે દેશમેં જાતાહૈ । પ્રસર્પક જીવ પ્રલોભીહી હોતેહેં । તદુક્તમ્-
કહામીહૈ “ ધાવઙ્ રોહણં તરહ ” ઇત્યાદિ । જો જીવ ધનલુઘ્વ હોતાહૈ વહ
વ્યા ૨ કામ નહીં કરતાહૈ યહી હન શ્લોકોં ઢારા પ્રકટ ક્રિયા ગયાહૈ, ધન
લુઘ્વક જીવ રાતદિન હધરસે ઉધર ભમતા રહતા હૈ સમુદ્ર માર્ગસે
જાનેમેં મી વહ અપને જીવનકી પરવાહ નહીં કરતા હૈ ભયંકરસે મી
ભયંકર ગિરિ નિકુંજોંમેં જાનેમેં વહ નહીં ડરતા હૈ યર્હા તક કુકૃત્ય
વહ ધન લુઘ્વરુ કર દેતા હૈ કિ વહ અપને વન્ધુજનોં કા મી મલા-
ઘોંટ ઢાલતા હૈ, મૂલ્મી વેદના વહ સહ લેના હૈ ઘોરસે ઘોર પાપ વહ
કર સકતા હૈ અપને કુલકી મર્યાદા વહ તોડતા હૈ ઓર શીલ ઓર

કે જે શબ્દાદિ ભોગો દ્વારા પ્રાપ્ત થનારા સુખવિશેષોનો ઉત્પાદક બનતો થકો
એક દેશમાંથી બીજા દેશમાં બધ (૪) કોઈ પ્રસર્પક એવ એવો હોય છે કે
જે પૂર્વોત્પન્ન સુખના સંરક્ષણ નિમિત્તે એક દેશમાંથી બીજા દેશમાં બધ છે.

પ્રસર્પક એવ લોભી હોય છે કહ્યું પણ છે કે—“ ધાવઙ્ રોહણં તરહ ”
ઈત્યાદિ-ધનલોભી એવ ધનને માટે શું શું નથી કરતો એ વાત આ શ્લોકમાં પ્રકટ
કરવામાં આવી છે. ધનલોભી એવ રાતદિન ધનપ્રાપ્તિ માટે ભટકયા કરે
છે. સમુદ્રમાર્ગે પરદેશ જવાનું જોખમ પણ તે જોડે છે, ભયંકરમાં ભયંકર
પહાડો અને વનોને ઝાળંગતા પણ તે ડરતો નથી. ધનલુઘ્વક માણસ ગમે
તેવું દુષ્કૃત્ય કરતા પાછો હકતો નથી. અરે ! ધનને ખાતર તો તે પોતાના
સહોદરની પણ હત્યા કરી નાખે છે ! તેને ખાતર તે ભૂખની વ્યથા સહન
કરી લે છે, ભયંકરમાં ભયંકર પાપ પણ કરી શકે છે, પોતાના કુળની મર્યા-

अटति बहु वहति भारं सहते क्षुधां पापमाचरति धृष्टः ।

कुलशीलजातिप्रत्ययस्थितिं च लोभोपद्रुतस्त्यजति ।२।” इति ॥सू०१॥

पूर्व प्रसर्पका उक्ताः, ते च भोगसौख्यलोभेनैव प्रसर्पन्ति, लोभिनश्च नरकानुबन्धिकर्म समुपाज्यं नारकत्वेनोत्पद्यन्त इति नारकाणामाहारनिरूपणामाह—

मूलम्—णेरइयाणं चउठिवहे आहारे पणत्ते, तं जहा-
इंगालोवमे १, मुम्मरोवमे २, सीयले ३, हिमसीयले ४। सू०२॥

छाया—नैरयिकाणां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—अङ्गारोपमः १, मुर्मु-
रोपमः २, शीतलः ३, हिमशीतलः ४। सू० २ ।

टीका—“ णेरइयाणं ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्—अङ्गारोपमः—अङ्गारतुल्यः,
अल्पकालदाहत्वात् १, तथा—मुर्मुरोपमः—मुर्मुः—करीषाग्निः, तदुपमः—तत्तुल्यः,

स्वभावमें आग वह लगा सक्रता है उसको तो धन मिलना चाहिये इस प्रकारसे वह जघन्यसे भी जघन्य नीच से भी नीच कार्य करनेमें जरा साभी संकोच नहीं करता है ॥सू०१॥

कथित प्रसर्पक जीव भोग एवं सुखके लोभसेही इधरसे उधर जाते हैं, लोभी जीव नरकानुबन्धी कर्मको उपाजित करके नारककी पर्यायसे उत्पन्न होते हैं अतः अब सूत्रकार नारकोंके आहारकी प्ररूपणा करतेहैं—‘णेरइयाणं चउठिवहे आहारे पणत्ते’ इत्यादि सूत्र २ ॥

नैरयिकोंका चार प्रकारका आहार कहा गया है जैसे—अङ्गारोपम १ मुर्मुरोपम २ शीतल ३ और हिमशीतल ४ जो आहार अल्प कालतक दाह करनेवाला होता है वह आहार अङ्गारोपम है । जो आहार करीषाग्निके जैसा स्थिरता दाहक होता है वह मुर्मुरोपम आहार है २ जो

दाने दोष पणु करी शके छे, शील अने स्वभावमां आग पणु लगावी शके छे. आ रीते धनने आतर अधममां अधम कार्य करतां पणु ते पाछे छठते नथी. ॥ सू १ ॥

पूर्वेकृत प्रसर्पक लुव लोग अने सुणना लोभथी न देशविदेशमां संयरणु करे छे. ओणे लुव नरकायुणन्धनुं उपाजन करीने नारकनी पर्याये उत्पन्न थाय छे. आ संभंधने अनुलक्षीने छवे सूत्रकार आहारनुं निरूपणु करे छे—

“ णेरइयाणं चउठिवहे आहारे पणत्ते ” इत्यादि—(सू. २)

नारकेने आहार आर प्रकारने कछो छे—(१) अंगारोपम, (२) मुर्मु-
रोपम, (३) शीतल, अने (४) हिमशीतल.

जे आहार थोडा काण सुधी शरीरमां हाड उत्पन्न करनारे होय छे ते आहारने अंगारोपम कडे छे. जे आहार करीषाग्नि समान दीर्घकालिन हाडकताने जनक होय छे तेने मुर्मुरोपम आहार कडे छे. जे आहार शीत-

स्थिरतरदाहत्वात् २, तथा-शीतलः-शीतः, शीतवेदनाजनकत्वात् ३, तथा-हिमशीतलः-हिमवच्छीतः, अत्यन्तशीतवेदनाजनकत्वात्, अयमाहारक्रमः क्रमशोऽधोऽधोवर्तिनां नारकाणां बोध्य इति । सू० २ ।

आहाराधिकारात् तिर्यग्मनुष्यदेवानामाहारनिरूपणार्थं सूत्रत्रयमाह—

मूलम्—तिरिक्त्वजोगियाणं चउव्विहे आहारे पणत्ते, तं जहा-कंकोवमे १, विलोवमे २, पाणमंसोवमे ३, पुत्तमंसोवमे ४। (१)

मनुस्साणं चउव्विहे आहारे पणत्ते, तं जहा-असणे जाव साहमे०, (२)

देवाणं चउव्विहे आहारे पणत्ते, तं जहा-वन्नमंते १, गंधमंते २, रसमंते ३, फासमंते ४। सू० ३ ॥

छाया—तिर्यग्योनिकानां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-कङ्कोपमः १, विलोपमः २, पाणमांसोपमः ३, पुत्रमांसोपमः ४। (१)

मनुष्याणां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अशनं यावत् स्वादिमम् ४ देवानां चतुर्विध आहारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-वर्णवान् १, गन्धवान् २, रसवान् ३, स्पर्शवान् ४ (३) ॥ सू० ३ ॥

टीका—“ तिरिक्त्वजोगियाणं ” इत्यादि—

तिर्यग्योनिकानां-पक्षिभृतीनाम्, आहारश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-कङ्कोपमः-कङ्कः-पक्षिविशेषः तस्याऽऽहारः कङ्काऽऽहारः तेनोपमा यस्य स कङ्कोपमः=

आहार शीतवेदनाका जनक होता है वह शीतल आहार है ३ और जो अत्यन्त शीतवेदनाका जनक होता है वह हिमशीतल आहार है ४ इस प्रकारका यह आहार क्रम क्रमशः अधोऽधोवर्ती नीचे रहनेवाले-नारकोंको होता है ऐसा जानना चाहिये ॥ सू० २ ॥

आहारके अधिकारको लेकर अब सूत्रकार तिर्यग् मनुष्य और

वेदनाने जनक होय छे तेने शीतल आहार कहे छे, ने आहार डिम नेवी अत्यन्त शीतवेदनाने जनक होय तेने हिमशीतल आहार कहे छे. आहारने आ प्रकारने क्रम अनुक्रमे वधुने वधु अधोवर्ती नारकोना नारकोमां समजवे ओटवे के ते सोथी नीचेनी नरकमां-सातमी नरकमां-डिमशीतल आहार समजवे. ॥ सू. २ ॥

आहारनुं निरूपण्ण् आली रह्युं छे तेथी हवे सूत्रकार तिर्यग्, मनुष्य

કઙ્કાઽઽહારોપમ इत्यर्थः, अत्राऽऽहाररूपमध्यमपदलोपः, शाकपार्थिवादित्वात्, तिरश्चामाहारे कङ्काऽऽहारसादृश्यं च—दुर्जरत्वेन सुभक्षत्वेन च ग्राह्यम्, अयं भावः— यथा—कङ्कस्य स्वरूपेण दुर्जरोऽप्याहारः सुभक्षः सृपरिणामश्च भवति तथा तेषामपि य आहारो स कङ्कोपमो बोध्य इति १।

देવોંके आहारकी प्ररूपणा तीन सूत्रसे करते हैं—

‘तिरिक्खजोगियाणं चउन्विहे इत्यादि’ सूत्र ३ ॥

टीकार्थ—पक्षी आदि तिर्यञ्चोका आहार चार प्रकारका कहा गया है जैसे— कङ्कोपम १ विलोपन २ पाणमांसोपम ३ और पुत्र मांसोपम ४ कङ्कनाम पक्षी विशेषका है इसका जो आहार है वह आहार कङ्काहार है इस आहारके साथ जिस आहारकी उपमा होती है अर्थात् कङ्काके आहारके जैसा होता है वह कङ्काहार है तिर्यञ्चोके आहारमें कङ्काहारकी समानता दुर्जर होनेसे सुभक्ष होनेसे और सुखपरिणाम होनेसे ग्रहण करना चाहिये, कङ्काहार दुर्जर होता है अर्थात् बड़ी कठिनतासे पचता है फिरभी खानेमें वह अच्छा होता है एवं इसका पाकभी सुखकारी होता है इसी प्रकारसे तिर्यञ्चोकाभी एक आहार ऐसा होता है जो दुर्जर होने परभी सुख भक्ष होता है और सुखद परिणामवाला होता है ऐसा उनका वह आहार कङ्कोपम आहार है ?

विलोपम आहार में विल शब्द विलमें जाते हुए

अने देवाना आहारनुं निरूपणु करे छे—

“ तिरिक्खजोगियाणं चउन्विहे ” इत्यादि—(सू. ३)

टीकार्थ—पक्षी आदि तिर्यञ्चोको आहार चार प्रकारको कह्यो छे—(१) कङ्कोपम, (२) विलोपम, (३) पाणमांसोपम अने (४) पुत्रमांसोपम कङ्क केर्ष पक्षी विशेषनुं नाम छे ते पक्षी ने आहार ले छे तेने कङ्काहार कडे छे. ते कङ्क-पक्षीना नेवो आहार ने तिर्यञ्चो ले छे ते तिर्यञ्चोना आहारने कङ्कोपम आहार कडे छे. तिर्यञ्चोना आहारमां कङ्काहारनी समानता दुर्जर डोवाथी, सुभक्ष डोवाथी अने सुभपरिणामरूप डोवाथी गृहीत थवी नेछये. कङ्काहार दुर्जर डोय छे अटवे के पचवे मुश्केल डोय छे पणु भावामां सुभाकारी डोय छे. आ रीते तिर्यञ्चोको अक आहार अवेो डोय छे के ने पचवे मुश्केल डोय छे पणु भावामां सुभोत्पादक डोय छे अने सुभद परिणामवाणो डोय छे. अवेो आहारने कङ्कोपम आहार कडे छे.

તથા—વિલોપમઃ—અત્ર વિલશબ્દો વિલે પ્રવિશદ્દ્રવ્યપરઃ તેન વિલં વિલે પ્રવિશ-
દ્દ્રવ્યમિત્યર્થઃ, તેનોપમા યસ્ય સ વિલોપમઃ—યથા—વિલે શીઘ્રં પ્રવિશદ્દ્રવ્યમ્ અલ-
બ્ધરસાઽઽસ્વાદં ભવતિ તથા ગલવિલે શીઘ્રં પ્રવિશન્ તેપામાઠારોઽલબ્ધાસાઽઽ-
સ્વાદો ભવતિ ૨।

તથા—પાણમાંસોપમઃ—પાણઃ—શ્વપચશ્રાણ્ડાલ ઇત્યર્થઃ, તન્માંસં ચાણ્ડાલશ-
રીરમાંસં જુગુપ્સિતત્ત્વેન દુઃસ્વાદ્યં દુઃસ્વેન સ્વાદ્યં તદ્દુઃસ્વાદ્યત્ત્વેન તદુપમસ્તિરશ્રા-
માહારઃ સ ઇતિ ૩। તથા—પુત્રમાંસોપમંયથા પુત્રમાંસં સ્નેહપરતયા દુઃસ્વાદ્યતરમ્
અત્યન્તદુઃસ્વેન સ્વાદ્યં ભવતિ તદ્દુઃસ્વાદ્યત્ત્વેન તદુપમસ્તિરશ્રામાહરો ભવતિ, ઇતિ ૪।
એતે ક્રમેણ—સમા-ઽશુમા-ઽશુમતરા વોધ્યાઃ । (૧)

‘ મણુસ્સાણં ’ ઇત્યાદિ—મનુષ્યાણામાહારશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથા—અશનં,
‘ યાત્ર ’—પદેન પાનં સ્વાદિમં તથા સ્વાદિમમ્ ૪। (૨)

દ્રવ્યકા વોધકા હૈ, ઇસ વિલમેં જાતે હુપ દ્રવ્યસે જિસ
આહારકી ઉપમા હોની હૈ વહ વિલોપમ આહાર હૈ અર્થાત્
વિલમેં પ્રવેશ કરતા હુઆ દ્રવ્ય જિસ પ્રકાર અપને રસાસ્વાદકા પ્રદાતા
નહીં હોતા હૈ ઊસી પ્રકારસે જો આહાર ગલમેં શીઘ્રતાસે પ્રવેશ પાતા
હુઆ અપને રસાસ્વાદકા જનક નહીં હોતા હૈ એસા વહ આહારકિ
જિસકે રસકા આસ્વાદ ઉપબોક્તાકો અલબ્ધ હો વહ વિલોપમ આહારહૈ ૨
તથા તૃતીય પ્રકારકા જો પાણમાંસોપમ આહાર હૈ વહ ચાણ્ડાલકે શરી-
રકે માંસ જૈસા હોતા હૈ ૩ ઓર જો ચૌથે પ્રકારકા આહાર હૈ વહ
પુત્રકે માંસકે જૈસા હોતા હૈ ૪ યે આહાર ક્રમસે શુભ, સમ, અશુભ
ઓર અશુભતર હોતે હૈં એસા જાનના ચાહિયે.

મનુષ્યોંકા આહાર ચાર પ્રકારકા હોતા હૈં જૈસે અશન પાન સ્વાદિમ
તથા સ્વાદિમ.

વિલોપમ આહાર—વિલ એટલે દર અહીં વિલ શબ્દ વિલમાં પ્રવિષ્ટ
થતાં દ્રવ્યનો વાચક છે. આ વિલમાં પ્રવેશ કરતાં દ્રવ્યની સાથે જે આહારને
સંરખાવી શકાય છે તે આહારને “ વિલોપમ આહાર ” કહે છે. એટલે કે
વિલમાં પ્રવેશ કરતો પદાર્થ જે પ્રકારે પોતાના રસાસ્વાદનું પ્રદાન કરાવનારો
હોતો નથી એજ પ્રમાણે જે આહાર ગળામાં શીઘ્રતાથી પ્રવિષ્ટ થવાને કારણે
પોતાના રસાસ્વાદનો પ્રદાતા થતો નથી એવા આહારને વિલોપમ કહે છે.
ઉપલોપતા એવા આહારના રસને આસ્વાદ કરી શકતો નથી.

પાણુમાંસોપમ આહાર—આ આહાર ત્રાંડાળના શરીરના માંસ જેવો
હોય છે. પુત્રના માંસ જેવો આહારને પુત્રમાંસોપમ આહાર કહે છે

આ ચાર પ્રકારના આહાર તે અનુક્રમે શુભ, સમ, અશુભ અને અશુભતર
ગણાય છે.

“ देवाणं ” इत्यादि—देवानामाहारश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वर्णवान्= प्रशस्तवर्णसम्पन्नो वाऽतिशयितवर्णसम्पन्नः, प्रशंसायां वाऽतिशयने मतुब्धिधानात्, एवमग्रेऽपि १, तथा—गन्धवान् २, रसवान् ३, स्पर्शवान् ४। (३) ॥ सू०३॥
पूर्वमाहार उक्तः, स च भक्षणीय इति भक्षणाधिकारादाशीविषान् निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि जाइ आसीविसा पणत्ता, तं जहा—विच्छु-
अजाइ आसीविसे १, मंडुक्कजाइ आसीविसे २, उरगजाइ
आसीविसे ३, मणुस्सजाइ आसीविसे ४ विच्छुयजाइ आसी-
विसस्स णं भंते ! केवइए विसए पणत्ते ? पभू णं विच्छुजाइ
आसीविसे अद्धभरहप्पमाणमेत्तं बोदिं विसेणं विसपरिणयं विस-
ट्टमाणिं करित्तए विसए से विसट्टयाए नो चेव णं संपत्तीए
कासी वा करेइ वा करिस्सइ वा । १ मंडुक्कजाइ आसीविसस्स
पुच्छा, पभू णं मंडुक्कजाइ आसीविसे भरहप्पमाणमेत्तं बोदिं
विसेणं विसपरिणयं विसट्टमाणिं सेसं तं चेव जाव करिस्सइ वा २।
उरगजाइ पुच्छा, पभू णं उरगजाइ आसीविसे जंबूदीवपमाण-
मेत्तं बोदिं तं चेव जाव करिस्सइ वा ३। मणुस्सजाइपुच्छा,

देवोंका आहार चार प्रकारका होता है जैसे—प्रशस्त वर्णवाला, प्रशस्त गंधवाला, प्रशस्त रसवाला और प्रशस्त स्पर्शवाला अथवा वह प्रशस्त वर्णसम्पन्न होता है अतिशयित वर्णसे युक्त होता है इसी प्रकार गन्धादिकोमें भी जानना चाहिये ॥सू०३॥

मनुष्यना आहारना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) अशन,
(२) पान, (३) आदिभ अने (४) स्वादिभ..

देवाना आहारने नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) प्रशस्त वर्णवाणो, (२) प्रशस्त गंधवाणो, (३) प्रशस्त रसवाणो अने (४) प्रशस्त स्पर्शवाणो अट्टये के तेमना आहार प्रशस्त वर्णसंपन्न होय छे, अने अतिशयित वर्णयुक्त होय छे अेषुं ज कथन गन्धादिठोमां पणु समज्जुं. सू ३

પમ્હુ ણં મણુસ્માજાહ આસીવિસે સમયખેત્તપમાણમેત્તં વોંદિં વિષેણં
વિસપરિણયં વિસદ્દમાણિં કરિત્તણ, વિસણ સે વિસદ્દયાણ નો
ચેવ ણં જાવ કરિસ્સહ વા । સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ચત્તારો જાત્યાશીવિપાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથથા—વૃશ્ચિકજાત્યાઽઽશીવિપઃ
મણૂકજાત્યાઽઽશીવિપઃ ૨, ઉરગજાત્યાઽઽશીવિપઃ ૩, મનુષ્યજાત્યાઽઽશીવિપઃ ૪।
વૃશ્ચિકજાત્યાઽઽશીવિપયસ્ય સ્વલુ ભદન્ત ! કિયાન્ વિપયઃ પ્રજ્ઞતાઃ ૧, પ્રમ્હુઃ
સ્વલુ વૃશ્ચિકજાત્યાઽઽશીવિપઃ અર્દ્ધમરતપ્રમાણમાત્રાં વોંદિં વિષેણ વિપપરિણતાં
વિદલ્યન્તીં કર્તુ, વિપયસ્તસ્ય વિપાર્થતયા નૈવ સ્વલુ સમ્પત્તયા અકાર્પીંદ્વા કરોતિ
વા કરિષ્યતિ વા ૧।

મણૂકજાત્યાઽઽશીવિપસ્ય પૃચ્છા, પ્રમ્હુઃ સ્વલુ મણૂકજાત્યાઽઽશીવિપઃ અર-
તપ્રમાણમાત્રાં વોંદિં વિષેણ વિપપરિણતાં વિદલ્યન્તીં શેપં તદેવ યાવત્ કરિષ્યતિ
વા ૨।

ઉરગજાતિપૃચ્છા, પ્રમ્હુઃ સ્વલુ ઉરગજાત્યાશીવિપઃ જમ્દ્વીપપ્રમાણમાત્રાં વોંદિં
તદેવ યાવત્ કરિષ્યતિ વા, ૩

મનુષ્યજાતિપૃચ્છા, પ્રમ્હુઃ સ્વલુ મનુષ્યજાત્યાશીવિપઃ સમયક્ષેત્રપ્રમાણમાત્રાં
વોંદિં વિષેણ વિપપરિણતાં વિદલ્યન્તીં કર્તુ, વિપયઃ સ વિપાર્થતયા નૈવ સ્વલુ
યાવત્ કરિષ્યતિ વા । સૂ૦ ૪ ।

ટીકા—“ ચત્તારિ જાહ આસીવિસા ” ઇત્યાદિ— જાત્યાશીવિપાઃ—જાતિતઃ=
જન્મતઃ આશીવિપાઃ—વિષધરાઃ પ્રાણિનશ્વતુર્વિધાઃ પ્રોક્તાઃ, તથથા—વૃશ્ચિકજાત્યા-

અવ સૂત્રકાર ભક્ષણકે અધિકારકો લેકર આશીવિષોંકી પ્રરૂપણા
કરતે હૈં—‘ ચત્તારિ જાહ આસીવિસા પ્ણત્તા ’ ઇત્યાદિ સૂત્ર ૪ ॥

આશીવિષ ચાર પ્રકારકે હોતે હૈં જૈસે—વૃશ્ચિક જાત્યાશીવિષ ૧
મણૂકજાત્યાશીવિષ ૨ ઉરગજાત્યાશીવિષ ૩ ઓર મનુષ્યજાત્યાશી-
વિષ ૪ જો પ્રાણી જાતિસે જન્મસે આશીવિષ વિષધર હોતે હૈં તે
જાત્યાશીવિષ હૈં.

ભક્ષણને અધિકાર ચાલી રહ્યો છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે
સૂત્રકાર આશીવિષોની પ્રરૂપણા કરે છે—

“ ચત્તારિ જાહ આસીવિસા પ્ણત્તા ” ઇત્યાદિ—(સૂ ૪)

આશીવિષ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) વૃશ્ચિક જાત્યાશીવિષ, (૨)
મણૂક જાત્યાશીવિષ, (૩) ઉરગજાત્યાશીવિષ અને (૪) મનુષ્ય જાત્યાશીવિષ.
જે હવે જન્મથી જ આશીવિષ (વિષધર) હોય છે તેને ‘ જાત્યાશીવિષ ’ કહે છે.

शीविषः १, मण्डूकजात्याशीविषः २, उरगजात्याशीविषः ३ मनुष्यजात्याशीविषः ४। तत्र प्रत्येकविषयप्रश्नः—

“ विच्छ्रयजाई आसीविसससे ”—त्यादि—हे भदन्त ! वृश्चिकजात्याशीविषस्य क्रियान् विषस्य विषयः प्रज्ञप्तः १ इति प्रश्नः, प्रभुराह—हे गौतम ! वृश्चिकजान्याशीविषः खलु अर्द्धभरतप्रमाणमात्राम्—अर्द्धभरतस्य प्रमाणं सातिरेकत्रिषपष्टथधिकयोजनशतद्वयलक्षणमेव मात्रा=प्रमाणं यस्यास्तां बोन्दि—शरीरं विषेण—करणभूतेन विषपरिणतां=विषव्याप्ताम्, विदलयन्तीं=विदलकरणसमर्थां परविनाशनशीलामित्यर्थः कर्तुं प्रभुः—समर्थोऽस्ति । तस्य=वृश्चिकस्य विषयः विषार्थतया-विषमेवार्थो विषार्थस्तस्य भावो विषार्थता तया नैव खलु सम्पत्त्या—एतादृशशरीरप्राप्त्या वृश्चिकः

प्र०—हे भदन्त वृश्चिक जात्याशीविषके विषका विषय कितना कहा गया है ?

उ०—वृश्चिकजात्याशीविषका विष, भरतक्षेत्रका जितना प्रमाण है उसके आधे प्रमाणवाले शरीरको व्याप्त कर सकता है उसे विदलन अर्थात् विनाश करने की शक्ति से युक्त कर सकता है भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६,६ योजनका कहा गया है इसका आधासे कुछ अधिक २६३ योजन होता है इतने बड़े शरीरको भी वृश्चिक अपने विषसे विषरूपमें परिणत कर सकता है उसे पूरे रूपमें व्याप्त कर सकता है उसे दूसरेको विनाश करनेवाला कर सकता है यह ऐसा कथन उसके विषकी शक्तिको प्रकट करनेके लिये कहा गया है यद्यपि आज तक ऐसा देखा नहीं गया है न देखा जाता है और न देखा जावेगा परन्तु यदि उसका विष व्याप्त होना चाहे तो

प्रश्न—हे भगवन् ! वृश्चिक जात्याशीविषना विषने विषय केटवो क्यो छे.

उत्तर—वृश्चिक जात्याशीविषतुं विष भरतक्षेत्र करता अर्धा प्रमाणवाणा शरीरने व्याप्त करी शके छे अने तेने विदलन अर्थात् विनाश करवानी शकतीथी युक्त करी शके छे. भरतक्षेत्रने विस्तार ५२६,६ योजनने क्यो छे तेनाथी अर्धा केटवो के २६३ योजन करता थोडा पधारे योजनने विस्तार समजवो. केटवो मोटा शरीरने पणु वींछी पोताना विषथी विष इपे परिणत करी शके छे—तेने संपूर्ण इपे व्याप्त करी शके छे अने तेनाथी भीजने विदीणुं अवस्थावाणुं करी शके छे.

आ कथन तेना विषनी शक्ति अताववा माटे न करवामां 'आव्यु' छे जे के अेषुं कही अन्युं नथी, अनतुं नथी अने अनवानुं पणु नथी. सूत्रकार अहीं अे पात न प्रकट करवा भागे छे—के तेतुं विष अर्धा न'भूप्रमाणु शरी.

અકાર્ષીંદ્વા કરોતિ ત્રા કરિષ્યતિ વા । ત્રિકાલનિર્દેશશ્ચાશીવિપાણાં ત્રિકાલવર્તિ-
ત્વસૂચનાર્થઃ । (૧)

“ મંડુકજાહાસીવિસસે ” ત્યાદિ—પ્રાગ્વત્, નવરમ્—મળ્લકમૂત્રે ‘મરત-
ક્ષેત્રપ્રમાણમાત્રાં વોન્દિ ’ ઇતિ, ઉરગસૂત્રે જમ્બૂદ્વીપપ્રમાણમાત્રાં વોન્દિ, ઇતિ, મનુષ્ય-
સૂત્રે સમયક્ષેત્રપ્રમાણમાત્રાં વોન્દિમ્, ઇતિ વોધ્યમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥

ઇતને વડે શરીરમેં ખી વહ પૂર્ણરૂપસે વ્યાપ્ત હો સકતા હૈ એસી ઉસકી
શક્તિહૈ એસા કથન ઉસકી શક્તિકે પ્રભાવકો પ્રકટ કરનેકે લિયેહી સૂત્ર-
કારને કહાહૈ। “મંડુકજાહાસીવિસે” ઇત્યાદિ-હસ સૂત્રકા પ્રદ્શનોદ્ભાવન
પહિલે જૈસાહી હૈ અર્થાત્ હે ભદન્ત ! મળ્લકકે વિષકા વિષય
ક્લિનવા કહા ગયા હૈ ? ઉત્તરમેં પ્રમુત્રે કહા હૈ ક્લિ-મળ્લકકા વિષ મરત-
ક્ષેત્ર પ્રમાણવાલે શરીરકો ખી અપને પ્રભાવસે પ્રભાવિત કર સકતા હૈ
યદ્યપિ એસી વાત અખી તક હુઈ નહીં હૈ, ન હોતી હૈ ઓર ન હોનેવાલી
હૈ પરન્તુ યહ ઉસકી શક્તિ માત્રકા પ્રદ્શન કિયા ગયા હૈ હસી તરહસે
ઉરગ (સર્પ)કા જો વિષ હૈ વહ અપને પ્રભાવસે જમ્બૂદ્વીપ પ્રમાણવાલે
શરીરકો પ્રભાવિત કર સકતા હૈ અર્થાત્ ઇતને વડે શરીરમેં વહ વ્યાપ્ત
હો સકતા હૈ ઉસે વિવલિત કર સકતા હૈ પરન્તુ યહ કેવલ ઉસકે
પ્રભાવકા પ્રદ્શન માત્ર હૈ ક્યોંકિ એસા ન પહિલે કખી હુઆ હૈ ન હોને-
વાલા હૈ ઓર ન હોતા હૈ હસી પ્રકારસે મનુષ્યકા જો વિષ હૈ વહ ખી

રમાં પણ સંપૂર્ણ રૂપે વ્યાપ્ત થઈ શકે છે. તેના વિષની શક્તિને પ્રભાવ
ખતાવવા માટે જ આ કથન કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

“ મંડુકજાહાસીવિસે ” ઇત્યાદિ—

પ્રશ્ન—હે ભગવન્ ! દેડકાના વિષને વિષય કેટલો કહ્યો છે ?

ઉત્તર—દેડકાનું વિષ ભરતક્ષેત્રના બેટલા પ્રમાણવાળા શરીરને પણ
વ્યાપ્ત કરી શકે છે. જો કે એવી વાત કહી બની નથી, બનતી પણ નથી
અને બનવાની પણ નથી. આ વાત તો તેના વિષની શક્તિ ખતાવવા નિમિ-
ત્તે જ કહેવામાં આવી છે. એજ પ્રમાણે ઉરગ (સર્પ)નું ઝેર પણ જમ્બૂદ્વીપ-
પ્રમાણ શરીરને વ્યાપ્ત કરી શકે છે, તેને વિદીર્ણ કરી શકે છે. આ વાત
પણ તેના વિષને પ્રભાવ પ્રકટ કરવા નિમિત્તે કરવામાં આવ્યું છે, પરન્તુ
એવું કહી બન્યું નથી, બનતું નથી અને બનવાનું પણ નથી. એજ પ્રમાણે
મનુષ્યનું વિષ પણ સમયક્ષેત્ર (અઠી દ્વીપ) પ્રમાણ શરીરને ખોતાના પ્રભાવથી

विषपरिणामो हि व्याधिरिति तदधिकाराद् व्याधिभेदान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहे वाहि पणत्ते, तं जहा—वाइए १, पित्तिए २, सिंमिए ३, संनिवाइए ४।

चउव्विहा तिगिच्छा पणत्ता, तं जहा—विज्जो १, ओस-
धाइं २, आउरे ३, परिचारए ४ ॥ सू० ५ ॥

छाया—चतुर्विधो व्याधिः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वातिकः १, पैत्तिकः, श्लैष्मिकः
३, सन्निपातिकः ४।

चतुर्विधा चिकित्सा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—वैद्यः १, औषधानि २, आतुरः ३,
परिचारकः ४ ॥ सू० ५ ॥

समय क्षेत्र (अढाई द्वीप) प्रमाणवाले शरीरको अपने प्रभावसे प्रभा-
वित कर सकता है ऐसा जानना चाहिये यह सब कथन किसके विषका
कितना विषय है इस बातको प्रकट करनेके लिये किया गया है ॥सू०४॥

विषका परिणाम व्याधिरूप होता है अतः अब सूत्रकार व्याधिके
भेदोंका निरूपण करते हैं—“चउव्विहे वाही पणत्ते” इत्यादि सूत्र ५ ॥

सूत्रार्थ—व्याधि चार प्रकारकी कही गई है—जैसे—वातजन्य व्याधि १
पित्तजन्य व्याधि २ कफजन्य व्याधि ३ और सन्निपातजन्य व्याधि ४

चिकित्सा चार प्रकारकी कही गई है जैसे—वातकी चिकित्सा १
पित्तकी चिकित्सा २ कफकी चिकित्सा ३ और सन्निपातकी चिकित्सा ४

प्रभावित करवाने समर्थ होय छे. आ कथन थलु तेना प्रभाव भताववा
निमित्तो न करवामां आव्युं छे, अेम समञ्जसुं.

आ कथन वींछी आदिना विषनेो केटलो विषय छे ते प्रकट करवा माटे न
करवामां आव्युं छे. ॥ सूत्र ४ ॥

विषनुं परिणाम व्याधि ३५ होय छे. तेथी डवे सूत्रकार व्याधिना
भेदोनुं निश्चलु करे छे—“ चउव्विहे वाही पणत्त ” इत्यादि—सू. ५

सूत्रार्थ—व्याधिना चार प्रकार कहे छे—(१) वातजन्य, (२) पित्तजन्य, (३)
कफजन्य अने (४) सन्निपात जन्य.

चिकित्सा चार प्रकारनी कही छे—(१) वातनी चिकित्सा, (२) पित्तनी
चिकित्सा, (३) कफनी चिकित्सा अने (४) सन्निपातनी चिकित्सा.

ટીકા—“ ચતુર્વિદ્ધે વાહી ” इत्यादि—

व्याधिः—रोगः चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—वातिकः—वातो-वायुः, तस्मा-
ज्जातो वातिकः=वायुप्रकोपोत्पन्नः १, पैत्तिकः—पित्तप्रकोपभवः २, श्लैष्मिकः—
कफप्रकोपजातः ३, सान्निपातिकः=वातादिषु द्वयोस्त्रयाणां वा संयोगजः । वाता-
दीनां स्वरूपमन्यत्राभिहितम् । तत्र वातस्वरूपं यथा—

“ तत्र रूक्षो लघुः १ शीतः २ खरः ३ सूक्ष्म ४ श्रलो ५ अनिलः ”
इति । पित्तस्य यथा—पित्तं सस्नेह १ तीक्ष्णो २ ण्णं ३ लघु ४ विश्रं ५ सरं ६
द्रवम् ७ । ” इति, कफस्य—यथा—कफो गुरु १ हिमः २ स्निग्धः ३ प्रबळेदी ४

ટીકાર્થ—વ્યાધિ નામ રોગકા હૈ વાતકે પ્રકોપસે જો રોગ હોતા હૈ વહ વાતિક વ્યાધિ હૈ, પિત્તકે પ્રકોપસે જો વ્યાધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ પૈત્તિક વ્યાધિ હૈ, કફકે પ્રકોપસે જો રોગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ શ્લૈષ્મિક વ્યાધિ હૈ, એવં વાત આદિકોમં દો યા ત્રીનકે સંયોગસે જો વ્યાધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ સાન્નિપાતિક વ્યાધિ હૈ । વાતાદિકોકા સ્વરૂપ અન્યત્ર કહા ગયા હૈ જૈસે—વાતકા સ્વરૂપ એસા હૈ—

“ તત્ર રૂક્ષો લઘુઃ શીતઃ ” इत्यादि अनिल अर्थात् वायु, हलका ठंडा खर कर्कश स्पर्शवाला, सूक्ष्म और चल-चलन स्वभाववाला होता है । पित्तका स्वरूप ऐसा है—“ पित्तं सस्नेह तीक्ष्णोष्णं ” पित्त चिकना, तीखा, उष्ण-गरम, हलका, कच्चा गन्धवाला सर-सरण-गमन स्वभाववाला, द्रव-तरल और ढीला होता है ।

ટીકાર્થ—વ્યાધિ એટલે રોગ. વાયુના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને વાતજનિત વ્યાધિ કહે છે. પિત્તના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને પિત્તજન્ય વ્યાધિ કહે છે. કફના પ્રકોપથી જે રોગ થાય છે તેને શ્લૈષ્મિક વ્યાધિ (કફ જનિત વ્યાધિ) કહે છે.

વાત, પિત્ત અને કફ, આ ત્રણેના પ્રકોપથી અથવા તેમાંથી ગમે તે ળેના પ્રકોપથી જનિત રોગને સાન્નિપાતિક વ્યાધિ કહે છે. વાતાદિકોનું સ્વરૂપ અન્યત્ર પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. વાતનું સ્વરૂપ નીચે પ્રમાણે કહ્યું છે—

“ તત્ર રૂક્ષો લઘુઃ શીતઃ ” इत्यादि अनिल-वायु-पवन-हलको, ठंडा, ખર-કઠોર સ્પર્શવાળો, સૂક્ષ્મ અને ચલ-ચલન સ્વભાવવાળો હોય છે.

પિત્તનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે “ પિત્તં સસ્નેહ તીક્ષ્ણોષ્ણં ” ,इत्यादि पित्त चिकणुं, तीक्ष्णं, उष्णं, गरम, हलकं, कच्ची गंधवाणुं, सर-सरण-गमन स्वभाववाणुं द्रव-तरल અને ઢીલું હોય છે.

स्थिर ५ पिच्छिलः । ” इति, सन्निपातस्य-यथा-सन्निपातस्तु सङ्कीर्णलक्षणो
द्वयादिमीलकः ” इति ।

वातादीनां कार्याण्यपि तत्राऽभिहितानि, तत्र वातस्य कार्यं यथा-

“ पारुष्य-सङ्कोचन-तोद-शूल-श्यामत्व-मङ्गव्यथ-चेष्टभङ्गाः ।

सुप्तत्व-शीतत्व-खरत्व-शोषाः कर्माणि वायोः प्रवदन्ति तज्ज्ञाः । १ । ” इति।
पित्तस्य यथा-परिस्रव-स्वेद-विदाह-रागा वैगन्ध्य-संक्लेद-विपाक-कोपाः ।

प्रलाप-मूर्च्छा-भ्रमि-पीतभावाः पित्तस्य कर्माणि वदन्ति तज्ज्ञाः । २ । ” इति
कफस्य यथा-श्वेतत्व-शीतत्व-गुरुत्व-ऋण्ड-स्नेहोपदेह-स्तिमितत्वश्लेषाः ।

कफका स्वरूप ऐसा है-“ कफो गुरुर्हिमः स्निग्धः ” इत्यादि कफ-
गुरु-भोरी ठंडा चिकना क्लिन्न-गीला स्थिर होता है ।

सन्निपातका स्वरूप ऐसा है-“ सन्निपातस्तु संकीर्ण लक्षणो द्वयादि
मीलकः ” वातादिकोंके कार्य भी वहां कहे गये हैं--

वातका कार्य ऐसा कहा है-“ पारुष्यसंकोचनतोदशूल ” इत्यादि
अर्थात् शरीरमें कठिनता, संकोच, सूजन, शूल, श्यामता अंगपीडा
और चेष्टाका भंग, अधिक निद्रा होना. शरीरमें ठंडापन, खरदरापन
और कंठशोष होना इत्यादि है ।

पित्तका कार्य “ परिस्रवस्वेदविदाहरागा ” इत्यादि अर्थात् लार
आदि टपकना, पसीना, दाह, तग, दुर्गन्ध, गीला, पाककुपित होना,
बकना मूर्च्छा, चक्कर चढना, शरीरमें पीलापन इत्यादि है ।

कक्षुं स्वरूप आ प्रमाणे कक्षुं छे “ कफो गुरुर्हिमस्निग्धः ” इत्यादि
कक्षुं शुष्-लारे, ठंडा, चिकणो, क्लिन्न-नरम अने स्थिर डोय छे.

सन्निपातनुं स्वरूप आ प्रकारनुं कक्षुं छे-“ सन्निपातस्तु संकीर्णलक्षणो
द्वयादि मीलकः ”

वायुनुं कार्य आ प्रमाणे कक्षुं छे “ पारुष्यसंकोचनतोदशूल ” इत्यादि
अर्थात् शरीरमां कठणुता, सङ्कोच, सोले, शूल, काणाश, अंगपीडा अने
श्लेष्टानो लंग तेमळ उंघ वधारि आववी, शरीरमां ठंडापणुं, अरभयडापणुं
अने कंठशोष-गणुं सुकणुं अे रीते कक्षुं छे.

पित्तनुं कार्य-“ परिस्रवस्वेदविदाहरागा ” इत्यादि अर्थात् लार आदिनुं
टपकणुं, परसेवो, दाह, राग, दुर्गन्ध ठीलापणुं, कुपित थणुं, अकणुं, मूर्च्छा
आववी अक्षर आववा, शरीर पीणुं पडणु इत्यादि डोय छे.

ઉત્સેધ-સમ્પાત-ચિરક્રિયાશ્ચ કફસ્ય કર્માણિ વદન્તિ તજ્ઞાઃ ।૩।” ઇતિ ।
 અનન્તરં વ્યાધિરુક્તઃ, અધુના તચ્ચિકિત્સામાહ-“ ચત્ત્વિવિહા તિગિચ્છા ”
 ઇત્યાદિ-ચિકિત્સા-વ્યાધિપ્રતીકારઃ, ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞા, તદ્યથા-વૈદ્યઃ-પ્રસિદ્ધઃ ૧,
 ઔષધાનિ-હરીતક્યાદિરૂપાણિ ૨, આતુરઃ-રોગાર્ત ૩, પરિચારકઃ-શુશ્રૂષુઃ,
 एतत्सूत्रोक्तमपरैरप्यनुदितम्—

“ ભિષગ્ દ્રવ્યાણ્યુપસ્થાતા રોગી પાદચતુષ્ટયમ્ ।
 ચિકિત્સિતસ્ય નિર્દિષ્ટં પ્રત્યેકં તત્ત્વગુણમ્ । ૧ ।
 દક્ષો વિજ્ઞાતશાસ્ત્રાર્થો દષ્ટકર્મા શુચિર્ભિષક્ ।
 વહુકલ્પં વહુગુણં સમ્પન્નં યોગ્યમૌષધમ્ । ૨ ।
 અનુરુક્તઃ શુચિર્દક્ષો બુદ્ધિમાન્ પરિચારકઃ ।
 ધાઢ્યો રોગી ભિષગ્વશ્યો જ્ઞાપકઃ સત્ત્વવાનપિ । ૩। ” ઇતિ,
 इति द्रव्यरोगचिकित्सा ।

કફકા કાર્ય હસ પ્રકાર હૈ-“શ્વેતત્ત્વ ગીતત્ત્વ ગુરુત્ત્વ કણ્ઠૂ” ઇત્યાદિ
 શરીરમ્ સ્પેદી, ઠંડક, ભારીપન, કણ્ઠૂ-ખાજ, ચિકનાપન, ઇત્યાદિ હૈ
 “ ચત્ત્વિવિહા તિગિચ્છા ” વ્યાધિ પ્રતિકારરૂપ ચિકિત્સા ચાર
 પ્રકારકી કહી ગઈહૈ એસા કથન કરતે હૈ-ઇનમ્ એક કારણ વૈદ્યહૈ, દૂસરા
 કારણ ઔષધિયાં હૈ, તીસરા રોગાર્ત હૈ, ઓર ચૌથા પરિચારિક શુશ્રૂષા
 કરનેવાલા હૈ । હસ ચિકિત્સા સૂત્રમ્ જો કહો ગયાહૈ દૂસરે જનોને ભી
 હસે હસ પ્રકારસે અનુમોદિત ક્રિયા હૈ—

“ ભિષક દ્રવ્યાણિ ઉપસ્થાતા ” ઇત્યાદિ ।

વહ જો વૈદ્ય આદિકે ભેદસે ચિકિત્સા ચાર પ્રકારકી કહી ગઈ હૈ
 વહ દ્રવ્યરોગકી ચિકિત્સાકો લેકર કહા ગયા હૈ, મોહરૂપ ભાવરોગકી

કર્ણુ કાર્ય આ પ્રમાણે કર્ણુ છે “ શ્વેતત્ત્વગીતત્ત્વગુરુત્ત્વકણ્ઠૂ ”
 ઇત્યાદિ શરીરમાં સ્પેદી, ઠંડક, ભારીપણ કર્ણુ-ખંજવાળ આવવી, ચિકણ્ઠુ-
 પણુ ઇત્યાદિ છે.

આ પ્રમાણે વ્યાધિઓનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર વ્યાધિઓના
 પ્રતિકાર રૂપ ચિકિત્સાનું કથન કરે છે-“ ચત્ત્વિવિહા તિગિચ્છા ”

ચિકિત્સા ચાર પ્રકારની કર્ણી છે—(૧) ચિકિત્સા કરવામાં પહેલો મહદ-
 ગાર વૈદ અને છે, (૨) ઔષધિઓ પણ ચિકિત્સામાં કારણભૂત અને છે, (૩)
 રોગાર્ત (રોગી) પણ તેમાં કારણભૂત અને છે અને (૪) પરિચારક કે પરિ-
 ચારિકાઓ પણ ચિકિત્સામાં કારણ રૂપ અને છે આ વાતને અન્ય લોકોએ
 પણ અનુમોદિત કરી છે.—“ ભિષક દ્રવ્યાણિ ઉપસ્થાતા ” ઇત્યાદિ વૈદ આદિના

મોહરૂપભાવરોગચિકિત્સાત્વેવમ્—

“ નિવ્વિગદ્દ નિવ્વલોમે તવ ઉદ્દઘ્ઠાણમેવ ઉવ્ભામે ।

વેયાવચ્ચાહિંડણમંડલિક્કપ્પટ્ટિયાહરણં । ૧ ।

છાયા—“ નિર્વિકૃતિઃ નિર્વલમ્ અવમં તપ ઝર્ધ્વસ્થાનમેવ ઉદ્ભ્રામઃ ।

વૈયાટ્ટચ્યાઽઽહિંડનમણ્ડલી કલ્પસ્થિતાઽઽહરણમ્ । ૧ ।

અયમર્થઃ—નિર્વિકૃતિઃ—વિકૃતિપત્યાખ્યાનમ્, નિર્વલમ્—વલ્લચળકાઘન્નવિશેષઃ’
અવમં—ન્યૂનમ્ અવમોદરી, તપઃ—આચામામ્લાદિ, ઝર્ધ્વસ્થાનં કાયોત્સર્ગઃ, ઉદ્ભ્રામો-
મિક્ષાર્થભ્રમણમ્, વૈયાટ્ટચ્યમ્—અન્નપાનાદિભિઃ સાહાય્યકરણમ્, આહિંડનં—દેશેષુ
વિહારઃ, મણ્ડલી—સૂત્રાર્થસમૂહઃ, ણ્ણા મોહચિકિત્સા । અત્ર આહરણમ્=ઉદાહરણ-
કલ્પસ્થિતા=મર્યાદાસ્થિતા કુલવધૂઃ । સૂ ૦ ૫ ॥

પૂર્વે ચિકિત્સોક્તા, સા ચ ચિકિત્સકાધીનેતિ ચિકિત્સકં નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—ચત્તારિ તિગિચ્છયા પ્પણત્તા, તં જહા--આય તિગિ-
ચ્છણ્ણ નામમેગે નો પરતિગિચ્છણ્ણ ૧, પરતિગિચ્છણ્ણ નામમેગે

ચિકિત્સા હસ પ્રકારસે હૈ—“ નિવ્વિગદ્દ તિવ્વલોમે હત્યાદિ)

હસકા અર્થ હસ પ્રકારસે હૈ—ઘૃતાદિ વિકૃતિયોકા પ્રત્યાખ્યાન કરના
નિર્વલ બલ્લાદિ અન્ન વિશેષકા ઉપયોગ કરના, અર્થાત્ ભારી ખોરાક ન
લેના અવમ-ભૂખસે કામ કરના, ઝનોદર તપ કરના, આચામામ્લ આદિકી
તપસ્યા કરના કાયોત્સર્ગ કરના, મિક્ષાકે નિમિત્ત ભ્રમણ કરના, અન્નપાન
આદિસે વૃદ્ધગ્લાન આદિ સાધુજનોંકી સેવા કરના એક દેશસે દૂસરે દેશમેં
વિહાર કરના ઓર સૂત્રકા અર્થકા ઓર તદુભયકા પઠન પાઠન
કરના આદિ યે સવ મોહરૂપ આવરોગકી ચિકિત્સારૂપ હૈ ॥સૂ ૦ ૫ ॥

લેદ્ધી ચિકિત્સા એ ચાર પ્રકારની કહી છે તે દ્રવ્યારોગની અપેક્ષાએ કહેવામાં
આવેલ છે. મોહરૂપ ભાવરોગની ચિકિત્સા આ પ્રકારની છે—

“ નિવ્વિગદ્દ તિવ્વલોમે ” ઇત્યાદિ. આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે
છે—ધી આદિ વિકૃતિઓના પ્રત્યાખ્યાન કરવા, નિઃસત્ત્વ અન્નવિશેષોનો ઉપયોગ
કરવો, ભૂખ હોય તેના કરતા અલ્પ આહાર કરવો, ઊણોદરી તપ કરવું,
આય બિલ આદિ તપસ્યા કરવી, કાયોત્સર્ગ કરવો, મિક્ષા નિમિત્તે ભ્રમણ
કરવું, વૃદ્ધ, ગ્લાન (બિમાર) આદિને માટે અન્નપાન લાવી દધને તેમની
સેવા કરવી, એકદેશમાંથી બીજા દેશમાં વિહાર કરવો, તથા સૂત્રનું, અર્થનું
અને તે બંનેનું પઠન પાઠન કરાવવું, આદિ કાર્યો મોહરૂપ
ભાવરોગની ચિકિત્સા રૂપ છે એમ સમજવું. ॥ સૂ ૦ ૫ ॥

नो आयतिगिच्छए २। आयतिगिच्छएवि, परतिगिच्छएवि ३।
नो आयतिगिच्छए नो परतिगिच्छए ४। (१)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-वणकरे णाममेगे
णो वणपरिमासी १, वणपरिमासी नाममेगे णो वणकरे २, एगे
वणकरे वि वणपरिमासी वि ३, एगे णो वणकरे णो वणपरि-
मासी ४। (१)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-वणकरे णाममेगे
णो वणसारक्खी ४ (२)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-वणकरे णाममेगे
णो वणसंरोही ४ (३)

चत्तारि वणा पणत्ता, तं जहा-अंतोसल्ले नाममेगे णो
बहिसल्ले ४ (१) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं
जहा-अंतोसल्ले णाममेगे णो ब्वाहिसल्ले ४ (२)

चत्तारि वणा पणत्ता, तं जहा-अंतोदुट्ठे णाममेगे णो
बहिंदुट्ठे, ब्वाहिंदुट्ठे णाममेगे णो अंतोदुट्ठे, ४, (३) एवामेव
चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-अंतो दुट्ठे णाममेगे णो
बाहिंदुट्ठे ४ (४)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-सेयंसे णाममेगे
सेयंसे १, सेयंसे णाममेगे पावंसे २, पावंसे णाममेगे सेयंसे ३,
पावंसे णाममेगे पावंसे ४, (१)

चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-सेयंसे णाममेगे सेयं-
सेत्ति सालिसए, सेयंसे णाममेगे पावंसेत्ति सालिसए ४ (२)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे
सेयंसेत्ति मण्णइ, सेयंसेत्ति णाममेगे पावंसेत्ति मण्णइ ४, (३)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--सेयंसे णाममेगे
सेयंसेत्ति सालिसए मण्णइ, सेयंसे णाममेगे पावंसेत्ति सालिसए
मण्णइ ४ (४)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--आघवइत्ता णाम-
मेगं णो परिभावइत्ता, परिभावइत्ता णाममेगे णो आघवइत्ता ४(५)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--आघवइत्ता णाम-
मेगे णो उंछजीविसंपन्ने, उंछजीविसंपन्ने णाममेगे णो
आघवइत्ता ४ (६)

चउव्विहा रुक्खविगुठ्वया पण्णत्ता, तं जहा--पवालत्ताए
१, पत्तत्ताए २, पुप्फत्ताए ३, फलत्ताए ४। (७) ॥ सू० ६ ॥

छाया—चत्वारश्चिकित्सकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आत्मचिकित्सको नामैको
नो परचिकित्सकः १, परचिकित्सको नामैकः नो आत्मचिकित्सकः २। एक
आत्मचिकित्सोऽपि परचिकित्सकोऽपि ३, एको नो आत्मचिकित्सकः नो परचि-
कित्सकः ४, (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणपरिमर्शी
१, व्रणपरिमर्शी नामैको नो व्रणकरः २, एको व्रणकरोऽपि व्रणपरिमर्श्यपि ३,
एको नो व्रणकरो नो व्रणपरिमर्शी ४। (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणसंरक्षी०
४। (२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—व्रणकरो नामैको नो व्रणसंरोही०
४। (३)

चत्वारो व्रजाः प्रज्ञाः, तद्यथा-अन्तःशल्यो नामैको नो वह्निःशल्यः, (१)
एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-अन्तःशल्यो नामैको नो वह्निः
शल्यः ४, (२)

चत्वारो व्रणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अन्तर्दुष्टो नामैको नो वह्निर्दुष्टः, वह्निर्दुष्टो
नामैको नो अन्तर्दुष्टः ० ४ (३) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-
अन्तर्दुष्टो नामैको नो वह्निर्दुष्टः ० ४, (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रेयान् नामैकः श्रेयान् १, श्रेयान्
नामैकः पापीयान् २, पापीयान् नामैकः श्रेयान् ३, पापीयान् नामैकः पापी-
यान् ४। (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रेयान् नामैकः श्रेयानिति सदृशकः,
श्रेयान् नामैकः पापीयानिति सदृशकः ० ४ (२)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रेयानिति नामैकः श्रेयानिति
मन्यते, श्रेयानिति नामैकः पापीयानिति मन्यते ० ४, (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रेयान् नामैकः श्रेयानिति सदृशकः
मन्यते, श्रेयान् नामैकः पापीयानिति सदृशको मन्यते ० ४, (४)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आख्यायको नामैको नो परिभाव-
यिता, परिभावयिता नामैको नो आख्यायकः ० ४, (५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आख्यायको नामैको नो उञ्छजी-
विका सम्पन्नः १, उञ्छजीविका सम्पन्नो नामैको नो आख्यायकः ० ४, (६)

चतुर्विधा वृक्षविकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-प्रवालतया १, पत्रतया २, पुष्पतया,
फलतया ४। ॥ सू० ६ ॥

टीका—“ चत्वारि तिगिच्छगा ” इत्यादि—

चिकित्सकाः रोगप्रतिकारकाः, ते च द्विधा-द्रव्यतो भावतश्च । तत्र-द्रव्यतो-
ज्वरादिरोगानाम्, भावतस्तु रागादीनां बोध्याः, ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-

चिकित्सा रोग प्रतीकार चिकित्सकके आधीन होती है अतः
अथ सूत्रकार चिकित्सककी निरूपणा करते हैं—

“चत्वारि तिगिच्छया पण्णत्ता” इत्यादि सूत्र ६ ॥

टीकार्थ—चार चिकित्सक कहे गये हैं जैसे कोई एक चिकित्सक ऐसा होता
है जो अपनी चिकित्सा करता है परकी चिकित्सा नहीं करता है १

चिकित्सानो आधार चिकित्सक पर रहे छे तेथी हवे सूत्रकार चिकि
त्सकनुं निरूपण करे छे—“ चत्वारि तिगिच्छया पण्णत्ता ” इत्यादि—(सू ६)

टीकार्थ—चिकित्सक चार प्रकारना कहे छे—(१) कोछ अके चिकित्सक अवेो होथ
छे के वे पोतानी चिकित्सा करे छे, पण्ण परनी चिकित्सा करतो नथी. (२)

एकः—कश्चिच्चिकित्सकः आत्मचिकित्सकः—आत्मनो ज्वरादेः कामादेर्वा चिकित्सकः—प्रतिकारको भवति, किन्तु नो परचिकित्सकः—परस्य—अन्यस्य ज्वरादेः कामादेर्वा नो चिकित्सकः १, इति प्रथमः १।

एकः परचिकित्सको भवति न तु आत्मचिकित्सकः २, एक आत्मचिकि कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परकी चिकित्सा करता है, अपनी चिकित्सा नहीं करता है २। तीसरा चिकित्सक ऐसा होता है जो अपनी भी चिकित्सा करता है, और परकी भी चिकित्सा करता है ३। और कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपनी चिकित्सा करता है, और न परकी चिकित्सा करता है ४। अर्थात् चिकित्सक वही होता है जो रोगका प्रतीकार करनेवाला होता है, ये चिकित्सक द्रव्य और भावकी अपेक्षा दो प्रकारके कहे गये हैं—जो ज्वरादि रोगोंका प्रतीकार करते हैं, वे द्रव्य चिकित्सक हैं और जो रागादि रूप रोगोंका प्रतीकार करते हैं वे भाव चिकित्सक हैं। इन चिकित्सकोंकेही यहां ये चार प्रकार कहे गये हैं इनमें कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकका प्रतिकारक होता है पर—अन्यके ज्वरादिका अथवा कामादिकका चिकित्सक नहीं होता है । १ ऐसा यह प्रथम विकल्प है । दूसरा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परके ज्वरादिकोंका या

कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो परकी चिकित्सा करता है, अपनी चिकित्सा नहीं करता है (३) कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपनी भी चिकित्सा करता है, और परकी भी चिकित्सा करता है (४) कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपनी चिकित्सा करता है, और न परकी चिकित्सा करता है (५) कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकका प्रतिकारक होता है पर—अन्यके ज्वरादिकोंका अथवा कामादिकका चिकित्सक नहीं होता है । १ ऐसा यह प्रथम विकल्प है । दूसरा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परके ज्वरादिकोंका या

कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो परकी चिकित्सा करता है, अपनी चिकित्सा नहीं करता है (३) कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपनी भी चिकित्सा करता है, और परकी भी चिकित्सा करता है (४) कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपनी चिकित्सा करता है, और न परकी चिकित्सा करता है (५) कोई चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकका प्रतिकारक होता है पर—अन्यके ज्वरादिकोंका अथवा कामादिकका चिकित्सक नहीं होता है । १ ऐसा यह प्रथम विकल्प है । दूसरा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो परके ज्वरादिकोंका या

त्सकोऽपि परचिकित्सकोऽपि ३, एको नो आत्मचिकित्सको नो परचिकित्सकः । ४ । इति ।

अथाऽऽत्मचिकित्सकान् भेदतः सूत्रत्रयेणाऽऽह—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञानानि, तद्यथा—एकः—आत्मचिकित्सकः, व्रणकरः—व्रणं—शरीरे क्षतं स्वयं करोतीत्येवं शीलो व्रणकरो भवति, किन्तु नो व्रणपरिमर्शी—व्रणं परिमृशति—स्पृशतीत्येवं शीलो व्रणपरिमर्शी व्रणस्पर्शी न भवति । इति प्रथमः १ । तथा—एको—व्रणपरिमर्शी भवति किन्तु व्रणकरो न भवति, इति

कामादि विकारोंका चिकित्सक होता है अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक नहीं होता है २ । तृतीय प्रकारका कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका भी चिकित्सक होता है और परके ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका भी चिकित्सक होता है ३ । तथा कोई एक चिकित्सक ऐसा होता है जो न अपने ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक होता है, और न परकेही ज्वरादिकोंका या कामादिकोंका चिकित्सक होता है ४ ।

अथ सूत्रकार आत्मचिकित्सकोंका उनके भेदोंको लेकर तीन सूत्रसे कथन करते हैं—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—

पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमें कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणकर होता है व्रणपरिमर्शी नहीं होता है अर्थात् जो शरीरमें क्षत—घाव स्वयं करता है पर व्रणस्पर्शी नहीं होता है १ । तथा

डाय छे, पणु पोताना ज्वरादिके अथवा कामादिकेनो चिकित्सक डोतो नथी. (३) डोथ ओक चिकित्सक ओवे डोय छे के जे पोताना अने अन्यना ज्वरादिक रोगेनो अने कामादिक विकारेनो चिकित्सक डोय छे. (४) डोथ ओक चिकित्सक ओवे डोय छे के जे पोताना ज्वरादिक रोगेनो अथवा कामादिक विकारेनो चिकित्सक पणु डोतो नथी अने परना ज्वरादिक रोगेनो अथवा कामादिक विकारेनो पणु चिकित्सक डोतो नथी.

छेवे सूत्रकार आत्मचिकित्सकोंका लेहोनुं त्रणु सूत्रे द्वारा निःपणु करे छे—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषेना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कथा छे—(१) डोथ ओक आत्मचिकित्सक ओवे डोय छे के जे व्रणकर डोय छे पणु व्रणपरिमर्शी डोतो नथी. ओटसे के जे पोते शरीरमां क्षत (घाव) करे छे पणु व्रणस्पर्शी डोतो नथी. (२) डोथ ओक आत्मचिकित्सक ओवे डोय छे

द्वितीयः २। तथा—एको व्रणकरोऽपि व्रणपरिमर्श्यापि च भवति । इति तृतीयः ३।
एको नो व्रणकरो नो व्रणपरिमर्शी च भवतीति चतुर्थः । ४।

इति द्रव्यव्रणमाश्रित्य व्याख्या ।

भावव्रणमाश्रित्य तु—व्रणकरः—व्रणम्—अतिचारलक्षणं करोति कायेनेत्येवंशीलो भवति किं तु न व्रणपरिमर्शी—व्रणमतिचाररूपं परिमृशति—पुनः पुनः स्मरणेन स्पृशतीत्येवं शीलो न भवति, इति प्रथमः १।

तथा—एकः—व्रणपरिमर्शी—अतिचारस्य स्मरणेन पुनः पुनः स्पर्शनशीलो भवति किन्तु न व्रणकरः—अतिचारकरणशीलो न भवति कायतः संसारभयादिभिः । इति द्वितीयः २। एवं शेषमङ्गद्वयम् ।

कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होना है जो व्रणको—घावको स्पर्श करता है पर व्रणको करनेवाला नहीं होता है २। कोई एक तीसरा आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणको करनेवाला भी होता है और व्रणका स्पर्श करनेवाला भी होता ३। और कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है और न व्रणपरिमर्शीही होता है ४। यह व्याख्या द्रव्य व्रणको आश्रित करके की गई है भावव्रण को आश्रित कर के व्याख्या इस प्रकार से है — कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो कायसे अतिचार रूप व्रणको करनेके स्वभाववाला होता है पर अतिचार रूप उस व्रणको वह पुनः पुनः स्मरणसे स्पर्श नहीं करता है १। कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो अतिचार रूप व्रणको पुनः पुनः स्मरणसे स्पर्श न करनेके स्वभा-

के ने व्रणस्पर्शी होय छे पणु व्रणकर (घाव करनारो) होतो नथी. (३) कोछ ओक आत्मचिकित्सक ओवो होय छे के ने व्रणकर पणु होय छे अने व्रणस्पर्शी पणु होय छे. (४) कोछ ओक आत्मचिकित्सक ओवो होय छे के ने व्रणकर पणु होतो नथी अने व्रणस्पर्शी पणु होतो नथी. आ आर प्रकारो द्रव्यव्रणने अनुलक्षीने पाठवामां आव्या छे लावव्रणुनी अपेक्षाओ आत्मचिकित्सकना नीचे प्रमाणे आर प्रकार पठे छे—(१) कोछ ओक आत्मचिकित्सक ओवो होय छे के ने काया वडे अतिचार रूप व्रण करनारो होय छे, परन्तु अतिचार रूप ते व्रणुं इरी इरीने स्मरणु करनारो होतो नथी. ओठवे के ते अतिचारनो स्मरणु वडे स्पर्श करनारो होतो नथी. (२) कोछ ओक आत्मचिकित्सक ओवो होय छे के ने अतिचार रूप व्रणुनो इरी इरीने स्मरणु वडे स्पर्श करवाना स्वभाववाणो होय छे. पणु संसारना लय आदिने कारणे

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रवृत्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित्पुरुषो व्रणकरः—द्रव्यतः शरीरे क्षतकरः, भावतोऽतिचारलक्षणव्रणकरो भवति, किन्तु न व्रणसंरक्षी—द्रव्यतो व्रणस्य पटवन्धनादिना संरक्षणकारी भावतोऽतिचारस्य सानुबन्धीभवतः कुशीलादिजनसंसर्गतत्रिदानापनयनतः संरक्षणकारी न भवति । इति प्रथमः १।

तथा—व्रणसंरक्षी नामैको नो व्रणकरः इति द्वितीयः २, तथा—एको व्रणकरोऽपि व्रणसंरक्ष्यपि ३ इति तृतीयः ३। तथा—एको नो व्रणकरो नो व्रणसंरक्षीति चतुर्थः । भङ्गत्रयं प्रथमभङ्गमनुसृत्य विवरणीयम् ।

ववाला होता है, पर संसारके भय आदिसे अतिचार करनेके स्वभाववाला नहीं होता है इसी तरहसे शेष दो भङ्गोंका कथन भी कर लेना चाहिये ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमेंसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्यकी अपेक्षा अपने शरीरमें व्रणकर होता है और भावकी अपेक्षा अतिचार रूप व्रण करनेवाला होता है, किन्तु वह द्रव्यकी अपेक्षा उसका पट्टी बाँधने आदि रूपसे संरक्षणकारी नहीं होता है, और भावकी अपेक्षा अनुबन्ध सहित होनेवाले अतिचारका कुशील आदि जनके संसर्गको एवं अतिचारके कारणोंको हटानेसे संरक्षणकारी नहीं होता है ऐसा यह प्रथमभङ्ग है । तथा कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो व्रणसंरक्षी होता है पर व्रणकर नहीं होता है २। कोई एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है, और न व्रणसंरक्षी होता है ३। तथा कोई

अतिचार करवाना स्वभाववाणो डोतो नथी, अथ प्रभाणु षाडीना णे भांगा पणु समलु लेवा.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषोना नीचे प्रभाणु चार प्रकार पणु कहा छे—(१) कोठ अक पुरुष अवेो डोय छे के ने द्रव्यनी अपेक्षाअे पोताना शरीरमां पणु करनादे डोय छे अने लावनी अपेक्षाअे अतिचार इय पणु करनादे डोय छे, परन्तु ते द्रव्यनी अपेक्षाअे तेना पर पाटो आदि भांधवा इय संरक्षणकारी डोतो नथी अने लावनी अपेक्षाअे अतिचारना अतिचारना कारणोने हर करवाना स्वभाववाणो—संरक्षणकारी डोतो नथी, कारणु के अवेो भाणुस कुशीलवाणा जनोने संसर्ग राधनादे अने अतिचारोनुं सेवन करनादे डोय छे.

(२) कोठ अक आत्मचिकित्सक अवेो डोय छे के ने व्रणसंरक्षी डोय छे पणु व्रणकर डोतो नथी. (२) कोठ अक आत्मचिकित्सक अवेो डोय छे के ने व्रणकर डोय छे पणु व्रणसंरक्षी डोतो नथी. (४) कोठ अक आत्म

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषो व्रणकरः द्रव्यतः क्षतकरः, भावतोऽतिचारकरो भवति, किन्तु व्रणसंरोही—द्रव्यतो व्रणं संरोहयति—औषधदानादिना नैरुज्य करोतीत्येवंशीलो व्रणसंरोही न भवति, भावतो व्रणमतिचारं संरोहयतीत्येवं शीलो न भवति, प्रायश्चित्ताप्रतिपत्तेः इति प्रथमः १।

तथा—एको व्रणसंरोही—द्रव्यतः क्षतनैरुज्यकारी, भावतोऽतिचारसंशोधी च पूर्वकृतातिचारप्रायश्चित्तपतिपत्त्या भवति, किन्तु व्रणकरः=द्रव्यतः क्षतकरः, भावतस्तु अतिचारकरो न भवति, इति द्वितीयः २।

एक आत्मचिकित्सक ऐसा होता है जो न व्रणकर होता है और व्रण-संरक्षी होता है ४ इन तीन भङ्गोंकी व्याख्या प्रथम भङ्गकी व्याख्याको हृदयंगम करके कर लेनी चाहिये ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुष जात चार कहे गये हैं इनमें एक पुरुष ऐसा होता है जो व्रणकर होता है, द्रव्यकी अपेक्षा व्रण-घावको करनेवाला होता है, और भावकी अपेक्षा अतिचार करनेवाला होता है, किन्तु वह व्रण संरोही (रुझानेवाला) नहीं होता है—द्रव्यकी अपेक्षा औषधिदान आदिसे उसे निरोग अवस्थावाला नहीं करता है । और भाव की अपेक्षा उन अतिचारोंकी प्रायश्चित्त आदि नहीं लेनेसे शुद्धि नहीं करता है, ऐसा यह प्रथमभङ्ग है । कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्यकी अपेक्षासे व्रणको ठीक करता है और भावकी अपेक्षासे अति-चारकी शुद्धि करता है क्योंकि पूर्वकृत अतिचारोंकी शुद्धि प्रायश्चित्तलेनेसे

चिकित्सक એવો હોય છે કે જે વ્રણકર પણ હોતો નથી અને વ્રણસંરક્ષી પણ હોતો નથી. બીજા, ત્રીજા અને ચોથા વિકલ્પોની વ્યાખ્યા પહેલા 'વિકલ્પની વ્યાખ્યાને આધારે સમજી લેવી.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” — ઇત્યાદિ - પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કેઈ એક પુરુષ વ્રણકર હોય છે પણ વ્રણસંરોહી હોતો નથી. એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વ્રણ (ઘાવ) કરનારો હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ અતિચાર સેવનારો હોય છે, પરન્તુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ઔષધિ આદિ દ્વારા તેને રોગરહિત કરનારો હોતો નથી અને ભાવની અપેક્ષાએ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ દ્વારા તે અતિચારોની શુદ્ધિ કરનારો હોતો નથી. (૨) કેઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે વ્રણસંરોહી હોય છે પણ વ્રણકર હોતો નથી. એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ વ્રણને ઔષધિ આદિ દ્વારા રૂઝવનારો હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ દ્વારા અતિચારોની

एवं-एको व्रणसंरोहपि व्रणकरोऽपि इति तृतीयः ३, तथा-एको नो व्रणसं-
रोही नो व्रणकरः । इति चतुर्थः । ४ ।

इत्यात्मचिकित्सकनिरूपणा ।

अथ चिकित्स्यव्रणं दृष्टान्तीकृत्य पुरुषभेदानाह—

“ चत्वारिव्रणा ” इत्यादि—व्रणाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चिद्
व्रणः अन्तःशल्यः-अन्तः-मध्ये शल्यं-यस्यादृश्यमानतया सोऽन्तःशल्यो भवति,
किन्तु वहिःशल्यो-वहिः-व्रणस्यान्तर्गताल्पशल्यपेक्षया वहिःप्रदेशे शल्यं
यस्य स वहिःशल्यो न भवति इति प्रथमः । १ । तथा-एको वहिःशल्यो भवति

होतीहै किन्तु व्रणकर द्रव्यकी अपेक्षा क्षतकर(घाव करनेवाला)नहीं होता
है और भावकी अपेक्षा अतिचार कर नहीं होता है ऐसा यह द्वितीय
भङ्ग है । कोई एक पुरुष ऐसा होताहै, जो व्रण संरोही भी होताहै, और
व्रणकर भी होता है ऐसा यह तृतीय भङ्गहै । तथा कोई एक पुरुष ऐसा
होता है जो न व्रणसंरोही होता है और न व्रणकर होता है ४ इस
प्रकारसे यह आत्मचिकित्सककी निरूपणा है

अब सूत्रकार चिकित्साके योग्य व्रणको दृष्टान्तभूत करके पुरुष
भेदोंका कथन करते हैं—

“ चत्वारि व्रणा ” इत्यादि-व्रण चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-
कोई एक व्रण ऐसा होता है जो अन्तःशल्यवाला होता है, किन्तु वहिः-
शल्यवाला नहीं होता है अदृश्यमान होनेसे नहीं दिखलाई पडनेसे-
मध्यमें है शल्य-दुःख जिसको ऐसा वह व्रण अन्तःशल्यवाला कहा गया

शुद्धि करनासे डोय छे परन्तु द्रव्यनी अपेक्षाअे व्रणु (क्षत-घाव) करनासे
डोतो नथी अने भावनी अपेक्षाअे अतिचारानु सेवन करनासे पणु डोतो
नथी. (३) कोठि अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने व्रणुकर पणु डोय छे अने
व्रणुसंरोही पणु डोय छे. (४) कोठि अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने व्रणुकर
पणु डोतो नथी अने व्रणुसंरोही पणु डोतो नथी. आ प्रमाणे आत्मचिकि
त्सकनुं निरूपणु करीने डेवे सूत्रकार चिकित्साने योग्य व्रणुना दृष्टान्त द्वारा
पुरुष भेदानुं कथन करे छे—

“ चत्वारि व्रणा ” इत्यादि—व्रणुना नीअे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे-
(१) कोठि अेक व्रणु (घाव) अन्तःशल्यवाणे डोय छे पणु “नो वहिः शल्य.”
अडिशल्यवाणे डोतो नथी अेठेवे के कोठि व्रणु अेवो डोय छे के ने अदृश्य
मान होवाथी अंदरने अंदर व्यथा करनासे डोय छे, पणु शरीरना आह
भागमां पीडा करनासे डोतो नथी. अथवा कोठि व्रणु अेवो डोय छे के ने
आंतरिक वेदना उत्पन्न करनासे डोय छे पणु आहवेदना उत्पन्न करनासे

न तु अन्तःशल्यः, इति द्वितीयः । २ । तथा—एकोऽन्तःशल्योऽपि बहिःशल्योऽपि भवति, इति तृतीयः३। तथा—एको नो अन्तःशल्यो न बहिःशल्यः, इति चतुर्थः४।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव—व्रणवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञसानि, तद्यथा—एकः कश्चित् पुरुषः अन्तःशल्यः—अन्तः—अन्तःकरणवर्ति शल्यम्—अतिचारलक्षणं यस्य स तथा—अनालोचितातिचारो भवति न है बाहरमें जिसकी वेदना नहीं होती है ऐसा वह व्रण “ नो बहिःशल्यः ” ऐसा कहा गया है तात्पर्य ऐसा कहा गया है कि कितनेक व्रण ऐसे होते हैं जो भीतरही भीतर दुःख देते हैं—बाहरमें उनकी वेदना नहीं होती है भीतरमें जितनी वेदना होती है उतनी वेदना बाहरमें—बाहरके स्थानमें नहीं होती है ऐसा यह प्रथम भङ्ग है । कोई एक व्रण ऐसा होता है कि जो बहिःशल्यवाला होता है भीतरमें शल्यवाला नहीं होता है अर्थात् जहां वह होता है उतनेही ऊपरी स्थानमें वह वेदनाकारक होता है, भीतरमें वह वेदनाकारक नहीं होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है तथा कोई एक व्रण ऐसा होता है जो भीतर बाहर दोनों स्थानोंमें वेदनाकारी होता है ऐसा यह तृतीय भङ्ग है । तथा कोई एक व्रण ऐसा होता है जो न भीतरही वेदनाकारी होता है और न बाहरही वेदनाकारी होता है ऐसा यह चौथा भङ्ग है ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—इसी तरहसे पुरुष जात भी चार होते हैं जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल अन्तःशल्यवाला ही होता है बहिःशल्यवाला नहीं होता है अर्थात् अतिचार रूप

डोतो नथी. अथवा अधिक आन्तरिक वेदना अने आधी आह्य वेदना करनारे डोय छे. (२) केध अेक व्रण अेवो डोय छे के अे अडिशल्यवाणेो डोय छे पणु अन्तःशल्यवाणेो डोतो नथी. अेटले के शरीरना अे आह्य लागमां व्रणु पड्यो डोय अेटला लागमां अे वेदना उत्पन्न करनारे डोय छे पणु आंतरिक वेदना उत्पन्न करनारे डोतो नथी. (३) केध अेक व्रणु अेवो डोय छे के अे आंतरिक अने आह्य, अन्ने प्रकारनी वेदना उत्पन्न करनारे डोय छे. (४) केध अेक व्रणु अेवो डोय छे के अे आंतरिक वेदनाकारी पणु डोतो नथी अने आह्य वेदनाकारी पणु डोतो नथी.

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—व्रणुना चार प्रकारे अेवा पुरुषना पणु चार प्रकारे कह्या छे—(१) केध अेक पुरुष अेवो डोय छे के अे केवण अन्तःशल्यवाणेो डोय छे पणु अडिशल्यवाणेो डोतो नथी अेटले के अतिचार

તુ વહિઃશલ્યઃ—ક્રિયાપરિણતાતિચાર—આલોચિતાતિચારો ન ભવતિ, इति प्रथमः
 ૧, તથા—एको वहिःशल्यो वहिः शल्यमालोचिततया यस्य स तथा—आलोचिता-
 तिचारो भवति न तु अन्तःशल्यः—अनालोचितातिचारी भवति, इति द्वितीयः २।
 तथा—एकोऽन्तःशल्योऽपि—अनालोचितातिचारोऽपि वहिःशल्योऽपि आलोचिता-
 तिचारोऽपि भवति, इति तृतीयः ३। तथा—एको नो अन्तःशल्यो न वहिःशल्यः।
 इति चतुर्थः ४। (२)

શલ્ય જિસકે અન્તઃકરણમેંહી રહતા હૈ વાહરમેં નહીં રહતા હૈ, વાહરમેં
 તો વહ જિતની મી ક્રિયાએ કરતા હૈ ઉનમેં અતિચાર નહીં લગાતા હૈ
 અતઃ એસા વહ મનુષ્ય ક્રિયા પરિણન અતિચારવાલા નહીં હોનેસે
 આલોચિત અતિચારવાલા નહીં હોતાહૈ, હસ પ્રકારકા યહ પ્રથમભદ્રહૈ ।
 તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો વહિઃશલ્યવાલાહી હોતાહૈ,
 અન્તઃશલ્યવાલા નહીં હોતા હૈ, એસા વહ પુરુષ વાહિરી ક્રિયા
 જો અતિચાર લગતે હૈ, ઉનકી તો આલોચના નહીં કરતા હૈ, કેવલ
 માનસિક અતિચારોંકા હી આલોચના કરતા હૈ એસા વહ પુરુષ
 દ્વિતીયભદ્રમેં લિયા ગયા હૈ । તથા તીસરે પ્રકારકા પુરુષ એસા હોતા હૈ
 જો કાયિક ઓર માનસિક દોનોં પ્રકારકે મી અતિચારોંકી આલોચના
 નહીં કરતા હૈ અર્થાત્ માનસિક અતિચારોંકી આલોચના નહીં કરનેસે
 અન્તઃશલ્યવાલા મી હોતા હૈ, ઓર વાહિરી ક્રિયામેં આગત
 અતિચારોંકી આલોચના નહીં કરનેસે વહિઃશલ્યવાલા મી હોતા હૈ
 એસા વહ પુરુષ તૃતીયભદ્રવાલા હોતા હૈ । તથા ચતુર્થભદ્રમેં વહ પુરુષ

इयं शल्य केवलं तेना अतःकरणमां न रडे छे, पणु अहार रडेतुं नथी.
 अटले के तेनी भाह्य क्रियाओ अतिचार रडित डाय छे. तेथी ते मनुष्य
 क्रियापरिणत अतिचारवाणे नहीं डोवाथी आलोचित अतिचारवाणे डोते
 नथी, आ प्रकारने आ पडेले लांगे छे (२) केध अक पुरुष अवे डाय
 छे के ने अडि शल्यवाणे डाय छे पणु अन्तःशल्यवाणे डोते नथी. अवे
 पुरुष भाह्य क्रियाकांडोमां ने अतिचारे लागे छे तेमनी आलोचना तो करते
 नथी, पणु मानसिक अतिचारेनी न आलोचना करे छे. आ प्रकारने पुरुष
 भीन भांगामां गणुवी शक्य छे. (३) केध अक पुरुष अवे डाय छे के
 कायिक अने मानसिक अने प्रकारने अतिचारेनी आलोचना करते नथी.
 अटले के मानसिक अतिचारेनी आलोचना नहीं करवाने कारणु ते अंतः-
 शल्यवाणे पणु डाय छे अने भाह्य क्रियाकांडोने लीधे लागेला अतिचारेनी
 आलोचना नहीं करवाने कारणु भाह्यशल्यवाणे पणु डाय छे. आ प्रकारने
 पुरुष त्रीन लांगवाणे गणुय छे. (४) केध अक पुरुष अवे डाय छे के

पुनर्व्रणदृष्टान्तसूत्रम्—

“ चत्वारि वणा ” इत्यादि—व्रणाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको व्रणः अन्त-
र्दुष्टः—अन्तः—मध्ये दुष्टः—लूतादि दोषयुक्तो भवति, किंतु न वहिर्दुष्टः—वहिन्या-
प्तोक्तदोषयुक्तो न भवति, इति प्रथमः । १ । तथा—एको वहिर्दुष्टो भवति न
त्वन्तर्दुष्टः, इति द्वितीयः २, तथा—एकोऽन्तर्दुष्टोऽपि वहिर्दुष्टोऽपि च भवति,
इति तृतीयः ३। तथा—एको नो अन्तर्दुष्टो नो वहिर्दुष्टः । इति चतुर्थः ४। (३)

आता है जो न अन्तःशल्यवालाही होता है, और न वहिः शल्यवाला
ही होता है, ऐसा पुरुष केवलज्ञानी आत्मा ही होता है ।

पुनश्च—“ चत्वारि वणा ” इत्यादि—व्रण चार प्रकारके कहे गये
हैं—जैसे एक अन्तर्दुष्ट नो वहिर्दुष्ट, १ वहिर्दुष्ट नो अन्तर्दुष्ट २ अन्त
र्दुष्ट भी और वहिर्दुष्ट भी ३ और न अन्तर्दुष्ट नो वहिर्दुष्ट ४ इनमें
प्रथम प्रकारका जो व्रण होता है वह भीतरमें तो लूतादि (वातादि रोग)
दोषसे युक्त होता है, पर बाहरमें लूतादि (वातादि रोग) दोषसे युक्त
नहीं होता है, द्वितीय प्रकारका जो व्रण होता है वह बाहरमेंही लूतादि
दोषसे युक्त है भीतरमें लूतादि दोषसे युक्त नहीं होता है । तृतीय
प्रकारका व्रण भीतर बाहर दोनों जगहमें लूतादि दोषसे युक्त रहता
है और चौथे प्रकारका व्रण न भीतरमें लूतादि दोषवाला होता है और
न बाहरमेंही लूतादि दोषवाला होता है ४

७ अन्तःशल्यवाणो पणु डोतो नथी अने अहिःशल्यवाणो पणु डोतो नथी—
केवलज्ञानी एवने आ प्रकारमां भूझी शक्य छे आ योथा लागे समजवे।

“ चत्वारि वणा ” इत्यादि—व्रणना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहे
छे—(१) अंतर्दुष्ट नो अहिर्दुष्ट, (२) अहिर्दुष्ट नो अंतर्दुष्ट, (३) अंत-
र्दुष्ट अने अहिर्दुष्ट अने (४) नोअंतर्दुष्ट नोअहिर्दुष्ट आ चार प्रकारनुं
स्पष्टीकरण—पडेला प्रकारनो पणु अंदरथी तो वातादि दोषथी युक्त डोय
छे पणु अंदरथी वातादि दोषथी युक्त डोतो नथी, भीज प्रकारनो ७ पणु
कहो छे ते अंदरथी तो वातादि दोषथी युक्त डोय छे पणु अंदरथी वातादि
दोषथी युक्त डोतो नथी भीज प्रकारनो पणु अंदर अने अंदर अने ७ग्याये
वातादि दोषथी युक्त डोय छे योथा प्रकारनो पणु अंदर पणु वातादि दोषथी
युक्त डोतो नथी अने अंदरथी पणु वातादि दोषथी युक्त डोतो नथी

અથ દાર્ષ્ટાન્તિકપુરુષસૂત્રમ્—

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—

એવમેવ—વ્રણવદેવ ચત્તારિ પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથયા—એકઃ—કશ્ચિત્ પુરુષોઽન્તર્દુષ્ટઃ શઠતયા ભવતિ કિંતુ વહિર્દુષ્ટો ન ભવતિ સંગોપિતાકારત્વાત્, ઇતિ પ્રથમઃ ૧,

તથા—એકો વહિર્દુષ્ટઃ—ક્રેનચિત્કારણેન વહિરેવોપદર્શિતપારુષ્યાદિત્વા-દ્દુષ્ટો ભવતિ કિન્તુ અન્તર્દુષ્ટો ન ભવતિ, ઇતિ દ્વિતીયઃ ૨

તથા—એકોઽન્તર્દુષ્ટોઽપિ વહિર્દુષ્ટોઽપિ ચ ભવતિ, ઇતિ તૃતીયઃ ૩.

તથા—એકો નો અન્તર્દુષ્ટો નો વહિર્દુષ્ટઃ, ઇતિ ચતુર્થઃ ૪ (૪)

પુરુષાધિકારાત્પુરુષભેદનિરૂપણાય પદ્મસૂત્રીમાઠ—

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથયા—એકઃ પુરુષઃ શ્રેયાન્—પૂર્વમતિશયેન પ્રશસ્યઃ—પ્રશસ્ય ભાવો ભવતિ, તદ્વોધસમ્પન્ન-

હસી તરહસે પુરુષજાત ધી ચાર હોતે હૈં—જૈસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો શઠતાસે ધીતરમેંહી દુષ્ટ હોતા હૈ વાહરમેં સંગોપિત્ આકારવાલા હોનેસે દુષ્ટ નહીં હોતા હૈ, ૧ કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો કિસી કારણવગ્ન વાહરસેહી કઠોરતા આદિ દિખાનેસે દુષ્ટ હોતા હૈ ધીતરસે દુષ્ટ નહીં હોતાહૈ ૨, કોઈ એક પુરુષ એસા હોતાહૈ, જો ધીતરસેધી દુષ્ટ હોતાહૈ, ઓર વાહરસે ધી દુષ્ટ હોતાહૈ, ૩ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતાહૈ જો ન ધીતરસે દુષ્ટ હોતાહૈ ઓર ન વાહરસેહી દુષ્ટ હોતાહૈ ૪

પદ્મ સૂત્રી દ્વારા પુરુષભેદ નિરૂપણ—

“ ચત્તારિ પુરુષજાયા ” ઇત્યાદિ—પુરુષજાત ચાર કહે ગયે હૈં જૈસે—એક શ્રેયાન્ શ્રેયાન્ ૧ શ્રેયાન્ પાપીયાન્ ૨ પાપીયાન્ શ્રેયાન્ ૩ ઓર

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તેની આંતરિક શક્તિને કારણે અન્તર્દુષ્ટ હોય છે પણ મૃદુભાવયુક્ત મુખાકૃતિને કારણે બહિર્દુષ્ટ હોતો નથી. (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જેની મુખાકૃતિ જ કઠોર હોય છે પણ તેનું આંતરિકરણ દુષ્ટતાયુક્ત હોતું નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે અન્તર્દુષ્ટ પણ હોય છે અને બહિર્દુષ્ટ પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે અન્તર્દુષ્ટ પણ હોતો નથી અને બહિર્દુષ્ટ પણ હોતો નથી. બાકીના ભાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ પહેલા ભાંગાને આધારે સમજી લેવું.

છ સૂત્રો દ્વારા પુરુષ ભેદોનું નિરૂપણ—

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે (૧) “ શ્રેયાન્—શ્રેયાન્ ” કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સદ્ગુણ

त्वात्, स एव पुनः पश्चादपि श्रेयान् प्रशस्त्याचरणत्वाद्भवति साधुवत् इति प्रथमः
 १। तथा-एकः-श्रेयान्-पूर्वः प्रशस्यभावो भवति स एव पश्चात् तु पापीयान्
 भवति अविरतत्वेन दुष्क्रियाव्यसनित्वात्, इति द्वितीयः २। तथा-एकः पापी-
 यान्-भावतो मिथ्यात्वादिभिरुपहतत्वादतिशयेन पापः-पापकर्मवासनावसितान्ति-
 करणो भवति, स एव केनापि करणेन सदाचारित्वाच्छ्रेयान्-प्रशस्यभावो भवति,
 उदायिनृपघातकवत् इति तृतीयः । ३। तथा-एकः पूर्वमपि पापीयान् पश्चादपि
 पापीयानेव भवति, इति चतुर्थः । ४।

पापीयान् पापीयान् ४ इनमें प्रथम प्रकारका जो पुरुष होता है, वह
 सद्बोधयुक्त होनेसे पहिलेसेही प्रशस्य भाववाला होता है और अन्ततक
 भी प्रशस्त आचरणवाला बना रहनेसे साधुकी तरह प्रशस्त भाववाला
 बना रहता है । दूसरे प्रकारका जो पुरुष होता है वह पहिले तो प्रशस्य
 भाववाला होता है और बादमें निमित्तवश दुष्क्रिया आदिमें फंस
 जानेके कारण अविरतियुक्त हो जानेसे अत्यन्त पापी बन जाता है ।
 तृतीय प्रकारका जो पुरुष होता है वह पहिले तो अत्यन्त पापी होता
 है-मिथ्यात्व आदि भावोंसे आहत होनेके कारण पापकर्मोंकी वासनासे
 अतिशय दूषित अन्तःकरणवाला होता है, पर बादमें वही किसी निमि-
 त्तवश सदाचारी बन जानेसे प्रशस्त भाववाला हो जाता है, जैसे उदायि
 राजाको मारनेवाला पुरुष तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता जो अपने जीवन
 में पहिलेभी पापी रहता है और बादमें भी पापी बना रहता है ४ अर्थवा-

युक्त ङोवाथी पडेलां पणु प्रशस्यलावयुक्त ङोय छे अने पाछणथी पणु
 (आलवन) प्रशस्त आचरणवाणो न रडेवाने कारणु साधुना जेवा प्रशस्त
 लाववाणो न आलु रडे छे (२) " श्रेयान्-पापीयान् " ङोय अक पुरुष पडेलां
 तो-प्रशस्त लाववाणो ङोय छे पणु पाछणथी ङोय पणु कारणु दुष्क्रिया
 आदिमां लपटां नवाथी अविरतियुक्त थं नवाथी अत्यन्त पापी अनी नय छे.
 (३) " पापीयान्-श्रेयान् " ङोय अक पुरुष पडेलां धणु न पापी ङोय छे-
 मिथ्यात्व आदि लावोथी युक्त थं नवाने कारणु पापकर्मोनी वासनाथी
 अतिशय दूषित अन्तःकरणवाणो ङोय छे, पणु पाछणथी ङोय सहजोध आदि
 (निमित्त भणवाथी सदाचारी अनी नवाथी प्रशस्त लाववाणो अनी नय छे.
 उदायी नृपने मारवावाणो पुरुषनी माक्षक. (४) " पापीयान्-पापीयान् " ङोय
 पुरुष पोताना लवनमां पडेलां पापी ङोय छे अने पछी पणु पापी न रडे छे.

યદ્વા-એકઃ પુરુષઃ પૂર્વં ગૃહસ્થત્વે વા ગૃહતો નિષ્ક્રમણકાલે શ્રેયાન્ ભવતિ, સ એવ પુનઃ પ્રવ્રજ્યાયાં વા વિહારસમયે શ્રેયાન્-પ્રશસ્યભાવો ભવતિ, ઇતિ પ્રથમઃ । ૧ । તથા-એકઃ પૂર્વં-ગૃહસ્થત્વે વા નિષ્ક્રમણકાલે પાપીયાન્ ભવતિ સ એવ પુનઃ પ્રવ્રજ્યાયાં વા વિહારકાલે શ્રેયાન્ ભવતિ ઇતિ દ્વિતીયઃ । ૨ । એવં મહ્નદ્વયમપિ યોજનીયમ્ । ૪ । (૧)

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-પુનઃ પુરુષજાતાનિ ચત્વારિ મહ્નસાનિ, તદ્યથા-એકઃ પુરુષો ભાવતઃ શ્રેયાન્ ભવતિ, દ્રવ્યતસ્તુ શ્રેયાન્-અતિપ્રશસ્ય ઇતિ. ઇત્યેવં બુદ્ધિજનકતયા સદ્શકઃ-શ્રેયસા તુલ્યો ન તુ સર્વથાઽતિપ્રશસ્ય એવ ભવતીતિ

કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો પહિલે ગૃહસ્થાવસ્થામૈ અથવા ગૃહસે નિષ્ક્રમણ (દીક્ષા) કાલમૈ જૈસે પ્રશસ્યભાવો યુક્ત હોતા હૈ, વૈસેહી પ્રશસ્ય ભાવોસે યુક્ત હોતા હૈ, તસેહી પ્રશસ્ત ભાવોસે યુક્ત વહ પ્રવ્રજ્યામૈ યા વિહાર સમયમૈ બના રહતા હૈ, એસા યહ પ્રથમમહ્ન હૈ । તથા કોઈ એક એસા હોતા હૈ જો પહિલે ગૃહસ્થાવસ્થામૈ યા નિષ્ક્રમણકાલમૈ અતિ-શય પાપી હોતા હૈ વહી વાદમૈ પ્રવ્રજ્યામૈ યા વિહારકાલમૈ પ્રશસ્ત ભાવવાલા હો જાતા હૈ એસા યહ દ્વિતીયમહ્ન હૈ । હસી તરહસે શેષ દો મહ્નોકો મી સમજ્જ લેના ચાહિયે ?

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-પુનઃ-પુરુષ ચાર કહે ગયે હૈ જૈસે હનમૈ કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો ભાવકી અપેક્ષા શ્રેયાન્ પ્રશસ્ત હોતા હૈ પર દ્રવ્યકી અપેક્ષા તો વહ “ અતિપ્રશસ્ત હૈ ” એસી બુદ્ધિકા જનક હોનેસે પ્રશસ્ત તુલ્ય હોતા હૈ અતિ પ્રશસ્તકે જૈસા હોતા

અથવા આ ચાર ભાંગાનો નીચે પ્રમાણે અર્થ પણ થઈ શકે છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ ગૃહસ્થાવસ્થામાં અથવા દીક્ષા અંગીકાર કરતી વખતે પ્રશસ્ત ભાવોથી યુક્ત હોય છે અને ત્યાર બાદ પોતાના સમસ્ત દીક્ષાકાળમાં પણ પ્રશસ્ત ભાવોથી જ યુક્ત રહે છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ પોતાની ગૃહસ્થાવસ્થામાં અતિશય પાપી હોય છે પણ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કર્યા બાદ પોતાની શ્રમણપર્યાયમાં પ્રશસ્ત ભાવયુક્ત જ રહે છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ”-પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભાવની અપેક્ષાએ શ્રેયાન્ (પ્રશસ્ય) હોય છે, અને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ “ આ માણસ અતિ પ્રશસ્ત છે ” આ પ્રકારના ભાવનો જનક હોવાથી અતિ પ્રશસ્ત એવો લાગે છે-સર્વથા અતિ

प्रथमः । १ । तथा-एको भावतः श्रेयान् भवन्नपि द्रव्यतः पापीयान्=अति पाप इति-इत्येवं बुद्धिजनकतया-सदृशकः-पापीयसा तुल्यो न तु सर्वथाऽतिपाप एव भवतीति द्वितीयः । २ । तथा-पापीयान्नामैकः श्रेयानिति सदृशकः एकः पापीयान्-भावतोऽतिपापो भवन्नपि संगोपिताकारतया श्रेयानिति-अतिप्रशस्य इत्याकारकबुद्धिजनकतया सदृशकः श्रेयसा पुरुषेण तुल्यो न तु श्रेयान् भवति, इति तृतीयः । ३ । तथा-एकः पापीयान् पापीयानिति सदृशकः अयं भावतो-द्रव्यतश्च पापीयानेव भवति । इति चतुर्थः ४ (२)

है सर्वथा अति प्रशस्तही नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है-जो भावकी अपेक्षा श्रेयान् प्रशस्त होता हुआ भी द्रव्यकी अपेक्षा पापीयान्-“ अतिपापी है ” इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे सदृशक-पापीयसा तुल्य होता है अतिपापीके जैसा होता है-सर्वथा अतिपापीही नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो भावकी अपेक्षा अतिपापी होता हुआ भी अपने आकारको छिपानेवाला होनेसे “ यह अतिप्रशस्त है ” इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे अति प्रशस्तके जैसा होता है, अति प्रशस्त नहीं होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो भावकी अपेक्षा अतिपापी होता हुआ भी “ यह अतिपापी है ” इस प्रकारकी बुद्धिका जनक होनेसे अतिपापी जैसा होता है सर्वथा अतिपापी नहीं होता है, यह भावकी अपेक्षासे और द्रव्यकी अपेक्षासे दोनों अपेक्षासे अतिशय पापीही होता है ४

प्रशस्य डोटो नथी. (२) कोठ अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने लावनी अपेक्षाअे श्रेयान् (प्रशस्य) डोवा छतां पणु द्रव्यनी अपेक्षाअे “ पापीयान् ” “ आ माणुस अति पापी छे ”, आ प्रकारना लावनेो जनक डोवाथी अति पापी नेवो डोय छे-सर्वथा अतिपापी डोटो नथी.

(३) कोठ अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने लावनी अपेक्षाअे अतिपापी डोवा छतां पणु पोताना भनोलावने सुभ पर प्रकट नहीं थवा देवाने कारणे “ आ माणुस अति प्रशस्य छे ” आ प्रकारना लावनेो जनक डोवाथी अति प्रशस्य नेवो लागे छे पणु भरी रीते अति प्रशस्य डोटो नथी. (४) कोठ अेक पुरुष अेवो डोय छे के ने लावनी अपेक्षाअे अतिपापी डोय छे, अने पोताना भनोलावनेो छुपावी नहीं शकवने कारणे “ आ माणुस अति पापी छे, ” आ प्रकारना लावनेो जनक डोवाथी अति पापी नेवो लागे छे-सर्वथा अतिपापी डोटो नथी. ते माणुस लावनी अपेक्ष अे पणु अतिपापी डोय छे अने द्रव्यनी अपेक्षाअे पणु अतिपापी न डोय छे.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-स्पष्टम्-नवरम्-एकः श्रेयान्-अतिप्रश-
स्यभावो भवति सद्वृत्तत्वात्तस्मादहं श्रेयान्-प्रशस्यभावोऽस्मीत्यात्मानं मन्यते,
यथावद्वोधत्वात्, यद्वा-प्रशस्यतराचरणात् स श्रेयानिति लोकेन मन्यते=स्वीक्रियते,
अस्मिन् पक्षे कर्मणि प्रत्यये यक् । प्रथमपक्षे तु देवादिकः इयन् कर्तरि, इति
प्रथमः १। एकः श्रेयान् भवन्नपि आत्मन्यरुचितत्परत्वात् पापीयानंहमित्यात्मानं
मन्यते-स्वीकरोति, यद्वा-“यान् सन्नपि लोकेन पूर्वलब्धतद्दोषेण पापीयानिति-
मन्यते-स्वीक्रियते, दृढप्रहारिचोरवत् । इति द्वितीयः २। तथा-एकः पापीयानं-
पापतरोऽपि मिथ्यात्वाद्युपहततयाऽहं श्रेयान्=अति प्रशस्योऽस्मीत्यात्मानं मन्यते-

पुनश्च—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-स्पष्ट है इनमें कोई एक
पुरुष ऐसा होता है जो अनिश्चय प्रशस्त (अच्छे) भाववाला होता है
क्योंकि यह सद्वृत्तवाला होता है, इसलिये मैं प्रशस्त भाववाला हूँ
इस प्रकारसे अपनेको यथावद्वोधसे मानता है अथवा-अतिप्रशस्त अचि-
रणवाला होनेसे वह अनिश्चय प्रशस्त भाववाला है, ऐसा लोकों द्वारा
स्वीकार किया जाता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अति-
प्रशस्त भाववाला होता हुआ भी अपनेमें अरुचिवाला होनेसे मैं अति-
पापी हूँ ” ऐसा अपने आपको मानता है अथवा अति प्रशस्त भाव-
वाला होता हुआ भी यह लोकों द्वारा पूर्वके प्राप्त उसके दोषसे “यह
अतिपापी है ” ऐसा स्वीकार किया जाता है २ कोई एक पुरुष ऐसा
होता है जो अतिपापी होता हुआ भी मिथ्यात्व आदि दोषोंसे उप-
हित होनेके कारण मैं अति प्रशस्त हूँ ऐसा अपने आपको मानता है,

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुरुषना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पक्ष
पंडे छे-(१) केह पुरुष सद्वृत्तिवाणे डोवाने कारणे अतिशय प्रशस्त लाव
वाणे डोय छे. ते पोते जेभ मानतो डोय छे के “ हुं प्रशस्त लाववाणे
छुं ” अने तेनुं प्रशस्त आचरणे जेहने दोके पक्ष जेभ कडेटा डोय छे
के “ आ माणस अतिशय प्रशस्त लाववाणे छे ” (२) केह जेक पुरुष
जेवे डोय छे के जे अतिशय प्रशस्त लाववाणे डोवा छतां पक्ष पोते जेभ
माने छे के “ हुं अतिशय पापी छुं ” अथवा ते अतिशय प्रशस्त लाव-
वाणे डोवा छतां पक्ष तेना पूर्व-लवनना दोषाने कारणे दोके जेभ कडेटा
डोय छे के “ आ माणस अतिपापी छे. ”

(३) केह माणस अतिपापी डोय छे, पक्ष मिथ्यात्व आदि दोषाधी
युक्त डोवाने कारणे जेभ मानतो डोय छे के “ हुं अतिशय प्रशस्य छुं ”

स्वीकरोति, कुतीर्थिकवत्, यद्वा-पापिष्ठजनसेवकेन. पापीयानपि श्रेयानिति मन्यते लोकेन । इति तृतीयः । ३ ।

तथा-एकः पापीयान्-अविरतत्वात्, पापीयानहमित्यात्मानं मन्यते सद्वोधात्, यद्वा-एकः पापीयान् अविरतत्वात् संयतलोकेन पापीयानिति=असंयत इति मन्यते-स्वीक्रियते । इति चतुर्थः (३)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि; तद्यथा-एकः पुरुषः श्रेयान्-भावत्रोऽतिप्रशस्यः, द्रव्यतस्तुकिञ्चित्सदनुष्ठायित्वात् श्रेयानिति-प्रशस्यतरोऽयमित्येवं विकल्पजनकतया सदृशकः-श्रेयसा पुरुषेण तुल्यो

जैसा कुतीर्थिक अपने आपको अति प्रशस्त मानता है अथवा-पापिष्ठ जनकी सेवा करनेवाले लोकके द्वारा अतिपापी भी श्रेयान्-अति प्रशस्य भाववाला माना जाता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अविरति होनेसे अतिपापी होता है, और मैं अतिपापी हूँ, ऐसा सद्वोधसे अपनेको मानता है अथवा-अविरति होनेसे अति पापी बना हुआ वह संयतजन द्वारा यह पापी है असंयत है ऐसा स्वीकार किया जाता है ४

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुरुष जात चार कहे गये हैं- इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो श्रेयान् भावकी अपेक्षा अति प्रशस्य होता है पर द्रव्यकी अपेक्षा किञ्चित् सदनुष्ठायी होनेसे अर्थात् सदनुष्ठान करनेवाला होनेसे-“यह प्रशस्यतर है” ऐसा विकल्प उत्पन्न कर देता है सो इस विकल्पका जनक होनेसे लोक उसे ऐसा जानते,

जैसे के कुतीर्थिक पोताने अतिप्रशस्य माने छे. अथवा-पापीजननी सेवा करतारा लोकके तेने पापी मानवाने जइसे अति प्रशस्य भाववाला मानता होय छे. (४) कोछ ओक पुरुष जेवो होय छे के जे अविरतिथी युक्त होवाने-कारणे अतिपापी होय छे अने सद्वोधने कारणे ते, पोताने अति पापी जे मानतो होय छे अथवा अविरतिने कारणे अति पापी भनेला ते अवस्ये विषे संयत भाषुसे आ प्रभाषे मानता होय छे-“आ भाषुसः असंयत छे-अति पापी छे.”

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषोना नीचे प्रभाषुने चार प्रकार पशु कहा छे-(१) कोछ ओक पुरुष जेवो होय छे के जे श्रेयान्-भावसंयत होवाने लीधे भावनी अपेक्षासे अतिप्रशस्य होय छे अने द्रव्यनी अपेक्षासे थोडा घण्टा सदनुष्ठान करतारा होवाथी “आ भाषुस प्रशस्यतर छे,” जेवुं-दोका कहेता होय छे. जेठवे के तेने अतिप्रशस्य पुरुष जेवो गण्टा होय

जनेन मन्यते-ज्ञायते, यद्वा-मदृशकमात्मानं मन्यते, स्वयम्, । इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-एकः श्रेयान् पापीयानिति सदृशको मन्यते २, तथा-एकः पापीयान् श्रेयानिति सदृशको मन्यते ३, एकः पापीयान् पापीयानिति सदृशको मन्यते ४, एते त्रयोऽपि भङ्गाः प्रथमभङ्गमनुसृत्य विज्ञेयाः (४)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः आख्यायकः-प्रवचनोपदेष्टा भवति, किन्तु परिभावयिता-शासनस्य प्रभावको न भवति उदारक्रिया-प्रतिभाप्रभृतिरहितत्वान् ।

यद्वा—‘ परिभावइत्ते ’ त्यस्य ‘ परिभाजयिते=तिच्छाया, तत्पक्षे प्रवच-
हैं कि यह अति प्रशस्य पुरुषके जैसा है अथवा वह स्वयं आपको मैं अति प्रशस्य पुरुष हूं ऐसा मानता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो श्रेयान्-भावकी अपेक्षा अति प्रशस्य होता है, पर अपनेको मैं अतिपापी जैसा हूं ऐसा मानता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पापीयान् अतिपापी होता हुआ भी अपनेको श्रेयान् अति प्रशस्य भाववालेके जसा मानता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अतिपापी होता हुआ भी अपनेको अतिपापी जैसा मानता है ४

फिर भी—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-पुरुष जात चार कहे गये हैं-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आख्यायक-प्रवचनका उपदे-
शक होता है परन्तु वह परिभावयिता-शासनका प्रभावक नहीं होता है क्योंकि वह उदार क्रिया-प्रतिभा आदिसे रहित होता है अथवा “ परिभावइत्ते ” इसकी संस्कृतच्छाया-“ परिभाजयति ” ऐसी भी

छे. अथवा तो पोते એમ માનતો હોય છે કે “ હું અતિપ્રશસ્ય છું ” (૨) કોઈ એક પુરુષ શ્રેયાન્-ભાવની અપેક્ષાએ અત્યંત પ્રશસ્ય હોય છે, છતાં પોતે એમ માનતો હોય છે કે “ હું અતિ પાપી છું ” (૩) કોઈ એક પુરુષ પાપીયાન્-અતિપાપી હોય છે, છતાં તે એમ માનતો હોય છે કે “ હું શ્રેયાન્-અતિ પ્રશસ્ય ભાવવાળો છું. ”

(૪) કોઈ એક માણસ અતિપાપી હોય છે અને તે પોતે પણ એમ જ માને છે કે ‘ હું અતિ પાપી છું ’ ”

“ ચत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे-(१) कौं एके पुरुष आख्यायक होय छे अटवे के प्रवचननो उपदेष्टा होय छे, पणु ते परिभावयिता होतो नथी-अटवे के ते शासननो प्रभावक होतो नथी कारण के ते उदार क्रिया-प्रतिभा आदिथी रहित होय छे. अथवा-“ परिभावइत्ते ” आ पदनी संस्कृत छाया “ परिभाजयति ” देवाभां

नार्थस्य नयोत्सर्गापवादादिद्वारेण विवेचयिता न भवति, इति ।

यद्वा—आख्यायकः—सूत्रस्योपदेशकः, स भवति किन्तु न परिभावयिता—सूत्रार्थस्य न विचारयिता, यद्वा—सूत्रार्थस्य न परिभाजयिता—विवेचयिता न भवतीत्यर्थः, इति प्रथमः । एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् । ४ । (५)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः आख्यायकः—सूत्रार्थस्योपदेशको भवति, किन्तु नो उ छजीविकासम्पन्नः—एषणादिनिरतो न भवति, स चापद्गतः संविग्नः संविग्नपाक्षिको वा, यदुक्तम्—

“ ह्योज्ज उ वसणं पत्तो, सरीरदुव्वल्लयाए असमत्थो ।

चरणकरणे असुद्धे, सुद्धं मग्गं परुवेज्जा ॥ १ ॥

होती है तब इस पक्षमें इसका अर्थ ऐसा होता है, कि वह प्रवचनके अर्थका नय मार्गसे एवं उत्सर्ग और अपवाद आदि मार्गसे विवेचन नहीं होता है, अथवा—आख्यायक होता है सूत्रका वह उपदेशक होता है पर सूत्रार्थका वह विचारक नहीं होता है अथवा सूत्रार्थका वह परिभाजयिता—विवेचन करनेवाला नहीं होता है ऐसा यह प्रथम भङ्ग है इसी तरह शेष तीन भङ्ग भी जानना चाहिये ५

फिरभी—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुष जात चार कहे गये हैं—जैसे इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आख्यायक—सूत्रार्थका उपदेशक होता है किन्तु वह उच्छजीविकासम्पन्न एषणादि दोष टालनेमें तत्पर नहीं होता है ऐसा वह पुरुष या तो आपत्तिमें पड़ा हुआ संविग्न (वैराग्यवाला) होता है या संविग्न पाक्षिक होता है—उक्तं च—

आवे तो तेनो अर्थ आ प्रमाणे थाय छे—“ ते प्रवचनना अर्थेनो नय. भागर्थी अने उत्सर्ग तथा अपवाद आदि भागर्थी विवेचक होतो नथी. अथवा—ते सूत्रने उपदेशक होय छे पण सूत्रार्थने विचारक होतो नथी. अथवा—ते सूत्रने उपदेशक होय छे पण परिभावयिता (विवेचन करतारे) होतो नथी. आ प्रकारने आ पडेते लागे समजवे अज प्रमाणे पाकीना त्रणु लागे पण समजवा

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहे छे—(१) केछ अेक पुरुष आख्यायक होय छे—प्रवचनने उपदेशक होय छे, पण उच्छजीविकासम्पन्न होतो नथी अेटे के अेषणादिनिरत होतो नथी, अेवे ते पुरुष कांते आपद्भस्त संविग्न (वैराग्यवाणे) होय छे, अथवा तो संविग्नपाक्षिक होय छे. कहु पणु छे क-

તથા—“ ઓસનોડવિ વિહારે કમ્મ સિદ્ધિલેહ સુલભવોઠી ય ।

ચરણકરણં વિમુદ્ધં ઉવવૃહંતો પરૂર્વેતો ॥ ૨ ॥ ”

છાયા—ભવેદ્ દિ વ્યસનં પ્રાપ્તઃ શરીરદુર્બલતયા અસમર્થઃ ।

ચરણકરણે અશુદ્ધે શુદ્ધં માર્ગં પ્રરૂપયેત્ ॥ ૧ ॥

તથા—અવસનોડપિ વિહારે કર્મ શિથિલયતિ સુલભવોઠિશ્ચ ।

ચરણકરણં વિશુદ્ધમ્, ઉવવૃહંયન્ પ્રરૂપયન્ । ૨ । ” ઇતિ,

ઇતિ પ્રથમઃ ૧।

તથા—એક ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્નો ભવતિ, નત્વાખ્યાયકઃ, સચ યથાચ્છન્દઃ, ઇતિ દ્વિતીયઃ ૨। તથા—એકઃ આખ્યાયકોડપિ ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્નોડપિ, સ ચ

“ હોઝ્જ ઉ વસણં પત્તો ” ઇત્યાદિ ।

તાત્પર્ય ઇન ગાથાઓંકા યહી હૈ જો સંવિગ્ન વ્યસનગ્રસ્ત-કષ્ટ પ્રાપ્ત હોતા હૈ યા શરીરસે દુર્બલ હોનેકે કારણ અસમર્થ હો જાતા હૈ ઉસકે ચરણકરણ અશુદ્ધ હો જાતે હૈ, અવસન્ન ભી વિહારમેં અપને કર્તવ્યમેં શિથિલ હો જાતા હૈ પર ઉસકી વોધિ શિથિલ નહીં હોતી હૈ વહ ચરણ-કરણકી વિશુદ્ધિકો વઢાનેકી ચેષ્ટામેં રહતા હૈ ઓર શુદ્ધ માર્ગકી પ્રરૂપણા કરતા હૈ ૧

તથા કોઈ એક મનુષ્ય એસા હૈ જો ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્ન હોતા હૈ— એષણાદિ નિરત હોતાહૈ, પર વહ આખ્યાયક (પ્રવચનકા ઉપદેશક) નહીં હોતા હૈ—એસા વહ યથાચ્છન્દ હોતા હૈ ૨ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો આખ્યાયક ભી હોતા હૈ ઓર ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્ન ભી હોતા હૈ એસા વહ સાધુ હોતા હૈ ૩, તથા કોઈ એક એસા પુરુષ હોતા હૈ,

“હોઝ્જ ઉ વસણં પત્તો” ઇત્યાદિ આ ગાથાઓનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે સંવિગ્ન વ્યસનગ્રસ્ત અથવા આપદગ્રસ્ત હોય છે, અથવા શરીરની કમજોરીને કારણે અશક્ત થઈ ગયો હોય છે, તેના ચરણકરણ અશુદ્ધ થઈ જાય છે, એવો સાધુ પોતાના શ્રમણને યોગ્ય કર્તવ્યપાલનમાં પણ શિથિલ બની ગયો હોય છે, પરન્તુ તેની યોધિ શિથિલ થતી નથી, તેથી તે ચરણકરણની વિશુદ્ધિ વધારવાની ચેષ્ટા કર્યા કરે છે અને શુદ્ધ માર્ગની પ્રરૂપણા કરે છે (૧)

કોઈએક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્ન હોય છે—એષણાદિ નિરત હોય છે, પણ તે આખ્યાયક (પ્રવચનનો ઉપદેશક) હોતો નથી એવો પુરુષ યથાચ્છન્દ હોય છે (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે આખ્યાયક પણ હોય છે અને ઉઝ્જીવિકાસમ્પન્ન પણ હોય છે એવો ભવ સાધુ હોય છે. (૩)

સાધુઃ । इति तृतीयः ३। तथा-एको नो आख्यायको नो उच्छजीविकासम्पन्नः,
स च गृहस्थादिः. इति चतुर्थः । ४ । (६)

इति षट्सूत्री—

पूर्वमुच्छजीविकासम्पन्नः साधुपुरुष उक्तः, तस्य च वैक्रियलब्धिमतः प्रयो-
जनवशाद् वृक्षं विकुर्वतो यादृशी वृक्षविक्रया स्यात्तामाह—“ चउन्विहे ” त्यादि—

यद्वा - पूर्वસૂત્રે સાધુપુરુષસ્યાખ્યાપકત્વોચ્છજીવિકાસમ્પન્નત્વરૂપવિભૂષણ-
મુક્તં સમ્પ્રતિ તત્તુલ્યત્વાદ્ વૃક્ષવિભૂષણમાહ—“ચઉન્વિહે” ત્યાદિ—ચતુર્વિધા વૃક્ષવિકુ-
ર્વણા પ્રજ્ઞતા, તદ્વથા-પ્રવાલતયા ૧, પત્રતયા ૨, પુષ્પતયા ૩, ફલતયા ચ ૪ ॥સૂં ૬ ॥

जो न आख्यायक होताहै और न उच्छजीविका सम्पन्नही होताहै ४-६
इस प्रकारसे यह षट्सूत्री है उच्छजीविकासम्पन्न साधुपुरुष
कहा गया है—सो इनमें जो वैक्रियलब्धिसम्पन्न होता है, वह प्रयोजन-
वश वृक्षकी भी विकुर्वणा कर सकता है तब उसकी जैसी वृक्षविक्रिया
होती उसको अब सूत्रकार “चउन्विहे” इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट करते हैं

यद्वा—पूर्वोक्त सूत्रमें साधु पुरुषको आख्यापक और उच्छजीविका-
सम्पन्न इन दो विभूषणोंसे युक्त प्रकट किया गया है सो अब तत्तुल्य
होनेसे वृक्षके विभूषण सूत्रकार कहते हैं—

वृक्ष विकुर्वणा चार प्रकारकी कही गई है जैसे—एक प्रवालरूप
दूसरी पत्ररूप तीसरी पुष्परूप और चौथी फल रूप ॥सूं ६॥

કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આખ્યાયક પણ હોતો નથી અને
ઉચ્છજીવિકાસંપન્ન પણ હોતો નથી. ॥૪-૬॥

આ પ્રકારે છ સૂત્રો દ્વારા અહીં 'પુરુષપ્રકારોતુ' નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું
છે સાધુ પુરુષને ઉચ્છજીવિકાસંપન્ન કહેવામાં આવેલ છે. જે સાધુ વૈક્રિયલબ્ધિ-
સંપન્ન હોય છે તે કોઈ પ્રયોજન ઉદ્દેશવવાથી વૃક્ષની વિકુર્વણા પણ કરી
શકે છે. ત્યારે તેના દ્વારા જે વૃક્ષવિક્રયા થાય છે તેનું સૂત્રકાર “ ચઉન્વિહે ”
ઈત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા કથન કરે છે—અથવા પૂર્વોક્ત સૂત્રમાં સાધુપુરુષને આખ્યા-
યક અને ઉચ્છજીવિકાસંપન્ન, આ બે વિશેષણોથી યુક્ત પ્રકટ કરવામાં આવેલ
છે. વૃક્ષ સાધુસમાન હોવાથી હવે સૂત્રકાર વૃક્ષવિકુર્વણાના ચાર પ્રકારની
ચોતે પ્રરૂપણ કરે છે—

(૧) પ્રવાલ (કોપળ) રૂપ વિકુર્વણા, (૨) પત્રરૂપ વિકુર્વણા, (૩) પુષ્પ-
રૂપ વિકુર્વણા અને (૪) ફલરૂપ વિકુર્વણા ॥સૂં ૬ ॥

पूर्वं वृक्षविभूषणं प्रोक्तं, धर्मस्य विभूषणं तीर्थिका भवन्तीति तत्स्वरूपं निरूपयितुमाह--

मूलम्—चत्वारि वाइसमोसरणा पणत्ता, तं जहा-किरिया-वाइ १, अकिरियावाइ २, अन्नाणियावाइ ३, वेणइयावाइ ४
॥ सू० ७ ॥

छाया--चत्वारि वादिसमवसरणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-क्रियावादिनः १, अक्रियावादिनः २, अज्ञानिकवादिनः ३, वैनयिकवादिनः ४ ॥ सू० ७ ॥

टीका—“ चत्वारि वाइसमोसरणा ” इत्यादि-वादिसमवसरणानि-वादिनः-वादि-१ प्रतिवादि-२ सभ्य-३ सभापति-४ रूपायां चतुरङ्गायां सभायां परमत-खण्डनपूर्वकं स्वमतस्थापनार्थमवश्यं वादोऽस्त्येषामिति तथा, निरूपणवादिलब्धिस-

वृक्ष विभૂષણ કહકર અવ સૂત્રકાર “ ધર્મકે વિભૂષણ તીર્થિકા હોતે હૈં ” હસ કારણ ડનકે સ્વરૂપકા નિરૂપણ કરતે હૈં—

“ચત્તારિ વાહસમોસરણા પણત્તા ” ઇત્યાદિ સૂત્ર ૭ ॥

વાદિ સમવસરણ ચાર કહે ગયે હૈં—જૈસે ઇક ક્રિયાવાદીકા ઇક અક્રિયાવાદીકા ઇક અજ્ઞાનિકવાદીકા ઓર ઇક વૈનયિકવાદીકા વાદી પ્રતિવાદી, સભ્ય ઓર સભાપતિરૂપ ચારપ્રકારકી સભામૈં જો પરમતકો ઁખણડન કરતે હુણ અપને મતકી સ્થાપના અવશ્ય કરતાહૈં ડસકા નામ વાદ હૈં અર્થાત્ ચતુરજ્ઞ ચાર પ્રકારકી સભામૈં પરમત ઁખણડનપૂર્વક જો સ્વમત સ્થાપનહૈં ડસકા નામ વાદહૈં હસ પ્રકારકા વાદ જો કરતાહૈં વહ વાદી નિરૂપમ વાદિ લબ્ધિવાલા હોતા હૈં અતઃ વાચાલવાદિ વૃન્દ મી વાગ્યૈભવકો

વૃક્ષવિભૂષણુ' કથન કરીને હવે સૂત્રકાર ધર્મના વિભૂષણ રૂપ તીર્થિકાના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—“ચત્તારિ વાહસમોસરણા પણત્તા” ઇત્યાદિ-સૂ. ૭

વાદિસમવસરણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—ક્રિયાવાદીનું (૨) અક્રિયાવાદીનું, (૩) અજ્ઞાનિકવાદીનું અને (૪) વૈનયિકવાદીનું

વાદી, પ્રતિવાદી, સભ્યો અને સભાપતિ રૂપ ચતુરંગ સભામાં જે પરમતનું ખંડન કરીને પોતાના મતની અવશ્ય સ્થાપના કરે છે તેનું નામ વાદી છે. એટલે કે ચતુરંગ સભામાં પરમતના ખંડન પૂર્વક સ્વમતનું સ્થાપન કરવા માટેનો જે વિવાદ ચાલે છે તેનું નામ વાદ છે. આ પ્રકારનો વાદ કરનાર વ્યક્તિને વાદી કહે છે તે વાદી નિરૂપમ વાદિલબ્ધિસંપન્ન હોય છે તેમજી વાચાલ વાદિવૃન્દ પણ તેના વાગ્યૈભવને મન્દ પાડી શકતું નથી એટલે કે તેના મતનું ખંડન કરવાને કોઈ સમર્થ હોતું નથી. એવા વાદી તરીકે

મ્પન્નત્વેન વાચાલવાદિવૃન્દૈરપ્યમન્દીકૃતવાગ્વિમવાઃ, તે ચાત્ર તીર્થિકઃ, તે સમ-
વસરન્તિ-સમ્યગ્વતરન્તિ-સમુપસ્થિતા ભવન્તિ એષ્વિતિ સમવસરણાનિ, વાદિનાં
સમવસરણાનિ વાદિસમવસરણાનિ-વાદિસમુપસ્થિતિસ્થાનાનિ, તેષાં તદાશ્રયિણાં
ચાભેદોપચારાદ્વાદિસમવસરણપદેનેહવાદિનો ગૃહ્યન્તે, તાનિ ચત્વારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ ।
વાદિનશ્ચત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તા इति चातुर्विध्यमेवाह—‘ तद्यथे ’ त्यादि-क्रियावादिनः
ક્રિયાં - જીવાજીવાદિપદાર્થોઽસ્તીત્યાકારિકા - જીવાજીવાદિપદાર્થસત્તાત્મિકાં
વદન્તીત્યેવં શીલાઃ ક્રિયાવાદિનઃ-આસ્તિકાઃ ૧, અક્રિયાવાદિનઃ-ન ક્રિયાવા-
દિનઃ-ક્રિયાવાદિવિપરીતા નાસ્તિકાઃ ૨, અજ્ઞાનિકવાદિનઃ-અજ્ઞાનં સ્વીકરણીય-
તયાઽસ્ત્યેપામિત્યજ્ઞાનિકાસ્ત એવ વાદિનોઽજ્ઞાનિકવાદિનઃ=અજ્ઞાનમેવાતિપ્રશસ્ય-
મિત્યેવં પ્રતિજ્ઞાકારિણઃ ૩, તથા-વૈનયિકવાદિનઃ-વિનયઃ-વિનયનં કર્માપનયનં,

મન્દ નહીં કર સકતે હૈં એસે વાદી યહાં તીર્થિક લિયે ગયે હૈં, યે જહાં
પર સમુપસ્થિત હોતે હૈં વે વાદિસમવસરણ હૈં અર્થાત્ વાદિ જનોંકી
જો ઉપસ્થિતિકે સ્થાન હૈં વે વાદિસમવસરણ હૈં પરન્તુ યહાં વાદિ
સમવસરણ પદસે ઉન સ્થાનોંકો ગ્રહણ નહીં કિયા ગયા હૈ કિન્તુ ઉન
સ્થાનોંમેં ઓર વાદિજનોંમેં અભેદ સમ્બન્ધકે ઉપચારસે વાદિ જનોંકોહી
ગ્રહણ કિયા ગયા હૈં ઇસ્ તરહ વાદિસમવસરણહૈ વાદિજન ચાર પ્રકાર-
કે ક્રિયાવાદી આદિકે ભેદસે પ્રકટ કિયે ગયે હૈં, જો જીવ અજીવ
આદિ પદાર્થોંકી “અસ્તિ” ઇસ્ રૂપ ક્રિયાકો-જીવ અજીવ આદિ
પદાર્થોંકી સત્તાત્મક સ્થિતિકો કહનેકે સ્વભાવવાલે હૈં વે ક્રિયાવાદી
હૈં અર્થાત્ આસ્તિકજન ક્રિયાવાદી હૈં ઇનસે વિપરીત અક્રિયાવાદી હૈં
વે અક્રિયાવાદી નાસ્તિક હૈં । અજ્ઞાનહી અતિપ્રશંસનીયહૈ ઇસ્ પ્રકારસે

અહીં તીર્થિકને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. તેઓ જે સભામાં હાજર હોય
છે તે સભાને વાદીસમવસરણ કહે છે. એટલે કે વાદિ જનો વિવાદ કરવા
માટે જ્યાં એકત્ર થાય છે તે સ્થાનને વાદિસમવસરણ કહે છે.

અહીં વાદિસમવસરણ પદ વડે તે સ્થાનને ગ્રહણ કરવાના નથી, પણ
તે સ્થાનમાં અને વાદીજનોમાં અલેદ સંબંધના ઉપચારની અપેક્ષાએ વાદી-
જનોને જે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. આ રીતે વાદિસમવસરણ અથવા વાદી-
જનોના અહીં ક્રિયાવાદી આદિ ચાર પ્રકાર કહેવામાં આવ્યા છે—

જે લોકો જીવ, અજીવ આદિની સત્તાત્મક સ્થિતિને સ્વીકાર કરનારા
હોય છે—જીવ, અજીવ આદિના અસ્તિત્વને સ્વીકારનારા હોય છે અને તેનું
પ્રતિપાદન કરનારા હોય છે તેમને ક્રિયાવાદી કહે છે. એટલે કે આસ્તિકજન
ક્રિયાવાદી છે-તેમના કરતાં વિપરીત માન્યતાવાળા લોકો અક્રિયાવાદી અથવા

સ એવ વૈનયિકમ્, સ્વાર્થિક ઠક્ પ્રત્યયોઽત્ર વિનયાદિત્વાત્, તદેવ મોક્ષાય કલ્પત
 इत्येवं वदन्तीत्येवं शीलाः वैनयिकवादिनः ४, एतेषां भेदसंख्या चेयम्—

“ असिद्यसयं किरियाणं, अकिरियावाइण होइ चुलसीई ।

अज्ञाणिय सत्तही वेणइयाणं च वत्तीसा ॥ १ ॥

छाया—“ अशीति-शतं क्रियाणामक्रियावादिनां भवति चतुरशीतिः ।

अज्ञानिनां सप्तपष्टिः वैनयिकानां च द्वात्रिंशत् ॥ १ ॥

तत्राशीतिशतम्-अशीत्यधिकं शतं क्रियाणां=क्रियावादिनाम्, अन्यत्सुगमम्
 इति । एषां स्वरूपमन्यतोऽवसेयम् ॥ सू० ७ ॥

पूर्व वादिसमवसरणानि निरूपितानि, सम्प्रति तान्येव चतुर्विंशतिदण्डके-
 निरूपयितुमाह—

मूलम्—णैरइयाणं चत्तारि वादिसमोसरणा पणत्ता, तं
 जहा-किरियावाई जाव वेणइयवाई ४ एवमसुरकुमाराणं वि
 जाव थणियकुमाराणं, एवं विकलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं
 ॥ सू० ८ ॥

छाया—नैरयिकाणां चत्वारि वादिसमवसरणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-क्रिया-

जो उसका मण्डन करके उसे स्वीकार किये रहते हैं वे अज्ञानिकवादी
 हैं विनयकोही जो मोक्ष प्राप्ति का कारण मानते हैं वे वैनयिक हैं इनके
 भेदोंकी संख्या इस प्रकारसे है—

“ असिद्यसयं किरियाणं ” इत्यादि । क्रियावादियोंके भेद १८० हैं
 अक्रियावादियोंके ८४ हैं अज्ञानवादियोंके ६७ और वैनयिकवादियोंके
 ३२ हैं । इन सबका स्वरूप षट्दर्शन समुच्चय आदि ग्रन्थोंसे जान
 लेना चाहिये । सू० ७ ।

नास्तिक છે. “ અજ્ઞાન જ અતિ પ્રશસ્ય છે, ” આ પ્રકારની માન્યતાવાળા
 અને તે માન્યતાનું પ્રતિપાદન કરનારા લોકોને અજ્ઞાનિકવાદી કહે છે. વિનયને જ
 જે લોકો મોક્ષપ્રાપ્તિનું કારણ માને છે તેમને વૈનયિક કહે છે. તેમના
 ભેદોની સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે—

“ असिद्यसयं किरियाणं ” इत्यादि-क्रियावादीઓના ૧૮૦ ભેદ છે, અક્રિ-
 યાવાદીઓના ૮૪ ભેદ છે, અજ્ઞાનીઓના ૬૭ ભેદ છે અને વૈનયિકોના ૩૨
 ભેદ છે. આ બધાનું સ્વરૂપ ષટ્દર્શન સમુચ્ચય આદિ ગ્રંથોમાંથી સમજી
 લેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૭ ॥

वादी यावत् वैनयिकवादी ४। एवमसुरकुमाराणामपि यावत् स्तनितकुमाराणाम् । एवं विकलेन्द्रियवर्जं यावत् वैमानिकानाम् ॥ सू० ८ ॥

टीका—“ गेरइयाणं ” इत्यादि, स्पष्टम्, नवरं—नारकादिपञ्चेन्द्रियाणां समनस्कत्वादेतानि चत्वारि अपि वादिसमवसरणानि भवति, “ विकल्लिदिय-वज्जं ” इति एक द्वि त्रिचतुरिन्द्रियाणामसंज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां जीवानाममनस्कत्वा-देतानि चत्वारि न सम्भवन्तीति ॥ सू० ८ ॥

पुरुषाधिकारात् पुरुषविशेषान्निरूपयितुं प्रायो दृष्टान्तसूत्रपुरस्सराणि त्रिच-त्वारिंशत् (४३) पुरुषसूत्राण्याह—

मूलम्—चत्वारि मेहा पणत्ता, तं जहा—गज्जित्ता णाममेगे णो वासित्ता १, वासित्ता णाममेगे णो गज्जित्ता, २, एगे गज्जित्ताऽवि वासित्ताऽवि ३, एगे णो गज्जित्ता णो वासित्ता ४। (१) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—गज्जित्ता णाम मेगे णो वासित्ता ४, (२)

वादि समवसरणोंका कथन करके अब सूत्रकार उन्हें २४ दण्ड-कोंमें निरूपित करते हैं—“ गेरइयाणं चत्वारि वादिसमोसरणा पणत्ता इत्यादि

नारकादि पञ्चेन्द्रियोंके क्रियावादी यावत् वैनयिकवादी आदि चार वादिसमवसरण होते हैं । इसी तरहसे असुरकुमारों को लेकर यावत् स्तनितकुमारोंके भी ये चार वादिसमवसरण होते हैं । तथा विकलेन्द्रिय—दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय इन जीवोंको तथा एकेन्द्रियको और असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवोंको छोड़कर यावत् वैमानिकजीवों तक येही चार वादिसमवसरण होते हैं । ये सब एकेन्द्रियादिक जीव अमनस्क (असंज्ञी) होते हैं अतः उनमें ये सम्भवित नहीं होते हैं ॥सू०८॥

वादि समवसरणोंनुं निरूपण करीने छवे सूत्रकार तेमने २४ दण्डोंमां निरूपित करे छे “ गेरइयाणं चत्वारि वादिसमोसरणा पणत्ता ” इत्यादि—सू० ८

नारकादि पञ्चेन्द्रियोंना क्रियावादीथी लधने वैनयिकवादी पर्यन्तना थार वादिसमवसरणो डोय छे अण प्रमाणे असुरकुमारोंथी लधने स्तनितकुमारों पर्यन्तना पण थार वादिसमवसरणो डोय छे तथा विकलेन्द्रियो (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अने चतुरिन्द्रिय), अकेन्द्रियो अने असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय लोवे सिवा-यना वैमानिक पर्यन्तना समस्त लोवोना पण अण थार समवसरणो डोय छे. अकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय अने असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय लोवे अमनस्क डोय तेथी तेमनामां ते संलवी शकता नथी. ॥सू० ८॥

चत्वारि मेहा पण्णत्ता तं जहा-गज्जित्ता णाममेगे णो
विज्जुयाइत्ता १, विज्जुयाइत्ता णाममेगे णो गज्जित्ता ४ (३)
एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-गज्जित्ता णाम-
मेगे णो विज्जुयाइत्ता ४, (४) ।

चत्वारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-वासित्ता णाममेगे णो
विज्जुयाइत्ता ४ (५) एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता,
तं जहा-वासित्ता णाममेगे णो विज्जुयाइत्ता ४, (६)

चत्वारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-कालवासी णाममेगे णो
अकालवासी ४, (७) एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं
जहा-कालवासी णाममेगे णो अकालवासी ४, (८) ।

चत्वारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-खेत्तवासी णाममेगे णो
अखेत्तवासी ४, (९) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता
तं जहा-खेत्तवासी णाममेगे णो अखेत्तवासी ४ (१०)

चत्वारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-जणइत्ता णाममेगे णो
णिम्मवइत्ता, णिम्मवइत्ता णाममेगे णो जणइत्ता ४, (११)
एवामेव चत्वारि अम्मापियरो पण्णत्तो, तं जहा-जणइत्ता
णाममेगे णो णिम्मवइत्ता ४ (१२)

चत्वारि मेहा पण्णत्ता, तं जहा-देसवासी णाममेगे णो
सव्ववासी ४, (१३) एवामेव चत्वारि रायाणो पण्णत्ता, तं
जहा-देसाहिवई णाममेगे णो सव्वाहिवई ४ (१४) ॥ सू०९ ॥

छाया—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—गर्जिता नामैको नो वर्षिता १, वर्षिता नामैको नो गर्जिता २, एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपि ३, एको नो गर्जिता नो वर्षिता ४। (१) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—गर्जिता नामैको नो वर्षिता ४। (२)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—गर्जिता नामैको नो विद्ययिता १, विद्ययिता नामैको नो गर्जिता ४, (३) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—गर्जिता नामैको नो विद्ययिता ४ (४)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—वर्षिता नामैको नो विद्ययिता ४। (५) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—वर्षिता नामैको नो विद्ययिता ४, (६)। चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कालवर्षी नामैको नो अकालवर्षी ४। (७) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कालवर्षी नामैको नो अकालवर्षी ४ (८)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—क्षेत्रवर्षी नामैको नो अक्षेत्रवर्षी ४ (९) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—क्षेत्रवर्षी नामैको नो अक्षेत्रवर्षी ४। (१०)।

चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जनयिता नामैको नो निर्मापयिता, निर्मापयिता नामैको नो जनयिता ४ (११), एवमेव चत्वारि मातापितरः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जनयितारौ नामैको नो निर्मापयितारौ ४, (१२)। चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—देशवर्षी नामैको नो सर्ववर्षी ४ (१३) एवमेव चत्वारो राजानः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—देशाधिपति नामैको नो सर्वाधिपतिः ४, (१४) सू० ९ ॥

टीका—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघाः—चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः—कश्चिन्मेघः गर्जिता—गर्जनकारी भवति, किन्तु—वर्षिता—जलवर्षणकारी नो

पुरुष अधिकारको लेकरही अथ सूत्रकार पुरुष विशेषोंका निरूपण करनेके लिये प्रायः दृष्टान्तसूत्र पुरस्सर ४३ पुरुष सूत्र कहते हैं—

टीकार्थ—‘चत्वारि मेहा पणत्ता’ इत्यादि सूत्र ९ ॥

मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गर्जना करता है पर वह जल बरसानेवाला नहीं होता है १। कोई

पुरुष अधिकार खादी रह्यो छे तेथी डवे सूत्रकार पुरुष विशेषानुं निरूपण करवा माटे दृष्टान्त सूत्रो संहितना ४३ पुरुष सूत्रो कहे छे—

टीकार्थ—“ चत्वारि मेहा पणत्ता ” इत्यादि सू ९

मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) कौं मेघ ओवे डाय छे के के गर्जना करे छे पण वरसतो नथी. (२) कौं मेघ ओवे डाय छे

भवति, इति प्रथमः १, एको वर्षिता न तु गर्जितेति द्वितीयः २, एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपीति तृतीयः ३, एको नो गर्जिता नो वर्षिताऽपि च भवतीति चतुर्थः ४ (१) 'एवमेवे' त्यादि—एवमेव मेववदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् गर्जिता—दानज्ञानव्याख्यानानुष्ठानशत्रुनिग्रहादि-विषये उच्चैः प्रतिज्ञाकारी भवति, किन्तु नो वर्षिता—प्रतिज्ञातकारको न भवति । इति प्रथमः १। तथा—एको वर्षिता—कार्यकर्ता भवति, किन्तु नो गर्जिता—उच्चैः प्रतिज्ञाता न भवतीति द्वितीयः २। तथा—एको गर्जिताऽपि वर्षिताऽपि, इति तृतीयः ३। तथा—एको नो गर्जिता नो वर्षिता च भवति । इति चतुर्थः ४। (२)

एक मेघ ऐसा होता है, जो जल बरसानेवाला होता है, पर वह गर्जन-कारी नहीं होता है २। कोई एक मेघ ऐसा होता है, जो गरजता भी है और बरसता भी है ३। और कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न गरजता है और न बरसताही है ४ (१) इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो दान ज्ञान व्याख्यान अनुष्ठान एवं शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला होता है परन्तु वह प्रतिज्ञात अर्थका करनेवाला नहीं होता है १। तथा—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल कार्यका करनेवाला होता है, किन्तु वह ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला नहीं होता है २। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कार्य करता भी होता है और ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला भी होता है ३। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न ऊंची प्रतिज्ञा करता है और न उसका निर्वाह करनेवालाही होता है ४(२)

કે જે વરસે છે ખરો પણ ગર્જતો નથી. (૩) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જે પણ છે અને વરસે પણ છે (૪) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે ગર્જતો પણ નથી અને વરસતો પણ નથી. ૧૧।

મેઘની જેમ પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે જ્ઞાન, દાન, વ્યાખ્યાન, અનુષ્ઠાન, શત્રુનિગ્રહ આદિ વિષે ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોય છે, પરન્તુ પ્રતિજ્ઞા અનુસાર આચરણ કરનારો હોતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ફક્ત કાર્ય કરનારો હોય છે અને ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે કાર્ય કરનારો પણ હોય છે અને ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોય છે. (૪) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઊંચી ઊંચી પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોતો નથી. અને એવાં કાર્યો કરનારો પણ હોતો નથી. ૧૨।

“ चत्वारि मेघा ” इत्यादि—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको मेघो गर्जिता भवति न तु विद्ययिता—विद्युत्कर्त्ता १, एवं शेषमङ्गत्रयम् ४ (३) । ‘एवा-मेवे’ त्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुषः गर्जिता उच्चैः प्रतिज्ञाता भवति, किन्तु न विद्ययिता—विद्युत्कर्त्ता—विद्युतः—विद्युत्सदृशस्य—दानज्ञानव्याख्यानानुष्ठानशत्रुनिग्रहादिविषये उच्चः प्रतिज्ञाता-थारम्भाडम्बरस्य कर्त्ता न भवति इति प्रथमः १। तथा—एको विद्ययिता—आर-म्भाडम्बरस्य कर्त्ता भवति किन्तु गर्जिता—प्रतिज्ञाता न भवति इति द्वितीयः २।

तथा—एको गर्जिताऽपि विद्ययिताऽपि भवति इति तृतीयः ३।

तथा—एको नो गर्जिता नो विद्ययिता च भवतीति चतुर्थः ४। (४)

पुनश्च—“ चत्वारि मेघा ” इत्यादि—चार मेघ कहे गये हैं—जैसे कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गरजता है पर चमकता नहीं है १ कोई एक ऐसा होता है जो चमकता है पर गरजता नहीं है २ कोई एक मेघ ऐसा होता है जो गरजता भी है और चमकता भी है ३ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न गरजता है और न चमकता है ४ (३) इसी तरहसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो गर्जिता—ऊंची प्रतिज्ञा करनेवाला होता है किन्तु चमकनेके जैसे दान, ज्ञान, व्याख्यान, अनुष्ठान एवं शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें उच्च प्रतिज्ञात अर्थके आरम्भके आडम्बरको करनेवाला नहीं होता है १। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आरम्भके आडम्बरका करनेवाला होता है किन्तु वह प्रतिज्ञा करनेवाला नहीं होता है २। कोई

“ चत्वारि मेघा ” इत्यादि—मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहे। छे—(१) कोध मेघ ओवे। डोय छे के ने गजे छे भरे। पणु यमकते। नथी। कोध मेघ ओवे। डोय छे के ने यमके छे भरे। पणु गजेते। नथी। (३) कोध मेघ ओवे। डोय छे के ने गजे छे भरे। अने यमके छे पणु भरे। (४) कोध मेघ ओवे। डोय छे के ने गजेते। पणु नथी अने यमकते। पणु नथी। ॥३॥

अेज प्रमाणे पुरुषेना पणु चार प्रकार कहे छे—

(१) कोध अेक पुरुष ओवे। डोय छे के ने डोयी प्रतिज्ञा करनारे। डोय छे पणु यमकनारे। डोते। नथी। अेटवे के दान, ज्ञान, व्याख्यान, अनु-ष्ठान अने शत्रुनिग्रह आदिना विषयमां उच्च प्रतिज्ञा इय अर्थना आरंभने। आडंभर करनारे। डोते। नथी। (२) कोध अेक पुरुष ओवे। डोय छे के ने आरंभने। आडंभर करनारे। डोय छे, पणु प्रतिज्ञा करनारे। डोते। नथी। (३)

“ ચત્તારિ મેઘા ” ઇત્યાદિ—મેઘાશ્ચત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—एको मेघो वर्षिता-न तु विद्ययिता भवति इति प्रथमः १। एवं शेषभद्रत्रयं बोध्यम् ४, (५) । ‘ एवामेव ’ त्यादि—एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तथ्या-एकः पुरुषो वर्षिता-दानादिभिर्भवति, किन्तु नो विद्ययिता-दानाद्यारम्भाडम्बरकर्ता न भवति इति प्रथमः १। तथा—एको विद्ययिता न तु गर्जितेति द्वितीयः

एक पुरुष ऐसा होता है जो गर्जनेवाला भी होता है और विद्ययिता भी होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न गर्जिता होता है और न विद्ययिता होता है ४ (४)

पुनश्च—“ चत्तारि मेघा ” इत्यादि—मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—एक मेघ ऐसा होता है जो वर्षिता-वरसता है पर वह विद्ययिता नहीं होता है चमकता नहीं है १ शेष तीन भद्र इसी प्रकारसे लगा लेना चाहिये ४ (५) इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार होते हैं—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो दानादिकों द्वारा वरसता है, किन्तु वह दानादिकोंके आरम्भका आडम्बरकर्ता नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो विद्ययिता दानादिकोंके आरम्भका आडम्बरकर्ता होता है पर वह गर्जिता दान, ज्ञान, व्याख्यान, अनुष्ठान, शत्रुनिग्रह आदिके विषयमें उच्च प्रतिज्ञाकारी नहीं होता है २ तथा कोई एक ऐसा भी होता है, जो गर्जिता भी होता है और विद्य-

કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોય છે અને આરંભનો આડંબર કરનારો પણ હોય છે (૪) કોઈ એક પુરુષ પ્રતિજ્ઞા કરનારો પણ હોતો નથી અને આરંભનો આડંબર કરનારો પણ હોતો નથી. ॥૪॥

“ ચત્તારિ મેઘા ” ઇત્યાદિ—મેઘના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ મેઘ એવો હોય છે કે જે વરસે છે ખરો પણ ચમકતો નથી. ઉપરના ક્રમને અનુસરીને યાકીના ત્રણ ભાગા પણ સમજી લેવા. ॥૫॥

એજ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દાનાદિક દ્વારા વરસે છે ખરો પણ દાનાદિકોના આરંભનો આડંબરકર્તા હોતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ચમકે છે ખરો પણ વરસતો નથી. એટલે કે દાનાદિકોના આરંભનો આડંબરકર્તા હોય છે, પણ દાન, જ્ઞાન, વ્યાખ્યાન, અનુષ્ઠાન અને શત્રુનિગ્રહ આદિના વિષયમાં ઉચ્ચ પ્રતિજ્ઞાકારી હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ વરસે છે પણ ખરો અને ચમકે છે પણ ખરો (૪) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે

२। तथा-एको गर्जिताऽपि विद्ययिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३। तथा-एको नो गर्जिता नो विद्ययिताऽपि च भवतीति चतुर्थः ४ (६)

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—स्पष्टम्—नवरम्—कालवर्षी—अवसरवर्षीः, एव-मन्येऽपि बोध्याः ४ (७) एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि, तद्यथा—एकः पुरुषः कालवर्षी—कालवर्षीव कालवर्षी—अवसरे दानव्याख्यानादिपरोपकारार्थप्रवृत्तिकः, न तु अकालवर्षी भवतीति प्रथमः १, तथा—एकः अकालवर्षी—अनवसरवर्षी भवति न तु कालवर्षीति द्वितीयः २। (७) तथा—एकः कालकालवर्षी भवति इति तृतीयः ३। एको नो कालवर्षी नो अकालवर्षीति चतुर्थः । ४। (८)

यिता भी होता है ३ तथा कोई एक ऐसा पुरुष होता जो न गर्जिता होता है, और न विद्ययिता भी होता है ४ (६)

फिर भी—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—कोई एक मेघ ऐसा होता है, जो कालवर्षी अवसर पर वरसता है, विना अवसरके नहीं वरसता है १ इसी प्रकारसे शेष तीन भङ्ग भी समझ लेना चाहिये (७) इसी प्रकारसे पुरुषजात चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो कालवर्षी मेघकी तरह अवसर पर दान देता है, व्याख्यान देता है और परके उपकार आदि करनेमें प्रवृत्तिवाला होता है, पर वह अकालवर्षी नहीं होता है १ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो अकालवर्षी होता है, अवसरवर्षी होता है विना अवसरकेही दान देता है व्याख्यान आदि देता है और परके उपकार करने आदि सुकार्यमें प्रवृत्ति करनेवाला होता है, पर कालवर्षी

वरसतो पशु नथी अने अमकतो पशु नथी. पडेदा जे लांगाने आधारे त्रीज अने थोथा लांगाने लावार्थ समल देवा. ॥६॥

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पशु कहे छे—(१) कोर्ध मेघ अवेा होय छे के जे कालवर्षी होय छे पशु अकालवर्षी होतो नथी. अटले के योग्य अवसरे वरसतारे होय छे पशु अयोग्य अवसरे वरसतो नथी. अज कमे भीज त्रशु लांग पशु समल देवा. ॥७॥

अज प्रमाणे पुरुष पशु चार प्रकारना कहे छे—(१) कोर्ध अक पुरुष अवेा होय छे के जे कालवर्षी मेघनी जेम अवसर आवे त्तारे दान दे छे, अने परोपकार आदि करे छे, पशु ते अकालवर्षी होतो नथी. अटले के योग्य अवसर आव्या विना अवी प्रवृत्ति करतो नथी. (२) कोर्ध पुरुष अकालवर्षी होय छे पशु कालवर्षी होतो नथी. अटले के योग्य अवसर विना पशु दानादि प्रवृत्तिया करतारे होय छे पशु योग्य अवसरे दानादि सुकार्य

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एको मेघः क्षेत्रवर्षीक्षेत्रे-धान्याद्युत्पत्तिस्थाने वर्षतीत्येवं शीलः क्षेत्रवर्षी भवति किंतु नो अक्षेत्रवर्षी क्षेत्रभिन्नप्रदेशे वर्षणकारी न भवति इति प्रथमः १। तथा-एकः अक्षेत्रवर्षी न तु क्षेत्रवर्षीति द्वितीयः २। तथा-एकः क्षेत्राक्षेत्र वर्षीति तृतीयः ३, एको नो क्षेत्रवर्षी नो अक्षेत्रवर्षीति चतुर्थः ४। (९)

‘ एवमेव ’ इत्यादि—एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः क्षेत्रवर्षी-क्षेत्रे-पात्रे वर्षति-दानश्रुतादिनिक्षेपतीत्येवंशीलस्तथा भवति,

नहीं होता है २ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो काल अकाल दोनों अवसरों पर वरसनेवाला होता है ३ तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो न कालवर्षी होता है और न अकालवर्षी होता है ४ (८)

फिर भी—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि-मेघ चार प्रकारके होते हैं जैसा-कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्रमें-धान्यादि उत्पत्तिके स्थानभूत खेतमें वर्षी-वरसनेके स्वभाववाला होता है अक्षेत्रवर्षी नहीं होता है, क्षेत्रसे भिन्न प्रदेशमें वरसनेके स्वभाववाला नहीं होता है १ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो अक्षेत्रवर्षी होता है क्षेत्रवर्षी नहीं होता है २ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्र और अक्षेत्र इन दोनोंमें वरसनेके स्वभाववाला होता है ३। तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो क्षेत्र और अक्षेत्र इन दोनों में भी वरसने के स्वभाव वाला नहीं होता है (४) ९ इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो क्षेत्रवर्षी होता है क्षेत्रमें-पात्रमें दान, श्रुत आदिका निक्षेपण कर-

करनासे डोतो नथी. (३) केछ पुरुष जेवो डोय छे के जे कालवर्षी पणु डोय छे अने अकालवर्षी पणु डोय छे (४) केछ पुरुष जेवो डोय छे के जे कालवर्षी पणु डोतो नथी अने अकालवर्षी पणु डोतो नथी. ॥८॥

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि-मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकारे पणु कह्या छे-केछ मेघ जेवो डोय छे के जे क्षेत्रमां-धान्यादि उत्पन्न करनारां जेत-रोमां वरसनारो डोय छे, पणु अक्षेत्रमां-वेरान-प्रदेशमां वरसनारो डोतो नथी. (२) केछ मेघ अक्षेत्रवर्षी डोय छे पणु क्षेत्रवर्षी डोतो नथी. (३) केछ मेघ क्षेत्रवर्षी पणु डोय छे अने अक्षेत्रवर्षी पणु डोय छे. (४) केछ मेघ क्षेत्रवर्षी पणु डोतो नथी अने अक्षेत्रवर्षी पणु डोतो नथी ॥९॥

जेव प्रमाणे पुरुषना पणु नीचे प्रमाणे चार प्रकार कह्या छे—(१) केछ जेक पुरुष क्षेत्रवर्षी डोय छे पणु अक्षेत्रवर्षी डोतो नथी. जेटदे के

किं तु नो अक्षेत्रवर्षी—अपात्रे दानश्रुतादीनां निक्षेपी न भवतीति प्रथमः १। तथा—
एकोऽक्षेत्रवर्षी न तु क्षेत्रवर्षी भवति इति द्वितीयः २। तथा—एको महौदार्यात्
पात्रापात्रविचाररहिततया प्रवचनप्रभावनादिकरणाद्वा क्षेत्राक्षेत्रवर्षी—पात्रा-
पात्रवर्षी भवति इति तृतीयः ३। तथा—एकः पात्रापात्रवर्षी—दानादानप्रवृत्तिकः
कृपणः इति चतुर्थः (१०)

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्—एको मेघो जनयिता—धान्या-
द्यङ्कुरोत्पादयिता भवति किन्तु निर्मापयिता—सस्यादिसम्पादयिता न भवति
अन्ते वृष्टिर्वर्जितत्वात् इति प्रथमः १।

नेके स्वभाववाला होता है अक्षेत्रवर्षी नहीं होता है—अक्षेत्रमें—अपा-
त्रमें दान श्रुतादिका निक्षेप करये वाला नहीं होता है १ तथा कोई एक
पुरुष ऐसा होता है, जो अक्षेत्रवर्षी होता है, क्षेत्रवर्षी नहीं होता है २
तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो महान् उदारतादि गुणवाला होनेसे
या प्रवचनकी प्रभावनादि रूप कारणसे पात्र अपात्रका विचार किये
बिनाही क्षेत्राक्षेत्रवर्षी होता है पात्रापात्रवर्षी होता है ३ तथा कोई
एक पुरुष ऐसा होता है जो न पात्रवर्षी होता है और न अपात्रवर्षीही
होता है ऐसा वह दानादान इन दोनोंमें अप्रवृत्तिवाला होता है—अर्थात्
कृपण होता है ४ (१०)

फिर भी—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघ चार प्रकारके होते हैं
इनमें कोई एक मेघ ऐसा होता है—जो जनयिता होता है—धान्यादि
अङ्कुरोंका उत्पन्न करनेवाला होता है, किन्तु निर्मापयिता नहीं होता

ते योग्य पात्रमां दान, त आदिना निक्षेप करनासे होय छे पण अयोग्य
पात्रमां दान, श्रुत आदिना निक्षेप करनासे होतो नथी. (२) केह पुरुष ओवो
होय छे के ने अक्षेत्रवर्षी होय छे, पण क्षेत्रवर्षी होतो नथी. (३) केह
पुरुष ओवो होय छे के ते क्षेत्र-अक्षेत्रना विचार कर्या बिना पात्र-अपात्रना
विचार कर्या बिना दान देनासे अने प्रवचननी प्रभावना करनासे होय छे
ओटके के ते क्षेत्रवर्षी पण होय छे अने अक्षेत्रवर्षी पण होय छे. (४) केह
पुरुष ओवो होय छे के ने क्षेत्रवर्षी पण होतो नथी—योग्य व्यक्तिने दानादि
देनासे पण होतो नथी, अने अक्षेत्रवर्षी अयोग्य व्यक्तिने दानादि देनासे
पण होतो नथी. ओवो पुरुष कृपण होय छे. ॥१०॥

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पण पडे
छे—(१) केह मेघ ओवो होय छे के ने जनयिता (धान्यादिना अङ्कुराने
उत्पन्न करनासे होय छे पण निर्मापयिता (संपादयिता) होतो नथी ओटके

तथा-एकोऽन्ते वर्षणेन निर्मापयिता-सस्यसम्पादयिता भवति किन्तु जनयिता-धान्याङ्कुरादीनामुद्गमयिता न भवतीति, द्वितीयः २।

तथा-एको जनयिताऽपि निर्मापयिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३।

तथा-एको नो जनयिता नापि च निर्मापयिता भवतीति चतुर्थः ४ (११)

‘ एवामेव ’ चत्वारि अम्मापियरो ” इत्यादि—एवमेव-पूर्वोक्तमेघवदेव मातापितरश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकौ-प्रथमौ-मातापितरौ जनयितारौ-जन्मदातारौ भवतः, किन्तु निर्मापयितारौ-गुणसम्पन्नकर्तारौ न भवतः इति प्रथमभङ्गः १। तथा-एकौ-अन्यौ द्वितीयौ कौ चित् तौ निर्मापयितारौ भवतः न तु जनयितारौ, इति द्वितीयो भङ्गः २। एवं शेषावपि । एवं शिष्यं प्रतिभाचार्योऽपि योजनीयः । ४। (१२)

है अन्नमें वृष्टिबर्जित होनेसे उनका सम्पादयिता नहीं होता है १ तथा कोई मेघ ऐसा होता है जो अन्नमें वरसनेसे निर्मापयिता होता है सस्यादिका सम्पादयिता होता है, पर जनयिता नहीं होता है-धान्याङ्कुरादिकोंका उद्गमयिता-उगानेवाला नहीं होता है २ तथा-कोई एक मेघ ऐसा होता है जो जनयिता भी होता है और निर्मापयिता भी होता है ३ तथा कोई एक मेघ ऐसा होता है जो न जनयिता होता है और न निर्मापयिताही होता है ४ (११) इसी प्रकारसे “ चत्वारि अम्मापियरो ” इत्यादि-मातापिता भी चार प्रकारके होते हैं-कोई एक मातापिता ऐसे होते हैं-जो जनयिता होते हैं-जन्मदाता होते हैं पर वे निर्मापयिता नहीं होते हैं-गुणोंसे युक्त करनेवाले नहीं होते हैं १ तथा कोई एक मातापिता ऐसे होते हैं-जो निर्मापयिता होते हैं

के पाछेतर वृष्टिने अलावे अंगर आदि धान्यने उत्पादक होतो नथी. (२)

केअ एक मेघ अेवा होय छे के ने वर्षान्तकाणे वरसनासे होवाथी अंगर आदि धान्येना भीजेने संपादयिता (उत्पादक) होय छे पण धान्याङ्कुरेने जनयिता (उगाडनासे) होतो नथी. (३) केअ एक मेघ धान्याङ्कुरेने जनयिता पण होय छे अने भीजेने संपादयिता पण होय छे अने (४) केअ मेघ अेवा होय छे के ने जनयिता पण होतो नथी अने संपादयिता पण होतो नथी. ॥११॥ “ चत्वारि अम्मापियरो ” इत्यादि—अेव प्रभाण्णे-मातापितामा

पणु नीचे प्रभाण्णे चार प्रकार होय छे—केअ मातापिता जन्मदाता होय छे पणु भाणकेमां सारा शुण्णुं सिचन करनारा होता नथी (२) केअ मातापिता निर्मापयिता (सारा सारा शुण्णुं सिचन करनारा) होय छे पणु जनयिता

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम् चत्वारो भङ्गा यथा—देशवर्षी नो सर्ववर्षी १ सर्ववर्षी नो देशवर्षी २, देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ३, नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी ४। तत्राद्यं भङ्गद्वयं स्पष्टमेव यस्तृतीयो भङ्गः—‘ देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ’ इत्येव रूपः तस्य क्षेत्रकालात्मशब्दानाश्रित्य नव विकल्पाः भवन्ति यथा—यो विवक्षितभरतादिक्षेत्रस्य वर्षादिकालस्य चैकदेशे आत्मनोऽप्येकदेशेन वर्षति स देशवर्षी १, क्षेत्रकालयोः सर्वयोः आत्मनोऽपि सर्वतो वर्षति स सर्ववर्षी २, क्षेत्रतो

जनयिता नहीं होते हैं २ इसी प्रकारसे शेष दो भङ्गोंके विषयमें लगा लेना चाहिये ४ इसी प्रकारसे शिष्यके प्रति आचार्यको भी लगा लेना चाहिये (१२)

फिरभी—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—‘ देशवर्षी नो सर्ववर्षी १, सर्ववर्षी नो देशवर्षी २, देशवर्ष्यपि, सर्ववर्ष्यपि ३ नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी ४ । उनमें प्रथम दो भांगे स्पष्टही हैं । देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि इस प्रकारका जो तीसरा भांगा है उनका क्षेत्र—काल—आत्म शब्दोंको आश्रित करके नव विकल्प होते हैं, जैसेकि जो विवक्षित भरतादि क्षेत्रके एवं वर्षादि कालके एकदेशमें—और आत्माकेभी एकदेशसे वरसे वह देशवर्षी है १ क्षेत्र—काल—आत्मासे सर्वतः वरसे वह सर्ववर्षी है २ क्षेत्रसे देशमें कालसे और आत्मासे सर्वतः ३ कालसे देशमें, क्षेत्रसे और आत्मासे सर्वत्र और सर्वतः ४

होता नहीं. એજ પ્રમાણે ખાકીના બે ભાંગા પશુ સમજી લેવા. એજ પ્રમાણે આચાર્ય શિષ્ય સંબંધી ચાર ભાંગા પશુ સમજી લેવા જોઈએ. ॥१२॥

“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पशु कथा छे जेभके—देशवर्षी नो सर्ववर्षी १, सर्ववर्षी नो देशवर्षी २, देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ३ नो देशवर्षी नो सर्ववर्षी ४, तेमां पडेलाना जे भांगे स्पष्ट जे छे, ‘ देशवर्ष्यपि सर्ववर्ष्यपि ’ जे रीतनो जे नीजे लग छे तेना क्षेत्र—काल, आत्मा जे शब्दोनो आश्रय करीने नव विकल्पो भने छे. जेभके—जे विवक्षित भरतादि क्षेत्रना भने वर्षादिकाणना जेकदेशमां भने आत्माना पशु जेकदेशथी वरसे ते देशवर्षी छे. १, क्षेत्र—काल आत्माथी सर्वतः वरसे ते सर्ववर्षी छे २, क्षेत्रथी देशमां कालथी भने आत्माथी सर्वतः ३, कालथी देशमां क्षेत्रथी भने आत्माथी सर्वत्र भने सर्वताः ४ आत्माथी देशमां क्षेत्र भने

દેશે કાલતઃ આત્મનશ્ચ સર્વતઃ ૩, કાલતો દેશે ક્ષેત્રતાઃ—આત્મનશ્ચ સર્વત્ર સર્વતઃ ૪,
આત્મનો દેશેન ક્ષેત્રતઃ કાલતશ્ચ સર્વત્ર ૫, ક્ષેત્રકાલતો દેશેન આત્મનશ્ચ સર્વતઃ ૬,
ક્ષેત્રત આત્મનશ્ચ દેશેન કાલતઃ સર્વત્ર ૭, કાલતઃ ક્ષેત્રતો દેશેન આત્મનશ્ચ સર્વતઃ
૮, કાલત આત્મનશ્ચ દેશેન ક્ષેત્રતઃ સર્વત્ર ૯। इत्येवं नवभिर्विकल्पैर्वर्षति स देश-
वर्षी सर्ववर्षी चेति तृतीयो भङ्गः ३। चतुर्थरतु द्विधाऽपि देशतः सर्वतो निषेधरूपः
सुगम एवेति ।

“ एवमेव चत्वारि रायाणो ” इत्यादि—एवमेव—उक्तमेवदेव राजानश्च-
त्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको राजा देशाधिपतिः—विक्षितदेशस्य अधिपतिः—
तत्रैव योगक्षेमकरणे प्रभुदेशाधिपति भवति, किन्तु सर्वाधिपतिः—सर्वयोगक्षेमक-
रणप्रभुर्न भवति, स च पल्लीपत्यादिरिति प्रथमः १। तथा—एकः सर्वाधिपतिः
स्वदेशेऽन्यत्र वा सर्वत्र प्रभवति यः स भवति किन्तु न देशाधिपतिः—देशमात्रस्या-
धिपतिर्न भवति, इति द्वितीयः २। तथा—एको देशाधिपतिरपि सर्वाधिपतिरपि

આત્માસે દેશમેં, ક્ષેત્ર ઓર કાલસે સર્વત્ર ૫, ક્ષેત્ર ઓર કાલસે દેશમેં
આત્માસે સર્વતઃ ૬, ક્ષેત્ર ઓર આત્માસે દેશમેં કાલસે સર્વત્ર ૭, કાલસે
ઓર ક્ષેત્રસે દેશમેં આત્માસે સર્વતઃ ૮, કાલસે ઓર આત્માસે દેશમેં
ક્ષેત્રસે સર્વત્ર ૯, इस प्रकार नौ विकल्पोंसे वरसनेके स्वभाववाला होता
है वह देशवर्षी और सर्ववर्षी है, इस प्रकार तीवरा भंग है । और चौथा
भंग देशसे और सर्वसे निषेधरूपसे सुगमही है ४। (१३)

“ एवमेव चत्वारि रायाणो ” इसी प्रकारसे राजा चार प्रकारके
होते हैं, जैसे कोई एक राजा देशाधिपति होता है सर्वाधिपति नहीं
होता है १ कोई एक राजा ऐसा होता है जो सर्वाधिपति होता है

કાળથી સર્વત્ર ૫, ક્ષેત્ર અને કાળથી દેશમાં આત્માથી સર્વતઃ ૬, ક્ષેત્ર અને
આત્માથી દેશમાં કાળથી સર્વત્ર, કાળથી અને ક્ષેત્રથી દેશમાં આત્માથી સર્વતઃ
૮, કાલથી અને આત્માથી દેશમાં, ક્ષેત્રથી સર્વત્ર ૯, આ રીતે નવ વિકલ્પોથી
વરસવાના સ્વભાવવાળો જે હોય તે દેશવર્ષી અને સર્વવર્ષી છે. આ રીતે
ત્રીજો ભંગ છે. ચોથો ભંગ દેશથી અને સર્વથી નિષેધ રૂપે સરળ જ છે. ૧૧૩।

“ एवमेव चत्वारि रायाणो ” इत्यादि—एवमेव प्रभावे राजाना पञ्च चार
प्रकारो कथा छे—(१) कोइ एक राजा देशाधिपति होय छे पञ्च सर्वाधिपति
होतो नथी (२) कोइ एक राजा अये होय छे के ने सर्वाधिपति होय छे
पञ्च देशाधिपति होतो नथी (३) कोइ एक राजा अये होय छे के

च यद्वा-देशाधिपतिभूत्वा सर्वाधिपतिर्भवति, वासुदेवादिवत् स देश-सर्वोभया-
धिपतिरिति तृतीयः ३। तथा-एको नो देशाधिपतिर्नापि च सर्वाधिपति भवति
स च राज्यपरिभ्रष्टः । इति चतुर्थः । ४। (१४) ॥ सू० ९ ॥

मूलम्—चत्वारि मेहा पणसा, तं जहा-पुक्खलसंवट्टए
१ पज्जुञ्जे २ जीमूए ३ जिम्हे ४। पुक्खलवट्टए णं महासेहे

देशाधिपति नहीं होता है २ तथा कोई एक राजा ऐसा होता है, जो
देशाधिपति भी होना है, और सर्वाधिपति भी होता है ३ और कोई
राजा ऐसा होता है जो न देशाधिपति होता है और न सर्वाधिपति
होता है ४ इनमें प्रथम प्रकारका राजा किसी एक विवक्षित देशका
अधिपति होता है, वह वही पर योगक्षेम करनेमें समर्थ रहता है सर्वत्र
योगक्षेम (अलब्ध लाभ - योग, लब्ध का रक्षण + क्षेम)
करनेमें समर्थ नहीं होता है ऐसा वह पल्लीपति आदि रूप
होता है द्वितीय प्रकारका जो राजा होता है वह स्वदेशमें भी और
अन्यत्र भी सर्वत्र योगक्षेम करनेमें समर्थ होता है वह केवल देश-
मात्रका अधिपति नहीं होता है-तृतीय प्रकारका जो राजा होता है वह
वासुदेव आदिकी तरह देशाधिपति होकर सर्वाधिपति हो जाता है ३ तथा
चतुर्थ प्रकारका जो राजा होता है वह जब राज्यसे परिभ्रष्ट हो जाता
है तब वह कहींका भी अधिपति नहीं होता है (१४) सूत्र ९ ॥

देशाधिपति पणु डोय छे अने सर्वाधिपति पणु डोय छे. (४) डोय
रान्ण अवेो डोय छे के ने देशाधिपति पणु डोतो नथी अने सर्वाधिपति
पणु डोतो नथी आ आर विकटपोनु स्पष्टीकरण नीचे प्रमाणे छे—पडैला
प्रकारनेो रान्ण डोय अमुक देशनेो अधिपति डोय छे अने अटला न देशनु
योगक्षेम करवाने समर्थ डोय छे, पणु सर्वत्र योगक्षेम करवाने समर्थ डोतो
नथी. अवेो ते रान्ण पल्लीपति आदि रुप डोय छे. (२) अण्ण प्रकारनेो
ने रान्ण कडो छे ते स्वदेशमां पणु योगक्षेम करवाने समर्थ डोय छे, अने
अन्यत्र पणु योगक्षेम करवाने समर्थ डोय छे ते केवण देश मात्रनेो न
अधिपति डोतो नथी.

त्रीज प्रकारनेो रान्ण वासुदेव आदिनी नेम देशाधिपतिमांथी सर्वाधि-
पति णनी गयो डोय छे. योधा प्रकारमां पट्टए रान्णने गण्णवी शक्य छे करणु
के ते देशाधिपति पणु डोतो नथी अने सर्वाधिपति पणु डोतो नथी ॥ १४ ॥ सू ९ ॥

एगेणं वासेणं दसवाससहस्साइं भावेइ १, पञ्जुन्नेणं महामेहे
एगेणं वासेणं दसवाससयाइं भावेइ २ जीमूए णं महामेहे
एगेणं वासेणं दसवासाइं भावेइ ३, जिम्हेणं महामेहे बहुहिं-
वासेहिं एगं वासं भावेइ वा णवा भावेइ ४। (१५) ॥सू० १०॥

छाया—चत्वारो मेघाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पुष्करावर्तः १, पर्जन्यः २, जीमूतः ३ जिह्वः ४। पुष्करावर्तः खलु महामेघः एकया वृष्ट्या दशवर्षसहस्राणि भावयति १, पर्जन्यः खलु महामेघः एकया वर्षया दशवर्षशतानि भावयति २, जीमूतः खलु महामेघः एकया वर्षया दशवर्षाणि भावयति ३, जिह्वः खलु महामेघो बहुभिर्वर्षाभिरेकं वर्षं भावयति वा न वा भावयति ४ (१५) ॥सू० १०॥

टीका—“ चत्वारि मेहा ” इत्यादि—मेघाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पुष्क-
रावर्तः १, पर्जन्यः २, जीमूतः ३, जिह्वश्च ४। तत्र पुष्करावर्तो नाम खलु-महा-
मेघः एकया वृष्ट्या-सकृद्रूपेण दशवर्षसहस्राणि-दशसहस्रसंख्यकवर्षपर्यन्तम्
पृथिवीं भावयति-जलादां करोति-धान्यादिनिष्पत्तिसमर्थं सम्पादयतीति भावः
१। तथा-द्वितीयः पर्जन्यो महामेघ एकया वर्षया दशवर्षशतानि-एकसहस्रवर्ष-

“चत्वारि मेहा पणन्ता” इत्यादि सूत्र १० ॥

मेघ चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे—पुष्करावर्त १, पर्जन्य २ जीमूत
३ और जिह्व ४ इनमें पुष्करावर्त यह महामेघ होता है और यह एक-
बारही बरसने पर दस हजार वर्ष तक भूमिको जलसे आर्द्र-आदि कर
देताहै, उसे धान्यादि निष्पत्तिमें समर्थ कर देताहै द्वितीय प्रकारका जो
मेघ होता है वह भी महामेघ रूप होता है यह भी एक बारकी वर्षासे
पृथिवीको एक हजार वर्ष तक धान्यादि निष्पत्तिमें समर्थ कर देता है

“ चत्वारि मेहा पणन्ता ” इत्यादि—(सू. १०)

मेघना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) पुष्करावर्त, (२) पर्जन्य,
(३) जीमूत અને (४) जिह्व. पुष्करાવર્ત મહામેઘ રૂપ હોય છે તે મેઘ
એક જ વખત વરસવાથી ૧૦ હજાર વર્ષ સુધી ભૂમિમાં ભીનાશ રહે છે તે
કારણે તે મેઘ ભૂમિને ધાન્યાદિ ઉત્પન્ન કરવાને સમર્થ કરી નાખે છે. બીજે
જે પર્જન્ય નામનો મેઘ છે તે પણ મહા મેઘરૂપ છે. તે એક જ વખત
વરસવાથી જમીનને એક હજાર વર્ષ સુધી ધાન્યાદિ ઉત્પન્ન કરવાને લાયક

पर्यन्तं भूवं भावयति २। तथा—जीमूतो महामेघो दशवर्षाणि भुवं भावयति ३।
तथा—जिह्मस्तु महामेघो बहुभिर्वर्षाभिरेकं वर्षम्—एकवर्षं पर्यन्तमेव भुवं भावयति,
वा—यद्वा न भावयति रूक्षजलत्वात्, इति चतुर्थः । ४ ।

अत्रान्तरे पुरुषाधिकारात् पुष्करावर्तादिवत् पुरुषाश्चत्वारः ऊहनीयाः । तत्र
पुष्करावर्तसमानः पुरुषः सकृदुपदेशेन सकृदानेन वा बहुकालपर्यन्तं प्राणिनं
भावयति—शुभस्वभावसम्पन्नं करोति, यद्वा—समृद्धं करोति १, तथा—पर्जन्य-
समानः पुरुषोऽल्पकालपर्यन्तमेव सकृदुपदेशेन सकृदानेन वा देहिनं भावयति—
शुभस्वभावं धनिनं वा करोति २। तथा—जीमूततुल्यः पुरुषोऽल्पतरकालपर्यन्त-

तथा जीमूत नामका जो महामेघ होता है, वह दस वर्ष तक पृथिवीको अपनी
एकबारकी वर्षासे धान्यादिकी निष्पत्ति करनेमें समर्थ बना देता है और
जो जिह्म नामका महामेघ होता है वह अपनी अनेक वर्षाओंसे एक
वर्ष तकही पृथिवीको धान्यादिकी निष्पत्ति करनेमें समर्थ बनाता है
अथवा नहीं भी बनाता है क्योंकि इसका जल रूक्ष होता है ।

इसी प्रकारसे पुरुषाधिकारको लेकर यहां ऐसा कथन कर लेना
चाहिये कि पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं पुष्करावर्त महामेघके समान
वह पुरुष है जो एकबारके उपदेशसे या एक बारके दानसे प्राणियोंको
बहुत समय तक शुभ स्वभावसे युक्त कर देता है अथवा समृद्ध कर
देता है १ पर्जन्य समान वह पुरुष है जो एक बारके उपदेशसे या एक
बारके दान अल्पकाल तकही प्राणियोंको या प्राणीको—शुभ स्वभावसे
युक्त कर देता है २ जीमूतके समान वह पुरुष है जो अल्पतर काल

पनायी दे छे. त्रीजे जीमूत नामने जे मेघ कह्यो छे ते पणु महामेघ इप
छे ते ओक ज वषत वरसवाथी लूमिमां १० वर्ष सुधी धान्यादिनी उत्पत्ति
थई शके छे. योथो जे जिह्म नामने महामेघ छे, ते, पोतानी अनेक वर्षा-
ओथी लूमिने ओक वर्ष सुधी ज धान्यदि उत्पन्न करवाने समर्थ बनावे छे
अरे अने नथी पणु बनावतो, कारणु के तेनुं पाणी इक्ष होय छे.

ओअ प्रमाणे पुरुषना पणु नीचे प्रमाणे चार प्रकार पडे छे—(१)
पुष्करावर्त मेघसमान पुरुष—जे माणुस ओक ज वार उपदेश आपीने जेवने
लांभा समय सुधी शुभ स्वभाववाणो करी नापे छे अथवा ओक ज वार दान
आपीने जेवने लांभा समय सुधी समृद्ध करी नापे छे ते पुरुषने पुष्क-
रावर्त मेघ समान गणुवाभां आवे छे. (२) पर्जन्य समान पुरुष—जे पुरुष
ओक ज वार उपदेश आपीने अथवा दान आपीने जेवने अल्पकाल पर्यन्त
शुभ स्वभाव युक्त अथवा समृद्ध करी नापे छे, जेवा पुरुषने पर्जन्य समान

मेव सकृदुपदेशेन सकृद्दानेन वा भविनं भावयति समृद्धिशालिनं वा करोति । ३।
तथा-जिह्वसमानः पुरुषोऽसकृदुपदेशेनासकृद्दानेनापि वाऽल्पतमकालपर्यन्तं
जन्तुं भावयति वा न भावयति, उपकरोति वा नोपकरोतीति ४। (१५) ॥ सू० १० ॥

मूलम्—चत्वारि करंडगा पण्यत्ता, तं जहा-सोवागकरं-
डगा १, वेसियाकरंडग २, गाहावडकरंडग ३, रायकरंडग ४,
(१६) । एवामेव चत्वारि आचरिया पण्यत्ता, तं जहा-सोवाग-
करंडगसमाणै १, वेसियाकरंडगसमाणै २, गाहावडकरंडग-
समाणै ३, रायकरंडगसमाणै ४ (१७) ॥ सू० ११ ॥

छाया—चत्वारः करण्डकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-श्वपाककरण्डकः १, वेश्याकर-
ण्डकः २, गृहपतिकरण्डकः ३, राजकरण्डकः ४। (१६) एवमेव चत्वार
आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-श्वपाककरण्डकसमानः १, वेश्याकरण्डकसमानः
२, गृहपतिकरण्डकसमानः ३, राजकरण्डकसमानः ४। (१७) ॥ सू० ११ ॥

टीका—“चत्वारि करंडगा” इत्यादि—करण्डः—वंशशलाकादिनिर्मितो
भाजनविशेषः करंडिया’ इति भाषाप्रसिद्धः स एव करण्डकः, ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः,

तकही एक बारके उपदेशसे या एक बारके दानसे प्राणीको शुभ
भावसे युक्त कर देता है या समृद्धिशाली बना देता है ३ तथा जिह्व
मेघ समान वह पुरुष है जो बार २ के उपदेश या बार २ के दानसे
भी अल्पतम काल तकही प्राणीको शुभ स्वभाववाला या पैसेवाला
बना देता है अथवा नहीं भी बना देता है ऐसा अनुष्य किसीका
उपकार करता भी है नहीं भी करता है १५ सू. १०

“चत्वारि करंडगा पण्यत्ता” इत्यादि सूत्र ११ ॥

वंशकी शालाकाओंसे निर्मित हुए पात्र विशेषका नाम करंडक
है, जिसे भाषामें करंडिया कहते हैं ये करंडक चार प्रकारके होते हैं—

कडे छे (३) श्रमूत समान पुरुष—जे पुरुष ओक व बार उपदेश आपीने
अथवा दान आपीने लोवने अल्पतर काण सुधी शुभ स्वभाववाला अथवा
समृद्ध करी नाणे छे ते पुरुषने श्रमूत समान कडे छे. (४) जिह्व मेघ
समान पुरुष—जे भाषुम बारवार उपदेश अथवा दान देता छतां पण्य
लोवने अल्पतम काण सुधी शुभ स्वभाववाला अथवा समृद्धिशाली बनावी
शके छे अथवा बनावी शकता नथी ओवा पुरुषने जिह्वसमान कडे छे. (१५) सू. १०

ત્રયયા-શ્વપાકકરણ્ડકઃ સ ચ કચવરોચ્છિષ્ટાશુચિપ્રભૃત્વસારસ્ત્વાશ્રયતયાસ્ત્ય
 ન્તમપારો ભવતિ ૧, તથા-વેશ્યાકરણ્ડકઃ સ તુ જતુપૂરિદસુવર્ણનિર્મિતાલક્ષ્ણારા-
 ઘાશ્રયતયા શ્વપાકકરણ્ડાપેક્ષયા ક્ષિષ્ટિત્સારોઽપિ ગૃહપતિ-રાજકરણ્ડાપેક્ષયા
 ત્સાર એવ માતિ ૨, તથા-ગૃહપતિકરણ્ડકઃ-ગૃહપતિઃ-સમ્પત્તિશાલી કૌટુમ્બિકઃ
 તસ્ય કાણ્ડકસ્થાયા, સ ચ વિશિષ્ટમણિસ્વર્ણાભરણાઘાશ્રયતયા પૂર્વોક્તકરણ્ડદ્વયાત્
 સારતરો ભવતિ ૩, તથા-રાજકરણ્ડકઃ-સ તુ बहुमूल्यरत्नाघाश्रयतया पूर्वोक्त-
 કરણ્ડત્રયાત્સારતમો ભવતિ ૪।

एक श्वपाककरण्डक १ दूसरा वेश्या करण्डक, तीसरा गृहपति करण्डक
 और चौथा राजकरण्डक इनमें जो श्वपाकका चाण्डालका करण्डक
 होता है, वह कूडा वगैरहके रखे जानेके कारण या झूठ वगैरहके रखे
 जानेके कारण या अशुद्धि दृष्टी आदिके भरनेके कारण अत्यन्त असार
 होता है १ वेश्याका जो करण्डक होता है वह लाखसे युक्त चपड़ीके
 युक्त सोनेके बने गहनों अलंकारोंसे युक्त होनेके कारण-वे उसमें घरे
 रहते हैं-इस कारणसे श्वपाकके करण्डककी अपेक्षा कुछ सारवाला
 होता है पर गृहपतिके या राजाके करण्डककी अपेक्षा तो असार होता
 है २ जो सम्पत्तिशाली कौटुम्बिक गृहपति होता है, उसका करण्डक
 विशिष्ट मणियोंके गहनोंसे या स्वर्णके गहनोंसे भरा रहनेके कारण
 पूर्वोक्त करण्डक द्वयसे सारतर होता है ३ तथा राजाका जो करण्डक
 होता है वह बहुमूल्यवाले रत्नादिकोंसे भरा रहनेके कारण पूर्वोक्त
 तीन करण्डकोंकी अपेक्षा सारतम होता है ४ (१६)

“ चत्वारि करंडगा षण्णत्ता ” इत्यादि—(सू. ११)

કરડિયાના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) શ્વપાક કરડિયો—ચાંડાળના
 કરડિયાને શ્વપાક કરંડક કહે છે. તેમાં કચરો, એંઠ, મળ આદિ અપવિત્ર
 ચીજો ભરવામાં આવે છે તે કારણે તે અસાર હોય છે (૨) વેશ્યા કરંડક—
 વેશ્યાના કરડિયાને વેશ્યાકરંડક કહે છે. તેમાં લાખ આદિથી યુક્ત સોનાનાં
 આભૂષણો ભરેલા હોવાને કારણે તે શ્વપાક કરંડક જેવો અસાર હોતો નથી.
 તે શ્વપાક કરંડક કરતા સારયુક્ત હોય છે પણ ગૃહપતિકરંડક અને રજ-
 કરંડક કરતાં તે અસાર હોય છે (૩) ગૃહપતિકરંડક—સંપત્તિશાળી ગૃહ
 સ્થના કરડિયાને ગૃહપતિકરંડક કહે છે. તે વિશિષ્ટ મણિઓના કે સુવર્ણના
 આભૂષણોથી ભરેલો હોય છે. તે કારણે પૂર્વોક્ત બે કરંડિયા કરતાં તે વધારે
 સારયુક્ત હોય છે. (૪) રાજકરંડક—રાજાનો કરડિયો બહુ મૂલ્યવાન રત્નાદિકોથી
 ભરેલો હોવાને કારણે પૂર્વોક્ત ત્રણે કરંડિયા કરતાં વધારે સારયુક્ત હોય છે. ॥૧૬॥

“ एवमेव चत्वार आयरिया ” इत्यादि—एवमेव—उक्त करण्डकचतुष्टय-
त्रदेव आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञाताः, तद्यथा—श्वपाककरण्डकसमानः—य आचार्य उत्सू-
त्रादि प्ररूपकत्वाद्दुन्मार्गगामितया चारित्रपरिभ्रष्टो भवति सोऽत्यन्तासारत्वाश्वा-
ण्डालकरण्डकतुल्य उच्यते । १ । इति प्रथमः १। तथा—वेश्याकरण्डकसमानः—
यस्तु किञ्चिदेवश्रुतं यथा कथंचित्पठित्वा वागाडम्बरेण मुग्धजनमाकृष्टं करोति
स परीक्षायामदक्षतयाऽसारत्वादेववेश्याकरण्डकतुल्यः । इति द्वितीयः २। तथा—
गृहपतिकरण्डकसमानः—यस्तु स्व—परसिद्धान्तज्ञः क्रियादिगुणसम्पन्नश्च भवति स
सारसम्पन्नत्वाद् गृहपतिकरण्डकतुल्यः । इति तृतीयः ३। तथा—राजकरण्डकस-
मानः—यस्तु सर्वैरप्याचार्यगुणैरलङ्कृततया तीर्थङ्करसदृशः स सारसम्पन्नाद् वृषति
करण्डकतुल्यः सुधर्मादिवत् इति चतुर्थः ४ (१७) ॥ सू० ११ ॥

इसी प्रकारसे आचार्यजन भी चार प्रकारके होते हैं—श्वपाक
करण्डक तुल्य वह आचार्य है, जो उत्सूत्र शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करता
हैं उन्मार्गगामी होता है अतः चारित्रसे भ्रष्ट होता है १ वेश्या कर-
ण्डकके तुल्य वह आचार्य है जो थोड़ासाही श्रुत यथाकथञ्चित् रूपसे पढ-
कर अपने वचनाडम्बरसे मुग्धजनको आकृष्ट करता है वह परीक्षामें अदक्ष
अचतुर होनेके कारण असार कहा गया है २ गृहपति करण्डकके समान
वह आचार्य है जो स्वसिद्धान्त और परसिद्धान्तका जाननेवाला होता
है, और क्रियादि गुणोंसे सम्पन्न होता है ऐसा वह सारसम्पन्न आचार्य
गृहपति करण्डक जैसा कहा गया है ३ तथा राजाके करण्डक समान
वह आचार्य है जो समस्त आचार्योंके गुणोंसे अलङ्कृत होनेके कारण

એજ પ્રમાણે આચાર્યો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—(૧)
શ્વપાક કરંડક સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય ઉત્સૂત્ર (શાસ્ત્ર વિરુદ્ધની) પ્રરૂપણા
કરે છે, ઉન્માર્ગગામી હોય છે અને તે કારણે ચારિત્રભ્રષ્ટ હોય છે એવા
આચાર્યને શ્વપાક કરંડક સમાન કહે છે. (૨) વેશ્યાકરંડક સમાન આચાર્ય—
જે આચાર્ય થોડા થોડા શ્રુતનો જ્ઞાતા હોય છે, અને પોતાના વચનાડંબર
દ્વારા મુગ્ધજનોને આકર્ષનારા હોય છે તેઓ શ્રુતજ્ઞાનમાં પૂર્ણ ન હોવાને
કારણે શ્વપાકકરંડક કરતા વધારે સારયુક્ત અને ત્રીજા અને ચોથા પ્રકારનાં
આચાર્યોની અપેક્ષાએ અસારયુક્ત ગણાય છે.

(૩) ગૃહપતિ કરંડક સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય સ્વસિદ્ધાંત અને
પરસિદ્ધાંતના બાણકાર હોય છે અને ક્રિયાદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે, તેમને
ગૃહપતિકરંડક સમાન કહે છે. (૨) રાજકરંડક સમાન આચાર્ય—જેઓ

मूलम्—चत्वारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा-साले णाममेगे सालपरियाए १, साले णाममेगे एरंडपरियाए २, एरंडे णाममेगे सालपरियाए ३, एरंडे णाममेगे एरंडपरियाए ४ (१८) ।
एवामेव चत्वारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा-साले णाममेगे सालपरियाए १, साले णाममेगे एरंडपरियाए २, एरंडे णाममेगे सालपरियाए ३, एरंडे णाममेगे एरंडपरियाए ४ (१९) ।

चत्वारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा-साले णाममेगे सालपरिवारे ४ (२०) । एवामेव चत्वारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा-साले णाममेगे सालपरिवारे ४ (२१) ।

सालदुममज्झयारे जह साले णाम होइ दुमराया ।

इय सुंदर आयरिए सुंदर सीसे मुणैयव्वे ॥ १ ॥

एरंडमज्झयारे जह साले णाम होइ दुमराया ।

इय सुंदर आयरिए मंगुल सीसे मुणैयव्वे । २ ॥

सालदुममज्झयारे एरंडे णाम होइ दुमराया ।

इय मंगुल आयरिय सुंदरसीसे मुणैयव्वे ॥ ३ ॥

एरंडमज्झयारे एरंडे णाम होइ दुमराया ।

इय मंगुल आयरिए मंगुलसीसे मुणैयव्वे । ४ ॥ सू० १२ ॥

छाया—चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो नामैकः सालपर्यायः १, सालो नामैक एरण्डपर्यायः २, एरण्डो नामैकः सालपर्यायः ३, एरण्डो नामैक तीर्थकर जैसा होताहै, ऐसा वह सुधर्मास्वामीकी तरह सारतम होनेसे नृपतिकरण्डक जैसा कहा गया है ४ (१७) सूत्र ११ ॥

आचार्योना सभस्त गुणोथी विभूषित डोवाने करण्णे तीर्थकर नेवां डोय छेअेवा सुधर्मास्वामी नेवा सारतम आचार्यने नृपतिकरंडक समान कडे छे । १७ सू० ११ ॥

एरण्डपर्यायः (१८) । एवमेव चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो नामैकः
 सालपर्यायः १, सालो नामैक एरण्डपर्यायः २, एरण्डनामैकः सालपर्यायः ३,
 एरण्डो नामैक एरण्डपर्यायः ४ (१९) चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो
 नामैकः सालपरिवारः ४ (२०) एवमेव चत्वार आचार्या प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-सालो
 नामैकः सालपरिवारः ४ (२१) ।

सालद्रुममध्यकारे यथा सालो नाम भवति द्रुमराजः ।

इति सुन्दर आचार्यः सुन्दरः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ १ ॥

एरण्डमध्यकारे यथा सालो नाम भवति द्रुमराजः ।

इति सुन्दर आचार्यः मङ्गुलः (असुन्दरः) शिष्यो ज्ञातव्यः । २ ॥

सालद्रुममध्यकारे एरण्डो नाम भवति द्रुमराजः ।

इति मङ्गुल आचार्यः सुन्दरः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ ३ ॥

एरण्ड मध्यकारे एरण्डो नाम भवति द्रुमराजः ।

इति मङ्गुल आचार्यः मङ्गुलः शिष्यो ज्ञातव्यः ॥ ४ ॥ सू० १२ ॥

टीका—‘ चत्वारि रुक्खा ’ इत्यादि—पुनर्वृक्षाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—
 एको वृक्षः सालः—सालारूपवृक्षजातिमत्त्वात् सालो भवन् सालपर्यायः—सालगत-
 निविडच्छायत्वसंसेव्यत्वादि धर्मसम्पन्नो भवतीति प्रथमः । १ ।

तथा—एकः सालो भवन्नपि एरण्डपर्यायः—एरण्डगताल्पच्छायत्वासेव्यत्वा-
 दिधर्मवान् भवति । इति द्वितीयः । २ । तथा—एक एरण्डः सन् घनच्छायत्वादि-

‘चत्वारि रुक्खा पण्णत्ता’ इत्यादि सूत्र १२ ॥

टीकार्थ-वृक्ष चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे—साल साल पर्याय १ साल
 एरण्ड पर्याय २ एरण्ड साल पर्याय ३ और एरण्ड एरण्ड पर्याय ४
 इनमें जो प्रथम प्रकारका वृक्षहै वह साल नामक वृक्षकी जोतिवाला
 होनेसे साल होता हुआ सालगत जो निविड छाया आदि धर्म है तथा
 लोगोंके द्वारा आश्रय लेना आदि जो बातें हैं उनसे युक्त होता है ॥१॥
 द्वितीय प्रकारका जो वृक्ष है वह साल होता हुआ भी एरण्डके
 जैसी पर्यायवाला होता है जैसे—एरण्ड अल्प छायावाला होता है अत

‘चत्वारि रुक्खा पण्णत्ता’ इत्यादि—(सू १२)

वृक्ष चार प्रकारना कहे छे—(१) साल—सालपर्याय, (२) साल—ओर'उ
 पर्याय, (३) ओर'उ—सालपर्याय, (४) ओर'उ—ओर'उपर्याय. तेमांथी पडेला प्रका
 रनुं वृक्ष साल नामना वृक्षनी जतिनुं डोय छे अने सालवृक्षना गुणोथी
 युक्त डोय छे ओटले के घाउ छायाथी युक्त डोवाने कारणे दोको अने
 प्राणीओने आश्रय आपनारुं डोय छे माटे तेने ‘साल—सालपर्याय’ इप
 कथुं छे. (२) भीम प्रकारनुं वृक्ष साल जतिनुं डोवा छतां पथु ओर'उना

ધર્મસમ્પન્નત્વાત્ સાલપર્યાયો ભવતીતિ તૃતીયઃ ૩, તથા-એક ઇરણ્ડઃ સન્ પુનરે-
 ણ્ડપર્યાયઃ-ઈરણ્ડગતાલ્પજ્ઞાયત્વાદિ ધર્મોપેતો ભવતીતિ ચતુર્થઃ ૪ (૧૮)

“ એવામેવ ચત્તારિ આચરિયા ” ઇત્યાદિ-એવમેવ-સાલવદેવ આચાર્યાશ્ચ-
 ત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-એકઃ-કશ્ચિદાચાર્યઃ સાલઃ-સાલસદૃશઃ-સાલો યથા સાલ-
 જાતીયો વૃક્ષો વહુચ્છાયસ્તથાઽઽચાર્યોઽપિ સત્કુલોત્પન્નઃ સદ્ગુરુકુલશ્ચ સાલ એવો-
 ચ્યમાનઃ સાલપર્યાયઃ-સાલધર્મો, યથા હિ સાલઃ સચ્છાયત્વાદિ ધર્મયુક્તસ્તથા
 શારીરિકમાનસિકદુઃખજ્વાલાદહ્યમાનભવિનાં તપાનાં જ્ઞાનામૃતેનાપહારકતયા
 સ્વયં જ્ઞાનક્રિયાજનિતયશઃ-પ્રભૃતિ ગુણસમ્પન્ન આચાર્યોઽપિ સાલ એવ વ્યપદિ-

એવ અસંખ્ય હોતા હૈ એસેહી ધર્મવાલા વહ હોતા હૈ તૃતીય પ્રકારકા
 વૃક્ષ ઇરણ્ડ હોતા હુઆ ખી એસા હોતા હૈ કિ ઘની છાયાવાલા હોતા
 હૈ અતએવ જનો દ્વારા સંસેવ્ય હોતા હૈ ઇત્યાદિ રૂપસે સાલવૃક્ષ ગત
 ધર્મોવાલા હોનેસે વહ સાલ પર્યાયવાલા હોતા હૈ । તથા-ચતુર્થ પ્રકારકા
 વૃક્ષ ઇરણ્ડ હુઆ ખી ઇરણ્ડ ગત અલ્પ છાયાવાલે ધર્મસે અસંસેવ્યત્વ
 આદિ વાતોસે યુક્ત વના રહતા હૈ (૧૮)

હસી પ્રકારસે ચાર આચાર્ય હોતે હૈ-ઈનમૈં સાલ સાલપર્યાયવાલા
 વહ આચાર્ય હોતા હૈ જો સત્કુલમૈં ઉત્પન્ન હુઆ હોતા હૈ, સત્ ગુરુકુલ-
 વાલા હોતા હૈ તથા-શારીરિક એવં માનસિક દુઃખરૂપ જ્વાલાસે અત્યન્ત
 જલતે હુએ મદ્ય જનોકે તાપકો જો અપને જ્ઞાનામૃતકે સિંચનસે શાન્ત
 કર દેતાહૈ ઓર સ્વયં જ્ઞાન ક્રિયાકે નિર્દોષ(નિરતિચાર)રૂપ પાલનસે જનિત
 યશ આદિ ગુણોસે સમ્પન્ન હોતાહૈ । સાલ હુઆ ખી ઇરણ્ડપર્યાયવાલા વહ

એવી પર્યાયવાળું હોય છે, એટલે કે એરંડાની જેમ અલ્પ છાયાયુક્ત હોય
 છે. તે કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા અસંસેવ્ય હોય છે-તેમના આશ્રયસ્થાન રૂપ
 હોતું નથી. (૩) ત્રીજા પ્રકારનું વૃક્ષ એરંડાની જાતિનું હોવા છતાં ઘાઠ
 છાયાયુક્ત હોવાને કારણે સાલ પર્યાયવાળું (સાલના ધર્મોથી સંપન્ન) હોય
 છે. અને તે કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા સંસેવ્ય હોય છે. ચોથા પ્રકારનું વૃક્ષ
 એરંડાની જાતિનું હોય છે અને અલ્પ છાયાદિએરંડાના ધર્મોથી યુક્ત હોવાને
 કારણે પ્રાણીઓ દ્વારા અસંસેવ્ય હોય છે ।૧૮।

એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) સાલ-સાલ-
 પર્યાયવાળા આચાર્ય-જે આચાર્ય સત્કુલમાં ઉત્પન્ન થયા હોય છે-સત્ ગુરુ-
 કુલવાળા હોય છે, તથા શારીરિક અને માનસિક દુઃખરૂપ જ્વાળાથી ખળી
 રહેલા ભવ્યજનોના તાપને જેઓ પોતાના જ્ઞાનામૃતના સિંચન દ્વારા શાન્ત
 કરી નાખે છે અને જેઓ પોતે જ્ઞાનક્રિયાના નિર્દોષ પાલનથી જનિત યશ

ચયતે, इति प्रथमः १। एकः सालो भवन्नपि एरण्डपर्यायः—एरण्डधर्मा—अल्पज्ञानादिरूपच्छायत्वाद् भवतीति द्वितीयः २। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम् । ४। (१९)

“ चत्वारि रुक्खा ” इत्यादि - वृक्षाश्चत्वारः मङ्गस्ताः, तद्यथा—एको वृक्षः सालः—सालवृक्षजातीयः सन् सालपरिवारः—साल एव परिवारो यस्य स तथा भवति इति प्रथमः । एवं शेषभङ्गत्रयमपि ४। (२०)

આચાર્ય હૈ જો સત્કુલમ્ ઉત્પન્ન દુઆ મી સત્ ગુરુકુલવાલા દુઆ મી અલ્પ જ્ઞાનાદિ રૂપ છાયાવાલા હોતા હૈ ૨ હસી પ્રકારસે શેષ દો ભક્કા મી વ્યાખ્યાન કર લેના ચાહિયે ૪ (૧૯)—“ ચત્તારિ રુક્ખા ” વૃક્ષ ચાર પ્રકારકે કહે ગયે હૈ—જૈસે—સાલ સાલ પરિવારવાલા ૧ આદિ ૪ હસી તરહસે આચાર્ય મી ચાર કહે ગયે હૈ સાલ સાલ પરિવારવાલા ૧ આદિ ૪ તાત્પર્ય હસ કથનકા એસા હૈ કિ જૈસે કોઈ એક વૃક્ષ-સાલવૃક્ષ એસા હોતા હૈ જો સ્વયં સાલવૃક્ષ હોના દુઆ મી સાલવૃક્ષકે પરિવારવાલા હોતા હૈ ૧ કોઈ એક વૃક્ષ સાલવૃક્ષ એસા હોના હૈ જો એરણ્ડકે પરિવારવાલા હોતા હૈ ૨ કોઈ એક વૃક્ષ એસા હોતા હૈ જો એરણ્ડ દુઆ મી સાલ પરિવારવાલા હોતા હૈ ૩ ઓર કોઈ એક વૃક્ષ એસા હોતા હૈ, જા એરણ્ડ

આદિ શુભૌથી સંપન્ન હોય છે એવા આચાર્યને સાલ-સાલપર્યાય રૂપ પડેલા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે.

(૨) સાલ-એરંડપર્યાય સમાન આચાર્ય—જે આચાર્ય સત્કુલમાં ઉત્પન્ન થયેલા હોવા છતાં પણ અને સત્ ગુરુકુલવાળા હોવા છતાં પણ ઘણા એછાં છવોને તેમના જ્ઞાનાદિ રૂપ છાયાને લાલ આપનારા હોય છે, એવા આચાર્યને ‘સાલ એરંડપર્યાય સમાન’ કહી શકાય છે. (૩) એરંડ-સાલપર્યાય સમાન અને (૪) એરંડ-એરંડપર્યાય સમાન આ બંને ભાંગાને ભાવાર્થ બંને જ સમજી લેવો. ૧૯૬

“ ચત્તારિ રુક્ખા ” ઇત્યાદિ-વૃક્ષ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે --

(૧) સાલ-સાલ પરિવારવાળું (૨) સાલ-એરંડ પરિવારવાળું, (૩) એરંડ-સાલપરિવારવાળું અને (૪) એરંડ-એરંડપરિવારવાળું એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) સાલ-સાલપરિવારવાળા ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા દૃષ્ટાન્ત સૂત્રના ચારે ભાગાનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—કોઈ એક વૃક્ષ, બતિની અપેક્ષાએ સાલવૃક્ષની બતિનું હોય છે અને સાલવૃક્ષના પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઈ એક વૃક્ષ, બતિની અપેક્ષાએ સાલવૃક્ષની બતિનું હોય છે પણ પરિવારની અપેક્ષાએ એરંડા જેવું હોય છે. (૩) કોઈ એક વૃક્ષ, એરંડાની બતિનું હોવા છતાં સાલવૃક્ષ જેવાં પરિવારવાળું

“ એવામેવે ” ત્યાદિ—એવમેવ ચત્વાર આચાર્યાઃ પ્રત્નપ્તાઃ, તદ્વથા—એકઃ—સાલઃ—સાલસદ્શઃ સદ્ગુરુકુલશ્રુતાદિભિરુત્તમત્વાત્ સ પુનઃ સાલપરિવારઃ—સાલાયમાનમહાનુભાવ સાધુપરિજનત્વાત્ ભવતિ ઇતિ પ્રથમઃ ૧। તથા એકઃ—સાલઃ સન્નેરણ્ડપરિવારઃ—એરણ્ડાયમાનનિર્ગુણસાધુપરિવારકત્વાત્, ઇતિ દ્વિતીયઃ ૨। તથા—એકઃ શ્રુતાદિહીનતયા એરણ્ડઃ સન્નપિ સાલપરિવારો ભવતિ । ઇતિ તૃતીયઃ ૩। તથા—એક એરણ્ડઃ સન્ પુનરેરણ્ડપરિવારો ભવતીતિ ચતુર્થઃ ૪। (૨૧) ।

પ્રાગુક્તમર્થે દ્રઢયિતું ગાથા ઉપન્યસ્યતિ—“ સાલદુમમજ્ઞયારે ” ઇત્યાદિ—સ્યષ્ટમ્, નવરમ્-સાલદુમમધ્યકારે—સાલદુમમધ્યે સદ્ગુલશબ્દોઽસુન્દરાર્થઃ॥મ્૦૧૨।

હુઆ મી એરણ્ડ પરિવારવાલા હી હોતા હૈ ૪ ઇસી પ્રકારસે કોઈ એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ જો સાલવૃક્ષકે જૈસા હોતા હૈ—સદ્ગુરુ કુલવાલા હોતાહૈ શ્રુતાભ્યાસ આદિ ગુણોસે ઉત્તમ હોતા હૈ—ઑર સાલવૃક્ષકે જૈસે પરિવારસે—તપસ્વી આદિ મહાનુભાવવાલે સાધુ પરિજનોસે યુક્ત હોતા હૈ તથા કોઈ એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ જો સ્વયં સાલકે જૈસા હોતા હુઆ મી એરણ્ડ કે પરિવાર જૈસે—નિર્ગુણ સાધુ પરિવારસે યુક્ત હોતા હૈ કોઈ એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ જો એરણ્ડકે જૈસા હુઆ મી શ્રુતાદિસે હીન હુઆ મી-સાલકે પરિવાર જૈસે મહા પ્રભાવશાલી સાધુ પરિવારવાલા હોતા હૈ તથા કોઈ એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ કિ જો સ્વયં એરણ્ડકે તુલ્ય હોતા હૈ ઑર એરણ્ડકે જૈસે શિષ્ય પરિવારવાલા હોતા હૈ ૪ (૨૦) ઇસ કથનકો દ્રઢ કરનેકે લિયે સૂત્રકારને ઇન ગાથાઓકો કહા હૈ—

હોય છે. (૪) કોઈ એક વૃક્ષ એરંડાની જાતિનું હોય છે અને એરંડાના જેવા પરિવારવાળું હોય છે.

હવે દાર્શનિક સૂત્રનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઈ એક આચાર્ય સાલવૃક્ષ સમાન હોય છે—સદ્ ગુરુકુલવાળા હોય છે અને શ્રુતાભ્યાસ આદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે, અને સાલવૃક્ષ જેવા પરિવારથી પણ યુક્ત હોય છે એટલે કે મહાનુભાવવાળા (પ્રભાવશાળી) સાધુઓના પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૨) કોઈ આચાર્ય એવા હોય છે કે જેઓ પોતે સાલવૃક્ષ સમાન હોય છે પણ નિર્ગુણ સાધુઓને ૩મી એરંડ પરિવારથી યુક્ત હોય છે. (૩) કોઈ આચાર્ય પોતે એરંડવૃક્ષ સમાન એટલે કે શ્રુતાદિથી રહિત હોય છે પણ સાલવૃક્ષ જેવા પરિવાર ૩મ મહા પ્રભાવશાળી સાધુઓના પરિવારથી યુક્ત હોય છે (૪) કોઈ આચાર્ય પોતે એરંડવૃક્ષ સમાન હોય છે અને એરંડ સમાન પરિવારથી યુક્ત હોય છે । ૨૦। આ કથનનું સમર્થન કરવા માટે

મૂલ્મ-ચત્તારિ મચ્છા પ્પણત્તા, તં જહા-અણુસોયચારી ૧,
પહિસોયચારી ૨, અંતચારી ૩, મજ્જાચારી ૪। (૨૨) એવામેવ
ચત્તારિ મિક્ખાગા પ્પણત્તા, તં જહા-અણુસોયચારી ૧, પહિ-
સોયચારી ૨, અંતચારી ૩, મજ્જાચારી ૪ (૨૩)

ચત્તારિ ગોલા પ્પણત્તા, તં જહા-મહુસિત્થગોલે ૧, જડ-
ગોલે ૨, દારુગોલે ૩, મદ્ધિયાગોલે ૪ (૨૪) । એવામેવ ચત્તારિ
પુરિસજાયા પ્પણત્તા, તં જહા-મહુસિત્થગોલસમાણે ૪ (૨૫) ।

“સાલદુમમજ્જયારે” ઇત્યાદિ । હન ગાથાઓંકા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ
જૈસે સાલદુમોંકે વીચમૈં કોઈ એક દુમરાજ હોતા હૈ, ડસી પ્રકારસે કોઈ
એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ જો સ્વયં સુન્દર હોતા હૈ ઓર ડમકા શિષ્ય
મી સુન્દર હોતેહૈં । એરણ્ડદુમોંકે વીચમૈં જૈસે સાલદુમરાજ હોતાહૈ ડસી
પ્રકારસે આચાર્ય તો સુન્દર હોતા હૈ, પર શિષ્ય સુન્દર નહીં હોતા હૈ ।
જિસ પ્રકાર સાલદુમકે વીચમૈં એરણ્ડ દુમરાજ હોતાહૈ, ડસી પ્રકાર કોઈ
એક આચાર્ય એસા હોતા હૈ, જો સ્વયં તો અસુન્દર હોતાહૈ, ઓર શિષ્ય
(પરિવાર) સુન્દર હોતા હૈ, તથા જૈસે એરણ્ડોંકે વીચમૈં એરણ્ડહી દુમરાજ
હોતાહૈ, ડસી પ્રકાર આચાર્ય મી અસુન્દર હોતાહૈ ઓર શિષ્ય મી અસુન્દર
હોતા હૈ । યહાં મધ્યકાર પદ વીચકા વાચક ઓર મજ્જુલ પદ અસુ-
ન્દર અર્થકા વાચક હૈ ॥ સૂત્ર ૧૨ ॥

સૂત્રકારે નીચેની ગાથાઓ આપી છે-“સાલદુમમજ્જયારે” ઇત્યાદિ. આ
ગાથાઓનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જેમ સાલદુમોની વચ્ચે રહેલું
કોઈ એક સાલદુમરાજ (ઉત્તમ સાલવૃક્ષ) શોભે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તમ શિષ્યોની
વચ્ચે રહેલા ઉત્તમ આચાર્ય પણ શોભતા હોય છે (૨) જેમ એરંડવૃક્ષોની
વચ્ચે કોઈ એક ઉત્તમ સાલવૃક્ષ હોય છે, તેમ કોઈ એક આચાર્ય તો સુંદર
(ઉત્તમ) હોય છે પણ તેમના શિષ્યો સુંદર હોતા નથી. (૩) જેમ સાલવૃક્ષોની
વચ્ચે કોઈ એક એરંડ દુમરાજ હોય છે, તેમ કોઈ સુંદર શિષ્ય સમુદાયથી
યુક્ત એવા અસુંદર આચાર્ય હોય છે. (૪) જેમ એરંડવૃક્ષોની વચ્ચે કોઈ
એરંડદુમરાજ હોય છે તેમ કોઈ આચાર્ય પોતે પણ અસુંદર હોય છે અને
તેમના શિષ્યો પણ અસુંદર હોય છે. આહીં “મધ્યકાર” પદ વચ્ચેનું વાચક
છે અને “મજ્જુલ” પદ અસુંદરના અર્થનું વાચક છે, એમ સમજવું. ॥સૂ. ૧૨॥

चत्वारि गोला पणत्ता, तं जहा-अयगोले १, तउगोले २, तंबगोले ३, सीसगगोले ४ (२६) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-अयगोलसमाणे, जाव सीसगगोलसमाणे ४, (२७) ।

चत्वारि गोला पणत्ता, तं जहा-हिरण्णगोले १, सुवण्णगोले २, स्यण्णगोले ३, वयरगोले ४ (२०) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-हिरण्णगोलसमाणे जाव वइरगोलसमाणे ४। (२९) ।

चत्वारि पत्ता पणत्ता, तं जहा-असिपत्तेय १, करपत्ते २, खुरपत्ते ३, कलंबचीरियापत्ते ४ (३०) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-असिपत्तसमाणे जाव कलंबचीरियापत्तसमाणे ४ (३१)

चत्वारि कडा पणत्ता, तं जहा-सुंबकडे १, विदलकडे २, चम्मकडे ३, कंबलकडे ४ (३२) । एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-सुंबकडसमाणे जाव कंबलकडसमाणे ४ । (३३) ॥ सू० १३ ॥

छाया—चत्वारो मत्स्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अनुस्रोतश्चारी १, प्रतीस्रोतश्चारी २, अन्तचारी ३, मध्यचारी ४। (२२) एवमेव चत्वारो भिक्षाकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अनुस्रोतश्चारी १, प्रतिस्रोतश्चारी २, अन्तचारी ३, मध्यचारी ४ (२३) ।

चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मधुसिक्थगोलः १, जतुगोलः २, दारुगोलः ३, मृत्तिकागोलः ४। (२४) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-मधुसिक्थगोलसमानः ४ (२५) ।

चत्वारो गोलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अयोगोलः १, त्रपुगोलः २, ताम्रगोलः ३, सीसकगोलः ४ (२६) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-अयोगोलसमानः यावत् सीसकगोलसमानः ४ (२७) ।

ચત્વારો ગોઝાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથથા-હિરણ્યગોલઃ ૧, સુવર્ણગોલઃ ૨, રત્નગોલઃ ૩, વજ્રગોલઃ ૪ (૨૮) । એવમેવ ચત્વારિ પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથથા-હિરણ્યગોલસમાનઃ યાવત્ વજ્રગોલસમાનઃ ૪ । (૨૯) ।

ચત્વારિ પત્રાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથથા-અમિપત્રં ૧, કરપત્રં ૨, ક્ષુરપત્રં ૩, કદમ્બચીરિકાપત્રમ્ ૪ । (૩૦) । એવમેવ ચત્વારિ પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથથા-અસિપત્રસમાનઃ યાવત્ કદમ્બચીરિકાપત્રસમાનઃ ૪ (૩૧) ।

ચત્વારઃ કટાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથથા-સુમ્વકટઃ ૧, ત્રિદલકટઃ ૨, ચર્મકટઃ ૩, કમ્બલકટઃ ૪ । (૩૨) । એવમેવ ચત્વારિ પુરુષજાતાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથથા-સુમ્વકટસમાનઃ યાવત્ કમ્બલકટસમાનઃ ૪ (૩૩) ॥ મૃ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—“ ચત્તારિ મચ્છા ” ઇત્યાદિ—ચત્વારો મત્સ્યાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથથા-અનુસ્રોતશ્ચારી-અનુસ્રોતસા ચરતીત્યેવંશીલમ્તથા-નદ્યાદિ પ્રવાહગામી ૧, તથા-પ્રતિસ્રોતશ્ચારી-નદ્યાદિપ્રવાહાભિમુલ્લગામી ૨, તથા-અન્તચારી-પાર્શ્વચારી ૩, તથા-મધ્યચારી-મધ્યે-અમ્યન્તરે ચરતીત્યેવંશીલસ્તથા ૪ (૨૨) ।

‘ એવામેવે ’ ત્યાદિ—એવમેવ-મત્સ્યવદેવ ભિક્ષાકાઃ-ભિક્ષાશીલાઃ સાધવઃ ચત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથથા-અનુસ્રોતશ્ચારી-યો ભિક્ષાકોઽભિગ્રહવિશેષાદુપાશ્રયસમી-

ચત્તારિ મચ્છા પળ્ણત્તા હસ્યાદિ સૂત્ર ૧૩ ॥

ટીકાર્થ-મત્સ્ય ચાર પ્રકારકે કહે ગયેહૈં જૈસે-અનુસ્રોતચારી ૧ પ્રતિસ્રોતચારી ૨ અન્તચારી ૩ ઓર મધ્યચારી ૪ હનમેં જો નદી આદિકે પ્રવાહકે સાથ ચલતા હૈ વહ અનુસ્રોતશ્ચારી મત્સ્ય હૈ, જો નદી આદિકે પ્રવાહકે સામને જાતાહૈ વહ પ્રતિસ્રોતચારી મત્સ્યહૈ નદીકે પાસમેં પાર્શ્વભાગમેં જો ચલતા હૈ વહ અન્તચારી મત્સ્યહૈ । ઓર જો નદીકે ખીતરમેં મધ્ય ભાગમેં નીચે ચલતા હૈ વહ મધ્યચારી મત્સ્ય હૈ હસી પ્રકારસે ભિક્ષાક-ભિક્ષાશીલ સાધુ ખી ચાર પ્રકારકે હોતે હૈં જૈસે-કોઈ એક ભિક્ષાક-એસા

“ ચત્તારિ મચ્છા પળ્ણત્તા ” ઇત્યાદિ—(સૂ. ૧૩)

મત્સ્યના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અનુસ્રોતચારી, (૨) પ્રતિસ્રોતચારી, (૩) અન્તચારી અને (૪) મધ્યચારી

જે મત્સ્ય નદી આદિના પ્રવાહની દિશામાં ચાલે છે તેને અનુસ્રોતચારી કહે છે. જે મત્સ્ય પ્રવાહની સામેની દિશામાં ચાલે છે તેને પ્રતિસ્રોતચારી કહે છે. જે મત્સ્ય નદીના કિનારા પાસે જ સંચરણ કરે છે તેને અન્તચારી કહે છે. અને જે મત્સ્ય નદીના મધ્ય ભાગમાં પાણીની નીચે સંચરણ કરનારું હોય છે તેને મધ્યચારી કહે છે.

प्रात् क्रमेण गृहेषु भिक्षते सोऽनुस्रोतश्चारीति प्रथमः १। तथा-प्रतिस्रोतश्चारी-
यस्तूत्क्रमेण-प्रथमं गृहेषु भिक्षते ततो निजस्थानसमीपस्थगृहमायाति भिक्षार्थं
स तथा=दूरादारभ्योपाश्रयसमीपचारीत्यर्थः२, तथा-अन्तचारी-यस्तु क्षेत्रस्यान्ते-
अवसाने भिक्षार्थं चरतीत्येवंशीलस्तथा ३, तथा-मध्यचारी-क्षेत्राभ्यन्तरे चरती-
त्येवंशीलस्तथा ४। (२३) ।

“ चत्वारि गोला ” इत्यादि—गोलाः—वृत्तपिण्डाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-
मधुसिक्थगोलः—मधुसिक्थं—मदनं ‘ मोम ’ इति भाषायां प्रसिद्धं द्रव्यं तस्य गोलः
होता है जो अनुस्रोतचारी होता है, ऐसा वह भिक्षाक अभिग्रह विशेष-
षके वश उपाश्रयके पाससे लगाकर क्रमशः गृहोंमें भिक्षा मांगता है ।
कोई एक भिक्षाक ऐसा होता है, जो प्रतिस्रोतचारी होता है—ऐसा वह साधु
उत्क्रमसे पहिले गृहोंमें भिक्षाकी याचना करता है बादमें उपाश्रय आदि
अपने स्थानके समीपस्थ गृह पर आकर भिक्षा याचना करता है । यह
भिक्षा याचना पहिले दूरसे प्रारम्भ करता है और बादमें उपाश्रयके पास
रहे हुए घरोंसे भिक्षा करता है, कोई एक भिक्षाक ऐसा होता है जो
अन्तचारी होता है ऐसा वह भिक्षाक क्षेत्रके अन्तमें भिक्षाके लिये
पर्यटन करता है कोई एक साधु ऐसा होता है जो मध्यचारी होता है—
ऐसा वह भिक्षाक क्षेत्रके भीतरही भिक्षाके लिये फिरता है ४ (२३)

“ चत्वारि गोला ” इत्यादि—गोला—वृत्तपिण्ड—चार प्रकारके कहे
गये हैं जैसे—मधुसिक्थ गोल १ जतुगोल २ दारुगोल ३ और मृत्तिका
गोल ४ मोमका-मेणका जो गोला होता है वह मधुसिक्थ गोल है, लाखका

अत्र प्रभाषे भिक्षाक (भिक्षाशील साधु) पण्य चार प्रकारने होय छे—
(१) अनुस्रोतचारी—कोई एक साधु अवे होय छे के ने अलिग्रहविशेषने
कारणे उपाश्रयनी समीपना घरथी शङ् करीने क्रमशः भिक्षा मागवा भाटे
गमन करे छे. (२) प्रतिस्रोतचारी भिक्षाक—कोई एक भिक्षाक (साधु) अवे
होय छे के ने उत्कमथी (उत्कटा क्रमथी) भिक्षा मागवी शङ् करे छे. अटवे के
उपाश्रयथी हर आवेला घरथी भिक्षा मागवानी शङ् करीने क्रमशः उपाश्रयनी
समीपना स्थान तरङ् भिक्षा प्राप्ति भाटे संचरण करनारी होय छे (३)
अन्तचारी भिक्षाक—ते क्षेत्रना अन्त लागमां भिक्षा मागवा भाटे गमन
करतो होय छे (४) मध्यचारी भिक्षाक—कोई साधु अवे होय छे के ने
क्षेत्रना मध्यभागना स्थणोमा भिक्षा मागवा भाटे करतो होय छे । २३।

‘ चत्वारि गोला ’ इत्यादि—गोणाना नीचे प्रभाषे चार प्रकार कइया
छे—(१) मधुसिक्थ गोणो—भीषुना गोणाने मधुसिक्थ गोणो कडे छे. (२)

१, तथा-जतुगोलः-जतु लाक्षा-'लाख' इति भाषायां प्रसिद्धं द्रव्यम्-तस्य गोलः २, दारुगोलः-काष्ठगोलः ३, मृत्तिकागोलः, एते क्रमेण मृदु-कठिनतर-कठिनतमा भवन्ति । (२४) ।

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव-उक्तगोलचतुष्टयवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्वथा-मधुसिक्थगोलसमानः-मदनगोलो यथा-ऽल्पतापेनापि द्रवितो भवति तथा-परीपहादिना यः पुरुषो मृदुमत्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः १, तथा-जतुगोलसमानः-जतुगोलो यथाऽल्पतापेनाद्रवन्मदनगोलापेक्षया कठिनो भवति तथा यः पुरुष परीपहादिषु दृढसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः २, तथा-दारुगोलसमानः-यथा-दारुगोलः-काष्ठगोलः, स

जो गोला होना है वह जतुगोल है २ काठका जो गोला होता है वह दारुगोल है ३ और मिट्टीका जो गोला होता है वह मृत्तिका गोल है ४ ये चारों गोले क्रमशः मृदु, कठिन, कठिनतर और कठिनतम होते हैं (२४) इसी तरहसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं इनमें मधुसिक्थ गोल समान वह पुरुष है जो परीपह आदिसे कमजोर बलवाला बन जाता है, जैसे मोमका गोला थोड़ेसे भी तापसे पिघल जाता है इसी-लिये ऐसे पुरुषको मधुसिक्थ गोला जैसा कहा गया है । जैसे जतु गोला अल्प तापसे नहीं पिघलता है, क्योंकि वह मोमके गोलाकी अपेक्षा कठिन होता है उसी प्रकार जो परीपह आदिके आने पर चला-यमान नहीं होता है, वह पुरुष जतुगोलाके समान कहा गया है २ जैसे-काष्ठका गोला तापसे पिघलता नहीं है, क्योंकि वह कठिनतर

जतुगोणे-दाभना गोणाने जतुगोणे कडे छे (३) दारुगोणे-दाकडाना गोणाने दारुगोणे कडे छे (४) मृत्तिकागोणे-माटीना गोणाने मृत्तिकागोणे कडे छे. ते आरे गोणा अनुक्रमे मृदु, कठिन, कठिनतर अने कठिनतम डोय छे । २४।
 अथ प्रमाणे पुरुषो पण्यु आर प्रकारना क्ख्या छे—(१) भीष्मना गोणा समान पुरुष-नेम भीष्मना गोणे थोडा तापथी पण्यु पीगणी नय छे तेम कोछ कोछ पुरुष अवा डोय छे के ने परीपह आदि वडे कमतेर अपनी नय छे अवा पुरुषाने भीष्मना गोणा समान क्ख्या छे. (२) दाभना गोणा समान पुरुष-दाभना गोणे कठण्यु डोय छे तेथी थोडा तापथी पीगणी नतो नथी अथ प्रमाणे ने पुरुष परीपहो आवी पडतां अउग रडे छे-मिलकुत्र अलायमान थतो नथी, अवा पुरुषने दाभना गोणा समान क्ख्या छे (३) दाकडाना गोणा समान पुरुष-नेम दाकडाना गोणे अधिकमां अधिक तापथी पण्यु

तापेनाद्रवणात्कठिनतरो भवति. तथा—यः पुरुषः परीषहादिषु दृढतरसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेश्यः ३, तथा—मृत्तिकागोलकसमानः—यथा मृत्तिकागोलः प्रचुरतापेनाप्यद्रवणात्कठिनतमो भवति—तथा—यः पुरुषः परीषहादिषु दृढतमसत्त्वो भवति स तत्पदव्यपदेशभाक् ४। (२५)।

‘ चत्वारि गोला ’ इत्यादि—पुनर्गोलाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अयोगोलः १, त्रपुगोलः २, ताम्रगोलः ३, सीसकगोलः ४। एते गुरु-गुरुतर-गुरुतमा-ऽत्यन्तगुरुवो भवन्ति (२६)।

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव-उक्तगोलवदेव-पुरुष-जातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—अयोगोलसमानः—अयोगोलो यथा गुरुर्भवति तथा यः पुरुषो गुरुभूतारम्भादिविचित्रप्रवृत्त्युपार्जितकर्मभारः, यद्वा—पितृमातृ-होता है उसी प्रकारसे जो पुरुष परीषह आदिकोंके आने पर दृढतर सत्त्ववाला होता है वह पुरुष दारुगोलके जैसा कहा गया है ३ और मृत्तिकाके गोलाके समान वह पुरुष कहा गया है जो पुरुष परीषह आदिकोंके आने पर दृढतम बलवाला बना रहता है, जैसे मिट्टीका गोला प्रचुर तापसे भी नहीं पिघलना है क्योंकि वह दृढतम होता है ४ (२५)

पुनश्च—“ चत्वारि गोला ” इत्यादि—गोला चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—अयोगोल १ त्रपुगोल २ ताम्रगोल ३ और सीसकगोल ४ ये क्रमशः गुरु, गुरुतर, गुरुतम और अत्यन्त गुरु होते हैं (२६) इसी तरहसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं—इनमें अयोगोलके समान वह पुरुष है जिसने गुरुभूत आरम्भ आदिमें अपनी विचित्र प्रवृत्तिसे

पीगणतो नथी—पाने अणी नय छे पणु पीगणतो नथी, अण प्रभाणु आक-राभां आकरां परीषडो सामे पणु ने भाणुस अति दृढताथी टकी रडे छे—प्राणु नय तो पणु अदायमान थतो नथी अवा दृढतर सत्त्ववाणा पुरुषने लाकडाना गोणा समान कछो छे (४) भाटीना गोणा समान पुरुष-नेम भाटीने गोणे प्रयंडमां प्रयंड तापथी पणु पीगणतो नथी अेम दृढतम सत्त्ववाणे पुरुष उअमां उअ परीषडो सामे पणु अडगताथी टकी रडे छे. ।२५।

“ चत्वारि गोला ” इत्यादि—गोणाना नीचे प्रभाणु चार प्रकार पणु कछा छे—(१) अयोगोल (दोढाने गोणे), (२) त्रपुगोल (कथीरने गोणो) (३) ताम्रगोल (तांजाने गोणे), अने (४) सीसकगोल (सीसाने गोणे) आ गोणाअे वज्जनी अपेक्षाअे अनुकमे गुरु, गुरुतर, गुरुतम अने अत्यन्त गुरु छे। ।२६।

अण प्रभाणु पुरुषेना पणु चार प्रकार कछा छे—(१) दोढाना गोणा समान पुरुष-नेणु लारे लारे आरंल आदिमां प्रवृत्त थअने कर्मलारिने

पुत्रकलत्रादिषु गुरुस्नेहभाराक्रान्तो भवति स तथा १, तथा-त्रपुगोलसमानः-
ताम्रगोलसमानः सीसगोलसमानः, एते त्रयः क्रमेण गुरुतर-गुरुतमा-अत्यन्तगु-
रुभूतारम्भादिविचित्रप्रवृत्त्युपार्जितकर्मभाराः, यद्वा-पित्रादिषु गुरुतरादिस्नेह-
भाराऽऽक्रान्ताः पुरुषा बोध्याः ४ (२७) ।

‘ चत्वारि गोला ’ इत्यादि—पुनश्चत्वारो गोलाः प्रवृत्ताः, तद्यथा-हिरण्य-
गोलः १, सुवर्णगोलः २ रत्नगोलः ३, वज्रगोलः ४। एते चाऽल्पगुणाऽधि-
गुणा-ऽधिकतरगुणा-ऽधिकतमगुणा भवन्ति, (२८) ।

कर्मभारको उपार्जित क्रिया है अर्थात् जिस प्रकार लोहेका गोला भार-
वाला वजनवाला होता है उसी प्रकारसे जो प्राणी आरम्भ आदि
कार्योंमें प्रवृत्ति करनेसे उपार्जित कर्मभारसे भारी घन जाता है ऐसा
वह पुरुष अयोगोलके समान कहा गया है अथवा-पिता, माता, पुत्र,
कलत्र आदिकोंमें बहुत अधिक ममता रूप स्नेहके भारसे जो आक्रान्त
होता है, वह अयोगोलके समान पुरुष है त्रपुगोल समान, ताम्रगोल
समान और सीसगोल समान पुरुषमें गुरुतर, गुरुतम और अत्यन्त
गुरुभूत आरम्भादि कार्योंमें अपनी विचित्र प्रवृत्तिसे उपार्जित कर्म-
भारसे आक्रान्त होते हैं अथवा-माता पिता आदिकोंमें गुरुतर आदि
भेदवाले स्नेहके भारसे दबे रहते हैं-इसलिये वे क्रमशः त्रपुगोलाके
जैसे कहे गये हैं (२७) “ चत्वारि गोला ” पुनश्च--गोला चार प्रकारके
कहे गये हैं जैसे-हिरण्य गोला १ सुवर्णगोला २ रत्नगोला ३ और

उपार्जित कर्षो डोय छे-अष्टके के जेभ दोढाने गोणे। वज्रनदर डोय छे
तेभ जे शुभ आरंभ आदिमां प्रवृत्त थवाने कारणे उपार्जित करेला कर्म-
भारथी लारे भनेदो छे अथवा पुरुषने दोढाना गोणा समान कहे छे-अथवा
माता, पिता, पुत्र, पुत्री, पत्नी आदि प्रत्ये अधिक ममता रूप स्नेहता
भारथी जे माथुस जकडायेदो डोय छे तेने दोढाना गोणा समान कहे छे।
अथ प्रमाणे गुरुतर, गुरुतम अने अत्यन्त गुरुभूत आरंभादि कार्योंमां
प्रवृत्त थवने कर्मभारने उपार्जित करनारा पुरुषने अथवा माता, पिता
आदि प्रत्येना गुरुतर, गुरुतम अने अत्यन्त गुरुभूत स्नेह लावथी जकडायेदा
पुरुषने अनुक्रमे त्रपुगोणा समान, ताम्राना गोणा समान अने सीसाना
गोणा समान कहे छे। २७।

“ चत्वारि गोला ” गोणाना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पक्ष कहे छे-
(१) आंहीने गोणे, (२) सोनाने गोणे, (३) रत्नने गोणे अने (४)

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—एवमेव—उक्तगोलवदेव पुरुष-
जातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—हिरण्यगोलसमानः—रजतगोलतुल्यः—यावत्प-
देन—‘ सुवर्णगोलकसमानः रत्नगोलकसमानः ’ इति पदद्वयं ग्राह्यम्, तथा—वज्र-
गोलसमानः । एतच्चतुष्टयसमानाः पुरुषाः क्रमेणाल्पादिसमृद्धिसम्पन्नत्वेन, यद्वा-
—ऽल्पादिज्ञानादिगुणसम्पन्नत्वेन बोध्याः । २९।

“ चत्वारि पत्ता ” इत्यादि—पत्राणि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—असिप-
त्रम्—खड्गरूपपत्रम् १; तथा—करपत्रं—दारुच्छेदनं क्रकचम् ‘ आरा ’—‘ करवत ’
इति भाषाप्रसिद्धम् २, तथा—क्षुरपत्रं—क्षुररूपपत्रम् ३, तथा—कदम्बचीरिकाप-
त्रम्—कदम्बचीरिकेति तन्नामकः शस्त्रविशेषः तद्रूपपत्रम् । ४ । (३०) ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव—पत्रवदेव पुरुषजा-
वज्रगोला ४ ये चारोंही गोले क्रमशः अल्प गुणवाले अधिक गुणवाले,
अधिकतर गुणवाले और अधिकतम गुणवाले होते हैं (२८) इसी
तरहसे इनके समान जो पुरुष होते हैं, वे भी क्रमशः अल्प समृद्धिवाले,
अधिक समृद्धिवाले, अधिकतर समृद्धिवाले और अधिकतम समृद्धि-
वाले होते हैं । अथवा अल्प ज्ञान गुणवाले, अधिक ज्ञान गुणवाले, अधि-
कतर ज्ञान गुणवाले और अधिकतम ज्ञान गुणवाले होते हैं (२९) “चत्वारि
पत्ता” पत्र चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—असिपत्र १ खड्गरूप पत्र—कर-
पत्र—करौंतरूप पत्र २ क्षुरपत्र—क्षुररूपपत्र ३ और कदम्बचीरिका रूपपत्र ४।
कदम्बचीरिका इस नामका एक विशेष शस्त्र होता है “एवामेव” इत्यादि-
इसी प्रकारसे पुरुष भी चार प्रकारके होते हैं, असिपत्रसमान १. करपत्रस-

वन्नो गोणो. आ आरे गोणा अनुकमे अल्प गुणवाणा अधिक गुणवाणा,
अधिकतर गुणवाणा अने अधिकतम गुणवाणा होय छे. १२८ अेण प्रमाणे
पुरुषेणामा पणु आदीणु गोणा समान आदि आर प्रकार पडे छे. तेणो अनु-
कमे अल्प समृद्धिवाणा, अधिक समृद्धिवाणा, अधिकतर समृद्धिवाणा अने अधि-
कतम समृद्धिवाणा होयछे, अथवा तेणो अनुकमे अल्प ज्ञान गुणवाणा, अधिक
ज्ञानगुणवाणा, अधिकतर ज्ञानगुणवाणा अने अधिकतम ज्ञानगुणवाणा होयछे. २९

“ चत्वारि पत्ता ” इत्यादि पत्र (पान) चार प्रकारना कहां छे—(१) असिपत्र
(तलवारना जेवी धारवाणुं पान), (२) करौतइय पत्र—करपत्र (करवत जेवुं
पान) (३) क्षुरपत्र (अस्त्रा जेवुं पान) (४) कदम्बचीरिकाइय पत्र (कदम्ब
चीरिका नामना शस्त्र जेवुं पान).

તાનિ ચત્વારિ પ્રજ્ઞતાનિ, તદ્વથા-અસિપત્રસમાનઃ-સ્વરૂપપત્રં યથા રજ્જ્વાદિ શીઘ્રં છિનત્તિ તથા-યઃ પુરુષઃ સ્નેહપાશં શીઘ્રં છિનત્તિ સ શીઘ્રચ્છેદકત્વધર્મણાઃ-સિપત્રસમાનો વ્યવહ્રિયતે, અવધારિતદેવવચનમનત્કુમારચક્રવર્તિવત્ । ઇતિ પ્રથમઃ ૧। તથા-કરપત્રસમાનઃ-કરપત્રં-ક્રકચં તદ્ યથા દારુ શનૈઃ શનૈચ્છિનત્તિ, તથા યઃ પુરુષઃ પ્રતિવોધકેન વારંવારમુપદિશ્યમાનસ્તદુપદિષ્ટભાવનામભ્યસન્ પુત્ર-કલત્રાદિસ્નેહં વિલમ્બેન છિનત્તિ સ વિલમ્બચ્છેદકત્વેન તત્પદવ્યપદેશ્યઃ, તથોવિધ-શ્રાવકવત્ । ઇતિ દ્વિતીયઃ ૨। તથા-ધુરપત્રસમાનઃ-યથા-ધુરરૂપપત્રં કેશમાત્રં

માન૨ ધુરપત્રસમાન૩ ઓર ચીરિકાપત્રસમાન૪ જિસ તરહ અસિપત્ર, રજ્જુ આદિકો શીઘ્ર કાટ દેતા હૈ, ડસી પ્રકારસે જો મનુષ્ય સ્નેહપાશકો શીઘ્રતાસે કાટ દેતા હૈ, વહ મનુષ્ય અસિપત્ર સમાન કહા ગયાહૈ । જિસ પ્રકાર સનત્કુમાર ચક્રવર્તીને દેવકે વચન સુનકર જલ્દીસે જલ્દી સ્નેહ-પાશ કાટ ડાલા । ડસી પ્રકાર ંસા મનુષ્ય ંી શાસ્ત્રગુરુ આદિકી વાળી સુનનેસે સ્નેહપાશ શીઘ્ર નષ્ટ કર આત્મકલ્યાણકે માર્ગકા પથિક બન જાતાહૈ । કરોંત જૈસે લકડીકો ધીરે ૨ ચીરતાહૈ, વૈસેહી જો પુરુષ પ્રતિ-વોધકકે વચનસે વાર ૨ સમજાયા જાનેસે ડસકે ડપદેશપૂર્ણ વચનોંકા વિચાર કરતે ૨ પુત્ર કલત્ર આદિકોંકે સ્નેહપાશકો ધીરે ૨ છેદતા હૈ, ઓર આત્માકે હિતકે માર્ગમેં લગતા હૈ, ંસા વહ પુરુષ વિલમ્બસે છેદ-કતાકે સાધર્મ્યકો લેકર કરપત્રકે જૈસા કહા ગયા હૈ । ધુરપત્રસમાન,

“ ંવામેત્ર ” ંત્યાદિ—એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણુ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) અસિપત્ર સમાન, (૨) કરપત્ર સમાન, (૩) ધુરપત્ર સમાન અને (૪) કદમ્બ ચીરિકા પત્ર સમાન. હવે, આ ચારે પ્રકારની સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે—જેમ અસિપત્ર ડોરડા આદિને તુરત કાપી નાખે છે, એજ પ્રમાણે જે માણસ સ્નેહપાશને તુરતજ કાપી નાખે છે એવા માણસને અસિપત્ર સમાન કહ્યો છે. જેમ સનત્કુમાર ચક્રવર્તીએ દેવનાં વચન શ્રવણુ કરીને સ્નેહપાશને જલ્દીમાં જલ્દી કાપી નાખ્યો હતો, એજ પ્રમાણે અસિપત્ર સમાન મનુષ્ય પણુ શાસ્ત્ર, ગુરુ આદિની વાણી સાંભળતાની સાથે જ સ્નેહપાશને તોડી નાખીને આત્મકલ્યાણને માર્ગે આગળ વધવા માંડે છે, જેમ કરવત લાકડાને ધીરે ધીરે ચીરે છે, તેમ ગુરુ આદિના ંપદેશને વારંવાર સાંભળીને અને તેના પર વિચાર કરીને ધીરે ધીરે પુત્ર, પુત્રી આદિના સ્નેહપાશને તોડતો તોડતો જે માણસ આત્મકલ્યાણને માર્ગે સંચરે છે તેને કરપત્ર સમાન કહ્યો છે. કરપત્ર અને કરપત્ર સમાન મનુષ્યમાં વિલમ્બથી છેલ્લાનું સાધર્મ્ય હોવાથી વિલમ્બપૂર્વક સ્નેહપાશ તોડનાર પુરુષને કરપત્ર સમાન કહ્યો છે, ધુરપત્ર સમાન

छिनत्ति न तु काष्ठादि तथा यः पुरुषो धर्ममार्गं श्रुत्वाऽपि सर्वथा स्नेहपाशच्छेद-
नेऽसमर्थो देशस्नेहमात्रं छिनत्ति देशविरतिमेवाङ्गीकरोति न तु सर्वविरतिं सोऽ-
ल्पच्छेदकत्वधर्मेण क्षुरपत्रतुल्य उच्यते ३। तथा- कदम्बचीरिकापत्रसमानः--यथा--
कदम्बचीरिकाख्योऽस्त्रविशेषो नामगोत्रेणास्त्रं न तु छेदनकार्येण तथा यः पुरुषः
संकल्पमात्रेण स्नेहं छिनत्ति न तु क्रियया स छेदकत्वेन स्वरूपसङ्घर्मेण तत्स-
मान उच्यते स चाविरतसम्यग्दृष्टिः ४, यद्वा-एते चत्वारः पुरुषा एवम्-ये गुर्वादिपु
क्रमेण शीघ्र-मन्द-मन्दतरमन्दतप्ततया स्नेहं छिन्दन्ति तेऽसिपत्रादिसमानाः४।(३१)

जैसे क्षुरा केशमात्रको काटता है काष्ठादिकोंको नहीं काटता है, उसी
प्रकार जो पुरुष धर्ममार्गको सुनकर भी सर्वथा स्नेहपाशको नष्ट कर-
नेमें असमर्थ होकर केवल देश स्नेहकोही नष्ट करता है-देशविरतिकोही
धारण करता है सर्वविरतिको धारण नहीं करता है, ऐसा वह पुरुष
स्नेहको अल्प मात्रामें छेदनेवाला होनेसे क्षुरपत्रके जैसा कहा गया है।
अल्प रूपसे छेदक धर्मको समानता लेकरही उसे क्षुरपत्र तुल्य कहा
गया है। कदम्बचीरिकापत्र समान जैसे-कदम्बचीरिका नामक शस्त्र,
नाम मात्रसेही शस्त्र कहलाता है, वह किसीका छेदन नहीं कर सकता
है उसी प्रकार जो पुरुष संकल्प मात्रसे स्नेहको छेदन किया करता है
क्रियासे नहीं अर्थात् स्नेहको छेदनेके मनोरथही बनाया करता है उसे
क्रियारूपमें परिणत नहीं करता है ऐसा वह अविरत सम्यग्दृष्टि जीव
कदम्बचीरिकापत्र समान कहा गया है अथवा-जो पुरुष गुरु आदि-

पुरुष-जैम क्षुरा (अस्त्रो) मात्र केशाने न कापवाने समर्थो होय छे-काष्ठा-
दिक्षेपाने कापवाने समर्थो होतो नथी, जेव प्रमाणे धर्ममार्गानुं श्रवणु करवा
छतां पणु जे पुरुष स्नेहपाशने पूरेपूरे तोडी शकतो नथी, अंशतः न तोडी
शके छे, अथवा सर्वविरतिने धारणु करवाने गदले देशविरति न धारणु करी
शके छे, जेवा पुरुषने क्षुरपत्र समान कडे छे.

जेवा पुरुष स्नेहनुं अल्प मात्रमां न छेदन करनारे होय छे. ते
भन्नेमां अल्प रूपे छेदक धर्मनी समानता होवाथी आ प्रकारना पुरुषने
क्षुरपत्र समान कह्यो छे.

कदम्बचीरिका पत्र समान पुरुष-कदम्बचीरिका नामनुं शस्त्र केअपिणु
वस्तुनुं छेदन करवाने समर्थो होतुं नथी. तेथी तेने नामनुं न शस्त्र कडेवाय
छे. जेव प्रमाणे जे माणुस स्नेहपाश तोडवानो संकल्प न करी छे
पणु तेने तोडवाने समर्थो होतो नथी-तेना विचारने क्रियारूपे परिणत करी
शकतो नथी, जेवा अविरत सम्यग्दृष्टि जेवने कदम्ब चीरिका पत्र समान कह्यो छे.

‘ चत्वारि कडा ’ इत्यादि—कटाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा - शुम्बकटः—शुम्बः—तृणविशेषः, तन्निर्मितः कटस्तथा १, विदलकटः—वंशखण्डनिर्मितकटः २, चर्मकटः—चर्मकृतकटः—चर्ममपरज्जुव्यूतमश्वकादिः ३, कम्बलकटः—कम्बल एवकटः ४ (३२) ।

“ एवमेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव—कटवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—शुम्बकटसमानः—शुम्बकटो यथा—ऽल्पवन्धो भवति तथा यः पुरुषो गुर्वादिष्वल्पप्रतिबन्धः स्वल्पप्रतिकूलव्यापारेणाविगमात् स शुम्बकट-

कोंके विषयमें क्रमशः शीघ्ररूपसे मन्द रूपसे मन्दतररूपसे और मन्दतम रूपसे स्नेहका छेदन करनेवाले होतेहैं वे असिपत्रादिके समान होतेहैं ४।३१।

“ चत्वारि कडा ” इत्यादि—कट चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—शुम्बकट १ विदलकट २ चर्मकट ३ और कम्बलकट ४ तृण विशेषोंसे जो कट चटाई बनाया जाता है वह शुम्बकट है, वंशकी पंचोंसे जो कट बनाया जाता है वह विदलकट है, चमड़ेकी रज्जुसे या तांतोसे बुना गया जो मंचक आदि होता है वह चर्मकट है और जो कम्बल है वह कम्बलकट है। इसी प्रकारसे पुरुष चार होतेहैं, जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अल्प होता है, जैसा कि तृणविशेषोंसे बनी हुई चटाईका होता है, वह थोड़ीसी भी प्रतिकूलतामें शिथिल हो जाता है खुल जाता है ऐसा वह पुरुष शुम्बकट समान होता है शुम्बकटकी अपेक्षा विदलकटका बन्ध दृढ होता है यह थोड़ीसी प्रतिकूलतामें शिथिल ढीला नहीं

अथवा जे माणुस गुरु आदिना उपदेशथी कभशः शीघ्र इपे, मन्द इपे, मन्दतर इपे अने मन्दतम इपे स्नेहपाशनुं छेदन करनारो डोय' छे तेने अनुकभे असिपत्र, करपत्र, क्षुरपत्र अने कटम्बअचिरिका पत्र समान कडे छे. ३१

“ चत्वारि कडा ” अट्टार्ध चार प्रकारनी कडी छे—(अट्टार्धने माटे अडी' 'कट' शण्ड वापर्यो छे) (१) शुम्बकट—तृणविशेषोनी महदधी जे अट्टार्ध भनाववामां आवे छे तेने 'शुम्बकट' कडे छे (२) विदलकट—वांसनी अचोमांथी भनावेली अट्टार्धने 'विदलकट' कडे छे. (३) चर्मकट—चामडानी दोरीने गूथीने भनावेली अट्टार्धने 'चर्मकट' कडे छे (४) अने 'कम्बलकट'—जिन आदिनी कामणने 'कम्बल कट' कडे छे

अेव प्रमाणे पुरुषोना पणु चार प्रकार कह्य छे—(१) शुम्बकट समान पुरुष—जेम तृणविशेषोमांथी भनावेली अट्टार्ध थोडी प्रतिकूलतामां पणु शिथिल थर्ध नय छे—तेना तांतुओ छूटा पडी नय छे अेव प्रमाणे गुरु आदि प्रथेना

તુલ્ય ઉચ્ચતે ૧, एवं क्रमेण बहु-बहुतर-बहुतमप्रतिबन्धवन्तो गुर्वादिषु त्रयः पुरुषा विभावनीयाः ४। (३३) ॥ सू० १३ ॥

મૂલમ્—ચડવિહા ચડપ્પયા પળણત્તા, તં જહા-પગ્ગુરા ૧, દુઘુરા ૨, ગંડીપયા ૩, સળપ્પયા ૪, (૩૪) ।

ચડવિહા પવ્વલી પળણત્તા, તં જહા-ચમ્મપવ્વલી ૧, લોમ-પવ્વલી ૨, સમુગ્ગપવ્વલી ૩, વિતતપવ્વલી ૪, । ૩૫ ।

હોતાહૈ । इसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें थोड़ीसी प्रतिकूलतामें शिथिल नहीं होताहै, वह विदल-सम्बन्ध कटके जैसा पुरुषहै चर्मकटका बन्ध शुम्बकटकी अपेक्षा भी दृढ होताहै वह मुश्किलसे ढीला होता है इसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अधिक प्रतिकूलतामें भी शिथिल नहीं होता है वह चर्मकटके जैसा पुरुष है, कम्बलकटका बन्ध बहुत अधिक दृढ होताहै । उसी प्रकारसे जिसका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें बहुत अधिक होता है ऐसा वह पुरुष कम्बलकटके जैसा कहा गयाहै । तात्पर्य इसका ऐसाहै कि जिस पुरुषोंका प्रतिबन्ध गुर्वादिकोंमें अल्प, बहु, बहुतर और बहुतम होता है वे पूर्वोक्त प्रकारसे चार प्रकारके कहे गये हैं (३३) ॥ सूत्र १३ ॥

જેમનો પ્રતિબંધ (અનુરાગ) અદ્ય કાળમાં જ તૂટી જાય છે એવા પુરુષને શુમ્બકટ સમાન કહે છે

શુમ્બકટ કરતાં વિદલકટનો બંધ વધારે દૃઢ હોય છે, તેથી તે થોડી પ્રતિકૂળતામાં શિથિલ થઈ જતો નથી. એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિ પ્રત્યેના જેનો પ્રતિબંધ થોડી પ્રતિકૂળતામાં શિથિલ થતો નથી એવા પુરુષને વિદલકટ સમાન કહે છે. ચર્મકટનો બંધ વિદલકટના બંધ કરતાં પણ દૃઢતર હોય છે તેથી તે જઘ્ઘીથી શિથિલ થતો નથી. ।

એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિ પ્રત્યેના જેનો પ્રતિબંધ અધિક પ્રતિકૂળતામાં પણ શિથિલ થતો નથી એવા પુરુષને ચર્મકટ સમાન કહે છે.

કમ્બલકટ (ભિન્ન આદિની કામળ)નો બંધ ઘણો જ વધારે હોય છે એજ પ્રમાણે ગુરુ આદિકોમાં જેનો પ્રતિબંધ ઘણો જ અધિક હોય છે એવા પુરુષને કમ્બલકટ સમાન કહેવામાં આવ્યો છે. આ સૂત્રમાં ગુર્વાદિક પ્રત્યેના અદ્ય, બહુ, બહુતર અને બહુતમ પ્રતિબંધની અપેક્ષાએ ચાર પુરુષપ્રકાર બતાવવામાં આવ્યા છે, એમ સમજવું ।૩૨। ॥ સૂ. ૧૩ ॥

चउव्विहा खुडुपाणा पणत्ता, तं जहा--वेइंदिया १, तेइं-
दिया २, चउरिंदिया ३, संमुच्छिमपंचिदियतिरिक्खजोणिया ४
। ३६ । सू० १४ ॥

छाया—चतुर्विधाश्चतुष्पदाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकखुराः १, द्विखुराः २,
गण्डीपदाः ३, सनखपदाः ४ (३४) ।

चतुर्विधा पक्षिणः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—चर्मपक्षिणः १, लोमपक्षिणः २, समुद्ररू-
पक्षिणः ३, त्रिततपक्षिणः ४ (३५) ।

चतुर्विधाः क्षुद्रमाणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—द्वीन्द्रियाः १, त्रीन्द्रियाः २, चतुरि-
न्द्रियाः ३, संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः ४ (३६) ॥ सू० १४ ॥

टीका—“ चउव्विहा चउप्पया ” इत्यादि — चतुष्पदाः—चतुश्चरणाः—चतु-
र्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकखुराः—प्रत्येकपदे एक खुरो येषां ते तथा—अश्वदयः
१, तथा—द्विखुराः—खुरद्वयवन्तो गवादयः २, गण्डीपदाः—गण्डीस्वर्णकारादीनाम-
धिकरणी ' घन ' इति भाषा प्रसिद्धा गण्डिका, तद्वत् पदानि येषां ते तथा—
हस्त्यादयः ३, सनखपदाः—नखयुक्तपादवन्तः सिंहादयः ४। इति (३४) ।

‘चउव्विहा चउप्पया पणत्ता’ इत्यादि १४ ॥

टीकार्थ—चौपाये चार-प्रकारके कहे गयेहैं जैसे—एक खुरवाले १ दो खुर-
वाले २ गंडी पदवाले ३ और नखयुक्त पदवाले ४ चार चरण जिनके
होते हैं वे चतुष्पद कहे जाते हैं । प्रत्येक पदमें जिनके एक खुर होता
है, ऐसे घोड़े आदि जानवर एक खुरवाले जानवर हैं । प्रत्येक पदमें
जिनके दो खुर होते हैं ऐसे वे गाय आदि जानवर दो खुरवाले जानवर
हैं । घनका नाम गण्डी है घनके समान जिनका चरण होता है वे गण्डी
पदवाले जानवर हैं, जैसे हाथी आदि, नखोंसे युक्त जिनके पैर होते हैं
वे सनखपदवाले जानवर हैं जैसे—सिंह आदि (३४)

“ चउव्विहा चउप्पया पणत्ता ” इत्यादि—(सू १४)

चौपाया जलनवरोना चार प्रकार कक्षा छे—(१) एक भरीवाणां (२)
दो भरीवाणां, (३) गंडीपदवाणा (४) नभयुक्त पगवाणां, चार पगवाणां
जलनवरोने चतुष्पद कहे छे, जेना पगनी भरीमां झट छोटी नथी जेवा
प्राणीज्जेने एक भरीवाणां कहे छे जेभके घोडा, जे प्राणीना प्रत्येक पगनी
भरीमां झट छोय छे जेवां प्राणीज्जेने दो भरीवाणां कहे छे, जेभके गाय
आदि प्राणीज्जे (३) हाथीना जेवी गोणाकारनी भरीवाणां प्राणीज्जेने गंडी-
पगवाणां कहे छे, (४) जे प्राणीज्जेना पग नडोर (नभ)थी युक्त छोय छे
ते प्राणीज्जेने नभयुक्त पगवाणां कहे छे, जेभके बाघ, सिंह वगैरे । ३४।

“ चउन्विहा पक्षी ” इत्यादि—पक्षिणश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-चर्म पक्षिणः-चर्ममयपक्षसहिताः-बल्गुलीप्रभृतयः १, तथा-लोमपक्षिणः-लोमयुक्तपक्षवन्तः-हंसादयः २, समुद्रकपक्षिणः-समुद्रकौ-सम्पुटकौ ताविव पक्षौ येषां ते तथा=सम्पुटकयुक्तपक्षसहिताः, तथा-विततपक्षिणः-विस्तृतपक्षयुक्ताः, अन्तिमा उभयेऽपि समयक्षेत्रतो बहिरैव भवन्ति । (३५) ।

“ चउन्विहा खुड्डपाणा ” इत्यादि—क्षुद्रप्राणाः-प्राणन्तीति प्राणाः क्षुद्राश्च ते प्राणाः क्षुद्रप्राणाः=अधमप्राणिनः, अनन्तरभवे सिद्धिर्गमनाभावात्, चतुर्विधा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-द्वीन्द्रियाः-इन्द्रियद्वयवन्तः कृम्यादयः १, तथा-त्रीन्द्रियाः-इन्द्रियत्रयवन्तः-पिपीलिकादयः २, चतुरिन्द्रियाः-इन्द्रियचतुष्टयवन्तो भ्रमरादयः ३, सम्मूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः-सम्मूर्च्छनं सम्मूर्च्छः, तेन निवृत्ताः

पक्षी चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-चर्मपक्षी १ लोमपक्षी २ समुद्रकपक्षी ३ और विततपक्षी ४ (३५) चर्ममय पक्ष (पंख) सहित जो पक्षी होते हैं, वे चर्मपक्षी हैं जैसे-चमगादड़ वगैरह । लोमयुक्त पांखोंवाले जो पक्षी होते हैं वे लोमपक्षी हैं जैसे-हंस आदि । सम्पुटक जैसे पंख जिनके होते हैं, वे समुद्रक पक्षी हैं और जो विस्तृत (फैले हुए) पांखोंवाले पक्षी होते हैं, वे विततपक्षी हैं । ये समुद्रकपक्षी और विततपक्षी ये दोनों अढाई द्वीपके बाहरही होते हैं (३५)

“ चउन्विहा खुड्डपाणा ” इत्यादि-अधम प्राणी जो चार प्रकारके कहे गये हैं अनन्तर भवमें इन्हे सिद्धि प्राप्त नहीं होती है इसलिये इन्हे क्षुद्रप्राणी कहा गया है, इनके चार प्रकार ये हैं द्वीन्द्रिय जीव जैसे-कृमी आदि जीव १ ते इन्द्रिय जीव जैसे-पिपीलिका (कीड़ी) आदि जीव २ चौइन्द्रिय जीव जैसे भ्रमर आदि जीव ३ और सम्मूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च ४

पक्षीना चार प्रकार कहे छे—(१) चर्मपक्षी, (२) लोमपक्षी, (३) समुद्रक पक्षी अने (४) विततपक्षी. चर्ममय पांखवाणा पक्षीने चर्मपक्षी कहे छे, लोमके चामउच्चिडियुं, लोमथी युक्त पांखवाणा पक्षीने लोमपक्षी कहे छे, लोमके हंस आदि पक्षी. सम्पुटनाञ्चैवी पांखवाणा पक्षीने विततपक्षी कहे छे ते समुद्रकपक्षी अने विततपक्षी अढी द्वीपनी ँडारना प्रदेशोभां न डोय छे । उपा

“ चउन्विहा खुड्डपाणा ” इत्यादि—क्षुद्र जिवे चार प्रकारना कहे छे. अनन्तर लवमां तेमने सिद्धि गतिनी प्राप्ति थती नथी. ते कारणे तेमने क्षुद्र कहे छे. तेमना चार प्रकार तीचे प्रमाणे छे—(१) द्वीन्द्रिय जिवे-कृमी आदि जिवे, (२) त्रीन्द्रिय जिवे-लोमके कीडी वगैरे जिवे, (३) चतुरिन्द्रिय जिवे-लोमके लमरे (४) सम्मूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च. सम्मूर्च्छन नन्मथी

સંમૂર્ચ્છિમાઃ—સંમૂર્ચ્છનજાઃ તે ચં તે પञ્ચેન્દ્રિયાઃ इन्द्रियपञ्चकवन्तश्चते तिर्यग्यो-
નિકાઃ—તિરશ્ચાં યોનિર્યેપાં તે તથા—ભૂતાશ્ચ તે इति सम्मूर्च्छिमपञ्चैन्द्रियतिर्यग्यो-
નિકાઃ, અત્ર—પદત્રયકર્મધારયસમાસો વોધ્યઃ ૪ (૩૬) ॥ સૂ. ૧૪ ॥

અથ પુરુષવિશેષાભિરૂપયિતું દૃષ્ટાન્તભૂતાન્ પક્ષિણો નિરૂપયતિ—

મૂલમ્—ચત્તારિ પક્ષી પળ્લન્તા, તં જહા-ણિવઙ્ગત્તા ણામ-
મેગે ણો પરિવઙ્ગત્તા ૧ પરિવઙ્ગત્તા ણામમેગે ણો નિવઙ્ગત્તા ૨, એગે
નિવઙ્ગત્તાઽવિ વરિવઙ્ગ- ઽવિ ૩, એગે ણો નિવઙ્ગત્તા ણો પરિવઙ્ગત્તા
૪ । ૩૭ । એવાંમેવ ચત્તારિ ભિક્ષ્વાગા પળ્લન્તા, તં જહા-ણિવઙ્ગત્તા
ણામમેગે ણો પરિવઙ્ગત્તા ૪ । ૩૮ । ॥ સૂ. ૧૫ ॥

છાયા—ચત્વારઃ પક્ષિણઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા—નિપત્તિતા નામૈકો નો પરિવ્ર-
જિતો ૧, પરિવ્રજિતા નામૈકો નો નિપત્તિતા ૨, એકો નિપત્તિતાઽપિ પરિવ્રજિતા-
ઽપિ ૩, એકો નો નિપત્તિતા નો પરિવ્રજિતા ૪, (૩૭) । એવમેવ ચત્વારો ભિક્ષાકાઃ
પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા—નિપત્તિતા નામૈકો નો પરિવ્રજિતા ૪ (૩૮) ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ટીકા—‘ચત્તારિ પક્ષી’ इत्यादि—પક્ષિણશ્ચત્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા—
એકઃ પક્ષી નિપત્તિતા—નીડાદવતરીતા—અથઃ પતનશીલો ભવતિ ધૃષ્ટત્વાત્ અજ્ઞત્વાદ્વા,

સંમૂર્ચ્છન જન્મસે જોઉત્પન્ન હોતેહેં વે સંમૂર્ચ્છિમહેં, એસે સંમૂર્ચ્છિમ પાંચ
इन्द्रियोंवाले तिर्यञ्च जीवही यहां क्षुद्रप्राणियोंमें लिये गयेहैं (૩૬) સૂત્ર ૧૪
‘ચત્તારિ પક્ષી પળ્લન્તા इत्यादि’ સૂત્ર ૧૫ ॥

ટીકાર્થ—પક્ષી ચાર પ્રકારકે કહે ગયેહેં—જેસે—નિપત્તિતા નો પરિવ્રજિતા ૧
પરિવ્રજિતા નો નિપત્તિતા ૨ નિપત્તિતા ની ઓર પરિવ્રજિતા ની ૩ ઓર
નો નિપત્તિતા નો પરિવ્રજિતા ૪ इनमें जो पक्षी धृष्ट होनेसे या अज्ञ
होनेसे नीडसे अवतरणके स्वभाववाला होता है, अर्थात् नीचे जमीन
पर गिर पडनेके स्वभाववाला होता है, बालभाव होनेसे उड़नेके स्वभा-

वे लये उत्पन्न थाय छे तेमने संमूर्च्छिम कहे छे जेवा पञ्चैन्द्रिय तिर्यञ्च
लयेने जे अही क्षुद्र लये इये प्रकट करवाभां आया छे. । ३६ ॥ सू. १४ ॥

ટીકાર્થ—“ચત્તારિ પક્ષી પળ્લન્તા” इत्यादि—(‘સૂ. ૧૪)

પક્ષીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પશુ કહ્યા છે—(૧) “નિપત્તિતા નો
પરિવ્રજિતા” જે પક્ષી ધૃષ્ટ હોવાથી અથવા અજ્ઞ હોવાથી માળામાંથી નીચે
અવતરણ કરવાના સ્વભાવવાળું હોય છે એટલે કે નીચે પડી જવાના સ્વભા-
વવાળું હોય છે, પશુ ખાલ્યાવસ્થાને ઠારણે ઉડવાના સ્વભાવવાળું હોતું નથી

किन्तु स नो परिव्रजिता-उड्डयनशीलो न भवति वारुभावात्, तथा-एकः परिव्रजिता भवति किन्तु नो निपतिता २, तथा-एकोनिपतिताऽपि परिव्रजिताऽपि च भवति ३। तथा-एको नो निपतिता नापि च परिव्रजिता भवतीति । (३७) ।

‘ एवामेवे ’ त्यादि-एवमेव-उक्तपक्षिवदेव भिक्षाकाः-साधवश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको भिक्षाको निपतिता-भिक्षाचर्यायामवतरीता भवति भोजनार्थित्वात्, किन्तु नो परिव्रजिता-परिभ्रमणशीलो न भवति ग्लानत्वादलसत्त्वाल्लज्जावत्त्वाद्वा इति प्रथमः । १ ।

तथा-एकः परिव्रजिता-परिभ्रमणशील आश्रयान्निर्गतः सन् भवति, किन्तु नो निपतिता-भिक्षार्थमवतरीता न भवति सूत्रार्थाऽऽसक्तत्वात् इति द्वितीयः २।

ववाला नहीं होता है, ऐसा वह पक्षी प्रथम भङ्गमें लिया गया है जो उड़नेके स्वभाववाला होता है पर गिरनेके स्वभाववाला नहीं होता है ऐसा वह पक्षी द्वितीय भंगमें लिया गया है । जो पक्षी परिव्रजनके स्वभाववाला और निपतनके स्वभाववाला होता है वह तृतीय भंगमें लिया गया है । तथा जो न निपतनके स्वभाववाला होता है और न परिव्रजनके स्वभाववाला होता है ऐसा वह पक्षी चतुर्थ भंगमें लिया गया है (३७)

“ एवामेव ”—इसी प्रकारसे साधु भी चार प्रकारके कहे गये हैं उनमें कोई एक साधु ऐसा भी होता है, जो भोजनार्थी होनेसे भिक्षाचर्यामें उतरतातो है, पर वह ग्लान होनेसे या आलसी होनेसे या लज्जाशील होनेसे परिभ्रमण नहीं करता है १ कोई एक साधु ऐसा होता है जो परिभ्रमण शील होता है—आश्रयस्थानसे भिक्षाके निमित्त

तेने आ पडेलां लांगामा (प्रकारमां) गण्वावी शक्य छे. (२) “ परिव्रजिता नो निपतिता ” जे पक्षी उडवाना स्वभाववाणुं होय छे पणु पडवाना स्वभाववाणुं होतुं नथी तेने आ भील प्रकारमां गण्वावी शक्य छे. (३) “ निपतिताऽपि परिव्रजिताऽपि ” जे पक्षी परिव्रजनना अने निपतनना स्वभावथी युक्त होय छे तेने आ त्रील प्रकारमां भूकी शक्य छे (४) “ नो निपतिता नो परिव्रजिता ” जे पक्षी निपतनना स्वभाववाणुं पणु होतुं नथी अने परिव्रजनना स्वभाववाणुं पणु होतुं नथी तेने आ चोथा प्रकारमां भूकी शक्य छे. १३७।

“ एवामेव ” जेअ प्रमाणे साधु पणु चार प्रकारना कइया छे—(१) कौछ ओइ साधु जेवो होय छे के जे लोअनार्थी होवार्थी भिक्षाचर्यामां उतरे छे तो अरे, पोताना आश्रय स्थानमांथी अडार नीकणे छे तो अरे, पणु भीमारी, आणस के लज्जने कारणे परिव्रजन (परिभ्रमण) करतो नथी. (२) कौछ ओइ साधु जेवो होय छे के जे परिभ्रमणशील होय छे—आश्रयस्थानमांथी भिक्षाने

एको निपतिता परिव्रजिताऽपि च भवतीति तृतीयः ३। तथा—एको नो निपतिता नापि च परिव्रजिता भवतीति चतुर्थः । (३८) सू० १५ ॥

पुरुषाधिकारात् पुनः पुरुषविशेषान्तिरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—णिक्रुष्टे णाममेगे णिक्रुष्टे, णिक्रुष्टे णाममेगे अणिक्रुष्टे ४ (३९) ।

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—णिक्रुष्टे णाममेगे णिक्रुष्टप्पा, णिक्रुष्टे णाममेगे अणिक्रुष्टप्पा ४ (४०)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—बुहे णाममेगे बुहे १, बुहे णाममेगे अबुहे ४ (४१)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—बुहे णाममेगे बुह हियए ४ (४२)

चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा—आयाणुकंपए णाममेगे णो पराणुकंपए ४ (४३) ॥ सू० १६ ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—निष्कृष्टो नामैको निष्कृष्टः, निष्कृष्टो नामैकोऽनिष्कृष्टः ४ (३९) ।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—निष्कृष्टो नामैको निष्कृष्टात्मा, निष्कृष्टो नामैकोऽनिष्कृष्टात्मा ४ (४०) ।

उठता तो है, पर वह भिक्षा लानेके लिये नहीं जाता है, क्योंकि वह सूत्रार्थमें आसक्त होता है। कोई एक साधु ऐसा होता है जो भिक्षाके निमित्त जाता भी है और परिभ्रमण भी करता है ३। और कोई एक साधु ऐसा होता है जो न निपतिता होता है और न परिव्रजिता होता है (३८) ॥ सूत्र १५ ॥

निमित्ते उठे तो भरो पण्डु भिक्षा लेवाने भाटे नती, कारण के—ते सूत्रार्थमें आसक्त होय छे. (३) केध अेक साधु अेवो होय छे के ने भिक्षाप्राप्ति भाटे उपाश्रयमांथी नीकणते छे पण्डु भरो अने परिव्रमण पण्डु करे छे. (४) केध अेक साधु निपतिता पण्डु होतो नथी अने परिव्रजिता पण्डु होतो नथी—भिक्षाप्राप्ति भाटे उपाश्रयमांथी नीकणते पण्डु नथी अने परिव्रमण पण्डु करतो नथी. ॥ ३८ ॥ सू. १५ ॥

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बुधो नामैको बुधः, बुधो नामै-
कोऽबुधः ४, (४१) ।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बुधो नामैको बुधहृदयः (४२) ।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा-आत्मानुकम्पको नामैको नो परा-
नुकम्पकः ४, (४३) ॥ सू० १६ ॥

टीका—‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि-पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि,
तद्यथा-एकः पुरुषो निष्कृष्टः-दुर्बलः-तपसा कृशशरीरो भवति, पुनः स
निष्कृष्टः-भावतः कृशीकृतकषायत्वादुपशान्तचित्तो भवतीति प्रथमः १, तथा-
एको निष्कृष्टः सन्नपि भावतोऽजितकषायत्वादनिकृष्टः-चञ्चलमनोवृत्तिर्भवतीति

पुनः पुरुष विशेषोंका निरूपण करते हैं—

‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि सूत्र १६ ॥

टीकार्थ-पुरुष जाति चार कहे गये हैं—जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा होता है
जो निष्कृष्ट २ होना है १। कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो निष्कृष्ट
अनिष्कृष्ट होता है २। कोई एक ऐसा होता है जो अनिष्कृष्ट निष्कृष्ट
होता है ३। और कोई एक ऐसा होता है जो अनिष्कृष्ट अनिष्कृष्ट होता
है ४। तपसे जिसका शरीर कृश हो गया है ऐसा वह पुरुष दुर्बल पद-
वाच्य हुआ है ऐसा हुआ भी वह वंशमें कषायोंको करलेनेसे उपशान्त
चित्तवाला होता है तो वह प्रथम भंगमें लिया गया है १। तथा कोई एक
पुरुष जो तपस्यासे कृश (दुबला) शरीरवाला होने पर भी यदि कषायों
पर विजय नहीं पाता है तो वह चञ्चल मनोवृत्तिवाला द्वितीय भंगमें

पुरुषविशेषोंनुं निरूपण आंगणं आदि छे—

“ चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता ” इत्यादि—(सू० १६)

टीकार्थ-पुरुषाना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पण्ण कहे छे—(१) निष्कृष्ट-निष्कृष्ट,
(२) निष्कृष्ट-अनिष्कृष्ट, (३) अनिष्कृष्ट-निष्कृष्ट अने (४) अनिष्कृष्ट-अनिष्कृष्ट
तपने लीधे जेनुं शरीर कृश अथवा दुर्बल थछ गयुं होय जेवा
पुरुषने निष्कृष्ट कहे छे.

पहिलां भांगानुं स्पष्टीकरण—तपने लीधे जेनुं शरीर कृश थछ गयेलुं
होय छे जेवा साधु जे कषायो पर काबू राखीने उपशान्त चित्तवाणो थछ
जय तो तेने “ निष्कृष्ट-निष्कृष्ट ” इप पहिला भांगामां गह्यावी शकय छे.

(२) जे साधुनुं शरीर तपने लीधे कृश थछ गयेलुं होय छे, छतां पण्ण
जे कषायो पर विजय भेजवी शकतो नथी जेवा अचञ्चल वृत्तिवाणो साधुने
“ निष्कृष्ट-अनिष्कृष्ट ” इप भील भांगामां भूकी शकय छे. (३) जे पुरुष

દ્વિતીયઃ ૨, તથા-एकोऽनिष्कृष्टः सन्नपि पुनर्निष्कृष्टो भवतीति तृतीयः ૩,
તથા-एकः पूर्वमपि अनिष्कृष्टः पश्चादप्यनिष्कृष्ट एव भवतीति चतुर्थः ૪ (૩૯) ।

एतत्सूत्रोक्तार्थमेव द्रढयितुं परमेतत्सूत्रमुपन्यस्यति—

‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्-एको निष्कृष्टः—कृश
शरीरतया भवति, पुनः स कषायादिनिर्मूलनेन निष्कृष्टात्मा-निष्कृष्टात्मानो
यस्य स तथाभूतो भवतीति प्रथमः १, एवं शेषमङ्गत्रयम् ४,

यद्वा-निष्कृष्टः—पूर्वं तपसा कृशीकृतदेहो भवति स एव पश्चादपि निष्कृष्टो
भवति, इति शेषं यथोक्तमेव (૪૦) ।

ગિના ગયાહૈ । તથા જો કોઈ પુરુષ અનિષ્કૃષ્ટ હોતો હુઆ મી કષાયોં પર
વિજય નહીં પાતા હુઆ મી યદિ વાદમેં કષાયોં પર વિજય પા લેતા
હૈ તો વહ તૃતીય ભંગમેં લિયા ગયા હૈ । તથા જો ન તપ કરતા હૈ ઓર
ન કષાયોં પર હી વિજય પ્રાપ્ત કરતાહૈ વહ ચતુર્થ ભંગમેં લિયા ગયાહૈ ૪(૩૯)

इसी सूत्रकी दृढताके लिये सूत्रकार यह दूसरा सूत्र कहते हैं—
“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुष जात चार कहे गये हैं—जैसे
निष्कृष्ट निष्कृष्टात्मा १ निष्कृष्ट अनिष्कृष्टात्मा २-४-(४०) जो कोई
पुरुष तपस्यासे शरीरको कृश(दुर्बल)कर देताहै और कषायको विलकुल
निर्मूल कर देता है ऐसा वह प्रथम भंगमें कहा गयाहै । इसी प्रकारसे
जो पुरुष तपस्यासे कृश शरीरवाला हुआ भी कषायोंका निर्मूलन नहीं

અનિષ્કૃષ્ટ (સખળ-શક્તિસંપન્ન) હોવા છતાં પણ શરૂઆતમાં કષાયો પર
વિજય પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી પણ પાછળથી કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરી
લે છે એવા પુરુષને “ અનિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટ ” રૂપ ત્રીજા ભાંગમાં મૂકી શકાય
છે. (૪) જે પુરુષ તપ પણ કરતો નથી અને કષાયોને છૂટતો પણ નથી તેને
એવા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે. ૧૩૯।

આ સૂત્રની પુષ્ટિ નિમિત્તે સૂત્રકાર આ ણીચું સૂત્ર કહે છે—“ ચત્તારિ
પુરિસજાયા ” ઈત્યાદિ—નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષપ્રકારો કહ્યા છે—(૧)
નિષ્કૃષ્ટ-નિષ્કૃષ્ટાત્મા, (૨) નિષ્કૃષ્ટ-અનિષ્કૃષ્ટાત્મા, (૩) અનિષ્કૃષ્ટાત્મા-નિષ્કૃષ્ટ
અને (૪) અનિષ્કૃષ્ટાત્મા-અનિષ્કૃષ્ટાત્મા.

સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તપસ્યાથી શરી-
રને કૃશ કરી નાખે છે અને કષાયોને બિલકુલ નિર્મૂળ કરી નાખે છે (૨)
કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તપસ્યાથી શરીરને કૃશ કરી નાખવા
છતાં પણ કષાયોને નિર્મૂળ કરી શકતો નથી. એજ પ્રમાણે બાકીના જે
ભાંગા પણ સમજી લેવા. ૧૪૦।

‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रहप्तानि, तद्यथा—एको बुधः—सत्क्रियापण्डितो भवति, उक्तं च—

करता है वह द्वितीय भंगमें लिया गया है । इसी प्रकारसे अचशिष्ट दो भंग भी समझ लेना चाहिये अथवा—निष्कृष्ट निष्कृष्ट ऐसा जो ३९ वां सूत्र कहा गया है उसका ऐसा भी अर्थ हो सकता है, कि कोई एक पुरुष ऐसा है जो पहिले भी तपस्यासे कृशीकृतदेहवाला होता है, और बादमें भी तपस्यासे कृशीकृत देहवाला बना रहता है, अर्थात् पहिले भी वह तपस्या करता है और तपस्या आगे भी करता जाता है जब तक जीवित रहता है तब तक तपस्या करना नहीं छोड़ता है, ऐसा अर्थ लेकर इस सूत्रकी व्याख्या कर लेनी चाहिये और जो यह ४० वां सूत्र कहा गया है उसमें जैसी अभी व्याख्याकी गई है वैसीही व्याख्या कर लेनी चाहिये ३९ वें सूत्रमें “ कृशीकृतकषायत्वात् उपशान्तचित्तो भवतीति ” ऐसी व्याख्या नहीं करनी चाहिये ऐसी व्याख्या तो यहां ४० वें सूत्रमें करनी चाहिये ।

फिर भी—“चत्वारि पुरिसजाया इत्यादि, पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे बुध-बुध१ बुध अबुध२ अबुध बुध३ और अबुध अबुध४ इनमें जो सत् क्रियामें पण्डित होता है और विवेक सम्पन्न मनवाला होता है, ऐसा वह बुध

३६ भां सूत्रमां “ निष्कृष्ट-निष्कृष्ट ” ने पड़ेला बांगो छे तेना नीचे प्रमाणे अर्थ पणु थाय छे—कोई एक पुरुष अवेो होय छे के ने पड़ेलां पणु तपस्याथी कृशीकृत देहवाणो होय छे अने पछी पणु तपस्या थालु राणीने कृशीकृतदेहवाणो न रहे छे. अेटसे के पड़ेलां, पणु तपस्या करे छे अने पछी पणु तपस्या थालु न राणे छे अेटसे के एवे त्यां सुधी तपस्या कर्या न करे छे. आ प्रकारने अर्थ करीने सूत्रनी व्याख्या करवी जेधअे अने आ ने ४० सुं सूत्र कहुं छे, तेमां आगण जताव्या प्रमाणे न व्याख्या करवी जेधअे. ३६भां सूत्रमां “ कृशीकृतकषायत्वात् उपशान्तचित्तो भवतीति ” आ प्रकारनी व्याख्या करवी जेधअे नही, अेवी व्याख्या तो ४०भां सूत्रमां करवी जेधअे.

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहुं छे—(१) बुध, बुध, (२) बुध-अबुध, (३) अबुध-बुध अने (४) अबुध-अबुध इवे आ चारे बांगाने अर्थ स्पष्ट करवामां आवे छे—ने पुरुष सत्क्रिया सम्पन्न होय छे अने विवेक सम्पन्न मनवाणो होय छे तेने “ बुध बुध ” इय पड़ेला बांगामां भूकी शकय छे कहुं पणु छे के-

“ પઠકઃ પાઠકશ્ચૈવ યે ચાન્યે તત્ત્વચિન્તકાઃ ।

સર્વે વ્યસનિનઃ સન્તિ । યઃ ક્રિયાવાન્ સ પષ્ટિતઃ । ૧ । ” ઇતિ.

સ પુનર્બુધઃ—વિવેકસમ્પન્નમનસ્ત્વાત્ પષ્ટિતો ભવતિ, ઇતિ પ્રથમઃ ૧, તથા—एको बुधो भन्नपि विवेकविकलमनस्त्वादबुधो भवतीति द्वितीयः ૨, તથા—एकः सत्क्रियारहितत्वादबुधः सन्नपि विवेकसम्पन्नमनस्त्वाद् बुधो भवतीति तृतीयः ૩, તથા—एकः सत्क्रियाविवेकैतदुभयरहितत्वादबुधः सन्नबुधो भवतीति चतुर्थः ૪ (૪૧) ।

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि स्पष्टम्, नवरम्—एको बुधः—सत्क्रिय-त्वात् पषटितो भवति स पुनर्बुधहृदयः—बुध—सदसद्बोधसम्पन्नं हृदयं मनो यस्य स तथा भवति विवेककारकमनस्त्वात् १,

બુધ હસ પ્રથમ અંગમેં લિયા ગયા હૈ ઉક્તંચ—“ પઠકઃ પાઠકશ્ચૈવ ” ઇત્યાદિ—હે ભવ્ય જો પઠાનેવાલા હૈ, પઠાનેવાલા હૈ, તથા જો તત્ત્વોકા ચિન્તવન કરનેવાલે હૈ, વે સ્વ વ્યસનીહૈં । પષ્ટિત તો વહી હૈ જો ક્રિયા-વાલા હૈ, દૂસરા વહ પુરુષ જો બુધ હોતા હુઆ મી વિવેક વિકલ મન-વાલા હોતા હૈ વહ દ્વિતીય અંગમેં લિયા ગયા હૈ । તીસરા પુરુષ વહ જો સત્ક્રિયા રહિત હોનેસે અબુધ હોતા હુઆ મી વિવેક સમ્પન્ન મનવાલા હોતે બુધ હોતા હૈ, એસા યહ પુરુષ તૃતીય અંગમેં લિયા ગયા હૈ । ઓર જો સત્ક્રિયા ઓર વિવેક ઇન દોનોસે રહિત હોતા હૈ વહ અબુધ અબુધ એસે ચતુર્થ અંગમેં લિયા ગયા હૈ (૪૧)

ફિર મી—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे बुध बुध हृदय १ बुध अबुध हृदय २ अबुध बुध हृदय ३ एवं

“ પઠકઃ પાઠકશ્ચૈવ ” ઇત્યાદિ—“ હે રાજના જે પઠન કરનારા છે, પઠન કરાવનારા છે તથા તત્ત્વોકા ચિન્તન કરનારા છે, તેઓ તો વ્યસની છે. પષ્ટિત તો તેને જ કહી શકાય છે કે જે ક્રિયાસંપન્ન હોય છે. (૨) જે પુરુષ બુધ હોવા છતાં પણ વિવેકશૂન્ય મનવાળો હોય છે તેને “ બુધ-અબુધ ” રૂપ બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે. (૩) જે પુરુષ સત્ક્રિયા-રહિત હોવાથી અબુધ હોવા છતાં પણ વિવેકસંપન્ન મનવાળો હોવાથી બુધ હોય છે તેને “ અબુધ-બુધ ” રૂપ ત્રીજા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. (૪) જે પુરુષ સત્ક્રિયાથી પણ નિહીન હોય છે અને વિવેકથી પણ વિહીન હોય છે તેને “ અબુધ અબુધ ” રૂપ ચોથા ભાંગામાં મૂકી શકાય છે. ૪૧

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—नीचे प्रभाषे चार प्रकारना पुरुषोः पणु कहेा छे—(१) बुध-बुध हृदय, (२) बुध-अबुध हृदय, (३) अबुध-बुध हृदय અને (४) अबुध-अबुध हृदय.

यद्वा—एको बुधः—शास्त्रज्ञानसम्पन्नः—सन् क्रियायां बुधहृदयः—किंकर्तव्यताविमूढतारहितत्वाल्लक्ष्यज्ञानसम्पन्नमना भवतीति—प्रथमः १। एवं शेषभङ्गत्रय-सूहनीयम् । ४। (४२-)

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरस—एकः पुरुष आत्मानुकम्पको—स्वात्मरक्षको भवति, किन्तु नो परानुकम्पकः—पररक्षको न भवति, स प्रत्येकबुद्धो जिनकल्पिको वा, परानपेक्षो निर्दयो वा १, तथा—एकः परानु-
अबुध अबुध हृदय ४ इनमें जो सक्रियावाला होनेसे पण्डित होता है और सत् और असत्के बोधसे सम्पन्न हृदयवाला होता है, वह प्रथम भंगमें लिया गया है। ऐसा यह पुरुष विवेककारक मनवाला होता है। अथवा जो पुरुष शास्त्रीयज्ञानसे सम्पन्न होता हुआ क्रियामें बुध हृदयवाला होता है, किंकर्तव्यतामें विमूढतासे रहित होनेसे लक्ष्य ज्ञानसे सम्पन्न-मनवाला होता है, ऐसा वह पुरुष प्रथम भंगमें लिया गया है इसी तरहसे शेष भंगत्रय भी समझ लेना चाहिये (४२)

फिरभी—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषजात चार कहे गये हैं—जैसे आत्मानुकम्पक नो परानुकम्पक १ परानुकम्पक नो आत्मानुकम्पक २ उभयानुकम्पक ३ और अनुभयानुकम्पक ४ इनमें प्रथम भंगमें वह पुरुष लिया गया है जो स्वात्मरक्षकही होता है पररक्षक नहीं होता है जैसे—प्रत्येक बुध अथवा जिनकल्पिक अथवा दूसरेकी

पडेला लांगानु स्पष्टीकरण—जे पुरुष सक्रियावाणो होवाथी पण्डित होय छे अने सत् अने असत्नां बोधथी युक्त हृदयवाणो होय छे, तेने पडेला लांगामां लक्ष शक्य छे. ओवो पुरुष विवेककारक मनवाणो होय छे अथवा जे पुरुष शास्त्रीय ज्ञानथी संपन्न पण्ड होय छे, अने क्रियायां पण्ड बुध हृदयवाणो होय छे कर्तव्य विमूढ होतो नथी अने लक्ष्यज्ञानथी संपन्न मनवाणो होय छे तेने पडेला लांगामां भूषी शक्य छे ओज प्रभाणो भाकीना पण्ड लांगा पण्ड नते न समण्ड देवा. ॥४२॥

“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—तीये प्रभाणो चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) आत्मानुकंपक नो परानुकंपक, (२) परानुकंपक नो आत्मानुकंपक, (३) उभयानुकंपक अने (४) अनुभयानुकंपक.

पडेला लांगामां ओवो पुरुषने देवामां आण्यो छे के जे स्वात्मरक्षक न होय छे पण्ड पररक्षक होतो नथी. जेभके प्रत्येक बुध, अथवा जिनकल्पिक अथवा अन्यनी परवा न करुनासे निर्दय पुरुषः पीला लांगामां ओवो पुरुष

कम्पकः किन्तु नो आत्मानुकम्पकः—स्वात्मानुकम्पको न भवति, स च तीर्थङ्करः, आत्मानपेक्षो वा दयालुः मेघरथवत्, इति द्वितीयः २। तथा—एकः स्वपरानुकम्पको भवति, स च स्थविरकल्पिक—इति तृतीयः ३, तथा—एको नो आत्मानुकम्पको नापि च परानुकम्पको भवति, स च पापात्मा कालसौकरिकादिवदिति चतुर्थः ४। (४३) ॥ सू० १६ ॥

पूर्व पुरुषविशेषा अभिहितः, सम्प्रति देवादीनां वेदसंपाद्यं व्यापारविशेषं निरूपयितुं सप्तमूत्रीमाह—

मूलम्—चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा-दिव्वे १, आसुरे

२, रक्खसे ३, माणुस्से ४ (१)

चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा-देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ २, असुरे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ ३, असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (२) ।

चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा-देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं

अपेक्षा नहीं करनेवाला निर्दय पुरुष १ द्वितीय भंगमें वह पुरुष लिया गया है, जो परानुकम्पक होता है आत्मानुकम्पक नहीं होता है। जैसे तीर्थंकर अथवा अपनी परवाह नहीं करनेवाला मेघरथके जैसा पुरुष। तृतीय भंगमें वह पुरुष लिया गया है, जो स्व और पर इन दोनोंके प्रति अनुकम्पावाला होता है, जैसा स्थविर काल्पिक मुनि। चतुर्थ भंगमें वह पुरुष लिया गया है जो स्वानुकम्पा और परानुकम्पा इन दोनोंसे रहित होता है, जैसे कालसौकरिक कसाई आदि पुरुष ४३ सू. १६

देवाभां आण्ये छे के जे परनी अनुकंपा राणनारे डोय छे पणु पोतानी अनुकंपा राणनारे डोतो नथी, जेभके तीर्थंकर अथवा पोतानी परवा न करनार मेघरथ जेव पुरुषो. त्रीण भांगमां जे पुरुषने देवाभां आण्ये छे के जे पोताना अने परना प्रत्ये अनुकंपावाणे डोय छे, जेभके स्थविर काल्पिक मुनि जेथा भांगमां जेवा पुरुषने देवाभां आण्ये छे के जे स्व अने पर अन्ने प्रत्ये अनुकंपा विनाने डोय छे. १४३। ॥ सू. १६ ॥

गच्छइ २, रक्खसे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ ३, रक्खसे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (३) ।

चउव्विहे संवासे पणत्ते तं जहा—देवे णाममेगे देवीए सद्धिं संवासं गच्छइ १, देवे णाममेगे मणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ २, मणुस्से णाममेगे देवीहिं सद्धिं संवासं गच्छइ ३, मणुस्से णाममेगे माणुस्सीहिं सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (४) ।

चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा—असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ, असुरे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (५) ।

चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा—असुरे णाममेगे असुरीए सद्धिं संवासं गच्छइ, असुरे णाममेगे मणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४ (६)

चउव्विहे संवासे पणत्ते, तं जहा—रक्खसे णाममेगे रक्खसीए सद्धिं संवासं गच्छइ रक्खसे णाममेगे माणुस्सीए सद्धिं संवासं गच्छइ ४, (७) ॥ सू० १७ ॥

छाया—चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—दिव्यः १, आसुरः २, राक्षसः ३, मनुषः ४ (१) ।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—देवो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति १, देवो नामैकः असुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति २, असुरो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति ३, असुरो नामैक असुर्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (२) ।

चतुर्विधः संवासः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—देवो नामैको देव्या सार्धं संवासं गच्छति १, देवो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति २, राक्षसो नामैको देव्या सार्द्धं संवासं गच्छति ३, राक्षसो नामैको राक्षस्या सार्द्धं संवासं गच्छति ४, (३) ।

ચતુર્વિધઃ સંવાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા-દેવો નામૈકો દેવ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૧, દેવો નામૈકો માનુષ્યાઃ સાર્ધં સંવાસં ગચ્છતિ ૨, મનુષ્યો નામૈકો દેવ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૩, મનુષ્યો નામૈકો માનુષ્યાસાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૪, (૪)।

ચતુર્વિધઃ સંવાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા-અસુરો નામૈકોઽસુર્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ, અસુરો નામૈકો રાક્ષસ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૪, (૫)।

ચતુર્વિધઃ સંવાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા-અસુરો નામૈકોઽસુર્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ, અસુરો નામૈકો માનુષ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૪, (૬)

ચતુર્વિધઃ સંવાસઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથથા-રાક્ષસો નામૈકો રાક્ષસ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ, રાક્ષસો નામૈકો માનુષ્યા સાર્દ સંવાસં ગચ્છતિ ૪ (૭) ॥સૂ૦ ૧૮॥

ટીકા—‘ચતુર્વિધે સંવાસે’ ઇત્યાદિ—સ્પષ્ટમ્, નવરં-સંવસન-સંવાસઃ-સ્ત્રિયા સહ સદ્ગમઃ, ‘દિવ્યઃ’-ઘૌઃ-સ્વર્ગઃ, તદ્વાસી દેવોઽપિ ઉપચારાદ્ ઘૌઃ,

‘ચતુર્વિધે સંવાસે પળ્લવ્તે ઇત્યાદિ’ સૂત્ર ૧૭ ॥

ટીકાર્થ-સંવાસ ચાર પ્રકારકા કહા ગયાહૈ જૈસે-દિવ્ય? આસુર? રાક્ષસ ૨ એવં માનુષ ૪ સ્ત્રિયોંકે નાથ જો સંગમ ક્રિયા જાતા હૈ ઉસકા નામ સંવાસ હૈ “દિવિ ભવઃ દિવ્યઃ” હસ વ્યુત્પત્તિકે અનુસાર દેવલોક હોનેવાલા જો સંવાસ હૈ વહં દિવ્ય સંવાસહૈ । પરન્તુ યહાં વૈમાનિક દેવ સમ્બન્ધી સંવાસ લિયા ગયાહૈ “ઘૌ” નામ દેવલંકકાહૈ, દેવલોકમૈં રહનેવાલે દેવ ઓ ઉપચારસે “ઘૌ” કહ દિયે ગયેહૈં । હન દેવોંમૈં જો સંવાસ હોતા હૈ, વહી દિવ્ય સંવાસ હૈ । હસ પ્રકાર કહનેસે નવગ્રૈવેયક આદિ વિમાનોંમૈં ઓ સંવાસ હોનેકી આપત્તિ ઓ સકતીહૈ, પરન્તુ વહાં સંવાસ દેવલોગોંસે આગે નવગ્રૈવેયક આદિકોંમૈં નહીંહૈ, અતઃ યહાં દિવ્ય સંવા-

“ચતુર્વિધે સંવાસે પળ્લવ્તે” ઇત્યાદિ—(સૂ ૧૭)

ટીકાર્થ-પુરુષ અને સ્ત્રીના મૈથુન સેવનને સંવાસ કહે છે. તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) દિવ્ય સંવાસ, (૨) આસુર સંવાસ, (૩) રાક્ષસ સંવાસ અને (૪) માનુષ સંવાસ. “દિવિ ભવઃ દિવ્યઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર સ્વર્ગમાં (દેવલોકમાં) જે સંવાસ થાય છે તેનું નામ દિવ્યસંવાસ છે અહીં વૈમાનિક દેવ સંબંધી સંવાસ જ પ્રકૃષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. “ઘૌ” એટલે સ્વર્ગ. સ્વર્ગમાં રહેનારા દેવોને પણ અહીં ઔપચારિક રીતે “ઘૌ” કહેવામાં આવેલ છે આ દેવોમાં જે મૈથુન સેવન થાય છે તેને દિવ્ય સંવાસ કહે છે આ પ્રકારના કથનમાં નવગ્રૈવેયકવાસી દેવોમાં પણ સંવાસ હોવાની વાત માનવાનો પ્રસંગ ઉદ્ભવશે. પણ ત્યાં સંવાસનો સદ્ભાવ હોતો જ નથી. તેથી અહીં વૈમાનિક દેવ સંબંધી સંવાસ જ, ‘દિવ્યસંવાસ’, પણ દ્વારા ગૃહીત

तत्र भवो दिव्यः—वैमानिकदेवसम्बन्धी संवासः, आसुरः—असुरस्य—भवनपति-
विशेषस्यायम् आसुरः, राक्षसः—रक्षो राक्षसो वा व्यन्तरविशेषः, तस्यायं राक्षसः
संवासः, एवं मानुष्यः—मनुष्यस्यायमित्यर्थः, इति प्रथमं सामान्यसूत्रम् । अतः

सस्ते वैमानिकदेव सम्बन्धी संवास कहा गया है ऐसाही जानना चाहिये
भवनपति विशेष सम्बन्धी जो संवास है वह आसुर संवास है असु-
रका संवास आसुर संवास है, असुर ये भवनपतिका एक भेद है व्य-
न्तरका भेद राक्षस है इस राक्षसका जो संवास है वह राक्षस संवास
है और जो मनुष्यकृत संवास है वह मानुष संवास है.

फिरभी—संवास चार प्रकारका कहा गया है—जैसे—कोई एक देव
देवीके साथ संवास करता है १ कोई एक देव असुरीके साथ संवास
करता है कोई एक असुर देवीके साथ संवास करता है कोई एक असुर
असुरीके साथ संवास करता है ४ (२)

फिरभी—संवास चार प्रकारका कहा गया है—जैसे—कोई एक देव
देवीके साथ संवास करता है, कोई एक देव राक्षसीके साथ संवास करता
है २ कोई एक राक्षस देवीके साथ संवास करता है ३ कोई एक राक्षस
राक्षसीके साथ संवास करता है ४ (३)

थवा जेधजे त्यांथी आगण नयैदेयक आदिमां संवासने सदभाव न् छे।
नथी लवनपति देवां अने देवीजोना संवासने आसुरसंवास कडे छे.

असुर जे लवनपतिजोनां जेक लेह छे. ते असुरकुमारना असुरकुमारी
साथेना संलोगने पणु आसुरसंवास कडे छे.

व्यन्तरने राक्षस नामने लेह छे. ते राक्षसना संवासने राक्षस संवास
कडे छे. मनुष्यकृत संवासने—मनुष्य जतिना पुरुष अने स्त्रीमा मथुन सेव-
नने—मानुषसंवास कडे छे. ११।

संवासना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहा छे—(१) कोछ जेक देव
देवीनी साथे संवास करे छे. (२) कोछ जेक देव असुरी (असुरकुमारी) साथे
संवास करे छे. (३) कोछ जेक असुर देवीनी साथे संवास करे छे (४) कोछ
जेक असुर असुरी साथे संवास करे छे. ॥२॥

वणी संवासना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कहा छे—(१) कोछ जेक
देव देवीनी साथे संवास करे छे. (२) कोछ जेक देव राक्षसी साथे संवास
करे छे. (३) कोछ जेक राक्षस देवीनी साथे संवास करे छे अने (४) कोछ
जेक राक्षस राक्षसी साथे संवास करे छे. ॥३॥

પરં ચતુર્ભંગિકામૂત્રાણિ દેવાસુરાદિ સંયોગતઃ ષડિતિ સામાન્યમૂત્રેણ સહ સંકલનેન સપ્તસૂત્રી । ૭ । સૂ૦ ૧૭ ।।

પુનઃ—સંવાસ હંસ પ્રકારસે મી ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ જૈસે—કોઈ એક દેવ દેવીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૧ કોઈ એક દેવ માનુષીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૨ કોઈ એક મનુષ્ય દેવીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૩ કોઈ એક મનુષ્ય માનુષીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૪ (૪)

હસ રીતિસે મી સંવાસ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ જૈસે—કોઈ એક અસુર અસુરીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૧ કોઈ એક અસુર રાક્ષસીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૨ इत्यादि ४-(५)

હસ રૂપસે મી સંવાસ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ—જૈસે—કોઈ એક અસુર અસુરીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૧ કોઈ એક અસુર મનુષ્ય સ્ત્રીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૨ इत्यादि ४-(६)

હસ પદ્ધતિસે મી સંવાસ ચાર પ્રકારકા કહા ગયા જૈસે—કોઈ એક રાક્ષસ રાક્ષસીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૧ કોઈ એક રાક્ષસ મનુષ્ય સ્ત્રીકે સાથ સંવાસ કરતા હૈ ૨ इत्यादि ४ (७)

इनमें प्रथम सूत्र सामान्य सूत्र है बाकीके ६ सूत्र चतुर्भंगके सूत्र

વળી સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક દેવ દેવી સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક દેવ માનુષી (મનુષ્ય બતિની સ્ત્રી) સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય દેવીની સાથે સંવાસ કરે છે અને (૪) કોઈ એક મનુષ્ય માનુષી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૪॥

વળી સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક અસુર અસુરીની સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક અસુર મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય અસુરી સાથે સંવાસ કરે છે. (૪) કોઈ એક મનુષ્ય મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૬॥

સંવાસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક રાક્ષસ રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. (૨) કોઈ એક રાક્ષસ મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. (૩) કોઈ એક મનુષ્ય રાક્ષસી સાથે સંવાસ કરે છે. (૪) કોઈ એક મનુષ્ય મનુષ્ય સ્ત્રી સાથે સંવાસ કરે છે. ॥૭॥

આ સાત સૂત્રોમાંનું પહેલું સૂત્ર સામાન્ય સૂત્ર છે. બાકીના ૭ છ સૂત્રો છે તેમાં દેવ અસુર, દેવ રાક્ષસ, દેવ મનુષ્ય, અસુર રાક્ષસ, અસુર મનુષ્ય અને રાક્ષસ મનુષ્યના સંયોગથી ચતુર્ભંગીઓ બની છે. આ પ્રકારે

पुरुषाधिकारां देवापध्वंससूत्रमाह—

मूलम्—चउविहे अवध्वंसे पण्णत्ते तं जहा-आसुरे १, अभि-
ओगे २, संमोहे ३, देवकिव्विसे ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा असुरत्ताए कम्मं पगरेति तं जहा--
कोवसीलयाए १, पाहुडसीलयाए २, संसत्ततवोकम्मणेणं ३,
निमित्ताजीवयाए ४, चउहिं ठाणेहिं जीवा आभिओगत्ताए
कम्मं पकरेति, तं जहा-अत्तुक्कोसेणं १ परपरिवाएणं २ भूइक-
म्मणेणं ३ कोउयकरणेणं ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा संमोहत्ताए कम्मं पगरेति, तं जहा--
उम्मग्गदेसणयाए १ मग्गंतराएणं २, कामासंसप्पओगेणं ३,
भिज्जानियाणकरणेणं ४।

चउहिं ठाणेहिं जीवा देवकिव्विसियत्ताए कम्मं पगरेति,
तं जहा-अरहंताणं अवन्नं वयमाणे १, अरहंतपन्नत्तस्स धम्मस्स
अवन्नं वयमाणे २, आयरिय उव्वज्झायाणमवन्नं वदमाणे ३,
चाउवन्नस्स संघस्स आवन्नं वयमाणे ४ ॥ सू० १८ ॥

छाया—चतुर्विधोऽपध्वंसः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-आसुरः १, आभियोगः २,
साम्मोहः ३ दैवकिल्विषः ४।

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आसुरतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-कोपशीलतया १
प्राश्रुतशीलतया २ संसक्ततपःकर्मणा ३, निमित्ताजीवतया ४।

चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आभियोगतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-आत्मोत्कर्षेण १,
परपरिवादेन २, भूतिकर्मणा ३, कौतुककरणेन ४,

हैं ये देव असुर आदिके संयोगसे हुए हैं । इस प्रकार ये ६ सूत्र और
एक सामान्य सूत्र मिलकर कुल ७ ये सूत्र हैं ॥ सूत्र १७ ॥

७ सूत्रो अने अेक सामान्य सूत्र भणीने कुल सात सूत्रोनु प्रतिपादन अदीं
करवाभां आन्थुं छे. ॥ सू. १७ ॥

ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈર્જીવાઃ સામ્મોહતાયૈ કર્મ પ્રકુર્વન્તિ, તદ્યથા—ઉન્માર્ગદેશનતયા ૧,
માર્ગાન્તરાયેણ ૨, કામાઽઽશંસાપ્રયોગેણ ૩, અભિધ્યાનિદાનકરણેન ૪,

ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈર્જીવાઃ દેવકિલ્વિપતાયૈ કર્મપ્રકુર્વન્તિ, તદ્યથા—અર્હતામવર્ણં વદન્
અર્હતપ્રજ્ઞપ્તરય ધર્મરયાવર્ણં વદન્ આચાર્યોપાધ્યાયાનામવર્ણં વદન્, ચાતુર્વર્ણ્યસ્ય
સહસ્યાવર્ણં વદન્ ॥ સૂ. ૧૮ ॥

ટીકા—‘ચતુર્વિદ્ધે અવદ્ભંસે’ ઇત્યાદિ—અપધ્વંસઃ—ચારિત્રસ્ય—તત્ફલસ્ય
વા વિનાશઃ, ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા—આસુરઃ=અસુરભાવનાજનિતઃ. યદ્વા-
યેષ્વનુષ્ઠાનેષુ વર્તમાનો જીવોઽસુરત્વમર્જયતિ તૈરનુષ્ઠાનૈરાત્મનો ભાવનમાસુરઃ ૧,
તથા—આભિયોગઃ—અભિયોગભાવનાજનિતઃ આભિયોગઃ આજ્ઞાકારીત્વર્યઃ ૨ તથા—
સામ્મોહઃ—સંમુહ્યન્તીતિ સંમોહાઃ—મૂઢાત્માનો મિથ્યાદૃષ્ટયો દેવવિશેષાઃ, તેપામયં

‘ચતુર્વિદ્ધે અવદ્ભંસે પળ્લત્તે’ ઇત્યાદિ સૂત્ર ૧૮ ॥

ટીકાર્થ—ચાર પ્રકારકા અપધ્વંસ કહા ગયાહૈ જૈસે—આસુર ૧ અભિયોગ
૨ સામ્મોહ ૩ ઓર દૈવકિલ્વિષ ૪ ચારિત્ર અથવા ચારિત્રકે ફલકા
વિનાશ હોના, હસકા નામ અપધ્વંસ હૈ । જો અપધ્વંસ અસુર ભાવનાસે
હોતા હૈ, વહ અસુર અપધ્વંસ હૈ અથવા—જિન અનુષ્ઠાનોમ્ વર્તમાન
જીવ અસુરત્વકા ઉપાર્જક કરતા હૈ ઉન અનુષ્ઠાનોસે આત્માકો ભાવિત
કરના સો આસુરહૈ ૧ । જો અપધ્વંસ અભિયોગ ભાવનાસે જનિત હોતા
હૈ, વહ અભિયોગ અપધ્વંસ હૈ ૨ જો અપધ્વંસ સંમોહ ભાવનાસે ઉત્પન્ન
હોતા હૈ, વહ સામ્મોહ અપધ્વંસ હૈ, મૂઢાત્માવાલે જો મિથ્યાદૃષ્ટિ દેવ-
વિશેષ હૈ વે યહાં સંમોહ પદસે લિખે ગયે હૈ ઉનકી જો ભાવના હૈ વહ

“ચતુર્વિદ્ધે અવદ્ભંસે પળ્લત્તે” ઇત્યાદિ—(સૂ ૧૮)

ચારિત્ર અથવા ચારિત્રના ક્ષણનો વિનાશ થવો તેનું નામ “અપધ્વંસ”
છે તે અપધ્વંસના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) આસુર, (૨) અભિયોગ, (૩) સામ્મોહ અને (૪) દેવકિલ્વિષ જે
અપધ્વંસ અસુર ભાવનાથી થાય છે તે અપધ્વંસને આસુર અપધ્વંસ કહે
છે અથવા જે અનુષ્ઠાનોમાં વર્તમાન (રહેલો) જીવ અસુરત્વનું ઉપાર્જન કરે
છે એવા અનુષ્ઠાનોથી આત્માને ભાવિત (યુક્ત) કરવો તેનું નામ આસુરભાવ છે.

જે અપધ્વંસ અભિયોગ ભાવનાને લીધે જનિત હોય છે તેને અભિયોગ
અપધ્વંસ કહે છે. ખીજે અપધ્વંસ સંમોહ ભાવનાને લીધે ઉત્પન્ન થયેલો હોય
છે તેને સામ્મોહ અપધ્વંસ કહે છે.

મૂઢાત્માવાળા જે મિથ્યાદૃષ્ટિ દેવવિશેષ છે તેમને અહીં સંમોહ પદથી
અહણુ કરવામાં આવ્યા છે તેમની જે ભાવના છે તેનું નામ સંમોહ છે ૩ જે

सांमोहः, सांमोहभावनाजनितः अज्ञानभावनाजनित इत्यर्थः ३, तथा—देवकिल्बिषः—
देवकिल्बिषभावनाजनितः, इति, इह कन्दर्पभावनाजनितहृषः कान्दर्पोऽपध्वंसः
पञ्चम आगमोक्तोऽपि नोक्तश्चतुःस्थानकानुरोधत्, आगमै हि पञ्च भावना आह—

“कंदप्प १ देवकिल्बिष २ अभिभोगा ३ आसुरा ४ य संमोहा ।

एसा उ संकिल्ड्डा पंचविहा भावणा भणिया ॥ १ ॥

छाया—कान्दर्प १ देवकिल्बिषामियोग्या ३ आसुरी च साम्मोहा ।

एषातु संकिल्ड्डा पञ्चविधा भावना भणिता ॥ १ ॥

आसां भावनानां मध्ये यः संयतो यस्यां भावनायां वर्त्तते स तद्विधेषु देवेषु
गच्छन्ति चारित्रलेशमभावात् । यद्येतद्भावनायुक्तश्चारित्रहीनो भवेत्तदा तस्य देव-
लोकगमने भजना भवति—देवेषूत्पद्यते न चेति स भजनीयो भवति । उक्तञ्च—

सांमोहहै ३। तथा जो अपध्वंस देवकिल्बिष भावनासे जनित होता है
वह देवकिल्बिष अपध्वंसहै ४। कन्दर्पभावनासे जनित थी अपध्वंस
होता है पर वह यहाँ इसलिये नहीं लिया गया है कि यहाँ चतुःस्थान-
कका अनुरोध है । आगममें पांच भावनाएँ इस प्रकारसे कही गई हैं ।
“कंदप्पदेवकिल्बिष” इत्यादि । इन भावनाओंमेंसे जिस भावनामें
संयत जीव वर्तमान रहता है, वह उस प्रकारके देवोंमें जाता है, क्योंकि
उसके पास चारित्रका लेश रहता है, अतः उसके प्रभावसे वह सरकर
वहाँ जाता है यदि इन भावनाओंसे युक्त हुआ जीव चारित्रहीन हो
जाता है तो ऐसे उस जीवकी देवलोक गमनमें भजना होती है, अर्थात्
वह देवलोकमें उत्पन्न होता भी है, और नहीं भी होताहै कहा भी है—

अपध्वंस देवकिल्बिष भावनाथी जनित होय छे तेने देवकिल्बिष अपध्वंस
कडे छे. ४ कंदर्प भावनाथी जनित अपध्वंस पणु होय छे, पणु यार स्थानने
अधिकार आलते होवाथी तेने अही गण्णववामां आवेद नथी.

आगममां आ प्रकारनी पांच भावनाओ कही छे—“कंदप्प देवकिल्बिष”
इत्यादि. आ भावनाओमांनी जे भावनामां संयत एव वर्तमान रहे छे-
जे भावनाथी युक्त रहे छे—ते प्रकारना देवोमां ते उत्पन्न थर्ध नय छे,
कारणु के ते चारित्रना प्रभावथी मरीने देवलोकां उत्पन्न थर्ध नय छे. कदाच
आ भावनाओथी युक्त थयेले एव चारित्रहीन थर्ध नय तो ओवे एव
देवलोकां नय छे पणु अरी अने नथी पणु जते. ओटवे के ओवा एवतुं
देवलोकागमन अवस्थ थाय छे ज ओवु नथी, पणु लजनाथी (विकल्पे) थाय
छे, ओम संभजणुं कहु पणु छे के “सो संजओ वि सया सु” इत्यादि—जे

“ જો સંજઓ વિ યયા સુ અપ્પસત્યાસુ વદ્દહિ કહંચિ ।

સો તવિવહેસુ ગચ્છહિ, સુરેસુ મહ્થો ચરણહીનો ॥ ૧ ॥ ”

હાયા—યઃ સંયતોઽપ્યેતાસુ, અપશસ્તાસુ વર્તેતે કથચ્ચિત્ ।

સ તદ્વિષ્ટેષુ ગચ્છતિ, સુરેષુ મજનીયશ્વરણહીનઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પૂર્વમાસુરાદિરપધ્વંસ ઉક્તઃ, સ ચાસુરત્વાદિનિવન્ધન ઇત્યસુરાદિભાવના-
સ્વરૂપભૂતાન્યસુરાદિત્વસાધનકર્મણાં કારણાનિ ચતુર્મિઃ—સૂત્રૈરાહ—“ ચડહિ
ઠાણેહિ ” ઇત્યાદિ—જીવના મિઃ સ્થાનૈરાસુરતાયૈ—અસુર એવ આસુરઃ, તદ્ભાવસ્તત્તા,
તમ્યૈ કર્મ—અસુરાયુષ્કાદિ પ્રકુર્યન્તિ, તદ્વથા—ક્રોપશીલતયા—ક્રોધસ્વભાવતયા ૧,

“ જો સંજઓ વિ સયા સુ ” ઇત્યાદિ । જો સંયત જીવ જન અપ્રશસ્ત
ભાવનાઓમાં રહતા હૈ વહ મરકર ઉન દેવોમાં જાતા હૈ ઓર ચરણહીન-
ચારિત્રહીન—જીવમાં વહાં જાનેકી મજના હૈ । આસુરાદિ રૂપ જો અ-
ધ્વંસ કહા ગયા હૈ વહ અસુરત્વાદિ હૈ, કારણ જિસકા એસા હોતા હૈ ।
હસલિષે અવ સૂત્રકાર અસુરાદિ ભાવનાકે સ્વરૂપભૂત જો કારણ હૈ
અર્થાત્ અસુરતા આદિકે સાધનભૂત કર્મોંકે જો કારણ હૈ ઉનકા કથન
ચાર સૂત્રોંસે કરતે હૈ—“ ચડહિ ઠાણેહિ ” ઇત્યાદિ—જીવ જન વક્ષ્યમાણ
ચાર કારણોંસે અસુરતાકે સાધનભૂત કર્મોંકા ઉપાર્જન કરતે હૈ—વે
ચાર કારણ યે હૈ—ક્રોપશીલતા, ક્રોધ સ્વભાવતા જરા જરાસી વાતમાં
ક્રોધકા આવેગ આજાના ચેહરે ડપર સદા આંખોંકા ચઢા રહના
ઇત્યાદિ રૂપસે જો જીવકા સ્વભાવહૈ વહ ક્રોપશીલતા હૈ । ઇસક્રોપશી-

સંયત એવ આ અપ્રશસ્ત ભાવનાઓમાં રહે છે તે મરીને ઉપર્યુક્ત દેવોમાં
ઉત્પન્ન થાય છે, પણ ચરણહીન (ચારિત્રહીન) એવનું ત્યાં વિકલ્પે ગમન થાય
છે. એટલે કે એવો એવ દેવલોકમાં જાય છે પણ ખરો અને નથી પણ જતો.

અસુરાદિ રૂપ જે અપધ્વંસ કહ્યા છે, તે અસુરત્વ આદિ રૂપ કારણવાળા
હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર અસુરાદિ ભાવનાના સ્વરૂપભૂત જે કારણો છે
એટલે કે અસુરતા આદિના સાધનભૂત કર્મોના જે કારણો છે તેમનું ચાર સૂત્રો
દ્વારા કથન કરે છે—“ ચડહિ ઠાણેહિ ” ઇત્યાદિ—

એવ નીચેના ચાર કારણોને લીધે અસુરતાના સાધનભૂત કર્મોનું ઉપા-
ર્જન કરે છે—(૧) ક્રોપશીલતા અથવા ક્રોધ સ્વભાવતા—વાત વાતમાં ગુસ્સે
ધવું, ક્રોધથી આંખો લાલ કરવી, ડાળા કાઢવા, ક્રોધને લીધે લાલચોળ મુખા-
કૃતિ કરવી, ઇત્યાદિ રૂપ એવનો જે સ્વભાવ હોય છે તેનું નામ ક્રોપશીલતા
છે તે ક્રોપશીલતાને કારણે એવ અસુરપર્યાયના કારણભૂત આયુષ્ક આદિ

प्राभृतशीलतया कलहशीलतया २, संसक्ततपःकर्मणा-आहारोपधिशय्यादि-
प्रतिबद्धभावतपश्चरणेन ३, निमित्ताजीवतया-भूकम्पादिनिमित्तं कथयित्वा
जीवननिर्वाहकतया ४, इति अयमर्थोऽन्यत्रैवमुक्तः-

“ अनुबद्धविग्रहो वि य, संसक्ततपो निमित्तमाएसी ।

णिक्रिणिराणुकंपो, आसुरियं भावणं कुणइ ॥ १ ॥ ”

छाया—अनुबद्धविग्रहोऽपि च, संसक्ततया निमित्तादेशी ।

निष्कृपो निरणुकम्पः, आसुरिकीं भावनां करोति ॥ १ ॥ इति ॥

लतासे जीव असुरपर्यायके कारणभूत आयुष्क आदि कर्मों का बन्ध करता है । दूसरा कारण है प्राभृतशीलता कलहशीलताका नाम प्राभृतशीलता है । जरासा भी निमित्त मिलाकि क्लेश करने के लिये तैयार हो जाना आगेपीछेका कुछ भी विचार न करके जो भी मनमें आवे, बकने लगना इत्यादि रूपसे जो परिणति होती है वह कलहशीलता है, इस कलहशीलतासे भी जीव असुरपर्यायके साधनभूत कर्मों का उपार्जन करता है । तीसरा कारण है आहार उपधि शय्या आदिमें प्रतिबद्धभावसे तपश्चरण करना । तथा चौथा कारण है भूकम्पादिका कथन करके जीवनका निर्वाह करना ४ । यह कथन अन्यत्र इस प्रकारसे कहा हुआ है—“ अनुबद्ध विग्रहो वि य ” इत्यादि । जो व्यक्ति अनुबद्ध विग्रहवाला होता है रातदिन कलह कजिया करनेके स्वभावसे बंधा रहता है १ । जो संसक्त तपस्या करता है, आहारादि में जिसकी लोलुपता रहती है, और

कर्मोना बन्ध करे छे, अने तेथी भरीने असुरोमां उत्पन्न थाय छे.

(२) प्राभृतशीलता—वात वतमां अगडो करवाने तैयार थनुं, आगण प छणने।
विचार कथां विना आवे तेवो अकवाट करवो धत्यादि ३५ ने परिणति थाय
छे तेनुं नाम कलहशीलता अथवा प्राभृतशीलता छे. आ कलहशीलताने कारणे

पणु एव असुरपर्यायना साधनभूत कर्मोनुं उपार्जन करे छे. (३) आहार,

उपधि, शय्या आदिमां लोलुपतापूर्वक तपश्चरणु करवाथी पणु एव असुर-
पर्यायमां जवा योग्य कर्मोनुं उपार्जन करे छे (४) लूकंप आदि थवानुं

लविष्य लाभीने दोके पर प्रभाव पाडीने जावापीवानी सारी सारी सामथ्री

अेकत्र करतार एव पणु असुरपर्यायमां जवा योग्य कर्मोना बन्ध करे छे.

आ विषयने अनुबद्धीने अन्य ग्रन्थमां आ प्रभाणु कछु छे—“ अनुबद्धविग्रहो

वि य ” धत्यादि-ने एव अनुबद्ध विग्रहवाणो डाय छे, रातदिन कलह

करवाना स्वभाववाणो डाय छे, १ संसक्त तपस्या करे छे—तपस्या करवा छतां

आहारादिमां नेनी लोलुपता आलु ज रडे छे, २ ने दोकरंजतने भाटे निमित्ता-

तथा-चतुर्भिः स्थानैर्जीवा आभियोग्यतायै अभियोगः - व्यापारणं, तद्योग्याः-अभियोग्याः, त एवाभियोग्या-क्रिङ्करदेवविशेषाः, तद्भाव आभियोग्यता, तस्यै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-आत्मोत्कर्षेण-स्वगुणगर्षेण १, परपरिवादेन-अन्यदीयदोषपरिकीर्त्तनेन २, भूतिकर्मणा-भूत्या-भस्मना, उपलक्षणत्वात्-

तपस्या करता है, लोकरंजनके लिये जो विभिन्नादेशी होकर अच्छे २ खाने पीनेके साधनोंको जुटाता रहता है ३, जो दयासे और अनुकंपासे रहित होता है ४, ऐसी वह व्यक्ति आसुरी भावनावाला माना गया है। इन चार कारणोंसे जीव आभियोग्यता भृत्यपनेके योग्य कर्मोंका बन्ध करता है-जैसे-आत्मोत्कर्ष अपने गुणोंके गौरवका कथन करना अर्थात् अपनी झूठी इलावा करना अपने भीतर रहे हुए मामूली गुणको असाधारण समझना, वृथा अहङ्कारसे फूले हुए रहना यह सब यहाँ आत्मोत्कर्षसे लिया गया है। स्वोत्कर्ष स्वाभिमानमें और इसमें अन्तर है स्वोत्कर्ष भावनावाला व्यक्ति अपने द्वारा ऐसे कार्य करनेसे अपने आपको बचाता रहता है कि जिसमें उसकी आत्माका पतन होता हो गृहीत चरित्रमें बाधा आती हो सदाचारमें दूषण लगना हो, कषापादिकोंकी वृद्धि होती हो १ दूसरा कारण है-पर परिवाद-दूसरेके दोषोंको प्रकट करना अर्थात् दूसरोंके वास्तविक गुणोंको या निंदाके अभिप्रायसे

देशी (लविष्यवाणी लाभनारे) यद्यने सारी सारी भवापीवानी सामथ्रीको अेकत्र करतो रडे छे, ३ वे क्या अने अनुकंपा लावथी रडित होय ४ छे, अेवा एवने आसुरी लावनावाणे मानवामां आये छे -

नीचेना चार कारणेने दीधे एव अभियोगताने योग्य कर्मोना बन्ध करे छे—(१) आत्मश्लाघा-पोताना गुणानुं गौरव करवुं, पोताना सामान्य गुणने पण असाधारण समज्जवे, ओटी अडाछ डाकवी अने मिथ्यालिमानमां ज दीन रडेछुं तेनुं नाम आत्मोत्कर्ष (आत्मश्लाघा) छे. स्वोत्कर्ष, स्वाभिमान अने आत्मोत्कर्षमां धणे तक्षवत छे स्वोत्कर्ष लावनावाणे माणुस तो पोताना आत्मानुं पतन थाय, गृहीत चरित्रमां दोष लागी जय, सदाचारने दोष थय जय अने कषापादिकोनी वृद्धि थाय, अेवी प्रवृत्तिथी हर ज रडे छे, त्यारे आत्मश्लाघा करनारे एव तो उपर्युक्त प्रवृत्तिमां ज दीन रडे छे.

भीनुं कारण—परपरिवाद-अन्यना दोषेने प्रकट करवा तेनुं नाम परपरिवाद छे परपरिवाद करनारे एव अन्यना वास्तविक गुणोने नेवाने पहले

मृत्तिकया सूत्रेण वा कर्म-रक्षार्थं वसत्यादिपरिवेष्टनं-भूतिकर्म, तेन ३, कौतुककरणेन सौभाग्यादिनिमित्तं स्नपनकादिकरणेनेति ४। इयं भावनाऽन्यत्रैवसुक्ता-

“ कोउयभूर्ईकम्मे, पमिणापसिणे निमित्तमाजीवी ।

इद्विरससायगुरुओ, अभिओगं भावणं कुणइ ॥ १ ॥ ”

छाया—“ कौतुकभूतिकर्मा, प्रश्नाप्रश्नः निमित्ताजीवी ।

ऋद्विरसशातगुरुकः, अभियोग्यां भावनां करोति ॥ १ ॥ इति ।

तथा—चतुर्भिः स्थानैर्जीवाः साम्मोहतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-उन्मार्गदेशनतया-कुमार्गदेशनया १, मार्गान्तरायेण-मोक्षमार्गप्रवृत्तजनविघ्नकरणेन २,

उसके दोष रूपमें प्रकट करना २ मैं मन्त्रशास्त्र आदिका वेत्ता हूं, ऐसा प्रकट करनेके लिये मृत्तिकासे या सूत्रसे अपनी वक्षतिका आदिको रक्षा करनेके अभिप्रायसे परिवेष्टित करना यह भूति कर्म है ३ चौथा कारण है-कौतुककरण सौभाग्य आदिके निमित्त दूसरोंको स्नान आदि कराना ये चार कारण अन्यत्र इस प्रकारसे कहे गये हैं “ कोउयभूर्ईकम्मे ” इत्यादि । कौतुक कर्म करनेसे भूतिकर्म करनेसे हाथ आदि देखकर किसीका शुभाशुभ कहनेसे ऋद्विरस आदिमें गौरवशाली होनेसे जीव अभियोग्य भावनावाला माना जाता है, इस आवृत्तके वशावर्ती हुआ जीव अभियोग्य (भृत्य) जातिके देवोंमें उत्पन्न करानेवाले कर्मोंका बन्ध करता है

इन चार कारणोंसे जीव साम्मोहताके लिये कर्मोंका बन्ध करता है जैसे-कुमार्गका उपदेश देना १ मोक्षमार्गके साधनमें प्रवृत्त जनको

तेना दोषो न शोध्या करे छे, अने तेनी निहा करवा निमित्ते ते दोषोने प्रकट कर्या करे छे.

त्रीशु' कारण—भूतिकर्म—“ हुं मन्त्रशास्त्र आदिमां निपुण छुं, ' अथुं प्रकट करवाने भाटे मृत्तिका (भारी)थी अथवा सूत्रथी (दोराथी) पोताना रहे काणु आदिने रक्षा करवाना अभिप्रायथी परिवेष्टित करवुं तेनुं नाम भूतिकर्म छे. येशुं कारण कौतुककरण—सौभाग्य आदिने निमित्ते अन्यने स्नानादि करावपुं तेनुं नाम कौतुककरण छे आ चार कारणोने अन्यत्र आ प्रमाणे अताव्या छे—“ कोउयभूर्ईकम्मे ” इत्यादि—कौतुकर्म करवाथी, भूतिकर्म करवाथी, हाथ आदि जेधने कोधनुं शुभाशुभ कहेवाथी अने ऋद्वि, रस आदिमां गौरवशाली थवाथी, मिथ्यालिमान करवाथी एव अभियोग्य लावनावाणो गणाय छे ते लावनाथी युक्त थयेवो एव अभियोग्य नतिना देवोमां उत्पन्न करावनाश कर्मोना बन्ध करे छे.

आ चार कारणोने लीधे एव साम्मोहताने योग्य कर्मोनुं उपावर्न

कामाशंसाप्रयोगेण-शब्दादिकामाभिलाषकरणेन ३, अभिध्यानिदानकरणेन-
अभिध्या-लोभः-अभिकाङ्क्षा, तेन निदानकरणम्-' एतस्मात्तपः प्रभृतेश्चक्रव-
र्त्यादिका ऋद्धिर्मे भवतु' इत्येवं परभवसंबन्धचक्रवर्त्यादिपदप्रार्थनम्, तेन ।
इयमपि भावनाऽन्यत्रैवमुक्ता—

विघ्न उपस्थित करना २ शब्दादि कामोंकी अभिलाषा करना ३ और
लोभके चक्रवर्ती होकर निदान (नियाणा) करना ४ जीव कुमार्गकी
देशनासे सुमार्गका एक प्रकारसे लोप करता है, ऐसा जीव स्वयं भी
कुमार्गगामी होता है तथा दूसरोंका उस पर चलनेसे उसके द्वारा
उपार्जित पाप कर्मोंका भागी होता है, अतः वह साम्मोहनाके लिये कर्मोंका
बन्धक होता है, मोक्षमार्गकी आराधनामें प्रवृत्तिशाली जीवके द्वारा
सन्मार्गका प्रचार होता है, जीव उसके कहनेसे कुमार्गका त्याग कर
सुमार्ग पर चलते हैं । अतः ऐसे जीवके लिये जो विघ्नभूत होता है
उसकी आराधनामें विघ्न उपस्थित करना है वह भी साम्मोहनाके योग्य
कर्मोंका उपार्जन करता है । इसी प्रकारसे कामाशंसाप्रयोग आदिमें भी
समझ लेना चाहिये । तप करते हुए इस तपस्या आदिके फलसे चक्रवर्ती
आदिकी विभूति मुझे मिले ऐसी चाहना करना इसका नाम निदान है
यह भावना भी अन्यत्र इस प्रकारसे कही गई है—

करे छे—(१) कुमार्गने उपदेश देवाथी, (२) मोक्षमार्गना साधनमां प्रवृत्त
भाणुसनी प्रवृत्तिमां विघ्न नाणवाथी, (३) शब्दादि कामलोगेनी अलिदाषा
करवाथी अने (४) लोभने आधीन थर्धने निदान (नियाणु) करवाथी कुमा-
र्गनी देशना आपनार एव सुमार्गने लोप करे छे अथवा एव पोते कुमार्ग-
गामी होय छे, ते कारणु अन्य द्वारा उपार्जित कर्मोना पणु लागीदार अने
छे, तेथी अथवा एव स मोहताने योग्य कर्मोना बन्धक अने छे.

मोक्षमार्गनी आराधनामां प्रवृत्त एव द्वारा सन्मार्गने प्रचार थाय
छे तेनी प्रेरणाथी एव कुमार्गने त्याग करीने सन्मार्गे थडी जय छे अथवा
एवनी प्रवृत्तिमां विघ्न नाणनार एव सांमोहताने योग्य कर्मोनुं उपार्जन
करे छे, अथवा प्रमाणु कामाशंसा प्रयोग आदिमां पणु समल देवुं, तपस्या
करती वधते अथवा लावना सेववी के तपस्थाना इण्डुप मने चक्रवर्ती आदिनी
विभूति प्राप्त थाय, ते प्रकारनी लावनातुं नाम न निदान अथवा नियाणु
छे आ लावनाने पणु अन्यत्र आ प्रमाणु वर्णवी छे—

“ उम्मगगदेसओ मग्गनासओ मग्गविप्पडीवत्ती ।

मोहेणं मोहेत्ता, संमोहं भावणं कुणइ ॥ १ ॥ ”

छाया—उन्मार्गदेशको मागनाशको मार्गविप्रतिपत्तिः ।

मोहेन च मोहयित्वा, सांमोही भावनां करोति ॥ १ ॥ इति ।

तथा—चतुर्भिः स्थानैर्जीवा देवकिल्बिषिकतायै चाण्डालस्थानीयदेवविशेषत्वाय कर्म प्रकुर्वन्ति तद्यथा—अर्हतां—जिनानाम् अवर्णं वदन्—निन्दां कुर्वन् । अयमर्थोऽन्यत्रैवमुक्तः—

“ उम्मगग देसओ ” इत्यादि । इस कारिकाका अर्थ स्पष्ट है इन चार कारणोंसे जीव-संयत प्राणी-देवकिल्बिषिकताके लिये-चाण्डालके जैसे स्थानापन्न देवविशेषत्वके लिये कर्मोंका बन्ध करता है । जैसे- अर्हन्तदेवका अवर्णवाद करना १ अर्हत्प्रज्ञस धर्मका अवर्णवाद करना २ आचार्य उपाध्यायका अवर्णवाद करना ३ और चतुर्विधसंघका अवर्णवाद करना ४ जिसमें जो दोष नहीं हो उनका उनमें प्रकट करना इसका नाम अवर्णवादहै । अर्हन्तदेवके विषयमें ऐसा कहना कि ये केवली हुएही नहींहै, सर्वज्ञ यदि ये होते तो उन्होंने मोक्षका सरल उपाय क्यों नहीं कहा ? जिनका आचरण करना शक्य नहीं है ऐसे दुर्गम कठिन उपाय क्यों कहेहैं ? इसी प्रकारसे अर्हत्प्रज्ञस धर्मके विषयमें आचार्य उपाध्यायके विषयमें एवं साधु साध्वी श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध संघके विषयमें भी अवर्णवाद समझ लेना चाहिये । उक्तं

“ उम्मगगदेसओ ” इत्यादि—आ चार कारणोंने लीधे ७व (संयत ७व) देवकिल्बिषिकेमां उत्पन्न थवाने योग्य कर्मोंने बन्ध करे छे—(किल्बिषिक देवो हलकी केटिना देवो गणाय छे. देवोमां तेमनुं स्थान चांडाल जेवुं छे.) (१) जिनेन्द्र देवने अवर्णवाद करवाथी, अर्हत् प्रज्ञस धर्मने अवर्णवाद करवाथी, (३) आचार्य उपाध्यायने अवर्णवाद करवाथी, अने (४) चतुर्विध संघने अवर्णवाद करवाथी

जे व्यक्तिमां जे दोष न होय ते दोषनुं आरोपण करवुं तेनुं नाम अवर्णवाद छे. जिनेन्द्र देवना विषयमां कदाय कोर्छ आ प्रमाणे कडे के “ तेओ केवणज्ञानी हुता न नर्ही. जे तेओ सर्वज्ञ होय ते मोक्षप्राप्तिने सरण मार्ग अताववाने णददे जेनुं आचरण शक्य न होय ओवा दुर्गम कठिन उपाय तेमणे शा कारणे अताव्या हसे ! ” आ प्रमाणे कडेनार जिनेन्द्र देवने अवर्णवाद करनारे गणाय छे. जे न प्रमाणे अर्हत् प्रज्ञस धर्मना विषयमां, आचार्य अने उपाध्यायना विषयमां, तथा चतुर्विध संघना विषयमां पण अवर्णवाद विषेनुं कथन समजवुं. कहुं पण छे के—

“ નાણસ કૈવલીણં ધર્માયરિયાણં સંઘસાહૂણં ।
માઈ અવર્ણવાઈ કિલ્વિસિયં ભાવણં કુણઈ ॥ ૧ ॥

છાયા—જ્ઞાનસ્ય કૈવલિનાં ધર્માચાર્યાણાં સંઘ-સાધૂનામ્ ।

માયી અવર્ણવાદી કૈલ્વિષિકીં ભાવનાં કરોતિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ,

તથા—અર્હત્પ્રજ્ઞસ્ય ધર્મસ્ય અવર્ણં વદન્ તથા—આચાર્યોપાધ્યાયાનામવર્ણં
વદન્ ૨, તથા—ચાતુર્વર્ણ્યસ્ય સહુસ્યાવર્ણં વદન્ ૪ । ઇતિ ।

યદ્યપીહ કન્દર્પભાવના ચતુઃસ્થાનકાનુરોધાન્નોક્તા, તથાપિ ભાવનાપ્રસન્નાત
સા પ્રદર્શયતે—

“ કન્દપ્પે કુક્કુહ્ણ, દવસીલે યાવિ હાસનકરે ય ।

વિમ્હાવિતો ય પરં, કન્દપ્પં ભાવણં કુણઈ ॥ ૧ ॥ ”

છાયા—કાન્દર્પઃ કૌકુચિયતઃ દ્રવશીલશ્રાપિ હાસનકરશ્ચ ।

વિસ્માપયંશ્ચ પરં કાન્દર્પીં ભાવનાં કરોતિ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અયમર્થઃ—કાન્દર્પઃ—કન્દર્પકથાકાસ્કઃ, કૌકુચિયતઃ—ખાણ્ડવચ્ચેષ્ટાકારી દ્રવ-

ચ—“ નાણસ કૈવલીણં ” ઇત્યાદિ । તાત્પર્યં હસ ગાથાકા યહી હૈ, કિ
માયી અવર્ણવાદી અર્હન્તકા અર્હન્ત પ્રજ્ઞસ ધર્મ આદિકા અવર્ણવાદ કરતા
હુઆ કિલ્વિષિકી ભાવનાવાલા હોતાહૈ । યદ્યપિ યહાં ચતુઃસ્થાનકકે અનુ-
રોધસે કન્દર્પ ભાવના નહીં કહી ગઈહૈ, ફિર મી ભાવનાકે પ્રસન્નસે વહ
એસી હોતી હૈ યહ પ્રકટ કિયા જાતા હૈ—

“ કન્દપ્પે કુક્કુહ્ણ ” ઇત્યાદિ—જો કન્દર્પકી કથા કરનેવાલા
હોતા હૈ ખાણ્ડકી તરહ કાયસે કુચેષ્ટા કરતા હૈ અહ્કારકે વશ હોકર

“ નાણસ કૈવલીણં ” ઇત્યાદિ—

આ ગાથાને ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—માયી અવર્ણવાદી અર્હન્ત
ભગવાનને, કૈવલીપ્રજ્ઞધર્મને અને આચાર્ય આદિને અવર્ણવાદ કરવાને લીધે
કૈલ્વિષિકી ભાવનાથી યુક્ત થાય છે. તેથી તે કિલ્વિષિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થવા
યોગ્ય કર્મોને બન્ધ કરે છે. જે કે અહીં ચારં સ્થાનોને અધિકાર આલી
રહ્યો છે તેથી પાંચમી કંદર્પ ભાવનાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું નથી. છતાં
ભાવનાઓનું પ્રતિપાદન ચાલતું હોવાથી અહીં પ્રસંગ સાથે અનુરૂપ હોવાથી
કંદર્પ ભાવનાનું કેવું સ્વરૂપ હોય છે તે ટીકાકાર પ્રકટ કરે છે.

“ કન્દપ્પે કુક્કુહ્ણ ” ઇત્યાદિ—

જે કંદર્પની કથા કરનારો હોય છે, ભાંડની જેમ શરીર વડે કુચેષ્ટાઓ
કરનારો હોય છે, અહંકારને અધીન થઈને શીઘ્ર ગમનકારી હોય છે, ભાષ-

शीलः-गर्वाच्छीघ्रगमनभाषणादिकारी, हासनकर'-वेषवचनादिना स्वपरहासोत्पादकः परम्-अन्यं विस्मापयन्-विस्मयमुत्पादयंश्च कान्दर्पी भावनां करोति॥सू.१८॥

पूर्वमपध्वंस उक्तः, स च प्रत्रज्यासम्पन्नस्य भवतीति प्रत्रज्यास्वरूपं निरूपयितुमष्टसूत्रीमाह—

मूलम्-चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा-इहलोगपडिबद्धा १, परलोगपडिबद्धा २, दुहओलोगपडिबद्धा ३, अप्पडिबद्धा ४ । (१)

चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा,-पुरओ पडिबद्धा १, मग्गओ पडिबद्धा २, दुहओ पडिबद्धा ३, अप्पडिबद्धा ४, (२) ।

चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा-ओवायपव्वज्जा १, अक्खायपव्वज्जा २, संगरपव्वज्जा ३, विहगगइपव्वज्जा ४, (३)

चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा-तुयावइत्ता १, पूयावइत्ता २, मोयावइत्ता ३, परिपूयावइत्ता ४ (४) ।

चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा-नेडखइया १, भडखइया २, सीहखइया ३, सियालखइया ४ (५) ।

चउव्विहा किसी पणत्ता, तं जहा-वाविया १, परिविविया २, णिंदिया ३, परिणिंदिया ४, (६) एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा-वाविया १, परिविविया २, णिंदिया ३, परिणिंदिया ४ (७) ।

जो शीघ्र गमनकारी एवं भाषणादिकारी होता है अपने वेष और वचन आदिसे जो स्व और परको हास्यका उत्पादक होता है, तथा जो हरएक तरहसे दूसरोंको विस्मय (आश्चर्य)का उत्पन्न करनेवाला होता है वह कान्दर्पी भावनावाला होता है ॥ सू० १८ ॥

षुद्धि करनार डोय छे, पोत ना वेष अने वचनथी ने-स्वने अने अन्यने उसावनारो डोय छे, तथा ने अनेक प्रकारे अन्य डोडोमां विस्मय (आश्चर्य) उत्पन्न करनारो डोय छे, ओवा पुरुषने कान्दर्पी भावनावाणो डडे छे. सू. १८

चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता, तं जहा—धन्नपुंजियसमाणा
१, धन्नविरहियसमाणा २, धन्नविक्खत्तसमाणा ३, धन्नसंक-
हियसमाणा ४ ॥ सू० १९ ॥

छाया—चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—इहलोकप्रतिवद्धा १, परलोक-
प्रतिवद्धा २, द्विधातो लोकप्रतिवद्धा ३, अप्रतिवद्धा ४ । (१)

चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—पुरतः प्रतिवद्धा १, मार्गतः प्रतिवद्धा
२ द्विधातः प्रतिवद्धा ३, अप्रतिवद्धा ४ । (२)

चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—अवपातप्रत्रज्या १, आख्यातप्रत्रज्या २,
सङ्गरप्रत्रज्या ३, विहगगतिप्रत्रज्या ४ । (३)

चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—तोदयित्वा १, प्लावयित्वा २, मोच-
यित्वा ३, परिप्लुतयित्वा ४ । (४) ।

चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—नटखादिता १, भटखादिता २, सिंह-
खादिता ३, गालखादिता ४ । (५)

चतुर्विधा कृषिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—उप्ता १, पर्युसारा, निन्दिता ३, परिनिन्दिता
४ । (६) । एवमेव चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—उप्ता १, पर्युप्ता २,
निन्दिता ३, परिनिन्दिता ४ । (७) ।

चतुर्विधा प्रत्रज्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा—धान्यपुञ्जितसमाना १, धान्यविरेलित-
समाना २, धान्यविक्षिप्तसमाना ३, धान्यसङ्कर्षितसमाना ४ । (७) ॥ सू० १९ ॥

टीका—“ चउव्विहा पव्वज्जा ” इत्यादि—प्रत्रज्या—पञ्चमहाव्रतग्रहणलक्षणा,
सा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—इहलोकप्रतिवद्धा—इहलोके इहजन्मनि ये जीवननिर्वा-

यह अपध्वंसरूप प्रत्रज्यासम्पन्न मनुष्यको होता है अतः अब सूत्रकार
प्रत्रज्याका स्वरूप अष्ट सूत्रीसे कहते हैं—

टीकार्थ—“ चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता ” इत्यादि—सूत्र १९ ॥

प्रत्रज्या चार प्रकारका कहा गया है जैसे—इहलोकप्रतिवद्धा १
परलोकप्रतिवद्धा २ उभयलोकप्रतिवद्धा ३ और अप्रतिवद्धा ४ पंच

आ अपध्वंसनेो सद्वलाव प्रत्रज्या संपन्न मनुष्योभा ७ डोय छे. तेथी
डवे सूत्रकार प्रत्रज्याना स्वइपत्तुं आठ सूत्रो द्वारा निइपथु करे छे—

टीकार्थ—“ चउव्विहा पव्वज्जा पणत्ता ” इत्यादि—

प्रत्रज्या चार प्रकारनी छडी छे—(१) इहलोक प्रतिवद्धा, (२) परलोक
-प्रतिवद्धा, (३) उभयलोक प्रतिवद्धा, (४) अप्रतिवद्धा

હાદયસ્તન્માત્રપ્રયોજને પ્રતિવદ્ધા-મનસિ સંકલ્પિતા યા સા ઇહલોકપ્રતિવદ્ધા પ્રવ્રજ્યા, સા ચ એતજ્જન્મજીવનનિર્વાહાદિમાત્રાર્થિનાં ભવતિ ૧, તથા-પરલોક પ્રતિવદ્ધા-પરલોકે-જન્માન્તરે યે-કામાદયસ્તત્પ્રયોજને પ્રતિવદ્ધા યા સા પરલોક-પ્રતિવદ્ધા, સા ચ જન્માન્તરકામાર્થિનાં ભવતિ ૨, તથા-દ્વિધાતો લોકપ્રતિ-વદ્ધા=દ્વિધાતઃ-દ્વિપ્રકારી યૌ લોકૌ-એતજ્જન્મ-જન્માન્તરે તત્ર યે કામાદયસ્તત્ર પ્રતિવદ્ધા યા પ્રવ્રજ્યા સા તથા, સા ચૈહલૌકિકપારલૌકિકસુખાર્થિનાં જનાનાં ભવતિ ૩, તથા-અપ્રતિવદ્ધા-ઇહલોકપરલોકાશંસારહિતલક્ષણા, પ્રવ્રજ્યા, સા ચ વિશિષ્ટસામાયિકસમ્પન્નાનાં મોક્ષાર્થિનાં ભવતિ ૪। (૧) ।

મહાવ્રતોંકા ગ્રહણ કરના ઇસકા નામ પ્રવ્રજ્યાહૈ । જો પ્રવ્રજ્યા ઇસ લોકમેં જીવનનિર્વાહાદિ રૂપ પ્રયોજનસે પ્રતિવદ્ધ હોતીહૈ, વહ ઇહલોક પ્રતિવદ્ધ-પ્રવ્રજ્યા હૈ ૧ અર્થાત્ જો મનમેં સંકલ્પિત હોતી હૈ વહ ઇહલોક પ્રતિ-વદ્ધપ્રવ્રજ્યા હૈ એસી યહ પ્રવ્રજ્યા ઇહ જન્મમેં જીવનનિર્વાહાદિ માત્રકે અભિલાષિયોંકી હોતી હૈ ૧। જો પ્રવ્રજ્યા પરલોક સમ્બન્ધી કામાદિક ભોગને રૂપ પ્રયોજનસે પ્રતિવદ્ધ હોતીહૈ, વહ પરલોકપ્રતિવદ્ધપ્રવ્રજ્યા હૈ એસી યહ પ્રવ્રજ્યા પરલોકમેં કામાદિકોંકે ભોગનેકે અભિલાષિયોંકી હોતી હૈ ૨। જો પ્રવ્રજ્યા ઇહલોક સમ્બન્ધી ઓર પરલોકસમ્બન્ધી કામભોગાદિક ભોગનેકી અભિલાષાસે પ્રતિવદ્ધ હોતીહૈ, વહ ઉભયલોક પ્રતિવદ્ધ પ્રવ્રજ્યા હૈ ૩। એસી યહ પ્રવ્રજ્યા ઇહલોક ઓર પરલોકકે સુખાભિલાષી પુરુષોંકી હોતીહૈ । તથા જો પ્રવ્રજ્યા ઇહલોક ઓર પરલોક સમ્બન્ધી સુખોંકો ભોગ-

પાંચ મહાવ્રતોને ગ્રહણ કરવા તેનું નામ પ્રવ્રજ્યા છે. જે પ્રવ્રજ્યા આ લોકમાં જીવનનિર્વાહ આદિ રૂપ પ્રયોજનથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે, એટલે કે આ લોકના સુખની આકાંક્ષાપૂર્વક લેવામાં આવી હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને ઇહલોક પ્રતિબદ્ધા કહે છે. જે પ્રવ્રજ્યા પરલોક સંબંધી કામાદિક ભોગરૂપ પ્રયોજનથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને પરલોકપ્રતિબદ્ધપ્રવ્રજ્યા કહે છે. પરલોકમાં (દેવલોક આદિમાં) કામભોગો ભોગવવાની અભિલાષાવાળાની પ્રવ્રજ્યા આ પ્રકારની હોય છે. જે પ્રવ્રજ્યા આલોક સંબંધી અને પરલોક-સંબંધી કામાદિક ભોગવવાની ઇચ્છાથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે તે પ્રવ્રજ્યાને ઉભયલોક પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. આલોક અને પરલોકના સુખની અભિ-લાષાવાળા જીવોની પ્રવ્રજ્યા આ પ્રકારની હોય છે. જે પ્રવ્રજ્યા આલોક અને પરલોકના સુખોને ભોગવવાની આશંસાથી રહિત હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને

“ ચતુર્વિદ્યા પન્નજ્ઞા ” इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञता, तद्यथा-
पुरतः प्रतिबद्धा-पुरतः-अप्रतः प्रव्रज्यापर्यायभाविषु शिष्याहाराऽऽदिषु या प्रति-
बद्धा सा पुरतः प्रतिबद्धा १, तथा-मार्गतःप्रतिबद्धा मार्गतः-पृष्ठतः स्वजनादिषु
प्रतिबद्धा-स्वजनाद्याशंसासहितलक्षणा मार्गतःप्रतिबद्धा २, तथा-द्विघातः प्रति-

नेकी आशंसासे इच्छાસે રહિત હોતીહૈ વહ અપ્રતિબદ્ધ પ્રવ્રજ્યાહૈ ऐसी वह
प्रव्रज्या विशिष्ट सामायिकवाले मोक्षाभिलाषी जीवोंके होती है ४ (१)

फिर भी--प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गईहै--जैसे पुरतः प्रतिबद्ध १
मार्गतः प्रतिबद्ध २ उभयतः प्रतिबद्ध ३ और अप्रतिबद्ध ४ इनमें जो
प्रव्रज्या प्रव्रज्या पर्यायमें आगे होनेवाली वस्तुओंकी प्राप्तिकी चाहना
आकाङ्क्षासे प्रतिबद्ध होती है जैसे--मैं प्रव्रज्या लेकर अमुक २ प्रकारके
आहार प्राप्त करूंगा ऐसे २ शिष्य बनाऊंगा आदि १। जो प्रव्रज्या पीछेकी
वस्तुओंमें प्रतिबद्ध होनीहै, वह मार्गतः प्रतिबद्ध प्रव्रज्याहै २। जैसे दीक्षा
लेकर भी अपने सगे सम्बन्धियोंकी चाहनासे बंधे रहना यह दीक्षा
प्रव्रज्या मार्गतःप्रतिबद्ध इसलिये कही गई है कि प्रव्रज्या लेनेके बाद
स्वजन संबन्धियोंके मोहसे प्राणी सर्वथा रहित हो जाताहै, वह समस्त
जीवोंमें समभावी बन जाता है, परन्तु प्रव्रज्या लेकर भी अपने सगे

अप्रतिबद्धा प्रव्रज्या कडे છે એવી પ્રવ્રજ્યા વિશિષ્ટ સામાયિકવાળા મોક્ષા-
ભિલાષી જીવોની હોય છે. ૧ ૧ ।

વળી પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) પુરતઃ
પ્રતિબદ્ધ, (૨) માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધ, (૩) ઉભયતઃ પ્રતિબદ્ધ, (૪) અપ્રતિબદ્ધ.
જે પ્રવ્રજ્યા સાધુપર્યાયમાં પ્રાપ્ત થનારી વસ્તુઓની આકાંક્ષાથી પ્રતિબદ્ધ હોય
છે એવી પ્રવ્રજ્યાનું નામ પુરતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા છે. જેમકે પ્રવ્રજ્યા
અંગીકાર કરવાથી મને સારા સારા આહારની પ્રાપ્તિ થશે, શિષ્યોની પ્રાપ્તિ
થશે આ રીતે આગામી ભૌતિક લાભોની આકાંક્ષાપૂર્વક જે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ
કરાય છે તેને ‘ પુરતઃ પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા ’ કહે છે. ૧ જે પ્રવ્રજ્યા પાછળથી
(પૂર્વકાલિન) વસ્તુઓમાં પ્રતિબદ્ધ હોય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને “ માર્ગતઃ પ્રતિ-
બદ્ધા પ્રવ્રજ્યા ” કહે છે જેમકે દીક્ષા અંગીકાર કર્યા બાદ પણ પોતાના
સાંસારિક સગાસબંધીઓના સ્નેહપાશમાં બંધાયેલા રહેવું તેનું નામ માર્ગતઃ
પ્રતિબદ્ધા પ્રવ્રજ્યા છે. તે પ્રવ્રજ્યાને માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા કહેવાનું કારણ નીચે
પ્રમાણે છે--પ્રવ્રજ્યા લીધા પછી તો સગાસબંધીઓના મોહથી રહિત થઈ જવું
જોઈએ અને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે સમભાવ રાખવો જોઈએ. પણ પ્રવ્રજ્યા

વદ્વા-પુરતો માર્ગતશ્ચ પ્રતિવદ્વા ૩, તથા-અપ્રતિવદ્વા-ક્વચિદપિ ન પ્રતિવદ્વા-
સકલાઽઽશંસાવર્જિતા ધા (૨) ।

“ વડવિહાવવ્યજ્જા ” ઇત્યાદિ—પુનઃ પ્રવ્રજ્યા ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તથા-
અવપાતપ્રવ્રજ્યા-અવપાતાત્સદ્ગુરુસેવનતઃ પ્રાપ્તા યા પ્રવ્રજ્યા સા અવપાતપ્રવ્રજ્યા
૧, આખ્યાતપ્રવ્રજ્યા-આખ્યાતેન ધર્મોપદેશેન યા પ્રવ્રજ્યા સા, યદ્વા-પ્રવ્રજ્યાશબ્દ-
શ્રવણેન યા પ્રવ્રજ્યા સાઽઽખ્યાતપ્રવ્રજ્યા, આર્યરક્ષિતધ્રાતુઃ ફલગુરક્ષિતસ્યેવ ૨,
સમ્બન્ધિયોકે મોહસે બંધા રહતા હૈં ઉસકી વહ પ્રવ્રજ્યા હૈંસી કારણ
માર્ગતઃ પ્રતિબન્ધ કહી ગઈ હૈં ૨ । જો પ્રવ્રજ્યા પ્રવ્રજ્યા, પર્યાયકે આગે સમયમેં
હોનેવાલી વસ્તુઓંકી યાહનાસે ઓર માર્ગતઃ પીડેકી ત્યક્ત વસ્તુઓંકી
યાહનાસે પ્રતિવદ્ધ હોતી હૈં, વહ ઉભયતઃ પ્રતિવદ્ધ પ્રવ્રજ્યા હૈં ૩ । તથા જિસ
પ્રવ્રજ્યામેં સકલ આશંસા ઇચ્છાસે રહિતતા રહતી હૈં વહ પ્રવ્રજ્યા અપ્ર-
તિવદ્ધપ્રવ્રજ્યા હૈં ૪ (૨)

ફિરમી--પ્રવ્રજ્યા ચાર પ્રકારકી કહી ગઈ હૈં જૈસે-અવપાત પ્રવ્રજ્યા
૧ આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા ૨ સજ્જરપ્રવ્રજ્યા ૩ ઓર વિહગગતિપ્રવ્રજ્યા ૪
હનમેં જો પ્રવ્રજ્યા અવપાતસે-સદ્ગુરુકી સેવાસે પ્રાપ્ત હોતી હૈં, વહ
અવપાત પ્રવ્રજ્યા હૈં । જો પ્રવ્રજ્યા આખ્યાત-ધર્મોપદેશસે પ્રાપ્ત હોતી હૈં,
વહ આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા હૈં । જૈસે આર્યરક્ષિતકે માર્ગે ફલગુરક્ષિતકો પ્રાપ્ત
હુઈ પ્રવ્રજ્યા આખ્યાતપ્રવ્રજ્યા કહી ગઈ હૈં । જો પ્રવ્રજ્યા સંકેતસે પ્રાપ્તકી

લઈને પણ જે માણસ પોતાના સર્ગાસંબંધીઓના મોહમાં જકડાયેલો રહે
છે તેવી પ્રવ્રજ્યાને આ કારણે જ માર્ગતઃ પ્રતિબદ્ધા કહી છે, કારણ કે માર્ગતઃ
(પૂર્વકાલિન) મોહ આદિ બંધનો તેમાં ચાલુ જ રહે છે. ૨ જે પ્રવ્રજ્યા શ્રમણ
પર્યાયમાં પ્રાપ્ત થનારા ભાવી લાલોની ચાહનાથી અને પૂર્વકાલિન ત્યક્ત
વસ્તુઓની ચાહનાથી પ્રતિબદ્ધ હોય છે તે દીક્ષાને ઉભયતઃ પ્રતિબદ્ધા કહે
છે. ૩ જે પ્રવ્રજ્યા સકળ આશંસાઓથી (ઇચ્છાઓથી) રહિત હોય છે એટલે
કે માત્ર મોક્ષપ્રાપ્તિની અભિલાષાવાળી જે પ્રવ્રજ્યા હોય છે તેને અપ્રતિબદ્ધા
પ્રવ્રજ્યા કહે છે. ૪ । ૨ ।

પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) અવપાત પ્રવ્રજ્યા
આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા, (૨) સંજર પ્રવ્રજ્યા, (૩) વિહગગતિ પ્રવ્રજ્યા. જે
પ્રવ્રજ્યા અવપાતને લીધે (સદ્ગુરુની સેવાને લીધે) પ્રાપ્ત થાય છે, તેને
અવપાત પ્રવ્રજ્યા કહે છે જે પ્રવ્રજ્યા આખ્યાનથી-ધર્મોપદેશના શ્રવણથી
પ્રાપ્ત થાય છે તેને અથવા—“ પ્રવ્રજ્યા ” શબ્દ સાલગવાથી પ્રાપ્ત થાય છે તેને
આખ્યાત પ્રવ્રજ્યા કહે છે. જેમકે આર્યરક્ષિતના ભાઈ ફલગુરક્ષિતને પ્રાપ્ત

तथा-सङ्गरप्रव्रज्या-सङ्गरात्-सङ्केतात् प्रव्रज्या सङ्गरप्रव्रज्या, मेतार्यादीनामेव, यद्वा-‘ यदित्वं प्रव्रजसि तदाऽहमपि प्रव्रजिष्यामी ’ त्वेवं सङ्केतात् प्रव्रज्या सङ्गर-प्रव्रज्या २, तथा-विहगगतिप्रव्रज्या-विहगस्य-पक्षिणो गतिः-प्रकारो न्यायो विहगगतिः तथा प्रव्रज्या विहगगतिप्रव्रज्या=परिवारादि वियोगेनैकाकिनः, तेषां देशान्तरगमनेन वा या प्रव्रज्या सा (३) ।

यद्वा—पित्रादीनां प्रव्रज्याग्रहणेन पुत्रादीनामपि क्रमेण या प्रव्रज्या सा ४(३)।

“ चतुर्विधा पव्रज्या ” इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-तोदयित्वा-व्यथामुत्पात्र या प्रव्रज्या दीयते, मुनिचन्द्रपुत्रस्य सागरचन्द्रे-

जाती है जैसे-मेतार्य आदिकोंने प्राप्त की है वह-अथवा-यदि तुम प्रव्रजित होते हो, तो मैं भी प्रव्रजित होता हूँ । इस प्रकारके सङ्केतसे जो प्रव्रज्या प्राप्त की जाती है वह सङ्गर प्रव्रज्या है और जिस प्रव्रज्यामें परिवार आदि जनोंकी उपास्थिति न हो उनका वियोग हो ऐसी एकाकी अवस्थाकी जो प्रव्रज्या है, वह विहगगतिप्रव्रज्या है क्योंकि ऐसी प्रव्रज्या पक्षीकी जैसी गति होती है उस गतिसे ली गई होती है । अथवा घरको छोड़कर देशान्तरमें जा करके जो प्रव्रज्या ली जाती है, वह विहगगति प्रव्रज्या है (३) अथवा-पिता आदिके द्वारा प्रव्रज्या ग्रहण कर लेने पर जो पुत्रादिकों द्वारा बादमें दीक्षा लेली जाती है वह विहगगति प्रव्रज्या है अर्थात् पिताके दीक्षित होने पर पुत्र भी दीक्षित हो जाता है ४।

फिर भी--प्रव्रज्या चार प्रकारकी है जैसे-तोदयित्वा १ प्लावयित्वा २ मोचयित्वा ३ और परिप्लुतयित्वा ४ (४) व्यथाको उत्पन्न कराकर

थयेवी प्रव्रज्याने आभ्यात प्रव्रज्या कही छे. मेतार्य आदिनी जेम जे प्रव्रज्या संकेतथी प्राप्त थाय छे तेने संगर प्रव्रज्या कहे छे. अथवा तमे प्रव्रज्या अंगीकार करे तो हुं पण प्रव्रज्या अंगीकार करीश. आ प्रकारना संकेतपूर्वक जे प्रव्रज्या लेवामां आवे छे तेने ‘ संगर प्रव्रज्या ’ कहे छे. परिवार आदिनी अनुपस्थितिमां अथवा तेना वियोग रूप अेकाकी अवस्थामां जे प्रव्रज्या लेवामां आवे छे तेने विहगगति प्रव्रज्या कहे छे, कारणु के पक्षीनी जेवी गति होय छे जेवी गतिने कारणे जेनी प्रव्रज्या लेवामां आवी होय छे. अथवा घर छोडीने परदेशमां जेने जे प्रव्रज्या लेवामां आवे छे तेने विहगगति प्रव्रज्या कहे छे. अथवा पिता आदि द्वारा प्रव्रज्या लेवामां आवी होय अने त्यागभाद पुत्रादिके द्वारा जे प्रव्रज्या लेवामां आवे छे तेनुं नाम विहगगति प्रव्रज्या छे. । ३ ।

वर्णी प्रव्रज्याना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पणु कही छे—(१) तोदयित्वा (२) प्लावयित्वा, (३) मोचयित्वा, (४) परिप्लुतयित्वा. व्यथा उत्पन्न करा-

जेव सा तोदयित्वा प्रव्रज्योच्यते १, तथा-प्लावयित्वा-गमयित्वाऽन्यत्रनीत्वेति यावत् या प्रव्रज्या दीयते स प्लावयित्वा प्रव्रज्या, आर्यरक्षितवत्, यद्वा-‘पुयावइत्ता’ इत्यस्य पूतयित्वेतिच्छाया, तत्पक्षे-प्रायश्चित्तादिना दोषमपहत्य पूतं कृत्वा-पवित्रं कृत्वेत्यर्थः या प्रव्रज्या दीयते सा पूतयित्वा प्रव्रज्येत्युच्यते। ‘बुयावइत्ता’ इति पाठे तु उक्त्वा या प्रव्रज्या दीयते सा, गौतमेन कर्षकवत्, यद्वा-पूर्वपक्षरूपं वचनं कारयित्वा या प्रव्रज्या दीयते सा, यद्वा-निगृह्य प्रतिज्ञावचनं कारयित्वा या प्रव्रज्या सा उक्त्वा प्रव्रज्या २। तथा-मोचयित्वा-कस्माच्चिकार्याद्वियोज्य या

जो प्रव्रज्या दी जाती है वह तोदयित्वा प्रव्रज्या है, जैसी प्रव्रज्या मुनिचन्द्र पुत्रको सागरचन्द्रने दी है। जो प्रव्रज्या दूसरी जगह ले जाकर दी जाती है वह प्लावयित्वा प्रव्रज्या है, जैसे आर्यरक्षितको प्रव्रज्या दी गई है अथवा “पुयावइत्ता” की संस्कृत छाया “पूतयित्वा” ऐसी भी होती है, सो इसके अनुसार ऐसा अर्थ होता है कि प्रायश्चित्त आदिसे दोषोंकी शुद्धि करके जो प्रव्रज्या दी जाती है, वह पूतयित्वा प्रव्रज्या है “बुयावइत्ता” इस प्रकारके पाठमें तो कह करके जो प्रव्रज्या दी जाती है वह “उक्त्वा” प्रव्रज्या है जैसे गौतमने कर्षक(किसान)को दी है अथवा-पूर्वपक्षरूप वचन करवाकर जो प्रव्रज्या दी जाती है वह अथवा-निगृहीत(पराजित)करके प्रतिज्ञा वचन करवा करके जो प्रव्रज्या दी जाती है वह उक्त्वा प्रव्रज्या है अथवा-किसी कार्यसे छुड़ाकर जो प्रव्रज्या दी जाती है

वीने जे प्रव्रज्या आपवामां आवे छे तेनुं नाम तोदयित्वा प्रव्रज्या कडे छे. मुनिचन्द्र पुत्रने सागरचन्द्रे आ प्रकारनी प्रव्रज्या आपी छती. दीक्षार्थीने भील जग्यामे लध जधने जे प्रव्रज्या आपवामां आवे छे ते प्रव्रज्याने प्लावयित्वा प्रव्रज्या कडे छे आ प्रकारनी प्रव्रज्या आर्यरक्षितने देवामां आवी छती. अथवा “पुयावइत्ता” आ पदनी संस्कृत छाया “पूतयित्वा” थाय छे. तेनो अर्थ जे प्रमाणे थाय छे-प्रायश्चित्त आदि द्वारा दोषोनी शुद्धि करीने जे प्रव्रज्या आपवामां आवे छे तेनुं नाम ‘पूतयित्वा प्रव्रज्या’ छे.

“बुयावइत्ता” आ प्रकारने पाठ गृहीत करवामां आवे तो कहीने जे प्रव्रज्या आपवामां आवे छे तेने “उक्त्वा” “उक्त्वा प्रव्रज्या” कडे छे. आ प्रकारनी प्रव्रज्या गौतमे जेडुतने दीधी छती अथवा-पूर्वपक्ष ३५ वचन करावीने जे प्रव्रज्या आपाय छे तेनुं नाम उक्त्वा प्रव्रज्या छे. अथवा निगृहीत करीने प्रतिज्ञाबद्ध करीने पोते दीक्षा लेशे जेवा वचनथी आंधी लधने जे प्रव्रज्या आपाय छे तेने उक्त्वा प्रव्रज्या कडे छे. ‘मोचयित्वा प्रव्रज्या’ कोधने शुद्धाभी, हासत्व आदिमांथी मुक्त करावीने जे प्रव्रज्या

પ્રવ્રજ્યા દીયતે સા મોચયિત્વા પ્રવ્રજ્યા યથૈકેન સાધુના તૈલાર્થદાસત્વપ્રાપ્તમા-
ગિન્યૈ પ્રવ્રજ્યા દત્તા ૩, પરિપ્લુતયિત્વા-પરિપ્લુતં કૃત્વા=ઘૃતાદિભિઃ પરિપૂર્ણં કૃત્વા
ઘૃતાદિ ઓજયિત્વેસ્થર્થઃ યા પ્રવ્રજ્યા દીયતે સા પરિપ્લુતયિત્વા પ્રવ્રજ્યોચ્યતે,
સુહસ્તિના રક્કવત્ । ૪ । (૪) ।

“ ચરન્વિહા પવ્વજ્જા ” इत्यादि—पुनः प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-
नटखादिता-नटस्येव संवेगविकलधर्मकथाकरणोपार्जितभोजनादीनां खादितं=
भक्षणं यस्यां सा नटखादिता, एवं भटखादित भटस्येव-वीरस्येव तथाविधबलो-
पदर्शनलब्धभोजनादीनां खादितं भक्षणं यस्यां सा भटखादिता २, तथा-सिंहखा-
दिता-सिंहरस्येव खादित शौर्यातिशयादवज्ञोपात्तरय भक्षणं वा यथाप्रारब्धं भक्षणं
वह मोचयित्वा प्रव्रज्या है । जैसे एक साधुने तैलके निजित्त दासताको
प्राप्त हुए भगिनीको छुडवाकर दीक्षा दी, घृतादिसे परिपूर्ण करके
घृतादिका भोजन करवा करके-जो प्रव्रज्या दी जाती है वह परिप्लुतयित्वा
प्रव्रज्या है जैसे सुहस्तीने रङ्गको दी ४ (४)

हिरभी—“चरन्विहा पव्वज्जा” प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गई
है जैसे-नटखादिता १ भटखादिता २ सिंहखादिता ३ और शृगाल-
खादिता ४ जिस प्रव्रज्यामें नटकी तरह संवेग विकल वैराग्य रहित
धर्मकथाके करनेसे उपार्जित भोजनादिकोंका सेवन होता है, वह नट-
खादिता प्रव्रज्या है १ जिस कथामें वीरकी तरह तथाविध बलके दिखानेसे
लब्ध भोजनादिकोंका सेवन होता है वह भटखादिता प्रव्रज्या है २ जिस
भिक्षामें सिंहकी तरह शौर्यातिशयसे अवज्ञापूर्वक प्राप्त भोजनका

अपाय છે તેનું નામ “મોચયિત્વા પ્રવ્રજ્યા” છે. જેમકે તેલને બહાને દાસ બનેલી
ભગિનીને અપાયેલી દીક્ષા. ઘી આદિથી પરિપૂર્ણ કરીને-ઘી આદિના ભોજન
જમાવીને જે પ્રવ્રજ્યા આપવામાં આવે છે તેને ‘ પરિપ્લુતયિત્વા પ્રવ્રજ્યા ’
કહે છે. આ પ્રકારની પ્રવ્રજ્યા સુહસ્તીએ રંકને દીધી હતી । ૪ ।

“ ચરન્વિહો પવ્વજ્જા ” પ્રવ્રજ્યાના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા
છે—(૧) નટખાદિતા, (૨) ભટખાદિતા, (૩) સિંહખાદિતા, (૪) શૃગાલ-
ખાદિતા. જે પ્રવ્રજ્યામાં નટની જેમ સંવેગ રહિત-વૈરાગ્ય રહિત ધર્મકથા
કરીને જે ભોજન પ્રાપ્ત થાય તેનું સેવન કરવામાં આવે છે, તે પ્રવ્રજ્યાને
‘ નટખાદિતા પ્રવ્રજ્યા ’ કહે છે જે કથામાં વીરની જેમ તથાવિધ (તે
પ્રકારનું) બલ દર્શાવીને પ્રાપ્ત થતાં ભોજનાદિકનું સેવન થાય છે તે પ્રવ્રજ્યાને
‘ ભટખાદિતા પ્રવ્રજ્યા ’ કહે છે. જે ભિક્ષામા સિંહની જેમ શૌર્યાતિશયથી

યસ્યાં સા તથા ૩, તથા-શૃગાલઝાદિતા-શૃગાલસ્યેવ નીચવૃત્તિયોપાત્તસ્ય ઝાદિતં મક્ષણં યસ્યાં વાડન્યાન્યસ્થાને મક્ષણં યસ્યાં સા તથા । ૪ ।

“ ચડવિહા કિસી ” ઇત્યાદિ—કૃષિઃ-ધાન્યાર્થં ક્ષેત્રકર્ષણં, સા ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞા, તથા-ડા-ગોધૂમાદિધાન્યવદ્વપનવતી ૧, પર્યુષા દ્વિસ્ત્રિર્વા ઉત્પાટય સ્થાનાન્તરાડરોપણતઃ પરિવપનવતી શાલિવત્ ૨। નિન્દિતા-ઁકદા વિજાતીય વૃણાઘપનયનેન શોધિતા,પરિનિન્દિતા-દ્વિસ્ત્રિર્વા વૃણાદિદૂરીકરણેન શોધિતા ઠ।(૬)

સેવન હોસા હૈ, વહસિંહ ઝાદિતા પ્રવજ્યા હૈ ૩ જિસ મિક્ષામૈ શૃગાલકી તરહ નીચવૃત્તિસે પ્રાસ ઓજનકા સેવન હોતા હૈ અથવા-અન્ય અન્ય સ્થાનમૈ સેવન હોતા હૈ વહ શૃગાલઝાદિતા પ્રવજ્યા હૈ ૪ “ ચડવિહા કિસી ” ઇત્યાદિ-કૃષિ (સેતી ચાર પ્રકારકી કહી ગઈહૈ ધાન્યકે નિમિસ ક્ષેત્રકા કર્ષણ (જોતના હલ ચલાના) કરના હસકા નામ કૃષિ (સેતી) હૈ યહ કૃષિ ડસા ૧ પર્યુષા ૨ નિન્દિતા ૩ ઓર પરનિન્દિતા ૪ હસ રીતિ સે ચાર પ્રકાર કી હૈ । ગેહું આદિ કી તરહ જો ઓઈ જાતી હૈ, વહ ડસા કૃષિ હૈ ૧ । ધાન્ય જિસ પ્રકારસે ઢો વાર અથવા ત્રીન વાર ડસાઢકર અન્યત્ર લગાંધા જાતા હૈ ડસી પ્રકારસે જો ઁક સ્થાનસે ડસાઢકર ઢસરે સ્થાનમૈ રોપી જાતી હૈ, વહ પરિવપનવતી-પર્યુષા કૃષિ હૈ ૨, જો કૃષિ વિજાતીય વૃણ ઘાસ વગૈરહ ડસાઢકર શોધિત કી જાતી હૈ વહ નિન્દિતાકૃષિ હૈ ૩ જિસ કૃષિમૈસે ઢો

અવજ્ઞાપૂર્વક પ્રાસ થયેલા લોજનનું સેવન થાય છે તે પ્રવજ્યાને ‘ સિંહ’આદિતા પ્રવજ્યા’ કહે છે. જે લિક્ષામાં શિયાળની જેમ નીચ વૃત્તિથી પ્રાસ થયેલા લોજનનું સેવન કરાય છે, અથવા-અન્ય અન્ય સ્થાનમાં સેવન કરાય છે, તેનું નામ ‘ શૃંગાલઆદિતા પ્રવજ્યા’ કહે છે. ॥ ૫ ॥

“ ચડવિહા કિસી ” ઇત્યાદિ—કૃષિ જેતી ચાર પ્રકારની કહી છે. ધાન્યાદિને નિમિત્તે જેતરને જે જેડવાની ક્રિયા થાય છે તેને કૃષિ કહે છે. (૧) ડા, (૨) પર્યુષા, (૩) નિન્દિતા અને (૪) પરિનિન્દિતા.

ઘઉં આદિની જેમ જેનું વાવેતર કરવામાં આવે છે તેનું નામ ‘ ડા-કૃષિ’ છે. (૨) ડાંગરના છોડને (ઘરુને) ડાડીને જેમ ફરીથી રોપવામાં આવે છે, તે પ્રમાણે ધાન્યના રોપને જે કે ત્રણુવાર ડાડીને ધીજી જગ્યાએ રોપીને જે જેતી કરવામાં આવે છે તેને “ પરિવપનવતી-પર્યુષા કૃષિ કહે છે.

વિનતીય છોડ, ઘાસ આદિને ડાડી નાખીને જે કૃષિ થાય છે તેને “ નિન્દિતા કૃષિ ” કહે છે. જે જેતીમાં તકામા ઘાસ આદિને જે ત્રણુવાર

“ एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा ” इत्यादि—एवमेव—कृषिदेव प्रव्रज्या चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तथा—उप्ता—सामायिकाऽऽरोपणेन १, पर्युप्ता—महाव्रताऽऽरोपणेन निरतिचारस्य सातिचारस्य वा मूलप्रायश्चित्तदानतः २, तथा—निन्दिता—सकृदतिचारालोचनेन ३, तथा—परिनिन्दिता—पुनः पुनरतिचारालोचनेन ४। (७)।

“ चउव्विहा पव्वज्जा ” इत्यादि — धान्यपुञ्जितसमाना—पुञ्जः — राशिः संजातोऽस्यामिति पुञ्जितं, पुञ्जितं च तद् धान्यं धान्यपुञ्जितम्—अत्र प्राकृतत्वात्—तीन बार घास वगैरह उखाडा जाताहै, और उसे शोधित किया जाता है ऐसी वह कृषि परिनिन्दिता कृषि है ४ (६)

“ एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा ” इत्यादि—इसी प्रकारसे प्रव्रज्या भी चार प्रकारकी होती है—जिस प्रव्रज्यामें सामायिकका आरोपण किया जाता है वह प्रव्रज्या उप्ताहै १ जिस प्रव्रज्यामें महाव्रतोंका आरोपण किया जाता है, वह पर्युप्ता प्रव्रज्याहै २ जिस प्रव्रज्यामें सातिचार अथवा निरतिचार हुए प्राणीमें मूल—प्रायश्चित्त देकर महाव्रतोंका आरोपण किया जाता है, जिस प्रव्रज्यामें एकही बार अतिचारोंकी आलोचना की जाती है वह निन्दिता प्रव्रज्या है ३ और जिस प्रव्रज्यामें पुनः पुनः अतिचारोंकी आलोचनाकी जाती है वह परिनिन्दिता प्रव्रज्या है ४ (७)

“ चउव्विहा पव्वज्जा ” पुनः—प्रव्रज्या चार प्रकारकी कही गई है जैसे धान्य पुञ्जित समान १ धान्य विरेहित समान २ धान्य विक्षिप्त

जैसी डाढ़ीने जेतरीनी शुद्धि करवाમાં આવે છે, એવી જોડીને “ પરિનિન્દિતા કૃષિ કહે છે. । ૬ ।

“ एवामेव चउव्विहा पव्वज्जा ” इत्यादि—कृषिना जेवा ज प्रव्रज्याना पण्य चार प्रकार पडे છે—(१) जे प्रव्रज्यामा सामायिकतुं आरोपण करवाમાં आवे છે तेने ‘ उप्ता-प्रव्रज्या ’ कहे છે. (२) जे प्रव्रज्यामा महाव्रतानुं आरोपण करवाમાં आवे છે ते प्रव्रज्याने पर्युप्ता प्रव्रज्या कहे છે. (३) जे प्रव्रज्यामा सातिचार अथवा निरतिचार भवने भूण प्रायश्चित्त दधने महाव्रतानुं आरोपण करवाમાં आवे છે, अथवा जे प्रव्रज्यामा એક જ વાર અતિચારની આલોચના કરાય છે તે પ્રવ્રજ્યાને “ નિન્દિતા પ્રવ્રજ્યા ” કહે છે. તે પ્રવ્રજ્યામાં વારંવાર અતિચારની આલોચના કરાય છે, તે પ્રવ્રજ્યાને “ પરિનિન્દિતા પ્રવ્રજ્યા કહે છે. । ૭ ।

“ चउव्विहा पव्वज्जा ” प्रव्रज्याना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पण्य कहे છે—(१) धान्यपुञ्जित समान, (२) धान्यविरेहित समान, (३) धान्यविक्षिप्त

त्पुञ्जितपदस्य परप्रयोगः, पुञ्जितधान्यमित्यर्थः तेन समाना धान्यपुञ्जितसमाना= लूनपूनविशुद्धपुञ्जीकृतधान्यतुल्या-सर्वातिचाररूपकचदरविरहेण लब्धस्वभावत्वात् इति प्रथमा प्रज्या १। तथा-धान्यविरहितसमाना-विरहितं-विस्तृतं च तद् धान्यं धान्यविरहितं यद् धान्यं विस्तृतं पवनेन शोधितमपुञ्जीकृतं तद्विरहित-धान्यं तेन समाना-तुल्या धान्यविरहितसमाना-प्रज्यायां धान्यविरहित-सादृश्यं च स्वल्पेनाऽपि यत्नेन स्वभावलाभित्वेन, तथाहि-यथा-विस्तृतं वायुना

समान ३ और धान्य कर्षित समान ४ जो प्रज्या राशि कृत धान्यके समान होती है अर्थात् काटकर कूड़ा (भूसा) पलाव वगैरह सब हटाकर और साफ कर जिस प्रकार धान्यकी राशि कर दी जाती है, इसी प्रकार जो प्रज्या सर्वातिचार रूप कूड़ाकी सफाईसे बिलकुल शुद्ध स्वभावपाली होती है वह धान्यपुञ्जित समान प्रज्या है १। जो धान्य विस्तृत हो पवनमें उडावनी करके जिसे शुद्ध कर लिया गया हो, और जिसकी राशि नहींकी गई हो बिखरा हुआ पड़ा हो ऐसा वह विरहित धान्य है इसके समान जो प्रज्या है वह धान्य विरहित समान प्रज्या है। प्रज्यामें धान्य विरहित सदृशता है, वह थोड़ेसे भी प्रयत्नसे उसमें स्वभाव लाभ-वाली हो जानेसे है। जिस तरह विस्तृत वायुसे पूत शुद्ध किये बिना राशि का धान्य अल्पसे भी प्रयत्नसे राशिरूपमें होकर अपनी प्रकृतिमें आ जाता है उसी तरहसे जो प्रज्या अतिचारसे दूषित होने पर भी थोड़ेसे भी प्रायश्चित्त आदि द्वारा पुनः शुद्ध हो जाती है, ऐसी वह प्रज्या धान्य

समान, (४) धान्यकर्षित समान. जे प्रज्या धान्यना ढगला जेवी डोय छे अेटले के धान्यनी अपणी करीने तेमांथी नकामां तषुअलां, कांकरा वगेरे पहाथी हूर करीने ते धान्यने जेम ढगला करवामां आवे छे, जे ज प्रमाणे समस्त अतिचार रुप क्यरानी शुद्धि थछ जवाने कारणे बिलकुल शुद्ध स्वभाववाणी जे प्रज्या डोय छे तेने धान्यपुञ्जित समान प्रज्या कडे छे. जे धान्यने पवनमां अपणीने तेमांथी घास, शैतरां वगेरे हूर करी नाभीने जमीनपर ढगला कर्यां विना विस्तृत रुपे पथरथेली स्थितिमां पड्युं रडेवा देवामां आव्युं डोय जेवा धान्यने विरहित धान्य कडे छे. तेना समान जे प्रज्या डोय छे तेने धान्यविरहितसमान प्रज्या कडे छे. आ समानता केवी रीते योग्य छे ते हवे स्पष्ट करवामां आवे छे. जेम तृष्ठाद्विधी युक्त विस्तृत धान्य थोडा पवनथी पषु शुद्ध थई लय छे. तेमांथी तृष्ठाद्वि ७डी जधने धान्यने शुद्ध करी नाजे छे, जे ज प्रमाणे जे प्रज्या अतिचारथी दूषित डोवा छतां पषु थोडा सरभा प्रायश्चित्त आदि

પૂતમપુષ્કીકૃત ધાન્યમલ્પેનાપિ પ્રયત્નેન પુનઃ પૃષ્કીકૃતં સન્ સ્વપ્રકૃતિમાપદ્યતે તથા-પ્રવ્રજ્યાઽપિ યાઽતિવારદૂપિતાસતી સ્વલ્પેનાપિ પ્રાયશ્ચિત્તાદિના પુનઃ શુદ્ધા ભવતિ સા પ્રવ્રજ્યા ધાન્યવિરેલ્લિતસમાનાઽભિધીયતે । ૨ । તથા-ધાન્યવિક્ષિપ્ત-સમાના-વિક્ષિપ્તં વલીવર્દ્ધચુરક્ષુદક્ષુષ્ણતયા વિકીર્ણં ચ તદ્ ધાન્યં ધાન્યવિક્ષિપ્તં, વિકીર્ણધાન્યમિત્યર્થઃ, તેન સમાના ધાન્યવિક્ષિપ્તસમાના-યથા-વિકીર્ણધાન્યં સહ-જકચવરયુક્તત્વાત્ શૂર્પાદિ સામગ્ર્યપેક્ષિતતયા વિલમ્બેન સ્વપ્રકૃતિમાયાતિ, તથા યા પ્રવ્રજ્યા સ્વાભાવિકાતિવારયુક્તત્વાત્ પ્રાયશ્ચિત્તાદિસામગ્ર્યપેક્ષિતતયા વિલમ્બેન સ્વ સ્વભાવં લભતે સા ધાન્યવિક્ષિપ્તસમાનોચ્યતે ૩। તથા-ધાન્યસઙ્કર્ષિતસમાના-સઙ્કર્ષિતં-ક્ષેત્રાદાકર્ષિતં-ખલમાનીતં ચ તત્ ધાન્યં ધાન્યસઙ્કર્ષિતં=સઙ્કર્ષિતધાન્ય-

વિરેલ્લિત સમાન કહી જાતી હૈ ૨। તથા જવ ધાન્ય વલીવર્દો કે-વૈલોંકે સ્વુર્ગેસે ક્ષુષ્ણ (મર્દિત) હોતા હૈ અર્થાત્ જવ અનાજકી દાય હોતી હૈ તવ વહ્ ઇધર ઉધર વિકીર્ણ હો જાતા હૈ-વિચર જાતા હૈ-ફૈલ જાતા હૈ । ઇસ તરહ ઇધર ઉધર ફૈલ જાનેસે વહ ધાન્ય અનાજ કૂડાકરકટવાલા હો જાતા હૈ, ઓર ફિર સૂપ આદિ દ્વારા શુદ્ધ કિયા જાતા હૈ, ઇસ તરહ વહ સૂપાદિ સામગ્રીકી અપેક્ષાવાલા હોનેસે વિલમ્બસે સાફ હોતા હૈ-અપની પ્રકૃતિમેં આતા હૈ, ઇસી તરહસે જો પ્રવ્રજ્યા સ્વાભાવિક અતિચાર યુક્ત હોનેસે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ સામગ્રીકી અપેક્ષાવાલી હોનેકે કારણ વિલમ્બસે અપને સ્વ-જાવકો પાતી હૈ, વહ પ્રવ્રજ્યા ધાન્યવિક્ષિપ્ત સમાન કહી જાતી હૈ ૩। જિસ પ્રકાર ક્ષેત્રમેંસે ખલિહાનમેં લાયા ગયા અનાજ વહુન અધિક

દ્વારા પણ ફરીથી શુદ્ધ થઈ જાય છે, એવી પ્રવ્રજ્યાને “ ધાન્યવિરેલ્લિત સમાન ” પ્રવ્રજ્યા કહી છે.

ન્યારે અનાજની કાપણી કરીને તેના ડુંડાંઓ ઉપર બળદોને ચક્રા-વવામાં આવે છે ત્યારે અનાજના ક્ષેત્રમાં જુદા પડી જાય છે અને તે અનાજ એક રાશિ-ઢગલા રૂપે રહેવાને બદલે પથરાઈ જાય છે, તે વખતે તે ધાન્ય સ.થે જે તણખલાં, ક્ષેત્રમાં વગેરે લખેલા હોય છે તેમને પવનમાં સૂપડા વગેરે વડે ઉપણીને અલગ કરવામાં આવે છે. આ રીતે તેને સાફ કરવામાં સૂપડા આદિ સામગ્રીની આવશ્યકતા રહે છે, તે કારણે તેની સફસૂદીમાં વિલંબ થાય છે. એ જ પ્રમાણે જે પ્રવ્રજ્યા સ્વાભાવિક અતિચારથી યુક્ત હોવાથી પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ સામગ્રીની અપેક્ષાવાળી હોવાને કારણે જે તાના સ્વભાવને પ્રાપ્ત કરવામાં વિલંબ કરે છે, તે પ્રવ્રજ્યાને ધાન્યવિક્ષિપ્ત સમાન કહી છે. જેમ ખેતરમાંથી ખળામાં લાવવામાં આવેલું ધાન્ય ઘણાં જ તણખલાં, કાંકરા આદિથી યુક્ત

मित्यर्थः, तत्समाना=धान्यसङ्कर्षितसमाना-सङ्कर्षितधान्यं यथा बहुतरकचवरो-
पेतत्वादतिचिरकाललभ्यस्वस्वभावं भवति तथा या प्रव्रज्या बहुतरात्तिचारोपेत-
त्वाद्वहुतरकालप्राप्तव्यस्वस्वभावा सा धान्यसङ्कर्षितसमाना ४। (८)। सू० १९॥

पूर्वं प्रव्रज्योक्ता, सा चैवं विचित्रा संज्ञावशाद् भवतीति संज्ञा निरूपयितुं
पञ्चसूत्रीमाह—

अक्षारि सन्नाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-आहारसन्ना १, भय-
सन्ना, २, मेहुणसन्ना ३, परिग्गहसन्ना ४। (१)

अउहिं ठाणेहिं आहारसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा-ओस-
कोट्टयाए १, लुहावेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २, मईए ३,
तयट्ठोवओगेणं ४ (२)

अउहिं ठाणेहिं भयसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा-हीणसत्त-
त्ताए १, भयवेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २, मईए ३, तय-
ट्ठोवओगेणं ४। (३)।

अउहिं ठाणेहिं मेहुणसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा-चियमंस-
सोणियत्ताए १ मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २ मईए ३
तयट्ठोवओगेणं ४ (४)

अउहिं ठाणेहिं परिग्गहसन्ना समुप्पज्जइ, तं जहा-अवि-
मुत्तयाए १, लोभवेयणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं २ मईए ३
तयट्ठोवओगेणं ४ (५) ॥ सू० २० ॥

कूडाकरकटवाला होनेसे बहुत समयके (पीछे) अपने स्वभावमें आना
है उसी प्रकार जो प्रव्रज्या बहुतर अतिचारोंसे युक्त होनेके कारण
बहुतर कालमें प्राप्तव्य (प्राप्त होने योग्य) स्वभाववाली होती है वह
प्रव्रज्या धान्यसंकर्षित समान होती है ४ (८) है, सूत्र १९॥

डोवाने कारणे धणा समय सुधी साइसूरी कर्या जाह पोतानी भूण प्रकृतिमां
आवी नय छे, जे न प्रभाणे जे प्रनन्या धणा न अतिचारेथी युक्त
डोवाने कारणे दीर्घ काले पोताना स्वभावने प्राप्त करनारी होय छे ते
प्रव्रज्याने धन्य संकर्षित समान कही छे. । ८ । ॥ सू० १९ ॥

छाया—चतस्रः संज्ञाः प्रज्ञाः, तद्यथा—आहारसंज्ञा १, भयसंज्ञा २, मैथुन-संज्ञा ३, परिग्रहसंज्ञा ४। (१)

चतुर्भिः स्थानैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—अयमकोष्ठकतया १, क्षुधावेदनीयस्य कर्मण उदयेन २, मत्या ३, तदर्थोपयोगेन ४, (२)

चतुर्भिः स्थानैर्भयसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—हीनसत्त्वतया १ भयवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ (३) ।

चतुर्भिः स्थानैर्मैथुनसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—चितमांसनोणिततया १, मोहनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ (४) ।

चतुर्भिः स्थानैः परिग्रहसंज्ञा समुत्पद्यते, तद्यथा—अविमुक्ततया १, लोभवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २ मत्या ३ तदर्थोपयोगेन ४ ॥ सू० २० ॥

टीका—‘ चत्वारि सन्नाओ ’ इत्यादि—संज्ञानानि संज्ञाः—चेष्टाः—अभिलाषा इति यावत्, ता असातवेदनीयमोहनीयकर्मोद्दयजन्यविकारयुक्ताः सत्य आहारादि संज्ञात्वं लभन्ते, इति ताश्चतस्रः प्रज्ञाः, तद्यथा—आहारसंज्ञा—आहाराभिलाषः १, भयसंज्ञा—भयमोहनीयजन्यो जीवपरिणामः २, मैथुनसंज्ञा—वेदोद्दयजनितो मैथुनाभिलाषः ३, परिग्रहसंज्ञा—चारित्र्यमोहोद्दयजनितः परिग्रहाभिलाषः ४ इति (१)

उक्त प्रव्रज्या संज्ञाके वगसे हस प्रकार विचित्रतावाली होनीहै इसलिये अब सूत्रकार संज्ञाका निरूपण करनेके लिये पंचसूत्री कहते हैं—

‘चत्वारि सन्नाओ पणत्ताओ’ इत्यादि सूत्र २० ॥

टीकार्थ—संज्ञाएँ चार प्रकारकी कही गईहैं जैसे—आहार संज्ञा १ भय संज्ञा २ मैथुन संज्ञा ३ और परिग्रह संज्ञा ४ चेष्टा अभिलाषा—हसका नाम संज्ञा है, यह जब असातावेदनीय मोहनीय कर्मके उदयसे जन्य विकार युक्त हो जाती है तब आहारादि संज्ञापनेको प्राप्त करती है, इनमें आहारकी अभिलाषारूप आहारसंज्ञा होतीहै । भय मोहनीय जन्य जो

उपर्युक्त प्रव्रज्या संज्ञाने अधीन थधने आ प्रकारनी विचित्रतावाणी थाय छे, तेथी डवे सूत्रकार संज्ञानुं निरूपणु करवा निमित्ते पंचसूत्रीनुं कथन करे छे “ चत्वारि सन्नाओ पणत्ताओ ” इत्यादि—

संज्ञाना नीचे प्रभाषे आर प्रकार कथा छे—(१) आहार संज्ञा, (२) लय संज्ञा, (३) मैथुन संज्ञा अने (४) परिग्रह संज्ञा येथी अथवा अभिलाषाने संज्ञा कडे छे. ते न्यारे असाता वेदनीय मोहनीय कर्मना उदयथी जन्य विकार युक्त थध लय छे, त्यारे आहारादि संज्ञा रुपताने प्राप्त करे छे. आहारनी अभिलाषा रुप संज्ञाने आहार संज्ञा कडे छे. लयमोहनीय

“ ચરહિં ઠાણેહિં ” ઇત્યાદિ—ચતુર્ભિર્વક્ષ્યમાણૈઃ સ્થાનૈઃ=કારણૈઃ, આહાર-સંજ્ઞા સમુત્પદ્યતે-જાયતે, તદ્વથા - અવમકોષ્ઠતયા-રિક્તોદરતયાSSહારામિલાષો જાયતે ૧, તથા-શુદ્ધેદનીયસ્ય કર્મણ ઉદયેન ૨, તથા-મત્યા-આહારકથાશ્રવ-ણાદિજનિતયા બુદ્ધયા ૩, તથા-તદર્થોપયોગેન સદાSSહારાર્થચિન્તનેન ૪। (૨)

“ ચરહિં ઠાણેહિં ભયસન્ના ” ઇત્યાદિ—ચતુર્ભિર્વક્ષ્યમાણૈઃ સ્થાનૈર્ભયસંજ્ઞા સમુત્પદ્યતે, તદ્વથા-હીનસત્ત્વતયા-હીનં-ન્યૂન સત્ત્વં-વલં યસ્ય સ હીનસત્ત્વસ્તસ્ય-ભાવો હીનસત્ત્વતા તયા=નિર્વલતયા ૧, તથા-ભયવેદનીયસ્ય કર્મણ ઉદયેન ૨,

જીવ પરિણામ હૈ વહ ભયસંજ્ઞાહૈ । વેદકે ઉદયસે જનિત જો મૈથુનાભિ-લાષારૂપ પરિણામહૈ, વહ મૈથુનસંજ્ઞા હૈ ઓર ચારિત્ર મોહનીયકે ઉદયસે જનિત જો પરિગ્રહામિલાષા હૈ વહ પરિગ્રહ સંજ્ઞા હૈ ૪ (૧)

“ ચરહિં ઠાણેહિં ” ઇત્યાદિ ચાર કારણોસે આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થોતી હૈ વે ચાર કારણ યે હૈં—પેટ જલ્લ ખાલી હો જાતાહૈ, તલ્લ આહારા-મિલાષા હોતી હૈ ૧ ક્ષુધાવેદનીય કર્મકા જલ્લ ઉદય હોતા હૈ તલ્લ આહારા-મિલાષા હોતી હૈ ૨ આહારકથાકે શ્રવણસે જનિત બુદ્ધિસે આહારા-મિલાષા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ૩ ઓર સદા આહારાર્થકે ચિન્તવનસે આહારા-મિલાષા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ૪ (૨) ઇસી તરહસે ચાર કારણો દ્વારા ભય-સંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ૧ ભય વેદનીય કર્મકે ઉદયસે ભયસંજ્ઞા હોતી હૈ ૨ ભયકી ઘાંત સુનનેસે તથા ભયકુર પદાર્થો આદિકે દેખનેસે જનિત

જન્ય જે શુભપરિણામ છે તેનું નામ ભયસંજ્ઞા છે. વેદના ઉદયથી જન્ય જે મૈથુનામિલાષા રૂપ પરિણામ છે તેનું નામ મૈથુન સંજ્ઞા છે, અને ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી જે પરિગ્રહામિલાષા છે તેને પરિગ્રહ સંજ્ઞા કહે છે. ૧।

“ ચરહિં ઠાણેહિં ” ઇત્યાદિ—નીચેના ચાર કારણોને લીધે આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે—(૧) જ્યારે પેટ ખાલી થઈ જાય છે ત્યારે આહારામિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. (૨) ક્ષુધા વેદનીય કર્મને જ્યારે ઉદય થાય છે ત્યારે આહારામિલાષા થાય છે. (૩) આહાર કથાનું શ્રવણ કરવાથી આહારામિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. (૪) સદા આહાર વિષયક વિચારો કર્યા કરવાથી આહારામિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે. ૧ ૨ ।

નીચેના ચાર કારણોથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે—(૧) બલહીન હોવાથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે (૨) ભયવેદનીય કર્મના ઉદયથી ‘ભયસંજ્ઞા’ ઉત્પન્ન થાય છે. (૩) ભય લાગે એવી ઘાંત સાંભળવાથી અને ભયકર પદાર્થો આદિ

तथा-मत्या-भयवातीश्रवण-भयङ्करदर्शनादिजनितया बुद्ध्या ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-इहलोकादिभयरूपार्थविचारेण ४, इति (३) ।

“ चउर्हि ठाणेहि मेहुणसंज्ञा ” इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैर्मैथुनसंज्ञा समुत्पद्यते, तत्रया-चित्तमांसशोणिततया-चित्ते-उपचित्ते वृद्धिं प्राप्ते मांसशोणिते यस्य स चित्तमांसशोणितस्तस्य भावश्चिदमांसशोणितता तया १, तथा-मोहनीयस्य कर्मण उदयेन २, तथा-मत्या धैथुनकथाश्रवणादिजनितबुद्ध्या ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-मैथुनरूपार्थचिन्तनेन ४, (४) ।

“ चउर्हि ठाणेर्हि परिग्रहसंज्ञा ” इत्यादि—चतुर्भिर्वक्ष्यमाणैः स्थानैः परिग्रहसंज्ञा समुत्पद्यते, तत्रया-अविमुक्ततया-पदार्थसङ्ग्रहादवियुक्तनया परिग्रहितेत्यर्थः १, तथा-लोभवेदनीयस्य कर्मण उदयेन २, तथा-मत्या-सचेतनादि परिग्रहदर्शनादिजनितबुद्ध्या ३, तथा-तदर्थोपयोगेन-परिग्रहरूपार्थानुचिन्तनेन ४ इति (५) ॥ सू० २० ॥

बुद्धिसे भयसंज्ञा उत्पन्न होती है ३ और इहलोकादि सम्बन्धी भयरूप अर्थके विचारसे भयसंज्ञा उत्पन्न होती है ४ (३)

मैथुन संज्ञा इन चार कारणोंसे उत्पन्न होती है—शरीरमें मांस और शोणित खूनकी वृद्धि होनेसे मैथुन संज्ञा उत्पन्न होती है १ मोहनीय-कर्मके उदयसे मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होनी है २। मैथुनकी कथाके श्रवण से जनित बुद्धिसे मैथुनसंज्ञा उत्पन्न होती है ३। और मैथुनरूप अर्थके चिन्तनसे मैथुन संज्ञा उत्पन्न होती है ४ (४)

तथा—इन चार कारणोंसे परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होती है जैसे पदार्थोंके संग्रह करनेसे तत्पर रहनेसे रातदिन पदार्थोंका संग्रह करते रहनेसे १ लोभ वेदनीय कर्मके उदयसे सचेतन परिग्रहके देखने आदिसे जनित

दृष्टवाची भयसंज्ञा उत्पन्न थाय छे. (४) आलोक आदि विषयके भयरूप अर्थको विचार करवाची भयसंज्ञा उत्पन्न थाय छे. । ३ ।

नीचेना चार कारणोंकी मैथुन संज्ञा उत्पन्न थाय छे—(१) शरीरमांसांसे रक्तनी वृद्धि थावाची, (२) मोहनीय कर्मना उदयथी, (३) मैथुन विषयके कथा श्रवण करवाची अने (४) मैथुन रूप अर्थको चिन्तन करवाची मैथुन संज्ञा उत्पन्न थाय छे. । ४ ।

आ चार कारणोंने लीधे परिग्रह संज्ञा उत्पन्न थाय छे—(१) पदार्थोंको संग्रह करवामां लीन रहवाची, रातदिन पदार्थोंको संग्रह करवाची, (२) लोभ वेदनीय कर्मना उदयथी, (३) सचेतन परिग्रहने दृष्टवाने लीधे जनित

पूर्व संज्ञा प्रोक्ता, सा च शब्दादिकामविषया भवन्तीति कामान् निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहा कामा पणत्ता, तं जहा-सिंगारा १, कलुणां २ बीभच्छा ३, रोद्दा ४। सिंगारा कामा देवाणं, कलुणा कामा मणुयाणं, बीभच्छा कामा तिरिक्खजोणियाणं, रोद्दा कामां णेरइयाणं ॥ सू० २१ ॥

छाया—चतुर्विधाः कामाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-शृङ्गाराः १, करुणाः २, बीभत्साः ३, रौद्राः ४। शृङ्गाराः कामा देवानाम् १, करुणाः कामा मनुजानाम्, बीभत्साः कामास्तिर्यग्योनिकानाम् ३, रौद्राः कामा नैरयिकाणाम् ४ ॥ २१ ॥

टीका—“चउव्विहा कामा” इत्यादि—कामाः—काम्यन्तेऽभिलष्यन्त इति कामाः—शब्दादयश्चतुर्विधाः—चतुष्प्रकाराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा शृङ्गाराः १, करुणाः २, बीभत्साः ३, रौद्राः ४ इति, तत्र-शृङ्गाराः कामा देवानां भवन्ति, ऐकान्तिकाऽत्यन्तमनोज्ञत्वेन प्रकृष्टरतिरसाश्रयत्वादिति, यतः शृङ्गारो रतिरूपो भवति, यदाह—

बुद्धिसे और परिग्रहरूप अर्थके वार २ चिन्तवनसे परिग्रह संज्ञा उत्पन्न होती है ४ (५) ॥ सू० २० ॥

कथित ये संज्ञाएँ शब्दादिरूप काम विषयवाली होती हैं, अतः अब सूत्रकार कामोंका निरूपण करते हैं—“चउव्विहा कामा पणत्ता” इत्यादि सूत्र २१ ॥

टीकार्थ—काम चार प्रकारके कहे गयेहै—जैसे शृङ्गार १ करुणा २ बीभत्स ३ और रौद्र ४ जो चाहना अभिलाषाके विषय होतेहैं वे काम हैं। वे काम शब्दादिरूप होतेहैं। ये शब्दादिरूप काम-जो शृङ्गार आदिके सेदसे चार प्रकारके कहे गये हैं, सो शृङ्गाररूप काम, देवोंको होते हैं, क्योंकि

भतिथी अने (४) परिग्रह इय अर्थनुं वारवार चिन्तवन कर्था करवाथी परिग्रह संज्ञा उत्पन्न थाय छे. ॥ सू. २० ॥

उपर्युक्त संज्ञाओ शब्दादि इय काम विषयवाणी डोय छे, तेथी डवे सूत्रकार कामो (विषयो) नुं निरूपण करे छे. “चउव्विहा कामा पणत्ता” इत्यादि—

टीकार्थ—काम चार प्रकारनां कइया छे—(१) शृंगार, (२) करुणा, (३) बीभत्स अने (४) रौद्र. आडना (अभिलाषा) ना विषय इय जे डोय छे तेसने ‘काम’ कडे छे. ते काम शब्दादि इय डोय छे तेना शृंगार आदि जे चार प्रकार कइया छे तेनुं स्पष्टीकरण नीचे प्रमाणे छे—शृंगार इय कामनो सद्विषय

“વ્યવહારઃ પુન્નાર્યોરન્યોડન્યં રક્તયોરતિપ્રકૃતિઃ શૃંગારઃ” ઇતિ ૧, તથા-
કરુણાઃ કામા મનુજાનાં=મનુષ્યાણાં ભવન્તિ, યતસ્તે તાદૃશમનોજ્ઞા ન ભવન્તીતિ
તથા ક્ષણેન દૃષ્ટાઃ સન્તો નદૃશન્તીતિ તથા-શુક્રશોણિતપ્રથૃતિશરીરાશ્રયિણો ભવ-
ન્તીતિ શોચનરૂપા ભવન્તીતિ કરુણો હિ રસઃ શોકસ્વભાવો ભવતિ, ઉક્તં ચ-
“કરુણઃ શોકપ્રકૃતિ”-રિતિ ૨, તથા-વીમત્સાઃ કામાસ્તિર્યગ્યોનિકાનાં-
તિર્યગ્યોનિજાતાનાં પ્રાણિનાં પક્ષિપ્રથૃતીનાં ભવન્તિ, વીમત્સકામાનાં નિન્દનીય-
ત્વાત્, વીમત્સરસો હિ જુગુપ્સાત્મકો ભવતિ, યદાદ-“ભવતિ જુગુપ્સાપ્રકૃતિ-
વીમત્સઃ” ઇતિ ૩, તથા-રૌદ્રાઃ-દારુણા અત્યન્તમનિષ્ટૃત્વેન ક્રોધોત્પાદકત્વાત્,

શૃંગાર રતિરૂપ હોતા હૈ, ઓર દેવ ઁકાન્તિકરૂપસે અત્યન્ત મનોજ્ઞ હોતે
હૈ, હસલિયે વે પ્રકૃષ્ટ રતિરસકે આશ્રયભૂત હોતે હૈ. સો હી કહા હૈ-

“વ્યવહારઃ પુન્નાર્યોરન્યોડન્યં રક્તયોરતિપ્રકૃતિઃ શૃંગારઃ” પરસ્પરમે
રક્ત સ્ત્રી પુરુષોંકા જો વ્યવહાર હૈ વહ રતિ હૈ, કારણ જિસકા ઁસાં હોતા
હૈ વહ રતિ હી શૃંગાર હૈ. કરુણારૂપ જો કામ હૈ વે મનુષ્યોંકો હોતે હૈ, ક્યોંકિ
વે દેવોંકે જૈસે મનોજ્ઞ નહીં હોતે હૈ. દેખતે ૨ વે ઁક ક્ષણભરમે નષ્ટ
હો જાતે હૈ શુક્ર શોણિતકે સમ્બન્ધસે જનિત શરીરવાલે હોતે હૈ ઓર
શોચનરૂપ હોતે હૈ કરુણરસ શોક સ્વભાવવાલા હોતા હૈ કહા મી હૈ-
“કરુણઃ શોકપ્રકૃતિરિતિ” ૨. વીમત્સકામ તિર્યચ્ચ યોનિમે ઉત્પન્ન
હું પંક્ષિ આદિ પ્રાણિયોંકે હોતે હૈ ૩. વીમત્સકામ નિંદનીય હોતે હૈ
ક્યોંકિ વીમત્સરસ જુગુપ્સાત્મક હોતા હૈ. કહા મી હૈ-“ભવતિ જુગુપ્સા
પ્રકૃતિઃ વીમત્સરસઃ” જુગુપ્સા પ્રકૃતિવાલા વીમત્સરસ હોતા હૈ રૌદ્ર-

દેવોંમાં હોય છે, કારણ કે શૃંગાર રતિરૂપ હોય છે અને દેવો એકાન્તિક રૂપે
(સંપૂર્ણતઃ) મનોજ્ઞ હોય છે, તેથી તેઓ પ્રકૃષ્ટ રતિરસથી સંપન્ન હોય છે.
કહ્યું પણ છે કે-“વ્યવહારઃ પુન્નાર્યોરન્યોડન્યં રક્તયોરતિપ્રકૃતિઃ શૃંગારઃ”
પરસ્પરમાં રક્ત (આસક્ત) સ્ત્રી પુરુષોના જે વ્યવહાર છે તેવું નામ રતિ
છે, અને તે રતિ જ શૃંગાર રૂપ છે.

કરુણારૂપ કામનો સદ્ભાવ મનુષ્યોમાં હોય છે, કારણ કે તેઓ દેવોના
જેવા મનોજ્ઞ હોતા નથી, તેઓ નેતનેતામાં એક સહુ માત્રમાં જ નષ્ટ થઈ
ભય છે, અને શોચનરૂપ હોય છે

- કરુણારસ શોક સ્વભાવવાળો હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-“કરુણઃ
શોકપ્રકૃતિરિતિ” બીલત્સ કામનો સદ્ભાવ તિર્યચ્ચ યોનિમાં ઉત્પન્ન થયેલાં
પક્ષીઓ, પ્રાણીઓ આદિમાં હોય છે બીલત્સ કામ નિંદનીય હોય છે, કારણ
કે બીલત્સરસ જુગુપ્સાજનક હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-“ભવતિ જુગુપ્સા
પ્રકૃતિઃ વીમત્સરસઃ” જુગુપ્સા પ્રકૃતિવાળો બીલત્સરસ હોય છે.

ते कामा नैरयिकाणां-नरकोत्पन्नानां जीवानां भवन्ति, रौद्ररसो हि क्रोधरूपो भवति, “ रौद्रः क्रोधप्रकृतिः ”-रित्युक्तेरिति । ४ । ॥ सू० २१ ॥

पूर्वं कामा उक्ताः, ते चं तुच्छ-गंभीरयोर्बाधकाबाधका भवन्तीति तौ प्रतिपादयितुं संदृष्टान्तामष्टसूत्रीमाह--

मूलम्—चत्वारि उदगा पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोदए १, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोदए २, गंभीरे णाममेगे उत्ताणोदए ३, गंभीरे णाममेगे गंभीरोदए ४। (१) एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणहियए, उत्ताणे णाममेगे गंभीरहियए ४, (२)।

चत्वारि उदगा पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४ (३) एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४, (४)

चत्वारि उदही पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोदही, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोदही ४, (५) एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणहियए ४(६)।

चत्वारि उदही पणत्ता, तं जहा-उत्ताणे णाममेगे उत्ताणो-

दारुण होता है वह अत्यन्त अनिष्ट होनेसे क्रोधोत्पादक होता है, इसलिये दारुण काम नैरयिकोंके नारकोत्पन्न जीवोंके होतेहैं रौद्ररस क्रोधरूप होताहै, क्योंकि रौद्राः क्रोधप्रकृतिः ” ऐसा कथन है ॥ सू० २१ ॥

रौद्र अत्यन्त दारुणु डोय छे. ते अत्यन्त अनिष्ट डोवाथी डोधात्पादक डोय छे. तेथी नारक लुवाभां रौद्र डामने। सहभाय डोय छे. रौद्र रस डोध रूप डोय छे. डहुं पणु छे डे—“ रौद्राः क्रोधप्रकृतिः ” ॥ सू० २१ ॥

भासी, उत्ताणे णाममेगे गंभीरोभासी ४ (७) एवामेव चत्वारि
पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--उत्ताणे णाममेगे उत्ताणोभासी
४ (८) ॥ सू० २२ ॥

छाया—चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानं, नामैकमुत्तानोदकम्
उत्तानं नामैकं गम्भीरोदकं २, गम्भीरं नामैकमुत्तानोदकं ३, गम्भीरं नामैकं
गम्भीरोदकम् ४ (१) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानो
नामैक उत्तानहृदयः, उत्तानो नामैको गम्भीरहृदयः ४, (२) ।

चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—उत्तानं नामैकमुत्तानावभासि, उत्तानं
नामैकं गम्भीरावभासि ४ (३) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
उत्तानो नामैक उत्तानावभासी, उत्तानो नामैको गम्भीरावभासी ४ (४) ।

चत्वार उदधयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—उत्तानो नामैक उत्तानोदधिः, उत्तानो
नामैको गम्भीरोदधिः ४, (५) एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—
उत्तानो नामैक उत्तानहृदयः ४, (३) ।

चत्वार उदधयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—उत्तानो नामैक उत्तानावभासी, उत्तानो
नामैको गम्भीरावभासी ४ (७) । एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा—
उत्तानो नामैक उत्तानावभासी ४ (८) ॥ सू० २२ ॥

टीका—“ चत्वारि उदगा ” इत्यादि—उदकानि=जलानि चत्वारि प्रज्ञ-
प्तानि, तद्यथा—एकमुदकमुत्तानं—तुच्छत्वात् प्रतलं भवति, तदेव पुनरुत्तानोदकं
भवति, स्वच्छतयोपलभ्यमध्यस्वरूपत्वात् ।

उक्त ये काम तुच्छ और गम्भीरके बाधक और अबाधक होते हैं
इसलिये इनको प्रतिपादन करनेके लिये सूत्रकार दृष्टान्त सहित अष्ट-
सूत्री कहते हैं—चत्वारि उदगा पणत्ता इत्यादि सूत्र २२ ॥

टीकार्थ—जल चार प्रकारके कहे गये हैं, इनमें कोई उदक ऐसा होता है जो
उत्तान तुच्छ होनेसे प्रतल पतला होता है हल्का होता है और स्वच्छ
होनेसे उपलब्धि के योग्य है, मध्य स्वरूप जिसका ऐसा होता है । तथा

उपर्युक्त काम तुच्छ अने गंभीरता बाधक अने अबाधक होय छे,
तेथी तेमनुं प्रतिपादन करवा निमित्ते सूत्रकार दृष्टान्त सहितनी अष्टसूत्री
कहे छे. “ चत्वारि उदगा पणत्ता ” इत्यादि—

टीकार्थ—जलना चार प्रकार कहे छे—(१) कौछ जल जेवुं होय छे ते जे
उत्तान-तुच्छ होवाथी प्रतल (पातलुं) होय छे अने स्वच्छ होवाथी जेवुं
मध्य स्वरूप उपलब्ध थई शके जेवुं होय छे. (२) कौछ जल जेवुं होय छे

तथा—एकमुदकमुत्तानं सद् गम्भीरोदकम् अगाधत्वादनूपलभ्यमानस्वरूपं भवति २, तथा—एकमुदकं गम्भीरम्—अगाधं प्रचुरत्वात् सत्पुनरुत्तानोदकम्—स्वच्छतयोपलभ्यस्वरूपत्वात् ३, तथा—एकमुदकं—गम्भीरमगाधत्वात् पुनर्गम्भीरोदकं भवति अगाधत्वादिति ४।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव—उदकवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषः उत्तानः—गम्भीर्यरहितो भवति वहिर्दक्षितमददैन्यादिजन्यविकृतकायवाक्चेष्टत्वात् स एव पुनरुत्तानहृदयो भवति—दैन्यादि युक्त गोपनीयधारणाशक्तेरसमर्थचित्तत्वादिति प्रथमः १।

एक उदक ऐसा होना है, जो उत्तान होता हुआ गंभीरोदक होता है—अगाध (ऊँडा) होनेसे जिसका स्वरूप उपलभ्यमान नहीं होता है, ऐसा होता है २। एक उदक ऐसा होता है जो प्रचुर होनेसे अगाध होता है, और स्वच्छ होनेसे जिसका मध्य उपलब्धि के योग्य स्वरूपवाला होता है ३। तथा एक उदक ऐसा होता है जो गंभीर—गंभीरोदक होता है। अगाध होनेसे जिसका स्वरूप उपलब्धि के योग्य नहीं होता है, और स्वच्छ होने पर भी जिसका मध्यभाग नहीं दिखाता है ४ “ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—जैसे ये जलके चार प्रकार प्रकट किये गये हैं वैसेही पुरुष प्रकार चार होते हैं—इनमें कोई एक पुरुष प्रकार ऐसा होता है जो उत्तान होता है गंभीरतासे रहित होता है और बाहरमें मद एवं दैन्य आदिसे जन्य विकृत कायकी और वचनकी चेष्टा दिखलानेवाला होनेसे उत्तान हृदयवाला होता है दैन्यादि युक्त अपनी गोपनीय स्थितिको छिपा

के जे उत्तान होवा छता गंभीर होय छे—अगाध होवाथी जेतुं मध्य स्वरूप उपलब्ध न थई शके जेतुं होय छे. (३) कोछ उदक भूम गंभीर होवाथी अगाध होय छे, अने स्वच्छ होवाने कारणे जेतुं मध्य स्वरूप उपलब्ध थई शके जेतुं होय छे (४) कोछ उदक जेतुं होय छे के गंभीर—गंभीरोदक वाणुं होय छे, अगाध होवाथी तेतुं स्वरूप लक्ष्णी शकतुं नथी अने स्वच्छ होवा छतां पणु तेनो मध्यभाग देखाते नथी.

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—

जेवां जणना चार प्रकार कथा छे जेवां न अनुभयना पणु चार प्रकार कथा छे—(१) कोछ जेक पुरुष जेवां होय छे के जे उत्तान होय छे गंभीरताथी रहित होय छे अने मद अने दैन्य आदि जन्य काय अने वचनकी विकृत चेष्टा जतावनारे होवाथी गहाराथी उत्तान हृदयवाणो होय छे—दैन्या

तथा-एकः पुरुष उत्तानो भवति, कारणवशाद्दर्शितविकृतचेष्टत्वात्, स एव पुनर्गम्भीरहृदयो भवति प्रकृत्या गांभीर्यगुणसम्पन्नचित्तत्वात् इति द्वितीयः २। तथा-एको गम्भीरः-दैन्यादियुक्तोऽपि गांभीर्यगुणसम्पन्नो भवति, स एव पुनः कारणवशात् सङ्गोपिताकारतया उत्तानहृदयो भवति, इति तृतीयः ३, तथा-एको गम्भीरो भवन् गम्भीरहृदयो भवतीति चतुर्थः । ४ । (२) ।

“ चत्वारि उदगा ” इत्यादि--पुनरुदकानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकमुदकमुत्तानं भवति प्रतलत्वात्, तदेव पुनरुत्तानावभासि-उत्तानमवभासत इत्येवं द्विमुत्तानावभासि भवति, स्थानविशेषात् इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-

जैमें सर्वथा असमर्थ चित्तवाला होता है (१) कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो उत्तान और गंभीर हृदयवाला होता है-कारणवश दर्शित चेष्टावाला होनेसे उत्तान होता है और स्वभावसे गांभीर्य गुणसंपन्न चित्तवाला होनेसे गंभीर हृदयवाला होता है २ तीसरा पुरुष ऐसा होता जो दैन्यादिसे युक्त होने पर भी गांभीर्यगुणसे युक्त होता है और कारणवश वही अपने आकारको छिपा लेनेवाला होनेसे उत्तान हृदयवाला होता है ३ तथा चौथा पुरुष प्रकार ऐसा होता है जो गंभीर होता हुआ गंभीर हृदयवाला होता है ४ (२)

फिर भी—“चत्वारि उदगा” इत्यादि उदक चार प्रकारके कहे गये हैं-जैसे उत्तान-उत्तानावभासी १ उत्तान गंभीरावभासी २ गंभीर उत्तानावभासी ३ और गंभीर गंभीरावभासी ४ इनमें जो उदक प्रतल(पतला)

द्विथी युक्त पोतानी गोपनीय (छुपाववा लायक) स्थितिने छुपाववाने मिल-कुल असमर्थ होय छे. (२) कोछ ओक पुरुष जेवो होय छे के जे उत्तान अने गंभीर हृदयवाणो होय छे-कारणवश दर्शित चेष्टावाणो होवाथी उत्तान होय छे अने स्वभावे गांभीर्य गुणसंपन्न चित्तवाणो होवाथी गंभीर हृदयवाणो होय छे. कोछ ओक पुरुष जेवो होय छे जे दैन्याद्विथी युक्त होवा छतां गांभीर्य गुणथी युक्त होय छे अने कारणवश जे जे पोतानी चेष्टाज्जाने छुपावी शकनासे होवाथी उत्तान हृदयवाणो होय छे. (४) कोछ पुरुष गंभीर पण्य होय छे अने गंभीर हृदयवाणो पण्य होय छे । २ ।

वगी “चत्वारि उदगा ” इत्यादि—उदक (पाणी) नीचे प्रमाणे चार प्रकारनुं पण्य होय छे—(१) उत्तान-उत्तानावभासी, (२) उत्तान-गंभीरावभासी (३) गंभीर-उत्तानावभासी अने (४) गंभीर-गंभीरावभासी (१) जे उदक

एकमुदकमुत्तानं-प्राग्वत्, -भवति, पुनस्तत् गम्भीरावभासि-अगाधवभासि-सङ्कीर्णस्थानाश्रितत्वादिनेतिद्वितीयः २। तथा-एकमुदकं गम्भीरम्-अगाधं सदुत्तानावभासि-विस्तीर्णस्थानाश्रयत्वादिनेति तृतीयः ३। तथा-एकमुदकं गम्भीरम्-अगाधं सद् गम्भीरावभासि-अगाधवभासि भवति गम्भीरस्थानाश्रितत्वादिनैवेति चतुर्थः ४ (३) ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव-उदकवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुष उत्तानः-तुच्छो भवति स एव पुनरुत्तानावभासी-उत्तान एवावभासत इत्येवंशीलउत्तानावभासी भवति, प्रदर्शित-तुच्छत्वविकारत्वात्, इति प्रथमः । १। तथा-एक-उत्तानो गम्भीरावभासी

होता है परन्तु स्थान विशेषसे उत्तान जैसा प्रतीत होता है वह प्रथम भंगमें परिगणित हुआ है १। जो उदक प्रतल-पतला होता है वह संकीर्ण स्थानमें रहनेसे अगाध जैसा प्रतीत होता है वह द्वितीय भंगमें गिना गया है २। जो उदक गंभीर अगाध होता हुआ भी विस्तीर्ण स्थानमें रहनेसे उत्तान जैसा प्रतीत होता है वह तृतीय भंगमें लिया गया है ३ और जो उदक अगाध होता हुआ भी गंभीर स्थानके आश्रयसे अगाध जैसा प्रतीत होता है वह चतुर्थ भंगमें लिया गया है ४ (३)

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—जैसे ये उदकके प्रकार कहे गये हैं, वैसेही पुरुषके भी चार प्रकार होते हैं—इनमें एक पुरुष ऐसा होता है जो उत्तान तुच्छ होता है और अपनी तुच्छतारूप विकारके दिखानेसे उत्तानावभासी होता है । दूसरा पुरुष प्रकार ऐसा

छाछड़ डोय अने स्थानविशेषमां रडेवाने कारणे उत्तान (छाछड़) देखातुं डोय ते उदकने पडेला लागामां भूकी शक्य छे. (१) जे उदक प्रतल डोय पणु संकीर्ण स्थानमां रडेवाने कारणे अगाध जेवुं लागतुं डोय तेने भील प्रकारनुं गणी शक्य (२) जे उदक गंभीर (अगाध) डोवा छतां पणु विस्तीर्ण स्थानमां रडेवुं डोवाथी उत्तान जेवुं लागतुं डोय तेने त्रील प्रकारमां भूकी शक्य छे. (३) जे उदक अगाध डोय अने संकीर्ण स्थानविशेषमां रडेवुं डोवाने कारणे अगाध लागतुं डोय तेने चोथा प्रकारमां भूकी शक्य छे. (४) । ३ ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषाना पणु एवा ज चार प्रकार कहे छे—(१) डोय पुरुष उत्तान (तुच्छ) डोय छे अने चोतानी तुच्छताने चेष्टाओ द्वारा प्रकट करते डोवाथी उत्तानावभासी पणु डोय छे.

संघृतत्वात् इति द्वितीयः २। तथा-एको गम्भीरउत्तानावभासी भवति कारणव-
शात् प्रदर्शितविकारत्वादिति तृतीयः ३। तथा-एको गम्भीरो भवति स पुनर्ग-
म्भीरावभासी भवतीति चतुर्थः ४। (४)।

“ चत्वारि उदही ” इत्यादि—उद्घयः—समुद्राश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—
एक उदधिः उत्तानः—तुच्छत्वात्प्रतलोभवतीत्याद्युदकमृत्रवद्विवरणं बोध्यम् । यद्वा—
एक उदधिः—पूर्वमुत्तानः—प्रतलो भवति स एव पश्चादपि उत्तानोदधिः—उत्तानोदधि-
प्रदेशो भवति, तरङ्गस्य समुद्राद्गहिरसत्वात् इति प्रथमः । १ । तथा-एकः पूर्वमु-

होता है जो-उत्तान होता हुआ भी अपने आकारको छुपा लेनेवाला होनेके कारण गंभीर प्रतीत होता है २। तीसरा पुरुष प्रकार ऐसा होता है जो गंभीर होता हुआ भी कारणवश विकारके दिखानेसे उत्तानके जैसा प्रतीत होता है ३। और चतुर्थ पुरुषप्रकार ऐसा होता है जो गंभीर होता हुआ भी गंभीरही जैसा प्रतीत होता है ४ (४)

“ चत्वारि उदही ” इत्यादि । समुद्र चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे-उत्तान उत्तानोदधि १ उत्तान गंभीरोदधि २ इत्यादि ४ यह सब अंग कथन, उदक मृत्रकी तरह कर लेना चाहिये। यद्वा-एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले भी उत्तान होता है प्रतल होता है और बादमें भी वह तरङ्गोंका सङ्घुट्टसे याहर असत्त्व होनेसे उत्तानोदधि प्रदेशवाला होता है । १ तथा-एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले उत्तान होता है और पीछे भी तरङ्गोंके आगमनसे वह अगाध होनेके कारण गंभीरोदधि प्रदेशवाला हो जाता है । २ एक उदधि ऐसा होता जो गम्भीर

(२) केषु पुरुष उत्तान (तुच्छ) तो डोय छे, पणु पोतानी तुच्छताने छुपावनासे डोपाथी गंभीर लागे छे. (३) केषु पुरुष जेवो डोय छे के जे गंभीर डोवा छतां पणु केषु डारणे पोताना मनोलावेने छुपावी शकतो नथी तेथी उत्तान जेवो लागे छे. (४) केषु पुरुष गंभीर डोय छे अने पोताना मनोलावेने सुअपर प्रकट नहीं थवा देवाने डारणे गंभीर जे लागे छे. १४।

“ चत्वारि उदही ” इत्यादि—समुद्र चार प्रकारने कहे छे—(१) उत्तान उत्तानोदधि, (२) उत्तान-गंभीरोदधि, इत्यादि चार प्रकार उदक सूत्रमां कथा प्रमाणे समजवा. अथवा-केषु एक उदधि (समुद्र) जेवो डोय छे के जे पहिलां पणु उत्तान (तुच्छ) डोय छे अने पछी पणु मोलज्जोनुं समुद्रनी षडार अस्तित्व नहीं डोपाथी उत्तानोदधि प्रदेशवाणे डोय छे. (२) केषु एक समुद्र जेवो डोय छे के जे पहिलां उत्तान डोय छे अने पाछणथी पणु तरंगोनुं आगमन थवाथी गंभीरोदधि प्रदेशवाणे थई जय छे. (३) केषु

तानः पश्चाद् गम्भीरोदधिः—गम्भीरोदधिप्रदेशो भवति तरङ्गागमनेनागाधत्वात्,
इति द्वितीयः । २।

तथा—एकः पूर्वं गम्भीरः पश्चात् तरङ्गापसरणेन उत्तानोदधिः—उत्तानोदधि
प्रदेशो भवतीति तृतीयः । तथा—एकः पूर्वं गम्भीरः पश्चाद् गम्भीरोदधिः—
गम्भीरोदधिप्रदेशः सदाऽगाधत्वादिति चतुर्थः ४ । ५ । एवं पुरुषदाष्टान्तिको-
ऽपि योजनीयः । ६ । दृष्टान्तदाष्टान्तिकसूत्रद्वयं सुगमम् । ८ । ॥ सू० २२ ॥

पूर्वमुदधय उक्ताः, सम्प्रति तत्तरकान्तिरूपयितुं सूत्रचतुष्टयमाह—

मूलम्—चत्तारि तरगा पणत्ता, तं जहा—समुदं तरामीतेगे
समुदं तरइ १, समुदंतरामीतेगे गोप्पयं तरइ २, गोप्पयं
तरामीतेगे समुदं तरइ ३, गोप्पयं तरामीतेगे गोप्पयं तरइ ४।
(१) एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता तं जहा—समुदं
तरामीतेगे समुदं तरइ ४। (२) ।

चत्तारि तरगा पणत्ता, तं जहा—समुदं तरित्ता णाममेगे
समुदे विसीयइ १ समुदं तरित्ता णाममेगे गोप्पए विसीयइ
२, गोप्पयं तरित्ता णाममेगे समुदे विसीयइ ३, गोप्पयं तरित्ता

होता है और पीछेसे वह तरङ्गोंके अपसरणसे उत्तानोदधि प्रदेशवाला
होता है ३। और एक उदधि ऐसा होता है जो पहिले गम्भीर होता है
और पीछे भी अगाध होनेसे गम्भीरोदधि प्रदेशवाला होता है ४। इसी
तरहसे पुरुष दाष्टान्तिक सूत्र भी समझ लेना चाहिये ये दृष्टान्त दाष्टा-
न्तिक सूत्रद्वय सुगम है ॥ सू० २२ ॥

એક સમુદ્ર એવો હોય છે કે જે ગંભીર હોય છે પણ ત્યારબાદ તેમાંથી
તરંગોનું અપસરણ થવાને કારણે ઉત્તાનોદધિ પ્રદેશવાળો બની જાય છે. (૪)
કેઈ સમુદ્ર એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ગંભીર હોય છે અને પછી
પણ અગાધ જ રહેવાને કારણે ગંભીરોદધિ પ્રદેશવાળો રહે છે. એ જ પ્રમાણે
દાષ્ટાન્તિક પુરુષના ચાર પ્રકારો પણ સમજી લેવા. આ બંને સૂત્ર સુગમ
હોવાથી વધુ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું નથી. ॥ સૂ० ૨૨ ॥

णाममेगे गोष्पए विसीयइ ४। (३)। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा--समुदं तरित्ता णाममेगे समुद्वे विसीयइ ४(४) ॥ सू० २३ ॥

छाया—चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—समुद्रं तरामीत्येकः समुद्रं तरति १, समुद्रं तरामीत्येको गोष्पदं तरति २, गोष्पदं तरामीत्येकः समुद्रं तरति ३ गोष्पदं तरामीत्येको गोष्पदं तरति ४। (१)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा—समुद्रं तरामीत्येकः समुद्रं तरति ४। (२)।

चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—समुद्रं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विपीदति १, समुद्रं तरीत्वा नामैको गोष्पदे विपीदति २. गोष्पदं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विपीदति ३, गोष्पदं तरीत्वा नामैको गोष्पदे विपीदति ४। (३)। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—समुद्रं तरीत्वा नामैकः समुद्रे विपीदति ४ (४) ॥ सू० २३ ॥

टीका—चत्तारि तरगा ” इत्यादि—तरकाः—तरन्तीति तरास्त एव तरकाः ते चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः—कश्चित् तरकः तरणशीलः समुद्रं तरामीति कृत्वा समुद्रं तरति १, एकः कश्चित्तरकः समुद्रं तरामीति कृत्वा तत्तरणासमर्थो गोष्पदं—गोखुरपरिमितजलयुक्तं जलाशयं तरति २, एकः कश्चित्तरकः गोष्पदं तरामीति निश्चित्य सामर्थ्यवाहुल्यात् पश्चात् समुद्रं तरति ३, एकः कश्चिद्

अथ सूत्रकार इनके तरणशीलोंका निरूपण करनेके लिये सूत्र चतुष्टयका कथन करते हैं—‘चत्तारि तरगा पणत्ता इत्यादि’ सूत्र २३ ॥

टीकार्थ—तरक-तैरनेवाले चार प्रकारके होतेहैं—जैसे-एक तरक ऐसा होता है जो “ मैं समुद्रमें तैरूं ” ऐसा विचार करके समुद्रमें तैरता है १ एक तरक ऐसा होता है जो—“ मैं समुद्रमें तैरूं ” इस प्रकार विचार करके गोष्पदमें तैरता है २ एक तरक ऐसा होता है जो “ मैं गोष्पदमें तैरूं ” ऐसा विचार करके समुद्रमें तैरता है ३ एक तरक ऐसा होता है जो “ मैं गोष्पदमें तैरूं ” ऐसा विचार करके गोष्पदमेंही तैरता है ४

इसे सूत्रकार ते समुद्रने तरी ज्वने प्रयत्न करनार तरवैयाओनुं चार सूत्रो द्वारा निरूपण करे छे. “ चत्तारि तरगा पणत्ता ” इत्यादि—

टीकार्थ—तरकना (तरवैयाओना) नीचे प्रमाणे चार प्रकार कइया छे—(१) कोइ ओक तरक “ हुं समुद्रमां तरीश, ” ओवो विचार करीने समुद्रमां तरे छे. कोइ ओक तरक ओवो विचार करे छे के “ हुं समुद्रमां तरीश, धारे छे ” पणु ते गोष्पदमां तरे छे. (३) कोइ तरवैया “ हुं गोष्पदमां तरीश ” आ प्रका

गोष्पदं तरामीति निश्चित्याऽल्पशक्तिकत्वाद् गोष्पदमेव तरति ४ (१) । समुद्रं-समुद्रवद् दुस्तरं सर्वविरत्यादिकं कार्यं तरामि-धातूनामनेकार्थत्वात् करोमीत्येवं निश्चित्य तत्र समर्थत्वात् समुद्रं-समुद्रवद् दुस्तरं सर्वविरत्यादिकं कार्यमेव तरति-तत्र समर्थो भवतीति प्रथमः १। तथा—एकस्तरकः समुद्रं-समुद्रवत् दुस्तरं तरामीति निश्चित्य तत्रासामर्थ्याद् गोष्पदं-गोष्पदवत् सुतर देशविरत्यादिकमल्पतमं तरति-निर्वाहयतीति द्वितीयः २। तथा—एको गोष्पदं-गोष्पदवत् सुतरं तरामीति कृत्वा सामर्थ्यातिशयात् समुद्रंसमुद्रवद्दुस्तरं कार्यं तरति-साधयति, धातूनाम-

एक तरक जो प्रथम भंगमें प्रकट किया गया है, वह जैसा विचार करता है वैसा नहीं करता है। तृतीय भंगमें जो तरक प्रकट किया गया है वह भी ऐसा ही है। और चतुर्थ भंगगत पुरुष जैसा विचार करता है वैसा ही काम करता है। गोखुर परिमित जलसे युक्त जो जलाशय है, वह यहां गोष्पदसे गृहीत हुआ है। जो जिसमें तरनेका विचार करता है वह उसमें इसलिये नहीं तरता है कि या तो उसमें तैरनेकी उसमें अशक्ति है या उसमें तैरनेकी शक्तिकी बहुलता है—जैसे—जो इस प्रकारका विचार करता है कि मैं समुद्रमें तैरूँ और वह तैरता है गोखुर-परिमित जलयुक्त जलाशयमें तो इसका कारण यही है कि उसमें उसको तैरनेकी शक्ति नहीं है। तथा जो ऐसा विचार करता है कि मैं तैरूँ गोखुरपरिमित जलवाले जलाशयमें, और वह तैरता है समुद्रमें,

तैरने विचार करीने समुद्रमां तरे छे. अने (४) कोर पुरुष “ हु गोष्पदमां तरीश ” आ प्रकारने विचार करीने गोष्पदमां न तरे छे

गोखुर परिमित जलवाली युक्त जलाशयने गोष्पद कहे छे. पड़ेला अने योथा प्रकारना पुरुषो जेयो विचार करे छे ओबुं न कार्य करी गतावे छे भीन अने त्रीन प्रकारना पुरुषो जेयो विचार करे छे ओबुं करी शकता नहीं. समुद्रमां तरवाने विचार करीने तेमां नहीं तरनार भाषुसमां तेनी शक्तिने अभाव समज्यो. गोष्पदमां तरवाने विचार करीने तेमां नहीं तरनारमां तरवानी शक्तिनी अधिकता समज्यो जे भाषुस जेयो विचार करे छे के “ हु समुद्रमां तरुं, ” पणु समुद्रमां तरवाने अहले गोखुर परिमित जलयुक्त जलाशयमां तरे छे—नानकडा जलाशयमां तरे छे, तेनुं कारणु जे छे के समुद्रमां तरवाने ते असमर्थ छे. कोर भाषुस जेयो विचार करे छे के “ हु गोखुर परिमित जलाशयमां तरुं, ” परन्तु जेवा जलाशयमां तरवाने अहले ते समुद्रमां तरे छे, तेनुं कारणु जे छे के तेनामां तरवानी

तो इसका कारण यही है कि उसमें शक्तिका बाहुल्य है। तथा जो "समुद्रमें तैरूँ" ऐसा विचार करता है और फिर समुद्रमें ही तैरता है, तो इसका भी कारण शक्तिकी बाहुल्यता है, और मैं गोष्पदमें तैरूँ, ऐसा विचार कर वह गोष्पदमें तैरता है। यहाँ पर भी उसमें उसके तैरनेकी शक्तिका अभाव कारण है, अर्थात् उसमें अल्प शक्ति है इसी तरहसे पुरुषजात भी चार हैं, जैसे जो इस बातको सोचता है कि "समुद्रं तरामि" मैं समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरति आदिरूप कार्य करूँ, ऐसा निश्चित करके भी जो उसेही करता है अर्थात् सर्वविरतिरूप चारित्रको पालता है वह प्रथम भंगमें लिया गया है। इस पक्षमें "तरामि"का अर्थ "करोमि" ऐसा जो किया गया है वह धातुकी अनेकार्थताको लेकर किया गया है। संकल्पानुसार जो कार्य करता है वह उसके करनेमें समर्थ है इसलिये करता है। दूसरा पुरुष ऐसा विचार करता है मैं समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरतिरूप चारित्रको धारण करूँ, परन्तु उसके धारण करने में उसकी अशक्ति होने से वह गोष्पदकी तरह सुतर (सुखपूर्वक तैरने योग्य) देशविरति आदिरूप अल्पतम चारित्रका निर्वाह करता है २। तीसरा पुरुष जो ऐसा विचार करता है कि मैं गोष्पदकी समान सुतर जो देशविरति

शक्ति अपार छे समुद्रमां तरवानो विचार करीने समुद्रमां न तरनार भाषुसमां पणु शक्तिनुं बाहुल्य समञ्जुं. गोष्पदमां तरवानो विचार करीने गोष्पदमां न तरनार भाषुसमां तरवानी शक्तिनो अलाव अथवा तेनी शक्तिनी अल्पता छे अम समञ्जु.

इवे सूत्रकार आ चार पुरुष प्रकारेनुं नीलु रीते स्पष्टीकरणु करे छे—
 (१) केध अेक पुरुष अेवो डोय छे के के समुद्रना जेवी दुस्तर सर्वविरति धारणु करवानो निश्चय करे छे अने सर्वविरति इप चारित्रनी आराधना करे छे. आ प्रकारेनो पुरुष "समुद्रं तरामि" धत्यादि पडेवा लांगामां गणुवी शक्य छे "तरामि" आ पहनो अर्थ जे "करोमि" लेवामां आव्यो छे ते धातुनी अनेकार्थतानी अपेक्षाअे लेवामां आव्यो छे संकल्प अनुसार जे भाषुस काम करे छे ते भाषुस ते काम करवाने समर्थ डोवाने कारणे ते काम करी शके छे. (२) केध अेक पुरुष अेवो विचार करे छे के "हुं समुद्रना जेवुं दुस्तर अेवुं सर्वविरति इप चारित्र धारणु करुं," पणु सर्व विरति इप चारित्रने धारणु करवामां पोताने असमर्थ समञ्जने ते गोष्पद समान सरण अेवा देशविरति इप अल्पतम चारित्रनुं पालन करे छे. (३) (३) केध पुरुष अेवो विचार करे छे के "हुं गोष्पदना समान सरण अेवा

नेकार्थत्वात् इति तृतीयः ३। तथा—एकस्तरको गोष्पदं—गोष्पदवत् सुतरं—सुसाधं कार्यं तरामि—करोमीति निश्चित्य गोष्पदं—गोष्पदवत् सुतरं—सुसाधं तरति—सार्धयति । इति चतुर्थः ४ (१)।

“ चत्वारि तरगा ” इत्यादि—चत्वारस्तरकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एकः कश्चित्तरकः पूर्वं समुद्रं तरीत्वा पश्चात् शक्तिहासात्समुद्रे विपीदति न तरीतु समर्थो भवति१, एकः कश्चित्समुद्रं तरीत्वा गोष्पदे विपीदति, शक्तेरत्यन्तहासात् २, एकः कश्चिद् गोष्पदं तरीत्वा पश्चात् प्रचुरशक्तिप्रभावात्समुद्रमपि तरति ३,

आदि है उनका पालन करूं, परन्तु वह सामर्थ्यकी अधिकतासे समुद्रकी तरह दुस्तर सर्वविरति आदिरूप चारित्रिका धारण कर लेना है यह तृतीय अंगमें गिना गया है ३। तथा जो पुरुष ऐसा विचार करताहै कि मैं गोष्पदतुल्य सुसाध्य देशविरति आदि रूप चारित्रिका पालन करूं और वह उसेही पालताहै तो ऐसा वह पुरुष चतुर्थ अंगमें लिया गयाहै ४(२)

“ चत्वारि तरगा ” इत्यादि—तरक चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक तरक ऐसा होता है, जो पूर्वमें समुद्रको तिर करके पश्चात् शक्तिके हाससे समुद्रमें दुःखी हो जाता है, उसे फिर तरनेमें समर्थ नहीं होता है १ कोई एक तरक ऐसा होताहै, जो गोष्पदको तिर करके गोष्पदमेंही शक्तिके अत्यन्त हास हो जानेसे दुःखी हो जाता है २ कोई एक तरक ऐसा होता है, जो गोष्पदको तिर करके पश्चात् प्रचुर शक्तिके प्रभावसे

देशविरति इप आरित्रनुं पालन कर्तुं, ” परन्तु तेने अेभ लागे छे के सर्वा विरति आदि इप आरित्रनुं पालन करवाने पण्य पोते समर्थ छे, तेथी ते समुद्रना जेवा दुस्तर सर्वाविरति आदि इप आरित्रने धारण करी ले छे (४) केअं अेक पुरुष अेवो विचार करे छे के “ गोष्पद समान सुसाध्य देश विरति आदि इप आरित्रनुं हुं पालन करु, ” आ प्रभावे ते विचार करीने ते देशविरति इप आरित्रने ज धारण करे छे, धारण के ते पोते अेभ माने छे के सर्वाविरति इप आरित्रनुं पालन करवाने पोते समर्थ नथी

“ चत्वारि तरगा ” इत्यादि—चार प्रकारना तरवैया कह्या छे—(१) केअं अेक तरवैया अेवो होय छे के जे पडेलां तीं समुद्रने तरी जाय छे, पण्य पाछणथी तेनी शक्तिने हास थछे जवाथी ते समुद्रमां हुंभी थछे जाय छे तेने करी तरीने पार करवाने असमर्थ जनी जाय छे. (२) केअं अेक तरवैया गोष्पु परिमित जणयुक्त जणाशयने तरवाने प्रयत्न करे छे पण्य अेभ करतां करतां तेनी शक्तिने हास थछे जवाथी ते जणाशयने पार करतां करतां हुंभी थाय छे. (३) केअं अेक तरवैया गोष्पदने तयां आह प्रचुरशक्तिना प्रभावथी समुद्रने

एकः कश्चित् गोष्पदं तरीत्वा गोष्पदेऽपि त्रिपीदति-अल्पशक्तिरुत्वात् ४ (३) ।
एवमेव तरकवदेव चत्वारि पुरुषजातानि, प्रज्ञप्तानि तद्यथा-एकः कश्चित् तरकः कार्य
करणसमर्थः पुरुषः समुद्रं-समुद्रमिव दुस्तरं-दुःसाध्यं कार्यं तरीत्वा पारयित्वा समुद्रे-
समुद्रसदृशे दुःसाधे कार्यान्तरे त्रिपीदति-क्षयोपशमवैलक्षण्यात्कार्यान्तरं न पार-
यति १ एवं भङ्गत्रयमूहनीयम् । २ ॥ सू० २३ ॥

पूर्वं तरका उक्ताः, ते च पुरुषविशेषा एव भवन्तीति पुरुषविशेषानेव कुम्भ
दृष्टान्तप्रदर्शनपूर्वकं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे
पुण्णे १, पुण्णे णाममेगे तुच्छे २, तुच्छे णाममेगे पुण्णे ३,
तुच्छे णाममेगे तुच्छे ४। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता,
तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णे ४।

चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णे-
भासी १, पुण्णेणाममेगे तुच्छोभासी २, तुच्छे णाममेगे पुण्णे-
भासी ३, तुच्छे णाममेगे तुच्छोभासी ४। एवं चत्वारि पुरिस-
जाया पणत्ता, तं जहा—पुण्णे णाममेगे पुण्णेभासी ४।

समुद्रमें भी तैर जाता है ३ और कोई एक तरक ऐसा होता है जो
अल्प शक्तिवाला होनेसे गोष्पदको तैर करके भी गोष्पदमेंही दुःखी
हो जाता है ४ (३)

इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक तरक
कार्य करनेमें समर्थ हुआ पुरुष समुद्रकी तरह दु स्तर दु साध्य कार्यको
समाप्त करके समुद्र जैसे दुःसाध्य कार्यान्तरमें क्षयोपशमकी विलक्षण-
तासे नहीं लगताहै १ इसी प्रकारसे तीन भंग समझ लेना चाहिये ॥ सू. २३ ॥

पशु तरी नय छे. (४) केध अेक तरवैथे अेवे डोय छे के ने अल्प
शक्तिवाणे डोवाथी गोष्पदने तरीने गोष्पदमां न दुःभी दुःभी थध नय छे.
तरवैथानी नेम पुरुषेना पशु थार प्रकार कथा छे-केध अेक पुरुष अेवे
डोय छे के ने समुद्रने तरवा नेवुं दुस्तर-दुःसाध्य कार्य पूर्य करे छे, पशु
क्षयोपशमनी विलक्षणताने दीधे अेवां न केध भीन दुःसाध्य कार्यमां पडतो
नथी. अे न प्रभाणे गाडीना त्रषु लांगा पशु समल देवा. ॥ सू० २३ ॥

चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा-पुण्णे णाममेगे पुण्णरूवे
पुण्णे णाममेगे तुच्छरूवे १। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया
पणत्ता, तं जहा-पुण्णे णाममेगे पुण्णरूवे १।

चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा-पुण्णेऽवि एगे पियट्ठे १,
पुण्णेऽवि एगे अवदले २, तुच्छेऽवि एगे पियट्ठे ३, तुच्छेऽवि
एगे अवदले १। एवामेव चत्वारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-
पुण्णेऽवि एगे पियट्ठे ४,

तहेव चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा-पुण्णेऽवि एगे
विस्संदइ १, पुण्णेऽवि एगे णो विस्संदइ २, तुच्छेऽवि एगे
विस्संदइ ३, तुच्छेऽवि एगे णो विस्संदइ १। एवामेव चत्वारि
पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-पुण्णेऽवि एगे विस्संदइ १।

तहेव चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा-भिन्ने १, जज्जिण
२, परिस्साई ३, अपरिस्साई ४, एवामेव चउविहे चरित्ते पणत्ते,
तं जहा-भिन्ने जाव अपरिस्साई १।

चत्वारि कुंभा पणत्ता, तं जहा-महुकुंभे णाममेगे महु-
पिहाणे १, महुकुंभे णाममेगे विसपिहाणे २, विसकुंभे णाममेगे
महुपिहाणे ३, विसकुंभे णाममेगे विसपिहाणे १। एवामेव चत्वारि
पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-महुकुंभे णाममेगे महुपिहाणे १।

हिययमपावमकलुसं जीहाऽवि य महुरभासिणी निच्चं ।

जंमि पुरिसंमि विज्जइ से महुकुंभे महुपिहाणे ॥१॥

हिययमपावमकलुसं जीहाऽवि य कडुयभासिणी निचचं ।

जंमि पुरिसंमि विज्जइ से सहुकुंभे विसपिहाणे ॥२॥

जं हिययं कलुसमयं जीहाऽविय महुरभासिणी निचचं ।

जंमि पुरिसंमि विज्जइ से विसकुंभे सहुपिहाणे ॥३॥

जं हिययं कलुसमयं जीहाऽवि य कडुयभासिणी निचचं ।

जंमि पुरिसंमि विज्जइ से विसकुंभे विसपिहाणे ।४॥ सू०२४॥

छाया—चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णः १, पूर्णा नामैकस्तुच्छः २, तुच्छो नामैकः पूर्णः ३, तुच्छो नामैकस्तुच्छः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णः ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णावभासी १, पूर्णा नामैकस्तुच्छावभासी २, तुच्छो नामैकः पूर्णावभासी ३, तुच्छो नामैकस्तुच्छावभासी ४। एवं चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णावभासी ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णरूपः १, पूर्णा नामैकस्तुच्छरूपः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णा नामैकः पूर्णरूपः ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णाऽप्येकः प्रियार्थः १, पूर्णाऽप्येकोऽप (च)दलः २, तुच्छोऽप्येकः प्रियार्थः ३, तुच्छोऽप्येकोऽप(च)दलः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णाऽप्येकः प्रियार्थः ४।

तथैव चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पूर्णाऽप्येको विष्यन्दते १, पूर्णाऽप्येको नो विष्यन्दते २, तुच्छोऽप्येको विष्यन्दते ३, तुच्छोऽप्येको न विष्यन्दते ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—पूर्णाऽप्येको विष्यन्दते ४, तथैव चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—भिन्नः १, जर्जरितः २, परिस्त्रावी ३, अपरिस्त्रावी ४। एवमेव चतुर्विधं चारित्रं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—भिन्नं यावद् अपरिस्त्रावि ४।

चत्वारः कुम्भाः प्रज्ञप्ताः, मधुकुम्भो नामैको मधुपिधानः १, मधुकुम्भो नामैको विषपिधानः, २ विषकुम्भो नामैको मधुपिधानः ३, विषकुम्भो नामैको विषपिधानः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मधुकुम्भो नामैको मधुपिधानः ४।

हृदयमपापमकलुषं, जिह्वाऽपि च मधुरभाषिणी नित्यम् ।

यस्मिन् पुरुषे विद्यते स मधुकुम्भो मधुपिधानः ॥ १ ॥

हृदयमपापमकलुषं जिह्वाऽपि च कटुकभाषिणी नित्यम् ।

यस्मिन् पुरुषे विद्यते स मधुकुम्भो विषपिधानः ॥ २ ॥

यद्दृढदयं कलुषमयं जिह्वाऽपि च मधुरभाषिणी नित्यम् ।

यस्मिन् पुरुषे विद्यते स विषकुम्भो मधुपिधानः ॥ ३ ॥

यद्दृढदयं कलुषमयं जिह्वाऽपि च कटुकभाषिणी नित्यम् ।

यस्मिन् पुरुषे विद्यते स विषकुम्भो विषपिधानः ॥ ४ ॥ २४ ॥

टीका—‘ चत्वारि कुम्भा ’ इत्यादि—कुम्भाः—घटाः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः,

एको घटः पूर्णः सर्वाङ्गसम्पन्नः, यद्वा—प्रमाणसम्पन्नो भवति, स एव पुनः पूर्णः—मधुघृतादिभृतो भवतीति प्रथमः १, नायशब्दो वाक्यालङ्कारे, एवमग्रेऽपि, तथा—एकः कुम्भः पूर्णः समस्तावयवयुक्तोऽपि तुच्छः—मध्वादिवस्तुरिक्तो भवतीति द्वितीयः २, तथा—एकस्तुच्छः अपूर्णाङ्गो, यद्वा—लघुः सन्नपि पूर्णः—मध्वादिभृतो भवतीति तृतीयः ३ तथा—एकस्तुच्छस्तुच्छ एव भवतीति चतुर्थः ४ ।

ये तरक जो चार कहे गये हैं वे विशेष पुरुषरूपही होते हैं, इसलिये अब सूत्रकार उन पुरुषविशेषोंको कुम्भ दृष्टान्तको लेकर निरूपण करते हैं

‘ चत्वारि कुम्भा पणत्ता ’ इत्यादि सूत्र २४ ॥

टीकार्थ—कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे—कोई एक कुम्भ घट ऐसा होता है, जो पूर्ण सर्वाङ्गसे युक्त होता है अथवा—प्रमाणसम्पन्न होता है, वही पुनः पूर्ण—मधु घृतादिसे भरा हुआ रहता है १। कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो पूर्ण होता है—समस्त अवयवोंसे युक्त होता है, तब भी तुच्छ मध्वादि(शहद आदि) वस्तुओंसे रिक्त होता है २। तथा कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो तुच्छ अपूर्ण अङ्गवाला होता है यद्वा—छोटा होता

अर्ही ने तरका (तरैया) तु कथन कथुं, तेष्वा विशिष्ट पुरुषो रूपेण डोय छे, आ सम्बन्धने अनुलक्षिने इवे सूत्रकार कुंलना दृष्टान्तद्वारा पुरुष विशेषानुं निरूपण करे छे. “ चत्वारि कुम्भा पणत्ता ” इत्यादि—

टीकार्थ—कुंलना चार प्रकार कल्या छे—(१) केरि अके कुंल अवेो डोय छे के ने पूषु (सर्वांग संपन्न अथवा प्रमाण संपन्न) डोय छे, अने धी, मध आदिथी लरेदी डोय छे. (२) केरि अके कुंल पूषु (समस्त अवयवोथी युक्त) डोय छे, परंतु मध, धी आदि द्रव्यो तेमां लरेदां न डोवाने कारणे आली डोय छे. (३) केरि अके कुंल अवेो डोय छे के ने अपूषु (अपूषु

યદ્વા-૯કઃ કુમ્ભઃ પૂર્વે પૂર્ણઃ-મધ્વાદિ ભૃતો ભવતિ, સ પુનઃ પશ્ચાદપિ પૂર્ણ
 इत्येवं चत्वारोऽपि भङ्गा विवरणीयाः । ४।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-एवमेव-कुम्भवदेव-पुरुषजातानि
 चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो जात्यादि गुणैः पूर्णः सन् पुनर्ज्ञानादिगुणैः
 पूर्णो भवतीति प्रथमः १ । यद्वा-एकः पुरुषो धनेन गुणैर्वा पूर्णः सन् पश्चादपि
 स धनेन गुणैर्वा पूर्णो भवति, एवं शेषास्त्रयोऽपि भङ्गाः बोध्याः । ४ ।

“ चत्वारि-कुम्भा ” इत्यादि-पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः
 कुम्भोऽखिलावयवैर्दध्यादिना वा पूर्णः सन् पूर्णावभासी-पूर्ण एव दर्शकदृष्टोऽव-

हुआ भी पूर्ण मध्वादिसे भरा होता है ३। तथा कोई एक घट ऐसा
 होता है, जो तुच्छ होता हुआ भी तुच्छही रहता है ४

यद्वा-एक कुम्भ पहिले पूर्ण मधुआदिसे भरा होता है और पीछे
 भी वह पूर्ण होता है १ इसी प्रकारसे शेष भंग भी समझ लेना चाहिये ४

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-इसी प्रकारसे पुरुष
 जात भी चार कहे गये हैं-जैसे-कोई एक पुरुषजात ऐसा होता है जो
 जात्यादि गुणोंसे पूर्ण होता हुआ भी पुनः ज्ञानादि गुणोंसे पूर्ण होता
 है १ यद्वा-पहिले धनसे या गुणोंसे पूर्ण होता हुआ भी पीछे भी
 वह धनसे या गुणोंसे पूर्ण बना रहता है इसी प्रकार शेष तीन भंग
 भी समझ लेना चाहिये ।

अंगोवाणो अथवा नानो) डोवा छतां पणु मध, धी आदिथी पूरुं डोय
 छे. (४) केध अेक कुंल अेवो डोय छे के ने अपूरुं अंगोवाणो अथवा
 तुच्छ) डे.य छे अने तेमां धी, मध आदि द्रव्ये लरेदां नडीं डोवाने कारणे
 पणु अपूरुं न डोय छे.

अथवा आ रीते पणु ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કેઈ એક કુંલ
 પડેલાં પણુ મધ આદિથી ભરેલો ડોવાને કારણે પૂર્ણ ડોય છે અને પછી
 પણુ તે દ્રવ્યેથી ભરેલો ડોવાને કારણે પૂર્ણ ન ડોય છે. એ ન પ્રમાણે
 બાકીના ત્રણ ભાંગા પણુ સમજી લેવા.

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि-એ ન પ્રમાણે પુરુષોના પણુ
 ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કેઈ એક પુરુષ એવો ડોય છે કે જે જાત્યાદિ
 ગુણોથી પૂર્ણ ડોય છે અને જ્ઞાનાદિ ગુણોથી પણુ પૂર્ણ ડોય છે. અથવા તે
 પડેલાં ધન અથવા ગુણોથી પૂર્ણ ડોય છે, અને પછી પણુ તેનાથી પૂર્ણ ન
 રહે છે. એ ન પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણુ સમજી લેવા.

ભાસત ઇત્યેવં શીલો ભવતીતિ પ્રથમઃ ૧ । તથા-એકઃ કુમ્ભઃ પૂર્ણોઽપિ કેનાપિ કારણેનામિપ્રેતાર્થસાધકત્વાભાવાત્ તુચ્છાવભાસી-તુચ્છ ઇવાવભાસત ઇત્યેવં શીલો ભવતીતિ દ્વિતીયઃ ૨ । એવં શેષમદ્વયમપિ વોધ્યમ્ । ૪ ।

“ એવં ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એવં-કુમ્ભવત્ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞાનિ, તથા-એકઃ પુરુષો ધનશ્રુતાદિભિઃ પૂર્ણઃ સન્ ધનશ્રુતાદિવિનિયોગાત્ પૂર્ણાવભાસી-પૂર્ણ એવાવભાસત ઇત્યેવં શીલો ભવતીતિ પ્રથમઃ ૧ । તથા-એકઃ પુરુષઃ પૂર્ણઃ સન્નપિ ધનશ્રુતાદિસહિતત્વાત્, તુચ્છાવભાસી-ધનશ્રુતાદિહીન વદવભાસનશીલો ભવતીતિ દ્વિતીયઃ ૨ । તથા-એક સ્તુચ્છોઽપિ-ધનશ્રુતાદિ રહિ-

પુનઃ—“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ—કુમ્ભ ચાર પ્રકારકે કહે ગયે છે—જેસે-એક કુમ્ભ એસા હોતા છે જો સમ્પૂર્ણ અવયવોસે અથવા દહી આદિસે પૂર્ણ હોતા હુઆ-પૂર્ણાવભાસી દર્શકજનોંકી દષ્ટિમેં પૂર્ણહી છે એસા પ્રતીત હોતા છે ૧ । એક કુમ્ભ એસા હોતા છે જો પૂર્ણ હોને પર ઓ કિસી કારણવશ વસમેં અમિપ્રેત-દ્રુટ અર્થકી સાધકતા નહીં હોનેસે તુચ્છાવભાસી વહ તુચ્છકી તરહ પ્રતીત હોતા છે ૨ । હસી તરહસે શેષ દો મંગ ઓ સમજ્ઞ લેના ઝાહિયે ૪ “ એવં ચત્તારિ પુરિસજાયા ” હસી પ્રકારસે પુરુષજાત ચાર કહે ગયે છે, જેસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા છે જો ધનશ્રુત આદિસે પૂર્ણ હોતા હુઆ-ધનશ્રુત આદિકે વિનિયોગસે વ્યયસે પૂર્ણાવભાસી પૂર્ણહી છે એસા પ્રતીત હોતા રહતા છે ૧ । કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા છે, જો પૂર્ણ હોતા હુઆ ઓ ધનશ્રુત આદિસે સહિત હોતા હુઆ ઓ ધનશ્રુત

“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ—કુંભના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે. (૧) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે સમસ્ત અવયવોથી સંપન્ન હોય છે અથવા દહીં આદિથી પૂર્ણ હોય છે અને પૂર્ણાવભાસી પણ હોય છે એટલે કે દર્શકોની દષ્ટિએ પણ તે પૂર્ણ જ લાગે છે. (૨) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છાવભાસી હોય છે, એટલે કે તેમાં ભરેલું દ્રવ્ય કોઈ કારણે નજરે નહીં પડતું હોવાથી તે કુંભ ખાલી જ હોવાનો ભાસ થાય છે. એ જ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગા પણ સમજી લેવા.

“ એવં ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ પુરુષ એવા પ્રકારના હોય છે કે તેઓ ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ (સંપન્ન) હોય છે અને ધનશ્રુત આદિના વિનિયોગથી પૂર્ણાવભાસી-પૂર્ણ જ છે એવું દર્શકોને લાગે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છાવભાસી-ધનશ્રુત આદિથી

તોડપિ કેનાપિ પ્રકારેણ પ્રસન્નોચિતપ્રવૃત્તેઃ પૂર્ણાવભાસી-પૂર્ણ ઇવાવભાસત્ત્વે ઇત્યેવં શીલો ભવતીતિ તૃતીયઃ ૩ । તથા-એકરતુચ્છો ધનશ્રુતાદિસહિતો ભવતીતિ ધનશ્રુતાદિસહિતત્વાત્ તુચ્છાવભાસી-તુચ્છ એવાવભાસત્ત્વે ઇત્યેવં શીલો ભવતીતિ ચતુર્થઃ ૪ ।

“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ—પુનઃ કુમ્ભાશ્ચત્તારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—એકઃ કુમ્ભઃ પૂર્ણઃ—જલાદિના શ્રુતો ભવતિ સ પુનઃ પૂર્ણરૂપ-પૂર્ણ રૂપં યસ્ય સ તથા-અવિકલસંસ્થાનકઃ, યદ્વા-પુણ્યરૂપઃ શોભનસંસ્થાનકો ભવતીતિ પ્રથમઃ ૧, તથા-એકઃ પૂર્ણોડપિ સન તુચ્છરૂપઃ-હીનાડકારો ભવતીતિ દ્વિતીયઃ ૨ એવં શેષ-મજ્જદ્વયં વોધ્યમ્ ૧૪ ।

આદિસે હીનકી તરહ પ્રતીત હોતા હૈ ૨ કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ હોને પર મી-ધનશ્રુત આદિસે રહિત હોને પર મી કિસી પ્રકારસે પ્રસન્નોચિત પ્રવૃત્તિસે પૂર્ણાવભાસી પૂર્ણકી તરહ પ્રતીત હોતા હૈ ૩ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ ધન શ્રુતાદિસે રહિત હોતા હૈ ઓર તુચ્છાવભાસી તુચ્છકી તરહપ્રતીત હોતા હૈ ૪

ફિરમી—“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ-કુમ્ભ ચાર પ્રકારકે કહે ગયે હૈ—જેસે-એક કુમ્ભ એસા હોતા હૈ જો જલાદિસે ભરા હુઆ હોતા હૈ ઓર પૂર્ણ રૂપવાલા-અવિકલ સંસ્થાનવાલા હોતા હૈ યદ્વા-પુણ્ય રૂપવાલા શોભન-સંસ્થાનવાલા હોતા હૈ ૧ । એક કુમ્ભ એસા હોતા હૈ-પૂર્ણ હોતા હુઆ મી તુચ્છરૂપવાલા-હીન આકારવાલા હોતા હૈ ૨ હસી પ્રકારસે શેષ દો ભાગ મી સમજ્જ લેનાં ચાહિયે ૪

રહિત જ હોય એવો લાગે છે. (૩) કોઈ એક પુરુષ ધનશ્રુત આદિથી રહિત હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે; પરંતુ પ્રસન્નોચિત પ્રવૃત્તિને કારણે પૂર્ણાવભાસી લાગે છે એટલે કે ધનશ્રુત આદિથી સંપન્ન લાગે છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ તુચ્છ (ધનશ્રુત આદિથી રહિત) હોય છે અને તુચ્છાવભાસી જ લાગે છે એટલે કે લોકો પણ તેને ધનશ્રુત આદિથી રહિત જ લાગે છે.

“ ચત્તારિ કુંભા ” કુંભની આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ એક કુંભ જ આદિથી પણ પૂર્ણ હોય છે અને પૂર્ણ રૂપવાળો સંપૂર્ણ (અવિકલ-અખંડિત) સંસ્થાનવાળો હોય છે અથવા પુણ્ય રૂપવાળો સુદર આકારવાળો હોય છે. (૨) કોઈ એક કુંભ હીન આદિથી પૂર્ણ હોવા છતાં પણ તુચ્છ રૂપવાળો અસુદર આકારવાળો હોય છે. એ જ પ્રમાણે આક્રીના જે ભાંગા પણ સમજ્જ લેવા.

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—एवमेव-कुम्भवदेव पुरुष-जातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः पुरुषो ज्ञानादिना पूर्णः सन् पूर्णरूपः पुण्यरूपो वा भवति, विशिष्टरजोहरणादिद्रव्यलिङ्गसम्पन्नत्वात्, स च सुसाधुरिति प्रथमः १ । तथा—एकः पूर्णः सन् राजादिकारणवशात् तुच्छरूपः—त्यक्तलिङ्गो भवति स च साधुरेवेति द्वितीयः ३ । तथा—एकस्तुच्छो—ज्ञानादि विरहितोऽपि सन् पूर्णरूपः पुण्यरूपो वा भवति, साधुलिङ्गसम्पन्नत्वात्, स च निह्वादिरिति तृतीयः ३ । तथा—एकस्तुच्छः—ज्ञानादि रहितः सन् तुच्छरूपः—द्रव्यलिङ्गरहितो भवति स च गृहस्थादिरिति चतुर्थः । ४ ।

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—हसी प्रकारसे पुरुष-जात चार कहे गये हैं—इनमें कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो ज्ञाना-दिसे पूर्ण होता है और पूर्ण रूपवाला या पुण्यरूपवाला होता है, अर्थात् विशिष्ट रजोहरणादि रूप द्रव्यलिङ्गसे सम्पन्न होनेके कारण पुण्य-रूपवाला होता है ऐसा वह पुरुष साधु होता है १। तथा कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पूर्ण होता है पर राजा आदिरूप कारणके वशसे तुच्छ रूप त्यक्त लिङ्ग छोड़ दिया है लिङ्ग-वेष जिसने ऐसा हो जाता है जो तुच्छ-ज्ञानादिसे रहित हुआ भी पूर्णरूप या साधुलिङ्गसे युक्त होनेसे पुण्यरूप होता है, ऐसा वह निह्वादि होता है ३ तथा—कोई एक ऐसा होता है जो तुच्छ-ज्ञानादिसे रहित होता है और तुच्छरूप-द्रव्यलिङ्गसे भी रहित होता है ऐसा वह गृहस्थ आदि होता है ४

“ एवामेव चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—ये ४-प्रमाणे चार प्रकारना पुरुषो कहे छे—(१) केछ पुरुष एवो डोय छे के जे ज्ञानादिथी संपन्न पणु डोय छे अने-पूर्ण रूपवाणो—अथवा पुण्य रूपवाणो डोय छे, अटवे के रजोहरण, सुभवस्रिका आदि रूप द्रव्यलिङ्गथी पणु संपन्न डोवाने कारणे पुण्य रूपवाणो डोय छे, एवो पुरुषमां साधुने गण्णी शक्य छे (२) केछ एक पुरुष एवो डोय छे के जे ज्ञानादिथी पूर्ण तो डोय छे पणु पुण्यरूप डोतो नथी—तुच्छ रूप डोय छे, अटवे के राजादिना भयने कारणे जेजे योताना साधु वेषना परित्याग कर्यो छे एवो पुरुषने अर्ही तुच्छ रूपवाणो कहे छे, (३) केछ एक पुरुष एवो डोय छे के जे ज्ञानादिथी रहित डोवा छतां पणु पूर्णरूप डोय छे अथवा साधुना वेषथी युक्त डोवाने कारणे पुण्य रूप डोय छे निह्वादिने आ प्रकारमां भूकी शक्य छे (४) केछ एक पुरुष तुच्छ अने तुच्छरूप डोय छे, अटवे के ज्ञानादिथी रहित डोवाने कारणे तुच्छ डोय छे अने द्रव्यलिङ्ग (रजोहरण आदि, साधुनी उपधि) थी रहित डोवाथी, तुच्छरूप डोय छे, गृहस्थने आ प्रकारमां भूकी शक्य छे.

‘ ચત્તારિ કુંભા ઇત્યાદિ—પુનઃ કુમ્ભાશ્ચસ્વારઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા—એકઃ કશ્ચિત્ કુમ્ભઃ પૂર્ણઃ=જલાદિના ભૃત સન્ પ્રિયાર્થઃ—પ્રિયશબ્દસ્ય ભાવપ્રધાનનિર્દેશત્વાન્પ્રિયત્વમર્થઃ, તેન પ્રિયત્વાર્થઃ—પ્રીત્યર્થો ભવતિ સ્વર્ણાદિમયત્વપૂર્ણત્વસારસંપન્નત્વાદિતિ પ્રથમઃ । ૧ । તથા—એકઃ પૂર્ણોઽપિ=ર્ણઃ સત્રપદલઃ—કૃત્સિતમૃત્તિકાદિદ્રવ્યનિર્મિતઃ, યદ્વા—અવદલ.=અવદલ્યતે—વિદીર્યત ઇત્યવદલઃ—સ્વલ્પ પક્વતયા સોઽસારો ભવતીતિ દ્વિતીયઃ ૨ । તથા—એકસ્તુચ્છઃ કુમ્ભઃ પ્રિયાર્થઃ—પ્રીત્યર્થો ભવતિ કનકાદિમયત્વેન સારસ્વાદિતિ તૃતીયઃ । ૩ । તથા—એક સ્તુચ્છોઽપિ અપદલો ભવતીતિ ચતુર્થઃ । ૪ ।

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એવામેવ—કુમ્ભવદેવ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—એકઃ—કશ્ચિત્ પુરુષો ધનશ્રુતાદિભિઃ પૂર્ણઃ સન્

પુનઃ—“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ—કુંભ ચાર પ્રકારકે હોતે હૈ જૈસે—કોઈ એક કુમ્ભ એસા હોતા હૈ જો પૂર્ણ હોતા હૈ જલાદિસે ભરા હોતા હૈ ઓર પ્રિયાર્થ હોતા હૈ યહાં પ્રિય શબ્દ ભાવપ્રધાન નિર્દેશવાલા હૈ હસલિયે વહ પ્રિયત્વાર્થ સ્વર્ણાદિમય હોનેસે ઓર સારસંપન્ન હોનેસે પ્રીતિકે લિયે હોતા હૈ ૧ કોઈ એક કુંભ એસા હોતા હૈ જો પૂર્ણ હુઆ ઓ અપદલ હોતા હૈ—લરાય મિટી આદિકા વના હુઆ હોતા હૈ યદ્વા—અવદલ હોતા હૈ—સ્વલ્પ પકા હુઆ હોનેસે અસાર હોતા હૈ ૨ કોઈ એક કુમ્ભ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ હોતા હુઆ ઓ પ્રિયાર્થ પ્રીત્યર્થ હોતા હૈ ક્યોંકિ એસા ઘટ સુવર્ણ આદિકા વના હોનેસે સારવાલા હોતા હૈ ૩ તથા કોઈ એક ઘટ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ હોતા હૈ ઓર અવદલ હોતા હૈ ૪

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—હસી તરહસે પુરુષજાત

“ ચત્તારિ કુંભા ” ઇત્યાદિ—કુંભના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ (જલાદિથી ભરેલો) હોય છે અને પ્રિયાર્થ, (પ્રીતિજનક) હોય છે, એટલે કે સુવર્ણ આદિથી નિર્મિત હોવાથી અને સારસંપન્ન હોવાથી પ્રિય લાગે તેવો હોય છે. અહીં “ પ્રિય ” શબ્દ ભાવપ્રધાન નિર્દેશવાળો છે. (૨) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ હોવા છતાં પણ અપદલ હોય છે—ખરાબ માટી આદિમાંથી બનેલો હોય છે, અથવા અવદલ હોય છે એટલે કે પૂરેપૂરો પાકેલો નહીં હોવાથી અસાર હોય છે (૩) કોઈ એક કુંભ પૂર્ણ નહીં હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે, પણ સુવર્ણ આદિનો બનાવેલો હોવાને કારણે સારયુક્ત હોવાથી પ્રીતિજનક હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ તુચ્છ પણ હોય છે અને અપદલ અથવા અવદલ પણ હોય છે.

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ

प्रियार्थः=प्रियवचनदानादिभिः प्रीतिजनको भवतीति प्रथमः । १ । तथा-एकः पुरुषः पूर्णोऽपि अपदलः=परोपकारं प्रत्ययोग्यो भवतीति द्वितीयः । २ । तथा-एकस्तुच्छोऽपि-ज्ञानादिविहीनोऽपि प्रियार्थः-प्रीत्यर्थो भवति परोपकारपरायणत्वादिति तृतीयः । ३ । तथा-एकस्तुच्छोऽपि अपदलो भवतीति चतुर्थः । ४ ।

‘ तद्देव चत्वारि कुंभा ’ इत्यादि—तथैव-पूर्ववदेव कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः-कश्चित् कुम्भः पूर्णोऽपि=जलादिना भृतः विष्यन्दते=स्रवति सच्छिद्रत्वादिति प्रथमः । १ । तथा-एकः पूर्णोऽपि नो विष्यन्दते=न स्रवति निश्छिद्रत्वात् इति द्वितीयः । २ । तथा-एकस्तुच्छः-तुच्छः-तुच्छजलादियुक्तो भवति,

भी चार होते हैं—जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा है जो धनश्रुत आदिसे पूर्ण होता है और प्रियार्थ प्रियवचन आदिसे प्रीतिजनक होता है १ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पूर्ण होता है पर वह परोपकारके प्रति अयोग्य होता है २ कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ होता है ज्ञानादिसे हीन होता है फिर भी प्रीत्यर्थ परोपकारपरायण होता है ३ और कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो तुच्छ भी होता है और अपदल भी होता है परोपकारके प्रति अयोग्य होता है ४

“ तद्देव चत्वारि कुंभा ” इत्यादि—पहिलेकी तरहसेही कुम्भ चार प्रकारके होते हैं—इनमें कोई एक कुम्भ ऐसा होता है पूर्ण—जलादिसे भरा होता है पर वह छिद्रसहित होनेसे चूना है १ कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो जलादिसे भरा होता है पर वह निश्छिद्र रहित होनेसे चूना नहीं है २ कोई एक घट ऐसा होता है जो तुच्छ थोड़ेसे जलादिसे भरा

चार प्रकार कहा छे—(१) केह एक पुरुष अवे। डाय छे के ने धनश्रुत आदिथी पूरुं डाय छे अने प्रियार्थ पणु डाय छे अटवे के प्रियवचन आदिने दीधे प्रीतिजनक पणु डाय छे. (२) केह एक पुरुष धनश्रुत आदिथी पूरुं डाय छे पणु परोपकारी नही डोवाथी प्रियार्थ डोतो नथी. (३) केह एक पुरुष धन आदिथी पूरुं डोतो नथी पणु प्रीत्यर्थ-परोपकार परायणु डाय छे. (४) केह एक पुरुष तुच्छ (ज्ञानादिथी रडित) पणु डाय छे अने अपदल (परोपकारी वृत्तिथी रडित) पणु डाय छे.

“ तद्देव चत्वारि कुंभा ” इत्यादि—कुंभना आ प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—(१) केह एक कुंभ जलादिथी पूरुं डाय छे पणु तेमां छिद्र पडेवु डोवाथी तेमांथी पणु जलादि अभतुं डाय छे. (२) केह एक कुंभ जला दिथी पूरुं डाय छे अने छिद्ररडित डाय छे तेथी तेमांथी पणु टपकतुं नथी. (३) केह एक कुंभ तुच्छ-थोडा जलादिथी लरेवो डाय छे, छतां छेद्युक्त

સ એવ વિષ્યન્દતે-સ્રવંતીતિ તૃતીયઃ ।૩। તથા-એકસ્તુચ્છઃ ન વિષ્યન્દતે-ન સ્રવંતીતિ ચતુર્થઃ ।૪।

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસ્વજાયા ” ઇત્યાદિ—એવામેવ-કુમ્ભવેદેવ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા-એકઃ પુરુષઃ પૂર્ણઃ સન્ વિષ્યન્દતે-ધનં યદ્વા-શ્રુતં દદાતીતિ પ્રથમઃ ૧ તથા-એકઃ પૂર્ણોઽપિ-ધનશ્રુત-સમ્પન્નોઽપિ નો વિષ્યન્દતે-ધનં શ્રુતં વા ન દદાતીતિ દ્વિતીયઃ ।૨। તથા-એકસ્તુચ્છોઽપિ અલ્પધનશ્રુતોઽપિ વિષ્યન્દતે- ધનં શ્રુતં વા દદાતીતિ તૃતીયઃ ।૩। તથા-એકસ્તુચ્છઃ સન્ ધનં શ્રુતં વા ન વિષ્યન્દતે-ન દદાતીતિ ચતુર્થઃ ।૪।

હુબ્રા હોતા હૈ ફિર ખી વહ ચૂતા હૈ ૩ ઓર કોઈ ઘટ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ-થોડેસે જલાદિસે ભરે હોને પર ચૂતા નહીં હૈ ૪

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસ્વજાયા ” ઇત્યાદિ—હસી તરહસે પુરુષ જાત ખી ચાર કહે ગયે હૈ—જેસે—કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો પૂર્ણ હોતા હૈ ઓર ધનકો યા શ્રુતકો દૂસરોંકે લિયે હોતા હૈ—ધનશ્રુત આદિસે સંપન્ન હોતા હૈ ફિર ખી દૂસરોંકે લિયે ધન યા શ્રુત નહીં હોતા હૈ ૨ કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો તુચ્છ-અલ્પ ધન તથા શ્રુતવાલા હોતા હૈ ફિર ખી દૂસરોંકી મલાઈકે લિયે ધન યા શ્રુતકો દેતા હૈ ૩ તથા કોઈ એક પુરુષ એસા હૈ જો તુચ્છ હોતા હૈ ઓર અપને ધન યા શ્રુતકો દૂસરોંકે લિયે નહીં દેતા હૈ ૪

હોવાથી તેમાંથી પાણી ટપકતું હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ એવો હોય છે કે જે થોડા પાણીથી ભરેલો હોય છે પણ છેલ્લે વિનાનો હોય છે, તેથી તેમાંથી પાણી ટપકતું નથી.

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસ્વજાયા ” ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધનશ્રુત આદિથી પૂર્ણ હોય છે અને તેના ધન, જ્ઞાન આદિનો અન્યના હિત માટે ઉપયોગ કરે છે. (૨) કોઈ એક પુરુષ ધનાદિથી પૂર્ણ હોય છે પણ અન્યના હિતને માટે તેના તે ધન આદિનો ઉપયોગ કરતો નથી. (૩) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે તુચ્છ હોય છે. અલ્પ ધન કે શ્રુતવાળો હોય છે, પણ અન્યના હિતને માટે તેનો ઉપયોગ કરે છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ અલ્પ ધન, શ્રુત આદિથી સંપન્ન હોવાને કારણે તુચ્છ હોય છે અને તે ધનાદિનો અન્યના હિતને માટે ઉપયોગ કરનારો હોતો નથી.

“ તદેવ ચત્તારિ કુમ્ભા ” इत्यादि—तथैव=कुम्भाः पुनश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—भिन्नः—स्फुटितः १, तथा—जर्जरितः—राजीयुक्तः २, तथा—परिस्रावी-क्षरणशीलोऽस्म्यक्पक्वत्वात् ३, तथा—अपरिस्रावी—अक्षरणशीलः सुपक्वत्वेन दृढत्वादिति ४ ।

“ एवामेव चउव्विहे चरित्ते ” इत्यादि—एवमेव—कुम्भवदेव चारित्रं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—भिन्नं—खण्डितं मूलप्रायश्चित्ताऽऽपत्या १, यावत्पदेन ‘ जर्जरितं, परिस्रावि ’ इत्युभयं ग्राह्यम्, तत्र जर्जरितं—छेदादि प्राप्या २,

“ તદેવ ચત્તારિ કુમ્ભા ” इत्यादि—पहिलेकी तरहसेही कुम्भ चार प्रकारके कहे गये हैं—जैसे—कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो भिन्न फूटा होता है १ कोई एक ऐसा होता है जो जर्जरित राजीयुक्त (लाख आदिसे) चिपकाकर ठीक होता है, बहुत पुराना होता है २ कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो परिस्रावी होता है, अच्छी तरहसे पका हुआ न होनेसे क्षरणशील होता है ३ तथा कोई एक घट ऐसा होता है जो अपरिस्रावी—अच्छी तरहसे पका हुआ होनेसे मजबूतीके कारण क्षरणशील नहीं होता है ४ .

“ एवामेव चउव्विहे चरित्ते ” इत्यादि—इसी तरहसे चारित्र भी चार प्रकारका होता है—इनमें कोई एक चारित्र ऐसा होता है, भिन्न होता है मूल प्रायश्चित्तकी प्राप्तिसे खण्डित होता है १। यहां यावत्पदसे—“ जर्जरित और परिस्रावी ” इन दो पदोंका ग्रहण हुआ है। तथा कोई एक चारित्र ऐसा होता है जो छेदादि प्राप्तिसे जर्जरित होता है २। कोई एक

“ તદેવ ચત્તારિ કુમ્ભા ” इत्यादि—એ જ પ્રમાણે કુમ્ભના આ ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક કુમ્ભ એવો હોય છે કે ફૂટેલો હોય છે (૨) કોઈ એક કુમ્ભ એવો જર્જરિત અને પુરાણો થઈ ગયો હોય છે કે તેને સ્થળે સ્થળે લાપી, લાખ આદિ વડે સાંધીને ઉપયોગમાં લેવા યોગ્ય કર્યો હોય છે. (૩) કોઈ એક કુમ્ભ પરિસ્રાવી હોય છે એટલે કે બરાબર પકવેલો ન હોવાથી તેમાંથી પાણી ઝંમતું હોય છે. (૪) કોઈ એક કુમ્ભ અપરિસ્રાવી હોય છે એટલે કે સારી રીતે પકવેલો અને રીઠો હોવાથી તેમાંથી પાણી ઝંમતું નથી.

“ एवामेव चउव्विहे चरित्ते ” इत्यादि—એ જ પ્રમાણે ચારિત્ર પણ ચાર પ્રકારનું હોય છે. (૧) ભણ ઘડા જેવું—કોઈ ચારિત્ર એવું હોય છે કે જે ક્ષિત્ર ધાય છે—મૂળ પ્રાયશ્ચિત્તની પ્રાપ્તિથી ખંડિત થાય છે. (૨) કોઈ એક ચારિત્ર

પરિસ્ત્રાવિ-સૂક્ષ્માતિચારત્વેન ૩, તથા-અપરિસ્ત્રાવિ-ક્ષરણરહિતં નિરતિચાર-
ત્વેતિ ૪ । इह पुरुषाधिकारेऽपि पुरुषस्य चारित्ररूपधर्मप्रतिपादनं धर्म-धर्मिणोः
कथञ्चिदभेदाभ्युपगमात् ।

“ चत्वारि कुंभा ” इत्यादि—पुनः कुम्भाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-
एको कुम्भो मधुकुम्भः सञ्चन आधारभूतः कुम्भो मधुकुम्भः=मधुपूर्णः सन् मधुपिधानः
मध्वेव पिधानमाच्छादनं यस्य स तथा-मधुभृतपात्रपिधानो वा भवतीति
प्रथमः । १ । तथा-एकः कुम्भो मधुकुम्भः सन् विपपिहितो भवतीति द्वितीयः
। २ । तथा-एकः विपकुम्भो मधुपिधानो भवतीति तृतीयः ३ । तथा-एको
विपकुम्भः सन् विपपिधानो भवतीति चतुर्थः ४ ।

ચારિત્ર એસા હોતા હૈ સૂક્ષ્મ અતિચારસે પરિસ્ત્રાવી હોતા હૈ ૩। ઓર કોઈ
એક ચારિત્ર એસા હોતા હૈ જો અપરિસ્ત્રાવી નિરતિચારવાલા હોનેસે
પરિસ્ત્રાવી નહીં હોતા હૈ ૪। યહાં પુરુષાધિકારમેં ઓ પુરુષકે ચારિત્રરૂપ
ધર્મકા જો પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ વહ ધર્મ ઓર ધર્મીમેં કથંચિત્
અભેદ હૈ હસ માન્યતાકો લેકર ક્રિયા ગયા હૈ

“ चत्वारि कुंभा ” इत्यादि—पुनश्च—कुम्भ चार प्रकारके कहे
गये हैं—जैसे—कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो मधुका आधारभूत
होनेसे मधुकुम्भ हो जाता है और उसका ढक्कन भी मधुका—शाहद ही
होता है—अथवा—मधुसे भरा हुआ पात्र उसका ढक्कन होता है १। कोई एक
कुम्भ ऐसा होता है जो मधुकुम्भ होता हुआ भी विषके ढक्कनसे ढका
हुआ होता है २। कोई एक कुम्भ ऐसा होता है जो विषसे भरा हुआ

એવું હોય છે કે જે છેદાદિની પ્રાપ્તિથી જન્મરિત થાય છે (૩) કોઈ એક
ચારિત્ર એવું હોય છે કે જે સૂક્ષ્મ અતિચાર વડે પરિસ્ત્રાવી હોય છે. (૪)
કોઈ એક ચારિત્ર અપરિસ્ત્રાવી હોય છે એટલે કે નિરતિચારવાળું હોવાથી
પરિસ્ત્રાવી હોતું નથી. અહીં પુરુષનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, છતાં પણ અહીં
ચારિત્ર ૩૫ ધર્મતું જે પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે ધર્મ અને ધર્મીમાં
અભેદ માનીને કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું.

“ चत्वारि कुंभा ” इत्यादि—कुंलना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पद्य पडे
छे—(१) कौं अेक कुंल अेवो ह्ये छे के नेमां मध लरवामां आवतुं
ह्येवाथी तेने मधुकुंल कडेवामां आवे छे, अने तेतुं ढांकण्य पद्य मधुतुं ज
ह्ये छे अेटवे के मधथी लरेतुं पात्र तेना ढांकण्य ३५ ह्ये छे (२) कौं
अेक कुंलमां मध लरेतुं ह्ये छे पद्य तेना ढांकण्य ३५ विषथी लरेतुं पात्र
भूकेतुं ह्ये छे. (३) कौं अेक कुंल अेवो ह्ये छे के ने विषथी पूर्ण ह्ये

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ— એવામેવ-ઉક્તકુમ્ભવદેવ પુરુષજાતાનિ ચત્તારિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—મધુકુમ્ભો નામૈકો મધુપિધાનઃ ૧, મધુકુમ્ભો નામૈકો વિષપિધાનઃ ૨, વિષકુમ્ભો નામૈકો મધુપિધાનઃ ૩, વિષકુમ્ભો નામૈકો વિષપિધાનઃ ૪ । એતદ્વજ્ઞચતુષ્ટયસ્યાર્થં ગાથાચતુષ્ટયેન વિશદયતિ— “ હિયમપાવ ” મિત્યાદિ, આસાં મૂલોક્તાનાં ચતસૃણાં ગાથાનાં વ્યાખ્યા સુગમા ॥સૂ ૦ ૨૪॥

હોતા હૈ, ઓર મધુકે પિધાન-ઢક્કનવાલા હોતા હૈ ૩ તથા કોઈ એક કુમ્ભ એસા હોતા હૈ જો વિષસેહી ભરા રહતા હૈ ઓર વિષકેહી ઢક્કનવાલા હોતા હૈ ૪

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—ઈસી તરહસે પુરુષજાત બી ચાર કહે ગયે હૈ—જૈસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ, જો મધુકુમ્ભકે જૈસા હોતા હૈ, ઓર મધુપિધાન-ઢક્કનવાલા હોતા હૈ ૧। કોઈ એક પુરુષ એસા હોના હૈ—જો મધુકુમ્ભ જૈસા હોતા હુઆ બી વિષ પિધાનવાલા હોના હૈ ૨। કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ જો વિષકુમ્ભ જૈસા હોતા હુઆ બી મધુપિધાનવાલા હોતા હૈ ૩। ઓર કોઈ એક પુરુષ એસા હોતા હૈ, જો વિષ-કુમ્ભ જૈસા હોતા હૈ ઓર વિષપિધાનવાલા હોતા હૈ ઇન ચાર ભજ્ઞોંકા અર્થ ‘હિયમપાવમકલુસં’ ઇન ગાથાઓ દ્વારા ઇસ પ્રકારસે વિશદ ક્રિયા ગયા હૈ—જિસ પુરુષકા હૃદય પાપરહીત ઓર કલુષતાહીન હોતા હૈ, ઓર જિહ્વા જિસકી મધુરભાષિણી હોતી હૈ વહ પુરુષ મધુ પિધાનવાલે મધુ-કુમ્ભકે જૈસા કહા ગયા હૈ ૧ હિયમપાવમકલુસં જીહ્વાવિ ઇત્યાદિ જિસકા હૃદય પાપવિહીન ઓર કલુષતાહીન હોતા હૈ પરન્તુ જિહ્વા જિસકી કઠુકભાષિણી હોતી હૈ વહ વિષપિધાનવાલે મધુકુમ્ભકે જૈસા કહા

છે, પણ મધથી ભરેલું પાત્ર તેના પર ઢાંકણા રૂપે રહેલું હોય છે. (૪) કોઈ એક કુંભ વિષથી ભરેલો હોય છે, અને તેનું ઢાંકણું પણ વિષપૂર્ણ પાત્ર જ હોય છે.

“ એવામેવ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—એ જ પ્રમાણે પુરુષોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (૧) કોઈ એક પુરુષ મધુકુંભ સમાન હોય છે અને મધુપિધાન (મધુયુક્ત ઢાંકણાવાળો) વાળો હોય છે. જે પુરુષનું હૃદય પાપ-હીન અને કલુષતાહીન હોય છે અને જેની જીભ મધુરભાષિણી હોય છે એવા પુરુષને મધુપિધાનયુક્ત મધુકુંભ સમાન ગણવામાં આવે છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે મધુકુંભ સમાન હોવા છતાં પણ વિષપિધાનવાળો હોય છે. જે માણસનું હૃદય પાપહીન અને કલુષતાહીન હોય છે, પણ જેની વાણી કઠવી અથવા અપ્રિય લાગે છે એવા પુરુષને વિષપિ-ધાનવાળો મધુકુંભ સમાન કહ્યો છે.

पूर्वं विषकुम्भो विषपिधानः पुरुष उक्तः सचोपसर्गकारीति उपसर्गान्धिरूपयितुमाह—

मूलम्—चउविहा उवसग्गा पणत्ता, तं जहा--दिवा १,
माणुसा २, तिरिक्खजोगिया ३, आयसंचेयणिज्जा ४।

दिवा उवसग्गा चउविहा पणत्ता, तं जहा--हासा १
पाओसा २, वसिंसा ३, पुढोवेसाया ४।

माणुस्सा उवसग्गा चउविहा पणत्ता, तं जहा--हासा १,
पाओसा २, वसिंसा ३, कुसीलपडिसेवणया ४।

तिरिक्खजोगिया उवसग्गा चउविहा पणत्ता, तं जहा--
भाया १, पाओसा २, आहारहेउया ३, अवच्चलेणसारक्खणया ४।

आयसंचेयणिज्जा उवसग्गा चउविहा पणत्ता, तं जहा--
घट्टणया, १, पवडणया २, थंभणया ३, लेसणया ४। ॥सू० २५॥

चतुर्विधा उपसर्गाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—दिव्याः १, मानुषाः २, तैर्यग्योनिकाः
३, आत्मसंचेतनीयाः ४। (१)

दिव्या उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा हासाः १, प्राद्वेपाः २, वैमर्शाः ३,
पृथग्विमानाः ४। (२)।

गया है २। जं हिययं इत्यादि, जिसका हृदय कलुषतासे भरा होता है, परन्तु जो मीठा बोलता है ऐसा वह पुरुष विषकुम्भके जैसा मधुपिधानवाला कहा गया है ३। जं हिययकलुसमयं इ. तथा—जिसका हृदय कलुषतासे भरा होता है, और जीभ भी जिसकी कटुकभाषिणी होती है ऐसा, वह पुरुष विषपिधानवाले विषकुम्भके जैसा कहा गया है ४ ॥ सू० २४ ॥

(૩) કેઈ એક પુરુષ વિષકુંભ સમાન હોય છે, પણ મધુપિધાનવાળો હોય છે. જે માણસનું હૃદય કલુષતાથી પૂર્ણ હોય છે પણ જેની વાણી મીઠી હોય છે એવા પુરુષને મધુપિધાનવાળા વિષકુંભ સમાન કહ્યો છે.

(૪) કેઈ એક પુરુષ વિષકુંભ સમાન હોય છે અને વિષપિધાનવાળો હોય છે. એટલે કે જેનું હૃદય પણ કલુષતાથી ભરેલું હોય છે અને જેની બલ પણ કડવી વાણી બોલનારી હોય છે એવા પુરુષને વિષપિધાનવાળા વિષકુંભ સમાન કહેવામાં આવ્યો છે ॥ સૂ. ૨૪ ॥

मानुषा उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा हासाः १, प्राद्वेषाः २, वैमर्शाः ३, कुशीलप्रतिसेवनकाः ४।

तिर्यग्योनिका उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-भायाः १, प्राद्वेषाः २, आहारहेतुकाः ३, अपत्यलयनसंरक्षणकाः ४।

आत्मसंचेतनीया उपसर्गाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-वद्वनकाः १, प्रपतनकाः २, स्तम्भनकाः ३, श्लेषणकाः ४ ॥ सू० २५ ॥

टीका—“ चउव्विहा उवसग्गा ” इत्यादि—उपसर्जनानि-उपसर्गाः—यद्वा-उपसृज्यते=धर्मात् प्रव्याव्यते जीव एभिरित्युपसर्गाः=उपद्रवविशेषाः, ते च कर्तृभेदाच्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, आह च—

“ उवसज्जणमुवसग्गो जेग जओ य उवसिज्जए जम्हा ।

सो दिव्वमणुय-तेरिच्छ आयसंवेयणाभेओ ॥ १ ॥

छाया—उपसर्जनमुपसर्गः येन यत्तश्चोपसृज्यते यस्मात् ।

स दिव्य-मानुज-तैरश्वा-ऽऽत्म संवेदनाभेदः ॥ १ ॥ इति,

तद्यथा-दिव्याः-देवसम्बन्धिनः १, तथा-मानुषाः-मनुष्यसम्बन्धिनः २,

‘चउव्विहा उवसग्गा पणत्ता’ इत्यादि सूत्र २५ ॥

टीकार्थ-उपसर्ग चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे-दिव्य १ मानुष २ तिर्यग्योनिक ३ और आत्मसंचेतनीय ४ जीव जिनके द्वारा श्रुतचारित्ररूप धर्मसे चलायमान कर दिया जाताहै, वे उपसर्ग हैं। ये उपसर्ग उपद्रव-विशेषरूप होते हैं, यहां कर्त्ताके भेदसे इन्हे चार प्रकारका कहा गया है उक्त च—“ उवसज्जणमुवसग्गो ” इत्यादि-इसका अर्थ स्पष्ट है। जो उपसर्ग देवों द्वारा किया जाता है वह दिव्य उपसर्ग है १ मनुष्यों द्वारा जो उपसर्ग किया जाता है वह मानुष उपसर्ग है २ जो उपसर्ग तिर्यश्च जीवों द्वारा किया जाता है वह तिर्यश्च संबन्धी उपसर्ग

“ चउव्विहा उवसग्गा पणत्ता ” इत्यादि—

टीकार्थ-उपसर्गना चार प्रकार कहे छे-(१) दिव्य-देवकृत, (२) मानुषी-मनुष्य-कृत, (३) तिर्यग्योनिक (तिर्यग्य कृत) (४) आत्म संचेतनीय (स्वकृत) एवं तेना द्वारा श्रुत चारित्र रूप धर्मभांथी चलायमान कराय छे तेने उपसर्ग उपद्रव विशेष रूप डोय छे, अही कर्त्ताना लेदनी अपेक्षाओ तेमना चार प्रकार कहे छे, उद्यु पद्यु छे के—“ उवसज्जणमुवसग्गो ” इत्यादि तेना अर्थ स्पष्ट छे, जे उपसर्ग देवना द्वारा करवाभां आवे छे, तेने दिव्य उपसर्ग कहे छे, जे उपसर्ग मनुष्यो द्वारा करवाभां आवे छे तेने मानुषी

તથા-તૈર્યગ્યોનિકાઃ-તિર્યક્સમ્વન્ધિનઃ ૩, તથા-આત્મસંચેતનીયાઃ-આત્મના સ્વેન સંચેત્યન્તે-ક્રિયન્તે इत्यात्मसंचेतनीयाः आत्मसम्बन्धिनः ૪।

તત્ર—‘ દિવ્યા ઉપસર્ગા ’ ઇત્યાદિ—દિવ્યા ઉપસર્ગાશ્ચતુર્વિધાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા-હાસાઃ-હાસેન-હાસ્યેન નિર્વ્રતા હાસાઃ, યદ્વા-હાસાદ્વા હામાઃ ૧, તથા-પ્રાદ્રેષાઃ-પ્રદ્રેષો-વિપ્રિયમ્, તસ્માદ્વાઃ ૨, તથા-વૈમર્શાઃ-વિમર્શો વિચારઃ ધૈર્યપરીક્ષારૂપઃ, તસ્માદ્વાઃ-વૈમર્શાઃ ૩, તથા-પૃથગ્વિમાત્રાઃ-પૃથગ્-ભિન્ના માત્રા= હાસાદિવસ્તુલક્ષણા યેષ્વપસર્ગેષુ તે પૃથગ્વિમાત્રાઃ ૪ ।

તત્ર-હાસા ઉપસર્ગાઃ પ્રસિદ્ધાઃ ૧, પ્રાદ્રેષા-યથા-સદ્ગમકો દેવો ભગવતો મહાવીરસ્યોપસર્ગાનકાર્પીન્ ૨, વૈમર્શા યથા-ક્વચિદ્ વ્યન્તરાયતને સ્વકર્મનિર્જ

૨૩ ઓર જો ઉપસર્ગ સ્વયં સે ક્રિયા જાતા હૈ વહ આત્મસંચેતનીય ઉપસર્ગ હૈ ૪। इनमें जो दिव्य उपसर्ग है वे चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे- हास १ प्राद्वेष २ वैमर्श ३ और पृथग्विमात्र ४ जो उपसर्ग हास्यसे निर्वातित होते हैं-वे अथवा जो हास्य के द्वारा उत्पन्न होते हैं वे उपसर्ग हास हैं १। जो उपसर्ग प्राद्वेषसे - उत्पन्न होते हैं वे प्राद्वेष उपसर्ग हैं २। जो उपसर्ग धैर्य परीक्षा करनेरूप विचारसे उत्पन्न होते हैं-क्रिये जातेहैं-वे वैमर्श उपसर्गहैं। तथा-जिन उपसर्गोंमें हासादि रूप मात्रा अलग २ रहती है वे पृथग्विमात्रा उपसर्ग हैं ४ इनमें जो हास उपसर्ग है वह तो प्रसिद्धहीहै। प्राद्वेष उपसर्ग ऐसे होते हैं कि जैसे-उपसर्ग संगमदेवने भगवान् महावीर पर किये थे वैमर्श उपसर्ग ऐसे होते हैं कि जैसे-कोई मुनि किसी व्यन्तरके स्थान पर

ઉપદ્રવ-ઉપસર્ગ કહે છે જે ઉપસર્ગ તિર્યંચ જીવો દ્વારા કરવામાં આવે છે તેને તિર્યંચ સંબંધી ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પોતાના દ્વારા જ કરવામાં આવે છે તેને આત્મસંચેતનીય ઉપસર્ગ કહે છે.

દિવ્ય ઉપસર્ગના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) હાસ, (૨) પ્રાદ્રેષ, (૩) વૈમર્શ અને (૪) પૃથગ્વિમાત્ર. જે ઉપસર્ગ હાસ્ય વડે નિર્વાતિત હોય છે તેમને અથવા હાસ્ય દ્વારા જે ઉપસર્ગ ઉત્પન્ન થાય છે તેમને હાસ-સર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પ્રદ્રેષ દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે તેમને પ્રાદ્રેષ ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ ધૈર્યની કસોટી કરવા માટે કરાય છે તે ઉપસર્ગને વૈમર્શ ઉપસર્ગ કહે છે.

જે ઉપસર્ગમાં ઉપહાસ આદિ રૂપ માત્રા અલગ અલગ રહે છે તેને પૃથગ્વિમાત્રા ઉપસર્ગ કહે છે. “ હાસ ઉપસર્ગ ” તે બાણીતો હોવાથી તેનું વધુ સ્પષ્ટીકરણ અહીં કર્યું નથી. સંગમ દેવે ભગવાન મહાવીર પર જે ઉપસર્ગો કર્યા હતા તેમને પ્રાદ્રેષ ઉપસર્ગો કહી શકાય. વૈમર્શ ઉપસર્ગનું સ્વરૂપ

रार्थं कश्चिन्मुनिः कायोत्सर्गं कृत्वा स्थितः, तदनन्तरं व्यन्तरो देवस्तस्य देवता कीदृशोऽयमिति विचाराद्दुपसर्गानकरोदिति ३।

पृथग्विमात्रा यथा-सङ्गमक एव देवो हासेनोपसर्गान् कृत्वा प्रद्वेषेण चकार, पुनर्विमर्षेण कृत्वा प्रद्वेषेण कृतवानिति ।४। इत्युपसर्गचतुष्टयोदाहरणानि ॥

“ माणुस्सा उवसग्गा ” इत्यादि—स्वष्टम्, नवरं-मानुषा हासा उपसर्गा यथा-वेश्यापुत्री क्षुल्लकरयोपसर्गं कृतवती, ततः क्षुल्लको वेश्यादुहितरं दण्डेन ताडयामास, विवादे प्रवृत्ते च राज्ञः पार्श्वे श्रीगृहदृष्टान्तोऽऽमुना साधुना निवेदित इति १

अपने कर्मोंकी निर्जराके लिये कायोत्सर्ग करके बैठ गया, और उसके बाद वहाँका व्यन्तरदेव “ यह कैसा धैर्यशाली है ” इस बातकी परीक्षाके विचारसे उस पर उपसर्ग करे, तो ऐसे उपसर्ग वैमर्श उपसर्ग कहलाते हैं। पृथग्विमात्रा उपसर्ग ऐसे होते हैं जैसे संगमदेवहीने पहिले हाससे उपसर्गोंको किया, फिर उन्हे प्रद्वेषसे करना शुरू करदिया, पुनः विमर्शसे उपसर्गों करके फिर उसने उन्हे प्रद्वेषसे करना शुरू कर दिया। इस प्रकारसे किये गये ये उपसर्ग पृथग्विमात्र उपसर्ग हैं ये चार उपसर्ग के दृष्टान्त हैं।

मसुग सम्बन्धी उपसर्ग भी इसी तरहसे चार प्रकारसेहैं-हास, प्राद्वेष, वैमर्श और कुशीलप्रतिसेवनक। इनमें जो बालुष सम्बन्धी हास उपसर्ग हैं वे इस प्रकारके होतेहैं, जैसे वेश्याकी पुत्रीने किसी क्षुल्लकके

आ प्रकारनुं छे. धारे के कोछ मुनि पोताना कर्मोनी निर्जरा करवा भाटे कोछ व्यन्तरना स्थानमां काये त्सर्ग करीने जेसी नय छे त्यारणाह तेना धैर्यनी कसोटी करवा भाटे व्यन्तर देव जुद्धी जुद्धी रीते डेरान करीने यथायमान करवानो अयत्न करे छे आ प्रकारे ते मुनिने जे उपसर्गो सहन करवा पडे छे, ते उपसर्गोने वैमर्श उपसर्गो कडे छे. पृथग्विमात्रा उपसर्गनुं स्वरूप आ प्रकारनुं छे—

संगम देवे पडेलां हास द्वारा मद्धावीर प्रभुने परेशान कर्या, त्यारणाह प्रद्वेषथी उपसर्ग कर्या, त्यारणाह विमर्शथी उपसर्गो कर्या वणी प्रद्वेषथी करवा शर् कर्या. आ प्रकारे जे उपसर्गो करवामां आवे छे तेसने पृथग्विमात्र उपसर्ग कडे छे. आ प्रकारना यारे प्रकारना देवी उपसर्गोना दृष्टान्तो अर्ही आपवामां आव्या छे

अनुप्यकृत उपसर्गोना पञ्च आ प्रमाणे यार प्रकार छे—(१) हास, (२) प्राद्वेष, (३) वैमर्श अने (४) कुशील प्रतिसेवनक

हास उपसर्गनुं दृष्टान्त—कोछ वेश्यानी पुत्रीजे कोछ क्षुल्लक उपर उपस—५२

तथा—प्राद्वेषा उपसर्गं यथा—सोमिलाख्यब्राह्मणेन गजकुम्भपारो व्यपरो-
पित इति २ ।

तथा—वैमर्शा यथा—चाणक्यप्रणितश्चन्द्रगुप्तनृपो धर्मं परीक्षितुं सर्वमतानुयायि-
साधून् अन्तःपुरे प्रवेक्ष्य तद्द्वारा धर्ममाख्यापयामास अन्यांश्च क्षोभयामास
परन्तु जैनगुनीन् क्षोभयितुं नाशक्तोत् इति । ३ ।

तथा—कुशीलप्रतिसेवनता—कुशीलस्य प्रतिसेवनं येषु ते कुशीलप्रतिसेवनका
उपसर्गाः,—व्यधिरूरणो बहुव्रीहिः, यथा—कश्चित्साधुः सायंकाले प्रवासगतस्य
कस्यचिदीर्ष्यालोर्नरस्य गृहे वाचार्थं प्रविष्टः, तत्रैर्यालुखीनतृष्टयेन समर्पिताऽऽत्रा-
सोऽस्त्री साधुर्निशि मत्प्रेतं चतुरोऽपि महरानुपसर्गितो न च क्षोभं प्राप्ति इति, ४ ।

उपर उपसर्गं क्रिया, नत्र उल्लुल्लुल्लकने उले दण्डेले ताडित क्रिया । विवाद
कह जाने पर राजाके पास धुल्लकने श्रीगृहका दृष्टान्त कहा १। प्राद्वेष
उपसर्ग हस प्रकारके ते जैसे—सोमिल ब्राह्मणेन गज कुम्भपारको मार
दिया २। वैमर्शा उपसर्ग हस प्रकारसे ते जैसे—चाणक्यसे प्रेरित हुए
चन्द्रगुप्त राजाके धर्मकी परीक्षा करनेके लिये सर्व मतके अनुयायी
साधुओंको अन्तःपुरमें प्रवेश कराया—बुलाया और प्रवेश कराकर फिर
उनसे धर्मका उपदेश कहलवाया तथा बादमें कितनेक साधुओंको उसने
क्षुभित कराया । परन्तु वह जैन साधुओंको क्षुभित करानेमें समर्थ नहीं
हो सका । जिनमें कुशीलका प्रतिसेवन होता है वे कुशीलप्रतिसेवनक
उपसर्ग हैं । ये इस प्रकारके होते हैं जैसे—कोई साधु सायंकालके समय
किसी प्रवासगत ईर्ष्यालु व्यक्तिके घर पर ठहरनेके अभिप्रायसे घुस गया

सर्गं कथ्ये, त्यारे ते धुल्लके तेने लाइटी वडे मारी, तेथी भेटो अगरो थयो अने
राज पासे इरियाद कराध, त्यारे धुल्लके राजनी समक्ष श्रीगृहतुं दृष्टान्त कहुं.

प्राद्वेष उपसर्गं—सोमिल ब्राह्मणे ने प्रकारना उपसर्गं वडे गजकुम्भ
मारने मारी नाथ्यो, ने प्रकारना उपसर्गंने प्राद्वेष उपसर्गं कडे छे.

वैमर्शा उपसर्गं तुं दृष्टान्त—आष्टाक्यनी प्रेरणाथी अेक वधत चन्द्रगुप्ते
सर्वमतना अनुयायीओनी छसोटी करी, तेछे तेभने चोताना अंतःपुरमां
गेलाव्या, त्यारणाद तेमनी पासे धर्मोपदेश अपाव्यो, त्यारणाद तेछे डेटलाक
साधुओने क्षुभित कराव्या, पणु जैन साधुओने क्षुभित करावने ते समर्थ
थयो नहीं, ने उपसर्गो द्वारा सयंभी आत्माने कुशील प्रतिसेवी बनाववाने
प्रयत्न कराय छे, ते उपसर्गेने कुशील प्रतिसेवनक उपसर्गो कडे छे नेभडेकेछे
अेक साधु सायंकाले केछे अेकगाभमां आवी पडेअ्यो अने केछे अेक गहारगाम
गयेला धंध्याणु पुरुषना घरमां तेभछे आश्रय लीधो, ते घर मालिकने चार अीओ छती.

तथा—“ तिरिक्खजोणिया उवसग्गा ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-भायाः-
भयाज्जाता भाया उपसर्गाः, ते चोपसर्गाः श्वादिदशभयजन्याः १, तथा-
प्राद्वेषा यथा-चण्डकौशिकाख्यसर्पकृतो महावीरप्रभोर्दशनोपसर्गः इत्यादिरूपाः
२। तथा-आहारहेतुकाः-आहारो-भक्षणमेव हेतुः-कारणं यत्र ते आहारहेतुका उप
सर्गाः ते च सिंहादिहिंस्रजन्तुकृताः ३, तथा-अपत्यलयनसंरक्षणकाः-अपत्यस्य-
ईर्ष्यालुकी चार स्त्रियां थी, सो उन्होने उसे ठहरनेके लिये जगह दे दी
सो वह वहां ठहर गया। परन्तु उक्त चारों स्त्रियोंने उस पर रात भर
उपसर्ग किये परन्तु यह क्षोभको प्राप्त नहीं हुआ ४।

“ तिरिक्खजोणिया उवसग्गा ” तिर्यञ्चों द्वारा कृत उपसर्ग चार
प्रकारके होते हैं जैसे भाय १ प्राद्वेष २ आहारहेतुक ३ और अपत्यल
यनसंरक्षणक ४ जो उपसर्ग भयसे उत्पन्न होते हैं वे भाय उपसर्ग हैं।
ऐसे ये उपसर्ग कृत्ता आदिके द्वारा काट खानेके भयसे उत्पन्न होते हैं
१। प्राद्वेष उपसर्ग वे हैं जो प्राद्वेषसे उत्पन्न होते हैं जैसे-चण्डकौशिक
सर्पने महावीर प्रभुको काटखानेसे किये हैं इत्यादि। जिन उपसर्गोंके
होनेमें आहारही हेतु होता है, ऐसे वे उपसर्ग आहार हेतुक होते हैं
जैसे-आहारके निमित्त सिंहादि हिंस्रक जन्तु करते हैं। जिन उपसर्गोंमें
अपत्य-संतानका और लयन-स्थानका संरक्षण करना कारण होता है

तेमझे तेने धरनेा अभुके लाग उतरवा माटे आये। ते साधु ते लागमा
उतर्यो ते यारे स्त्रियो ते साधुने यारित्रभ्रष्ट करवा माटे आभी रात उप
सर्ग करती रही। छतां ते साधु यत्नायमान थये नही आ प्रकारना उप
सर्गने कुशील प्रतिसेवनके उपसर्गो कडे छे.

“ तिरिक्खजोणिया उवसग्गा ” तिर्यञ्चो द्वारा के उपसर्गो कराय छे
तेमना यार प्रकार छे—(१) लाय उपसर्ग, (२) प्राद्वेष उपसर्ग, (३) आहार
हेतुक उपसर्ग अने (४) अपत्यलयन संरक्षणक उपसर्ग. के उपसर्गो लयने
दीधे उत्पन्न थाय छे, तेमने लाय उपसर्ग कडे छे केमके कूतरा आदि कर-
डवाना लयथी के उपसर्ग उत्पन्न थाय छे तेमने लाय उपसर्ग कडे छे
प्राद्वेष उपसर्ग—के उपसर्ग प्राद्वेषथी उत्पन्न थाय छे तेने प्राद्वेष उपसर्ग
कडे छे. केमके अंडकौशिक नागे महावीर प्रभुने उंस देवा रुप के उपसर्ग
कर्यो छतो तेने प्राद्वेष उपसर्ग कही शकय. के उपसर्गोमां आहार के कारण
रुप डोय छे—अपत्य के आहारने निमित्ते सिंहादिके हिंस्रक पशुयो के उपद्रव
करे छे तेने आहारहेतुक उपसर्ग कडे छे. के उपसर्ग करवा पाछण संता-

સન્તાનસ્ય લયનસ્ય=સ્થાનસ્ય સંરક્ષણં યેષુ તે તથા, કાવ્યોદયો હિ સ્વસન્તા-
નલયનસંરક્ષણાર્થમુપસર્ગાન્ કુર્વન્તીતિ ઠ।

“ આયસંવેયણિજ્જા ઉવસગ્ગા ”—ઇત્યાદિ-સ્પષ્ટમ્, નવરં-ઘટ્ટનકાઃ,
સંઘટ્ટથતે-સંઘર્ષગત ઇતિ સંઘટ્ટનં-સંઘર્ષિતં, તદ્ વિઘતં યેષુ તે યથા, યથા-નેત્રે-
રજઃકળે પતિતે સતિ તન્નયનં દરતેન મર્દિતં સત્ દુઃસ્વમૃત્યાદયતિ, તથા-પ્રપત-
નકાઃ-પ્રપતનસંભવાઃ, યયઃ ઽસાવધાનતયા સંચરતો જનસ્ય પ્રપતનં ભવતીતિ
તતો દુઃસ્વં ભવતિ ૨, તથા-સ્તમ્ભનકાઃ-સ્તમ્ભનં-સ્તબ્ધતા, યથા-યુષ્ઠઃ-યુષ્ઠૈવ,
ઉપવિષ્ટ ઈવ તિષ્ઠતિ, તત્ર-વાતાદિપ્રકોપેણ પાદાદીનાં સ્તમ્ભનં ભવતીત્યુપસર્ગાઃ

વે ઉપસર્ગ અપત્યલયન સંરક્ષણક હોતે હૈં જૈસે-કાગલી આદિ પક્ષી
અપની સંતાન ઓર લયન ઘોંસલાકે સંરક્ષણકે લિયે ઉપદ્રવોંકો કરતીહૈં।

“ આયસંવેયણિજ્જા ઉવસગ્ગા ” ઇત્યાદિ-આત્મસંચેતનીય ઉપ-
સર્ગ ઓ ષ્ચાર પ્રકારકે હોતે હૈં જૈસે ઘટ્ટનક ૧ પ્રપતનક ૨ સ્તમ્ભનક ૩
ઓર શ્લેષણક ઠ। જિન ઉપસર્ગોંકા કારણ સંઘટ્ટન હોતાહૈં જૈસે-આંત્રમેં
પતિત રજઃકળ સંઘટ્ટિત ક્રિયે જાને પર ઉસે દૂર કરનેકે લિયે હાથસે
મર્દિત ક્રિયે જાને પર નેત્રમેં દુઃસ્વકા જનક હોતા હૈં વે ઉપસર્ગ ઘટ્ટનક
હોતે હૈં ૧। જિન ઉપસર્ગોંકા કારણ પ્રપતન હોતા હૈં વે ઉપસર્ગ પ્રપત-
નક ઉપસર્ગ હોતે હૈં જૈસે-અસાવધાન હોકર ચલનેવાંહે મનુષ્યકે ગિર
પડનેસે ઉસે દુઃસ્વ હોતા હૈં, ઈસા ઉપસર્ગ પ્રપતનક ઉપસર્ગ કહલાતે

નોતું રક્ષણ અથવા માળા આદિ રહેકાણુતું સ રક્ષણ કારણભૂત હોય છે, તે
ઉપસર્ગને અપત્યલયન સંરક્ષણક ઉપસર્ગ કહે છે. જેમકે ચીબરી, કાગડી
આદિ પક્ષીઓ તેમનાં બચ્ચાઓ અને માળાઓના રક્ષણને માટે આ પ્રકાર-
ના ઉપસર્ગો કરે છે.

“ આયસંવેયણિજ્જા ઉવસગ્ગા ” ઇત્યાદિ—આત્મસંચેતનીય ઉપસર્ગ પણ
આર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) ઘટ્ટનક, (૨) પ્રપતનક, (૩) સ્તંભનક અને (૪)
શ્લેષણક. જે ઉપસર્ગોંતું કારણ સંઘટ્ટન હોય છે, તે ઉપસર્ગોંને ઘટ્ટનક કહે
છે જેમકે આંખમાં પડેલ કણને સંઘટ્ટિત કરવાથી—એટલે કે તેને કાઢવા માટે
હાથ વડે આંખ ચોળવાથી નેત્રમાં પીડા થાય છે. આ પ્રકારના ઉપસર્ગને
ઘટ્ટનક ઉપસર્ગ કહે છે. જે ઉપસર્ગ પ્રપતનને કારણે થાય છે. જેમકે બેદર-
કારીથી ચાલતાં ચાલતાં પડી જવાથી હાથ પગ ભાંગે છે કે મચકોડાય છે,
આ પ્રકારના ઉપસર્ગોંને પ્રપતનક ઉપસર્ગ કહે છે.

स्तम्भनाख्याः ३, तथा—श्लेषणकाः—यत्र—यथा प्रादं संकोच्य स्थितो भवति, वातादिना तथैव पादः संश्लिष्टो भवति ते ४ ॥ सू० २५ ॥

पूर्वमुपसर्गं उक्ताः, तत्सहनात् कर्माणि क्षीयन्त इति कर्मविशेषान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउव्विहे कम्मे पणत्ते, तं जहा—सुभे णाममेगे सुभे १, सुभे णाममेगे असुभे २, असुभे णाममेगे सुभे ३, असुभे णाममेगे असुभे ४। (१)

चउव्विहे कम्मे पणत्ते, तं जहा—सुभे णाममेगे सुभवि-

हैं। जिन उपसर्गोंका हेतु स्तम्भन शरीरादि अवयवोंका रह जाना होता है वे उपसर्ग स्तम्भनक उपसर्ग होते हैं जैसे—कोई सोता है तो सोताही रहता है वह अपने आप नहीं उठ सकताहै। बैठता है तो बैठा ही रहताहै अपने आप खड़ा नहीं हो पाताहै। इस कारण वात आदिके प्रकोपसे चरणादिकोंका स्तम्भन हो जाना होताहै, ऐसे जो उपसर्ग होते हैं वे स्तम्भनक उपसर्ग होते हैं। श्लेषणक उपसर्ग वे जो किसी निमित्तसे चरण आदिके जुड जानेसे होते हैं जैसे—कोई जहां जिस तरहसे पैरोंको संकोच करके बैठ जावे और उसके पैर वहां वैसेही वान आदिसे संकुचित बन जावे उठा नहीं जावे तो ऐसे उपसर्ग संश्लेषणक उपसर्ग कहे जाते हैं ४ ॥ सूत्र २५ ॥

वे उपसर्गोंने कारणे शरीरना अवयवो काम करतां अट्टी नय छे, ते उपसर्गोंने स्तंभनक उपसर्गो कडे छे जेभके वातादिकने कारणे हाथ पग अकडाथ ज्वां, यक्षघातने कारणे अधुं अंग जोटुं पडी ज्बुं. आ प्रकारना उपसर्गोंने स्तंभनक उपसर्गो कडे छे. आवा उपसर्गोंने कारणे भाणुस नते छेनयलन करी शकतो नथी.

श्लेषणक उपसर्ग—कैथ वपन हाथ, पग आदि अंगोने अमुक स्थितिमां गोठण्या भाद अे न स्थितिमां रडे छे, हा. त. पगने संकोच्योने अेसी गया भाद पग अे न स्थितिमां रडे, त्यांथी असेडी शकय नही के दांभो टूंकै करी शकय नही, आ प्रकारना उपद्रवने श्लेषणक उपसर्गो कडे छे. आ उपसर्गोमां अेक अंग साथे न्हे के जीजुं अंग नोडाथ ग्युं हाय अेबुं दागे छे. ॥ सू. २५ ॥

વાગે, ૧, સુખે ણામમેગે અસુખવિવાગે ૨, અસુખે ણામમેગે સુખ-
વિવાગે ૩, અસુખે ણામમેગે અસુખવિવાગે ૪ (૨) ચત્તવિહે
કમ્મે પ્પણત્તે, તં જહા-પગલિકમ્મે ૧, ઠિઙ્ગકમ્મે ૨, અણુભાવ-
કમ્મે ૩, પલ્લકમ્મે ૪। (૩) ॥ સૂ૦ ૨૬ ॥

છાયા—ચતુર્વિધં કર્મ પ્રજ્ઞસમ્, તદ્વથા—શુભં નામૈકં શુભં ૧, શુભં નામૈક-
મશુભમ્ ૨, અશુભં નામૈકં શુભમ્ ૩, અશુભં નામૈકમશુભમ્ ૪। (૧)

ચતુર્વિધં કર્મ પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્વથા—શુભં નામૈકં શુભવિપાકં ૧, શુભં નામૈકમ-
શુભવિપાકમ્ ૨, અશુભં નામૈકં શુભવિપાકમ્ ૩, અશુભં નામૈકમશુભવિપાકમ્ ૪। (૨)

ચતુર્વિધં કર્મ પ્રજ્ઞસમ્, તદ્વથા—પ્રકૃતિકર્મ ૧, સ્થિતિકર્મ ૨, અનુભાવકર્મ
૩, પ્રદેશકર્મ ૪। (૩) ॥ સૂ૦ ૨૭ ॥

ટીકા—“ ચત્તવિહે કમ્મે ” इत्यादि—क्रियते—अनुष्ठीयते आत्मना इति
कर्म्म—ज्ञानावरणीयादि, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्वथा—एकं—किञ्चित् कर्म शुभं—पुण्य
प्रकृतिरूपं भवति तदेव पुनः शुभं—कल्याणकारक भवति शुभानुबन्धित्वात्,

इन कहे गये उपसर्गोंको सहनेसे कर्मोंका विनाश होता है। अब
सूत्रकार कर्म विशेषोंकी निरूपणा करते हैं—

‘चउत्तविवहे कम्ममे पण्णत्ते’ इत्यादि सूत्र २६ ॥

टीकार्थ—कर्म चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—शुभ शुभ १ शुभ अशुभ २
अशुभ शुभ ३ और अशुभ अशुभ ४ आत्माके द्वारा जो किया जाता
है वह कर्म है ऐसा वह कर्म ज्ञानावरणीयादि रूप होता है। इस ज्ञाना-
वरणीयादिमें कोई कर्म ऐसा होता है जो पुण्य प्रकृतिरूप होता है, और
शुभ कल्याणका करानेवाला होता है १। ऐसा वह कर्म शुभानुबन्धी
होता है और इसीसे वह जीवोंके कल्याणका कारक होता है जैसे—

ઉપર્યુક્તા ઉપસર્ગોને સહન કરવાથી કર્મોને ક્ષય થાય છે, તેથી હવે
સૂત્રકાર કર્મવિશેષોનું નિરૂપણ કરે છે—“ચત્તવિહે કમ્મે પ્પણત્તે ” इत्यादि—

ટીકાર્થ—કર્મ ચાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે—(૧) શુભ-શુભ, (૨) શુભ-અશુભ, (૩)
અશુભ-શુભ, અને (૪) અશુભ-અશુભ. આત્મા દ્વારા જે કરવામા આવે છે
તેનું નામ કર્મ છે. એવાં તે કર્મ જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપ હોય છે. તે જ્ઞાના-
વરણીય આદિમાં કોઈ કર્મ એવું હોય છે કે જે પુણ્ય પ્રકૃતિરૂપ હોય છે
અને શુભ (કલ્યાણકારક) હોય છે. એવું તે કર્મ શુભાનુબન્ધી હોય છે, અને
તેથી જ તે જીવોના કલ્યાણનું કારણ બને છે. જેમકે ભરતાદિનું કર્મ તેમના

यथा-भरतादीनाम्, इति प्रथमो भङ्गः १। तथा-एकं कर्म शुभं-पुण्यात्मकं सदपि अशुभम्-अकल्याणकरं भवति अशुभानुबन्धित्वात् यथा-ब्रह्मदत्तादीनाम् इति द्वितीयो भङ्गः २। तथा-एकं कर्म अशुभं=पापप्रकृतिरूपं भवति, तत्पुनः शुभं-शुभानुबन्धित्वात् यथा-कष्टप्राप्तानां विनाऽपि कर्मनिर्जरेच्छां स्वयंजायमानकर्म निर्जराणां गवादीनाम् इति तृतीयो भङ्गः ३, तथा-एकं कर्म-अशुभं-पापप्रकृतिरूपं भवति तत्पुनरशुभम् भवति, अशुभानुबन्धित्वात् यथा धीवरादीनामिति चतुर्थः ४। (१)

“ चउन्विहे कम्मे ” इत्यादि—कर्म पुनश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-एकं कर्म

भरतादिकोंका कर्म उनके कल्याणका कारक हुआ है १। कोई एक कर्म ऐसा होता है जो पुण्यप्रकृतिरूप हुआ भी अशुभानुबन्धी होनेसे कल्याणका कारक नहीं होता है। जैसे ब्रह्मदत्तादिकोंका कर्म उनके कल्याणका कारक नहीं हुआ है २। कोई एक कर्म ऐसा होता है जो अशुभ प्रकृतिरूप होने पर भी शुभानुबन्धी होनेसे शुभ कल्याणकारक होता है जैसे-कष्टमें पतित गाय आदि जानवरोंका कर्म अशुभ होता हुआ भी वह उनके कल्याणका कारक होता है क्योंकि वे उस समय कर्मोंकी निर्जरा करनेके अभिलाषी तो होते नहीं हैं, स्वयंही उनके कर्मोंकी निर्जरा होती रहती है ३ तथा-कोई एक कर्म ऐसा होता है जो अशुभ पाप प्रकृतिरूप होता है और अशुभानुबन्धी होनेसे अशुभ अकल्याणकारक होता है जैसे धीवरोंका कर्म अशुभ होता हुआ उनके अशुभानुबन्धी होनेसे अशुभकारकही होता है ४

पुनश्च—“ चउन्विहे कम्मे ” इत्यादि-कर्म चार प्रकारका कहा

कल्याणतुं कारक भन्तुं इत्तुं कौं अक कर्म अणुं डाय छे के ने पुष्य प्रकृतिरूप डोवा छतां पणु अशुभानुबन्धी डोवाथी कल्याणकारक डोतुं नथी नेमके अक्षदत्त यकवर्ती आदिकेअनुं कर्म तेमना कल्याणतुं कारक भन्तुं इत्तुं कौं अक कर्म अणुं डाय छे के ने अशुभ प्रकृतिरूप डोवा छतां पणु शुभानुबन्धी डोवाथी शुभ कल्याणकारक डाय छे नेमके कष्टपतित (कष्ट सहन करती) गाय आदि जानवरानुं कर्म अशुभ डोवा छतां पणु ते तेमना कल्याणतुं कारक भने छे, कारणु के ते समये ते अणु कर्मनी निर्जरा करवानी अभिलाषावाणां डोतां नथी, छतां पणु आपोआपे तेमनां कर्मनी निर्जरा थती रहें छे।

कौं अक कर्म अणुं डाय छे के ने अशुभ पापप्रकृति रूप डाय छे अने अशुभानुबन्धी डोवाथी अशुभ-अकल्याणकारक डाय छे, नेमके माछी भारेनुं कर्म अशुभ डाय छे, अशुभानुबन्धी डाय छे अने अशुभकारकण डाय छे।

“ चउन्विहे कम्मे ” कर्मना आ प्रमाणे चार प्रकार पणु कक्षा छे—

શુભં-સાતવેદનીયાદિ ભવતિ, તદેવ પુનઃ શુભવિપાકં-શુભપરિણામં શુભતયૈવ= સાતવેદનીયાદિરૂપતયૈવ વદ્ધં સત્ સાતવેદનીયાદિરૂપતયૈવોદિતં ભવતીતિ પ્રથમઃ ૧, તયા-एकं कर्म शुभं=શુભત્વેન વદ્ધં સત્ અશુભવિપાકં-સંક્રમનામકરણવશાદ- શુભત્વેનોદિતં ભવતિ, તત્ર સંક્રમણં-एकस्मिन् कर्मण्यपरस्य कर्मणोऽनुप्रवेशः, स च संक्रमाख्यकरणवशाद्भवति, उक्तञ्च—

“ શૂભપ્રકૃત્યમિત્તાઃ સંક્રમયતિ ગુણત ઉત્તરાઃ પ્રકૃતીઃ ।

નન્નાત્માઽમૂર્તૈત્રાદ્ધ્યવસાનપયોગેણ ॥ ૧ ॥ ઇતિ,

તથા મતાન્તરમ્—“ મોક્ષાણ આઝયં સ્વલુ, દંસણમોહં ચરિત્તમોહં ચ ।

સેક્ષાણં પયડીણં, ઉત્તરવિદ્ધિસંક્રમો મણિઓ ॥ ૧ ॥ ”

છાયા — ‘ મુક્ત્યા આયુઃ સ્વલુ દર્શનમોહં ચારિત્રમોહં ચ ।

શેનાગાં પ્રકૃતીનામુત્તરવિધિસંક્રમો મણિતઃ ॥૧॥ ઇતિ દ્વિતીયો મઙ્ગલઃ ૨।

ગયા હૈ, જૈસે શુભ શુભ વિપાકવાલા ૧ શુભ અશુભ વિપાકવાલા ૨ અશુભ શુભ વિપાકવાલા ૩ ઓર અશુભ અશુભ વિપાકવાલા ૪ હનમેં જો કર્મ શુભ હોતા હૈ સાતવેદનીયાદિરૂપ હોતા હૈ ઓર વહી સાત-વેદનીયાદિરૂપસે વદ્ધ હોતા હુઆ સાતવેદનીયાદિ રૂપસે હી ઉદિત હોતા હૈ । એસા કર્મ શુભ શુભ વિપાકવાલા કહા ગયા હૈ ૧। જો કર્મ શુભ રૂપસે વદ્ધ હુઆ ઓ અશુભ વિપાકવાલા હોતા હૈ-સંક્રમણ નામક ક્રણકે વશસે અશુભ રૂપસે ઉદિત હોનાહૈ, વહ એસા કર્મ શુભ અશુભ વિપાકવાલા કહા ગયા હૈ ૨। એક કર્મમેં દૂસરે કર્મકા પ્રવેશ હો જાના અર્થાત્ એક કર્મકા દૂસરે કર્મરૂપમેં વદલ જાના હસકા નામ સંક્રમણ હૈ એસા પરિવર્તન કર્મોમેં સંક્રમણ ક્રણકે વશસે હોતા હૈ । ઉક્તં ચ-

(૧) શુભ-શુભ વિપાકવાળું, (૨) શુભ-અશુભ વિપાકવાળું, (૩) અશુભ-શુભ વિપાકવાળું અને (૪) અશુભ-અશુભ વિપાકવાળું.

જે કર્મ શુભ હોય છે, તે સાતાવેદનીય રૂપ હોય છે, અને સાતાવેદનીય રૂપે બદ્ધ થઈને સાતાવેદનીય રૂપે જ ઉદયમાં આવે છે તે કર્મને શુભ-શુભ વિપાકવાળું કહે છે

જે કર્મ શુભ રૂપે બદ્ધ થવા છતાં પણ અશુભ વિપાકવાળું હોય છે. સંક્રમણ નામના ક્રણને લીધે અશુભ રૂપે ઉદયમાં આવે છે-એવા કર્મને શુભ-અશુભ વિપાકવાળું કહ્યું છે. એક કર્મમાં બીજા કર્મનો પ્રવેશ થઈ જવો અથવા એક કર્મનું બીજા કર્મ રૂપે પરિવર્તન થઈ જવું તેનું નામ સંક્રમણ છે. સંક્રમણ ક્રણને લીધે કર્મોમાં એવું પરિવર્તન થાય છે. કહ્યું પણ છે કે—

“मूलप्रकृत्यभिन्ना” इत्यादि । इस श्लोकका भाव ऐसा है कि ऐसा नियम है कि आठ मूलप्रकृतियोंका परस्परमें संक्रमण नहीं होता है, अर्थात् एक मूलप्रकृति दूसरी मूलप्रकृतिरूप नहीं बदलती, वह स्व-मुखसेही निर्जराको प्राप्त होती है, किन्तु उत्तरप्रकृतियोंमें यह नियम नहीं है, उनमें समानजातीय प्रकृतियोंका अपनी समानजातीय दूसरी प्रकृतियोंमें भी संक्रमण देखा जाता है अर्थात् एक प्रकृति बदलकर दूसरी प्रकृतिरूप हो जाती है जैसे-मतिज्ञानावरण बदलकर श्रुत-ज्ञानावरणरूप हो जाता है, तब उदयकालमें वह अपना फल उस श्रुत-ज्ञानरूप रूपसे देता है, इसी प्रकारसे सब उत्तरप्रकृतियोंके विषयमें जानना चाहिये, फिर भी कुछ ऐसी उत्तरप्रकृतियाँ हैं, जिनका परस्परमें संक्रमण नहीं होता है जैसे-दर्शन मोहनीयका चारित्रमोहनीयरूपमें, और चारित्र-मोहनीयका दर्शन मोहनीयके रूपमें संक्रमण नहीं होता है । हां दर्शन-मोहनीयके अवान्तर भेदोंका परस्परमें और चारित्र मोहनीयके अवान्तर भेदोंका परस्परमें संक्रमण होना अवश्य संभव है । इसी प्रकारसे नारकीय देव तिर्यग् मनुष्य रूप चारों आयुओंका परस्परमें संक्रमण नहीं होता, अर्थात् एक आयुके परमाणु बदलकर दूसरी आयुरूप कभी नहीं होते, किन्तु प्रत्येक आयु स्वमुखसेही फल

“मूलप्रकृत्यभिन्ना” इत्यादि. आ श्लोकानो लावार्थं नीचे प्रमाणे
 छे—आठ मूला कर्म प्रकृतिभ्यां परस्परमां संक्रमणं यत् नथी, अतएव के अेक
 मूला प्रकृति षीञ्च मूला प्रकृति इये षदलाती नथी-ते स्वभुजे ञ निर्जरा
 पावती रहे छे परन्तु उत्तरप्रकृतिभ्यामां आ प्रकारानो नियम नथी. नतीय
 उत्तर प्रकृतिभ्यां परस्परमां संक्रमणं थाय छे अइ अतएव के अेक प्रकृतिनुं
 षीञ्च प्रकृति इये परिवर्तनं यत् नोव.मां आवे छे पञ्च ञरु. जेमके मतिज्ञानावरण
 षदलाधने श्रुतज्ञानावरण इय थर्ष नय छे, अने आवुं परिवर्तनं थाय त्यारे
 उदयकाले ते तेनुं इण ते इये आवे छे आ प्रमाणे सधणी उत्तर प्रकृतिभ्या
 विषे पञ्च समञ्जुं. कोध कोध अेवी उत्तर प्रकृतिभ्या पञ्च छे के जेमनुं
 परस्परमां संक्रमणं यत् नथी. जेमके दर्शन मोहनीयनुं चारित्र मोहनीय इये
 अने चारित्रमोहनीयनुं दर्शन मोहनीय इये संक्रमणं यत् नथी. हा, दर्शन
 मोहनीयना अवान्तर लेदोनुं परस्परमां संक्रमणं अवश्य थर्ष शके छे, अने
 चारित्रमोहनीयना अवान्तर लेदोनुं पञ्च परस्परमां संक्रमणं संभवी शके छे.

अे ञ प्रमाणे चारे आयुभ्यां पञ्च परस्परमां संक्रमणं यत् नथी,
 अतएव के अेक आयुना परमाणुभ्या षदलाधं ञधने षीञ्च आयुना परमाणुभ्या
 इये कही पञ्च परिष्कृतं यतां नथी, परन्तु प्रत्येक आयु स्वभुजे ञ इण

તથા—एकं कर्म अशुभम्-अशुभतया वद्धं सदपि शुभविपाकं=शुभतयोदितं भवतीति तृतीयः ३। तथा-एकमशुभमशुभविपाकं भवतीति चतुर्थः ४। (२) ।

“ चउविवहे कस्मे ” इत्यादि—तृतीयमिदं कर्मसूत्रमस्यैव चतुर्थस्थानस्य द्वितीयोद्देशकोक्तबन्धसूत्रमनुसृत्य बोध्यम् ॥ सू० २६ ॥

पूर्वं चतुर्विधं कर्म निरूपितं, तच्च सङ्घ एव ज्ञातुमर्हतीति सङ्घं निरूपयितु-
माह—

मूलम्—चउविवहे संघे षण्णक्ते, तं जहा-समणा १, सम-
णीओ २, सावणा, ३, सावियाओ ४। ॥ सू० २७ ॥

દેકર નિર્જરાકો પ્રાપ્ત હોતી હૈ યહ સબ આત્માકે અધ્યવસાયસે હોતા હૈ યહી વિષય હસ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કિયા હૈ “ મોક્ષ્ણ આત્મયં સ્વલુ ” હૈયાદિ । એસા યહ દ્વિતીય અંગ હૈ જો કર્મ અશુભ રુપસે યદ્દ હુઆ મી શુભ રુપસે ઉદિત હોતા હૈ વહ તૃતીય અંગવાલા કર્મ હૈ ૩। તથા જો કર્મ અશુભરુપસે વદ્દ હોતા હુઆ અશુભરુપસેહી વિપાકવાલા હોતા હૈ યહ ચતુર્થ અંગમે લિયા ગયા હૈ ૪

પુનઃ—“ ચउविवहे कस्मे ” इत्यादि कर्म चार प्रकारका कहा गया है। प्रकृतिकर्म १ स्थितिकर्म २ अनुभावकर्म ३ और प्रदेशकर्म ४ इस तृतीय कर्मसूत्रका व्याख्यान चतुर्थ स्थानके द्वितीय उद्देशकर्म कहे गये बन्धसूत्रके अनुसार कर लेना चाहिये ॥ सू० २६ ॥

ઇધને નિર્જરા પામતું રહે છે. આત્માના અધ્યવસાય દ્વારા જ આત્મ' બન્યા કરે છે એ જ વિષયને સૂત્રકારે “ મોક્ષ્ણ આત્મયં સ્વલુ ” ઈત્યાદિ ગાથા દ્વારા પ્રકટ કર્યો છે. આ રીતે ખીલ ભાંગાતું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર બાકીના ભાગોના સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

જે કર્મ અશુભ રૂપે બદ્ધ થવા છતાં પણ શુભ રૂપે ઉદયમાં આવીને શુભવિપાક આપે છે તેને અશુભ-શુભ વિપાકવાળું કહે છે. જે કર્મ અશુભ રૂપે જ બદ્ધ થઇને અશુભ વિપાક આપનારું હોય છે, તે કર્મને અશુભ-અશુભ વિપાકવાળું કહે છે.

“ चउविवहे कस्मे ” इत्यादि—कर्मना आ प्रभाषे चार प्रकार पणु कहेया छे—(१) प्रकृति कर्म, (२) स्थिति कर्म, (३) अनुभाव कर्म અને (४) प्रदेश कर्म योथा स्थातना ખીલ ઉદેશામાં જે બન્ધસૂત્ર આપવામાં આવ્યું છે તેને આધારે આ ચાર પ્રકારના કર્મોની વ્યાખ્યા સમજ લેવી ॥ સૂ. ૨૬ ॥

છાયા—ચતુર્વિધઃ સદ્ગુણઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—શ્રમણાઃ ૧, શ્રમણ્યઃ ૨, શ્રાવકાઃ ૩, શ્રાવિકાઃ ૪ ॥ સૂ૦ ૨૭ ॥

ટીકા—“ ચતુર્વિધે સંઘે ” ઇત્યાદિ— સદ્ગુણઃ=ગુણરત્નપાત્રભૂતજીવસમૂહઃ, ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા—શ્રમણાઃ—શ્રામ્યન્તિ—તપસ્યન્તીતિ શ્રમણાઃ, યદ્વા— ‘ સમણા ’ ઇત્યસ્ય ‘ સમનસ ’ ઇતિચ્છાયા, તદર્થશ્રાયમ્—સહ મનસા=શોભનેન નિદાનપરિણામલક્ષણપાપરહિતેન ચ ચેતસા વર્તન્ત ઇતિ સમનસઃ, યદ્વા—સમાનં— સર્વેષુ સ્વપરજનાદિષુ તુલ્યં ધનો યેવાં તે સમનસઃ । અથવા સં=સમતયા શત્રુમિત્રાદિષુ અણન્તિ=પ્રવર્તન્ત ઇતિ સમણાઃ । એવં ‘ સમણીઓ ’ શ્રમણ્યઃ ૨, તથા— શ્રાવકાઃ—શુણ્વન્તિ જિનવચનમિતિ શ્રાવકઃ, ઉક્તં ચ—

ચતુર્વિધ નિરૂપિત્ત્વેન ઇસ કર્મકા સ્વરૂપ સદ્ગુણેહી જ્ઞાત્ત્વે સક્રતા હૈ અતઃ અવ સૂત્રકાર સદ્ગુણો નિરૂપણા કરતે હૈ—

‘ ચતુર્વિધે સંઘે પળ્ણત્તે ’ ઇત્યાદિ સૂત્ર ૨૭ ॥

ટીકાર્થ—સંઘ ચાર પ્રકારકા કહા ગયાહૈ જૈસે—શ્રમણ ૧ શ્રમણી ૨ શ્રાવક ૩ ઓર શ્રાવિકા ૪ ગુણરૂપકા પાત્રભૂત જો જીવકા સમૂહ હૈ વહ સદ્ગુણ હૈ, ઇનમેં “ શ્રામ્યન્તિ ઇતિ શ્રમણાઃ ” જો વિવિધ પ્રકારકેતવોકા અચરણ કરતે હૈ વે શ્રમણ હૈં અથવા—“ સમણા ” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ સમનસઃ ” એસી જબ હોતી હૈ તબ ઇસકા અર્થ એસા હોતા હૈ શોભન મનસે નિદાનપરિણામરૂપ પાપસે રહિત ચિત્તસે જો યુક્ત હોતે હૈં, વે “ સમનસઃ ” હૈં અથવા—સ્વપર જનાદિરૂપ સમસ્ત જનોમેં જિનકા મન તુલ્ય હોતા હૈ, વે “ સમનસઃ ” હૈં અથવા—“ સં અણન્તિ ઇતિ સમણાઃ ” શત્રુ મિત્ર ઓદિકોમેં જો સમાન રૂપસે પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં વે સમણ હૈં ।

આ ચારે પ્રકારના કર્મેતુ સ્વરૂપ સંઘમાં ૪ જાણી શકાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર સંઘના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે. “ ચતુર્વિધે સંઘે પળ્ણત્તે ” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—સંઘ ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે—(૧) શ્રમણ (સાધુ), (૨) શ્રમણી (સાધવી) (૩) શ્રાવક અને (૪) શ્રાવિકા શુભને પાત્ર એવા જીવોનો જે સમૂહ છે તેનું નામ સંઘ છે. શ્રમણનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે—“ શ્રામ્યન્તિ ઇતિ શ્રમણાઃ ” જેઓ વિવિધ પ્રકારની તપશ્રયા કરે છે તેમને શ્રમણ કહે છે. અથવા “ સમણા ” આ પદની સંસ્કૃત છાયા “ સમનસઃ ” લેવામાં આવે, તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—શોભન મનથી—નિદાન પરિણામ રૂપ પાપથી રહિત ચિત્તવાળા જીવને “ સમનસઃ ” કહે છે—અથવા સ્વજનો અને અન્ય લોકો પ્રત્યે સમભાવ રાખનાર માણસને સમનસ કહે છે. અથવા “ સં અણન્તિ

“ अवाप्त दृष्ट्यादि विशुद्धसम्पत् , परं समाचारमनुप्रभातम् ।

शृणोति यः साधुजनादतन्द्र-स्तं श्रावकं प्राहुरमी जिनेन्द्राः ॥१॥ इति,

यद्वा-श्रान्ति=तत्त्वार्थश्रद्धानं पचन्ति=परिपाकं-निष्ठां नयन्तीति श्राः,
तथा-वपन्ति चतुर्विधसंघे धनबीजानि निक्षिपन्तीति वाः, तथा-किरन्ति क्लिष्ट-
कर्मरजो विक्षिपन्तीति काः, ततः श्राश्च ते वाश्च ते काश्चेति श्रावकाः,
पृषोदरादित्वादयं साधुः । यथाह—

इसी प्रकारसे “ अमणी ” इनके संबन्धमें भी ऐसाही कथन जानना चाहिये २ जो जिन वचनको सुनते हैं वे श्रावक है ३ कहा भी है—

“ अवाप्तदृष्ट्यादि विशुद्धसम्पत् ” इत्यादि ।

इस श्लोकका तात्पर्य ऐसा है कि सम्यग्दर्शनादिरूपविशुद्ध सम्पत्तिशाली जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल आलस्यरहित होकर साधुजनसे धर्मोपदेशका श्रवण करता है, जिनेन्द्रदेवने उसे श्रावककी कोटिमें रखा है। अथवा-तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्त्वका जो पूर्णरूपसे निर्दोष रूपसे पालन करते हैं तथा चतुर्विध संघरूप खेतमें जो अपने धनरूप बजको बोते हैं, और क्लिष्ट कर्मरूप रजको जो हटाते हैं वे श्रावक है, पाकार्थक श्रा धातुसे, वपनार्थक वप् धातुसे और विक्षेपार्थक कृ धातुसे इस श्रावक शब्दकी निष्पत्ति हुई है। इसकी व्युत्पत्ति— “ श्राश्च ते वाश्च ते काश्च ते श्रावकाः ” ऐसी है। यह कर्मधारय समास है

इति समणाः ” शत्रु अने मित्र प्रत्ये समान वर्ताव राभनारने श्रमणु कडे छे. अे न प्रमाणे श्रमणीने अर्थ पणु समजवे न्नेणे जिनचयनेतुं श्रमणु करे छे तेमने श्रावक कडे छे. कहु पणु छे के—“ अवाप्तदृष्ट्यादिविशुद्ध सम्पत् ” इत्यादि-आ श्लोकने लावार्थ नीचे प्रमाणे छे—

सम्यग्दर्शन आदि इय विशुद्ध संपत्तिशाली ने मनुष्य उंमेशा प्रमा-
दने त्याग करीने प्रातःकाले साधुणे पासे धर्मोपदेशतुं श्रवणु करे छे अेवा पुरुषने न जिनेन्द्र लगवाने श्रावकनी कोटिमां भूक्ये छे. अथवा तत्त्वार्थ श्रद्धान इय सम्यक्त्वतुं ने पूणु इये निर्दोष इये पालन करे छे तथा चतुर्विध संघ इय ने क्षेत्रमां ने पोताना धनइय भीजतुं वावेतर करे-छे, वापरे छे, अने क्लिष्ट कर्मइय रजने हर करे छे अेवा पुरुषने श्रावक कडे छे. पाकार्थक ‘श्रा’ धातु, वपनार्थक ‘वप्’ धातु अने विक्षेपार्थक ‘कृ’ धातुमांथी आ ‘श्रावक’ पदनी उत्पत्ति थछ छे तेनी व्युत्पत्ति आ प्रमाणे थाय छे. “ श्राश्च

“ श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनाद्

धनानि पात्रेषु वपत्यनारतम् ।

किरत्यपुण्यानि सुसाधुसेवना —

दथापि तं श्रावकमाहु रञ्जसा ॥ १ ॥ ” इति, ३,

एवं श्राविका अपि ४। ॥ सू० २७ ॥

पूर्व सङ्घः उक्तः, स च सर्वज्ञवचनसंस्कृतया बुद्ध्या युज्यत इति बुद्धिं विवेक्तुमाह—

मूलम्—चउव्विहा बुद्धी पणत्ता, तं जहा—उप्पत्तिया १,
वेणयिया २, कम्मिया ३, परिणामिया ४।

चउव्विहा मई पणत्ता, तं जहा—उग्गहमई १, ईहामई
२, अवायमई ३, धारणामई ४।

अहवा—चउव्विहा मई पणत्ता, तं जहा—अरंजरोद्ग-
समाणा १, वियरोद्गसमाणा २, सरोद्गसमाणा ३, सागरोद्ग-
समाणा ४। ॥ सू० २८ ॥

सो ही कहा है—“ श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनात् ” इत्यादि जिनेन्द्रदेव द्वारा कहे गये जीवादिरूप तत्त्वोंका चिन्तन करनेसे जो अपनेमें उनके स्वरूपके प्रति श्रद्धालुको पचता है—अर्थात् जिनेन्द्रदेव द्वारा कथित तत्त्वोंका जो श्रद्धान करता है, उन पर दृढ आस्था—विश्वास रखता है पात्रोंमें निरन्तर धनका सदुपयोग करता है, निष्परिग्रही साधुकी सेवासे जो पाप प्रकृतियोंको विखेरता है उसे श्रावक कहा गया है । इसी तरहका कथन “ श्राविका ” के संबन्धमें भी जानना चाहिये ॥ सूत्र २७ ॥

ते वाश्च ते काश्च ते श्रावकाः” आ पठ कर्मधारय समास रूपे छे. जे ज वात् नीयेना सूत्रपठ द्वारा प्रकट करी छे—“ श्रद्धालुतां श्राति पदार्थचिन्तनात् ” इत्यादि. जिनेन्द्र देव द्वारा प्रतिपादित अवादि रूप तत्त्वोत् जेओ गिन्तन करे छे अने तेमना पथने प्रत्ये श्रद्धा राभे छे तेनापर दृढ आस्था (विश्वास) राभे छे अने सुपात्रने दान आपीने पोताना धनने निरन्तर सदुपयोग करे छे, अने निष्परिग्रही साधुओनी सेवा द्वारा जेओ पोतानी पापप्रकृतिओने विखेरता रहे छे, तेमने श्रावक कहे छे. आ प्रकारतुं कथन श्राविका विषे पद्य समञ्जसुं ॥ सू. २७ ॥

छाया-चतुर्विधा बुद्धिः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-औत्पत्तिकी १, वैनयिकी २, कार्मिका ३, पारिणामिकी ४।

चतुर्विधा मतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अवग्रहमतिः १, ईदामतिः २, अवायमतिः ३, धारणामतिः ४।

अथवा—चतुर्विधा मतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अरज्जरोदकसमाना १, विदरोदक-समाना २, सरउदकसमाना ३, सागरोदकसमाना ४। ॥ २८ ॥

टीका—“ चउच्चिहा बुद्धी ” इत्यादि—बुद्धिश्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-औत्पत्तिकी-उत्पत्तिरेव प्रयोजनमस्या इत्यौत्पत्तिकी, ननु क्षयोपशमो बुद्ध्युत्पत्ति प्रति कारणं भवतीति स हेतुरस्या इति क्षयोपशमिक्चपि वक्तुमुचिता, कथं न सोक्तेति चेच्छूण नहि औत्पत्तिकीमेवबुद्धिं प्रति क्षयोपशमो हेतुः, अपि तु सर्व-बुद्धिः प्रत्ययं प्रधानो हेतुरिति क्षयोपशमकारणाविवक्षयोत्पत्तिमात्रप्रयोजनं विव-

कहा गया यह संघ सर्वज्ञके वचनसे सजी (स्फीत-निर्मल) हुई बुद्धिवाला होता है। अतः अत्र सूत्रकार बुद्धिकी विवेचना करते हैं—

‘चउच्चिहा बुद्धी पणत्ता’ इत्यादि सूत्र २८ ॥

टीकार्थ—बुद्धि चार प्रकारकी होतीहै जोसी-औत्पत्तिकी १ वैनयिकी २ कार्मिका ३ और पारिणामिकी ४ इनमें जिस बुद्धिका प्रयोजन उत्पत्तिही होती है, वह औत्पत्तिकी बुद्धि है, इस औत्पत्तिकी बुद्धिमें ज्ञाना वरणीय कर्मका विशिष्ट क्षयोपशम होता है।

शंका—क्षयोपशम बुद्धिकी उत्पत्तिके प्रति कारण होता है, तो फिर यहां क्षयोपशम है हेतु जिसका, ऐसी क्षायोपशमिकी बुद्धि उसे क्यों नहीं कही है ?

उपर्युक्त संघ सर्वज्ञना वचनथी विशुद्ध बुद्धिवाणो थाय छे. तेथी डवे सूत्रकार बुद्धितुं निरूपणु करे छे. “ चउच्चिहा बुद्धी पणत्ता ” इत्यादि—

टीकार्थ—बुद्धिना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहा छे—(१) औत्पातिकी, (२) वैनयिकी, (३) कार्मिका, अने (४) पारिणामिका. जे बुद्धितुं प्रयोजन उत्पत्ति न डाय छे, ते बुद्धिने औत्पातिकी बुद्धि कडे छे. आ औत्पातिकी बुद्धिमां ज्ञानावरणीय कर्मना विशिष्ट क्षयोपशम थतो डाय छे.

शंका—जे औत्पत्तिकी बुद्धिनी उत्पत्तितुं कारणु क्षयोपशम डाय, तो तेने क्षायोपशमिकी बुद्धि केम कही नथी ? जेतुं कारणु क्षयोपशम डाय जेवी बुद्धिने औत्पत्तिकी शा भाटे कही छे ?

क्षित्वा औत्पत्तिकीमेवबुद्धिं तदभेदतयाऽऽह । औत्पत्तिकीबुद्धिर्हि यथा क्षयोपशमम-
पेक्षते तथा तदन्यच्छास्त्रं वा कर्मवाऽभ्यासादिकं नापेक्षत इति,

यद्वा—औत्पत्तिकी बुद्धिः लोकद्वयाऽविरुद्धैकान्तिकफलशालिनी सा यथा
बुद्ध्या बुद्ध्युत्पत्तितः पूर्वं स्वयमदृष्टोऽपरमुखादनाकर्णितो मनसाऽप्यचिन्तितोऽर्थो
यथावत् सद्योऽवबुध्यते, यदाह—

“ पुंस्त्वमदिदमसुया वेदयतक्वसणविसुद्धगहियद्वा ।

अववाहयफलजोगा बुद्धी उत्पत्तिया नाम ॥ १ ॥ ”

छाया—“ पूर्वमदृष्टाश्रुताविदित तत्क्षणविशुद्धगृहीतार्था ।

अव्याहतफलयोगा बुद्धिरौत्पत्तिकी नाम ॥ १ ॥ ” इति ।

उ०—केवल औत्पत्तिकी बुद्धिके प्रति ही क्षायोपशम कारण होता
हो ऐसी बात तो नहीं है वह तो समस्त बुद्धियोंके प्रति प्रधान कारण
होता है, परन्तु यहां जो उसकी विवक्षा नहींकी है उसका कारण उसमें
उत्पत्ति मात्र प्रयोजनकी विवक्षा है, यह औत्पत्तिकी बुद्धि क्षायोप-
शमिक बुद्धिकाही एक भेद है । औत्पत्तिकी बुद्धि जिस प्रकारसे क्षायो-
पशमकी अपेक्षा रखती है, उस प्रकारसे वह अन्य शास्त्रकी या अभ्या-
सादिरूप कर्मकी अपेक्षा नहीं रखती है ।

यद्वा—यह औत्पत्तिकी बुद्धि दोनों लोकोंमें अविरुद्ध ऐकान्तिक
फलवाली होती है । यह अपनी उत्पत्तिके पहिलेही स्वयं अदृष्ट परके
मुखसे अश्रुत और मनसे अचिन्तित ऐसे विषयको यथावत् जान लेती
है सोही कहा है—“ पुंस्त्वमदिदमसुया ” इत्यादि । यह बुद्धि पूर्वमें कभी

उत्तर—केवल औत्पत्तिकी बुद्धिनी न उत्पत्तिमां क्षयोपशम कारणभूत
जाने छे, जेवी केह बात नथी. परन्तु ते तो समस्त बुद्धिजोनी उत्पत्तिमां
मुभ्य कारणरूप जाने छे. परन्तु अही जे तेनुं वस्तुं करवामां आव्युं नथी
तेनुं कारण जे छे के तेमां उत्पत्ति मात्र रूप प्रयोजननी न विवक्षा थछ छे.
ते औत्पत्तिकी बुद्धि क्षायोपशमिकी बुद्धिना न अेक लेह रूप छे. औत्पत्तिकी
बुद्धि जेटला प्रमाणमां क्षयोपशमनी अपेक्षा राजे छे जेटला न प्रमाणमां
अन्य शास्त्रनी के अभ्यास आदि रूप कर्मनी अपेक्षा राखती नथी. अथवा
आ औत्पत्तिकी बुद्धि जन्ने लोकमां (आलोक अने परलोकमां) अविशुद्ध
अने ऐकान्तिक कर्म आपनारी होयं छे. आ बुद्धि अदृष्ट, अश्रुत अने अचि-
न्तित विषयाने पद्य यथार्थ रूपे ज्ञानी ले छे. कहुं छे के—

“ पुंस्त्वमदिदमसुया ” इत्यादि—पूर्वे कही नहीं जेणेला, जानथी नहीं

યથા—નટપુત્રરોહકાદીનામિતિ । ૧

તથા—વૈનયિકી-વિનયો-ગુરુશુશ્રૂષા, તેન નિર્ઠ્ઠા વૈનયિકી વિનયરૂપકારણજન્યા, યદ્વા-વિનય એ વૈનયિકુઃ, વિનયાદિત્વાદ્વઠ્ઠ, સ પ્રધાનો યસ્યાઃ સા વૈનયિકુપ્રધાના, સૈવ વૈનયિકી અત્ર ' વિનાઽપિ પ્રત્યયં ' પૂર્વોત્તરપદયો વાં લોપો વાચ્યઃ ' ઇતિ વાર્તિકેન પ્રધાનપદલોપે સ્ત્રિયાં ઠગન્તત્વાહીપિ સાધુતા વોઘ્યા ।

યદ્વા—કાર્યમાત્રસાધનસમર્થા ધર્મર્થિકાપશાસ્ત્રમૂત્રાર્થસારગ્રહણવતી લોકહૃદય-ફલસમ્પન્ના વુદ્ધિ વૈનયિકી. યદાહ—

નહીં દેસે હુએ કાનસે કબી નહીં સુને, ઓર યનસે ખી કબી નહીં વિચારે હુએ પદાર્થકા ડસી ક્ષણમેં વિશુદ્ધ રૂપસે ગ્રહણ કર લેતીહૈ, યહ અવ્યા-હન (સફલ) ફલવાલી હોતી હૈ, નટપુત્ર રોહક આદિકોંકે યહ વુદ્ધિ હૈ હૈ એસા શાસ્ત્રોંકા લેલ્લ હૈ। ગુરુકી શુશ્રૂષા કરના યહ વિનય હૈ, ઇસ વિનયસે જો વુદ્ધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ વૈનયિકી વુદ્ધિ હૈ અતઃ યહ વિનયરૂપ કારણસે જન્ય હોતી હૈ અથવા-વિનયહી વૈનયિક હૈ વિનયસે ઠક પ્રત્યય કરને પર યહ " વૈનયિક " શબ્દ વન જાતા હૈ યહ વિનયહી જિસમેં પ્રધાન હોતા હૈ વહીં વૈનયિકી હૈ-વૈનયિક પ્રધાન વુદ્ધિ વૈનયિકી હૈ—

યદ્વા—કાર્ય માત્રકે સાધન કરનેમેં સમર્થ ઓર ધર્મશાસ્ત્ર, અર્થ-શાસ્ત્ર એવં કામશાસ્ત્ર ઇનકે મૂત્રોંકે અર્થરૂપ સારકો ગ્રહણ કરનેવાલી જો લોકહૃદયકે ફલસે સમ્પન્ન વુદ્ધિ હોતી હૈ, વહ વૈનયિકી વુદ્ધિ હૈ ।

સાંભળેલા અને મનથી કઠી નહીં વિચારેલા પદાર્થને પણ આ બુદ્ધિ વિશુદ્ધ રૂપે ગ્રહણ કરી લે છે અને અવ્યાહત (સફલ) ફલવાળી હોય છે. નટપુત્ર રોહકમાં આ પ્રકારની બુદ્ધિને સદ્ભાવ હોતો. તે રોહકની ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિના કેટલાક દેશાંતો નન્દીસુત્રમાં આપવામાં આવ્યાં છે.

ગુરુની શુશ્રૂષા કરવી તેનું નામ વિનય છે. તે વિનયને લીધે જે બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે તે બુદ્ધિને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. તે બુદ્ધિ વિનયરૂપ કારણથી ઉત્પન્ન થતી હોય છે અથવા વિનય જે વૈનયિક છે વિનયને " ઇક " પ્રત્યય લગાડવાથી " વૈનયિક " શબ્દ બને છે. તે વિનય જે જેમા મુખ્ય રૂપે હોય છે તેને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. એટલે કે વૈનયિક પ્રધાન બુદ્ધિ જે વૈનયિકી છે. અથવા કાર્યમાત્રને સાધવામાં સમર્થ એવી અને ધર્મશાસ્ત્ર, અર્થશાસ્ત્ર અને કામ શાસ્ત્રનાં સૂત્રોના અર્થ રૂપ સારને ગ્રહણ કરનારી અને બને તેલોકમાં ફલદાયી એવી જે બુદ્ધિ હોય છે તેને વૈનયિકી બુદ્ધિ કહે છે. કહ્યું પણ છે કે—

“ भरनित्थरणसमत्था त्रिवर्गसुत्तथगहियपेयाला ।

उभओलोगफलवई विणयसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ १ ॥ ”

छाया—“ भरनिस्तरणसमर्था त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतसारा ।

उभयलोकफलवती विनयसमुत्था भवति बुद्धिः ॥ १ ॥ ” इति ।

यथा—नैमित्तिकसिद्धपुत्रशिष्यादीनामिति । २

तथा—कार्मिका—कर्मणो जाता कार्मिका=कर्मजा, तत्र - कर्म-अनाचार्यकं कादाचित्कं वा, शिल्पं—साचार्यकं नित्यव्यापारो वा भवति, कर्मणो जाता बुद्धिः। यद्वा—सा कर्माऽऽग्रहप्राप्तकर्मतत्त्वा कर्माभ्यासपर्यालोचनाभ्यां विस्तारप्राप्ता प्रशंसाफलशालिनी च, यदाह—

“ उवओगदिट्टसारा, कम्मपसंगपरिघोलणविसाला ।

साहुकारफलवई, कम्मसमुत्था हवइ बुद्धी ॥ १ ॥ ”

सोही कहा है—“ भरनित्थरणसमत्था ” इत्यादि । इस गाथा का अर्थ स्पष्ट है यह बुद्धि नैमित्तिकके सिद्धपुत्र और उसके शिष्य आदिकोंके हुई कही गई है

जो बुद्धि कर्मसे उत्पन्न होती है वह कार्मिका बुद्धि है, यहां अनाचार्यक (विना आचार्य) अथवा कादाचित्क या साचार्यक (आचार्य सहित) अथवा नित्यव्यापार ये कर्मशब्दसे लिये गये हैं, जैसे शिल्प यह साचार्यक है, क्योंकि यह विना गुरुके नहीं आता है, यद्वा यह बुद्धि कर्मको सीखनेके आग्रहसे प्राप्त कार्यके सारवाली हो जाती है, और अभ्यास करते २ या उसका विचार करते २ भी यह प्राप्त हो जाती है, हर जगह इस बुद्धिवालेको प्रशंसा प्राप्त होती है । सो ही कहा है—“ उवओगदिट्टसारा ” इत्यादि ।

“ भरनित्थरणसमत्था ” इत्यादि—आ प्रकारनी बुद्धि नैमित्तिकना सिद्धपुत्र अने तेना शिष्य वगेरेभां छती, ओवु शास्त्रोभां कहेवाभां आओंछुं छे. जे बुद्धि कर्म द्वारा उत्पन्न थाय छे, ते बुद्धिने कार्मिका बुद्धि कहे छे. अही अनाचार्यक (विना आचार्यना) अथवा क्यारेक साचार्यक (आचार्य युक्तता) अथवा नित्यव्यापार आ-पहोने कर्म शब्दथी अहेणु करवाभां आवेद छे. जेभके शिष्टपङ्कना ओ साचार्यक कर्म गणाय छे, कारण के गुरुनी सहायता विना ते कणा शीघ्री शकती नथी. अथवा आ कार्मिका बुद्धि ओवी होय छे के कौछ कर्मने शीघ्रवाने भाटे आअहवाणी होय छे तेथी स्वप्रयत्नथी-पणु ते प्राप्त थछे नय छे ओटवे के गुरुनी सहायता विना नते जे अभ्यास कर्मा करवाथी अने ते विषे विचार करवाथी प्राप्त थछे नय छे. आ प्रकारनी बुद्धिभी संपन्न व्यक्तितनी अघे प्रशंसा थाय छे. कहुं पणु छे के—

છાયા—ઉપયોગદૃષ્ટાસારા કર્મપ્રસન્નપરિઘોલન (વિચાર) વિશાલા ।

સાધુકારકલ્પવતી કર્મસમુત્થા ભવતિ બુદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

યથા—સુવર્ણકાર-કૃષીવલાદીનામિતિ ૩ ।

તથા—પારિણામિકી-પરિણામઃ—સુચિરકાલપૂર્વાપરાર્થદર્શનાદિ ભવઆત્મધર્મવિ-
શેષઃ, સ પ્રયોજનમસ્યા, યદ્વા-પરિણામપ્રધાના બુદ્ધિઃ પારિણામિકી, યદ્વા-અનુ-
માનહેતુદૃષ્ટાન્તૈઃ સાધ્યસાધિકા વયોવિપાકે ચ પ્રાપ્તપરિપુષ્ટિરભ્યુદયનિઃશ્રેયસકલ-
શાલિનીબુદ્ધિઃ પારિણામિકી, યદાહ—

તાત્પર્ય હસકા કેવલ યહી હૈ કિ કાર્મિકા બુદ્ધિવાલા મનુષ્ય હર-
એક કાર્યમેં વિશેષ પદ્ધુ હોતા હૈ, ત્વાહે વહ ઉસ કાર્યકો ગુરુ આદિકી
સહાયતાસે સીખે, યા વિના ગુરુકી સહાયતાસે ખી સીખે ઉસ કાર્યમેં
ઉપયોગ લગાનેસે નિરંતર ઉસકા અભ્યાસ કરતે રહનેસં વહ કાર્ય
ઉસકે હાથમેં આ જાતા હૈ । યહ બુદ્ધિ સુવર્ણકારોમેં યા કિસાન
આદિમેં હોતી હૈ ।

જો બુદ્ધિ વહુત દિનોં તક પૂર્વાપર પદાર્થોંકે દેખને આદિસે પ્રાપ્ત
અનુભવરૂપ આત્મધર્મવિશેષસે હોતી હૈ અથવા-વય આદિકે ઘટનેકે
કારણ વિશેષ અનુભવરૂપ પરિણામ પ્રધાનતાવાલી હોતી હૈ, વહ પરિ-
ણામિકી બુદ્ધિ હૈ, અથવા-અનુમાન હેતુ દૃષ્ટાન્ત ઇનસે સાધ્યકો સાધ-
નેવાલી એવં વયકે પરિપક્વમેં પ્રાપ્ત પુષ્ટિવાલી જો બુદ્ધિ હોતી હૈ, વહ

“ સ્વબોગવિદ્સારા ” ઇત્યાદિ—આ શ્લોકનો ભાવાર્થ એ છે કે
કાર્મિકા બુદ્ધિવાળો મનુષ્ય દરેક કાર્યમાં વિશેષ પદ્ધ (પ્રવિષ્ટ) હોય છે તે
તે ગુરુની સહાયતાથી પુણ્ય શીખી શકે છે અને ક્યારેક ગુરુની સહાયતા
વિના પણ શીખી લે છે. તે કાર્યમાં સદા ઉપયુક્ત રહેવાથી તેનો જ સદા
વિચાર કર્યા કરવાથી, અને તેનો અભ્યાસ કરતા રહેવાથી તે કાર્ય કરવાની
તેને ક્ષમતા આવી જાય છે. આ પ્રકારની બુદ્ધિનો સદ્ભાવ સુવર્ણકારો, ખેડૂતો
આદિ કારીગરોમાં હોય છે.

જે બુદ્ધિ ઘણા દિનો સુધી પૂર્વાપર પદાર્થોને દેખવા આદિથી પ્રાપ્ત
અનુભવ રૂપ આત્મધર્મ વિશેષથી ઉત્પન્ન થાય છે, અથવા ઉમર આદિની વૃદ્ધિ
થવાને કારણે વિશેષ અનુભવ રૂપ પરિણામ-પ્રધાનતાવાળી હોય છે, તે બુદ્ધિને
પારિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. અથવા-અનુમાન, હેતુ અને દષ્ટાન્ત દ્વારા સાધ્યને
સાધનારી અને પરિપક્વ ઉમરને કારણે પુષ્ટિયુક્ત બનેલી જે બુદ્ધિ હોય છે

અણુમાણહેઉદિટ્ઠંત સાહિયા વયવિવાગપરિણામા ।

હિયનિસ્સેયસફલવર્ઘે બુદ્ધી પારિણામિયા નામ । ૧ ॥

છાયા—“અનુમાનહેતુદૃષ્ટાન્તસાધિકા વયોવિપાકપરિણામા ।

હિતનિઃશ્રેયસફલવતી બુદ્ધિઃ પારિણામિકી નામ ॥૧॥ ઇતિ ।

યથા—અમયકુમારાદીનામિતિ ૧ ।

॥ ઇતિ બુદ્ધિસૂત્રમ્ ॥

પૂર્વે બુદ્ધિરુક્તા, સા ચ મતિવિશેષ ઇતિ મતિ નિરૂપયિતુમાહ—

“ચત્ત્વિહા મર્ઘે” ઇત્યાદિ—મતિઃ—મનનં, સા-ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તથયા—
અવગ્રહમતિઃ—અવગ્રહઃ = સામાન્યાર્થસ્યાશેષવિશેષનિરપેક્ષસ્યાનિર્દેશ્યસ્ય રૂપમ્મૃતેઃ

પારિણામિકી બુદ્ધિ હૈ । યહ બુદ્ધિ અભ્યુદયરૂપ યા નિઃશ્રેયસ(મોક્ષ)રૂપ
ફલસે સુશોભિત હોતીહૈ, સોહી કહા હૈ—“અણુમાણહેઉદિટ્ઠંત” ઇત્યાદિ ।
અનુમાનસે હેતુસે એવં દૃષ્ટાન્તસે અપને અબીષ્ટ અર્થકો સિદ્ધ કરલેને-
વાલી ઓર ધીરે ૨ જૈસે ૨ વય બઢતી જાતી હૈ, ઉસકે અનુસાર પ્રાપ્ત
વિશેષ અનુભવવાલી એવં આત્મહિતકી સાધનામૈં જોડનેવાલી જો બુદ્ધિ
હાતી હૈ વહ પારિણામિકી બુદ્ધિ હૈ । યહ અમયકુમાર આદિકૌકે ધી
ઉક્ત યહ બુદ્ધિ મતિવિશેષરૂપ હોતી હૈ ઇસલિયે અવ સૂત્રકાર ઉસ
મતિકા નિરૂપણ કરતે હૈ—“ચત્ત્વિહા મર્ઘે” ઇત્યાદિ—મનન કરનેકા
નામ મતિ હૈ, યહ મતિ ચાર પ્રકારકી હોતી હૈ જૈસે—અવગ્રહમતિ ૧
ઈહામતિ ૨ અવાયમતિ ૩ ઓર ધારણામતિ ૪ જિસ જ્ઞાનસે સમસ્ત

તેને પરિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. તે બુદ્ધિ અભ્યુદય રૂપ અથવા નિઃશ્રેયસ
(મોક્ષ) રૂપ ફલથી વિભૂષિત હોય છે. કહ્યું પણ છે કે—

“અણુમાણ હેઉ દિટ્ઠંત” ઇત્યાદિ—અનુમાન દ્વારા, હેતુ દ્વારા, અને
દૃષ્ટાન્ત દ્વારા અબીષ્ટ અર્થને સિદ્ધ કરનારી અને ધીરે ધીરે ઉભરની વૃદ્ધિ
સાથે પરિપક્વ અનુભવથી પુષ્ટ થયેલી એવી, આત્મહિતના સાધનામાં પ્રવૃત્ત
કરનારી જે બુદ્ધિ હોય છે, તેને પરિણામિકી બુદ્ધિ કહે છે. આ પ્રકારની
બુદ્ધિનો સહભાવ અમયકુમાર વગેરેમાં હોતો.

ઉપર્યુક્ત બુદ્ધિ મતિવિશેષ રૂપ હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર મતિનું
નિરૂપણ કરે છે. “ચત્ત્વિહા મર્ઘે” ઇત્યાદિ—

મનન કરવું તેનું નામ મતિ છે. તે મતિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર
કહ્યા છે—(૧) અવગ્રહ મતિ, (૨) ઇહા મતિ, (૩) અવાય મતિ અને (૪)
ધારણા મતિ. જે જ્ઞાન વડે સમસ્ત પ્રકારના વિશેષોની અપેક્ષાથી રહિત એટલે

अवेति—प्रथमतो ग्रहणं=परिच्छेदनम् अवग्रहः, स एव मतिरवग्रहमतिः, एवमप्रे-
 ऽपि १। तथा ईहा मतिः तत्र—ईहाक्षयोपशमतस्तदर्थविशेषपर्यालोचनम् सैवमतिरीहा-
 मतिः २, तथा अवायमतिः—अवायः-क्षयोपशमतः-प्रक्रान्तार्थविशेषनिश्चयः स एव मति-
 रवायमतिः ३, तथा—धारणामतिः-धारणा—क्षयोपशमतो ज्ञातार्थविशेषधरणं
 सैवमतिर्धारणामतिः ४।

उक्तंच—“ सामन्नत्थावग्रहणमोग्रहो भेयमग्रणमिहेहा ।

तस्सावगमोऽायो अविच्छुई धारणा तस्स ॥ १ ॥ ”

छाया—सामान्यार्थावग्रहणमवग्रहो भेदमार्गणमिहेहा ।

तस्यावगमोऽवायोऽविच्युति धारणा तस्य ॥ १ ॥ इति

एतद्वुद्धिमतिमूत्रद्वयस्य विशेषतो विवरणं मत्कृतायां नन्दीमूत्रस्य ज्ञानच-
 न्द्रिकायां टीकायां विलोकनीयम् । (२) ।

प्रकारके विशेषोंसे निरपेक्ष अतएव शब्दादि द्वारा अनिर्देश्य ऐसे
 सामान्य रूपसे रूपादिकोंका सर्व प्रथम ग्रहण ज्ञान होता है वह अव-
 ग्रहरूप मति है । अवग्रह मतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमकी विशे-
 पताके अनुसार जो विशेष रूपसे जानती है वह ईहारूपमति है, ईहा-
 मतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमकी विशेषताके अनुसार जो
 विशेष रूपसे निश्चय रूपसे जाननेवाली मति है, वह अवाय रूप मति
 है ३। एवं अवायमतिसे जाने हुए पदार्थको क्षयोपशमके अनुसार अवि-
 स्मरणरूपसे धारण करनेवाली जो मति है वह धारणामति है ४। कहा
 भी है “सामत्थावग्रहण 'इत्यादि इस गाथाका अर्थ स्पष्ट है इन बुद्धि और
 मति विषयक सूत्रोंका विशेष रूपसे कथन नन्दीसूत्रकी टीका ज्ञान-

के शब्दादि द्वारा अनिर्देश्य अथवा सामान्य रूपसे रूपादिकोंका सर्व प्रथम ग्रहण
 (ज्ञान) थाय छे, ते मतिनुं नाम अवग्रह मति छे. अवग्रह मति द्वारा
 जे पदार्थने ज्ञानवामां आये छे तेने क्षयोपशमनी विशेषता अनुसार
 विशेष रूपसे ज्ञाननारी जे मति छे, तेने ईहामति कडे छे. ईहामति द्वारा
 ज्ञानेला पदार्थने क्षयोपशमनी विशेषता अनुसार विशेष रूपसे निश्चय रूपसे
 ज्ञाननारी जे मति छे तेने अवायरूप मति कडे छे अवाय भात वडे ज्ञानेला
 पदार्थने क्षयोपशमनी विशेषता अनुसार अविस्मरण रूपसे धारण करनारी जे
 मति छे तेने धारणा मति कडे छे. कहूं पणुं छे—

“ सामन्नत्थावग्रहण ” इत्यादि. आ गाथानो अर्थ स्पष्ट छे. आ बुद्धि
 अने मतिविषयक सूत्रानुं विशेष कथन नन्दीसूत्रनी टीका ज्ञानचन्द्रिकां
 करवामां आये छे, तो त्यांथी वांथी लेवुं

‘अहवा चउन्विहा मई’ इत्यादि—अथवा—मतिश्चतुर्विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—
अरञ्जरोदकसमाना—अरञ्जरम्—जलघटः, तदलिञ्जरमित्यपि प्रसिद्धम्, तस्मिन् यदु-
दकं तत्समाना तत्तुल्या मतिः, तत्सादृश्यं च बह्वर्थग्रहणोत्प्रेक्षणधारणाशक्तत्वा
दल्पत्वेनाऽस्थिरत्वेन च बोध्यम्, अयं भावः—यथा—अरञ्जरोदकं—स्वल्पपरिमाणं
सञ्छीघ्रं व्ययमेति तथा—मतिरपि स्वल्पमेवार्थं गृह्णाति उत्प्रेक्षते धरति च शीघ्र-
मेव चापैतीति तत्सदृशी व्यपदिश्यते इति प्रथमा मतिः। तथा—विदरोदकसमाना-

चन्द्रिकामें किया गया है—अतः वहाँसे देख लेना चाहिये “अहवा
चउन्विहा मई” इत्यादि—अथवा—मति चार प्रकारकी कही गई है।
जैसे—अरञ्जरोदक समान १ विदरोदक समान २ सर उदक समान ३
और सागरोदक समान ४ अरञ्जर नाम घटका है इसे अलिञ्जर भी कहा
जाता है, इसके पानीके जैसी जो बुद्धि होती है वह अरञ्जरोदक समान
बुद्धि है, बुद्धिमें जो यह अरञ्जरोदक समानता प्रकटकी गई है, वह अल्पता
और अस्थिरताकी अपेक्षासे प्रकट की गई है, क्योंकि ऐसी बुद्धि वह
अर्थको ग्रहण नहीं करती है उसका उत्प्रेक्षण एवं उसकी धारणा भी
नहीं करता है, भाव यह है कि जिस प्रकारसे अरञ्जोदक स्वल्पपरि-
माणवाला होता है, और शीघ्रही खर्च हो जाता है उसी प्रकारसे ऐसी
मति भी स्वल्पही अर्थको ग्रहण करती है उतनेही अर्थका वह विचार
करती है और उतनेही अर्थकी वह धारणा करती है एवं शीघ्रतासे
नष्ट हो जाती है। इस प्रकारसे यह अरञ्जोदक जैसी बुद्धिके विषयका

“अहवा चउन्विहा मई” इत्यादि—अथवा मतिना नीचे प्रमाणे चार
प्रकार पणु कहे छे—(१) अरञ्जोदक समान, (२) विदरोदक समान (३)
सरउदक समान अने (४) सागरोदक समान.

‘अरञ्जर’ अटले घडा—तेने अलिञ्जर पणु कहे छे तेना पाणीना
जेवी जे बुद्धि डोय छे, तेने अरञ्जोदक समान बुद्धि कहे छे. घडाना पाणीमां
जेवी अल्पता अने अस्थिरता डोय छे जेवी अल्पता अने अस्थिरतावाणी
बुद्धिने अरञ्जोदक समान कहे छे. आ प्रकारनी बुद्धि गहु अर्थने ग्रहण
करती नथी, तेनुं उत्प्रेक्षण अने तेनी धारणा पणु करती नथी. जेस घडानुं
पाणी स्वल्प प्रमाणवाणुं डोय छे अने जल्दी वपरार्थ जय जेपुं डोय छे,
जे जे प्रमाणे जेवी मति पणु स्वल्प अर्थने जे ग्रहण करे छे, अटला जे
अर्थने ते विचार करे छे अने अटला जे अर्थनी ते धारणा करे छे, अने
शीघ्रताधी नष्ट थय जय छे. आ प्रकारनुं अरञ्जोदक समान बुद्धितुं अहाँ
स्पष्टीकरण करवामां आण्युं छे.

विद्रो-नदी नटादी जलार्थो गर्तः कूपिकादिः जलस्थानविशेषः, तस्मिन् यदुदकं
 तन्प्रमाना यथा-विद्रोदकं नद्यादि स्रोतः सम्बन्धे पुनः पुनर्जलमिलितंसदल्पमपि
 ग्रीत्रं न व्ययमेति तथा या मतिः स्वल्पाप्यन्यान्यार्थतर्कमात्रकुशला इदिति नापै-
 तीति स्वल्पत्वादन्यान्यार्थोदनमात्रदक्षत्वाज्जटित्यव्ययत्वाच्च तत्प्रमाना व्यवहियत
 इति द्वितीया मतिः २। तथा-सर उदकंसमाना-यथा-सरोगतजलं पुष्कलत्वाद्बहु-
 स्पर्शीकरण है १ तथा-विद्रोदक समान जो बुद्धि होती है वह ऐसी
 होती है-विद्र नाम उसका है जो नदीके तट आदि पर जलके खड्डा
 होता है, या कूप आदि जलका स्थान विशेष होता है उसके उदकके
 जैसी जो बुद्धि होती है वह विद्रोदक समान बुद्धि है। विद्रोदक जिस
 तरह नदी आदिके स्रोतके सम्बन्धसे चार २ मिल जाने पर स्वल्प
 होता हुआ भी शीघ्र व्ययको नाशप्राप्त नहीं होता है, उसी प्रकार जो
 मति स्वल्प होती हुई भी अन्य अन्य अर्थके तर्क मात्रसे कुशल हो
 जाती है और जल्दी नष्ट नहीं होती है वह विद्रोदक समान बुद्धि
 है। यह विद्रोदक समान बुद्धि भी यद्यपि मात्रामें अल्प होती है
 परन्तु अन्य अन्य अर्थ सम्बन्धी ऊहापोहसे-तर्कसे यह दक्ष हो जाती
 है, उन २ विषयमें तर्कणा गवेषणा आदि करते रहनेसे यह थोड़ी होती
 हुई भी विस्तृत विद्याल जैसी ज्ञात होती है, और यह शीघ्र नष्ट भी
 नहीं होती है इसलिये इसे विद्रके उदक जैसा कहा गया है। तालावका

इसे विद्रोदक समान बुद्धिनुं स्पर्शीकरण करवायां आवे छे—'विद्र'
 अर्थात् नदीना पटमां गाणेसे विद्रो (भाडो) अथवा कूपो. जेम नदीमां
 अथवा नदीना किनारे गाणेसे भाडो नदीनी साथे घसडाई आवनी देतीने
 शीघे पूराई पूराईने नानो गनतो जय छे पशु तेमां पाणीनी आय तो
 आलु न रहे छे, अने ते शीघ्र नष्ट थई नथी, जे न प्रमाणे जे मति
 स्वल्प होवा छतां पशु अन्य अन्य अर्थना (विषयना) तर्क मात्रा-पुष्ट
 धनी जय छे, पशु जल्दी नश पावती नथी. जेवी मतिने विद्रोदक समान
 कही छे आ विद्रोदक समान बुद्धि पशु जे छे अल्प मात्रावणी होय छे,
 परन्तु अन्य अन्य अर्थ विषयक उहापोह (तर्क) थी दक्ष थई जय छे. ते
 विषयमां तर्क, गवेषणा आदि करता रहेवाधी अल्प होवा छतां पशु विस्तृत
 होय जेवी जागे छे अने शीघ्र नाश पावती नथी. तेथी तेने विद्रना
 पाणी जेवी कही छे.

જનાનુપકરોતિ ન ચ શીઘ્રં વ્યયમેતિ તથા યા મતિ ધિપુલા બહુજનોપકારિણી ન શીઘ્રપૈતિ સા પ્રચુરત્વાદ્બહુજનોપકારિત્વાચ્છીઘ્રવ્યયરહિતત્વાચ્ચ તત્સમાનોચ્યત ઇતિ તૃતીયા ૩।

તથા-સાગરોદક સમાના-સમુદ્રગતજલતુલ્યા-તજ્જલં યથા-સમસ્તરત્નમિ-લિતં પુષ્કલતમં ક્ષયરહિતમગાઢં ચ ભવતિ તથા યા મતિઃ સર્વપદાર્થાવગાહિની જલ જિસ પ્રકારસે પુષ્કલ હોતાહૈ, ઓર અનેક જનોંકા ઉપકારક હોતા હૈ એવં શીઘ્રતાસે ઉસકા નાશ નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર જો મતિ ધિપુલ હોતી હૈ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકે અધિકતર ક્ષયોપશમસે યુક્ત હોતી હૈ અનેક જનોંકા ઉપકાર કરતી હૈ ઓર શીઘ્ર નષ્ટ નહીં હોતી હૈ એસી વહ પ્રચુર પ્રમાણવાલી બહુજનોપકારિણી એવં શીઘ્રતાસે નષ્ટ નહીં હોનેવાલી બુદ્ધિ સર ઉદક સમાન કહી ગઈ હૈ, અરજોદક સમાન બુદ્ધિમેં જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ક્ષયોપશમ અત્પ માત્રામેં રહતા હૈ વિદરો-દક સમાન બુદ્ધિમેં હસકા ક્ષયોપશમ અધિક માત્રામેં રહતા હૈ, સર ઉદક સમાન બુદ્ધિમેં હસકા ક્ષયોપશમ અધિકતર રહતા હૈ, ઓર જો બુદ્ધિ સાગરોદક સમાન હોતી હૈ, ઉસમેં જ્ઞાનાવરણીયકર્મકા સર્વથા એકાન્તિક અત્યન્ત વિનાશ રહતા હૈ અતઃ વહ સમુદ્રોદક સમાન કહી ગઈ હૈ જૈસે સમુદ્રકા જલ સમસ્ત રત્નોસે મિલિત હોતા હૈ પુષ્કલતમ હોતા હૈ ક્ષયરહિત હોતા હૈ ઓર અગાઢ હોતા હૈ । ઉસી પ્રકારસે જો

સરઉદક સમાન બુદ્ધિ--સરોવર અથવા તળાવ જેમ ખૂબ પાણીથી યુક્ત હોય છે, અને તેનું પાણી અનેક જીવોને ઉપકારક થઈ પડે છે અને તેનો જલદી નાશ પણ થતો નથી, એ જ પ્રમાણે જે મતિ વિપુલ હોય છે-જ્ઞાનાવરણીય કર્મના અધિકતર ક્ષયોપશમથી યુક્ત હોય છે, અનેક જનોને માટે ઉપકારક હોય છે અને શીઘ્ર નષ્ટ પણ થતી નથી, એવી વિપુલ પ્રમાણવાળી, બહુજનોપકારિણી અને શીઘ્રતાથી નષ્ટ નહીં થનારી બુદ્ધિને સરઉદક સમાન કહી છે. અરજોદક સમાન બુદ્ધિમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ અત્પ પ્રમાણમાં થયેલો હોય છે. વિદરોદક સમાન મતિમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ અધિક પ્રમાણમાં થયો હોય છે. સરઉદક સમાન મતિમાં તેનો ક્ષયોપશમ અધિકતર માત્રામાં થયો હોય છે, અને જે સાગરોદક સમાન મતિ હોય છે તેમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો અધિકતમ અથવા સંપૂર્ણતઃ વિનાશ થયેલો હોય છે. જેમ સમુદ્રનું જળ વિપુલ, અગાઢ, ક્ષયરહિત અને સમસ્ત રત્નોથી યુક્ત હોય છે, એ જ પ્રમાણે જે મતિ સમસ્ત પદાર્થોમાં અવગાહિની હોય

विपुलतमाऽक्षीणाऽगाधा च भवति साऽखिलपदार्थविषयतयाऽतिशयितवद्भवा-
दक्षयत्वादगाधत्वाच्च सागरोदकसमाना कथ्यत इति चतुर्थी ॥४॥ सू० २८ ॥

पूर्वं मतिरुक्ता, तद्वन्तो जीवा एव भवन्तीति जीवान्निरूपयितुमाह—

मूलम्—चउद्विहा संसारसमावन्नगा जीवा पणत्ता, तं
जहा-णैरइया १, तिरिक्खजोणिया २, मणुस्ता ३, देवा ४।

चउद्विहा सब्बजीवा पणत्ता, तं जहा-मणजोगी १, वइ-
जोगी २, कायजोगी ३, अजोगी ४।

अहवा-चउद्विहा सब्बजीवा पणत्ता, तं जहा-इत्थिवेयगा
१, पुरिसवेयगा २, णपुंसगवेयगा ३, अवेयगा ४।

अहवा-चउद्विहा सब्बजीवा पणत्ता, तं जहा-चक्खुदंसणी
१, अचक्खुदंसणी २, ओहिदंसणी ३, केवलदंसणी ४।

अहवा-चउद्विहा सब्बजीवा पणत्ता, तं जहा-संजया
१, असंजया २, संजयासंजया ३, णो संजया णो असंजया ४।

॥ सू० २९ ॥

छाया—चतुर्विधाः संसारसमापन्नका जीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-नैरयिकाः १,
तिर्यग्योनिकाः २, मनुष्याः ३, देवाः ४।

चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोयोगिनः १, वाग्योगिनः २,
काययोगिनः ३, अयोगिनः ४।

ऐसी मति होती है वह समस्त पदार्थोंमें अवगाहिनी होती है, उन्हे
जाननेवाली होती है। अक्षीण और अगाध होती है इस तरह अखिल
पदार्थोंको विषय करनेवाली होनेसे अनेक अतिशयोक्तीवाली होनेसे अक्षय
एवं अगाध होनेसे ऐसी बुद्धि को सागरोदक समान कहा गया है ॥ सूत्र २८ ॥

छे, तेमने ण्णुनारी होय छे, विपुलतम होय छे, अक्षीण्ण अने अगाध
होय छे, आ रीते अनेक पदार्थोना भाध करायनारी ते बुद्धि अनेक
अतिशयोक्तीवाणी, अक्षय अने अगाध होवाथी अेवी बुद्धिने सागरोदक
समान कही छे. ॥ सू. २८ ॥

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रीवेदकाः १, पुरुषवेदकाः २, नपुंसकवेदकाः ३, अवेदकाः ४।

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—चक्षुर्दर्शनिनः १, अचक्षुर्दर्शनिनः २, अवधिदर्शनिनः ३, केवलदर्शनिनः ४।

अथवा—चतुर्विधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—संयताः १, असंयताः २, संयतासंयताः ३, नो संयता नो असंयताः ४। ॥ सू० २९ ॥

टीका—“ चउव्विहा संसारसमावन्नगा जीवा ” इत्यादि—

संसारसमापन्नकाः—संसरणं संसारः—भवाद्भवान्तरगमनं चतुर्विधगतिभ्रमणमित्यर्थः, तं समापन्नाः=प्राप्ताः संसारसमापन्नास्ता एव तथा, जीवाः चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—नैरयिकाः—नारकाः १, तिर्यग्योनिकाः—तिर्यग्योनिभवाः २, मनुष्याः ३, तथा देवाः ४। इमे चत्वारः स्व स्वकर्मचक्रपरिवर्तिता निरयादि भ्रमणसमापन्ना भवन्ति ।

“ चउव्विहा सव्वजीवा ” इत्यादि—सर्वजीवाः सर्वे च ते जीवाः सर्वजीवाः=सकलपाणिनः चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—मनोयोगिनः—मनो योगसम्पन्नाः सम-

उक्त चतुर्विध मतिवाले जीवही होते हैं अतः अब सूत्रकार जीवोंकी निरूपणा करते हैं—‘ चउव्विहा संसारसमावन्नगा ’ इत्यादि सूत्र २९ ॥ टीकार्थ—एक भवसे द्वितीय भवमें गमन करना—नरकतिर्यञ्च आदि चार प्रकारकी गतियोंमें भ्रमण करना इसका नाम संसारहै । इस संसाररूप स्थानको प्राप्त हुए जो जीव हैं वे संसारसमापन्नक जीव हैं, ये संसार समापन्नक जीव संसारी जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—नैरयिक १ तिर्यग्योनिक २ मनुष्य ३ और देव ४ ये सब संसारी जीव अपने २ कर्मरूपी चक्रसे घुमाये गये नरकादि भवोंको प्राप्त करते हैं

“ चउव्विहा सव्वजीवा ” इत्यादि—समस्त जीव चार प्रकारके

उपर्युक्त चार मतियो सद्दलाव लुवोभां न डोय छे, तेथी डवे सूत्रकार लुवोनी प्र३पणु करे छे “ चउव्विहा संसारसमावन्नगा ” इत्यादि—

टीकार्थ—એક ભવમાંથી બીજા ભવમાં ગમન કરવું—નરક, તિર્યંચ આદિ ચાર પ્રકારની ગતિઓમાં ભ્રમણ કરવું તેનું નામ સંસાર છે. તે સંસાર ૩૫ સ્થાનને બે લુવોએ પ્રાપ્ત કર્યું છે તે લુવોને સંસાર સમાપન્નક લુવો અથવા સંસારી લુવો કહે છે. તે સંસારી લુવોનાં ચાર પ્રકાર કહ્યાં છે—(૧) નૈરયિક, (૨) તિર્યંગ્યોનિક, (૩) મનુષ્ય, અને (૪) દેવ આ સમસ્ત સંસારી લુવો પોત-પોતાના કર્મ રૂપી ચક્ર વડે ભમાવતાં ભમાવતાં નિરયાદિ ભવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે

“ ચउव्विहा सव्वजीवा ” इत्यादि—समस्त लुवोना नीचे प्रमाणे चार प्रकार पडे छे—(१) मनोयोगी—मनोयोगवाणा समनस्क लुवो, (२) वाज्योगी—

નસ્કા: ૧, एवं वाग्‍योगिनो-द्वीन्द्रियादय: २, काययोगिन एकेन्द्रिया: ३, अयो-
गिन:-निरुद्धयोगा: सिद्धाश्च ४ इति ।

‘ અહવા ચઝવિહા સવ્વજીવા ’ ઇત્યાદિ-અથવા-સર્વજીવાશ્ચતુર્વિધા: પ્રજ્ઞતા:, તથથા-સ્ત્રીવેદકા.૧,-પુરુષવેદકા: ૨,-નપુંસકવેદકા:-યે ન સ્ત્રીવેદકા ન પુરુષવે-
દકારતે નપુંસકવેદકા:૩, તથા-અવેદકા:-સ્ત્રી પું નપુંસકવેદરહિતા: સિદ્ધાદય:।૪।

કહે ગયે છે જેણે-મનોયોગી મનોયોગવાળે સમનસ્ક ? વાગ્યોગવાળે-
દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવ ૨ કાયયોગી-કાયયોગવાળે એકેન્દ્રિય જીવ ૩, ઓર
અયોગી-નિરુદ્ધ યોગવાળે સિદ્ધ જીવ ૪, તાત્પર્ય ઇસ કથનકા એસાહૈ કિ
જો જીવ મનોયોગવાળે હોતે છે, વે કાય ઓર વચન ઇન દો યોગોંવાળે
શી હોતે છે, અર્થાત્ જો સમનસ્ક પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવ છે, વે તીનોં યોગ-
વાળે હોતે છે તથા જો અમનસ્ક અસંજી જીવ છે ઉનમેં એકેન્દ્રિયકે તા
કેવલ એકહી કાયયોગ હોતા હૈ ઓર જો દ્વીન્દ્રિય તેન્દ્રિય ચૌદ્વિન્દ્રિય
ઓર અસંજી પંચેન્દ્રિય જીવ છે, વે વચનયોગી ઓર કાયયોગી હોતે
છે મનોયોગી નહીં હોતે છે । તથા યોગોંસે રહિત જો જીવ હોતે છે, વે
સિદ્ધ જીવહી હોતે છે । ઇસ પ્રકારસે યે જીવકે ચાર એદ કહે ગયે છે ૪

“ અહવા ચઝવિહા સવ્વજીવા ” અથવા-સર્વ જીવ ઇસ તરહસે
શી ચાર પ્રકારકે હોતે છે જેણે-સ્ત્રીવેદવાળે ૧ પુરુષ વેદવાળે ૨ નપુંસક
વેદવાળે ૩ ઓર અવેદક જીવ-તીનોં વેદસે રહિત સિદ્ધ આદિ જીવ ૪

વાગ્યોગવાળા દ્વીન્દ્રિયાદિક ળવો, (૩) કાયયોગી-કાયયોગવાળા એકેન્દ્રિય
ળવો અને (૪) અયોગી ળવો-નિરુદ્ધ યોગવાળા સિદ્ધ ળવો.

જે ળવો મનોયોગવાળા હોય છે, તેઓ વાગ્યોગ અને કાયયોગવાળા
પશુ હોય છે. એટલે કે જે સમનસ્ક પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત ળવો છે, તેઓ ત્રણે
યોગવાળા હોય છે, અને જે અમનસ્ક-અસંજી ળવો છે તેમાંના એકેન્દ્રિયોને
તો માત્ર કાયનો જ સદ્ભાવ હોવાથી તેઓ કાયયોગી જ હોય છે, અને
દ્વીન્દ્રિયો, ત્રીન્દ્રિયો, ચતુરિન્દ્રિયો અને અસંજી પંચેન્દ્રિય ળવો કાયયોગી
અને વચનયોગી હોય છે, પણ મનયોગી હોતાં નથી. સિદ્ધ ળવોમાં યોગોનો
સદ્ભાવ હોતો નથી. આ રીતે યોગને આધારે ળવોના ચાર પ્રકાર પડે છે.

“ અહવા-ચઝવિહા સવ્વજીવા ” અથવા સમસ્ત ળવોના આ પ્રમાણે
ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) સ્ત્રી વેદવાળા, (૨) પુરુષ વેદવાળા, (૩) નપું-
સક વેદવાળા અને અવેદક સિદ્ધ ળવો ત્રણે વેદોથી રહિત હોય છે.

“ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ” इत्यादि—अथवा सर्वजीवाश्चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—चक्षुर्दर्शनिनः—चतुरिन्द्रियादयः १, तथा—अचक्षुर्दर्शनिनः—स्पर्शनादिदर्शनवन्तः एकेन्द्रियादयः २, तथा—अवधिदर्शनिनः—शक्रेन्द्रादयः ३, तथा—केवलदर्शनिनः—ऋषभादयः ४।

‘ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ’ इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—संयताः—पञ्चमहाव्रतधारिणः—सर्वविरताः १, तथा—असंयताः—अविरताः २, तथा—संयतासंयताः—संयताश्चतेऽसंयतास्तथा=देशविरताः ३, तथा—नो संयता नो असंयताः—सर्वविरताविरत—देशविरतभिन्नाः=सिद्धाः ४॥ सू० २९ ॥

पूर्व जीवाः उक्ताः तदधिकाराज्जीवान्तर्गतपुरुषविशेषान्निरूपयितुंचतुःसूत्री ग्राह-
मूलम्—वृत्तारि पुरिसजाया पणत्ता, तं जहा-मित्ते णाम-
मेगे मित्ते १, मित्ते णाममेगे अमित्ते २, अमित्ते णाममेगे मित्ते
३, अमित्ते णाममेगे अमित्ते ४। (१)

“ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ” अथवा ह्यत्र तरहसे भी सर्व जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—चक्षुर्दर्शनवाले—चौहन्द्रियादिक जीव १ तथा अचक्षुर्दर्शनवाले जीव—स्पर्शन आदि दर्शनवाले एकेन्द्रियादिक जीव २ अवधि दर्शनवाले शक्रेन्द्रादि जीव ३ और केवल दर्शनवाले ऋषभ भगवान् आदि ४

“ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ” इत्यादि अथवा सर्व जीव चार प्रकारके कहे गये हैं जैसे—संयत—पञ्च महाव्रतधारी—सर्व विरतिवाले जीव १ तथा—असंयतजीव—अविरतजीव २ संयतासंयत जीव—देशविरतिवाले जीव ३ और नो संयत नो असंयत जीव सर्वविरत अविरत देशविरत इनसे भिन्न सिद्ध जीव ॥ सू० २९ ॥

“ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ” अथवा समस्त ज्ञेयानां आ प्रमाणे पणु चार प्रकार पडे छे—(१) अक्षुदर्शनवाणा—चतुरिन्द्रिय आदि ज्ञेया। (२) अचक्षुदर्शनवाणा ज्ञेया—स्पर्शेन्द्रिय आदिथी युक्त पणु अक्षुदर्शनथी रक्षित ज्ञेया अकेन्द्रियादिक ज्ञेया। (३) अवधिदर्शनवाणा शक्रेन्द्र आदि ज्ञेया अने केवलदर्शनवाणा ऋषभ भगवान् आदि

“ अहवा चउव्विहा सव्वजीवा ” अथवा समस्त ज्ञेयानां आ प्रमाणे चार प्रकार पणु पडे छे—संयत—पञ्च महाव्रतधारी सर्व विरतिवाणा ज्ञेया, (२) असंयत ज्ञेया अटले के अविरत ज्ञेया, (३) संयतासंयत ज्ञेया अटले के उपरना त्रये प्रकारथी भिन्न ज्ञेया सिद्ध ज्ञेया ॥ सू० २९ ॥

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मित्ते णाममेगे
मित्तरूवे १, चउभंगो ४। (२)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मुत्ते णाममेगे मुत्ते
१, मुत्ते णाममेगे अमुत्ते ४, (३)

चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--मुत्ते णाममेगे
मुत्तरूवे ४॥ ४ ॥ सू० ३० ॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मित्रं नामैको मित्रं १,
मित्रं नामैकोऽमित्रम् २, अमित्रं नामैको मित्रम् ३, अमित्रं नामैकोऽमित्रम् ४।(१)
चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मित्रं नामैको मित्ररूपः चतुर्भङ्गी४(२)
चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मुक्तो नामैको मुक्तः मुक्तो नामै-
कोऽमुक्तः ४। (३)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—मुक्तो नामैको मुक्तरूपः ४ (४)
॥ सू० ३० ॥

टीका—“ चत्वारि पुरिसजाया ” इत्यादि—स्पष्टेयं चतुःसूत्री, नवरम्-
एकः पुरुषः पूर्वमिहलोकोपकारित्वान्मित्रं भवति, स एव पुनः परलोकोपकारित्वात्-
मित्रं भवति, यथा सद्गुरुः । इति प्रथमः १ ।

इन कथित जीवोंके अन्तर्गत जो पुरुष विशेष हैं, उनका अब चार
सूत्रों द्वारा सूत्रकार कथन करते हैं—

‘चत्वारि पुरिसजाया पण्णत्ता’ इत्यादि सूत्र ३० ॥

टीकार्थ—पुरुषजात चार कहे गये हैं—जैसे—मित्र मित्र १ मित्र अमित्र २
अमित्र मित्र ३ और अमित्र अमित्र ४ इनमें प्रथम भंगके अनुष्य वे
हैं जो जीवोंका इस लोक सम्बन्धी कल्याण करते हैं, और परलोक
सम्बन्धी भी कल्याण करते हैं । अर्थात् इस लोकमें तुम्हारी भलाई

उपयुक्त श्रवणोंके अन्तर्गत जो पुरुष विशेष हैं, उनका अब चार
सूत्रों द्वारा सूत्रकार कथन करते हैं—
टीकार्थ—पुरुषजात चार प्रकार कहे गये हैं—(१) मित्र-मित्र, (२)
मित्र-अमित्र, (३) अमित्र-मित्र और (४) अमित्र-अमित्र।

पहला प्रकारतुं स्पष्टीकरण—ये श्रवणों आ लोकमें पणु आपणु कल्याण
करे छे अने परलोकमें पणु आपणु कल्याण करे छे, अटले के पोताना सद्-
पदेश द्वारा आलोकमें-आपणु कल्याण केवी रीते थई-शके छे अ पणु अतावे

तथा—एकः पुरुषः पूर्वं स्नेहवत्त्वान्मित्रं भवति, किन्तु पश्चात् स परलोक-
साधनविघातकत्वादमित्रं भवति, यथा पुत्रकलत्रादिः । इति द्वितीयः । २।

तथा—एकः पुरुषः प्राक् प्रतिकूलत्वादमित्रं भवति, स एव पश्चाद्वैराग्यभाग्य-
भाजनीकरणेन परलोकसाधनसहायकत्वान्मित्रं भवति यथाऽविनीतकलत्रादिरिति
तृतीयः ३।

तथा—एकः पुरुषः प्रतिकूलत्वात् पूर्वमप्यमित्रं संक्लेशहेतुत्वेन दुर्गतिनि-
मित्तत्वात् पश्चादप्यमित्रमेव भवति, यथा—अविनीतपुत्रकलत्रप्रभृतिरिति
चतुर्थः ४। (१)

कैसे हो सकती है । यह बात अपनी देशनासे प्रकट कर उपकारी होते
हैं और परलोकमें भी तुम्हारी भलाई कैसे हो सकती है । यह करकर
परलोकके निमित्त भी उपकारी होते हैं, ऐसे वे जीव सद्गुरु होते हैं ।
द्वितीय भंगके मनुष्य वे हैं, जो पहिले तो इस लोकमें स्नेही होकर
मित्र होते हैं, पर वेही परलोक सम्बन्धी हितकारी साधनोंके विघातक
होनेके कारण अमित्र शत्रु हो जातेहैं, जैसे पुत्र स्त्री आदि जन। तृतीय भंगके
मनुष्य वे हैं जो पहिले प्रतिकूल होनेसे अमित्र होते हैं और वेही फिर
सादसे वैराग्यके योग्य बना देनेके कारण परलोक सुधारनेमें सहायक
बन जानेसे मित्र बन जातेहैं, जैसे—अविनीत कलत्र आदि जन । और
चतुर्थ भंगके मनुष्य वे हैं जो प्रतिकूल होनेसे पहिले भी अमित्र रहता

छे, अने परलोकमां पणु आपणुं कइयाणुं केवी रीते थाय ते णतावे छे, तेवा
लुवाने आ पडेला प्रकारमां गण्णावी शकाय छे. सद्गुरु न आ प्रकारना डोय छे.

भील प्रकारनुं स्पष्टीकरणु—जे लुवा आलोकमां तो आपणु स्नेही
अनीने आपणुं डित करनारा डोय छे, पणु परलोकना डितना विघातक डोय
अवां लुवाने मित्र अमित्र रुप भील प्रकारमां गण्णावी शकाय छे. जेमके
पुत्र, स्त्री आदिने आ लागामां भूडी शकाय.

त्रील प्रकारनुं स्पष्टीकरणु—जे लुवा पडेलां प्रतिकूल डोवाने कारणु
अमित्र रुप डोय छे, पणु तेमने कारणु न आपणुने संसार प्रत्ये वैराग्यभाव
उत्पन्न थतो डोवाने कारणु, आपणु परलव सुधारवामां जेआ कारणुभूत
अने छे, अवा लुवाने त्रील प्रकारमां भूडी शकाय छे. जेमके अविनीत
पत्नी, पुत्र आदिने आ प्रकारना लुवा गण्णी शकाय छे.

थोथा लागानुं स्पष्टीकरणु—जे लुवा पडेलां पणु प्रतिकूल डोवाथी
अमित्र रुप डोय छे, अने पाछगथी पणु संकदेश परिष्ठाभाना उत्पादक

તથા-‘ ચત્તારિ પુરિસજાયા ’ ઇત્યાદિ-एको मित्रम्-अन्तःस्नेहवृत्त्या
 सुहृद्व्यति स पुनर्वाचोपचारकरणात् मित्ररूपः=सुहृदाकारो भवति १, तथा-
 एको मित्रमन्तवृत्त्या, किन्तूपरिण्टान्मित्रोपचाराकरणादमित्ररूपः-शत्रुरूपो भव-
 तीति द्वितीयः २। तथा-एकोऽमित्रम्-शत्रुःस्नेहरहितत्वात्सपुनर्मित्ररूपः-सुहृ-
 दाकारो भवतीति तृती? ३, तथा-एकोऽमित्रममित्ररूपश्च भवतीति चतुर्थः।४।(२)

है और संकलेश परिणामोंका हेतु होकर बादमें भी दुर्गतिका निमित्त
 हो जानेसे अमित्र होता है । जैसे अविनीत पुत्र कलत्र आदिजन ४

पुनश्च—“ चत्तारि पुरिसजाया ” इत्यादि—पुरुषजात चार कहे
 गये हैं-जैसे-मित्र मित्ररूप १ मित्र अमित्र रूप २ अमित्र मित्र रूप ३
 और अमित्र अमित्र रूप ४। इनमें कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो
 भीतरमें भी स्नेह वृत्तिवाला होता है, एवं बाह्यमें भी प्रेम रूप
 प्रवृत्ति या व्यवहार आदि करनेकी प्रवृत्ति उत्तम रखता है।
 वह मित्र मित्ररूप मनुष्य है १। कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो
 अन्तरङ्गकी वृत्तिसे तो मित्र होता है, पर बाह्यमें ऊपरसे वह मित्रके
 योग्य उपचार करनेकी वृत्तिसे रहित होताहै, अतः वह शत्रुरूप प्रतीत
 होताहै २। कोई एक मनुष्य ऐसा होताहै जो वास्तवमें अन्तरङ्गमें स्नेहसे
 तो शून्य होता है पर ऊपरी व्यवहारसे सुहृत् होनेका ढोंग करताहै ३।

હોવાને કારણે દુર્ગતિના નિમિત્ત ૩૫ હોવાને કારણે અમિત્ર ૩૫ જ રહે છે,
 એવાં અવિનીત પુત્ર, પત્ની આદિને આ ચોથા પ્રકારમાં મૂકી શકાય છે.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—આ પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષ પ્રકારો
 કહ્યા છે—મિત્ર-મિત્રરૂપ, (૨) મિત્ર-અમિત્રરૂપ, (૩) અમિત્ર-મિત્રરૂપ
 અને (૪) અમિત્ર-અમિત્રરૂપ.

હવે આ ચારે લાંગાઓનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કેઈ એક
 મનુષ્ય એવો હોય છે કે જેના હૃદયમાં આપણા પ્રત્યે સાચો પ્રેમ હોય છે
 અને તેના બાહ્ય વ્યવહાર, હાવભાવ આદિ પ્રવૃત્તિ પણ સ્નેહપૂર્ણ જ હોય
 છે એવા મનુષ્યને મિત્ર-મિત્રરૂપ કહી શકાય છે. (૨) કેઈ માણસ એવો
 હોય છે કે જેના હૃદયમાં તો આપણા પ્રત્યે સ્નેહ હોય છે, પણ તેનું બાહ્ય
 વર્તન મિત્રને યોગ્ય નહીં હોવાથી તે અમિત્રરૂપ લાગે છે. (૩) કેઈ એક
 મનુષ્ય એવો હોય છે કે જેનું હૃદય વાસ્તવિક સ્નેહ વિનાનું હોય છે, પણ
 તેના બાહ્ય વર્તનને કારણે-સ્નેહના ઢંલને કારણે તે આપણને મિત્રરૂપ
 લાગે છે. (૪) કેઈ એક મનુષ્ય આંતરિક અને બાહ્ય બંને રૂપે સ્નેહ

તથા-‘ ચત્તારિ પુરિસજાયા ’ इत्यादि-स्पष्टम् नवरम्-एकः पुरुषः मुक्तः= द्रव्यतः परिवर्जितसङ्गो भवति, स पुनर्मुक्तः-भावतः सङ्गरहितत्वात् त्यक्त्वाऽऽसक्तिर्भवति, यथा-सुसाधुरिति प्रथमः । १।

तथा-एकः पुरुषो मुक्तो-द्रव्यतस्त्यक्तराज्ञो भवन्नपि साऽऽसक्तिकत्वादमुक्तो भवति यथा रङ्गः । इति द्वितीयः २। तथा-एको द्रव्यतोऽमुक्तो भवन्नपि भाव-तश्चु मुक्तः त्यक्त्वाऽऽसक्तिर्भवति, यथा-राज्यावस्थोत्पन्नकेवलज्ञानसम्पन्नो भरतचक्रवर्तीति तृतीयः ३। तथा-एकोऽमुक्तो भवन् पुनरमुक्त एव तिष्ठतीति यथा

और कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो दोनों भी रूपसे-अन्तरङ्ग रूपसे और बहिरंग रूपसे अभिन्नही बना रहता है। यह सब कथन आपेक्षिक है।

पुनश्च-“ चत्तारि पुरिस्सजाया ” इत्यादि-पुरुषजात चार कहे गये हैं जैसे-कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो द्रव्य और भाव दोनों रूपसे परिग्रहका त्यागी होता है जैसे-सुसाधु-चारित्रसंपन्न मुनि? ऐसा वह पुरुष मुक्त मुक्त कहा गया है, क्योंकि ऐसा पुरुष द्रव्यकी अपेक्षा भी सङ्गका त्यागी होता है, और भावकी अपेक्षा भी आसक्ति रूप-समैदं रूपं (यह रूप मेरा है) सूच्छाभावका त्यागी होता है, कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो केवल द्रव्यकी अपेक्षासे ही त्यागी होता है, भावकी अपेक्षासे त्यागी नहीं होता है जैसे-रङ्गजन २। कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो द्रव्यकी अपेक्षासे त्यक्त सङ्गवाला नहीं होता है, पर

विहीन ७ હોવાને કારણે અભિન્ન-અભિન્ન રૂપ લાગે છે. આ સમસ્ત કથન આપેક્ષિક છે.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ-આ પ્રમાણે પણ ચાર પુરુષ પ્રકારો કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે બંને રૂપે દ્રવ્યની અને ભાવની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે. જેમકે સુસાધુ ચારિત્રસંપન્ન મુનિ આ પ્રકારના હોય છે. એવા પુરુષને અહીં મુક્ત-મુક્ત કહ્યો છે, કારણ કે એવો પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ સંગનો (પરિગ્રહનો) ત્યાગી હોય છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ આસક્તિ રૂપ મૂર્છાભાવથી રહિત હોય છે “ આ માર છે ” એવો ભાવ તે શુભમાં હોતો નથી.

(૨) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પણ ભાવની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી. જેમકે ગરીબ માણસ.

(૩) કોઈ એક પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પરિગ્રહનો ત્યાગી હોતો નથી,

રહ્યું । इति चतुर्थः ४। यद्वा-पूर्वापरकालमपेक्षयेदं सूत्रं विवरणीयम् । यथा-
एकः पूर्वं द्रव्यतो मुक्तः पश्चाद्भावतोऽपि मुक्तो भवतीत्यादिरीत्या ।(३)।

तथा-‘ चत्वारि पुरिसजाया ’ इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि यथा-
एकः पुरुष आसक्तिरहिततया मुक्तो भवन्नपि वैराग्यपिशुनाकारतया मुक्तरूपः—
मुक्तरयेव रूपं यस्य स तथा भवति नतु वास्तविकमुक्तः, यथा-यतिः—स हि पुत्रा-
दिसङ्गरहितोऽपि वैराग्यसूचकसाधुरूपमात्रधारको नतु मुक्तो मुक्तवद्रप-
धारकः इति प्रथमः १।

भावकी अपेक्षासे त्यक्त સજ્જવાલા હોતા હૈ, જૈસે રાજ્યાવસ્થામે
ઉત્પન્ન હુએ કેવલ જ્ઞાનવાલે ધરત ચક્રવર્તી ૩।

કોઈ એક મનુષ્ય એસા હોના હૈ જો દ્રવ્ય ઓર ભાવ ઇન દોનોં કી
અપેક્ષાઓંસે ત્યક્ત સજ્જવાલા નહીં હોતા હૈ, જૈસે રહુજન । અથવા—ઇસ
સૂત્રકા વ્યાખ્યાન પૂર્વ અપર કાલકી અપેક્ષાસે ખી વ્યાખ્યા યુક્ત કર
લેના ચાહિયે, જૈસે કોઈ એક પુરુષ એસા હોતાહૈ, જો પહિલે સમયમેં ખી
દ્રવ્યકી અપેક્ષા મુક્ત રહતા હૈ, ઓર બાદમેં ખી વહ દ્રવ્યકી અપેક્ષા
મુક્ત રહતા હૈ ઇત્યાદિ —

ફિર ખી “ચત્તારિ પુરિસજાયા” ઇત્યાદિ—પુરુષ જાત ઇસ પ્રકારસે ખી
ચાર કહે ગયે હૈં જૈસે—કોઈ એક મનુષ્ય એસા હોતા હૈ, જો આસક્તિસે
રહિત હોનેસે મુક્ત હોતા હુઆ ખી વૈરાગ્યસૂચક આકારસે મુક્તકે
જૈસે રૂપવાલા હોતાહૈ, વાસ્તવિક વહ મુક્ત નહીં હોતા હૈ। જૈસે યતિજન

પણ ભાવની અપેક્ષાએ પરિશ્ચિદનો ત્યાગી હોય છે. જેમકે જેમને રાજ્યમાળ
દરમિયાન કેવળજ્ઞાન થયું હતું એવો ભરત ચક્રવર્તી

(૪) કોઈ એક પુરુષ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ પરિશ્ચિદનો ત્યાગી હોતો નથી
અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ પરિશ્ચિદનો ત્યાગી હોતો નથી. જેમકે રંકજન

આ સૂત્રને પૂર્વાપર કાળની અપેક્ષાએ પણ આ પ્રમાણે સમજવી શકાય.
(૧) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુક્ત (અપરિશ્ચિદી-
મૂર્છાભાવ રહિત) રહે છે, અને પછી પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુક્ત જ રહે
છે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ એ જ પ્રમાણે સમજી લેવા.

“ ચત્તારિ પુરિસજાયા ” ઇત્યાદિ—આ પ્રમાણે ચાર પુરુષ પ્રકાર કહ્યા
છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આસક્તિથી રહિત હોવાને
કારણે મુક્ત હોય છે, અને વૈરાગ્ય સૂચક આકાર, વેષ આદિને કારણે મુક્તના
જેવા રૂપવાળો (લક્ષણવાળો) હોય છે, પણ વાસ્તવિક રીતે તે મુક્ત હોતો

तथा-एको मुक्तः-त्यक्तसङ्गो भवन्नपि अमुक्तरूपः अमुक्ताऽऽकारः वस्तु तस्तु मुक्त एव भवति यथा-गृहस्थावस्थायां श्री महावीरः । इति द्वितीयः२।

तथा-एकोऽमुक्तःसाऽऽसक्तित्वान्नमुक्तो भवति किन्तु स मुक्तरूपः-मुक्ताऽऽकारो भाति, यथा कपटीसाधुरिति तृतीयः ३ । तथा-एकोऽमुक्तोऽमुक्तरूपश्च भवति, यथा गृहस्थ इति चतुर्थः ४। (४) ॥सू० ३०॥

जीवाधिकारात् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्यान्निरूपयि सूत्रद्वयमाह—

मूलम् - पंचिन्द्रिय -- तिरिक्खजोणिया चउगईया
अउआगईया पणत्ता, तं जहा-पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिया पंचि-
न्द्रियतिरिक्खजोणिणसु उववज्जमाणा णैरइएहिंतो वा तिरिक्ख-
जोणिणहिंतो वा सणुस्सेहिंतो वा देवेहिंतो वा उववज्जेजा, से
चेव णं से पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणिण पंचिन्द्रियतिरिक्खजोणियत्तं

ये यतिजन पुत्रादिरूपसे रहित होते हुए भी केवल ऊपरसेही साधु-
रूपमात्रके धारक होते हैं, मुक्त हुएकी तरह रूपके धारक नहीं होते हैं ।

कोई एक पुरुष ऐसा होता है, त्यक्त सङ्गवाला होता हुआ भी
अमुक्त रूपवाला होता है । अमुक्तके जैसे आकारवाला होता है, जैसे-
गृहस्थावस्थामें श्री महावीरस्वामी थे २।

कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो आसक्तिवाला हो वह मुक्त तो होता
नहीं है, किन्तु मुक्तके आकारवाला होता है जैसे कोई कपटयुक्त यति ३।

और कोई एक मनुष्य ऐसा होता है, जो अमुक्त हुआ ही अमुक्तके
जैसे रूपवाला होता है, जैसे गृहस्थजन ४ ॥ सू० ३० ॥

नथी. जेभके यतिजन तेओ पुत्रादि रूप संगथी रहित होवाने कारणे मात्र
आद्य दृष्टिओ ज साधुरूपना धारक, डोय छे पणु वास्तविक रीते मुक्त रूप डोता नथी.

(२) केध पुरुष जेवो डोय छे के जे त्यक्त संगवाणो डोवा छतां पणु
अमुक्त रूपवाणो-अमुक्तना जेवा आकारवाणो डोय छे. जेभके गृहस्थावस्थामां
महावीर स्वामी आ प्रकारना पुरुष डता.

(३) केध पुरुष जेवो डोय छे के जे आसक्तिवाणो डोवाथी मुक्त तो
डोतो नथी, पणु मुक्त जेवो देभातो डोय छे जेभके केध कपटी यति

(४) केध जेक मनुष्य जेवो डोय छे के जे अमुक्त डोय छे अने
अमुक्त जेवो ज देभाय छे जेभके गृहस्थजन. ॥ सू. ३० ॥

વિપ્પજહસાઠૈ ણૈશ્ચયત્તાણ વા જાવ દેવત્તાણ વા ઉવાગચ્છેજ્ઞા,
મણુસ્સા ચ્ચડગર્હયા ચ્ચડઆગર્હયા, एवं चेव मणुस्सावि ॥सू० ३१॥

છાયા—પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાશ્ચતુર્ગતિકાશ્ચતુરાગતિકાઃ પ્રજ્ઞસાઃ, તથયા-
પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકેષુ ઉપપદ્યમાના નૈરયિકેભ્યો
વા તિર્યગ્યોનિકેભ્યો વા મનુષ્યેભ્યો વા દેવેભ્યો વા ઉપપદ્યેન્, તેષામેવ ચ્ચલ્લ
સ પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકઃ પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકત્વં વિપ્પજહત્ નૈરયિકતયા વા યાવત્
દેવતયાઓપાગચ્છેત્, મનુષ્યાશ્ચતુર્ગતિકાશ્ચતુરાગતિકાઃ एवमेव मनुष्या अपि॥सू० ३२॥

ટીકા—પંચિદિયતિરિક્ષજોણિયા ' ઇત્યાદિ—સૂત્રદ્વય સ્પષ્ટમ્, નવરં-
પચ્ચેન્દ્રિયાશ્ચ તે તિર્યગ્યોનિકાઃ પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ, નૈરયિકતયા વા યાવત્ '
ઇત્યત્ર યાવત્પદેન ' તિર્યગ્યોનિકતયા, મનુષ્યતયે '-તિ સહ્ગ્રાહ્યમ્ ॥ સૂ० ૩૧ ॥

જીવાધિકારાદ દ્વીન્દ્રિયાન્ અસમારભમાણસ્ય સમારભમાણસ્ય ચ્ચ સંયમા-
સંયમાન્ નિરુપયિતું સૂત્રદ્વયમાહ—

મૂલ્ય—વેહંદિયાણં જીવા અસમારભમાણસસ ચ્ચડવિવેહે સંજમે
કજ્જહ, તં જહા—જિભમાણયાઓ સોક્ખાઓ અવવરોવિત્તાભવહૃ, ,
જિભમાણણં દુક્ખેણં અસંજોગેત્તા ભવહૃ ૨, ફાસમયાઓ
સોક્ખાઓ અવવરોવેત્તા ભવહૃ ૩, ફાસમણં દુક્ખેણં અસંજો-

જીવકે અધિકારકો લેકરહી અથ સૂત્રકાર પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ ઓર
મનુષ્યોકા નિરુપણ કરનેકે લિયે દો સૂત્ર કહતે હૈં—

ટીકાર્થ—પંચિદિય તિરિક્ષજોણિયા ઇત્યાદિ' સૂત્ર ૩૧ ॥

પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ—ચારોં ગતિમૈં આનેવાલે ઓર ચારોં ગતિયોંસે
આકર પચ્ચેન્દ્રિયતિર્યચ્ચરૂપસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે હોતે હૈં—ઇત્યાદિ રૂપસે
ઇસ સૂત્રકી વ્યાખ્યા સુગમ હૈ ॥ સૂ० ૩૧ ॥

જીવનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી હવે સૂત્રકાર પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ
અને મનુષ્યોનું નિરૂપણ કરવા નિમિત્તે બે સૂત્રો કહે છે.

“ પંચિદિયતિરિક્ષજોણિયા ” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચ ચારે ગતિઓમાં ગમન કરનારા હોય છે અને ચારે
ગતિઓમાંથી આવીને પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્ચમાં ઉત્પન્ન થનારા હોય છે. આ સૂત્રની
વ્યાખ્યા સુગમ હોવાથી અહીં વધુ વિવેચન કરવાની જરૂર નથી. ॥ સૂ. ૩૧ ॥

गेत्ता भवइ ४, वेइंदियाणं जीवा समारभमाणस्स चउठिविहे असंजमे कज्जइ, तं जहा--जिह्मामयाओ सोक्खाओ ववरोवित्ता भवइ, १, जिह्मामएणं दुक्खेणं संजोगित्ता भवइ २, फासमयाओ सोक्खाओ ववरोवेत्ता भवइ ३, फासमएणं दुक्खेणं संजोगित्ता भवइ ४ ॥ सू० ३२ ॥

छाया-द्वीन्द्रियान् खलु जीवान् असमारभमाणस्य चतुर्विधः संयमः क्रियते, तद्यथा-जिहामयात् सौख्यात् अव्यपरोपयिता भवति ? जिहामयेन दुःखेन असंयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्यात् अव्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेऽन दुःखेन असंयोजयिता भवति ४। द्वीन्द्रियान् खलु जीवान् समारभमाणस्य चतुर्विधोऽसंयमः क्रियते, तद्यथा-जिहामयात् सौख्यात् व्यपरोपयिता भवति १, जिहामयेन दुःखेन संयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्यात् व्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेन संयोजयिता भवति ४ ॥ सू० ३२ ॥

टीका—‘ वेइंदियाणं इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—द्वीन्द्रियान् जीवान् असमारभमाणस्य—अविराधयतश्चतुर्विधः—चतुष्प्रकारः संयमः क्रियते—विधीयते, तद्यथा—जिहामयात्—सौख्यात्—रसास्वादजन्यसुखात् अव्यपरोपयिता—द्वीन्द्रि-

जीवके अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार द्वीन्द्रिय जीवोंकी विराधना नहीं करनेवाले जीवके और उनकी विराधना करनेवाले जीवके संयम असंयमकी निरूपणा दो सूत्रसे करते हैं—

‘ वेइंदियाणं जीवा असमारभमाणस्स’ इत्यादि सूत्र ३२ ॥

टीकार्थ—दो इन्द्रिय जीवोंकी विराधना नहीं करनेवाला जीव चार प्रकारका संयम करता है । जैसे—वह उनका जिह्वा सम्बन्धी सुखका अविद्योग करनेवाला होता है, अर्थात्—जो जीव द्वीन्द्रिय जीवकी विराधना नहीं करता है वह उन्हें रसना इन्द्रियजन्य सुखसे रसास्वादनसे जायमान सुखसे

एवमेव अधिकार आलु छे तेथी हवे सूत्रकार द्वीन्द्रिय एवोनी विराधना नही करनारो संयमी एवना संयमनुं अने तेमनी विराधना करनारो असंयमी एवोना असंयमनुं पे सूत्रो द्वारा निरूपणु करे छे—

“ वे इंदियाणं जीवा असमारभमाणस्स ” इत्यादि—

टीकार्थ—द्वीन्द्रिय एवोनी विराधना नही करनारो एर चार प्रकारको संयम करे छे—(१) ते तेमना जिह्वा संगंधी सुभतो वियोग करनारो होतो नथी अटले के एव द्वीन्द्रिय एवोनी विराधना करतो नथी, ते तेमने—रसनेन्द्रिय जन्य सुभथी (रसास्वाद्यथी प्राप्त थतां सुभथी) वंचित करतो नथी,

यान् जीवान् अविनाशयिता-अवियोजयिता भवति १, जिह्वामयेन दुःखेन असंयोजयिता भवतीत्यर्थः । २। स्पर्शमयात् सौख्यादव्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेनासंयोजयिता भवति ४ इति चतुर्विधः संयमः । द्वीन्द्रियान् जीवान् समारभमाणस्य चतुर्विधोऽसंयमो यथा-जिह्वामयात् सौख्याद् व्यपरोपयिता भवति १ जिह्वामयेन दुःखेन संयोजयिता भवति २, स्पर्शमयात् सौख्याद् व्यपरोपयिता भवति ३, स्पर्शमयेन दुःखेन संयोजयिता भवति ४ । ॥सू० ३२॥

वंचित नहीं करता है। यदि वह ऐसा करता है, तो वह-उनकी विराधना करता है १। तथा-जिह्वामय दुःखसे वह उनका असंयोजयिता होता है २। इसी तरहसे वह उनके स्पर्शन इन्द्रियके सुखका अविद्योग करनेवाला होता है ३ और स्पर्शन इन्द्रियके दुःखसे वह उनके संयुक्त करानेवाला नहीं होता है ४। इस प्रकार वह उनके स्पर्शन और रसना इन्द्रियके सुखका अविध्वंसक होनेसे इनके दुःखका संयोजक नहीं होनेसे संयमका पात्र बनता है, और जब वह द्वीन्द्रिय जीवोंकी विराधना करता है, तब वह चतुर्विध असंयमका पात्र होता है-वह जब उनकी जिह्वके सुखका व्यपरोपण करनेवाला होता है, १ जिह्वके दुःखसे उन्हें संयोजित करता है, २ स्पर्शके सुखसे उन्हें व्यपरोपित करता है एवं स्पर्शनेन्द्रियको दुःख पहुँचे ऐसा कार्य जब वह करता है, तो इस प्रकारकी उनके प्रति की गई प्रवृत्तिसे वह उनका विराधक होनेसे चार

अथी ङिदुं तेमने आ प्रकारना सुभथी वंचित करना ७ व तेमने विराधक गणाय छे. (२) ते ङिदुवाना दुःभथी तेमने संयोजित करते नथी अटले के तेमने ङिदुवाथी रक्षित करीने दुःभी करते नथी. (३) ते तेमना स्पर्शेन्द्रियना सुभने अविद्योग करनारे होय छे अटले के तेमने स्पर्शेन्द्रियजन्य सुभथी वंचित करनारे होतो नथी (४) ते तेमने स्पर्शेन्द्रियना दुःभथी युक्त करनारे पण होतो नथी आ प्रकारे ते तेमना स्पर्शेन्द्रिय अने रसनेन्द्रियजन्य सुभने अविध्वंसक होवाथी तेमना दुःभने संयोजक नहीं होवाथी संयमी गणुवाने योग्य अने छे.

द्वीन्द्रिय ज्योनी विराधना करनारे ७ व चार प्रकारने असंयम सेवे छे—(१) ते तेमनी ङिदुवा संभंधी सुभथी तेमने वंचित करनारे होय छे. (२) ते तेमने ङिदुवाना दुःभथी संयोजित (युक्त) करे छे. (३) ते तेमने स्पर्श संभंधी सुभथी वंचित करनारे होय छे. (४) अने तेमने स्पर्शेन्द्रिय संभंधी दुःभथी संयोजित करनारे होय छे आ चार प्रकारे तेमनी विराधना करनारे ७ व चार प्रकारना असंयमथी युक्त थवाने कारणे

जीवाधिकारादेव सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकादीनां जीवानां क्रिया निरूपयितुमाह—
 मूलम्—सम्मद्विष्टियाणं णैरइयाणं चत्तारि किरियाओ,
 पणत्ताओ, तं जहा—आरंभिया १, परिग्गहिया २, मायावत्तिया
 ३, अपच्चक्खाणकिरिया ४।

सम्मद्विष्टियणससुरकुमाराणं चत्तारि किरियाओ पणत्ताओ,
 तं जहा एवंचेव, एवं विगलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं ॥सू०३३॥

छाया—सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकाणां चतस्रः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आर-
 म्भिकी १, पारिग्रहिकी २, मायाप्रत्ययिकी ३, अप्रत्याख्यानक्रियाः ४।

सम्यग्दृष्टीनामसुरकुमाराणां चतस्रः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एवमेव, एवं
 विकलेन्द्रियवर्जं यावत् वैमानिकानाम् ॥सू०३३॥

टीका—“ सम्मद्विष्टिया णं ”—सम्यग्दृष्टीनां नैरयिकाणां=नारकाणां जीवानां
 चतस्रोऽनुपदं वक्ष्यमाणाः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, मिथ्यान्वक्रियाया विरहात्, तद्यथा—
 आरम्भिकी, पारिग्रहिकी, मायाप्रत्ययिकी, अप्रत्याख्यानक्रिया ४ः।

प्रकारके असंयमका पात्र होता है। इस कथनका सारांश ऐसा है कि
 दो इन्द्रिय जीवके स्पर्शन और रसना ये दोही इन्द्रियां होती हैं—उनकी
 इन दो इन्द्रियोंको किसी भी तरहसे कष्ट न पहुँचे ऐसी प्रवृत्ति करने-
 वाला और उन दो इन्द्रियोंको आरामही पहुँचे ऐसी प्रवृत्ति करनेवाला
 जीव चार प्रकारके संयमका और उनके प्रतिकूल प्रवृत्ति करनेवाला
 जीव चार प्रकारके असंयमका पात्र होता है ॥ सू० ३२ ॥

जीवके अधिकारको लेकरही अब सूत्रकार सम्यग्दृष्टि नैरयिक
 जीवोंकी क्रियाका निरूपण करते हैं—

असंयमी गण्णाय छे. आ कथननो लावाथं आ प्रमाण्णु छे—द्वीन्द्रिय एवने
 एल अने स्पर्शेन्द्रिय, आ ये धन्द्रियो ञ् डोय छे. तेमनी आ ये धन्द्रियोने
 केधं पण्णु प्रकारे क्ण्ट न पडोये अने तेमने आराम ञ् मणे ओधी प्रवृत्ति
 करनार एवने आर प्रकारना संयमने पात्र गण्णु छे अने ओमने प्रतिकूण
 धधं पडे ओवी प्रवृत्ति करनार एवने आर प्रकारना असंयने पात्र क्खो छे. सू. ३२

एवने अधिकार आहु डोवाथी डवे सूत्रकार सम्यग्दृष्टि नैरयिक एवोनी
 क्रियातुं निरूपणु करे छे. “ सम्मद्विष्टियाणं नैरइयाणं ” इत्यादि—

“सम्पद्द्विष्टियाणमसुरकुमाराणं” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्—एवम्= नैरयिकाणामिव, विकलेन्द्रियवर्जं=विकलेन्द्रियाः—एकद्वित्रिचतुरिन्द्रियजीवाः, तान् वर्जित्वा—विहाय असुरकुमारेभ्य आरभ्य वैमानिकपर्यन्तानामारम्भिकया दयश्चतस्रः क्रियाः किन्तु मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकीक्रियामाश्रित्व पश्चापि क्रिया भवन्ति ॥ सू० ३३ ॥

पूर्वं क्रिया उक्ताः तद्वान् जीवः विद्यमानान् गुणान्नाशयति असतःगुणान् प्रकटयति चेति प्रदर्शयितुं सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा, तं जहा-
कोहेणं१, पडिनिवेसेणं२, अकयण्णुयाए३, मिच्छत्ताभिनिवेसेणं४, १)

चउहिं ठाणेहिं असंतेगुणे दीवेज्जा, तं जहा-अव्भासवत्तियं
परच्छन्दाणुवात्तियं २, कज्जहेउं३, कयपडिकइयेइ ४वा (२) सू०३४॥

टीकार्थ—सम्पद्द्विष्टियाणं नैरहयाणं’ इत्यादि सूत्र ३३ ॥

जो सम्पद्द्विष्टि नैरयिक हैं, उनके चार क्रियाएँ होती हैं—वे इस प्रकारसे हैं—जैसे—आरम्भिकी १ पारिग्रहिकी २ माया प्रत्ययिकी ३ और अप्रत्यख्यान क्रिया यहां मिथ्यात्व क्रिया नहीं होती है ।

सम्पद्द्विष्टि असुरकुमारोंके भी येही पूर्वोक्त चार क्रियाएँ होती हैं । यहां पर भी मिथ्यात्व क्रिया नहीं होती है । तथा येही चार क्रियाएँ एकेन्द्रिय दोहन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवोंको छोडकर बाकीके वैमानिक पर्यन्त जीवोंको होती हैं ऐसा जानना चाहिये विकलेन्द्रिय जीवोंको मिथ्याद्विष्टि होनेसे चार क्रियाएँ नहीं होती हैं किन्तु मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी क्रियाको आश्रित करके पाँचों भी क्रियाएँ होती हैं। सू. ३३।

टीकार्थ—सम्पद्द्विष्टि नारुकांमां चार प्रकारनी क्रियाओनो सद्वभाव डोय छे, ते चार प्रकारो नीचे प्रमाणे छे—(१) आरम्भिकी, (२) पारिग्रहिकी, (३) माया प्रत्ययिकी अने अप्रत्यख्यान क्रिया. तेमनामां मिथ्यात्व क्रियानो सद्वभाव डोतो नथी. सम्पद्द्विष्टि असुरकुमारेमां पणु उपर्युक्त चार क्रियाओनो न सद्वभाव डोय छे. तेमनामां पणु मिथ्यात्व क्रियानो अभाव डोय छे तथा आ क्रियाओनो सद्वभाव अकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अने चतुरिन्द्रिय सिवायना वैमानिक पर्यन्तना जीवोमां पणु डोय छे. विकलेन्द्रिय जीवो मिथ्याद्विष्टि न डोय छे, ते कारणे तेमनामां पूर्वोक्त चार क्रियाओनो तो सद्वभाव डोय छे न, पणु ते उपरांत मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी क्रियानो पणु सद्वभाव डोय छे. ॥ सू. ३३ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः सतो गुणान् नाशयति, तद्यथा—क्रोधेन १, प्रतिनिवेशेन २, अकृतज्ञतया ३, मिथ्यात्वाभिनिवेशेन च। (१)

चतुर्भिः स्थानैरसतो गुणान् दीपयति, तद्यथा—अभ्यासप्रत्ययं १, परच्छन्दानुवृत्तिकं २, कार्यहेतोः ३, कृतप्रतिकृतितेति ४ (२) ॥३४॥

टीका—‘ चउहिं ठाणेहिं ’ इत्यादि—

चतुर्भिः—वक्ष्यमाणैः स्थानैः—कारणैः जीवः सतो—विद्यमानान् गुणान् नाशयति, तद्यथा—क्रोधेन १, तथा—प्रतिनिवेशेन=अहङ्कारेण ‘ अयं पूज्यतेऽहेतुने ’ त्वेवं परसत्काराऽसहनरूपेण २, तथा—अकृतज्ञतया=परकृतोपकारविस्म-

उक्त क्रियाशाली जीव विद्यमान गुणोंको नष्ट कर देता है और दूसरोंमें अविद्यमान गुणोंको प्रगट करता है यही बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं—‘ चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा ’ इत्यादि सूत्र ३४ ॥ टीकार्थ—चार कारणोंसे जीव विद्यमान गुणोंका नाश करता है जैसे—क्रोधसे १ प्रतिनिवेशसे २ अकृतज्ञतासे ३ और मिथ्यात्वाभिनिवेशसे ४ इनमें क्रोध यह कषाय है, क्षमाके विपरीत जितनी भी आत्माकी विकृतिरूप परिणति है वह क्रोध है। प्रतिनिवेश नाम अहङ्कारका है “ यह विनाही कारणके माननीय हो रहा है ” इस प्रकारकी जो परके सत्कारको असहन करनेरूप जो वृत्ति है वह अहङ्कार है। २ दूसरेके किये हुए उपकारको भूल जाना इसका नाम अकृतज्ञता है ३ और मिथ्यादर्शनके

पूर्वोक्त क्रियाशाली लोको विद्यमान गुणोको नाश करी नाणे छे अन्ये अन्य लोकोमां ले गुणो विद्यमान न होय तेनुं तेमनामां आरोपण करे छे. ओ न वात सूत्रकार ६वे प्रकट करे छे

“ चउहिं ठाणेहिं संते गुणे नासेज्जा ” इत्यादि—

टीकार्थ—नीचेना चार गुणोको लीधे लोको विद्यमान गुणोको नाश करे छे— (१) क्रोधने कारणे, प्रतिनिवेशने कारणे, (३) अकृतज्ञताने कारणे, (४) मिथ्यात्व अभिनिवेशने कारणे.

क्रोध कषायरूप छे, क्षमाकी विपरीत ओवी आत्मानी ले विकृतिरूप परिणति छे तेने क्रोध कहे छे. प्रतिनिवेश ओटले अहंकार. कौधने मान भणतुं जेधने मनमां आ प्रकारनी वृत्ति उत्पन्न थवी के “ आ भाषुस विना कारणे माननीय गनी रह्यो छे, ” तेनुं नाम अहंकार छे. आ अहंकारने लीधे अन्यको सत्कार आदि सहन थनुं नथी. अन्य द्वारा करवामां आवेला उपकारने भूली जवां, तेनुं नाम अकृतज्ञता छे. मिथ्यादर्शनना उदयथी ले

રૂપેન ૩, તથા—મિથ્યાત્વાભિનિવેશેન—મિથ્યાત્વાત્=મિથ્યાદર્શનોદયાદ્ યોગ્મિ-
નિવેશ આગ્રહસ્તેન વોધવિપર્યાસેન,

ઉક્તશ્ચ—“ રોસેણ પહિનિવેસેણ તહ્ય અકચણ્ણમિચ્છમાવેણ ।

સંતગુણે નાસિત્તા માસદ્ અગુણે અસંતે વા ॥૧॥

છાયા—રોષેણ પ્રતિનિવેશેન તથૈવાડકૃતજ્ઞમિથ્યામાવેન ।

સદ્ગુણાન્ નાશયિત્વા માષતેડગુણાનસતઃ ॥૧॥ ઇતિ । (૧)

“ ચઝહિં ઠાણેહિં અસંતે ” ઇત્યાદિ—ચતુર્મિઃ સ્થાનેઃ પરસ્યાસતો ગુણાન્
હીપયતિ, તથ્યા—અભ્યાસપ્રત્યયમ્—અભ્યાસઃ—ગુણવર્ણનકરણસ્વભાવઃ સ પ્રત્યયો-
નિમિત્તં યત્ર ગુણદીપને તદભ્યાસપ્રત્યયં, યતોડભ્યાસાન્નિર્વિપયાડપિ નિષ્પયો-
જનાડપિચ પ્રવૃત્તિર્ભવતીતિ લોકે દૃશ્યતે ૧, તથા—પરચ્છન્દાનુવૃત્તિઃ—પરચ્છન્દસ્ય
અન્યજનાભિપ્રાયસ્યાનુવૃત્તિઃ—અનુગમનં યત્ર દીપને તત્ પરચ્છન્દાનુવૃત્તિઃ દીપનમ્ ૨

ઉદ્યસે જો અભિનિવેશ આગ્રહ હોતા હૈં ઉસકા નામ મિથ્યાત્વાભિ-
નિવેશહૈં ૪ યહ મિથ્યાત્વાભિનિવેશ વોધસે ઉલ્ટા હોતા હૈં કહા મી હૈ—
“ રોસેણં પહિનિવેસેણ ” ઇત્યાદિ । જીવ રોપ—ક્રોધસે પ્રતિનિવેશસે
અકૃતજ્ઞતાસે ઓર મિથ્યાત્વભાવસે વિદ્યમાન ગુણોંકો નષ્ટં કરકે દૂસ-
રોંકે અવિદ્યમાન દુર્ગુણોંકો પ્રકટ કરતા હૈં ॥ ૧ ॥

જીવ ચાર કારણોંસે પરકે અસત્ ગુણોંકો પ્રકાશિત કરતાહૈં, ઓર
ઊન્હે ચઢા બઢાકર કહતા હૈં—વે ચાર કારણ યે હૈં—અભ્યાસપ્રત્યય ૧
પરચ્છન્દાનુવૃત્તિઃ ૨ કાર્ય હેતુ ૩ ઓર કૃતપ્રતિકૃતિતા ૪ (૨)

જિસ ગુણવર્ણનમ્ ગુણવર્ણન કરનેકા સ્વભાવ કારણ હોતાહૈં, વહ ગુણદી-
પન અભ્યાસ પ્રત્યયહૈં ક્યોંકિ અભ્યાસસે વિના વિષયકે મી ઓર વિના
પ્રયોજનકે મી લોકમ્ પ્રવૃત્તિ હોતી દેખી જાતી હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ

આભિનિવેશ—દુરાગ્રહ ઉત્પન્ન થાય છે તેને મિથ્યાત્વાભિનિવેશ કહે છે. આ
મિથ્યાત્વાભિનિવેશ યોધથી ઉલ્ટો હોય છે કહ્યું પણ છે કે—

“ રોસેણં પહિનિવેસેણ ” ઇત્યાદિ “ ઊવ ક્રોધથી, અહંકારથી, અકૃતજ્ઞ-
તાથી અને મિથ્યાત્વભાવથી વિદ્યમાન ગુણોને નષ્ટ કરીને અન્યના અવિદ્યમાન
દુર્ગુણોને પ્રકટ કરે છે. ઊવ ચાર કારણોથી અન્યના અવિદ્યમાન ગુણોને પ્રકટ
કરે છે અથવા તેમને વધારી વધારીને કહ્યા કરે છે.

તે ચાર કારણો નીચે પ્રમાણે કહ્યાં છે—(૧) અભ્યાસ પ્રત્યય, (૨)
પરચ્છન્દાનુવૃત્તિક, (૩) કાર્યહેતુ અને (૪) કૃતપ્રતિકૃતિતા

જે ગુણવર્ણનમાં ગુણવર્ણન કરવાનો સ્વભાવ કારણભૂત હોય છે, તે
ગુણપ્રકાશનને અભ્યાસપ્રત્યય (અભ્યાસ રૂપ કારણથી યુક્ત) ગુણપ્રકાશન કહે
છે, કારણ કે તેને કારણે પ્રયોજન વિના પણ લોકમાં આવી પ્રવૃત્તિ થતી

तथा—कार्यहेतोः-कार्यमेव हेतुः कार्यहेतुस्तस्मात्-स्वाभिलषित-कार्य-साधनाय परमनुकूलयितुं परस्यासतो गुणान् दीपयतीत्यर्थः ३, तथा-कृतप्रतिकृतेति-केनचिज्जनेन कस्यचिदुपकृतं स तस्योपकर्तुरसतोऽपि गुणान् प्रत्युपकारार्थमुत्कीर्तयतीति कृतप्रतिकृतिः तस्याभाव कृतप्रतिकृतितेति हेतोः ।।४।। सू० ३४।।

जिनमें जो गुण नहीं हैं, उनका वहाँ पर कथन करना यह बात अभ्याससे भी होती है । जैसे चारण आदिकोंमें यह बात पाई जाती है उनका स्वभावही कुछ ऐसा होता है कि जिससे वे असत् गुणोंका अतिशय रूपसे वर्णन किया करते हैं । तथा जिस असत्-गुणकथनमें दूसरे जनके अभिप्रायका अनुगमन (पीछे चलना) कारण होता है, वह पर-च्छन्दानुवृत्तिक दीपन है २ । इस परच्छन्दानुवर्तनमें गुणदीपन कर्ताका ऐसा भाव रहता है कि दूसरोंने इनके गुणों का वर्णन किया है, अतः हमें भी इसके गुणोंका वर्णन करना चाहिये । तथा एक गुणदीपन ऐसा होता है जो अपने अभिलषित कार्यको सिद्ध करनेके लिये किया जाता है, इससे वह अपने अनुकूल हो जाता है । और फिर अभिलषित कार्य सिद्ध करा लिया जाता है, और असत् एक गुणदीपन ऐसा होता है, जो अपने उपकारीजनके प्रत्युपकारके निमित्त किया जाता है, इसीका नाम प्रतिकृतिता है ॥ सू० ३४ ॥

नेवाभां आवे छे. अटले के ने दोडोभां ने गुणोने। सहलाव न डोय ते गुणोनुं आरोपणु करवानुं कार्यं अक्यासथी पणु थर् शके छे. आरणु वगेरेभां आ प्रकारने अक्यास नेवाभां आवे छे. तेमने स्वलाव न अवे डोय छे के अविद्यमान गुणोनुं व्यक्तिभां आरोपणु करीने तेनी अतिशयोक्ति लरी प्रशंसा करवानी तेमने शवट आवी गध डोय छे ने गुणकथनभां अन्यना अलिप्रायने न अनुसरवामां आवे छे अत्र गुणकथनने परच्छन्दानुवृत्तिक कडे छे. आ प्रकारे अन्यना गुणोने प्रकट करनारनी वृत्ति अवे डोय छे के धीन दोडो तेना गुणोनी प्रशंसा करे छे, तो मारे पणु अम न करवुं नेध अे. (३) केध वधत पोताना ध्विधत कार्यने पार पाडवा माटे पणु अन्यना अविद्यमान गुणोने प्रकट करवामां आवे छे. आ प्रकारे ते व्यक्तिने पोताने अनुकूल गनावी दधने धायुं कार्यं तेनी पासे करावी देवाय छे. (४) पोताने उपकार करनार प्रत्ये कृतज्ञताने लाव प्रकट करवा माटे पणु तेना अविद्यमान गुणोने प्रकट करवामां आवे छे. तेनुं नाम न प्रतिकृतिता छे. ॥ सू. ३४ ॥

पूर्वं सद्गुणनाशता सद्गुणदीपने उक्ते, ते च जीवरय शरीरोत्पत्तिनिर्वृत्ती
विना न सम्भव इति शरीरोत्पत्तिनिर्वृत्तिकारणानि निरूपयितुमाह—

मूलम्—णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं सरीरुप्पत्तीसिया, तं
जहा—कोहेणं १, माणेणं २, मयाए ३, लोभेणं ४, एवं जाव
वेमाणियाणं ।

णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं निव्वत्तिए सरीरे पणत्ते, तं जहा-
कोहनिव्वत्तिए जाव लोभनिव्वत्तिए, एवं जाव वेमाणियाणं।सू. ३५।

छाया-नैरयिकाणां चतुर्भिः स्थानैः शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा-क्रोधेन १,
मानेन २, मायया ३, लोभेन ४। एवं यावत् वैमानिकानाम् ।

नैरयिकाणां चतुर्भिः स्थानैः निर्वर्तितं शरीरं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-क्रोधा-
निर्वर्तितं यावत् लोभनिर्वर्तितम्, एवं यावद् वैमानिकानाम् ॥ ३५ ॥

टीका—'चउहिं ठाणेहिं सरीरुप्पत्ती' इत्यादि—चतुर्भिः—अनुपदं वक्ष्य-
माणैः क्रोधादिभिः चतुर्भिः स्थानैः—कारणैः शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा-
—क्रोधेन १, मानेन २, मायया ३, लोभेन ४ चेति, इह क्रोधादयः कर्म-

सद्गुणोंका नाश और असद्गुणोंका दीपन ये दो बातें जीवको
जब तक शरीरकी उत्पत्ति या उसकी निर्वृत्ति नहीं हो जाय, तब तक
नहीं होती हैं, अतः अब सूत्रकार शरीरकी उत्पत्ति और निर्वृत्तिके
जो कारणहैं उनका निरूपण करतेहैं—'णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं' इत्यादि
नैरयिकोंके चार कारणोंसे शरीरकी उत्पत्ति होती है, जैसे—क्रोधसे
१ मानसे २ मायासे ३ और लोभसे ४ इसी तरहका कथन यावत्
वैमानिक जीवोंके भी जानना चाहिये । यहाँ जो क्रोधादिकोंको शरीरो-
त्पत्तिका हेतु कहा गया है, उसका कारण ऐसा है कि क्रोधादिक कर्म

सद्गुणोंको नाश अने असद्गुणोंको (अविद्यमान गुणोंको) प्रकाशन,
आ ये बात न्यां सुधी लवना शरीरनी उत्पत्ति अथवा तेनी निवृत्ति यध
न न्यथा त्यां सुधी संभवती नथी. तेथी हवे सूत्रकार शरीरनी उत्पत्ति अने
निवृत्तिना ये कारणे छे तेनुं निरूपण करे छे.

“णेरइयाणं चउहिं ठाणेहिं” इत्यादि—

नारकाने चार कारणेने लीधे शरीरनी उत्पत्ति थाय छे. (१) क्रोधथी,
(२) मानथी, (३) मायाथी अने (४) लोभथी.

आ प्रकारनुं कथन वैमानिक पर्यन्तना लोको विषे पणु समजवुं. अही
ये क्रोध आदिने शरीरोत्पत्तिमां कारणरूप गणया छे, तेनुं कारणे ये छे छे

વન્ધનહેતવઃ, કર્મ ચ શરીરોત્પત્તિનિમિત્તમિતિ શરીરોત્પત્તિકારણી-ભૂતકર્મણઃ
કાર્યસ્ય કારણીભૂતેષુ ક્રોધાદિષુ ચતુર્ણુ શરીરોત્પત્તિકરણત્વમુપચર્ય શરીરોત્પત્તિ
કારણતયા ક્રોધાદ્યુપાદાનમિતિ ।

“ ચડહિં ઠાણેહિં નિવ્વત્તિણ ” ઇત્યાદિ—સ્પષ્ટમ્—નવરમ્—નિર્વર્તિતં—નિષ્પા-
દિતં, કૈસ્તદિત્યપેક્ષાયમાહ—ચતુર્ભિઃ ક્રોધાદિભિરિતિ યદપિ ક્રોધાદિનિર્વર્તિતં
કર્મતન્નિર્વર્તિતં શરીરં તથાઽપિ શરીરનિર્વર્તનકારણકારણે શરીરનિર્વર્તનકાર-
ણત્વમુપચર્ય શરીરનિર્વર્તનકારણતયા ક્રોધાદ્યુપાદાનમ્ ઇત્યાશયેનાહ—‘ ક્રોધ
વન્ધનકે હેતુ હોતે હિં ઓર કર્મ શરીરોત્પત્તિમેં નિમિત્ત હોતાહિં, ઇસલિયે
શરીરકી ઉત્પત્તિકા કારણભૂત જો કર્મ હિં, ઉસ કાર્યભૂત કર્મકે કારણ
ક્રોધાદિક ચારોમેં શરીરોત્પત્તિકે કારણત્વકા ઉપચાર કરકે ઉન્હેં
શરીરોત્પત્તિકા કારણ કહા ગયા હિં ।

“ ચડહિં ઠાણેહિં નિવ્વત્તિણ ” ઇત્યાદિ—ચાર કારણોસે નિર્વર્તિત
શરીર કહા ગયા હિં વે ચાર કારણ યે હિં—જેસે ક્રોધસે નિર્વર્તિત, યાવત્
લોભસે નિર્વર્તિત । ઇસી તરહકા કથન યાવત્ વૈમાનિકોંકે જાનના
ચાહિયે । યદપિ ક્રોધાદિકોંસે નિર્વર્તિત કર્મ હોતા હિં, ઓર કર્મસે નિ-
ર્વર્તિત શરીર હોતા હિં, ફિર મી જો યહાં ક્રોધાદિકસે નિર્વર્તિત નિષ્પા-
દિત શરીરકો કહા ગયા હિં, વહ શરીર નિર્વર્તનકે કારણ જો કર્મ હિં
ઉન કર્મોંકે કારણ જો ક્રોધાદિક હિં, ઉનમેં શરીર નિર્વર્તનકે પ્રતિ
કારણતાકા ઉપચાર કરકે ઉન ક્રોધાદિકોંકા કારણરૂપસે ઉપાદાન

ક્રોધાદિક કર્મવન્ધનના ઉત્પત્તિમા નિમિત્ત
રૂપ હોય છે. તેથી શરીરની ઉત્પત્તિના કારણભૂત બે કર્મ છે તે કાર્યભૂત
કર્મના કારણરૂપ ક્રોધાદિક આરેમાં શરીરોત્પત્તિના કારણત્વનો ઉપચાર કરીને
તેમને જ (ક્રોધ, માન, માયા અને લોભને) જ શરીરોત્પત્તિનાં કારણરૂપ
કહેવામાં આવેલ છે. “ ચડહિં ઠાણેહિં નિવ્વત્તિણ ” ઇત્યાદિ—

શરીરને ચાર કારણોથી નિર્વર્તિત (નિષ્પાદિત) કહ્યું છે તે ચાર કારણો
નીચે પ્રમાણે છે—(૧) ક્રોધથી નિર્વર્તિત, (૨) માનથી નિર્વર્તિત, (૩) માયાથી
નિર્વર્તિત અને (૪) લોભથી નિર્વર્તિત. આ પ્રકારનું કથન વૈમાનિકો પર્થન્તના
સમસ્ત જીવો વિષે પણ સમજવું બે કે ક્રોધાદિકો વડે નિર્વર્તિત કર્મ હોય
છે અને કર્મ વડે નિર્વર્તિત શરીર હોય છે, છતાં પણ અહીં શરીરને ક્રોધા-
દિકોથી નિર્વર્તિત (નિષ્પાદિત) કહેવાનું કારણ એ છે કે શરીર નિર્વર્તનના
કારણભૂત બે કર્મો છે તે કર્મોના કારણભૂત બે ક્રોધાદિકો છે, તેમાં શરીર

નિર્વર્તિતમ્' इत्यादि यावत्पदेन माननिर्वर्तितं, मायानिर्वर्तितं, इति पदद्वयं
ग्राह्यं तथा-लोभनिर्वर्तितम् (ननु पूर्वं मुत्पत्तिरुक्तैव तत्रैवास्यात्रपि गतार्थतास्था-
देव पृथङ्निर्वृत्ति कथनं किमर्थमिति चेच्छ्रुयताम् तत्रोत्पत्तिशब्देनाऽऽरम्भो-
गृह्यतेऽत्र निर्वृत्तिशब्देन तु निष्पत्तिर्गृह्यत इति तयोर्भेदो बोध्यः ॥३५॥

पूर्वं क्रोधादयः शरीरहेतव उक्ताः, क्रोधादिनिग्रहास्तु धर्मस्य हेतवः इति धर्म-
द्वाराणि निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्वारि धम्मदारा पणगत्ता, तं जहा—खंती १, मुत्ती
२, अज्जवे ३, मद्दवे ४ ॥ सू० ३६ ॥

छाया—चत्वारि धर्मद्वाराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—क्षान्तिः १, मुक्तिः २,
आर्जवं ३, मार्दवम् ४ ॥ सू० ३६ ॥

क्रिया गया है, यहां यावत्पदसे मान निर्वर्तित और माया निर्वर्तित
इन पदोंका ग्रहण हुआ है ।

शंका—पहिले जो उत्पत्ति कही गई है, सो उसकेही कहनेसे क्रोध
निर्वर्तित आदि शरीरका कथन हो ही जाताहै, फिर इसे स्वतन्त्र रूपसे
कहनेकी क्या आवश्यकता हुई ?

उ०—पहिले जो उत्पत्तिका कथन किया गया है—सो वहां उत्पत्ति
शब्दसे आरम्भ मात्र गृहीत हुआ है, और यहां निर्वर्तित शब्दसे
निष्पत्ति गृहीत हुई है इसलिये दोनोंका पृथक् रूपसे कथन
क्रिया गया है ॥ सू० ३५ ॥

क्रोधादिकोंमें शरीर हेतुताका कथन करके अब सूत्रकार क्रोधादि-
कोंकानिग्रह धर्मका हेतुहै, इस अभिप्रायसे धर्मद्वारोंका निरूपणकरते हैं

निर्वतन પ્રત્યે કારણતાનો ઉપચાર કરીને તે ક્રોધાદિકોને કારણ રૂપે ગ્રહણ
કરવામાં આવેલ છે.

શંકા—પહેલાં જે શરીરોત્પત્તિનું કથન કર્યું છે, તે કથન દ્વારા જ ક્રોધ
નિર્વર્તિત આદિ શરીરનું કથન તો થઈ જાયું છે, છતાં અહીં તેનું સ્વતંત્ર
રૂપે કથન કરવાની શી આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર—પહેલાં જે ઉત્પત્તિનું કથન કર્યું છે, તથા ઉત્પત્તિ શરીર વડે
માત્ર આરંભ જ ગૃહીત થયો છે, અને અહીં નિર્વર્તિત શબ્દ વડે નિષ્પત્તિ
ગૃહીત થઈ છે તેથી બન્નેનું અલગ અલગ રૂપે કથન કરવામાં આવ્યું છે. સૂ. ૩૫

ક્રોધાદિકોને જ શરીરોત્પત્તિના કારણભૂત બતાવીને હવે સૂત્રકાર એ
પ્રકટ કરવા માગે છે કે ક્રોધાદિકોનો નિગ્રહ જ ધર્મના હેતુ રૂપ છે. તેથી

ટીકા — “ ચત્તારિ ધમ્મદારા ” ઇત્યાદિ—ધર્મસ્ય-શ્રુતચારિત્રલક્ષણસ્ય દ્વારાણિ-દ્વારાણીવ દ્વારાણિ-દ્વારસદૃશાનિ- ઉપાયભૂતાનિ ચત્તારિ-વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞાનિ, તાનિ કાનિ ? ઇત્યપેક્ષાયમાહ-તદ્યથેત્યાદિ-ક્ષાન્તિઃ-ક્ષમા આક્રોશાદિશ્રવણેઽપિ ક્રોધત્યાગઃ-ક્રોધોદયનિરોધઃ ૧, તથા-મુક્તિઃ-મોચનં મુક્તિઃ-વાહ્યાભ્યન્તરવસ્તુષુ તૃષ્ણાવિચ્છેદઃ ૨, તથા-આર્જવમ્-ઋજુતા=સરલતા-માયા સાહિત્યમ્ ૩, તથા-માર્દવં-મૃદુતા-માનપરિહારઃ ૪। ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

પૂર્વે ક્ષાન્ત્યાદીનિ ધર્મદ્વારાણીત્યુક્તાનિ, સામ્પ્રતમારમ્ભાદીનિ નારકત્વાદિસાધનકર્મદ્વારાણિ નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્-ચઠ્ઠિં ઠાણેહિં જીવા ણેરહ્યત્તાણ કમ્મં પકરેતિ, તં જહા-મહારંભયાણ ૧, મહાપરિગ્ગહયાણ ૨, પંચિંદિયવ્વહેણં ૩, કુણિમાહારેણં ૪ (૧)

‘ચત્તારિ ધમ્મદારા પળ્લન્તા’ ઇત્યાદિ સૂત્ર ૩૬ ॥

ટીકાર્થ-ધર્મકે દ્વાર ચાર કહે ગયે હૈં-જૈસે-ક્ષાન્તિ ૧ મુક્તિ ૨ આર્જવ ૩ ઓર માર્દવ ૪। શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મ હૈ, યહ પ્રકટ ક્રિયા જા ચુકા હૈ, એસે ધર્મકે દ્વારકે જૈસે-દ્વાર યે ક્ષાન્તિ આદિ હૈં । આક્રોશ આદિકે સુનને પર મી ક્રોધકા ત્યાગ હોના ક્રોધકી ઉત્પત્તિ નહીં હોના-હસકા નામ ક્ષાન્તિ હૈ, વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર વસ્તુઓમ્હે તૃષ્ણાકા વિચ્છેદ હોના હસકા નામ મુક્તિ હૈ। માયાપૂર્ણ વ્યવહાર કરનેકા ત્યાગ હોના અર્થાત્ આત્મામ્હે ઋજુતા યા સરલતા આના, હસકા નામ આર્જવ હૈ, ઓર માનકા પરિહાર કરના મૃદુતાકા આના હસકા નામ માર્દવ હૈ ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

હવે સૂત્રમાર ધર્મદ્વારોતું નિરૂપણુ કરે છે. ‘ચત્તારિ ધમ્મદારા પળ્લન્તા’ ઇત્યાદિ ટીકાર્થ-ધર્મના ચાર દ્વાર કહ્યાં છે-(૧) ક્ષાન્તિ, (૨) મુક્તિ, (૩) આર્જવ અને માર્દવ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે, એ વાત તો આગળ પ્રકટ થઈ ચુકી છે. તે ધર્મનાં દ્વાર સમાન ક્ષાન્તિ આદિને બતાવ્યાં છે

આક્રોશ આદિ સાંભળવા પડે ત્યારે ક્રોધ ન કરવો. પણ શાન્ત રહેવું તેનું નામ ક્ષાન્તિ છે. બાહ્ય અને આભ્યન્તર વસ્તુઓની તૃષ્ણાને ત્યાગ કરવો, તૃષ્ણાને વિચ્છેદ કરવો તેનું નામ મુક્તિ છે. માયાપૂર્ણ વ્યવહારને કપટયુક્ત વ્યવહારને ત્યાગ કરવો એટલે કે આત્મા ઋજુતા (સરળતા) ના ગુણથી યુક્ત થવો તેનું નામ આર્જવ છે, માનને પરિત્યાગ કરીને મૃદુતા ધારણુ કરવી તેનું નામ માર્દવ છે. ॥ સૂ. ૩૬ ॥

ચડહિં ઠાણેહિં જીવા તિરિક્ષજોણિયત્તાણ કમ્મં પકરેંતિ તં જહા-માહ્લયાણ ૧ ણિયડિહ્લયાણ ૨, અલિયવયણેણં ૩, કુડતુલકુડમાણેણં ૪ (૨) ।

ચડહિં ઠાણેહિં જીવા મણુસ્મત્તાણ કમ્મં પગરેંતિ, તં જહા-પગહ્મદયાણ ૧, પગહ્મિણીયયાણ ૨, સાણુકોસયાણ ૩, અમ-છરિયયાણ ૪, (૩)

ચડહિં ઠાણેહિં જીવા દેવાડયત્તાણ પગરેંતિ, તં જહા-સરાગસંજમેણં ૧, સંજમાસંજમેણં ૨, બાલતવોકમ્મેણં ૩, અકા-મણિજ્જરાણ ૪ ॥ સૂ૦ ૩૭ ॥

છાયા—ચતુર્મિઃ સ્થાનૈર્જીવા નૈરયિક્ષતયા કર્મં પ્રકુર્વન્તિ, તથથા-મહાડ-રમ્મતયા ૧, મહાપરિગ્રહતયા ૨, પશ્ચેન્દ્રિયવધેન ૩, કુણિમા (માંસા)-ડહારેણ તથા ૪। (૧)

ચતુર્મિઃ સ્થાનૈર્જીવા સ્તિર્યગ્યોનિક્ષતયા કર્મં પ્રકુર્વન્તિ, તથથા-માયિતયા ૧, નિક્ષતિમત્તયા ૨, અલીકવચનેન ૩, કૂટતુલાકૂટમાનેન ૪ (૨)

ચતુર્મિઃ સ્થાનૈર્જીવા મનુષ્યતયા કર્મં પ્રકુર્વન્તિ, તથથા-પ્રકૃતિમદ્રતયા ૧, પ્રકૃતિવિનીતતયા ૨, સાનુક્રોશતયા ૩, અમત્સરિકતયા ૪ (૩) ।

ચતુર્મિઃ સ્થાનૈર્જીવા દેવાયુષ્યતયા કર્મં પ્રકુર્વન્તિ, તથથા-સરાગસંયમેન ૧, સંયમાસંયમેન ૨, બાલતપઃકર્મણા ૩, અકામ નિર્જરયા ૪ (૪) ॥૩૭॥

ટીકા—‘ ચડહિં ઠાણેહિં જીવા ’ ઇત્યાદિ—ચતુર્મિઃ સ્થાનૈઃ જીવાઃ નૈર-યિક્ષતયા-નારકત્વેન કર્મ આયુષ્કાદિ, પ્રકુર્વન્તિ, તથથા-મહાડરમ્મતયા-મહાન્

જિસ પ્રકારસે યે ક્ષાન્તિ આદિ ધર્મકે દ્વાર હૈં, ડલી પ્રકારસે આ-રમ્મ આદિ કારકત્વકે સાધનભૂત કર્મોકે દ્વાર હૈં-યહી વાન અવ સૂત્રકાર નિહ્લપિત કરતેહૈં-‘ ચડહિં ઠાણેહિં જીવા ણેરહ્મત્તાણ ’ ઇત્યાદિસૂત્ર ૩૭ ટીકાર્થ-જીવ ચાર કારણોસે નારકાયુક્તા બન્ધ કરતેહૈં જૈસે-મહારમ્મતાસે

જેમ ક્ષાન્તિ આદિ ધર્મના દ્વાર છે, એ જ પ્રમાણે આરંભ આદિ નારકત્વના સાધનભૂત કર્મોનાં દ્વાર છે એ જ વાતનું હવે સૂત્રકારે નીચેનાં સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરે છે—“ ચડહિં ઠાણેહિં જીવા ણેરહ્મત્તાણ ” ઇત્યાદિ— ટીકાર્થ-જેવો આરંભ કરવાને લીધે નારકાયુક્તો બન્ધ કરે છે. તે કારણે નીચે

इच्छापरिमाणेनाविहितमर्यादत्वेन वृहत् आरम्भः—पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणो यस्य स महाऽऽरम्भः=चक्रवर्त्यादिः, तस्य भावो महाऽऽरम्भता, तथा महाऽऽरम्भतया १, एवं परिग्रहतया=परिग्रहत इति परिग्रह—हिरण्यसुवर्णाद्विषदचतुष्पदप्रभृतिः पदार्थः, स महान् यस्य स महापरिग्रहस्तत्तया, तथा—पञ्चेन्द्रियवधेन ३, तथा—कूणिमाऽऽहारेण—सांसभक्षणेन ४ (१)

“ चउहिं ठाणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए ” इत्यादि—

चतुर्भिः स्थानैर्जीवास्तिर्यग्योनिकतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-मायितया-माया=मनः कौटिल्यं, साऽस्त्यस्येति मायी, तस्य भावो मायिता तथा मायि-

१ महापरिग्रहतासे २ पञ्चेन्द्रिय वधसे ३ और कुणिमाहारसे-मांसाहारसे ४।

जिसने परिग्रहका प्रमाण—इच्छापरिमाण नहीं किया है और इसी कारण जिसका आरम्भ पृथिव्यादि जीवोंका वध—वृहत् है बड़ा हुआ है, ऐसा चक्रवर्ती आदिजन यहां महारम्भसे लिया गया है। इस महारम्भका जो भाव है, वह महारम्भता है। इसी प्रकारसे हिरण्य, सुवर्ण द्विषद चतुष्पद आदि पदार्थ जिसको अधिक मात्रामें है, ऐसा मनुष्य महापरिग्रहसे लिया गया है, इसका जो भाव है वह महापरिग्रहता है, तथा पञ्चेन्द्रिय जीवोंकी जो हिंसा है वह पञ्चेन्द्रिय वध है, और मांसका आहार करना वह कुणिमाहार है। इनसे जीव नरकायुका बन्ध करता है—

“ चउहिं ठाणेहिं जीवा तिरिक्खजोणियत्ताए ” इत्यादि

जीवचार कारणोंसे तिर्यगायुका बन्ध करता है, जैसे—मायावी होनेसे १

प्रमाणे छे—(१) मडा आरंलता, (२) मडा परिग्रहता, (३) पञ्चेन्द्रिय वधथी, अने (४) कुणिमाहारथी (मांसाहार)

जेणे परिग्रहनं प्रमाणे छेच्छा परिमाणे क्युं नथी अने जेण कारणे जेना आरंल (पृथ्वीप्राय आदि जेवना वधइय आरंल) विशेष प्रमाणे वाणे छे जेवा चक्रवर्ती आदिने मडा आरंल करनारा समजवा ते मडा रंलने जे लाव छे तेने मडारंलता कडे छे जेण प्रमाणे जेनी पासे सेतुं, यांही, द्वीपद, चतुष्पद आदि पदार्थ अधिक प्रमाणमां डोय छे जेवा मनुष्यने मडापरिग्रहवाणे कद्यो छे, मडापरिग्रहने जे लाव छे तेने मडा परिग्रहता कडे छे पञ्चेन्द्रिय जेवानी इत्या करवी तेनुं नाम पञ्चेन्द्रिय वध छे अने मांसाहारने कुणिमाहार कडे छे आ आरे कारणेने दीधे जेव नर-कायुने बन्ध करे छे.

“ चउहिं ठाणेहिं तिरिक्खजोणियत्ताए ” इत्यादि—

जेव नीयेना आर कारणेने दीधे तिर्यगायुने बन्ध करे छे. (१) मायावी डोवाथी, (२) निद्रुतिवाणे डोवाथी, (३) असत्य वचनथी अने (४)

તયા ૧, તથા-નિકૃતિમત્તયા-નિકૃતિઃ-વશ્વનાર્થ શરીરચેષ્ટાદિ અન્યથાકરણ-
રૂપા સાઽસ્ત્યસ્યેતિ નિકૃતિમાન્ તમ્ય ભાવો નિકૃતિમત્તા, તયા નિકૃતિમત્તયા-
ગૂઢમાયિતયા ૨, તથા-અલીકવચનેન-અસત્યભાષણેન ૩, તથા-કૂટતુલા-
કૂટમાનેન-છલયુક્તતુલયા કપટમાનેન ૪। (૨)

‘ ચઝહિં ઠાણેહિં જીવા મણુસસત્તાણ ’ ઇત્યાદિ—

ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈર્જીવા મનુષ્યતયા કર્મ પ્રકુર્વન્તિ, તથયા-પ્રકૃતિભદ્રતયા-
પ્રકૃત્યા=સ્વભાવેન ભદ્રતા-પરપીડાઽનુત્પાદકતા પ્રકૃતિભદ્રતા તયા ૧, ઇવં પ્રકૃતિ-
વિનીતતયા-સ્વભાવેન સુશીલતયા=વિનયસમ્પન્નતયા ૨, તથા-સાનુક્રોશતયા-
દયાહુનયા ૩, અમત્સરિકતયા-મત્સરિકતા=પરગુણાસદિષ્ણુતા ન મત્સરિકતા
અમત્સરિકતા તયા પરગુણસદિષ્ણુતયા ૪। (૩)

નિકૃતિવાલા હોનેસે ૨ અલીકવચનસે ૩ ઓર કૂટતુલા કૂટમાનસે ૪।

મનની કુટિલતાકા નામ માયાહૈ, યહ માયા જિસકો હોતીહૈ વહ માયી
હૈ, હસ માયીકા જો ભાવ હૈ વહ માયિતાહૈ । દૂસરોંકો ઠગનેકે લિધે
શરીર ચેષ્ટા આદિકા અન્યથા કરના હસકા નામ નિકૃતિ હૈ, યહ
નિકૃતિ જિસકો હોતી હૈ વહ નિકૃતિમાન્ હૈ, હસ નિકૃતિમાન્કા જો
ભાવ હૈ વહ નિકૃતિમત્તા હૈ ૨ મિથ્યાભાષણ કરના હસકા નામ અલી-
કવચન હૈ, નાંપને તૌલનેકે વાંટોં આદિકોંકો કમતી વહતી રખના
હસકા નામ કૂટતુલા કૂટમાન હૈ, હનસે જીવ તિર્યગાયુકા બન્ધ કરતા હૈ
(૨) “ ચઝહિં ઠાણેહિં જીવા મણુસસત્તાણ ” ઇત્યાદિ--ચોર કારણોંસે
જીવ મનુષ્યાયુકા બન્ધ કરતા હૈ-જૈસે-પ્રકૃતિભદ્રતાસે ૧ પ્રકૃતિવિની-
તતાસે ૨ સાનુક્રોશતાસે ૩ ઓર અમત્સરિકતાસે ૪। સ્વભાવસેહી દૂસરે

ખોટાં તોલમાપ કરવાથી. મનની કુટિલતાને માયા કહે છે. તે માયાથી યુક્ત હવને
માયી કહે છે. તે માયીને જે ભાવ છે તેને માયિતા કહે છે. અન્યને ઠગ-
વાને માટે જે વિકૃત શરીર ચેષ્ટા આદિ કરવામાં આવે છે તેને નિકૃતિ કહે
છે. તે નિકૃતિ જેમાં હોય છે તેને નિકૃતિમાન કહે છે. આ નિકૃતિમાનને જે
ભાવ છે તેને નિકૃતિમત્તા કહે છે. મિથ્યા ભાષણ કરવું અથવા અસત્ય વચન
બોલવા તેનું નામ અલીકવચન છે. તોલવા અને માપવા માટે ખોટાં ત્રાજવા,
કાટલાં કે ગજ આદિ વાપરવા તેનું નામ “ કૂટ તુલા કૂટ માન ” છે. આ
પ્રકારના ચાર કારણોને લીધે હવ તિર્યગાયુને બન્ધ કરે છે.

“ ચઝહિં ઠાણેહિં જીવા મણુસસત્તાણ ” ઇત્યાદિ--ચાર કારણોને લીધે
હવ મનુષ્યાયુને બન્ધ કરે છે—(૧) પ્રકૃતિ ભદ્રતાથી, (૨) પ્રકૃતિ વિનીત-
તાથી, (૩) સાનુક્રોશતાથી અને (૪) અમત્સરિકતાથી.

“ चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउयत्ताए ” इत्यादि—

चतुर्भिः स्थानैर्जीवाः देवाऽऽयुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—सरागसंय-
मेन=सकषायचारित्रेण—रागरहितसंयमवतामायुषो बन्धाभावात् १, तथा—संयमा-
संयमेन—द्विस्वभावत्वाद्देशसंयमेन २ तथा—वालतपःकर्मणा वाला इव वालाः—
मिथ्यादृष्टयस्तेषां तपःकर्म—तपश्चर्या वालतपःकर्म तेन वालतपःकर्मणा ३।
तथा—अकामनिर्जरा—अकामेन—निर्जरां प्रत्यनिच्छया निर्जरा—कर्म निर्जरण
हेतुका बुभुक्षादि सहनरूपा अकामनिर्जरा तथा ४। ॥सू० ३७॥

जीवोंको पीडा उत्पन्न करनेकी परिणतिका नहीं होना इसका नाम प्रकृ-
तिभद्रता है, स्वभावतः सुशीलताका होना अर्थात् विनय संपन्नताका
सद्भाव इसका नाम प्रकृति विनीतता है, दयासे युक्त परिणतिका होना
इसका नाम सानुक्रोशता है, एव दूसरोंके गुणोंको सहन करनेकी
क्षमताका नहीं होना इसका नाम अमत्सरिकता है, और इससे विपरीत
वृत्तिका होना दूसरोंके गुणोंको सहन करनेकी क्षमताका होना इसका
नाम अमत्सरिकता है इन चार बातोंसे जीव मनुष्यायुका बन्ध करता है (३)
“ चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउयत्ताए ” इत्यादि—चार कारणोंसे
जीव देवायुका बन्ध करते हैं—जैसे—सरागसंयमके पालनसे १ संयमा-
संयमके पालनसे २ वालतपके करनेसे ३ और अकामनिर्जरासे ४ राग-
रहित संयमकी आराधनासे आयुका बन्ध नहीं होता है, परन्तु राग-
सहित कषायसहित संयमके पालनसे देवायुका बन्ध होता है, देश-
संयमके पालनसे भी देवायुका बन्ध होता है, सरागसंयम १० वे दस गुण-

अन्य ज्ञेयाने पीडा उत्पन्न करवानी परिष्कृतिने। स्वभावतः ज्ञेयभाव
होवे। तेनुं नाम प्रकृति भद्रता छे स्वभावतः विनय, शीलता अथवा सुशील-
ताने। सद्भाव होवे। तेनुं नाम प्रकृतिविनीतता छे दयाशी युक्त परिष्कृति
होवी। तेनुं नाम सानुक्रोशता छे। अन्यना गुणोने सहन करवानी क्षमता नही।
होवी। तेनुं नाम अमत्सरिकता छे अने तेना करतां विपरीत वृत्तिने। सद्भाव
होवे। अन्यना गुणोने सहन करवानी क्षमता होवी। तेनुं नाम अमत्सरिकता
छे। उपयुक्त चार कारणोने लीधे जेव मनुष्यायुने। बन्ध करे छे।

“चउहिं ठाणेहिं जीवा देवाउत्ताए” इत्यादि—आचार कारणोने लीधे जेव देवायुने।
बन्ध करे छे। सरागसंयमना पालनथी (१) संयमासंयमना पालनथी, (२) पाल-
नापनी आराधनाथी, (३) अकाम निर्जराथी अने (४) राग सहित संयमनी
आराधना करवाथी, (राग सहित संयमनी आराधनाथी देवायुने। बन्ध थतो
नथी, परन्तु रागसहित, कषाय सहित संयमना पालनथी देवायुने। बन्ध थाय

स्थान तक और संयमासंयम ५ पांच वे गुणस्थानमें (देशविरति
 श्रावक) होता है । बाल शब्द से यहां मिथ्यादृष्टियोंका
 ग्रहण हुआ है, इनका जो तप है वह बालतप है, निर्जरा करनेकी
 इच्छा नहीं होनेसे जो निर्जरा होती है, वह अकामनिर्जरा है,
 जैसे वृभुक्षा (भूख) आदि जन्य कष्टोंका सहन करना, बालतपसे
 और अकामनिर्जरासे भी देवायुका बन्ध होता है, इस सूत्रका आशय
 ऐसा है कि सरागसंयम और संयमासंयम ये सम्यग्दर्शनके होने
 परही हो सकते हैं। इसलिये ये तो वैमानिक देवोंकीही आयुके कारण
 हैं अन्य आयुके कारण नहीं हैं । बालतप आयु अकाम निर्जरा ये भव-
 नवासी व्यन्तर और ज्योतिषी इनकी आयुबन्धके कारण हैं । यहां
 ऐसी शंका हो सकती है, कि देव और नारकी सम्यग्दर्शनके सद्भावमें
 मनुष्यायुकाही बन्ध करते हैं, और मनुष्य एवं तिर्यञ्च देवायुकाही बन्ध
 करते हैं, तो इसका अभिप्राय क्या है ? इसका अभिप्राय ऐसा है कि
 सम्यग्दर्शन आत्माका एक निर्मल परिणाम है, इसलिये वह तो कर्म-
 बन्धका कारण होता नहीं है, परन्तु उसके सद्भावमें यदि आयुका
 बन्ध होता है तो वह नियमसे वैमानिक देवायुकाही बन्ध होता है।

छे.) देशसंयमना बालतपी पञ्च एव देवायुनो बन्ध करे छे सरागसंयमनो
 सद्भाव १० इसमां गुणस्थान सुधी अने संयमासंयमनो सद्भाव पांचमां
 गुणस्थान सुधी डोय छे ' बाल ' शब्द अही मिथ्यादृष्टियो भाटे वपरायो
 छे तेमना तपने बालतप कडे छे. निर्जरा करवानी इच्छा कर्था विना जे
 निर्जरा थाय छे तेने अकाम निर्जरा कडे छे. जेभके लूण आदि जन्य कष्टोने
 सहन करवाधी अकामनिर्जरा थाय छे. बालतप अने अकामनिर्जरा वडे पञ्च
 देवायुनो बन्ध थाय छे. आ सूत्रनो भावार्थ नीचे प्रमाणे छे—सरागसंयम
 अने संयमासंयम आ अने सम्यग्दर्शनना सद्भावमां ज संलवी शके छे,
 तेथी ते अने तो वैमानिक देवोमां ज उत्पत्ति करावे छे, अन्य देवायुओना
 कारणभूत जनतां नथी. परन्तु बालतप अने अकामनिर्जरा आदिने लीधे एव
 लवनवासी, व्यन्तर, अने ज्योतिषी देवोना आयुनो बन्ध करे छे. अही
 कदाच ओरी शंका करवामां आवे के देव अने नारकी सम्यग्दर्शनना सद्भावमां
 मनुष्यायुनो ज बन्ध करे छे अने मनुष्य अने तिर्यञ्च देवायुनो ज बन्ध
 करे छे, तो आ कथननुं कारणुं शुं छे ? ते शंकांनुं समाधान करतां सूत्रकार
 कडे छे के—सम्यग्दर्शन आत्मानुं ओक निर्मल परिणाम छे. तेथी ते तो
 कर्मबन्धनुं कारणुं जनतुं नथी, परन्तु तेना सद्भावमां पञ्च जे आयुनो बन्ध
 थतो डोय तो नियमथी ज वैमानिक देवायुनो ज बन्ध थाय छे.

पूर्वं देवोत्पत्तिकारणान्यभिहितानि, देवाश्च वाचनादद्यादि रतिमन्तो भवन्तीति वाचादि भेदान्निरूपयितुं षट् सूत्रीमाह—

मूलम्—चउव्विहे वज्जे पणत्ते, तं जहा—सते १, वितते २, घणे ३, झुसिरे ४। (१)

चउव्विहे णट्टे पणत्ते, तं जहा—अंघिए १, रिखिए २, आरभडे ३, भसोले ४। (२)

चउव्विहे गोए पणत्ते, तं जहा—उक्खित्तए १, पत्तए २, मंदए ३, रोविंदए ४। (३)

चउव्विहे मल्ले पणत्ते, तं जहा—गंथिमे १, वेढिमे २, पूरिमे ३, संघाइमे ४ (४) चउव्विहे अलंकारे पणत्ते, तं जहा—केसा-लंकारे १, वत्थालंकारे २, मल्लालंकारे ३, आभरणालंकारे ४। (५)

चउव्विहे अभिणए पणत्ते, तं जहा—दिट्ठंतिए १, पंडुसुए २, सामंतोवणिवाइए ३, लोगमज्झावसिए ४। (६) ॥सू० ३८ ॥

यदि इस पर फिरसे ऐसा पूछा जावे कि यदि सम्पर्दर्शनके सद्भावमें वैमानिक देवायुकाही बन्ध होता है। तो फिर देवनारकियोंके जो अभी मनुष्यायुकाही उसके सद्भावमें बन्ध कहा गया है, सो उसका निर्वाह कैसे होगा ? तो इसका समाधान ऐसा है कि यहां जो ऐसा कहा गया है, कि जो प्राणी घरकर चारों गतियोंमें जन्म ले सकते हैं उनकी अपेक्षासे कहा गया है, ऐसे जन्मवाले मनुष्य और तिर्यञ्चही हैं देवनारकी नहीं ॥ सू० ३७ ॥

शका—जे सम्पर्दर्शनना सद्भावमां वैमानिक देवायुना जे बन्ध थतो डोय, तो तेना सद्भावमां (सम्पर्दर्शनना सद्भावमां) देव अने नारकीयोने मनुष्यायुना बन्ध थवानी जे वात आपे डमण्णां जे कडी छे ते केनी रीते टकी शके छे ?

उत्तर—भडीं जे जेवुं कडेवामां आण्यु छे, तेतो भरीने थारे गतियोमां जन्म लई शकनारा ज्योनी अपेक्षाजे कहुं छे. जेवा जन्मवाणा तो मनुष्य अने तिर्यञ्च डोय छे. देवनारकी जेवां जन्मवाणां डोता नथी. ॥सू. ३७॥

छया—चतुर्विधं वाद्यं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—ततं १, विततं २, घनं ३, शुषि-
रम् ४। (१)

चतुर्विधं नाटयं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—अञ्चितं १, रिमितम् २, आरभटं ३,
मसोलम् ४। (२)

चतुर्विधं गेयं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—उत्क्षिप्तकं १, पत्रकं २, मन्दकं ३,
रोविन्दकम् ४। (३)

चतुर्विधं माल्यं प्रज्ञप्तम्—तद्यथा—ग्रन्थिमं १, वेष्टिमं २, पूरिमं ३,
सङ्घातिमम् ४। (४)

चतुर्विधोऽलङ्कारः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—केगालङ्कारः १, वल्लालङ्कारः २, माल्या-
लङ्कारः ३ आभरणालङ्कारः ४। (५)

चतुर्विधोऽभिनयः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—दाष्टान्तिकः १, पाण्डुमृतः २, सामन्तो-
पनिगतिकः ३, लोकमध्यावसितः ४ ॥३८॥

टीका—“चउन्विहे वज्जे” इत्यादि—मात्रं-वाद्यते-ध्वन्यत इति वाद्यं
तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—ततं-तन्यते-विस्तीर्यत इति ततं वीणादिकम् १,
विततं-पटहादिकम् २, घनं-हन्यत इति घनं-कांस्यतालघण्टादिकम् ३, शुषिरं-
शुषिश्छिद्रमस्याति शुषिरं-वंशादि ४। ३८(१)

इस प्रकार देवोंमें उत्पत्तिके कारणोंका कथन करके अब सूत्रकार
देववाद्य नाटय आदिमें रति आनन्द वाले होतेहैं, इस अभिप्रायसे वाद्य
आदिके भेदोंका ६ छह सूत्रों द्वारा निरूपण करते हैं—

‘चउन्विहे वज्जे पणत्ते’ इत्यादि सूत्र ३८ ॥

टीकार्थ—वाद्य चार प्रकारके कहे गयेहैं जैसे—तत १ वितत २ घन ३ और
शुषिर ४। चमड़े मढ़े हुए ढोल वीणा आदि तत वाद्य हैं। पटह आदि
विततहैं, झालर घंटा आदि घनहैं, और छिद्रवाले शंख वांसुरी आदि

आ प्रकारे देवगतिमां उत्पत्तिना कारणानुं निरूपणुं करीने हवे सूत्रकार
वाद्योना लेहोनुं निरूपणुं करे छे. देवो वाद्य अने नाटक आदिमां रतिवाणा
डेय छे, ते संभंधने लीधे हवे छे सूत्रो द्वारा निरूपणुं करवामां आवे छे.

“चउन्विहे वज्जे पणत्ते” इत्यादि—

टीकार्थ—वाद्यना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) तत, (२) वितत,
(३) घन अने (४) शुषिर. यामडाथी मढेलां, ढोल, वीणा आदि तत वाद्यो
छे. पटह आदि वितत छे. झालर घंटा आदि घनवाद्यो छे. अने छिद्रोवाणां
शंख वांसणी आदि शुषिर वाद्यो छे.

“ ચતુર્વિદ્ધે નદ્દે ” इत्यादि—नाट्यं—नटस्येदं नाट्यं नृत्यगीत-वाद्यं, करचरणादिविशिष्टपरिस्पन्दविशेषः, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अश्रितं १, रिभितम् २, आरभटं ३, भसोलम् ४ एते भरतादि नाट्यग्रन्थेभ्योऽवसेयाः ।

“ चतुर्विद્दे गेए ” इत्यादि—गेयं—गातुं योग्यं गेयं=स्वरसञ्चारेण गीति प्रायं निबद्धम् स्वरकरणंस्वरसंचारी वा गेयं, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-उत्क्षिप्तकं १, पत्रकं २, मन्दकं ३, रोचिन्दयम् ४ तत्र रोचिन्दयेति देशीयशब्दः ।

गेयस्याष्टौ गुणानाह—

“ पुष्णं रत्तं च अलंकिअं च वत्तं च तद्देव मविघुहं ।

महुरं समं सुल्लिअं अद्दगुणाहीति गेयस्स ॥ १ ॥

उरकंठसिरविसुद्धं च, गीयए मउअरिभिअपयवद्धं ।

सयतालपच्चुखेवं सत्तरसरसीभरं गेयं ॥ २ ॥

शुषिर हैं । (१) “ चतुर्विद્दे नદ્દે ” નાટ્ય ચાર પ્રકારકા કહ્યા ગયા હૈ—નટસે સમ્બન્ધિત નૃત્ય, ગીત, વાદ્ય, એવં કર ચરણ આદિકી વિશિષ્ટ ચેષ્ટાએં ચે સબ યહાં નાટ્ય શબ્દસે ગૃહિત હુણેં । અશ્રિત ૧ રિભિત ૨ આરભટ ૩ ઓર ભસોલ ૪ ઇન ભેદોસે નાટ્ય ચાર પ્રકારકા હોના હૈ । ઇન સષકા વર્ણન ભરતાદિ નાટ્યગ્રન્થોસે જાન લેના ચાહિયે ।

“ ચતુર્વિદ્દે ગેए ” इत्यादि—गेय-गानेके योग्य जो होता है वह गेय है गेयमें-गानेमें स्वरका सञ्चार आदि होता है, वह गेय उत्क्षिप्तक १ पत्रक २ मन्दक ३ और रोचिन्दयके भेदसे चार प्रकारका है इनमें रोचिन्दय यह देशीय शब्द है गेयके आठ गुण ये हैं—

“ चतुर्विदद्दे नद्दे ” નાટ્ય ચાર પ્રકારના કહ્યાં છે નટની સાથે સંબધ ધરાવનારાં નૃત્ય, ગીત, વાદ્ય અને કર ચરણુ આદિની વિશિષ્ટ ચેષ્ટાઓને અહીં નાટ્યપદ્ધતી ગ્રહણુ કરવામાં આવેલ છે તે નાટ્યના ચાર પ્રકારો નીચે પ્રમાણુ છે—(૧) અશ્રિત, (૨) રિભિત, (૩) આરભટ અને ભસોલ. આ ચારે ભેદોનું વર્ણન ભરતાદિ નાટ્યગ્રન્થોમાંથી વાંચી લેવું.

“ ચતુર્વિદ્દે ગેए ” इत्यादि—गेय (गीत) चार प्रकारना होय છે. गावाने योग्य જે હોય છે તેને ગેય કહે છે. ગેયમાં—ગીત ગાવામાં સ્વરના સંચાર આદિ થાય છે. તેના નીચે પ્રમાણુ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ઉત્ક્ષિપ્તક, (૨) પત્રક, (૩) મન્દક અને (૪) રોચિન્દય. તેમાં ‘રોચિન્દય’ આ ગામઠી શબ્દ છે. ગેયના આઠ ગુણુ નીચે પ્રમાણુ કહ્યાં છે. “ પુષ્ણં રત્તં ચ અલંકિઅં ચ ” इत्यादि. આ શ્લોકોનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણુ છે.

अक्षरसमं पदसमं तालसमलयसमग्रहसमं वाचि ।

नीसासि ओससिअसमं संचारसमं सरा सत्त ॥ ३ ॥

छाया—पूर्णं रक्तं चालङ्कृतं च व्यक्तं च तथैवमविद्युष्टम् ।

मधुरं समं सुललितम् अष्ट गुणा भवन्ति गेयस्य ॥ १ ॥

उरः कण्ठशिरोविश्रुद्धं च, गीयते मृदुकरिभितपदवद्धम् ।

समतालपत्युत्क्षेपं सप्तस्वरसीसरं गेयम् ॥ २ ॥

अक्षरसमं पदसमं तालसमलयसमग्रहसमम् ।

निश्चितोच्छ्वसितसमं सञ्चारसमं स्वराः सप्त ॥ ३ ॥ ” इति ।

अयमर्थः—पूर्णं गेयस्याङ्गं सकलस्वरकलाभिर्युक्तम् १, रक्तं—गेयरागेण भाषितस्य गेयस्याङ्गं रक्तमित्युच्यते २, भलङ्कृतम्—अन्यान्यस्फुटस्वरविशेषशोभितम् ३, व्यक्तम्—अक्षरस्वरप्रकटनसंयुतम् ४, तथा—एवम्—अविद्युष्टं—विक्रोशनमिव यद् विस्वर न भवति तत् ५, मधुरं—मधुमत्तकोकिलारुतवन्मधुस्वरम् ६, समं—तालवंशस्वरादिसाम्योपेतम् ७, सुललितं—स्वरघोलनाप्रकारेण शुद्धातिशयेन कल-

“ पुण्यं रक्तं च अलङ्कितं च ” इत्यादि । इन श्लोकोंका ऐसा भाव है, जो गेय समस्त स्वर एवं कलाओंसे युक्त होता है वह गेय पूर्ण कहलाता है १। गेय रागसे युक्त जो गेय होता है, वह रक्त कहलाता है २। अन्य अन्य स्फुट स्वर विशेषोंसे जो शोभित होता है, वह व्यक्त कहलाता है ३। जो अक्षर स्वर इनकी स्पष्टतासे युक्त होता है, वह व्यक्त कहलाता है ४। चिलानेकी तरहसे जो गेय विस्वर नहीं होता है, वह गेय अविद्युष्ट कहलाता है ५। मधुकालमें वसन्त मत्त कोकिलाके स्वरकी तरह जो मधुर स्वरवाला होता है, वह गेय मधुर कहलाता है ६। जिसमें स्वरोंका संचार खेलता सा प्रतीत होता हो, वह गेय सुकुमार कहलाता है ७। और जिसमें तालकी एवं वाँसुरी आदि के स्वरोंकी समानता हो वह

(१) ने गेय समस्त स्वरा अने कलाओंथी युक्त होय छे; ते गेयने पूर्ण कहेवाय छे. (२) गेय रागथी युक्त ने गेय होय छे तेने रक्त कहे छे (३) अन्य अन्य स्फुट स्वर विशेषेथी शोभायमान ने गेय होय छे तेने व्यक्त कहे छे (४) ने गेय अक्षर अने स्वरनी स्पष्टथी युक्त होय छे तेने व्यक्त कहे छे. (५) ने गेयमां स्वर तूरतो नथी—सूर झटी जेतो नथी ते गेयने अविद्युष्ट कहे छे. (६) वर्षाकाले मत्त ओवी कौयलना स्वरना जेवा ने मधुर स्वर होय छे ते गेयने मधुर कहे छे. (७) नेमां स्वरांने (सूरीने) संचार समत रमाती होय—सूरीनी समत लमी होय ओवी प्रतीति थाय छे ते गेयने सुकुमार कहे छे. (८) ने गेयमां तालनी अने वाँसणी

तीव्र यत्, सुकुमालं तत् ८। एतेऽष्टौ गुणा गेयस्य-गीतस्य भवन्ति । एतद्विरहितं तु विडम्बनमात्रं तदिति । किञ्चोपलक्षणत्वादन्येऽपि गीतगुणा भवन्ति, तानाह-
' चकारोऽनुक्तसमुच्चयार्थः '

“ उरकंठशिरविशुद्धं ” इत्यादि—उरःकण्ठशिरोविशुद्धं - विशुद्धशब्दस्य द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणतया प्रत्येकं योगः, तथाहि उरो विशुद्धं-कण्ठविशुद्धं शिरोविशुद्धं च तत्रोरोविशुद्धं-स्वरो यद्युरसि विशालो भवति-तदोरोविशुद्धम्, कण्ठविशुद्धं च-कण्ठे वर्तितोऽतिस्फुटः स्वरः, शिरोविशुद्धं तु-शिरसि प्राप्तो यदिनाऽनुनासिकः स्वरस्तदाशिरोविशुद्धम् ।

यद्वा—उद्गेषमुरःकण्ठशिरोविशुद्धं गीयते यच्च श्लेष्मणाऽऽव्याकुल्लेषूरः-कण्ठशिरस्सु विशुद्धेषु गीयते, किं विशिष्टमित्याह-मृदुकरिभितपदवद्ध-तत्र-मृदुकं-

गेय साम्य कहलाता है । इस प्रकारके ये आठ गुण गीतके होते हैं । इनसे विरहित गीत केवल विडम्बना मात्र होता है । उपलक्षणसे अन्य भी गीतके गुण होते हैं जो इस प्रकारसे “ उरकंठशिरविशुद्धं ” इत्यादि द्वारा प्रकट किये गये हैं—

द्वन्द्व के अन्तमें प्रयुक्त विशुद्ध शब्दका सम्बन्ध प्रत्येक शब्दके साथ यहाँ लगा लेना चाहिये—तथाच—जो स्वर छाती में विशाल होता है वह उरोविशुद्ध स्वर है । जो स्वर कंठमें बर्त्तित हुआ अति स्फुट होता है वह कंठ विशुद्ध स्वर है और जो स्वर शिर में प्राप्त हो, और वह अनुनासिक न हो वह स्वर शिरो विशुद्ध स्वर है ।

यद्वा—उरोविशुद्ध कंठ विशुद्ध एवं शिरो विशुद्ध गेय वह होता है जो श्लेष्मा कफसे रहित हुए उरोभागके कण्ठके एवं शिरके विशुद्ध

आदि वाद्योना सूरोनी समानता होय छे ते गेयने साम्य कडे छे. गीतमां आ प्रकारना आठ शुष्ण होय छे, ते आठ शुष्णोथी रडित जे गीत होय ते विडम्बना रूप जे होय छे. उपलक्षणथी गीतना अन्य शुष्णो पणु कथा छे, जे नीचे प्रमाणे छे. “ उरकंठशिरो विसुद्धं ” इत्यादि—

आ श्लेष्मांसा प्रत्येक पदनी साथे विशुद्ध शुष्णने लगाडीने आ प्रमाणे कथन थवुं जेछये—जे स्वर छातीना उडाणुमांथी नीकणतो होय छे तेने उरोविशुद्ध स्वर कडे छे. जे स्वर कंठमांथी स्फुट रूप उच्चारित थतो होय छे तेने कंठविशुद्ध स्वर कडे छे. जे स्वर शिरमांथी प्राप्त थतो होय छे जेवा अनुनासिक स्वरने शिरविशुद्ध स्वर कडे छे. अथवा उरोविशुद्ध, कंठविशुद्ध अने शिरोविशुद्ध गेय तेने कडे छे के जे श्लेष्माथी रडित जेवा उरोभाग, कंठ अने शिरोभाग विशुद्ध थछे जतां गवाय छे. जे गीत गावामां आवे

કઠોરતા હીનસ્વરેણ ગીયમાનં કોમલમ્, રિમિતમ્—યત્રાક્ષરેષુ ઘોલનયા સંચરન્
સ્વરો ભવતિ ઘોલનાવહુલમ્, પદવદ્ધં—ગેયપદૈર્વદ્ધં વિશિષ્ટરચનયા યોજિતં તતથ
મૃદુકં રિમિતં ચ તત્ પદવદ્ધં ચેતિ મૃદુકરિમિતપદવદ્ધમિતિ કર્મધારયઃ ।

સમતાલપ્રત્યુક્ષેપં—તાલો હસ્તસમુત્પન્નઃ શબ્દઃ, ઉપલક્ષણત્વાદ્ પ્રત્યુક્ષેપઃ—
મિતોપકારકાણાં મુરજકાંસ્યાદીનાં શબ્દઃ, યદ્વા—નર્તકીપદપ્રક્ષેપઃ તૌ સમૌ=ગીત-
સ્વરેણ સમાનો યત્ર તત્ સમતાલપ્રત્યુક્ષેપમ્, સમસ્વરસીમરં—અક્ષરાદિભિઃ સમં
યત્ર ગીતે તન્નીતમ્, અક્ષરસમમ્—અક્ષરૈર્વર્ગૈઃસમં, યત્ર દીર્ઘઽક્ષરે દીર્ઘઃસ્વરો ગીયતે,
હ્રસ્વે, હ્રમ્વઃ પ્લુતે પ્લુતઃ સ્વરઃ સાન્નુનાસિકે સાન્નુનામિકસ્તદક્ષરસમં ગીતં, પદ-

હો જાને પર ગાયા જાતાહૈ । જો ગીત ગાયા જાવે વહ મૃદુક રિમિત ઓર
પદવદ્ધ હોના ચાહિયે । જો ગાના કઠોરતાસે રહિત સ્વરસે ગાયા જાના
હૈ, વહ મૃદુક હૈ । જહાં અક્ષરોં પર ઘોલના સે સ્વરકા સંચાર હોના હૈ
વહ ઘોલના વહુલ રિમિત હૈ, ઓર ગેય પદોંકી વિશિષ્ટ રચનાસે યોજિત
જો ગાનાહૈ વહ પદવદ્ધ ગાનાહૈ । હાથસે ઉત્પન્ન હુઆ જો શબ્દહૈ, ઉસકા
નામ તાલ હૈ મૃદંગ કાંસ્ય આદિ ગીતોપકારક વાઘોંકા જો શબ્દ હૈ વહ
પ્રત્યુક્ષેપ હૈ યદ્વા—નર્તકી કે પદકા જો પ્રક્ષેપહૈ વહ પ્રત્યુક્ષેપહૈ । તાલ ઓર
પ્રત્યુક્ષેપ યે દોનોં જહાં ગીત સ્વરકે સાથર ચલ રહે હોં, એસા વહ ગાના
સમતાલ પ્રત્યુક્ષેપવાલાહૈ । અક્ષરાદિકોંકે સાથ જો ગીત સાત સ્વરોંસે
યુક્ત હો વહ ગાના સમસ્વરસીમરહૈ । દીર્ઘ અક્ષર કે સાથ જિસ ગાનેયે
દીર્ઘ સ્વર ગાયા જાતા હો હ્રસ્વ અક્ષર પર હ્રસ્વ સ્વર ગાયા જાતા હો
પ્લુત અક્ષર પર જહાં પ્લુત સ્વર ગાયા જાતા હો ઓર સાન્નુનાસિક

તે મૃદુક, રિમિત અને પદવદ્ધ હોવું જોઈએ. જે ગીત કઠોરતાથી રહિત એટલે
કે મૃદુ સ્વરથી ગવાય છે તેને મૃદુક કહે છે. જ્યાં અક્ષરોને ઘુંટવાથી સ્વરનો
સંચાર થાય એવી તે અક્ષરોને ઘુંટવાની ક્રિયાને ‘ રિમિત કહે છે.

ગેય પદોની વિશિષ્ટ રચનાથી યોજિત જે ગાવાની ક્રિયા છે તેને પદવદ્ધ
ગીત કહે છે. હાથ વડે ઉત્પન્ન થયેલા અવાજને તાલ કહે છે. મૃદંગ,
મંજીરા આદિ ગીતોપકારક વાઘોને જે અવાજ છે તેને પ્રત્યુક્ષેપ કહે છે.
અથવા નર્તકીના પગનો જે પ્રક્ષેપ થાય છે તેને પ્રત્યુક્ષેપ કહે છે. તાલ અને
પ્રત્યુક્ષેપ જ્યારે ગીતના સૂરની સાથે સુમેળપૂર્વક ચાલી રહ્યાં હોય, ત્યારે તે
ગીતને સમતાલ પ્રત્યુક્ષેપવાળું કહેવાય છે. અક્ષરાદિકોની સાથે જે ગીત
સાત સ્વરોથી યુક્ત હોય છે તેને સમસ્વરસીમર કહે છે. જે ગીતમાં દીર્ઘ
અક્ષરની સાથે દીર્ઘ સ્વર ગવાતો હોય, હ્રસ્વ અક્ષર આવે ત્યારે હ્રસ્વ સ્વર
ગવાતો હોય, પ્લુત અક્ષર આવે ત્યારે પ્લુત સ્વર ગવાતો હોય અને સાન્નુ-

समम्—यद्गीतपदं यत्र स्वरेऽनुपाति भवति तत्रैव गीते तत्पदसमम्, तालसमलयसमग्रह-
समं—तत्र—तालसमं—परस्पराभिहतहस्ततालस्वरानुसारेण गीयमानम्, लयसमं—
तत्रलयः—शृङ्ग दावर्षाद्यन्यतरवस्तुमयेनाङ्गुलिकोशेन समाहृततन्त्रीस्वरप्रकारः तदनु-
सारिणा स्वरेण यद्गीयते तल्लयसमम्, ग्रहसमम्—प्रथमतो वंशतन्त्र्यादिभि र्यः स्वरो-
गृहीतस्वत्समानेन स्वरेण गीयमानं, निःश्वसितोच्छ्वसितसमं—निःश्वसितोच्छ्व-
सितमानमनुल्लङ्घ्य गेयम्, सञ्चारसमम्—वंशतन्त्र्यादिष्वङ्गुलिसञ्चारसमं गीय-
मानम्, ३९ (२)

“ चउन्विहे मल्ले ” इत्यादि—माल्य—पुष्पं, तद्रचनाऽपि माल्यं, तच्चतुर्विधं
प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—ग्रन्थिमं—ग्रन्थः—सूत्रेण ग्रन्थनं, तेन निर्वृत्तं माल्यं ग्रन्थिमं १,

अक्षर पर सानुनासिक स्वर गाया जाता हो वह अक्षरसमगीत है ।
जिस स्वरमें जो गीतपद चलता है उसी स्वरसे उस गीतपदका गाना
पदसम गीत है परस्परमें अभिहत हस्तके तालके स्वरके अनुसार जो
गीत गाया जाता है, वह तालसम गीत है । शृङ्गके तथा दारु लकड़ीके बने
हुए अंगुलिकोशसे समाहृत तन्त्रीके स्वरके अनुसार चलते हुए स्वरसे
जो गाना गाया जाता है, वह लयसम गान है, जिस गानेमें पहिले स्वर
वंशतन्त्री आदिके स्वरके साथ मिलाया जावे फिर बादमें उसके स्वरसे साथ
ही जो गाना गाया जाता है वह गाना निःश्वसितोच्छ्वसितसम गान
है । जो गाना सारंगी आदिपर अंगुलियों के संचारके साथ साथ गाया
जाता है वह संचार समगान है (२)

नासिक अक्षर आवे त्यारे सानुनासिक स्वर गवातो डोय ते गीतने अक्षर समगीत
कडे छे. जे स्वरमां जे गीतपद यादतुं डोय जे स्वरथी ते गीतपदने गावुं
तेनुं नाम पदसम गीत छे परस्परमां अबिडुत डोयना तालना स्वरने अनु-
सरीने जे गीत गवाय छे तेने तालसम गीत कडे छे. शृंग अथवा लाकडी-
मांथी णनावेदीं अने अंगुलिकोशथी समाहृत तन्त्रीना स्वरना अनुसार
नीकणता स्वरथी जे गीत गावामां आवे छे तेने लयसमगान कडे छे. जे
गीतमां पडेलां अंसरी आदिना स्वरनी साथे सूरने भेग भेगववामां आवे
अने त्यारभाद तेना स्वरनी साथे जे जे गीत गावामां आवे छे तेने निःश्व-
सितोच्छ्वसितसम गीत कडे छे. जे गीत सारंगी आदि पर आंगणीयेना
संचार करीने सारंगी आदिना अवाजनी साथे साथे गावामां आवे छे ते
गीतने संचार समगान कडे छे.

તથા-વેષ્ટિમં-વેષ્ટનનિવૃત્ત મુકુટાદિ ૨, તથા-પૂરિમ-પૂરણનિવૃત્તં-મૃન્મયાદિક-
મનેકચ્છિદ્રં પુષ્પૈઃ પૂર્યમાણમ્ ૩, તથા-સંઘાતિમં-પરસ્પરં પુષ્પમાલાદિસંઘાતે-
નોપજન્યમાનમ્ ૪ ઇતિ (૩) ।

“ ચતુર્વિદ્ધે અલંકારે ” ઇત્યાદિ—અલંકારઃ—અલંકારક્રિયતે શૂન્યતેઽનેનેત્ય-
લંકારઃ, સ ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા-કેશાલંકારઃ—કેશા એવ અલંકારઃ ૧,
એવ વસ્ત્રાલંકારઃ ૨, માલ્યાલંકારઃ ૩, આભરણાલંકારઃ ૪ ।

“ ચતુર્વિદ્ધે મલ્લે ” ઇત્યાદિ । ફૂલોં સે રચી ગઈ માલાકા નામ
માલ્ય હૈ । યહ માલા ચાર પ્રકારકી કહી ગઈ હૈ જૈસે—ગ્રન્થિમ ૧, વેષ્ટિમ
૨ પૂરિમ ૩ ઓર સંઘાતિમ ૪ જો માલા સૂત્ર સે—ઢોરા સે ગૂંથકર વનાઈ
જાતી હૈ વહ ગ્રન્થિમ માલા હૈ ૧ । જો માલા વેષ્ટનસે નિવૃત્ત હોતી હૈ જૈસે
મુકુટ વહ વેષ્ટિમ માલા હૈ ૨ । જો માલા મિટ્ટી આદિસે વનાઈ જાતી હૈ,
જિસમેં અનેક છિદ્ર હોતે હૈ, ઓર ઉન છિદ્રોમેં જો ફૂલોંસે ભરી ઝૂઈ હોતી
હૈ વહ પૂરિમ માલા હૈ ૩ । ઓર જો પુષ્પોંકે નાલ આદિકે પારસ્પરિક
સંઘાત સે વનાઈ જાતી હૈ વહ સંઘાતિમ માલા હૈ (૪)

“ ચતુર્વિદ્ધે અલંકારે ” ઇત્યાદિ ।—જિસસે શરીર શોભિત કિયા
જાના હૈ વહ અલંકાર હૈ, યહ અલંકાર ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ,
જૈસે—કેશાલંકાર, ૧, વસ્ત્રાલંકાર ૨, માલ્યાલંકાર ૩, ઓર આભરણા-
લંકાર ૪ । કેશા હી જહાં અલંકાર રુપ હો વહ કેશાલંકાર હૈ, વસ્ત્રા હી

“ ચતુર્વિદ્ધે મલ્લે ” ઇત્યાદિ—કૂલોમાંથી બનાવેલી માળાને માલ્ય કહે
છે તે માલ્યના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ગ્રન્થિમ, (૨) વેષ્ટિમ, (૩)
પૂરિમ અને (૪) સંઘાતિમ

જે માળા સૂત્રથી (ઢોરાથી) ગૂંથીને બનાવવામાં આવે છે, તે માળાને
ગ્રન્થિમ માલ્ય કહે છે. જે માળા વેષ્ટનથી નિવૃત્ત હોય છે તેને વેષ્ટિમ
માલ્ય કહે છે, જેમકે મુકુટ.

જે માળા માટી આદિ વડે બનાવવામાં આવે છે—તે માટીમાં અનેક
છિદ્રો હોય છે અને તે છિદ્રોને કૂલોથી ભરી દેવામાં આવ્યાં હોય છે, એવી
માળાને પૂરિમ માલ્ય કહે છે.

જે માળાને નાલ આદિના પારસ્પરિક સંયોજનથી બનાવવામાં આવે
છે તે માળાને સંઘાતિમ માલ્ય કહે છે.

“ ચતુર્વિદ્ધે અલંકારે ” ઇત્યાદિ—જેના વડે શરીરને વિભૂષિત કરવામાં
આવે છે તેનું નામ અલંકાર છે. તે અલંકાર ચાર પ્રકારના કહ્યાં છે—
(૧) કેશાલંકાર, (૨) વસ્ત્રાલંકાર, (૩) માલ્યાલંકાર અને (૪) આભરણાલંકાર.
કેશ જ ન્યાં અલંકાર રૂપ હોય તે અલંકારને કેશાલંકાર કહે છે. વસ્ત્રો જ

“चउच्चिहे अभिणए” इत्यादि—अभिनयः—अभिनयति—व्यञ्जयत्यर्थमित्य-
भिनयः=मनोगतभावाभिव्यञ्जकः हस्तादिव्यापारः, स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः,
तद्यथा—दार्ष्टान्तिकः—इह दृष्टान्तः सधर्मवस्तुप्रतिविम्बनं, तत्र कुशलो नियुक्तो
वा दार्ष्टान्तिकः, तथा—पाण्डुसुतः—पाण्डुसुता अभिनेयत्वेन यत्र स पाण्डुसुतः, यद्वा—
‘पडिसुइए’ इति पाठः, तत्पक्षे प्रातिश्रुतिक इति च्छाया, तदर्धश्च—प्रतिश्रुतं—
प्रतिज्ञातं तत्र नियुक्तः प्रातिश्रुतिक इति २। तथा सामन्तोपनिपातिकः—
समन्तानां—राजप्रधानपुरुषाणामुपनिपातः उपस्थितिः—सामन्तोपनिपातरत्नत्र कुशलो
नियुक्तो वा तथा, यद्वा—‘समंतोवणिवाइए’ इत्यस्य समन्तादुपनिपातिक इति
च्छाया, तत्पक्षे—समन्तात्—सर्वत उपनिपातोऽस्त्यत्रेति तथा, यद्वा—‘समंतोवणि-
वाइए’ इत्यस्य सामान्यत उपनिपातिकः—सामान्यतः निर्दिशेषत्वादुपनिपातो-
ऽस्त्यत्रेति तथा ३। तथा—लोकमध्यावसितः—लोकमध्ये—लोकान्तराले अवसितः—
समाप्तस्तथा, एते अभिनयभेदा भरतादिनाट्यशास्त्रज्ञेभ्यो विज्ञेयाः ॥सू० ३८॥

देवाधिकारादेवविशेष सनत्कुमारादीनां—विमानतर्णादीञ्जिरूपयितु द्वि सूत्रीमाह

मूलम्—सुपांकुमारमाहिंदैसु णं कपेसु विमाणा चउवण्णा
पणगत्ता, तं जहा-णीला १, लोहिया २, हालिदा ३, सुक्किला४(१)

जहाँ अलङ्कार रूप हो वह वञ्जालङ्कार है, इसी प्रकार से माल्यालङ्कार
और आभरणालङ्कार भी जानना चाहिये ।

“चउच्चिहे अभिणए” इत्यादि अभिनय चार प्रकारका कहागयाहै,
मनोगतभावका अभिव्यञ्जक जो हस्तादि व्यापारहै वह अभिनयहै, यह
अभिनय दार्ष्टान्तिक १, पाण्डुसुत २, सामन्तोपनिपातिक ३ और लोक-
मध्यावसित ४ के भेदसे चार प्रकारका है, ये अभिनयके भेद भरतादि
नाट्य शास्त्रज्ञों से समझ लेना चाहिये ॥ सू० ३८ ॥

न्यां अलंकार ३५ डाय ते अलंकारने वञ्जालंकार कडे छे. अे न प्रमाणे
माल्यालंकार अने आभरणालंकार विषे पणु समञ्ज लेवुं.

“चउच्चिहे अभिणए” अभिनय चार प्रकारने कही छे. मनोगत लावेने
व्यक्त करवा साटे हस्तादिनी जे चेष्टाओ करवाभां आवे छे तेने अभिनय
कडे छे. तेना चार प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—(१) दार्ष्टान्तिक, (२) पांडुसुत,
(३) सामन्तोपनिपातिक, अने (४) लोकमध्यावसित. आ लेहो विषे भरतादि
नाट्य शास्त्रज्ञो पासेथी विशेष भाडिती भेणवी लेवी. ॥ सू. ३८ ॥

મહાસુક્લસહસ્રારેસુ ણં કલ્પેસુ દેવાણં ભવધારણિજ્ઞા સરી-
રગા ઉક્તોક્ષેણં ચત્તારિરયણીઓ ઉઢું ઉચ્ચત્તેણં પણ્ણત્તા (૨) સૂ. ॥૩૧॥

છાયા—સનત્કુમારમાહેન્દ્રેષુ સ્વલુ કલ્પેષુ ત્રિમાનાનિ ચતુર્વર્ણાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ,
તદ્વથા—નોલાનિ ૧, લોહિતાનિ ૨, હારિદ્રાણિ ૩, શુક્લાનિ ૪ (૧) ।

મહાશુક્લસહસ્રારેષુ સ્વલુ કલ્પેષુ દેવાનાં ભવધારણીયાનિ શરીરકાણિ ઉત્ક-
ર્ષેણ ચતસ્રો રત્નય ઊર્ધ્વસુચ્રત્વેન પ્રજ્ઞપ્તાનિ ॥૩૧॥

ટીકા—‘ સર્ણકુમારમાહિંદેસુ ’ ઇત્યાદિ—સ્પષ્ટમ્, નવરં—સનત્કુમારમાહે-
ન્દ્રયોશ્ચતુર્વર્ણાનિ, નીલાદીનિ કલ્પાન્તરેષુ તુ અન્યપ્રકારેણ વિમાનાનિ ભવન્તિ ।

ઉક્તશ્ચ—“ સોહમ્મે પંચવર્ણા એકગ્રહાણી ડ જા સહસ્રારે ।

દો દો તુલ્યા કપ્પા તેણપરં પુંડરીયાઓ ॥૧॥

છાયા—સૌધર્મે પશ્ચવર્ણાનિ એકૈકહાનિસ્તુ યાવત્સહસ્રારમ્ ।

દ્વયોર્દ્વયોસ્તુલ્યાનિ કલ્પયો. તેન પરં પુંડરીકાણિ ॥૧॥”

અયમર્થ—સૌધર્મે=પ્રથમે દેવલોકે પશ્ચવર્ણાનિ વિમાનાનિ ભવન્તિ, યાવત્
સહસ્રારમ્=સહસ્રારવિમાનપર્યન્તે તુ વર્ણાનાં મધ્યે ક્રમશઃ એકૈકવર્ણહાનિ ભવતિ

દેવોં કે અધિકારસે અથ સૂત્રકાર સનત્કુમાર આદિ દેવવિશેષોંકે
વિમાનોં કા નિરૂપણ દો સૂત્રોં દ્વારા કરતે હૈં—

ટીકાર્થ—“ સર્ણકુમારમાહિંદેસુ ” ઇત્યાદિ ।

સનત્કુમાર એવં માહેન્દ્ર ઇન દો કલ્પો મેં વિમાન ચાર વર્ણવાલે
કહે ગયે હૈં, વે ચાર વર્ણ હસ પ્રકાર સે હૈં । નીલ ૧, લોહિત ૨, હારિદ્ર
૩, ઓર શુક્લ ૪ । અવગિષ્ટ કલ્પો મેં અન્ય પ્રકાર સે વિમાન હૈં ।
કહા ઓહૈ—“સોહમ્મે પંચવર્ણા” ઇત્યાદિ—હસ ગાથા કા અર્થ એસા હૈ
સૌધર્મ દેવલોકમેં પાંચો હી વર્ણોં વાલે વિમાન હૈ, ઈજ્ઞાનકલ્પમેં ઓ

દેવોના અધિકાર ચાલુ છે. તેથી સૂત્રકાર હવે સનત્કુમાર આદિ દેવ-
વિશેષોનાં વિમાનોનાં વર્ણુ આદિનું નિરૂપણ કરે છે.

ટીકાર્થ—“ સર્ણકુમાર માહિંદેસુ ” ઇત્યાદિ—

સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, ઓ બે કલ્પોમાં ચાર વર્ણુવાળાં વિમાન હોય
છે-તે ચાર વર્ણુ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) નીલ, (૨) લોહિત (લાલ), (૩)
હારિદ્ર (પીળા) અને (૪) શુક્લ. બાકીના કલ્પોમાં અન્ય પ્રકારનાં વિમાનો છે.
હલું પણ છે કે “ સોહમ્મે પંચ વર્ણા ” ઇત્યાદિ—

तेषु सौधर्मादि सहस्रारपर्यन्तेषु द्वयोर्द्वयोः कल्पयोः विमानानि त्रैलोक्यवर्णानि भवन्ति, ततःपरं=सहस्रारदेवलोकात्परतः स्थितेषु देवलोकेषु विमानानि पुण्डरीकाणि=श्वेतवर्णानि भवन्तीति ।

अयं भावः—सौधर्मेशानयोः कल्पयोः विमानानि पञ्चवर्णानि काल-नील-लोहित-हारिद्र-(पीत) शुक्लवर्ण युक्तानि भवन्ति, सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः कल्पयोर्विमानानि चतुर्वर्णानि नीलादि चतुर्वर्णयुक्तानि भवन्ति, ब्रह्मलान्तकयोः विमानानि त्रिवर्णानि लौहित्यादित्रिवर्णयुक्तानि भवन्ति, शुक्रसहस्रारयोः विमानानि द्विवर्णानि हारिद्र-शुक्लवर्णयुक्तानि भवन्ति, आनत-प्राणतारणाच्युतेषु विमानानि श्वेतवर्णानि भवन्तीति ।

“ महासुक्रसहस्रारेषु णं ” इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं-भवधारणीयानि भवे धार्यन्त इति भवधारणीयानि, यद्वा-भवं धारयन्तीति भवधारणीयानि जन्मत आरभ्य मरणपर्यन्तं शरीराणि तिष्ठन्ति, तानि कियत्परिमाणानि ? इति प्रदर्शयति—‘ उक्तोसेणं ’ इत्यादि—उत्कर्षेण चतस्रः रत्नयः—चतुर्हस्त-प्रमाणानि । यद्यपि रत्निर्बद्धमुष्टिको हस्तोऽन्यत्र, अत्र रत्निस्तु प्रसारिताङ्गुलिको हस्त उच्यते,

पांचो ही वर्णोंवाले विमान हैं । सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो देवलोको में चार वर्णोंवाले विमान हैं । ब्रह्म और लान्तक में तीन वर्णोंवाले विमान हैं । शुक्र और सहस्रार में दो वर्णोंवाले विमान हैं । आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन कल्पों में केवल श्वेत वर्णवाले विमान हैं ।

“ महासुक्रसहस्रारेषु णं ” इत्यादि—महाशुक्र और सहस्रार इन दो कल्पों में देवोंके भवधारणीय शरीर उकृष्ट से चार रत्निप्रमाण ऊंचाईवाले कहे गये हैं । जो शरीर जन्म से लेकर मरण पर्यन्त रहता है, वह भवधारणीय शरीर है । इनके शरीरकी ऊंचाई का प्रमाण चार रत्नि-चार हाथ हैं । यद्यपि बद्ध मुष्टिवाले हाथ को अन्यत्र एक रत्नि

आ गाथानो अर्थ नीचे प्रमाणे छे—सौधर्मं अने धशान देवलोकां पांचे वर्णानां विमानो छे सनत्कुमार अने माहेन्द्र कल्पेमां चार वर्णवाणां विमानो छे ब्रह्मदेव अने लान्तकमां त्रय वर्णवाणां विमानो छे शुक्र अने सहस्रारमां ये वर्णवाणां विमानो छे. आनत, प्राणत, आरण अने अच्युत आ कल्पेमां केवण शुक्ल वर्णवाणां विमानो छे.

“ महासुक्र सहस्रारेषु णं ” इत्यादि—महाशुक्र अने सहस्रार कल्पेमा देवानुं भवधारणीय शरीर अधिकमां अधिक चार रत्निप्रमाणे उंचाईवाणुं छाय छे जे शरीर जन्मथी लधने मरणे पर्यन्त रहे छे, ते शरीरने भवधारणीय शरीर कडे छे चार रत्निप्रमाणे उंचाई अटले चार हाथनी उंचाई समन्वी. जे के कटक शशाओमां सुकी वाणेलो छाय जेदला प्रमाणे अके

તથાપ્યત્ર રત્નિશબ્દેન હસ્તમાત્રં ગૃહ્યતે, ઝર્ધ્વમુચ્ચત્વેન પ્રજ્ઞપ્તાનિ, શુક્રસહસ્રારયોઃ
કલ્પયોર્દેવાશ્વતુર્હસ્તા ભવન્તિ, અન્યેષુ તુ અન્યથા,

યત ઉક્તમ્—ભવળ ૧૦ વળજ્જો ૬ સોહમ્મીસાળે સત્ત હોતિ રયળીઓ ।

એકેકહાળિ સેસે દુદુગે ય દુગે ચઁકે ય ॥૧૧॥”

ગેવિજ્જેસું દોત્તી એકા રયળી અણુત્તરેષુ ।

છાયા—ભવનવાનજ્યોતિષ્ક સૌધર્મેશાનેષુ સપ્ત ભવન્તિ રત્નયઃ ।

એકેકહાનિઃ શેષેષુ દ્વિકે દ્વિકે ચ દ્વિ= ચતુષ્કે ચ ॥૧૧॥

ત્રૈવેયકેષુ દ્વે રત્ની એકા રત્નિરનુત્તરેષુ ।

અયમર્થઃ—ભવનપતિ-વ્યન્તર-જ્યોતિષ્ક-સૌધર્મે-શાન દેવાનાં શરીરાણિ
સપ્તરત્નયો ભવન્તિ । તતઃપરં શેષેષુ સનત્કુમારાદિષુ દશકલ્પેષુ દ્વિકે=સનત્કુ-
મારમાહેન્દ્ર દ્વયે, દ્વિકે=બ્રહ્મલાન્તકદ્વયે, દ્વિકે=શુક્રસહસ્રારદ્વયે ચ ચતુષ્કે-
આનતપ્રાણતારણાચ્યુતચતુષ્ટયે ચ ક્રમશઃ એકેકરત્નિ હાનિર્ભવતિ । અયં માવઃ-
સનત્કુમારમાહેન્દ્રયોર્દેવાનાં શરીરાણિ પદ્મરત્નિ પ્રમાણાનિ ભવન્તિ, બ્રહ્મલાન્તકયો
ર્દેવાનાં શરીરાણિ પશ્ચરત્નિ પ્રમાણાનિ ભવન્તિ, શુક્રસહસ્રારયોર્દેવાનાં શરીરાણિ

કહા ગયા હૈ । પરન્તુ યહાં પર પસારી હુઈ અંગુલિપોવાલા હાથ રત્નિ
શબ્દ સ્ત્રે કહા ગયા હૈ । હસલિયે યહાં રત્નિ શબ્દ સે હસનમાત્ર લિયા
ગયા હૈ । હસી તરહ એસા જાનના ચાહિયે કિ શુક્ર ઓર સહસ્રારકલ્પ
કે દેવ ચાર હાથવાલે ઝંબે હોતે હૈ, અન્ય દેવોં મેં એસા નિયમ નહીહૈ ।

કહાબી હૈ—“ ભવળવળજોહસ ” હત્યાદિ—હનકા અર્થ એસા હૈ
ભવનપતિ, વ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક, સૌધર્મ ઓર હ્શાન દેવોં કે શરીર સાત
રત્નિપ્રમાણવાલે હોતે હૈ અર્થાત્ સાત હાથકી ઝંચાઈવાલે હોતે હૈ ।
સનત્કુમાર ઓર માહેન્દ્ર કે દેવોં કે શરીર ૬ રત્નિ ઝંચે હોતે હૈ ।
બ્રહ્મલાન્તક દેવોં કે શરીર ૫ રત્નિપ્રમાણ ઝંચે હોતે હૈ । શુક્ર સહસ્રાર

રત્નિપ્રમાણ ૪હું છે, પણ અહીં ખુદ્શી મુદ્શીવાળા ૬થ પ્રમાણ માપને એક
રત્નિપ્રમાણ ૪હું છે આ પ્રકારે અહીં એવું સમજવાતું છે કે શુક્ર અને
સહસ્રાર કલ્પના દેવોના લવધારણીય શરીરની ઉંચાઈ ચાર હાથપ્રમાણ હોય
છે, અન્ય કલ્પોના દેવોની ઉંચાઈ એટલી હોતી નથી. ૪હું પણ છે કે—

“ ભવળવળજોહસ ” હત્યાદિ—ભવનપતિ, વ્યન્તર, જ્યોતિષ્ક, સૌધર્મ
કલ્પવાસી અને હ્શાન કલ્પવાસી દેવોના શરીરની ઉંચાઈ સાત રત્નિપ્રમાણ
(સાત હાથ) હોય છે. સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પના દેવોની ઉંચાઈ છ
રત્નીપ્રમાણ હોય છે. બ્રહ્મલાન્તક અને લાન્તક કલ્પના દેવોની ઉંચાઈ પાંચ

चतुर्भूति प्रमाणानि भवन्ति, आनतप्राणतारणाच्युतेषु चतुर्षु देवलोकेषु देवानां शरीराणि त्रिरत्निप्रमाणानि भवन्तीति । तथा-त्रैवेयकेषु देवानां शरीराणि द्विरत्निप्रमाणानि भवन्ति तथा-चतुर्ष्वनुत्तरविमानेषु देवानां शरीराणि एकरत्निप्रमाणानि भवन्ति । सर्वार्थसिद्धविमाने तु देवानां शरीराणि बद्धमुष्टिरत्निप्रमाणानि भवन्तीति ।

एवं भवधारणीयानि शरीराणि भवन्ति, उत्तरवैक्रियाणि तु-उत्कृष्टत्वेन लक्ष-योजनपरिमितान्यपि सम्भवन्ति, जघन्यतस्तु उपपादकालेऽङ्गुलासंख्येयभाग-प्रमाणानि भवधारणीयानि भवन्ति, उत्तरवैक्रियाणितु अङ्गुलासंख्येयभाग-प्रमाणानि भवन्तीति ॥ सू० ३९ ॥

के देवों के शरीर ४ रत्निप्रमाण ऊँचे होते हैं । आनत, प्राणत, आरण और अच्युत इन चार देवलोकों में देवों के शरीर तीन रत्निप्रमाण ऊँचे होते हैं । तथा त्रैवेयकवासी देवों के शरीर द्वीरत्निप्रमाण ऊँचे होते हैं । चार अनुत्तर विमानों में रहे हुए देवों के शरीर एक रत्निप्रमाण ऊँचे होते हैं । परन्तु सर्वार्थसिद्ध विमानमें देवों के शरीर बद्ध-मुष्टिवाले एक हाथ प्रमाण ऊँचे होते हैं । यह भवधारणीय शरीरों की ऊँचाई कही गई है । उत्तरवैक्रिय शरीरों की ऊँचाई तो एक लाख योजनतक की भी हो सकती है । तथा जघन्य की अपेक्षा उपपाद कालमें अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण ऊँचाई होती है । और उत्तर वैक्रिय शरीरों की ऊँचाई भी जघन्य की अपेक्षा अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है ॥ सू० ३९ ॥

रत्निप्रमाण डोय छे, शुक्र अने सहस्रार कल्पना देवोना शरीरनी उँचाई चार रत्निप्रमाण डोय छे. आनत, प्राणत, आइणु अने अच्युत, आ चार देव-लोकना देवोना शरीरनी उँचाई त्रिणु रत्निप्रमाण डोय छे. त्रैवेयकनिवासी देवोनी उँचाई डे रत्निप्रमाण डोय छे. सर्वार्थसिद्ध सिवायना चार अनुत्तर विमानोना देवोनी उँचाई अेक रत्निप्रमाण डोय छे, परन्तु सर्वार्थसिद्ध विमानना देवोनी उँचाई मुकी वाणेक्षा अेक हाथप्रमाण डोय छे. अडीं ने उँचाई कही छे ते भवधारणीय शरीरनी न उँचाई समजवी. उत्तर वैक्रिय शरीरोनी उँचाई तो वधारेमां वधारे अेक हाथ योजन मुधीनी डोय शके छे, अने ओछाभां ओछी उँचाई उपपाद काले अंगुलना असंख्यातमां भाग प्रमाण डोय शके छे, अने उत्तर वैक्रिय शरीरनी जघन्य उँचाई पणु अंगु-लना असंख्यातमां भागप्रमाण डोय छे. ॥ सू. ३९ ॥

पूर्वं देववक्तव्यताऽभिहिता, देवाश्चाप्यायतयाऽप्युत्पद्यन्त इति जलगर्भान्
निरूपयितुं द्विसूत्रीमाह—

मूलम्—चत्वारि उदगगर्भा पणत्ता, तं जहा-उस्सा १,
सहिया २, सीया ३, उस्सिणा ४। चत्वारि उदगगर्भा पणत्ता,
तं जहा-हेमगा १, अब्भसंथडा २, सीयोस्सिणा ३, पंचरुविया ४।
साहे उ हेमगा गर्भा, फग्गुणे अब्भसंथडा ।

सीयोस्सिणा उच्चित्ते, वइसाहे पंचरुविया ॥१॥ ॥ सू० ४० ॥

छाया—चत्वार उदकगर्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-अवश्यायः १, मिहिकाः २,
शीताः ३ उष्णाः ४। चत्वार उदकगर्भाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-हैमकाः १ अब्रसंस्तुताः
२, शीतोष्णाः ३ पञ्चरूपिकाः ४।

“ माधे तु हैमका गर्भाः, फाल्गुने अब्रसंस्थिताः ।

शीतोष्णास्तु चैत्रे, वैशाखे पञ्चरूपिकाः ॥१॥ सू० ४० ॥

टीका—‘ चत्वारि उदगगर्भा ’ इत्यादि—उदकस्य-जलस्य गर्भाः गर्भा
इव गर्भाः—गर्भा तथा जन्तुत्पत्तिहेतवो भवन्ति, तथा—कालान्तरे जलवर्षणनि-
मित्तरूपाः चत्वारोऽनुपदं वक्ष्यमाणाः प्रज्ञप्ताः, ते के ? इत्याह—‘ तंजहे ’ त्यादि-
तद्यथा-अवश्यायाः—रात्रिपतितजलकणरूपाः, तथा—मिहिका-धूमिका २ तथा

देव अप्कायरूप સે ખી ઉત્પન્ન હો જાતેહૈં । અનઃ સૂત્રકાર જલગર્ભો
કી નિરૂપણા દો સૂત્રો દ્વારા કરતે હૈં—“ ચત્તારિ ઉદગગર્ભા પણત્તા ”
હત્યાદિ ।

टीकार्थ—उदक गर्भं चार प्रकारके कहे गयेहै जैसे अवश्याय १, मिहिका
२, शीता ३, और उष्णा ४ । जिस प्रकार गर्भ जन्तु की उत्पत्ति का
कारण होता है, उसी प्रकार जो कालान्तर में जलवर्षण का निमित्त
होता है वह जलगर्भ है । जो रात्रि में गिरे हुए जलकण के रूप होता
है, वह अवश्यायरूप जलगर्भ है । धूमिकारूप जो जलकण होते हैं, वे

દેવ અપ્કાય રૂપે યે પશુ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તેથી સૂત્રકારે યે સૂત્રો
દ્વારા જલગર્ભોતું નિરૂપણ કરે છે. “ ચત્તારિ ઉદગગર્ભા પણત્તા ” ઇત્યાદિ—

टीकार्थ—उदक गर्भं चार प्रकारना कहेा है, ते प्रकारे नीचे प्रमाणे छे—
(१) अवश्याय, (२) मिहिकार, (३) शीता, (४) उष्णु ये प्रकारे गर्भजन्तुनी
उत्पत्तितुं कारणु छाय छे, ये न प्रमाणे ये गर्भ कालान्तरे जलवर्षणुतुं
निमित्त अने छे तेतुं नाम जलगर्भ छे. ये रात्रे पडेलां जलकणरूपु छे

શીતા:-આત્યન્તિકહિમઋણરૂપા: ૨ તથા-ઉષ્ણા:-આત્યન્તિકોષ્ણરૂપા: ૪।
યદ્યેતેઽવશ્યાયાદયશ્ચત્વારો યસ્મિન્ દિવસે ભવન્તિ, ન ચ વિચ્છિન્ના ભવન્તિ તદા
તસ્માદ્દિનાદારભ્ય સાર્ધષડ્મિર્માસૈરુદ્કઋષ્ટિ જનયન્તિ ।

પુનઃ “ ચત્તારિ ઉદગગઘ્ના ” ઇત્યાદિ, સ્પષ્ટમ્, નવરમ્ હૈમકાઃ હિમ-તુ
પારઃ, હિમમેવ હિમકં, હિમઋસ્યેષે હૈમકાઃ હિમનિપાતરૂપાઃ ૧, તથા-અબ્રસં-
સ્તૃતાઃ-મેઘાહમ્બરરૂપાઃ ૨, તથા-શીતોષ્ણાઃ-શીતોષ્ણરૂપાઃ ૩, તથા-પશ્ચ-
રૂપિકાઃ-ગર્જિતવિદ્યુજ્જલવાતમેઘરૂપાણાં પશ્ચાનાં રૂપાણાં સમાહારઃ પશ્ચરૂપં
તદસ્ત્યેષામિતિ પશ્ચરૂપિકા ઉદકગર્ભાઃ ૪।

મિહિકા રૂપ જલગર્ભ હૈ । અત્યન્ત હિમઋણ રૂપ જો જલઋણ હોતેહૈ, વે
શીતરૂપ જલગર્ભ હૈ । એવં અત્યન્ત ઉષ્ણરૂપ જો હોતે હૈ, વે ઉષ્ણગર્ભ
હૈ । યદિ યે અવશ્યાયાદિક જિસ દિન હોતેહૈ ઓર વિચ્છિન્ન નહીં હોતે
હૈ, તવ ઉસ દિન સે લેકર સાઠે છ માસ બીતને પર ઉદ્કઋષ્ટિ કરતે હૈ ।

ફિરમી--“ ચત્તારિ ઉદગગઘ્ના ” ઉદક ગર્ભ ચર પ્રકાર કે કહે
ગયે હૈ-જૈસે હૈમક ૧, અબ્રસંસ્તૃત ૨, શીતોષ્ણ ૩, ઓર પશ્ચરૂપિક ૪ ।
જો હૈમક જલગર્ભ હૈ મેં તુષાર પડને કે રૂપ મેં હોતે હૈ ૧ । અબ્રસંસ્તૃત
જલગર્ભ મેઘોં કે આહમ્બર કે રૂપ મેં હોતે હૈ ૨ । શીતોષ્ણ જલગર્ભ
શીત ઉષ્ણ દોનોં રૂપમેં હોતેહૈ ૩ । જો પશ્ચરૂપિક જલગર્ભ હૈ વે ગર્જના,
વિદ્યુત્, જલ, વાત, ઓર મેઘ હન પાંચોં રૂપવાલે હોતે હૈ ।

તેને અવશ્યાય ૩૫ જલગર્ભ કહે છે ધૂમિકા ૩૫ જે જલઋણ હોય છે તેને
મિહિકા ૩૫ (ધુમસ ૩૫) જલગર્ભ કહે છે અત્યન્ત હિમઋણ ૩૫ જે
જલઋણો હોય છે તેમને શીત ૩૫ જલગર્ભ કહે છે અત્યન્ત ઉષ્ણ ૩૫ જે
જલઋણો હોય છે તેમને ઉષ્ણગર્ભ કહે છે. આ અવશ્યાદિક ચાર જે દિવસે
હોય છે તે દિવસે જો તેઓ વિચ્છિન્ન ન થાય તો તે દિવસથી શરૂ કરીને
૬। માસ સુધી જલવૃષ્ટિ કરે છે. “ ચત્તારિ ઉદગગઘ્ના ” ઉદક ગર્ભના આ
પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) હૈમક, (૨) અબ્રસંસ્તૃત, (૩)
શીતોષ્ણ અને (૪) પશ્ચરૂપિક

હૈમક જલગર્ભ તુષાર (ઝકળ) પડવા ૩૫ હોય છે. અબ્રસંસ્તૃત
જલગર્ભ મેઘોના આહમ્બર ૩૫ હોય છે. શીતોષ્ણ જલગર્ભ શીત અને ઉષ્ણ
બન્ને ૩૫ હોય છે જે પશ્ચરૂપિક જલગર્ભ છે તે ગર્જના વિદ્યુત, જલ, વાત
અને મેઘ આ પાંચ રૂપવાળો હોય છે.

तानेवोदकगर्भान् मासभेदेन प्रदर्शयति—‘ माहे उ हेमगा ’ इत्यादि
माघमासे हिमपातरूपा गर्भा भवन्ति १, एवं फाल्गुनमासे अभ्रसंस्तृता मेघा-
ङ्गमररूपा गर्भाः २, चैत्रमासे शीतरूपा उष्णरूपा वा गर्भा भवन्ति ३, वैशाख-
मासे च पञ्चरूपिकाः—गर्जित—विद्यु—ज्जलघात—मेघरूपाः पञ्चविधा अपि गर्भा
भवन्तीति ॥ २ ॥ इह मतान्तरमेवम् —

“ पौषे समार्गशीर्षे सन्ध्यारागोऽम्बुदाः सपरिवेपाः ।
नात्यर्थं मार्गशिरे शीतं पौषेऽति हिमपातः ॥१॥
माघे प्रबलो वायुस्तुपारकलुप ध्रुती रवि—शशाङ्को ।
अति शीतं सघनस्य च भानोरस्तोदयौ धन्यौ ॥२॥
फाल्गुनमासे रूक्षश्चण्डः पवनोऽभ्रसम्प्लवाः रिनग्धाः ।
परिवेपाश्चाऽसकलाः कपिलस्ताम्रो रविश्च शुभः । ३॥
पवनघनवृष्टियुक्ताश्चैत्रे गर्भाः शुभाः सपरिवेपाः ।
घनपवनसलिल विद्युत्स्तनितैश्च हिताय वैशाखे ॥४॥ इति ॥ ४० ॥
पूर्वमुदकगर्भा उक्ताः, सम्पति गर्भाधिकारान्मानुषीगर्भान्निरूपयितुमाह—
मूलम्—चत्वारि ऋणुस्ती गब्धा पण्णत्ता, तं जहा—इत्थि-
त्ताए १, पुरिसत्ताए २, णपुंसगत्ताए ३, विवत्ताए ४।
अप्यं सुक्कं बहुं ओयं इत्थी तत्थ पजायई ।
अप्यं ओयं बहुं सुक्कं पुरिसो तत्थ पजायई ॥ १ ॥

“ माहे उ हेमगा ’, इस श्लोक द्वारा सूत्रकारने हैमक आदि जल-
गर्भों को मासभेद से प्रकट किये हैं । हैमक जलगर्भ माघ मासमें
होते हैं । फाल्गुनमें अभ्रसंस्थित—अभ्रसंस्तृत जलगर्भ होते हैं । चैत्र
के महीनामें शीतोष्ण जलगर्भ होते हैं, और वैशाख में पञ्चरूपिक जल
गर्भ होते हैं इस विषयमें मतान्तर ऐसा है—“ पौषे समार्गशीर्षे ”
इत्यादि— ॥ सू० ४० ॥

“ माहे उ हेमगा ” आ श्लोक द्वारा सूत्रकारने हैमक आदि जलगर्भों
मासभेदनी अपेक्षासे प्रकट किये हैं—हैमक जलगर्भानुं अस्तित्व माघ (महा)
मासमां डोय्ये, श्रागष्य मासमां अभ्रसंस्तृत जलगर्भानुं, चैत्रमां शीतोष्ण
जलगर्भानुं अने वैशाखमां पञ्चरूपिक जलगर्भानुं अस्तित्व डोय्ये आ विष-
यमां अन्य मान्यता आ प्रभाष्ये छे. “ पौषे समार्गशीर्षे ” इत्यादि—सू. ४०

दोण्हंपि रत्तसुक्राणं तुल्लभावे णपुंसओ ।

इत्थी ओयसमाओगे बिंबं तत्थ पजायई ॥२॥ सू० ४१ ॥

छायो—चत्वारो मानुषीगर्भाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रीतया १, पुरुषतया २, नपुंसकतया ३, विम्बतया ४ ।

अल्पं शुक्रं बहु ओजः स्त्री तत्र प्रजायते ।

अल्पमोजो बहुशुक्रं पुरुषस्तत्र प्रजायते ।१।

द्वयोरपि रक्त-शुक्रयोस्तुल्यभावे नपुंसकः ।

स्त्र्योजः समायोगे विम्बं तत्र प्रजायते ॥२॥ सू० ४१ ॥

टीका—“ चत्वारि माणुस्सीगब्भा ” इत्यादि—

मनुष्याः—नार्या, गर्भाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रीतया—स्त्रीत्वेनैको गर्भः १, पुरुषतया २, नपुंसकतया ३, एवं विम्बतया—विम्बं—गर्भप्रतिविम्बं—गर्भाकृतिरातर्वपरिणामः, न तु गर्भ एव तस्य भावो विम्बता तया

गर्भ के अधिकारको लेकर अब सूत्रकार मानुषीगर्भोंकी निरूपणा करते हैं । “ चत्वारि माणुस्सी गब्भा ” इत्यादि—

टीकार्थ—मानुषी गर्भ चार प्रकारके कहे गयेहैं । जैसे—स्त्रीवाला गर्भ १, पुरुषवाला गर्भ २, नपुंसकवाला गर्भ ३ और विरघवाला गर्भ ४ । जिस गर्भ से कन्याकी उत्पत्ति होती है, वह स्त्रीवाला गर्भ है, जिस गर्भसे पुत्र की उत्पत्ति होती है वह पुरुषवाला गर्भ है । जिस गर्भ से नपुंसक की उत्पत्ति होती है वह नपुंसकवाला गर्भ है । और जो गर्भ की आकृति जैसा आतर्व परिणाम होता है, वह विम्बवाला गर्भ है, यह वास्तव में गर्भ नहीं होता है, खून ही इस प्रकार के पिण्डरूप में

गर्भनी प्रश्पथ्वा आसी रही छे, तेथी डवे सूत्रकार मानुषी गर्भोनी प्रश्पथ्वा करे छे “ चत्वारि माणुस्सी गब्भा ” इत्यादि—

टीकार्थ—मानुषी गर्भना नीचे प्रमाणे चार प्रकार कहे छे—(१) स्त्रीवाणो गर्भ, (२) पुरुषवाणो गर्भ, (३) नपुंसकवाणो गर्भ अने (४) विम्बवाणो गर्भ ।

जे गर्भमांथी कन्यानी उत्पत्ति थाय छे, ते गर्भने स्त्रीवाणो गर्भ कहे छे । जे गर्भमांथी पुत्रनी उत्पत्ति थाय छे, ते गर्भने पुरुषवाणो गर्भ कहे छे । जे गर्भमांथी नपुंसकनी उत्पत्ति थाय छे ते गर्भने नपुंसकवाणो गर्भ कहे छे । न्यारे आतर्व परिणाम गर्भना जेवे आकार मात्र ज धारण करे छे, त्यारे ते गर्भने विम्बवाणो गर्भ कहे छे । थरी रीते तो ते गर्भ ज डोतो नथी, पण रुधिर ज आ प्रकारना पिंड रूचे ओकहुं थय जाय छे,

उक्तञ्च—“ अवस्थितं लोहितमङ्गनाया,
 वातेन गर्भं ब्रुवतेऽनमिज्ञाः ।
 गर्भाऽऽकृतित्वात् कटुकोष्णतीक्ष्णैः,
 स्रुते पुनः केवल एव रक्ते ॥१॥
 गर्भं जडा भूतहृतं वदन्ती ”—त्यादि ।

अयमर्थः—अनमिज्ञाः जना अङ्गनाया उदरे वातेन=वातवशात् पिण्डरूपेण
 अवस्थितं शोणितं गर्भाकृतित्वात्=गर्भसमानाकारत्वाद् गर्भं ब्रुवते=कथयन्ति ।
 पुनः—कटुकोष्णतीक्ष्णैः=कटूष्णतीक्ष्णपदार्थसेवनेन रक्ते एव केवले स्रुते—निर्गते
 जडाः=अज्ञ पुरुषा गर्भं भूतहृतं वदन्तीति ।

गर्भस्य कारणभेदेन वैलक्षण्यं भवति, तत्पद्यद्वयेन प्रकटयति—

“ अप्यं सुकं वहुं ओयं, इत्थी तत्थ पजायई ।
 अप्यं ओयं वहुं सुकं, पुरिसो तत्थ पजायई ॥ १ ॥
 दोण्हं पि रत्तसुक्काणं तुल्लभावे णपुंसओ ।
 इत्थीओयसमाओगे विवं तत्थ पजायई ॥२॥

इकट्टा हो जाता है । कहा भी है—

“ अवस्थितं लोहितमङ्गनाया ” इत्यादि—

तात्पर्य ऐसा है कि गर्भशास्त्र को नहीं जाननेवाले मूढजन स्त्रीके
 पेटमें जो वायुके वशा से शोणित गर्भ के आकारमें अवस्थित हो जाता
 है, ऐसे गर्भ के जैसा आकारवाला होने के कारण गर्भ कहते हैं । जब
 वह रक्त कटु उष्ण तीक्ष्ण पदार्थके सेवनसे बाहर निकलता है, तो अज्ञानी
 लोग ऐसा कहने लगते हैं कि गर्भ का हरण भूतने कर लिया है ।

गर्भ में कारण के भेद से विलक्षणता होती है, इस बातको सूत्रकार
 “ अप्यं सुकं ” इत्यादि श्लोक द्वारा प्रकट करते हैं—

कधुं पधुं छे क्के “ अवस्थितं लोहितमङ्गनाया ” इत्यादि—

आ कथननो भावार्थ नीचे प्रभाषे छे—स्त्रीना पेटमां वायुना कारणे
 शोणित न्यारे गर्भना आकारमां—पिंडना आकारमां आवी न्यथ छे, त्यारे
 तेना गर्भना जेयो आकार होवाथी अणुध लोके तेने गर्भ मानी दे छे.
 न्यारे ते रक्त गरभ, कडवा आदि पदार्थना सेवनने लीधे अकार नीकणे छे
 त्यारे मूढ जनो जेधुं कडे छे के केई भूत प्रेतादिजे गर्भतुं हरणु कधुं छे.

शुक्रं-पुरुषसम्बन्धिरेतः, तद्वरं, तथा ओजः=स्त्रीसम्बन्धि रजो यदि बहु-शुक्रापेक्षयाऽधिकं भवति, तदा तत्र-गर्भाशये स्त्री-कन्या प्रजायते=उत्पद्यते । तथा-ओजोऽल्पं शुक्रं च बहु यदि भवति तत्र पुरुषः प्रजायते । तथा-द्वयोरपि रक्त-शुक्रयोस्तुत्यभावे=समानपरिमाणत्वे नपुंसकः प्रजायते, तथा-रुद्योजः समायोगे-स्त्रिया ओज रुद्योजस्तेन सह समायोगः-वायुप्रकोपवशेन ओजसः स्थिरीभवनलक्षणः रुद्योजः समायोगस्तस्मिन् सति तत्र-गर्भाशये विम्बं-मांसपिण्डरूपं प्रजायते । २। इहाऽपरैरुक्तम्—

“अत एव च शुक्रस्य बाहुल्याज्जायते पुमान् ।

रक्तस्य स्त्री, तयोः सारथे क्लीबः शुक्रार्तवे पुनः ॥१॥

वायुना बहुशो भिन्ने यथास्वं बह्वपत्यता ।

वियोनि विकृताकारा जायन्ते विकृतैर्मलैः ॥२॥” इति ।

“अप्यं सुककं बहुं ओयं” इनका भावार्थ ऐसा है—जब पुरुष का वीर्य अल्प होता है, और स्त्री का रज शुक्र की अपेक्षा अधिक होता है, तब गर्भाशय में कन्या उत्पन्न होती है । जब इससे विपरीत बात होनी है अर्थात् पुरुषका शुक्र-वीर्य अधिक होता है और स्त्री का रज शुक्र की अपेक्षा अल्प होता है, तब गर्भाशयमें पुत्र उत्पन्न होता है । जब शुक्र और रज ये दोनों परिमाण में समान होते हैं, तब गर्भाशयमें नपुंसक उत्पन्न होता है । और जब स्त्री का ओज वायु के प्रकोप के वश से स्थिर हो जाता है तब गर्भाशय में मांसपिण्डरूप विम्ब उत्पन्न होता है । इस विषय में अन्यजनों का ऐसा कथन है—

“अतएव च शुक्रस्य” इत्यादि—इनका भावपूर्वोक्त जैसा ही है, जब शुक्र और आर्तव वायु के वश से अनेक रूपमें भिन्न २ हो

गर्भा कारणा लेहने लीधे ७े विदक्षणा डाय छे ते डवे सूत्रकार प्रकट करे छे—“अप्यं सुककं बहुं ओयं”

न्यारे पुरुषधनुं वीर्यं अल्प डेय छे अने स्त्रीनुं रज वीर्यं करतां अधिक प्रमाणां डाय छे, त्यारे गर्भाशयमां कन्या उत्पन्न थाय छे. न्यारे आना करतां विपरीत वात अने छे—अपेट्ये के न्यारे पुरुषधनुं वीर्यं स्त्रीना रज करतां अधिक प्रमाणां डाय छे, त्यारे गर्भाशयमां पुत्र उत्पन्न थाय छे. न्यारे शुक्र अने रज अने सप्रमाणा डेय छे, त्यारे गर्भाशयमां नपुंसक पैदा थाय छे. न्यारे स्त्रीनुं ओज वायुना प्रकोपने कारणे स्थिर थय लय छे, त्यारे गर्भाशयमा मांसपिंड रुप विम्ब उत्पन्न थय लय छे. आ विषयने अनुदक्षिने अन्यजने अपुं कडे छे के—

તત્ત્વ રક્તસ્ય વાહુલ્યાત્ સ્ત્રીજાયત इत्यर्थः, शुक्ररजसि तमे सति क्लीब इत्यर्थः । २। ॥ सू० ४१ ॥

पूर्वं गर्भ उक्तः, सच्च प्राणिनामुत्पाद उच्यते, सचोत्पादाख्यपूर्वं विस्तरेण प्रतिपादित इति तत्स्वरूपाविशेषं निरूपयितुमाह--

मूलम्-उपायपुत्रवस्स णं चत्वारि चूलिका वत्थू पणत्ता । सू. ४२।
 छाया--उत्पादपूर्वस्य खलु चत्वारि चूलिकावस्तूनि प्रज्ञप्ताति ॥ सू० ४२ ॥
 टीका--' उपायपुत्रवस्स ' इत्यादि-उत्पादपूर्वस्य - उत्पादप्रतिपादकं पूर्वमुत्पादपूर्वं तच्च पूर्वाणां मध्ये प्रथमं पूर्वम्, तस्य खलु चूलिकावस्तूनि-चूलिकाः अग्राणि तद्वत्=आचारस्य प्रधानानि, तदूपाणि वस्तूनि-परिच्छेद-विशेषाः अध्ययनवत्-चूलिकाः वस्तूनि चत्वारि प्रज्ञप्तानि ॥ सू० ४२ ॥

जाते हैं, तब विकृत हुए मलों द्वारा गडबड योनि और आकारवाली अनेक सन्तान उत्पन्न होती है। यहाँ पर भी रक्त की अधिकता में कन्या उत्पन्न होती है और शुक्र रज की समानतामें नपुंसक सन्तान होता है, ऐसा ही प्रकट किया गया है ॥ सू० ४१ ॥

कथित यह गर्भ प्राणियों का उत्पाद रूप होता है-इसका कथन उत्पाद पूर्व में विस्तारसे किया गया है, इसीलिये अब सूत्रकार उस उत्पादपूर्वका स्वरूप कहते हैं। " उपायपुत्रवस्स णं " इत्यादि--

टीकार्थ-उत्पाद पूर्वकी चार चूलिका रूप वस्तुएँ कही गईं हैं, उत्पाद का प्रतिपादक जो पूर्व है वह उत्पाद पूर्व है, यह पूर्वों के बीच में प्रथम पूर्व

" अतएव च शुक्रस्य " आ कथनનો ભાવાર્થ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ છે. બ્યારે શુક્ર (વીર્ય) અને આર્તવ (રજ) વાયુને કારણે અનેક રૂપે ભિન્ન ભિન્ન થઈ જાય છે, ત્યારે વિકૃત થયેલા મળો દ્વારા વિચિત્ર યોની અને આકારવાળા અનેક સંતાનો ઉત્પન્ન થાય છે, ગાઠીં પણ વીર્યની અધિકતા હોય તો પુત્ર ઉત્પન્ન થાય છે, રજની અધિકતા હોય તો કન્યા ઉત્પન્ન થાય છે અને શુક્ર અને રજની સમાનતા હોય ત્યારે નપુંસક સંતાન પેદા થાય છે, એવું જ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૪૧ ॥

पूर्वोक्त गर्भं ज्ञेयानी उत्पत्तिमां कारणभूत अने છે. આ વિષયનું કથન ' ઉત્પાદપૂર્વમાં ' વિસ્તારપૂર્વક કરવામાં આવ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ઉત્પાદપૂર્વના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે

" उपायपुत्रवस्स णं चत्वारि " इत्यादि--

टीकार्थ-उत्पाद पूर्वनी चार चूलिका कही છે. ઉત્પાદનુ પ્રતિપાદન કરનાર જે પૂર્વ છે તેનું નામ ઉત્પાદપૂર્વ છે. બધાં પૂર્વોમાં તે પ્રથમ પૂર્વ છે. જેમ

उत्पादपूर्वे काव्यस्य समावेश इति तद्विभागानाह--

मूळम्-चउविहे कव्वे पणणत्ते, तं जहा-गज्जे १, पज्जे २, कथ्ये ३,
गेय ४ ॥ सू० ४३ ॥

छाया--चतुर्विधं काव्यं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-गद्यं १, पद्यं २, कथ्यं ३
गेयम् ४ ॥ ४३ ॥

टीका--' चउविहे कव्वे ' इत्यादि--काव्यं-कवयति-वर्णयतीति कविः,
तस्य भावः, कर्म वा काव्यं-ग्रन्थः, तच्चतुर्विधं प्रज्ञप्तं तद्यथा-गद्यम्-छन्दोबन्ध-
रहितं वाक्यम्, शस्त्रपरिज्ञाध्ययनं यथा १, तथा-पद्यं-छन्दोबद्धं वाक्यं, यथा-
विमुक्त्यध्ययनम् २, तथा-कथ्यं-कथायां साधु कथ्यं, यथा-ज्ञाताध्ययनम् ३,
है, अध्ययन की तरह इसकी चूलिकारूप वस्तुएँ-परिच्छेद विशेष
चार हैं ॥ सू० ४३ ॥

उत्पादपूर्वमें काव्य का समावेश होता है, इसलिये सूत्रकार काव्यके
विभागों को कहते हैं । " चउविहे कव्वे पणणत्ते " इत्यादि--

टीकार्थ--काव्य चार प्रकारका कहा गया है, जैसे-गद्य १, पद्य २, कथ्य ३
और गेय ४ । जो वर्णन करता है वह कवि है, कविका जो भाव या
कर्म है वह काव्य ग्रन्थ है, इनमें जो काव्य छन्दोबद्धसे रहित होता है वह
गद्यकाव्य है । जैसे-शस्त्रपरिज्ञाध्ययन १, जो वाक्य-काव्य छन्दोबद्ध
होता है वह पद्यकाव्य है । जैसे-भाचारंग सूत्र का आठमं विमुक्ति
नामका अध्ययन २, जो कथा में साधु होता है अर्थात् जिसमें कथाए २

ठोस पद्य ग्रन्थना प्रकारको (अध्ययन) होय छे तेम उत्पादपूर्वना पद्य के
अध्ययन जेयां परिच्छेदो (प्रकारको, विभागो) छे तेमने चूलिका कहे छे
उत्पादपूर्वनी जेवी चूलिका चार छे ॥ सूः ४३ ॥

उत्पाद पूर्वमां काव्येना पद्य समावेश थाय छे तेथी हवे सूत्रकार
काव्यना विभागोनुं कथन करे छे " चउविहे कव्वे पणणत्ते " इत्यादि--

टीकार्थ--काव्य चार प्रकारनां कथां छे--(१) गद्य, (२) पद्य, (३) कथ्य अने
(४) गेय. जे वर्णन करे छे तेने कवि कहे छे. कविने जे भाव अथवा तेनुं
जे कर्म ते काव्यग्रन्थ छे. जे काव्यो छन्दोबद्धथी रहित होय छे ते गद्य-
काव्य कहे छे, जेभके शस्त्रपरिज्ञाध्ययन. जे वाक्य अथवा काव्य छन्दोबद्ध
होय छे, तेने पद्यकाव्य कहे छे, जेभके आचारंग सूत्रनुं आठमं विमुक्त्य
ध्ययन जे काव्यमां (साहित्यमां) कथाजेना सदृभाव होय छे, तेने कथ्य
काव्य कहे छे, जेभके ज्ञाताध्ययन. जे काव्य गाँठ शक्य जेनुं होय छे तेने

તથા-ગેયં-ગાતું યોગ્યં ગેયમ્-‘ અધુવે આસમયમ્મિ ’ ઇતિ ઉપદરાગપ્રતિબદ્ધં
કાપિલીયાધ્યનમ્ ૪।

યદ્યપિ ગદ્યપદ્યયોર્દ્વયોરેવ કથ્ય-ગેયયોરપ્યન્તર્ભાવસ્તથાપિ પૃથક્ તદુભયો-
પાદાનં કથાગાનધર્મવિશિષ્ટતયા વિશેષ સૂચનાય ॥સૂ૦ ૪૩ ॥

પૂર્વં ગેયમુક્ત, તન્ન માપાસ્વભાવત્વાદ્દ્વન્ધમન્થાદિક્રમેણ લૌકિકદેશાદિ પૂર-
યતિ, તેન સમુદ્ઘાતો ભવતીતિ સમુદ્ઘાતં નિરૂપયિતુમાહ--

મૂલમ્—ગૌરઙ્ગયાણં ચત્તારિ સમુદ્ઘાયા પળ્ળત્તા, તં જહા--
વેયળાસમુદ્ઘાણ ૧, કસાયસમુદ્ઘાણ ૨, મારણાંતિયસમુદ્ઘાણ ૩,
વેઝઠિવિયસમુદ્ઘાણ ૪। ઇવં વાઝક્કાઙ્ગયાણવિ ॥ સૂ૦ ૪૪ ॥

છાયા—ગૌરયિક્કાણાં ચત્તારઃ સમુદ્ઘાતાઃ મજ્જાતા, તથા-વેદનાસમુ-
દ્ઘાતઃ ૧, કપાયસમુદ્ઘાતઃ ૨, મારણાન્તિકસમુદ્ઘાતઃ ૩, વૈક્રિયસમુદ્ઘાતઃ ૪।
ઇવ વાયુક્કાણિકાનામપિ ॥૪૪॥

રહતો હૈં વહ કથ્યકાવ્ય હૈ, જૈસે-જ્ઞાતાધ્યયન ૩, જો ગાનેકે યોગ્ય
હોતા હૈ વહ ગેય કાવ્ય હૈ, જૈસે-“ અધુવે અસામયમ્મિ ” ઇસે ધ્રુવ
પદરાગસે પ્રતિબદ્ધ કાપિલીય ઉત્તરાધ્યયન કા આઠમાં અધ્યયન હૈ ૪ ।

યદ્યપિ ગદ્ય ઓર પદ્ય કાવ્યો મેં હી કથ્ય ઓર ગેય કાવ્યોં કા મી
અન્નર્ભાવ હો જાતા હૈ । ફિર મી પૃથક્કરૂપસે જો ફનકા કથન કિયા
ગયા હૈ, વહ કથા ઓર ગાનધર્મ વિશિષ્ટ યે દોનોં સે રહિત હૈં,
ઇસી વિશેષ સૂચના કે લિયે કહા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪૩ ॥

ગેય કહા યહ ગેય ભાષાકા સ્વભાવ હોને સે દ્વન્ધ, મન્થાન આદિ
ક્રમ સે લોક કે ઇકદેશ આદિકો પૂરિત કરતા હૈ, ફલસે સમુદ્ઘાત
હોતા હૈ, અનઃ અવ સૂત્રકાર સમુદ્ઘાત કા નિરૂપણ કરતે હૈ--

ગેયકાવ્ય કહે છે, જેમકે “ અધુવે અસામયમ્મિ ” એના ધ્રુવપદ રાગથી પ્રતિ-
બદ્ધ કાપિલીય ઉત્તરાધ્યયનનું આઠમું અધ્યયન.

જે કે ગદ્ય અને પદ્ય કાવ્યોમા જ કથ્ય અને ગેય કાવ્યોનો પશુ સમા-
વેશ થઈ જાય છે, છતાં પણ અહીં તેમનું અલગ અલગ રૂપે પ્રતિપાદન
કરવાનું કારણ એ છે કે કથા અને ગાનધર્મથી સંહિત હોય તો તે બન્ને હીન
બની જાય છે, એવું સૂચન કરવા નિમિત્તે સૂત્રકારે તેમને અલગ અલગ
વિભાગ રૂપે પ્રકટ કર્યા છે. ॥ સૂ. ૪૩ ॥

ગેયનું નિરૂપણ કર્યું. તે ગેય ભાષાસ્વભાવ હોવાથી ઠંડ, મન્થાન આદિ
ક્રમે લોકના એકદેશ આદિને પૂરિત કરે છે, તેના દ્વારા સમુદ્ઘાત થાય છે.
તેથી હવે સૂત્રકાર સમુદ્ઘાતનું નિરૂપણ કરે છે.

टीका—गेरइयाणं चत्तारि ' इत्यादि—नैरयिकाणां—नारकाणां समुद्घाताः यथास्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः सप्तभिः कारणैः सम्—सम्यग् उद्घातनानि—स्वभावादन्यभावेन परिणमनानि समुद्घाताः=शरीराद्बहिर्जीवप्रदेश प्रक्षेपरूपाः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तथा—वेदनासमुद्घातः—वेदनया समुद्घातः १, तथा—कषायसमुद्घातः कषायैः समुद्घातः २, तथा—मारणान्तिक समुद्घातः—मरणमेवान्तो मरणान्तः, तत्र भवो मारणान्तिकः स एव समुद्घातस्तथा ३, तथा—वैक्रियसमुद्घातः—वैक्रियाय समुद्घातो वैक्रियसमुद्घातः ४ ॥४४॥

वैक्रियसमुद्घातो हि लब्धिरूप इति लब्धिप्रस्तावाद्द्विशिष्टश्रुतलब्धिसम्प-

“ गेरइयाणं चत्तारि समुद्घाया ” इत्यादि ।

टीकार्थ—नैरयिकोर्मे चार समुद्घात कहे गयेहैं, जैसे—वेदना समुद्घात १ कषाय समुद्घात २, मारणान्तिकसमुद्घात ३ और वैक्रियसमुद्घात ४ । यथा स्वभाव से स्थित आत्मप्रदेशों का वेदना आदि सात कारणों से जो अन्य स्वभावसे परिणमन होता है वह समुद्घात है । इसका तात्पर्य ऐसा है कि शरीरसे बाहर जीव प्रदेशों का जो प्रक्षेप (निकालना) होता है वह समुद्घात है, इसमें वेदना से जो समुद्घात होता है वह वेदना समुद्घात है १, कषायों से जो समुद्घात होता है वह कषाय समुद्घात है २, मरणरूप अन्त समय में जो समुद्घात होता है वह मारणान्तिक समुद्घात है ३, एवं विक्रिया (अनेक आकार बनाना) के लिये जो समुद्घात होता है वह वैक्रियसमुद्घात है ॥ सू० ४४ ॥

यह वैक्रियसमुद्घात लब्धिरूप होता है, अतः लब्धि के सम्बन्ध

“ गेरइयाण चत्तारि समुद्घाया ” इत्यादि—

टीकार्थ—नारकोर्मां चार समुद्घातनो सहभाव डोय छे—(१) वेदना समुद्घात, (२) कषाय समुद्घात, (३) मारणान्तिक समुद्घात अने (४) वैक्रिय समुद्घात यथा स्वभावे रडेला आत्मप्रदेशोनु वेदना आदि सात कारणोथी के अन्य स्वभाव इपे परिणमन थाय छे तेनु नाम समुद्घात छे. अटले के शरीरनी अहार अत्रप्रदेशोनी के प्रक्षेप थाय छे तेनु नाम समुद्घात छे तेमां वेदनाथी के समुद्घात थाय छे तेने वेदना समुद्घात कडे छे कषायोथी के समुद्घात थाय छे तेने कषाय समुद्घात कडे छे मरण इप अन्त समयमां के समुद्घात थाय छे तेने मारणान्तिकसमुद्घात कडे छे विक्रियाने भाटे के समुद्घात थाय छे तेने वैक्रिय समुद्घात कडे छे ॥ सू ४४ ॥

आ वैक्रिय समुद्घात लब्धिइय डोय छे, आ लब्धिना संबंधने अनु-लक्षिने हवे सूत्रकार विशिष्ट श्रुतलब्धिथी युक्त अवेनुं निरूपण करे छे.

ज्ञान निरूपयितुं द्विमन्त्रीमाह—

मूलम्—अरिहओ णं अरिट्टनेमिस्स चत्तारि सया चोदसपुवी-
णमजिणाणं जिणसंकासाणं सवक्खरसन्निवाईणं जिणो इव अवि-
तहवागरमाणाणं उक्कोसिया अउदसपुविसंपया होत्था ॥सू० ४५ ॥

छाया—अर्हतः खलु अरिष्टनेयेः चत्वारिशतानि चतुर्दशपूर्विणामजिनानां
जिनसकाशानां सर्वाक्षरसन्निपातिनां जिनानामिव अविनयं व्याकुर्वता मुत्कुष्टा
चतुर्दशपूर्विसंपद् वभूवुः ॥ ४५ ॥

टीका—“ अरिहओ णं ” इत्यादि—अर्हतोऽरिष्टनेयेः चतुर्दशपूर्विणां-
चतुर्दशपूर्वधराणाम् अजिनानाम् असर्वज्ञत्वाज्जिनभिन्नानां पुनर्जिनसंकाशानां-
जिनतुल्यानाम् अविसंवादिचचनत्वाद् यथा पृष्टनिर्वक्तृत्वाच्च सर्वाक्षरसन्नि-
पातिनां-सर्वाक्षरसंयोगवेदिनां जिनानां-सर्वज्ञानामिव-अदितथं-यथार्थं व्याकु-
र्वतां-प्ररूपयतां चत्वारि शतानि, वभूवुः तानि उक्कुष्टा चतुर्दशपूर्विं संपत्-
चतुर्दशपूर्विरूप-सम्पद्रूपेण वभूवुः ॥सू० ४५॥

को लेकर अब सूत्रकार विशिष्ट श्रुतलब्धि से युक्त जीवों का निरूपण
करते हैं - “ अरिहओ णं अरिट्टनेमिस्स ” इत्यादि—

टीकार्थ-अर्हन्त अरिष्टनेमिके ४०० चारसौ चतुर्दश पूर्वधर थे, ये चतुर्दश
पूर्वधर अजिन थे-असर्वज्ञ होनेसे जिन से भिन्न थे, जिनरूप नहीं थे, किन्तु
अविसंवादी वचनवाले होने से और प्रश्न के अनुसार उत्तर देनेवाले
होने से जिनके जैसे थे । तथा सर्वाक्षर संयोगोंके वेत्ता थे, अर्थात् किस
अर्थके मिलाने से कौन अर्थ होता है इसका वेत्ताथे, जिन सर्वज्ञ की
तरह यथार्थ प्ररूपणा करनेवाले थे । ये उनके चतुर्दशपूर्विरूप सम्पत्
रूप से थे ॥ सू० ४५ ॥

“ अरिहओ णं अरिट्टनेमिस्स ” इत्यादि—

टीकार्थ-अर्हत अरिष्ट नेमिना ४०० चारसौ चौद पूर्वधर होता ते चौद पूर्वधर
शिष्यो अजिन होता, अष्टदे के तेओ सर्वज्ञ नहिं होवाने लीधे जिनधी भिन्न होता
अष्टदे के तेओ जिनइय न होता परन्तु तेओ असंवादी वचनवाणा होवाने
लीधे तथा प्रश्नने अनुइय उत्तर देनेारा होवाने लीधे जिनना जेवा होता
तेओ सर्वाक्षर संयोगोना वेत्ता होता अने सर्वज्ञ जिनना जेवी यथार्थ प्ररूपणा
करनारा होता. तेमना ते शिष्यो चौद पूर्वइय संपत्थी युक्त होता ॥ सू ४५ ॥

पूर्वमरिष्टनेमेश्वतुर्दशपूर्वधराः परिगणिता उक्ताः, सम्प्रति भगवतो महावीरस्य तान् प्रतिपादयितुमाह—

मूलम्—समणस्स णं भगवओ महावीरस्स चत्तारि सया-
वाइणं सदेवमणुयासुराए परिसाए अपराजियाणं उक्कोसियावाइ-
संपया होत्था ॥ सू० ४६ ॥

छाया—श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चत्वारि शतानि वादिनां सदेवमनुजासुराणां परिपदि अपराजितानामुत्कृष्टा वादिसम्पद् बभूवुः॥४६॥

टीका—‘समणस्स णं भगवओ’ इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं सदेवमनुजासुराणं—देवाश्च मनुजाश्चासुराश्चैवामितरेतरयोगे देवमनुजासुरास्तैः सह देवमनुजासुराः, तस्यां तथाभूतायां परिपदि अपराजितानां वादिनां चत्वारि शतानि बभूवुः तान्येव उत्कृष्टा वादिसम्पद् बभूवुः ॥सू० ४६॥

पूर्वं चतुर्दशपूर्विण उक्ताः, तेच कल्पेषु सम्भवन्तीति कल्पाग्निरूपयितुमाह—

मूलम्—हेट्ठिहा चत्तारि कप्पा अच्चच्चंदसंठाणसंठिया पणत्ता,
तं जहा—सोहम्मो १, ईसाणो २, सणंकूमारे ३, माहिंदे ४।

मज्झिहा चत्तारि कप्पा पडिपुण्णचंदसंठाणसंठिया पणत्ता,
तं जहा—बंभलोगे १, लंतए २, महासुक्के ३, सहस्सारे ४।

इस तरह अरिष्टनेमिके-चतुर्दश पूर्वधारियों की संख्या प्रकट कर अब सूत्रकार भगवान महावीर के चतुर्दशपूर्वधारियों की संख्या प्रकट करते हैं— “समणस्स णं भगवओ महावीरस्स” इत्यादि—

टीकार्थ श्रमण भगवान महावीर की देव मनुष्य एवं असुरोंसे युक्त सभामें ४०० चारसौ अपराजित वादियों की उत्कृष्टवादि सम्पत्ति थीं। सू० ४६।

आ रीते अरिष्टनेमिना यौह पूर्वधारीओनी सञ्ज्या प्रकट करीने हुवे सूत्रकार महावीर प्रभुना यौह पूर्वधारीओनी सञ्ज्या प्रकट करे छे

“समणस्स णं भगवओ महावीरस्स” इत्यादि—

टीकार्थ—श्रमणु लगवान महावीरनी देव, असुर अने मनुष्योथी युक्तसभामां अपराजित वादीओनी उत्कृष्ट संपत्ति ४०० चारसौनी हुती ओटवे के तेमना ४०० चारसौ शिष्यो ओवी श्रुतलब्धि संपन्न हुता के तेमने वादविवादमां पराजित करवाने केई समर्थ न हुतुं ॥ सू. ४६ ॥

उवरिह्ला चत्तारि कप्पा अर्द्धचंद्रसंठाणंठिया पण्णत्ता, तं
जहा—आणण १, पाणण २, आरण्ण ३, अच्चुण ४ ॥ सू० ४७॥

छाया—अधस्तनाश्रत्वारः कल्पा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः,
तद्यथा—सौधर्मः १, ईशानः २, सनत्कुमारः ३. माहेन्द्रः ४।

मध्यमाश्रत्वारः कल्पाः परिपूर्णचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—
ब्रह्मलोकः १, लान्तकः २, महाशुकः ३, सहस्रारः ४।

उपरितनाश्रत्वार. कल्पा अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आनतः
१, प्राणतः २, आरणः ३, अच्च्युतः ४ ॥ सू० ४७॥

टीका—“ हेट्टिल्ला ” इत्यादि—कल्पसूत्रचतुष्टयं सुगमम्, नवरम्—
अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थिताः—अर्द्धचन्द्राकारस्थिताः सौधर्माद्यश्रत्वारः कल्पाः
सन्ति पूर्वपश्चिमतो मध्यभागे सीमा सत्त्वादिति । सू० ४७॥

चतुर्दश पूर्वधारी कहे ये कल्पोंमें उत्पन्न होते हैं । अतः अध सूत्र-
कार कल्पों की प्ररूपणा करते हैं—“ हेट्टिल्ला चत्तारि कप्पा ” इत्यादि—

टीकार्थ—नीचेके ये चार कल्प सौधर्म १, ईशान २, सनत्कुमार ३ और
माहेन्द्र ४ । अर्द्धचन्द्र के आकार जैसे—आकारवाले हैं, क्योंकि इनकी
सीमाका सद्भाव पूर्वसे पश्चिम तक मध्यभाग में है, इस तरह से
इनका आकार अर्द्धचन्द्रमा के आकार जैसा हो जाता है ।

“ मज्झिल्ला चत्तारि ” इत्यादि—मध्यके चार कल्प परिपूर्ण चन्द्रमा
के आकार जैसे—आकारवाले हैं, उनके नाम इस प्रकारसे हैं । ब्रह्म-
लोक १, लान्तक २, महाशुक ३, और सहस्रार ४ ।

“ उपरिल्ला चत्तारि ” इत्यादि—उपरितल चार कल्प अर्ध चन्द्र-

श्री ६ पूर्वधारिणी कल्पोंमां उत्पन्न थाय छे, तेथी छवे सूत्रकार कल्पोंनी
प्ररूपणा करे छे. “ हेट्टिल्ला चत्तारि कप्पा ” इत्यादि—

टीकार्थ—सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार अने माहेन्द्र, आ नीचेना चार कल्पों
अर्ध चन्द्राकारना छे, कारण्णु के तेमनी सीमानो सद्भाव पूर्वथी पश्चिम सुधी
मध्यभागमां छे. आ रीते तेमनो आकार अर्धचन्द्रमाना आकार जेवे छे.

“ मज्झिल्ला चत्तारि ” इत्यादि—मध्यना चार कल्पों पूर्ण चन्द्रमाना
जेवा आकारवाणां छे ते चार कल्पोंनां नाम आ प्रमाणे छे. ब्रह्मलोक,
लान्तक, महाशुक, अने सहस्रार.

“ उपरिल्ला चत्तारि ” इत्यादि—सूथी उपरना चार कल्पों अर्ध चन्द्र-

પૂર્વં કલ્પા ઉક્તાઃ, તેષુ દેવલોકાઃ ક્ષેત્રભૂતા इति ક્ષેત્રપ્રસ્તાવાત્સમુદ્રરૂપક્ષેત્રં નિરૂપયિતુમાહ--

મૂલમ્--ચત્તારિ સમુદ્ધા પત્તેયરસા પ્ષ્ણક્ષા, તં જહા-લવ-
ણોદે ૧, વારુણોદે ૨, ક્ષીરોદે ૩, ઘૃતોદે ૪ ॥ સૂ૦ ૪૮ ॥

હાયા--ચત્તારઃ સમુદ્ધાઃ પ્રત્યેકરસાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા-લવણોદઃ ૧, વારુ-
ણોદઃ ૨, ક્ષીરોદઃ ૩, ઘૃતોદઃ ૪ ॥ ૪૮ ॥

ટીકા--“ ચત્તારિ સમુદ્ધા ” इत्यादि--ચત્તારઃ સમુદ્ધાઃ પ્રત્યેકરસાઃ-
મિન્નરસસમ્પન્નાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા-લવણોદઃ-લવણ-ક્ષારમુદકં-જલં યસ્મિન્
યસ્ય વા સ લવણોદઃ, લવણરસોદકત્વાત્ ૧, તથા-વારુણોદઃ-વારુણી મદિરા-
વિશેષ-, તદ્વદુદકં યત્ર સ તથા ૨, ક્ષીરોદઃ-ક્ષીરમિત્રોદકં યત્ર સ તથા ૩,
માકે આકાર જૈસે આકારવાલે હૈં, ઉનકે નામ યે હૈં-આનત ૧, પ્રાણત, ૨
આરણ ૩ ઓર અચ્યુત ૪ ॥ સૂ૦ ૪૭ ॥

ઉક્ત યે કલ્પ દેવલોક રૂપ હોતે હૈં ઓર દેવલોક ક્ષેત્રભૂત હૈં ।
અતઃ ક્ષેત્રકે સમ્બન્ધસે અવ સૂત્રકાર સમુદ્રરૂપ ક્ષેત્રકા નિરૂપણ કરતે હૈં
ટીકાર્થ-“ ચત્તારિ સમુદ્ધા પત્તેયરસા ” इत्यादि--

ચાર સમુદ્ર મિન્ન મિન્ન રસવાલે કહે ગયે હૈં, ઉનકે નામ યે હૈં--
લવણોદ ૧, વારુણોદ ૨, ક્ષીરોદ ૩, ઓર ઘૃતોદ ૪ । લવણ સમુદ્રકા
જલ જૈસે લવણ કા રસ હોતા હૈં વૈસા હૈં । વારુણોદકા જલ મદિરાકા
જૈસા રસ હોતા હૈં વૈસા હૈં । અર્થાત્ મદિરા તુલ્ય જલવાલા હૈં । ક્ષીરોદ
કા જલ ક્ષીરકે જૈસા રસવાલા હૈં-અર્થાત્ ક્ષીરકે જૈસા પાનીવાલા હૈં

માના જેવા આકારવાળા છે તેમના નામ આ પ્રમાણે છે--આનત, પ્રાણત,
આરણ અને અચ્યુત. ॥ સૂ. ૪૭ ॥

પૂર્વોક્ત કલ્પ દેવલોક રૂપ હોય છે અને દેવલોક ક્ષેત્રભૂત હોય છે, તેથી
હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રના સંબંધને લીધે સમુદ્રરૂપ ક્ષેત્રનું નિરૂપણ કરે છે

ટીકાર્થ-“ ચત્તારિ સમુદ્ધા પ્ષ્ણક્ષા ” इत्यादि--

ચાર સમુદ્ર જુદા જુદા રસવાળા કહ્યા છે, તે ચાર સમુદ્રોનાં નામ નીચે
પ્રમાણે છે--(૧) લવણોદ, (૨) વારુણોદ, (૩) ક્ષીરોદ અને (૪) ઘૃતોદ.
લવણ સમુદ્રના જળનો સ્વાદ લવણ-મીઠાના સ્વાદ જેવો હોય છે વારુણોદના
જળનો સ્વાદ મદિરાના સ્વાદ જેવો હોય છે. એટલે કે તે મદિરા સમાન
જળવાળો સમુદ્ર છે. ક્ષીરોદનું જળ ક્ષીરના (દૂધના) જેવું હોય છે, અને

તથા-ઘૃતોદઃ-ઘૃતમિત્રોદકં યત્ર સ તથા ઠ। કાલોદ-પુષ્કરોદ-સ્વયમ્ભૂરમણા-
સ્થ્યાસ્ત્રયઃ સમુદ્રા ઉદકરસાઃ, શેષાસ્તુ હૃષ્ણુરસા ઇતિ, ઉક્તઞ્ચ--

“ વારુણિવરસ્વીરવરો ઘયવરલ્લવણોય ઠૌતિ પત્તેયા ।

કાલો પુષ્કરુદદધી સયંશ્ચુરમણો ય ઉદગરસા ॥૧॥”

છાયા-“ વારુણીવર-ક્ષીરવરી ઘૃતવર-લ્લવણૌ ચ મવન્તિ પ્રત્યેકમ્ ।

કાલઃ પુષ્કરુદદધિઃ સ્વયમ્ભૂરમણશ્ચ ઉદકરસાઃ ॥૧॥ ૪૮॥

પૂર્વે સમુદ્રા ઉક્તાઃ, તે ચ સાડ્ડવર્ત્તા મવન્તીત્યાવર્તાન્ દષ્ટાન્તાન્ પ્રદર્શયંસ્ત
દાષ્ટાન્તિકકૃપાયાનિરુપયિતું દ્વિસૂત્રીમાહ--

મૂલમ્-ચત્તારિ આવૃત્તા પ્પગત્તા, તં જહા-સ્વરાવત્તે ૧, ઉન્ન-
યાવત્તે ૨, ગૂઢાવત્તે ૩, આમિસાવત્તે ૪। એવામેવ ચત્તારિ કસાયા
પ્પગત્તા, તં જહા-સ્વરાવત્તસમાળે કોહે ૧, ઉન્નયાવત્તસમાળે માળે
૨, ગૂઢાવત્તસમાળા માયા ૩, આમિસાવત્તસમાળે લોહે ૪, સ્વરા-
વત્તસમાળાં કોહં અણુપ્પવિટ્ટે જીવે કાલં કરેહ્ જેરહ્ણસુ ઉવવજ્જહ્,
ઉન્નયાવત્તસમાળં માળં એવં એવ ગૂઢાવત્તસમાળં માયં, એવં એવ
આમિસાવત્તસમાળં લોહમણુપ્પવિટ્ટે જીવે કાલં કરેહ્ નેરહ્ણસુ
ઉવવજ્જેહ્ ॥ સૂ૦ ૪૯ ॥

છાયા--ચત્વાર આવર્તાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્ધથા-સ્વરાવર્તઃ ૧, ઉન્નતાડ્ડવર્તઃ ૨,
ગૂઢાવર્તઃ ૩, આધિયાડ્ડવર્તઃ ૪। એવામેવ ચત્વારઃ કૃપાયાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્ધથા-

ઔર ઘૃતોદ સમુદ્રકા જલ ઘૃત કે જૈસે રસવાલા હૈ
અર્થાત્ ઘૃત જૈસે પાનીવાલા હૈ ' કાલોદ, પુષ્કરોદ
ઔર સ્વયંભૂરમણ મે ત્રીન સમુદ્ર પાનીકા જૈસા રસ હોતા હૈ વૈસે રસ-
યુક્ત પાનીવાલે હૈ ઔર ઘાકીકે સ્વય સમુદ્ર હૃષ્ણુ કે જૈસે રસસે યુક્ત
પાનીવાલે હૈ । કહામી હૈ “ વારુણિવરસ્વીરવરો ” ઇત્યાદિ ॥ સૂ૦ ૪૮ ॥

ઘૃતોદ સમુદ્રવું જળ ધીના જેવા રસવાળું હોય છે-એટલે કે ધીના જેવા
પાણીથી તે સમુદ્ર ભરપૂર છે કાલોદ, પુષ્કરોદ અને સ્વયંભૂરમણ, આ ત્રણ
સમુદ્રો જેવો પાણીનો રસ હોય છે એવા રસયુક્ત પાણીવાળા છે બાકીના
બધા સમુદ્રો ધલુ (શેરડી) ના જેવા રસથી યુક્ત પાણીવાળા છે કહ્યું પણ
છે કે “ વારુણિવરસ્વીરવરો ” ઇત્યાદિ. ॥ સૂ. ૪૮ ॥

खराऽऽवर्तसमानः क्रोधः १, उन्नताऽऽवर्तसमानो मानः २, गूढावर्तसमाना माया ३, आमिषाऽऽवर्तसमानो लोभः ४।

खराऽऽवर्तसमान क्रोधमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकैषु उपपद्यते १, उन्नताऽऽवर्तसमान मानम् २, एवमेव गूढाऽऽवर्तसमानां मायासु ३, एवमेवा-
मिषाऽऽवर्तसमानं लोभमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकेषूपपद्यते ४॥४९॥

टीका--' चत्वारि आवत्ता ' इत्यादि--आवर्ता-जलभ्रमाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-खरावर्तः-खरः-प्रबलवेगयुक्ततया निष्ठुरः, स चासावावर्तः-आवर्तनं

कहे गये ये समुद्र आवर्त सहित होते हैं, अतः सूत्रकार दृष्टान्त-
भूत भावनों को दिखलाते हुए दार्ष्टान्तिक रूप कषायों की निरूपणा
करते हैं। " चत्वारि आवत्ता पणत्ता " इत्यादि--

सुप्रार्थ-आवर्त चार प्रकारके कहे गये हैं। जैसे-खरावर्त १, उन्नतावर्त २,
गूढावर्त ३ और आमिषावर्त ४। इसी प्रकार से चार कषायें कही गई
हैं, जैसे-खरावर्तसमान क्रोध १, उन्नतावर्तसमान मान २, गूढावर्त-
समान माया ३ और आमिषावर्तसमान लोभ ४।

खरावर्तसमान क्रोध में अनुप्रविष्ट हुआ जीव यदि कालगन होता
है, तो वह नैरयिकों में उत्पन्न होना है। इसी तरहसे उन्नतावर्तसमान
मानमें गूढावर्तसमान मायामें और आमिषावर्तसमान लोभमें अनुप्रविष्ट
हुआ जीव यदि कालगन होता है, तो वह भी नैरयिकोंमें उत्पन्न होता है।

उपर्युक्त समुद्रो आवर्त सहित डोय छे, तेथी डवे सूत्रकार दृष्टान्तभूत
आवर्तोंने प्रकट करीने दार्ष्टान्तिक रूप कषायोतुं निरूपणु करे छे.

सुप्रार्थ--" चत्वारि आवत्ता पणत्ता " इत्यादि--

आवर्त चार प्रकारना कहे छे--(१) खरावर्त, (२) उन्नतावर्त, (३)
गूढावर्त, अने (४) आमिषावर्त. ए ए प्रमाणे कषायोना पणु चार प्रकार
कहे छे--(१) खरावर्तसमान क्रोध, (२) उन्नतावर्तसमान मान, (३) गूढा-
वर्तसमान माया अने (४) आमिषावर्तसमान लोभ.

खरावर्तसमान क्रोधथी युक्त अनेदो एव ने भरणु पाभे छे, तो नैर
यिकेमां उत्पन्न थाय छे ए ए प्रमाणे उन्नतावर्तसमान मानमां, गूढावर्त-
समान मायामां अने आमिषावर्तसमान लोभमां अनुप्रविष्ट थयेदो एव ने
क्षणधर्म पाभी जय छे, तो ते पणु नैरयिकेमां ए उत्पन्न थाय छे.

खराऽऽवर्तः, आवर्तोऽत्र समुद्रनद्यादेश्चक्रविशेषाणां वा बोध्यः १, तथा-
उन्नताऽऽवर्तः-उन्नतः-उच्चः स चासावर्त उन्नताऽऽवर्तः, स च गिरिशिखरा-
ऽऽरोहणमार्गस्य, यद्वा-वात्यया भवतीति ज्ञेयम् २, तथा-गूढाऽऽवर्तः-गूढः-
प्रच्छन्नः, स चासावर्तश्च गूढावर्तः, सच कन्दुकडोरकस्य वा दारुग्रन्ध्यादेर्बोध्यः
३, तथा-आमिषाऽऽवर्तः-आमिषं-मांसं तदर्थमावर्त आमिषावर्त, सच श्येनादि
पक्षिणां भवति ४।

टीकार्थ-जलमें जो अंवर पड़ती है उनका नाम आवर्त है, ये आवर्त जो
खरावर्त आदि के अंदसे चार प्रकारकी कही गई है, उनका भाव ऐसा
है कि जल जब प्रबलवेग से युक्त होता है, तब उसमें जो बहुत बड़ा
आवर्त पड़ता है कि जिसमें कैसा ही चतुर तैरनेवाला भी क्यों
न हो, यदि फस जाता है तो उसकी भी कुशलता
बाहर आने के लिये समर्थ नहीं होती है, ऐसा वह
आवर्त निष्ठुर होता है। यह आवर्त समुद्र नदी आदिके चक्रवि-
शेषोंका होता है तथा-जो उन्नतावर्त होता है, वह गिरिके शिखरके
आरोहणवाले मार्गका होता है, अथवा-जब वायु चलता है तब धूल
वगैरह की गोलाकार रूपमें जो ऊंचे को उडान होती है, जिसे चक्र-
वात या भभूला कहा जाता है वह उन्नतावर्त है। जो आवर्त प्रच्छन्न
होता है, वह गूढावर्त है, यह गूढावर्त या तो गेंद के डोरा का होता है
या दारु लकड़ी की गांठ आदि के होता है। मांस प्राप्त करनेके लिये जो
आवर्त होता है वह आमिषावर्त है, यह मांसावर्त श्येन घाज आदि
पक्षियों के होता है ४।

टीकार्थ-पाणीमांजे लभरीओ (वमणो) पेढा थाय छे तेने आवर्त कडे छे डवे
भरावर्त आदि थार लेहोने लावार्थं समभवामां आवे छे न्यारे पाणीने वेग
अति प्रणज डाय छे त्यारे पाणीमां वमणो ठे छे न्यां आ प्रकारनी
वमणो ठे त्यां पाणी प्रणज वेगथी अक्षर अक्षर करे छे. ते न्यथाओ अतुरमां
अतुर तरवैथे पण तरी शकते नथी. आ प्रकारना वमणमां इसायेलेो माणुस
के छोडी गडार नीकणी शकता नथी, ओवेो ते आवर्त निष्ठुर डाय छे. आ
भरावर्तं समुद्र नदीआदिना नणमां थाय छे गिरिना शिभरना आरोडणुवाणा
मार्ग पर उन्नतावर्तनेो सदभाव डाय छे अथवा न्यारे पूण पवन थाय छे
त्यारे धूण, पणु-पान आदि अक्षर अक्षर करतां करतां आगण वधे छे तेने
अकवात, वटोणीओ अथवा उमरी कडे छे, आ प्रकारना आवर्तने उन्नतावर्त
कडे छे. ने आवर्त प्रच्छन्न डाय छे तेने गूढावर्त कडे छे ते आवर्त दडाना
होरनेो अथवा लाकडानी गांठ आदिनेो डाय छे मांस प्राप्त करवाने माटे ने
आवर्त डाय छे तेने आमिषावर्त कडे छे. आ प्रकारनेो आवर्तं भाज,
समडी आदि शिकारी पक्षीओनी थांयनेो डाय छे

‘ एवामेव चत्तारि कसाया ’ इत्यादि—एवमेव—उक्ताऽऽवर्तवदेव क्रोधादयः कषायाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः—तत्तुल्यत्वेनोक्ताः, तद्यथा—क्रोधः कषायः खराऽऽवर्तसमानः—क्रोधे खराऽऽवर्तसाम्यं च परापकारकरणकठोरत्वेन बोध्यम्?, तथा—मान उन्नताऽऽवर्तसमानः—माने तत्साम्यं । पत्रतृणादि वस्तुन इव मनस उन्नतत्वस्थापकत्वेन २, तथा—माया गूढावर्तसमाना—मायायां तत्साम्यं च परमदुर्लक्ष्यत्वेन ३, तथा—लोभ आमिषाऽऽवर्तसमानः, तत्साम्यं च अनर्थ परम्परापातसमाक्रान्तेऽपि जने पुनः पुनः पतनकारणत्वेन । खराऽऽवर्तादिसाम्यं क्रोधादीनां प्रोक्तं नतु सामान्यानामिति,

“ एवमेव चत्तारि कसाया ” इसी प्रकारसे क्रोधादिक चार कषायें कही गई हैं । क्रोधकषाय खरावर्तसमान होती है, क्रोधकषायमें खरावर्त की समानता परके अपकार करने से और कठोर होनेसे कही गई जाननी चाहिये । मान उन्नतावर्त के समान होता है, सो मानमें उन्नतावर्त की समानता पत्र तृणादि वस्तु की तरह मनको उन्नतरूपसे स्थापक होनेके कारण कही गई है । मायामें जो गूढावर्त समानता कही है वह उसे परमदुर्लक्ष्य होने के कारण कही गई है, और जो लोभमें आमिषावर्त समानता कही है वह अनर्थकी परम्पराके आने पर भी पुनः पुनः उसीमें गिरानेके कारण से कही गई है, यह सामान्य क्रोधादिकों में नहीं कही है, किन्तु जो उत्कृष्ट क्रोधादिक हैं उनमें ही कही गई है ऐसा समझना चाहिये ।

“ एवामेव चत्तारि कसाया ” એ જ પ્રકરના ક્રોધાદિક ચાર કષયોને ખતાવ્યા છે ક્રોધકષાય ખરાવર્ત સમાન હોય છે ક્રોધકષાયને ખરાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે તે ખરાવર્ત સમાન કઠોર અને અપકાર કરનારો હોય છે માનકષાયને ઉન્નતાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે જેમ ઉન્નતાવર્ત પત્ર, તૃણાદિને ઉન્નત સ્થાને ચડાવે છે, તેમ આ કષાય પણ મનનું ઉન્નત રૂપે સ્થાપક હોવાથી તેને ઉન્નતાવર્ત સમાન કહ્યું છે માનથી યુક્ત બનેલો જીવ અભિમાનથી યુક્ત મનવાળો બને છે માયા કષયને ગૂઢાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે માયા એ પરમ દુર્લક્ષ્ય હોય છે માયાયુક્ત માણસના મનોભાવને પારખવાનું કાર્ય દુષ્કર હોય છે. લોભને આમિષાવર્ત સમાન કહેવાનું કારણ એ છે કે અનર્થની પરમ્પરા આવવા છતાં પણ જીવ ફરી ફરીને લોભકષયમાં પડ્યા જ કરે છે, તેને છોડવાને સમર્થ બની શકતો નથી ક્રોધાદિકોમાં જે ખરાવર્ત આદિ સાથે સમાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે, તે સામાન્ય ક્રોધાદિકોમાં અકલ્પ કરવાની નથી, પરંતુ ઉત્કૃષ્ટ ક્રોધાદિકોમાં જ આ સમાનતા સમજવી જોઈએ.

ક્રમેણ સ્વરાધ્યવર્તસમાનક્રોધાદિરૂપાયાનુપ્રવિષ્ટનીવસ્ય પરિણામમાહ—
 ' સ્વરાવત્તસમાણ ' इत्यादि—स्वराध्यवर्तसमान—क्रोधादिचतुष्टयमनुप्रविष्टो
 जीवः कालं करोति चेत्तदा नैरयिकेपूपपद्यते अशुभपरिणामस्याशुभकर्मवन्ध-
 निमित्ततया दुर्गतिहेतुत्वादिति । ४। सू० ४९॥

પૂર્વં નારકા ઉક્તાઃ તૈથ વૈક્રિયાદિના સધર્માણો દેવા મનન્તીતિ દેવવિશેષ-
 ખૂતનક્ષત્રદેવાનાં પરિચયાર્થં ચતુઃસ્થાનકમાહ—

मूलम्—अणुराहानकखत्ते चउत्तारे पणत्तं पुव्वासाढे एवं
 चैव, उत्तरासाढे एत्रं चैव ॥ सू० ५० ॥

છાયા—અનુરાધા નક્ષત્રં ચતુસ્તારં મૂળમ્, પૂર્વાષાઢા એવમેવ. ઉત્તરા-
 ષાઢા એવમેવ ॥ સૂ. ॥ ૫૦ ॥

टीका—' अणुराहा नकखत्ते ' इत्यादि—अनुराधा पूर्वाषाढोत्तराषाढाख्य-
 नक्षत्रवयं चतुस्तारकमित्यर्थः ॥ ५० ॥

ક્રમસે સ્વરાદિઆવર્ત સમાન ક્રોધાદિક કપાયોં સે યુક્ત છુદ્ડ જીવકી
 यदि उस अवस्थामें मृत्यु हो जाती है, तो वह नैरयिकों में उत्पन्न होता
 है। क्योंकि जो अशुभ परिणाम होता है, वह अशुभ कर्मवन्धनका कारण
 होता है और इससे वह दुर्गतिका हेतु होता है ॥ सू० ४९ ॥

નારક કહે અવ સૂત્રકાર વૈક્રિય આદિ દ્વારા હનકે સમાન ધર્મવાલે
 होनेके कारण देवविशेष नक्षत्र देवोंके परिचयके लिये चार स्थान कहते हैं

“अणुराहा नकखत्ते चउत्तारे” इत्यादि—

टीकार्थ—अनुराधा नक्षत्र पूर्वाषाढा नक्षत्र और उत्तराषाढा नक्षत्र ये
 तीन नक्षत्र चार २ ताराओंवाले होते हैं ॥ सू० ५० ॥

ખરાવર્ત આદિ સમાન ક્રોધાદિક કપાયેથી યુક્ત થયેલો જીવ જો એજ
 अवस्थामां काणधर्मां पाभी जय छे, तो नैरयिकेमां ज उत्पन्न थाय छे, कारण
 કે તેનું જે અશુભ પરિણામ હોય છે. તે અશુભબન્ધનું કારણ બને છે અને
 અશુભબન્ધ દુર્ગતિનું કારણ બને છે ॥ સૂ. ૪૯ ॥

નારકોનું કથન કર્યું. તેમના જેવા જ વૈક્રિય આદિ ધર્મોવાળા દેવવિશે-
 પોનું—નક્ષત્ર દેવોનું હવે સૂત્રકાર ચાર સ્થાનોની અપેક્ષાએ નિરૂપણું કરે છે.

“अणुराहा नकखत्ते चउत्तारे” इत्यादि—

टीकार्थ—अनुराधा नक्षत्र, पूर्वाषाढा नक्षत्र અને उत्तर षाढा नक्षत्र, આ ત્રણ
 नक्षत्रे चार चार तारावालां होय छे ॥ सू. ५० ॥

पूर्वं देवविशेषा उक्ताः, देवविशेषश्च च जीवानां कर्मपुद्गलचयनादिवशाद्भवतीति कर्मपुद्गलचयनादि निमित्तानि प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—जीवा णं चउठ्ठाणणिवत्तिए पोग्गले पावकम्मयाए चिणिंसु वा चिणंति वा चिणिस्संति वा णेरइयणिवत्तिए तिरिक्खजोणियणिवत्तिए, मणुस्सणिवत्तिए, देवणिवत्तिए, एवं उवचिणिंसु वा उवाचिणंति वा उवाचिणिस्संति वा०, एवं चिण उवाचिण बंध उदीरवेय तह णिउज्जरे चैव ॥ सू० ५१ ॥

छाया—जीवान् खलु चतुःस्थाननिर्वर्तितान् पुद्गलान् पापकर्मतया अचिन्वन् वा चिन्वन्ति वा चेष्यन्ति वा, नैरयिकनिर्वर्तितान्, तिर्यग्योनिकनिर्वर्तितान् मनुष्यनिर्वर्तितान् देवनिर्वर्तितान् एवमुपाचिन्वन् वा उपचिन्वन्ति वा उपचेष्यन्ति वा, एवं चय, उपचय, बन्ध, उदीर, वेद तथा निजरा चैव ॥ सू० ५१ ॥

टीका—“ जीवा णं चउठ्ठाण ” इत्यादि—सूत्रषट्कं सुगमम्, नवरं—जीवाः खलु चतुःस्थाननिर्वर्तितान्—वतुभिर्नारकत्वादिभिः स्थानैः पर्यायैः कारणैः निर्वर्तितैः—कर्मपरिणामं प्रापिताः—तथाविधाशुभपरिणामवशाद् बद्धाः चतुःस्थाननिर्वर्तितैः, तान् चतुःस्थाननिर्वर्तितान् पुद्गलान् पापकर्मतया=अशुभरूपज्ञा-

देवविशेष कहे देवविशेषता जीवों के पुद्गलों के चयन आदिके वश से होती है, इसलिये अब सूत्रकार कर्मपुद्गलों के चयनादि के निमित्तों को दिखानेके लिये सूत्र कहते हैं। “जीवाणं चउठ्ठाणं णिवत्तिए” इत्यादि—

टीकार्थ—जीवोंने चतुःस्थान निवर्तित-चार नारक आदि पर्यायरूप कारणोंसे कर्मरूप परिणाम को प्राप्त कराये गये तथाविध अशुभ परिणाम के वशसे बांधे गये पुद्गलोंका पापकर्मरूप से अशुभ ज्ञानावरणीयादि रूपसे चयन किया है, अर्थात् भूतकाल में तथाविध अपर पुद्गलोंसे अल्प प्रदे-

देवविशेषोत्तुं कथनं कथुं. देवविशेषता ज्ञेयानां कर्मपुद्गलानां चयन आदिने कारणे चेत्ता थाय छे. तेथी उवे सूत्रकार कर्मपुद्गलानां चयनादि निमित्तोने अताववाने अटे नीचेत्तुं सूत्र उडे छे

“ जीवाणं चउठ्ठाणं णिवत्तिए ” इत्यादि—

टीकार्थ—ज्ञेयाने चार स्थान निवर्तित-नारकादि चार पर्याय रूप कारणेथी कर्मरूप परिणामने प्राप्त कराववामा आवेत्त तथाविध (ते प्रकारना) अशुभ परिणामने कारणे आधेत्ता पुद्गलोत्तुं पापकर्म रूपे अशुभ ज्ञानावरणीय आदि

નાવરણીયાદિરૂપતયા, અચિન્વન્ ભૂતકાલે તથાવિધાપરકર્મપુદ્ગલૈશ્વિતવન્તઃ પાપ-
પ્રકૃતીરૂપપ્રદેશા વહુપ્રદેશીકૃતવન્તઃ, વર્તમાનકાલે ચિન્વન્તિ, એવં ભવિષ્યકાલે
વેષ્યન્તિ વા । ઇતિ ચયનસૂત્રમ્ ૧ ।

એવં ચયનસૂત્રવત્ ઉપચિન્વન્ ઉપચિન્વન્તિ ઉપવેષ્યન્તિ વા તત્રોપચયનમ્ પૌનઃ પુન્યેન
પુદ્ગલસહ્યગ્રહણમૂર, એવં 'ચિય ઉત્રચિય' ઇત્યાદિ-એવંચયોપચયવત્ અવધનન્ વધનન્તિ
મન્તસ્યન્તિ-વન્ધવિપયીકરિષ્યન્તિ વા ૩, એવમુદીરયન્-ઉદીરયન્તિ ઉદીરયિષ્ય
ન્તિ વા ૪, એવમવેદયન્ વેદયન્તિ વેદયિષ્યન્તિ વા ૫, તથા-નિરજરયન્ નિર્જ-
રયન્તિ નિર્જરયિષ્યન્તિ વા ઇતિ ચયનમ્ભૃતિઘટિતસૂત્રપશ્ચકં વોધ્યમ્ ।૬। ॥સૂ૦૫૧॥

શવાલી પાપપ્રકૃતિયોં કો વહુપ્રદેશવાલી બનાયા હૈ । વર્તમાનકાલ મેં વે
હસી પ્રકાર સે ઉન્હેં બનાતે હેં, ઓર ભવિષ્યકાલ મેં મી વે ઉન્હેં હસી
પ્રકાર સે બનાવેગે । યહ ચયન સૂત્ર હૈ, હસી ચયન સૂત્રકી તરહ ઉપ
ચયન સૂત્ર કા મી વ્યારુધાન કર લેના । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સે જીવોંને
પૂર્વોક્તરૂપ સે અશુભ કર્મ પ્રકૃતિયોં કા ત્રિકાલમેં ચયન કિયા હૈ, ડસી
પ્રકારસે ઉન્હોંને અશુભકર્મ પ્રકૃતિયોં કા ત્રિકાલ મેં ઉપચય કિયા હૈ ।
વારમ્વાર પુદ્ગલોં કા ગ્રહણ કરના હસ કા નામ ઉપચય હૈ, હસી પ્રકારસે
જીવોંને ભૂતકાલ મેં કર્મપુદ્ગલોંકા વન્ધ કિયા હૈ, વર્તમાનમેં વે ડન કર્મ-
પુદ્ગલોં કા વન્ધ કરતેહેં, ઓર આગે મી વે ડન કર્મપુદ્ગલોં કા વન્ધ કરેગે ।
હસી પ્રકાર કા ત્રિકાલસમ્બન્ધી કથન ઉદીરણા વેદન ઓર નિર્જરા
કરને કે સમ્બન્ધ મેં મી કર લેના વ્હાહિયે ॥ સૂ૦ ૫૧ ॥

इये चयन कथुं छे अट्ठे के भूतकाणमां तथाविध अपार पुद्गलोथी अल्प
प्रदेशवाणी पापकृतियोने बहुप्रदेशवाणी बनावी छे, वर्तमानकाणमां पणु तेओ
तेमने आ प्रकारनी न बनावी रखा छे, अने भविष्यमा पणु तेओ तेमने
अे न प्रकारनी बनावशे आ चयनसूत्रतुं ने प्रकारे कथन करवामां आण्युं
छे, अे न प्रमाणे उपचयन सूत्रतुं पणु कथन समल्ल लेवुं नेधअे अट्ठे
के ने प्रमाणे एवोअे पूर्वोक्त इये अशुभ कर्मप्रकृतियोतुं त्रिकाणमां चयन
कथुं छे, अे न प्रमाणे तेमण्णे अशुभ कर्मप्रकृतियोने त्रिकाणमां उपचय
कथी छे. वारंवार पुद्गलोने ग्रहणु करवा तेतुं नाम उपचय छे. अे न प्रमाणे
एवोअे भूतकाणमां कर्मपुद्गलोने अन्ध कथी छे, वर्तमानकाणमां पणु तेओ
ते कर्मपुद्गलोने अन्ध करे छे, अने भविष्यमां पणु तेओ ते कर्मपुद्गलोने
अन्ध करशे अे न प्रकारतुं त्रण्णे काण संबंधी कथन उदीरणा, वेदन अने
निर्जरा करवा विधे पणु समल्ल लेवुं नेधअे. ॥ सू. ५१ ॥

પુદ્ગલાધિકારાત્ પુદ્ગલાનેવ દ્રવ્યાદિભિર્નિરૂપયિતુમાહ—

મૂલમ્—ચતુષ્પૃષ્ઠિયા સ્વંધા અણંતા, ચતુષ્પૃષ્ઠિયા પોગ્ગલા અણંતા, ચતુષ્પૃષ્ઠિયા પોગ્ગલા અણંતા, ચતુષ્પૃષ્ઠિયા પોગ્ગલા અણંતા, ચતુષ્પૃષ્ઠિયા પોગ્ગલા અણંતા, જાવ ચતુષ્પૃષ્ઠિયા પોગ્ગલા અણંતા પળ્લન્તા
 ॥ સૂ૦ ૫૨ ॥

ઝાયા—ચતુષ્પ્રદેશિકાઃ સ્કન્ધાઃ અનન્તાઃ ચતુષ્પ્રદેશાવગાઢાઃ પુદ્ગલા અનન્તાઃ
 ચતુઃસમયસ્થિતિકાઃ પુદ્ગલા અનન્તાઃ, ચતુર્ગુણકાલકાઃ પુદ્ગલા અનન્તાઃ, યાવત્
 ચતુર્ગુણરુક્ષાઃ પુદ્ગલાઃ અનન્તાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ॥ ૫૨ ॥

ટીકા—‘ ચતુષ્પૃષ્ઠિયા ’ ઇત્યાદિ—સુગમમ્ ॥ સૂ૦ ૫૨ ॥
 ચતુર્થો ઉદ્દેસો સમ્પત્તો ॥ ચતુર્થં દ્વાણં સમત્તં ॥ ૪ ॥

ચતુર્થ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ, ॥ ચતુર્થં સ્થાનં સમાપ્તમ્ ॥

ઈતિ શ્રી વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુહ-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશમાપાકલિતકલિતકલા-
 પાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક - શ્રીશાહુલ્લભ-
 પતિ કોલહાપુરરાજમદત્ત ‘ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ’ પદમૂષિત-કોલહાપુર-
 રાજગુરુ વાલબ્રહ્મચારિ- જૈનાચાર્ય - જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્યશ્રી --
 યાસીલાલવ્રતિવિરચિતાયાં ‘ સ્થાનાન્કસૂત્રસ્ય ’ સુધાખ્યાયાં
 વ્યાખ્યાયાં ચતુર્થ સ્થાનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪-૪ ॥

પુદ્ગલ કે અધિકારકો લેકર અબ સૂત્રકાર દ્રવ્ય ક્ષેત્ર આદિસે પુદ્ગલો
 કો હી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । “ ચતુષ્પૃષ્ઠિયા સ્વંધા અણંતા ” ઇત્યાદિ—
 ટીકાર્થ—ચાર પ્રદેશોંવાલે સ્કન્ધ અનન્ત કહે ગયેહૈં । ચાર પ્રદેશોંમેં અવ-
 ગાઢ હુણ પુદ્ગલસ્કન્ધ અનન્ત કહે ગયે હૈં । ચાર સમયકી સ્થિતિવાલે

પુદ્ગલોનું કથન આલી રહ્યુ છે, તેથી હવે સૂત્રકાર દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર આદિની
 અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની જ પ્રરૂપણા કરે છે.

“ ચતુષ્પૃષ્ઠિયા સ્વંધા અણંતા ” ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ચાર પ્રદેશવાળા સ્કન્ધ અનન્ત કહ્યા છે. ચાર પ્રદેશોમાં અવગાહિત
 થયેલા (રહેલા) સ્કન્ધ અનન્ત કહ્યા છે. ચાર સમયની સ્થિતિવાળા સ્કન્ધ
 અનન્ત કહ્યા છે. ચતુર્થુષ્ઠિ (ચાર ગણુ) કૃષ્ણુ ગુણુવાળાં પુદ્ગલ અનન્ત કહ્યાં છે, યાવત્

पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं, चतुर्गुण कृष्णवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं, यावत् चतुर्गुण रूक्ष गुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं ॥ सू० ५२ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचिन "स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याके चौथे स्थानका चौथा उद्देशा

समाप्त ॥ ४-४ ॥

॥ चौथा स्थान संपूर्ण ॥

चतुर्गुण्य रूक्षगुणवाणा पुद्गलो अनन्त कक्षा छे अही (यावत्) पद्वी भधां वष्यं, स्पशं आदि अडणु करना नोर्धये ॥ सू. ५२ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचिता "स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याका चौथा स्थानको चौथा उद्देशो समाप्त ॥ ४-४ ॥

चौथुं स्थान संपूर्ण

अथ पञ्चमं स्थानकं प्रारभ्यते—

उक्तं चतुर्थं स्थानकम् । सम्प्रति संख्याक्रममनुसृत्य पञ्चमस्थानकमुच्यते । अस्य च पूर्वेण सहायमभिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन् स्थानके हि जीवा अजीवास्तद्धर्माश्च पदार्थाश्चतुःस्थानकत्वेनोक्ताः, अत्रापि त एव पञ्चस्थानकत्वेनोच्यन्ते, इत्यनेन संबन्धेनायातस्य अस्य स्थानकस्येदमादिमं सूत्रम्—

मूलम्—पञ्च महव्वया पण्णत्ता, तं जहा-सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं १ जाव सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं ५। पञ्चाणुव्वया पण्णत्ता, तं जहा-थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं १, थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं २, थूलाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं ३, सदारसंतोसे ४, इच्छापारिमाणे ५ ॥ सू० १ ॥

अथा—पञ्च महाव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-सर्वस्मात् प्राणातिपाताद् विरमणं १ यावत् सर्वस्मात् परिग्रहाद् विरमणम् ५। पञ्चाणुव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-स्थूलात् प्राणातिपाताद् विरमणम् १, स्थूलात् मृपावादाद् विरमणं २, स्थूलात् अदत्तादानाद् विरमणम् ३, स्वदारसन्तोषः ४, इच्छापारिमाणम् ५ ॥ सू० १ ॥

॥ पांचवे स्थानके पहला उद्देशोका प्रारंभ ॥

चतुर्थं स्थान कहा अत्र संख्याक्रमको लेकर पंचम स्थान कहा जाता है । इसका पूर्व स्थानके साथ ऐसो सम्बन्ध है कि पूर्वस्थानमें जीव अजीव इनके धर्म और पदार्थ ये सब चतुःस्थान रूपसे कहे गये हैं—सो वेही यहां पञ्चस्थान रूपसे कहे जावेगे, इसी सम्बन्धसे आया हुआ इस पंचम स्थानका यह प्रथम सूत्र है—पञ्च महव्वया पण्णत्ता

पांचमां स्थानना पडेदो उदेशो

चार स्थानतुं कथन पूर थयु. डवे पांच स्थानतुं कथन शर थाय छे तेना पूर्वस्थान साथे आ प्रकारने संगध छे—चतुर्थं स्थानमां एव अने अणवना धर्म धर्त्यादिनी प्रपणुा चार स्थान रूपे करी छे. डवे अडिं पांच स्थान रूपे तेमनी प्रपणुा करी छे आ पंचम स्थानना पडेदो उदेशानुं प्रथम सूत्र आ प्रमाणे छे—“ पञ्च महव्वया पण्णत्ता ” धर्त्यादि—

ટીકા—‘ પંચ મહાવ્રયા ’ ઇત્યાદિ—

મહાવ્રતાનિ-મહાન્તિ ચ તાનિ વ્રતાનિ ચેતિ મહાવ્રતાનિ, અણુવ્રતાપેક્ષયા સર્વજીવરક્ષણાદિવિષયત્વેન ચૈવાં મહત્ત્વં વૌધ્યમ્ । યદ્વા-મહદ્વ્રતાનીતિચ્છાયા । મહતઃ-દેશવિસ્તાપેક્ષયા વૃદ્ધતો ગુણિનો વ્રતાનિ મહદ્વ્રતાનિ । एतानि पञ्चसंख्य-
કાનિ પ્રજ્ઞાપ્તાનિ=પ્રરૂપિતાનિ ભગવતા ઋપભેણ મહાવીરેણ ચ તથાવિદ્યશિષ્યાનપેક્ષય, ન ત તદિતરૈર્દ્વાવિંશતિમિનૈઃ તચ્છિષ્યાણામ્ ઋજુપણત્વેન ચતુર્મહાવ્રતસમ્ભવાદિતિ, તથા-સર્વસ્માત્ વ્રસસ્થાવરસૂક્ષ્મવાદરભેદમિત્તાત્ કૃતકારિતાનુપતિભેદમિત્તાત્ સમસ્તાત્, યદ્વા-દ્રવ્યતઃ પદ્મજીવનિકાયવિષયાત્, ક્ષેત્રતઃ ત્રિલોકસંભવાત્,

વ્રતોંમેં મહા ઓર અણુકા કથન વિષયક વિચાર હસ પ્રકારસે હૈ—
“ મહાન્તિ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ ” હસ વ્યુત્પત્તિકી અપેક્ષા જો વ્રત મહાન્ હૈં-અણુવ્રતોંકી અપેક્ષાસે સર્વ જીવ રક્ષણ આદિકે વિષયવાલે હોનેસે વહે હૈં વે મહાવ્રત હૈં, અથવા-“ મહતઃ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ ” હસ વ્યુત્પત્તિકે અનુસાર દેશવિસ્તકી અપેક્ષા વહે ગુણિજનોકે જો વ્રતહૈં વે મહાવ્રતહૈં. પ્રાણાતિપાત વ્રસ સ્થાવર જીવોંકા હોતાહૈ, ઓર સૂક્ષ્મ વાદર જીવોંકા હોતા હૈં, યદ પ્રાણાતિપાત જીવ સ્વયં કરતા હૈ, દૂસરોંસે ઓ કરવાતા હૈ, ઓર કરનેવાલેકી અનુમોદના કરતા હૈ, હસ તરહ કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાવાલે વ્રસ સ્થાવર જીવોંકે વાદર સૂક્ષ્મ જીવોંકે પ્રાણાતિપાતસે જો વિરક્ત હોના હોતાહૈ વહ-“ સર્વસ્માત્ પ્રાણાતિપાતાત્ વિરમણં ” કહલાતા હૈ, અથવા-દ્રવ્યકી અપેક્ષા-પદ્મ જીવનિકાયરૂપ દ્રવ્ય પ્રાણાતિપાતસે ક્ષેત્રકી અપેક્ષા-ત્રિલોકમેં સંભવિત

વ્રતોમાં મહા અને અણુના કથન વિષયક વિચાર આ પ્રમાણે છે—
“ મહાન્તિ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે વ્રતો મહાન્ છે, સર્વજીવ રક્ષણ આદિના વિષયવાળાં હોવાથી અણુવ્રતો કરતાં મહાન્ છે, તે વ્રતોને મહાવ્રત કહે છે અથવા—“ મહતઃ વ્રતાનિ મહાવ્રતાનિ ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર દેશવિસ્તની અપેક્ષાએ મહાગુણીજનોના સાધુઓનાં જે વ્રત છે તેમને મહાવ્રત કહે છે. વ્રસ સ્થાવર જીવોનો પ્રાણાતિપાત થાય છે, અને સૂક્ષ્મબાદર જીવોનો પ્રાણાતિપાત પણ થાય છે તે પ્રાણાતિપાત જીવ પોતે કરે છે, ખીજ પાસે કરાવે છે અને કરનારની અનુમોદના કરે છે આ ત્રણ પ્રકારે-કૃત, કારિત અને અનુમોદના રૂપ ત્રણ પ્રકારે વ્રસ, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ અને બાદર જીવોના પ્રાણાતિપાતથી (વ્રતથી) જે વિરક્ત થવાનું અને છે તેનું નામ જ “ સર્વસ્માત્ પ્રાણાતિપાતાત્ વિરમણં ” ‘સમસ્ત પ્રાણાતિપાતથી વિરમણુ’ છે અથવા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ છકાયેના જીવોની હિંસાને સર્વથા ત્યાગ કરવો, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ

कालतः अतीतादेरात्र्यादि प्रभवाद्वा भावतो रागद्वेषसमुत्थाच्च समग्रात् प्राणा-
तिपातात्-प्राणानाम्-इन्द्रियोच्छ्वासायुरादीनाम् अतिपातः=प्राणिनः सकाशाद्
वियोजनं प्राणातिपातः-प्राणिप्राणवियोजनव्यापार इत्यर्थः, तस्माद् विरमणं=
सम्यग्ज्ञानश्रद्धानपूर्विका विरतिः निवृत्तिरिति यावत्, न तु परिश्रुलादेव विरतिः।
इदं प्रथमं महाव्रतम् १। 'जाव' शब्दाद् द्वितीयतृतीयचतुर्थानां महाव्रतानां समग्रो

प्राणातिपातसे, कालकी अपेक्षा अतीतादिकालमें हुए प्राणातिपातसे
अथवा रात्रि आदि जायमान प्राणातिपातसे और भावकी अपेक्षा
रागद्वेषादि उत्पन्न होनेरूप प्राणातिपातसे जो विरमण है, वह "सर्व-
स्मान् प्राणातिपातात् विरमणम्" है, प्राण व्यवहार नयकी अपेक्षा पांच
इन्द्रिय ३, बल आयु और श्वासोच्छ्वासके भेदसे १० होते हैं, एके-
न्द्रिय दोइन्द्रिय तेइन्द्रिय चौइन्द्रिय असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय और संज्ञी पञ्चे-
न्द्रिय इन जीवोंमें अपनी २ योग्यताके अनुमार ४ आदिसे लेकर १०
प्राणतक कहे गये हैं, अर्थात्-एकेन्द्रियमें चार प्राण स्पर्शेन्द्रियबल प्राण,
कायबल प्राण, श्वासोच्छ्वासबल प्राण, आयुष्यबल प्राण घ्राणेन्द्रियमें
छ प्राण पहिलेके चार रसनेन्द्रियबल प्राण-वचनबल प्राण तेइन्द्रियमें
सात प्राण-घ्राणेन्द्रियबल प्राण बढ़ा, चौइन्द्रियमें आठ चक्षुरिन्द्रियबल
प्राण बढ़ा, असंज्ञी पञ्चेन्द्रियमें नौ श्रोत्रेन्द्रियबल प्राण बढ़ा, संज्ञी

त्रिवेदाङ्गमां संलवित प्राण्यतिपातनो त्याग करवो, काणनी अपेक्षाये अतीतादि
काणमां थछ गयेवा प्राण्यतिपातथी अथवा रात्रि आदि काणे थछ जता प्राण्यति-
पातथी विरमणु थवुं, अने लावनी अपेक्षाये राग द्वेष आदि उत्पन्न थवा;
इप प्राण्यतिपातनो त्याग करवो, तेनुं नाम "सर्वस्मान् प्राणातिपातात् विरमणम्"-
छे व्यवहार नयनी दृष्टिअे नीचे प्रमाणे १० दस प्राणु कहां छे-पांच इन्द्रिय ३प
पांच प्राणु, त्रणु भद्र ३प त्रणु प्राणु, आयु ३प अेक प्राणु अने श्वासास-
३प अेक प्राणु, अेकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय, असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय अने
संज्ञि पञ्चेन्द्रिय लवोमां पोतपोतानी योग्यता अनुसार चारथी लधने १०
प्राणु सुधीनो सदृभाव होय छे जेभके अेकेन्द्रियोमां स्पर्शेन्द्रियभद्र प्राणु,
कायभद्र प्राणु, श्वासोच्छ्वासभद्र प्राणु अने आयुष्यभद्र प्राणुनो, आ रीते
चार प्राणुनो सदृभाव होय छे द्वीन्द्रियोमां नीचेनां छ प्राणुनो सदृभाव होय
छे-चार प्राणु अेकेन्द्रियो प्रमाणे, रसनेन्द्रियभद्र प्राणु अने वचनभद्र प्राणु,
त्रीन्द्रियोमां घ्राणेन्द्रिय प्राणु अने उपयुक्त छ प्राणु, चतुरिन्द्रियोमां आठ
प्राणुनो सदृभाव होय छे उपयुक्त सात प्राणु अने चक्षुरिन्द्रियभद्र प्राणु,

વોધ્યઃ। યથા-સર્વસ્માત્ મૃષાવાદાત્-સદ્ભાવ પ્રતિષેધામદ્ભાવો દ્વાવનાર્થાન્તરોક્તિર્ગર્હી
ભેદાત્ કૃતાદિભેદાચ્ચ સમગ્રાત્ અસત્યભાષણાત્, અથવા-દ્રવ્યતઃ સર્વધર્માસ્તિ-
કાયાદિ દ્રવ્યવિષયાત્, ક્ષેત્રતઃ સર્વલોકાલોકવિષયાત્, કાલતઃ અતીતાદે-
રાત્ર્યાદિવર્તિનો વા, ભાવતઃ કષાય નોકષાયાદિ સમુદ્ભવાચ્ચ સમગ્રાત્ અસત્યભાષ-
ણાત્ વિરમણં=વિનિવૃત્તિરિતિ દ્વિતીયં મહાવ્રતમ્ ।૨। તથા-સર્વસ્માત્=કૃતાદિ

પચ્ચેન્દ્રિયમેં દશ-સનચલ પ્રાણ વહા સો હન પ્રાણોંકા વિયોગ કરના જિસ
ક્રિયાકે દ્વારા હોતા હૈ, વહ પ્રાણાતિપાત હૈ, સમ્યગ્જ્ઞાન્ ઓર શ્રદ્ધાન્
પૂર્વક જો હસ પ્રાણાતિપાતસે સર્વથા નિવૃત્ત હોનાહૈ, વહ સમસ્ત પ્રાણાતિપાત
વિરમણ હૈ। યહ પ્રથમ મહાવ્રત હૈ । યહાં યાવત્ શબ્દસે ઠિતીય મહા-
વ્રતકા તૃતીય મહાવ્રતકા ઓર ચતુર્થ મહાવ્રતકા ગ્રહણ હુઆ હૈ । જૈસે-
સમસ્ત મૃષાવાદસે સદ્ભાવકે પ્રતિષેધસે અસદ્ભાવકે ઉદ્ભાવનસે અર્થાન્ત-
રકે કથનસે ઓર ગર્હાકે કરનેસે ઓર કૃતાદિકે ભેદસે હસ તરહકે
સમગ્ર અસત્ય ભાષણસે અથવા દ્રવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત ધર્માસ્તિ કાયાદિ
દ્રવ્ય વિષયક અસત્ય ભાષણસે ક્ષેત્રકી અપેક્ષા-સમસ્ત લોકાલોક
વિષયક અસત્ય ભાષણસે કાલકી અપેક્ષા અતીતાદિ કાલવિષયક
અસત્ય ભાષણસે યા રાત્રી આદિ સંબન્ધી અસત્ય ભાષણસે તથા ભાવકી
અપેક્ષા-કષાય નો કષાય આદિસે ઉદ્ભૂત અસત્ય ભાષણસે

અસંજી પ'ચ્ચેન્દ્રિયમાં નવ પ્રાણુનેા સદ્ભાવ હોય છે. ઉપર્યુક્ત આઠ પ્રાણુ
અને શ્રોત્રેન્દ્રિયબલ પ્રાણુ. સંજી પ'ચ્ચેન્દ્રિયમાં દસ પ્રાણુનેા સદ્ભાવ હોય છે,
અસંજી પ'ચ્ચેન્દ્રિય જેવા નવ પ્રાણુ અને મનબલ પ્રાણુ-આ પ્રાણુનેા અતિપાત
(નાશ) કરવો તેનું નામ પ્રાણુ તિપાત છે સમ્યગ્જ્ઞાન અને શ્રદ્ધાપૂર્વક આ
પ્રાણુતિપાતથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું તેનું નામ જ સમસ્ત પ્રાણુતિપાત વિરમણુ
છે. આ પ્રથમ મહાવ્રત છે. સમસ્ત મૃષાવાદથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું તેનું
નામ સમસ્ત મૃષાવાદ વિરમણુ છે. આ ખીચ્ચું મહાવ્રત છે, તેનું સ્વરૂપ આ
પ્રકારનું છે—સદ્ભાવના પ્રતિષેધથી (જેનેા સદ્ભાવ હોય તેનેા સદ્ભાવ નથી
એમ કહેવાથી) અસદ્ભાવ હોય તેનેા સદ્ભાવ પ્રકટ કરવાથી, વિષયીત અર્થનું
કથન કરવાથી, અસત્ય ભાષણથી, અથવા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સમસ્ત ધર્માસ્તિ-
કાય આદિ દ્રવ્યવિષયક અસત્ય ભાષણથી, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સમસ્ત લોકાલોક
વિષયક અસત્ય ભાષણથી, કાળની અપેક્ષાએ અતીત આદિ કાળવિષયક અસત્ય
ભાષણથી, અથવા રાત્રી આદિ સંબન્ધી અસત્ય ભાષણથી, ભાવની અપેક્ષાએ
કષાય, નો કષાય આદિ વડે નયમાન અસત્ય ભાષણથી-આ પ્રકારે સમસ્ત

भेदाद्, अथवा द्रव्यतः सचेतनाचेतनद्रव्यविषयात्, क्षेत्रतो ग्रामनगरारण्यादि-
समुद्भवात्, कालतः-अतीतादेः रात्र्यादिप्रभवाद् वा, भावतो रागद्वेषमोहोद्भवाच्च
समप्रात् अदत्तादानात्-अदत्तस्य=स्वामिना अवितीर्णस्य वस्तुन आदानं ग्रह-
णम्-अदत्तादानं तस्माद् विरमणमिति तृतीयं महाव्रतम् ।३। तथा-सर्वस्मात्=
कृतादिभेदेन त्रिविधात्, यद्वा-द्रव्यतो दिव्यमानुषतैश्चभेदात् रूप रूपसह-
गत-भेदाद् वा, तत्र-रूपाणि=पट्टिकादौ चित्रादिरूपेण परिकल्पितानि निर्जी-

इस प्रकारके असत्य भाषणसे-जो विनिवृत्ति है वह द्वितीय महाव्रत
है २। तथा समस्त अदत्तादानसे कृतादिके भेदसे अदत्तादानसे अथवा-
द्रव्यकी अपेक्षा सचेतन अचेतन द्रव्यसम्बन्धी अदत्तादानसे क्षेत्रकी
अपेक्षा-ग्राम नगर अरण्य आदिसे उद्भूत अदत्तादानसे कालकी अपेक्षा
अतीतादि काल सम्बन्धी अदत्तादानसे अथवा-रात्रि आदिसे उद्भूत
अदत्तादानसे या भावकी अपेक्षा रागद्वेष और मोह इनसे उद्भूत
अदत्तादानसे इस प्रकारके समस्त अदत्तादानसे जो विरमण है, वह
तृतीय महाव्रत है ३। तथा कृतकारित आदिके भेदसे त्रिविध रूप
मैथुनसे अथवा द्रव्यकी अपेक्षा-देव सम्बन्धी मैथुनसे, मालुष सम्बन्धी
मैथुनसे और तिर्यञ्च सम्बन्धी मैथुनसे अथवा रूप रूपसहगत सम्बन्धी
मैथुनसे-पट्टिकादिके ऊपर चित्रकादि रूपसे परिकल्पित किये गये

असत्य लक्षण्युत्थी जे सर्वथा निवृत्तथराय छे तेनुं नाम ज समस्त मृषावाद् विरमण्यु
महाव्रत छे. आभीज्यु महाव्रत छे समस्त अदत्तादानथी निवृत्तथयुं तेनुं नाम समस्त
अदत्तादान विरमण्यु छे आ त्रीण्युं महाव्रत छे, तेनुं स्वइय आ प्रकारनुं छे.
द्रव्यनी अपेक्षाये सचेतन अचेतन द्रव्य संभंधी अदत्तादानथी निवृत्त थयुं,
क्षेत्रनी अपेक्षाये ग्राम, नगर, अरण्य आदि वडे उद्भूत अदत्तादानथी विर-
मण्यु थयुं, कालनी अपेक्षाये अतीतादि काल संभंधी अथवा रात्रिदिवस
संभंधी अदत्तादानथी विरमण्यु थयुं, भावनी अपेक्षाये राग, द्वेष अने मोह
वडे उद्भूत अदत्तादानथी विरमण्यु थयुं, त्रये कारण्यु द्वारा (कृत, कारित अने
अनुभेदना) अदत्तादानथी विरमण्यु थयु तेनुं नाम ज समस्त अदत्तादान
विरमण्यु इय त्रीण्युं महाव्रत छे.

कृत, कारित आदि लेहोनी अपेक्षाये त्रिविध इये मैथुनने परित्याग
करवो तेनुं नाम समस्त मैथुन विरमण्यु व्रत छे. अटले हे द्रव्यनी अपेक्षाये
मनुष्य, तिर्यञ्च अने देवसंभंधी मैथुनने परित्याग करवो, अथवा इय इय-
सहगत संभंधी मैथुनने-वस्त्र, पाटिया आदि पर चित्रादि इये परिकल्पित
करायेल निर्ज्व चित्रादिके साथे अग्रहणा सेवनने परित्याग करवो, अथवा
इय सहगत सल्लोनी साथे मैथुनने परित्याग करवो, लूषण्यु विधीन इयोनी

वानि, रूपसहगतानि तु सजीवानि, अथवा-निर्भूषणानि रूपाणि, सभूषणानि रूपसहगतानीति, क्षेत्रतो लोकत्रयसंभवाद्, कालतोऽतीतादे रात्र्यादि संभवाद् वा, भावतो रागद्वेषसमुत्थाच्च समग्राद् मैथुनात् विरमणमिति चतुर्थं महाव्रतम् ।४। तथा-सर्वस्मात्=कृतादिभेदेन त्रिविधात्-अथवा-द्रव्यतः सर्वद्रव्यविषयात्, क्षेत्रतो लोकसंभवात्, कालतोऽतीतादे रात्र्यादिभवाद् वा, भावतो रागद्वेषविषयाच्च समग्रान् परिग्रहात्-परिग्रहणे आदीयते इति परिग्रहः परिग्रहणं वा परिग्रहः-धनधान्यादिर्नवविधः तस्मात् विरमणमिति पञ्चमं महाव्रतमिति ।५। इत्थं पञ्च महाव्रतानि निरूप्य सम्प्रति व्रतप्रस्तावात् पञ्चाणु-

निर्जीव चित्रादिकोंके साथ कृत मैथुनसे और रूप सहगत सजीवोंके साथ कृत मैथुनसे-अथवा भूषण विहीन रूपोंके साथ और भूषण सहित रूपसहगतोंके साथ कृत मैथुनसे क्षेत्रकी अपेक्षा लोकत्रय सम्बन्धी मैथुनसे कालकी अपेक्षा अतीत मैथुनसे अथवा-रात्र्यादि संभव मैथुनसे भावकी अपेक्षा-रागद्वेष समुत्थ मैथुनसे इस प्रकारके मैथुनसे जो विरमण है, वह चतुर्थ महाव्रत है ४। तथा समस्त परिग्रहसे कृतकारित आदिके भेदसे त्रिविध परिग्रहसे अथवा-द्रव्यकी अपेक्षा सर्वद्रव्य सम्बन्धी परिग्रहसे क्षेत्रकी अपेक्षा लोक सम्बन्धी परिग्रहसे कालकी अपेक्षा अतीतादि काल सम्बन्धी परिग्रहसे रात्र्यादिमें होनेवाले परिग्रहसे भावकी अपेक्षा-रागद्वेष सम्बन्धी परिग्रहसे इस प्रकारके समस्त परिग्रहसे जो विरमण है वह पांचवां महाव्रत है,

साथे अने भूषण सहित रूपोंकी साथे मैथुनसे त्याग करवो क्षेत्रकी अपेक्षासे त्रये लोक सम्बन्धी मैथुनसे परित्याग करवो, कालकी अपेक्षासे अतीत मैथुनसे अथवा रात्री आदि सम्बन्धी मैथुनसे परित्याग करवो, भावकी अपेक्षासे रागद्वेषसे उद्भूत मैथुनसे परित्याग करवो-आ प्रकारे समस्त प्रकारना मैथुनसे निवृत्त यवुं तेनुं नाम समस्त मैथुन विरमणमहाव्रत छे. इवे पांचवां महाव्रतनुं स्वल्प रूप करवामां आवे छे-कृत, कारित अने अनुभूतित रूप त्रये प्रकारना परिग्रहसे, द्रव्यकी अपेक्षासे सर्व धन, धान्य आदिना परिग्रहसे, क्षेत्रकी अपेक्षासे लोक सम्बन्धी परिग्रहसे, कालकी अपेक्षासे अतीतादि काल सम्बन्धी परिग्रहसे अथवा रात्री आदिमां संभवित परिग्रहसे, भावकी अपेक्षासे रागद्वेष सम्बन्धी परिग्रहसे, आ रीते समस्त प्रकारना परिग्रहसे परित्याग करवो तेनुं नाम समस्त परिग्रह विरमण महाव्रत छे.

प्रतान्याह-‘पंचाणुव्या’ इत्यादिना। अणुव्रतानि-अणुनि=लघूनि च तानि व्रतानि, अणुत्वं च महाव्रतापेक्षया अल्पविषयत्वादिना बोध्यम्। यद्वा-अणोः= लघोर्गुणिनो व्रतानि-अणुव्रतानि। अथवा-अणुव्रतानीतिच्छाया। अनु=महाव्रत-कथनानन्तरं तद्ग्रहणाशक्ताजुद्दिश्य पुनर्यानि व्रतानि कथ्यन्ते तानि अनुव्रतानि। तानि च पञ्चविधानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-स्थूलात्-द्वीन्द्रियादयो जीवाः स्थूला-उच्यन्ते। स्थूलत्वं चैषां सकललौकिकानां जीवत्वप्रसिध्या बोध्यम्। स्थूल-जो ग्रहण क्रिया जाता है वह परिग्रह है, अथवा ग्रहण करना इसका नाम परिग्रह है, ऐसा यह परिग्रह धनधान्यादिके भेदसे नौ प्रकारका है। इस परिग्रहसे विरमण होना यह परिग्रह विरमण महाव्रत है। इस प्रकारसे पांच महाव्रतोंका निरूपण करके अब सूत्रकार व्रतके प्रकरणको लेकर पांच अणुव्रतोंका कथन करते हैं—

“पंचाणुव्या” इत्यादि—लघु जो व्रत हैं-महाव्रतोंकी अपेक्षा अल्पविषयवाले होनेसे जो अणु हैं, वे ऐसे व्रत अणुव्रत हैं महाव्रतोंका विषय इनकी अपेक्षा महान् है, और इनकी अपेक्षा अणुव्रतोंका विषय अल्प थोड़ासा है-इसलिये इन्हें अणुव्रत कहा गया है, अथवा लघु जीवके थोड़ेसे गुणवाले जीवके जो व्रत हैं वे अणुव्रत हैं। अथवा-“अणुव्रत” ऐसी छाया पक्षमें ऐसा अर्थ होता है कि महाव्रत कथनके अनन्तरही महाव्रतोंके ग्रहण करनेमें अशक्त हुए मनुष्यादिको लक्ष्य

ने ग्रहण कराये छे-अथवा तेनो संग्रह कराये छे तेनुं नाम परिग्रह छे ते परिग्रहना धन, धान्य आदिना लेइथी नव प्रकार कइया छे, ते परिग्रहथी विरमण थपुं-निवृत्त थपुं, तेनुं नाम परिग्रह विरमण महाव्रत छे आ रीते पांच महाव्रतोनुं निरूपण करीने छे सूत्रकार पांच अणुव्रतोनुं निरूपण करे छे-

“पंचाणुव्या” इत्यादि—ते व्रतो लघु छे-पांच महाव्रतोनो अपेक्षाओ ते व्रतो अल्प विषयवाला होवाने कारणे अणुव्रत छे, ते व्रतोनो अणुव्रतो कडे छे, तेमना करतां महाव्रतोनो विषय महान छे, महाव्रतो करतां अणु व्रतोनो विषय अल्प छे, तेथी ते व्रतोनो अणुव्रत कइयां छे.

अथवा—लघु एवना थोडा सरणा शुभसंपन्न एवमना ते व्रतो छे तेमने अणुव्रतो कडे छे, अथवा “अणुव्रत” आ पदनी संस्कृत छाया “अणुव्रत” सेवामां आवे, तो तेनो अर्थ आ प्रमाणे थाय छे, महाव्रतोनो पावननो

जीवविषयः प्राणातिपातोऽपि स्थूलः, तस्मात्-प्राणातिपाताद् विरमणमिति प्रथममणुव्रतम् । १। तथा-स्थूलात् मृषावादात्-विरमणम्-परिस्थूलविषयो महानर्थहेतुभूतो यो मृषावादः स स्थूलो मृषावादः, तस्मान्निवृत्तिरित्यर्थः । इति

करके फिर जो व्रत कहे जाते हैं वे अनुव्रत हैं। तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि सर्व प्रथम जीवको मुनि धर्मकाही उपदेश देना चाहिये ऐसी जिनप्रवचनकी आज्ञा है, इससे विपरीत उपदेष्टा निग्रहके योग्य कहा गया है। यदि वह मुनिव्रत ग्रहण करनेमें असमर्थ है, तो फिर उसके लिये अणुव्रतोंका उपदेश है। इसी अपेक्षा अणुव्रतोंको अनुव्रत ऐसा कहा गया है। ये अणुव्रत पांच प्रकार के कहे गये हैं द्वीन्द्रियादिक जीव स्थूल कहे गये हैं, इन्हें स्थूल कहनेका कारण यह है कि-सकल लौकिक जन इन्हें जीव मानते हैं, स्थूल जीव विषयक जो प्राणातिपात होता है, वह भी स्थूल होता है, उस स्थूल प्राणातिपातसे जो विरमण है वह प्रथम अणुव्रत है। स्थूल मृषावादसे जो विरमण है, वह स्थूल मृषावादविरमण है, यह स्थूल मृषावाद महान् अनर्थका हेतु होता है, जिस वचनसे यह झूठा है,

उपदेश करवाभां आवे, पणु तेमनुं पालन करवाने असमर्थं अेवा मनुष्येने लेधने तेमने लक्ष्य करीने ने व्रतो पाणवाने। उपदेश आपवाभां आवे छे, ते व्रतोने अनुव्रतो (अणुव्रतो) कडे छे. आ कथनने लावार्थ नीचे प्रभाणे छे—सौथी पडेला जेवने मुनिधर्मने न उपदेश आपवे लेधअे, अेवी जिन प्रवचननी आज्ञा छे आ उपदेशथी विपरीत उपदेश करवे लेधअे नडीं पणु ले उपदेष्टाने अेम लागे के श्रोता मडावने अडणु करवाने समर्थ नथी, तो तेणे तेमने अणुव्रतोने उपदेश आपवे लेधअे आ रीते मडाव्रतोने उपदेश आप्या जाड नेने उपदेश अपय छे, अेवां व्रतोने अणुव्रतो कडे छे तेमनां नीचे प्रभाणे पांच प्रकार छे—(१) स्थूल प्राणातिपात विरमणु द्वीन्द्रियादिक जेवने स्थूल कद्यां छे, तेमने स्थूल कडेवानुं कारणु अे छे के सकण लौकिकजन तेमने जवइप माने छे स्थूल जव विषयक ने प्राणातिपात थाय छे ते पणु स्थूल डोय छे. आ स्थूल प्राणातिपातथी ने विरमणु थाय छे जव डिंसानो ने त्याग थाय छे तेने स्थूल प्राणातिपात विरमणु व्रत कडे छे. आ पडेलुं अणुव्रत समजवुं (२) स्थूल मृषावाद विरमणु व्रत-स्थूल मृषावाद (वधु पडतुं शूडुं जोडवुं ते) मडा अनर्थनुं कारणु अने छे ने वचनथी जोलनार शूडा भाणुस तरीके ज्ञाति पावे, ने वचनने कारणे

द्वितीयमणुव्रतम् । २। तथा-स्थूलात् अदत्तादानाद् विरमणम्-स्थूल अदत्तादानं हि परिस्थूलवस्तुविषयं चौर्यारोपणहेतुत्वेन प्रसिद्धम्, अतिदुष्टाध्यवसायात्मकं भवति, ततो यन्निवर्तनं तत्तृतीयमणुव्रतमिति भावः ३। तथा-स्वदारसन्तोषः-स्वदारेभ्यो-ऽन्यत्र मैथुननिवृत्तिः । अनेन सर्वथा परदारनिवृत्तिः सूचिता । इदं चतुर्थमणुव्रतम् ४। तथा-उच्छापरिमाणम्-इच्छाया=धनादिविषयाभिलाषस्य परिमाणं=नियमनम्-देशतः परिग्रहविरतिरित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

ऐसी अपनी ख्याति हो जावे, लोक अपने वचनका विश्वास नहीं करे दूसरों पर आपत्ति आ जावे, ऐसे जितने भी वचन हैं वे सब स्थूल मृषावाद रूप हैं । इस स्थूल मृषावादसे जो विरमण है वह द्वितीय अणुव्रत है २ । स्थूल अदत्तादानसे विरमण होना वह स्थूल अदत्तादान विरमण है, यह स्थूल अदत्तादान स्थूल वस्तुकी चोरी करनेके कारण स्थूल माना गया है । यह अतिदुष्ट अध्यवसाय रूप होता है, लोकमें जो " चोरी " इस नामसे प्रसिद्ध है, जिसके करनेसे राज-दण्ड आदि मिलता है ऐसी चोरी करनेका त्याग करना वह स्थूल अदत्तादान विरमण है, और यह तृतीय अणुव्रत है । अपनी स्त्रीके सिवाय अन्यत्र मैथुनका त्याग करना यह चतुर्थ स्वदारसन्तोष नामका अणुव्रत है, इस अणुव्रतमें परस्त्री सेवनका सर्वथा परित्याग हो जाता

भीलनेो विश्वास ते शुभावी जेसे, जे वचनने कारणे अन्य जेवो मुश्किलीमां भूझाई जय, जेवां वचनेने स्थूल मृषावाद इप गणुवामां आवे छे आ प्रकारना स्थूल मृषावादनो त्याग करवो तेनुं नाम स्थूल मृषावाद विरमणु छे आ प्रकारनुं भीगु अणुव्रत कहुं छे (३) स्थूल अदत्तादानने अडणु न करवुं तेनुं नाम स्थूल अदत्तादान विरमणु छे स्थूल (मोठी) वस्तुनी चोरी करवाने कारणे ते स्थूल अदत्तादान इप मानवामां आवेल छे ते अति दुष्ट अध्यवसाय इप छाय छे तेने दोडो " चोरी " ने नामे ज्योणजे छे ते चोरी करवाने कारणे अपराधी करीने राजदंडने पात्र थवुं पडे छे जेवी चोरी करवानो त्याग करवो तेनुं नाम स्थूल अदत्तादान विरमणु छे. तेने त्रीणुं अणुव्रत कहुं छे. (४) पोतानी पत्नी सिवाय अन्य कोई पणु स्त्री साथे मैथुननुं सेवन करवानो त्याग करवो तेने अक्षयर्थ व्रत कडे छे. आ व्रत वेनारे स्वदारामां ज सतेष आनीने परस्त्री सेवननेो सर्वथा त्याग करवो पडे छे, आ प्रकारनुं ज्येथुं अणुव्रत कहुं छे (५) धन, धान्य आदिना संप्रद

इच्छापरिमाणम् इन्द्रियार्थगोचरं श्रेयो भवतीति इन्द्रियार्थवक्तव्यतायै ' पंच-
वन्ना ' इत्यादीनि त्रयोदश अवान्तरसूत्राणि प्राह—

मूलम्—पंच वन्ना पण्णत्ता, तं जहा-फिण्हा १ नीला २,
लोहिया ३ हालिहा ४ सुक्खिळा ५ ॥ १ ॥ पंच रसा पण्णत्ता,
तं जहा-तित्ता जाव महुरा ॥ २ ॥ पंच कासगुणा पण्णत्ता, तं
जहा-सदा १, रूवा २, गंधा ३, रसा ४ फासा ५ ॥ ३ ॥ पंचहिं
ठाणेहिं जीवासज्जंति, तं जहा-सदेहिं जाव फासेहिं ॥ ४ ॥ एवं रज्जंति
५, सुच्छंति ६, गिज्जंति ७, अज्जोववज्जंति ॥ ८ ॥ पंचहिं
ठाणेहिं जीवा विणिघायमावज्जंति, तं जहा-सदेहिं जाव फासेहिं
॥ ९ ॥ पंच ठाणा अरिण्णयाया जीवाणं अहियाए १०, असु-
हाए २, अखमाए ३, अणिससेयसाए ४ अणाणुगामियत्ताए ५

है, इच्छापरिमाण-धन गत्यादि विषयक अभिलाषाका परिमाण-
नियमन करना अर्थात् एकदेश परिग्रह का त्याग करना—यह पांचवां
अणुवन है, इस समस्त कथनका सारांश यही है कि मनवचन कायसे
कृनकारित अनुमोदनासे द्रव्यक्षेत्र काल और भाव संबन्धी हिंसादिक
पांचों पापोंका जो त्याग है, वह महाव्रत है यह महाव्रत सर्वविरति रूप
होता है और हिंसादिक पांच पापोंका एकदेशसे त्याग करना यह
अणुवन है । महाव्रत ५ और अणुवन ५ होते हैं, इच्छापरिमाण इन्द्रियोंके
अर्थ विषयमें होता है, और यह कल्याणके लिये होता है ॥ सू० १ ॥

करना विषे मर्यादा नष्ठी करवी, असुक प्रभाषु करतां वधारे परिग्रह न राभवो
येउत्ते के परिग्रहने अंशतः त्याग करवो तेनु नाम परिग्रह विरमषु अथवा
छिंठा परिभाषु मत छे आ पांयमुं अणुवन समज्जुं. आ समस्त कथनने
सारांश नीचे प्रभाषु छे—मन, वचन अने कायथी, कृत, कारित अने अनु-
मोदना इप त्रषु करषुथी, द्रव्यक्षेत्रकाण अने भावसंबन्धी हिंसादिक पांय
पापेने जे परित्याग छे तेने मडावन कडे छे ते मडावत सर्वविरति इप
डोय छे. हिंसादिक पांय पापेने अेक देशनी अपेक्षाये (अंशतः) त्याग
करवो ते अणुवन छे ते देशविरति इप डोय छे मडावने पांय छे अने
अणुवनो पषु पांय छे.

भवंति, तं जहा--सद्वा जाव फासा ॥ १० ॥ पंच ठाणा सुपरि-
 न्नाया जीवाणं हियाए सुहाए जाव आणुगामियत्ताए भवंति,
 तं जहा--सद्वा जाव फासा ॥ ११ ॥ पंच ठाणा अपरिण्णाया
 जीवाणं दुग्गइगमणाए भवंति, तं जहा--सद्वा जाव फासा
 ॥ १२ ॥ पंच ठाणा परिण्णाया जीवाणं सुग्गइगमणाए भवंति,
 तं जहा--सद्वा जाव फासा ॥ १३ ॥ सू० २ ॥

छाया-पञ्च वर्णाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृष्णाः १, नीलाः २, लोहिताः ३, हारिद्राः
 ४, शुक्लाः ५ ॥ १ ॥ पञ्च रसाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-तिक्ता यावद् मधुराः ॥ २ ॥
 पञ्च कामागुणाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-शब्दाः १, रूपाणि २, गन्धाः ३, रसाः ४,
 स्पर्शाः ५ ॥ ३ ॥ पञ्चसु स्थानेषु जीवाः सजन्ति, तद्यथा-शब्देषु यावत् स्पर्शेषु
 ॥ ४ ॥ एवं रज्यन्ति ५, मूर्च्छन्ति ६, गृह्यन्ति ७, अध्युपपद्यन्ते ८ पञ्चसु
 स्थानेषु जीवा विनिघातमापद्यन्ते, तद्यथा-शब्देषु यावत् स्पर्शेषु ॥ ९ ॥ पञ्च
 स्थानानि अपरिज्ञातानि जीवानाम् अहिताय १, अमृत्स्वाय २, अक्षमाय ३,
 अनिश्रेयसाय ४ अनानुगामिकतायै भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥ १० ॥
 पञ्च स्थानानि सुपरिज्ञातानि जीवानां हिताय सुस्वाय यावत् आनुगामिकतायै
 भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥ ११ ॥ पञ्च स्थानानि अपरिज्ञातानि
 जीवानां दुर्गतिगमनाय भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत् स्पर्शाः ॥ १२ ॥ पञ्च
 स्थानानि परिज्ञातानि जीवानां सुगतिगमनाय भवन्ति, तद्यथा-शब्दा यावत्
 स्पर्शाः १३ ॥ सू० २ ॥

टीका--'पंचवन्ना' इत्यादि--

कृष्णादि शुक्लान्ताः पञ्चवर्णा भवन्ति, ॥ १ ॥ तिक्तकटुकषायाम्लमधुरा'
 पञ्चरसा भवन्ति । रसानां पञ्चसंख्यकत्वमिहान्येषां संयोगिकत्वेनाविवक्षणाद्

अथ सूत्रकार इन्द्रियार्थीकी वक्तव्यताके निमित्त १३ अवान्तर
 सूत्रोको कहते हैं--'पंच वर्णा पणत्ता' इत्यादि सूत्र २ ॥

टीकार्थ-वर्ण ५ होते हैं जैसे-कृष्ण १ नील २ लोहित ३ हारिद्र ४ और
 शुक्ल ५ । रस ५ होते हैं, जैसे-तिक्त १ यावत् मधुर ५, कामगुण पांच

७वे सूत्रकार इन्द्रियार्थीनी वक्तव्यताने निमित्ते "पंचवन्ना" इत्यादि

१३ अवान्तर सूत्रे तु कथन करे छे 'पंचवर्णा पणत्ता' इत्यादि--

टीकार्थ-वर्ण पांच होय छे--(१) कृष्ण, (२) नील, (३) लोहित (लाल),

(४) हारिद्र (पीला) अने (५) शुक्ल रस पांच होय छे--तिक्त

વોધ્યમ્ ॥ ૨ ॥ તથા-કામગુણાઃ-કામ્યન્તે इति कामाः, તે ચ તે ગુણાશ્ચેતિ ।
 યદ્વા-કામસ્ય=મદનામિલાષસ્ય અમિલાપમાત્રસ્ય વા ઉત્પાદકા ગુણાઃ=પુદ્ગલધર્માઃ
 કામગુણાઃ, તે ચ શબ્દાઘાત્મકાઃ પશ્ચમંચયકા વોધ્યાઃ ॥ ૨ ॥ તથા-જીવાઃ

હોતે હૈં-જેસે-શબ્દ ૧ રૂપ ૨ ગન્ધ ૩ રસ ૪ ઓમ સ્પર્શ ૫ જીવ પાંચ
 સ્થાનોમૈં આસક્ત હોતે હૈં, જસે-શબ્દમૈં યાવન્ સ્પર્શમૈં હસી તરહસે
 જીવ શબ્દાદિક પાંચ સ્થાનોમૈં રાગ કરતે હૈં, ઉનમૈં યોહિત હોતે હૈં,
 ઉનમૈં ગૃહ્ હોતે હૈં, ઉનમૈં એકચિત્ત હોતેહૈં, ઓર હન્હીં પાંચ સ્થાનોમૈંવે
 વિનિઘાતકો પ્રાપ્ત હોતે હૈં, યહાં તકકે કથનકા તાત્પર્ય એસા હૈ-યયપિ
 વર્ણોમૈં એવં રસોમૈં સંયોગજન વર્ણોકી અપેક્ષા ઓર સંયોગી રસોકી
 અપેક્ષા પાંચ સંખ્યાસે સી અધિકતા આની હૈ પરન્તુ યહાં ઉનકી
 વિચક્ષા નહીં હુઈ હૈ, હસલિયે ઉન્હે ૫-૫ કહા ગયા હૈ “ કામ્યન્તે
 इति कामाः ते च ते गुणाश्च इति कामगुणाः” इति कर्मधारय समासके
 અનુસાર જો ગુણ કામનાકે વિષયભૂત ઘનતે હૈંવે કામગુણ હૈં, અથવા-
 મદનામિલાષકે યા અમિલાપ માત્રકે જો ઉત્પાદક હોતે હૈં, એસે પુદ્ગલ
 ધર્મ કામગુણ હૈં, વે કામગુણ શબ્દાદિ સ્વરૂપ હોતે હૈં, ઓર સંખ્યામૈં

(તીખા) થી લઇને મધુર પર્યન્તના પાંચ રસ અહીં ગ્રહણ કરવા કામગુણ
 પાંચ હોય છે—(૧) શબ્દ, (૨) રૂપ, (૩) ગન્ધ, (૪) રસ અને (૫) સ્પર્શ.
 જો પાંચ સ્થાનોમાં આસક્ત થાય છે—શબ્દથી લઇને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ
 સ્થાનો અહીં સમજ લેવા. જીવ શબ્દાદિક પાંચ સ્થાનો પ્રત્યે રાગ કરે છે,
 તેમના પ્રત્યે યોહિત થાય છે, તેમના પ્રત્યે ગૃહ (લોભ) થાય છે, અને
 તે પાંચમાં જ જીવ એકચિત્ત થાય છે. આ પાંચ સ્થાનોની તરફ આકર્ષિત
 રહેલા જીવ અન્તે વિનિઘાત (મૃત્યુ) પ્રાપ્ત કરે છે. આ સમસ્ત કથનનો
 આવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જે કે વર્ણોમાં અને રસોમાં સંયોગવચ્ચ વર્ણોની
 અપેક્ષાએ અને સંયોગી રસોની અપેક્ષાએ પાંચ કરતાં પણ અધિક પ્રકારો
 સંભવી શકે છે, પરન્તુ અહીં પાંચ સ્થાનનું કથન ચાલતું હોવાથી પાંચ મુખ્ય
 વર્ણો અને પાંચ મુખ્ય રસોનું જ કથન કર્યું છે.

“ કામ્યન્તે इति कामाः ते च ते गुणाश्च इति कामगुणाः” આ કર્મધારય
 સમાસ અનુસાર જે ગુણ કામનાના વિષયભૂત બને છે, તેમને કામગુણ કહે છે.
 અથવા મદનામિલાષાના અગર અમિલાષા માત્રના જે ઉત્પાદક હોય છે, એવાં
 પુદ્ગલધર્મ કામગુણ છે, તે શબ્દાદિ સ્વરૂપ હોય છે, અને તેમની સંખ્યા

शब्दादि स्पर्शान्तेषु पञ्चसु स्थानेषु=रागाद्याश्रयेषु सजन्ति=आसक्ता भवन्ति-
सङ्गं कुर्वन्तीति । ' पंचहिं ठाणेहिं ' इत्यादिषु सर्वत्र सप्तम्यर्थे तृतीया बोध्या ।
यद्वा-' पंचहिं ' इत्यत्र तृतीया स्वार्थे एव बोध्या । ' ठाणेहिं ' इत्यादिषु तु
सप्तम्यर्थे बोध्या । अत्र पक्षे-पञ्चभिरिन्द्रियैर्जीवाः रागाद्याश्रयभूतेषु शब्दादिषु
सङ्गं कुर्वन्तीत्यर्थो बोध्यः ॥ ४ ॥ एवम्=अमुना प्रकारेणैव जीवाः शब्दादिषु
पञ्चसु स्थानेषु रज्यन्ते=सङ्गकारणं रागं कुर्वन्ति । ५। मूर्च्छन्ति=शब्दादिदोषदर्शने-
ऽशक्त्या तेषु मोहम् अचेतनत्वमिव यान्ति, संरक्षणानुबन्धवन्तो वा भवन्तीत्यर्थः
॥६॥ गृध्यन्ति=प्राप्तवस्तुष्वसन्तोषादप्राप्तेषु प्रभूताकाङ्क्षावन्तो भवन्ति ॥७॥
तथा-अध्युपपद्यन्ते=तदेकचित्ता भवन्ति, तदुपार्जनाय वाऽधिकं चेष्टमाना भवन्तीति

पांच होते हैं । जीव शब्दादि स्पर्शान्तोर्में पांच स्थानोर्में आसक्त होते
हैं, इस पक्षमें ऐसा अर्थ होना है कि पांच इन्द्रियोंसे जीव रागादिकोंके
आश्रयभूत शब्दादिकोंमें आसक्त होते हैं ४। इसी तरहसे जीव शब्दा-
दिक पांच स्थानोंमें आसक्तिके कारणभूत रागको करते हैं ५ । उन
शब्दादिक रूप विषयोंमें अनेकविध दोषोंको देखते हुए भी जीव अपनी
अशक्तिके वश उनमें मूर्च्छित होते हैं, अचेतनकी जैसी अवस्थाको प्राप्त
करते हैं । अथवा-उनके संरक्षण करनेके लिये आग्रहवाले होते हैं ६ । "गृध्य-
न्ति " प्राप्त वस्तुओंमें असन्तोषसे और अप्राप्त वस्तुओंमें अधिकसे
अधिक आकाङ्क्षासे बंधे रहते हैं ७। " अध्युपपद्यन्ते " उनमें एक-
चित्तवाले होते हैं अथवा उनके उपार्जनके लिये अधिकसे अधिक चेष्टामें
लगे रहते हैं ८ जिस प्रकार मृगादिक शब्दादिक विषयोंमें आकृष्ट

पांथनी छे एवो शब्दादिके लक्षणे स्पर्श पर्यन्तना पांथ स्थानोमा आसक्त
थाय छे. आ पक्षे अर्द्धी एवो अर्थ थाय छे के पांथ इन्द्रियो वडे एव
रागादिकेना कारणरूप शब्दादिकेमां आसक्त थाय छे. (४) आ रीते एव
शब्दादिक पांथ स्थानोमा आसक्तिना कारणभूत रागथी युक्त भने छे
ते शब्दादिक रूप विषयोमां अनेक दोषो जेवा छतां पण एव पोतानी अश-
क्तिने कारणे तेमांथी छुटवाने पहिले तेमां वधारने वधारे भूर्छित (आसक्त)
थतो रहे छे. अचेतन जेवी अवस्थाने प्राप्त करे छे अथवा तेमनुं रक्षाथु
करवाने माटे आग्रहवाणा भने छे (६) " गृध्यन्ति " तेजो प्राप्त वस्तुज्योथी
संतोष पाभतां नथी अने अप्राप्त वस्तुज्योनी अधिकमां अधिक दालसाथी
अंधाथेला रहे छे. (७) " अध्युपपद्यन्ते " तेजो तेमां अकचित्त जनी गथा
डोय छे, अथवा तेनी प्राप्तिने माटे अधिकमां अधिक प्रयत्नशील रहे छे.
(८) जेवी रीते मृगादिक एवो शब्दादिक विषयोमां लुब्ध थधने पोताना प्रिय

૧૮। તથા-જીવાઃ પશ્ચભિરિન્દ્રિયૈઃ શબ્દાદિસ્પર્શાન્તેષુ પશ્ચસુ રાગાઘાશ્રયેષુ વિનિઃ
ઘાતં=મૃગાદીનામિત્ર મરણં સંસારં વા આપચન્તે=પ્રાપ્નુવન્તિ । ઉક્તં ચ—

રક્તઃ શબ્દે હરિણઃ, સ્પર્શે નાગો રસે ચ વારિચરઃ ।

કૃપણપતંગ્નો રૂપે, શુજગો ગન્ધે નનુ વિનિષ્ઠઃ ॥ ૧ ॥

પશ્ચ રક્તાઃ પશ્ચ વિનિષ્ઠા યત્રાગૃહીત પરમાર્થાઃ ।

૯કઃ પશ્ચસુ રક્તઃ, પ્રયાતિ ભસ્માન્તર્તા મૃદઃ ॥ ૨ ॥ ”

કિંચ—“ કુરજ્ઞમાતઙ્ગપતઙ્ગશ્ચ મીના હતાઃ પશ્ચભિરેવ પશ્ચ ।

૯કઃ પ્રમાદી સ કથં ન હન્યતે યઃ સેવતે પશ્ચભિરેવ પશ્ચ ॥૧॥ ” ઇતિ ॥૧॥

હોકર અપને પ્રિય જીવનસે રહિત બન જાતે હૈં, ડસી પ્રકાર રાગાદિકકે આશ્રયભૂત શબ્દાદિ સ્પર્શાન્ત તકકે પાંચ વિષયોંમેં પાંચ અપની ઇન્દ્રિયોં દ્વારા સ્વીંચે જાકર અન્તમેં ડન્હીંમેં મૃત્યુકો પ્રાસ હો જાતે હૈં, યા ડનકે વશવર્તી બનકર પુનઃ પુનઃ ઇસી સંસારમેં જન્મ મરણ આદિ કરતે રહતે હૈં । કહા ઢી હૈ—“ રક્તઃ શબ્દે હરિણઃ ” ઇત્યાદિ ।

હરિણ શબ્દમેં જો કર્ણ ઇન્દ્રિયકા વિષય હૈ, અનુરાગી બનકર અપને પ્રાણોંકો નષ્ટ કર દેતા હૈ, હાથી સ્પર્શન ઇન્દ્રિયકે વિષયભૂત સ્પર્શમેં અધિક અનુરાગી બનકર અપને જીવનકો નષ્ટ કર દેતા હૈ, વારિચર—મછલી રસમેં જો કિ જિહા ઇન્દ્રિયકા વિષય હૈ, અનુરાગી હુઆ અપને જીવનકો સમાસ કર દેતી હૈ, તથા રૂપમેં જો કિ ચક્ષુઇન્દ્રિયકા વિષય હૈ, અનુરાગી હુઆ ષિચારા પતંગ અપને જીવનકો નષ્ટ કર દેતા હૈ, શુજગ—સર્પ ગન્ધમેં—જો કિ ઘ્રાણ ઇન્દ્રિયકા વિષય હૈ, અધિક અનુરાગી

પ્રાણોથી પણ રહિત થઈ જાય છે, એ જ પ્રમાણે રાગાદિકના આશ્રયભૂત શબ્દથી લઈને સ્પર્શ પર્યન્તના પાંચ વિષયોમાં પોતાની પાંચ ઇન્દ્રિયો દ્વારા આકર્ષિત થયેલા હોવા પણ અન્તે મૃત્યુ પામે છે એટલું જ નહીં પણ તેમને અધીન બનેલા હોવા આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ-મરણ રૂપ આવાગમન કર્યા કરે છે. કહ્યું પણ છે કે—“ રક્ત શબ્દે હરિણઃ ” ઇત્યાદિ.

શબ્દ કે જે ઇન્દ્રિયનો વિષય છે તેમાં અનુરાગી બનીને હરણ પોતાના પ્રાણોને શુભાવી દે છે. સ્પર્શેન્દ્રિયના વિષયભૂત સ્પર્શમાં અધિક અનુરાગશુક્ત બનીને હાથી પોતાનાં પ્રાણોને શુભાવી બેસે છે, પ્રાણી, કે જે સ્વાદેન્દ્રિયનો વિષય છે, તેમાં આસક્ત બનીને માછલી પોતાનાં પ્રાણોને શુભાવે છે તથા ચક્ષુઇન્દ્રિયના વિષયરૂપ રૂપમાં આસક્ત થયાથી પતંગિયું પોતાનો જાન શુભાવી બેસે છે ઘ્રાણેન્દ્રિયના વિષયભૂત ગન્ધમાં અધિક અનુ-

तथा-शब्दादिस्पर्शान्तानि पञ्च स्थानानि अपरिज्ञातानि=अपरिज्ञया स्वरू-
पतोऽज्ञातानि अप्रत्याख्यानपरिज्ञया वाऽप्रत्याख्यातानि अहिताय=अनुपकाराय
असुखाय=दुःखाय अक्षमाय=असामर्थ्याय अनिःश्रेयसाय=अकल्याणाय अमो-
क्षाय वा, अनानुगामिकतायै-आ=समन्ताद् अनुगच्छति=कालान्तरमुपकारित्वेन
अनुयाति यत्तदानुगामिकम्, न आनुगामिकम्-अनानुगामिकं, तस्य भावस्तत्ता
तस्यै, जन्मान्तरेऽसहगामित्वाय च भवति ॥ १० ॥ एतानि पञ्च स्थानानि सुप-
रिज्ञातानि जीवानां हितसुखादिभ्यो भवन्ति ॥ ११ ॥ तथा-एतान्येव पञ्च

हुआ अपने जीवनको नष्ट कर देता है, इस प्रकारसे एक इन्द्रियके
विषयमें फंसे जीव जब अपना जीवन खो बैठते हैं, तो फिर जो प्राणी
पांचों इन्द्रियोंके विषयोंमें आसक्त बना हुआ है, उसकी दुर्दशाके विष-
यमें क्या कहा जावे? तथा शब्दसे लेकर स्पर्श तकके ये पांच स्थान
स्वरूपसे अज्ञात हुए अथवा-अप्रत्याख्यान प्रतिज्ञासे अप्रत्याख्यात हुए
जीवोंके अहितके लिये अनुपकारके लिये असुख-दुःखके लिये अक्षम-
असामर्थ्यके लिये अनिःश्रेयस-अकल्याणके लिये अथवा अमोक्षके
लिये होते हैं, एवं अनानुगामिकताके लिये परभवमें साथ जानेके लिये
नहीं होते हैं १०। ये शब्दादि स्पर्शान्त तकके पांच स्थान जब सुपरि-
ज्ञात होते हैं, तब वे जीवोंके हित आदि बातोंके लिये होते हैं ११। तथा

रागयुक्त षनीने सर्प पोतानां प्राणु शुभावे छे. आ रीते अेक ज इन्द्रियना
विषयमां आसक्त थयेसा अुव ने पोतानुं अुवन शुभावी जेसे छे, तेा पांचो
इन्द्रियोना विषयना शुभाम भनेसा जे अुवे छे, तेमनी दुर्दशानी तेा
वात ज शी करवी ।

शब्दधी लघने स्पर्श पर्यन्तना आ पाय स्थानना स्वरूपधी अज्ञात
डोय अेवां अथवा अप्रत्याख्यान परिज्ञाधी अप्रत्याख्यात डोय अेवां अुवोने
भाटे ते पाय स्थान अहित, अनुपकार, असुख (दुःख), अक्षम (असामर्थ्य)
अनिश्रेयस (अकल्याण) अथवा अमोक्षने भाटे कारणरूप भने छे, अने
अनुगामिता-परलवमां साथे जयाने भाटे कारणभूत बनतां नथी (१०).
आ शब्दधी लघने स्पर्श पर्यन्तना पांच स्थान जयारे सुपरिज्ञात थर्ष जय
छे, तयारे ते अुवोना अहित, उपकार आदि करवांमां कारणभूत भने छे (११).

સ્થાનાનિ અપરિજ્ઞાતાનિ જીવાનાં દુર્ગતિગમનાય=નારકાદિભવપ્રાપ્તયે ભવન્તિ, પરિજ્ઞાતાનિ તુ એવાનિ સુગતિગમનાય=સિદ્ધ્યાદિપ્રાપ્તયે ભવન્તીતિ ॥૧૨૧૩૨૦૨॥
દુર્ગતિસુગતી ચ કારણાન્તરેણાપિ ભવત્ इति પ્રતિપાદયિતુમાહ—

મૂલ્ય—પંચહિં ઠાણેહિં જીવા દોગ્ગઈં ગચ્છંતિ, તં જહા--
પાણાઢ્વાણં જાવ પરિગ્રહેણં । પંચહિં ઠાણેહિં જીવા સોગ્ગઈં
ગચ્છંતિ, તં જહા -પાણાઢ્વાયવેરમણેણં જાવ પરિગ્રહવેરમણેણં ॥સૂ.૩॥

હાયા—પશ્ચમિઃ સ્થાનૈર્જીવા દુર્ગતિં ગચ્છન્તિ, તદ્યથા—પ્રાણાતિપાતેન યાવત્
પરિગ્રહેણ । પશ્ચમિઃ સ્થાનૈર્જીવાઃ સુગતિં ગચ્છન્તિ, તદ્યથા—પ્રાણાતિપાતવિરમણેન
યાવત્ પરિગ્રહવિરમણેન ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—‘ પંચહિં ઠાણેહિં ’ इत्यादि—व्याख्या सुगमा ॥ सू. ३ ॥

ચેહી પાંચ સ્થાન અપરિજ્ઞાત હોને પર જીવોંકો દુર્ગતિગમનકે લિયે હોતે
હિં, અર્થાત્ નારકાદિ ભવોંકી પ્રાપ્તિકે લિયે હોતે હિં, તથા જય યે પરિ-
જ્ઞાત હોતે હિં, અર્થાત્ જ્ઞપરિજ્ઞાસે અનર્થકા સૂચ જાનકર પ્રત્યાખ્યાન
પરિજ્ઞાનસે શબ્દાદિક કામભોગોં કા ત્યાગ કર દેતે હિં । તવ યે સુગ-
તિકી પ્રાપ્તિકે લિયે—સિદ્ધિ આદિકી પ્રાપ્તિકે લિયે હોતેહિં ૧૨-૧૩॥સૂ.૨॥

દુર્ગતિ ઓર સુગતિ યે દૂસરે કારણસે ખી હોની હિં, ઇસ ઘાતકો
પ્રતિપાદન કરનેકે લિયે અવ સૂત્રકાર કહતે હિં—

‘પંચહિં ઠાણેહિં જીવા’ इत्यादि सूत्र ३ ॥

ટીકાર્થ—પાંચ કારણોંસે જીવ દુર્ગતિમં જાતેહિં, જૈસે—પ્રાણાતિપાતસે
યાવત્ પરિગ્રહસે તથા પાંચ કારણોંસે જીવ સુગતિકો પ્રાપ્ત કરતેહિં, જૈસે—
પ્રાણાતિપાત વિરમણસે યાવત્ પરિગ્રહ વિરમણસે ॥ સૂ. ૩ ॥

એ જ પાંચ સ્થાનો અપરિજ્ઞાત જ રહે તેા જીવોને દુર્ગતિમાં જવાના કારણ-
ભૂત અને છે એટલે કે નારકાદિ ભવોની પ્રાપ્તિ કરાવે છે, તથા જ્યારે તે
પાંચ સ્થાન સુપરિજ્ઞાત થઈ જાય છે, અર્થાત્ જ્ઞપરિજ્ઞાથી તેને અનર્થના
કારણરૂપ બળી પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી શબ્દાદિક કામભોગોને ત્યાગ કરી દે
છે. ત્યારે જીવને સુગતિની સિદ્ધિ આદિની પ્રાપ્તિ કરાવે છે. (૧૨-૧૩) ॥સૂ. ૨॥
બીજા કારણોને લીધે પણ જીવ દુર્ગતિ અને સુગતિની પ્રાપ્તિ કરે છે.
એ જ વાતનું હવે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્ર દ્વારા પ્રતિપાદન કરે છે.

“ પંચહિં ઠાણેહિં જીવા ” इत्यादि—

ટીકાર્થ—પ્રાણાતિપાતથી લઇને પરિગ્રહ પર્યન્તના પાંચ કારણોને લીધે જીવ
દુર્ગતિમાં જાય છે પ્રાણાતિપાત વિરમણથી લઇને પરિગ્રહ વિરમણ પર્યન્તના
પાંચ કારણોને લીધે જીવ સુગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

संवरतपसोर्मोक्षसाधनत्वं प्रसिद्धम् । तत्रानन्तरमास्रवनिरोधलक्षणः संवर
उक्तः । अधुना प्रतिमा रूपान् तपोभेदानात्—

मूलम्--पंच पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा--भद्रा १ सुभद्रा
२ महाभद्रा ३ सर्वओ भद्रा ४ भद्रोत्तरपडिमा ५ ॥ सू० ४ ॥

छाया—पञ्चप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—भद्रा १ सुभद्रा २ महाभद्रा ३
सर्वतोभद्रा ४ भद्रोत्तरप्रतिमा ५ ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘ पंच पडिमाओ ’ इत्यादि—

भद्रादयः पञ्चप्रतिमा विज्ञेयाः । आसां व्याख्या ग्रन्थान्तरादवसेया ॥ सू० ४ ॥
इत्थं कर्मनिर्जरणहेतु तपोविशेषमभिधाय सम्प्रति कर्मानुपादानहेतुभूतस्य
संयमस्य विषयभूतान् एकेन्द्रियजीवानाह—

मूलम्--पंच थावरकाया पण्णत्ता, तं जहा--इंदे थावरकाए
१ बंभे थावरकाए २ सिप्पे थावरकाए ३, संमती थावरकाए ४
पाजावच्चे थावरकाए ५। पंच थावरकायाहिवई पण्णत्ता, तं
जहा--इंदे थावरकायाहिवई १ जाव पाजावच्चे थावरकायाहिवई
५ ॥ सू० ५ ॥

संवर और तप ये मोक्षके साधन हैं, यह बात प्रसिद्ध है, इनमें
आस्रवका निरोध होना यह संवर है, यह बात तो कही जा चुकी है,
अतः अब सूत्रकार प्रतिमा रूप तपोंके भेदोंका कथन करते हैं—

‘पंच पडिमाओ पण्णत्ताओ’ इत्यादि सूत्र ४ ॥

टीकार्थ—प्रतिमाएँ पांच कही गई हैं—जैसे—भद्रा १ सुभद्रा २ महाभद्रा ३
और सर्वतोभद्रा ४ और भद्रोत्तर प्रतिमा ५ इन प्रतिमाओंकी व्याख्या
अन्य ग्रन्थोंसे जान लेनी चाहिये ॥ सू० ४ ॥

संवर अने तपने मोक्षना साधन रूप कक्षां छे आस्रवना निरोध करवे
तेनुं नाम संवर छे, अे वातनुं तो आगण प्रतिपादन थछं गथुं छे. तेथी
छेवे सूत्रकार तपना वेद रूप प्रतिमानुं कथन करे छे.

“ पंच पडिमाओ पण्णत्ताओ ” इत्यादि—

टीकार्थ—प्रतिमाओ नीचे प्रमाणे पांच कही छे—(१) भद्रा, (२) सुभद्रा, (३)
महा भद्रा, (४) सर्वतो भद्रा अने (५) भद्रोत्तर प्रतिमा. आ प्रतिमाओनुं
स्वरूप अन्य शस्त्रग्रंथोभांथी नशी देवुं. ॥ सू. ४ ॥

છાયા—પશ્ચ સ્થાવરકાયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા—ઇન્દ્રઃ સ્થાવરકાયઃ ૧, વ્રહ્મા સ્થાવરકાયઃ ૨, શિલ્પઃ સ્થાવરકાયઃ ૩, સમ્મતિઃ સ્થાવરકાયઃ ૪ પ્રાજાપત્યઃ સ્થાવરકાયઃ ૫। પશ્ચ સ્થાવરકાયાધિપતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ તથા—ઇન્દ્રઃ સ્થાવરકાયા ધિપતિઃ ૧ યાવત્ પ્રાજાપત્યઃ સ્થાવરકાયાધિપતિઃ ૫। સૂ ૫ ॥

ટીકા—‘ પંચ થાવરકાયા ’ ઇત્યાદિ—

સ્થાવરકાયાઃ—સ્થાવરનામકર્મોદયાત્ સ્થાવરાઃ—પૃથિવ્યાદયઃ, તેષાં કાયા= રાશયઃ યદ્વા—સ્થાવરઃ=સ્થાવરનામકર્મોદયજનિતઃ કાયઃ=શરીરં યેષાં તે તથા ।

इस प्रकारसे कर्म निर्जरणका हेतु तपो विशेषको कहकर अब सूत्रकार कर्मोंके क्षयका हेतुभूत जो संघम है, उस संघमके विषय भूत जो एकेन्द्रिय जीव हैं उन्हें कहते हैं—

‘पंच थावर काया पण्णत्ता’ इत्यादि सूत्र ५ ॥

સૂત્રાર્થ—પાંચ સ્થાવરકાય કહે ગયેહૈં, જૈસે-ઇન્દ્ર સ્થાવરકાય ૧ વ્રહ્મા સ્થાવર કાય ૨ શિલ્પ સ્થાવરકાય ૩ સમ્મતિ સ્થાવરકાય ૪ ઓર પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાય ૫। પાંચ સ્થાવરકાયાધિપતિ કહે ગયે હૈં—જૈસે-ઇન્દ્ર સ્થાવર કાયાધિપતિ ૧ યાવત્ પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાયાધિપતિ ૫।

ટીકાર્થ—સ્થાવર નામકર્મકે ઉદયસે સ્થાવર જીવ હોતેહૈં, યે જીવ પૃથિવી આદિરૂપ હોતે હૈં, इनकी जो राशि है, वह स्थावरकाय है, अथवा स्थावर नामकर्मके उदयसे जनित है, काय-शरीर जिन्होंका वे स्थाव-

આ પ્રકારે કર્મનિર્જરણના હેતુરૂપ તપોવિશેષનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર કર્મોના અનુત્પાદના હેતુભૂત જે સંઘમ છે, તે સંઘમને વિષયભૂત જે એકેન્દ્રિય જીવો છે તેમનું કથન કરે છે.

સૂત્રાર્થ—“ પંચ થાવરકાયા પણ્ણત્તા ” ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—સ્થાવરકાયનાનીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) ઇન્દ્ર સ્થાવરકાય (૨) વ્રહ્મા સ્થાવરકાય, (૩) શિલ્પ સ્થાવરકાય, (૪) સમ્મતિ સ્થાવરકાય, અને (૫) પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાય પાંચ સ્થાવર કાયાધિપતિ કહ્યા છે—(૧) ઇન્દ્ર સ્થાવર કાયાધિપતિ થી લઈને પ્રાજાપત્ય સ્થાવરકાયાધિપતિ પર્યન્તના પાંચ સ્થાવર કાયાધિપતિ સમજવા.

ટીકાર્થ—સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી સ્થાવર જીવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. તે જીવો પૃથ્વી આદિ રૂપ હોય છે. તેમની જે રાશિ છે તેને સ્થાવરકાય કહે છે. અથવા સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી જનિત જેમની કાયા (શરીર) છે, તે

ते च पञ्चसंख्यकाः प्रज्ञप्ताः, तथा-इन्द्रः स्थावरकाय इत्यादि । तत्र-इन्द्रः स्थावरकायः=पृथिवीकायः । अयम् इन्द्रसंभ्वन्धित्वादिन्द्र इत्युच्यते ॥ १ ॥ तथा-ब्रह्मा स्थावरकायः=अप्कायः । ब्रह्मदेवसंभ्वन्धित्वादयं ब्रह्मेत्युच्यते ॥ २ ॥ शिल्पः स्थावरकायः=तैजसकायः । शिल्पदेवसंभ्वन्धित्वादयं शिल्प इत्युच्यते ॥ ३ ॥ सम्मतिः स्थावरकायः=वायुकायः । अयं सम्मतिदेवसंभ्वन्धित्वात् सम्मतिरित्युच्यते ॥ ४ ॥ तथा-प्राजापत्यः स्थावरकायः=वनस्पतिकायः । प्रजापतिदेवसंभ्वन्धित्वादयं प्राजापत्य इत्युच्यते ॥ ५ ॥ इति । एषां पञ्चानां स्थावरकायानामिन्द्रादयः पञ्च अधिपत्यः=स्वामिनः क्रमेण विज्ञेयाः । अमुमेवार्थं सूचयितुमाह- 'पञ्च स्थावरकायाहिवर्ह पण्णत्ता' इत्यादि । अत्रेदं बोध्यम्-यथा दिशामिन्द्राग्न्या-

काय हैं, ये स्थावरकाय पांच कहे गये हैं, इनमें इन्द्र स्थावरकाय पृथिवीकाय है इसका इन्द्र अधिपति होनेसे इन्द्र ऐसा कहा गया है १। ब्रह्मा स्थावरकाय अप्काय है २। इसका ब्रह्मा अधिपति होनेसे ब्रह्मा ऐसा कहा गया है । शिल्प स्थावरकाय तैजसकाय है ३। इसका शिल्पदेव अधिपति होनेसे शिल्प ऐसा कहा गया है, सम्मति स्थावरकाय वायुकाय है, इसका सम्मतिदेव अधिपति होनेसे सम्मति ऐसा कहा गया है। और प्राजापत्य स्थावरकाय वनस्पतिकाय है, इसका प्रजापतिदेव अधिपति होनेसे प्राजापत्य ऐसा कहा गया है ५। इन पांच स्थावरकायोंके इन्द्रादिक पांच अधिपति स्वामी क्रमसे हैं । यही बात-"पञ्च स्थावरकायाहिवर्ह पण्णत्ता" इस सूत्रसे प्रकट की गई है यहां ऐसा समझना चाहिये-जिस प्रकारसे स्वामी इन्द्र आदि नक्षत्रोंके अधिपति अश्वि यम आदि हैं, दक्षिणोत्तर लोकार्धोंके अधिपति शक्र और

शुवेने स्थावरकाय कडे छे. तेना उपर्युक्त पांच प्रकार कहे छे—(१) इन्द्र स्थावरकाय पृथिवीकायने कहे छे, कारण के तेना अधिपति इन्द्र छे. (२) अप्कायने ब्रह्मा स्थावरकाय कडे छे, कारण के तेना अधिपति ब्रह्मा छे. (३) तैजसकायने शिल्प स्थावरकाय कडे छे, कारण के तेना अधिपति शिल्पदेव छे. (४) वायुकायने सम्मति स्थावरकाय कडे छे, कारण के तेना अधिपति सम्मतिदेव छे. (५) वनस्पतिकायने प्राजापत्य स्थावरकाय कडेवाभां आवे छे, कारण के तेना अधिपति प्राजापति देव छे

उपर्युक्त पांच स्थावरकायतेना अधिपति इन्द्र आदि देवो छे जे वात सूत्रकारे "पञ्च स्थावरकायाहिवर्ह पण्णत्ता" इत्यादि सूत्रे द्वारा प्रकट करी छे. अर्थात् जेम समञ्जुं जेधजे के जेम नक्षत्रोना अधिपति अश्वि

દયો, નક્ષત્રાણામશ્ચિયમાદયો, દક્ષિણોત્તરલોકાર્ધયોઃ ગક્રેશાનો, તથૈવ ઇન્દ્રબ્રહ્મા-
દયઃ પૃથિવ્યાદીનાં સ્થાવરકાયાનામધિપતયો ભવન્તિ, અતઃ પૃથ્વ ઇન્દ્રાદયઃ પશ્ચ
સ્થાવરકાયાધિપતિત્વેનોક્તા ઇતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

एते च अवधिपन्तो भवन्ति, परमेपां कदाचिदवधिदर्शनश्रोभोऽपि भवती-
त्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे समुप्पज्जिउकामेवि तप्प-
ढमयाए खंभाएज्जा, तं जहा--अप्पभूयंवा पुढविं पासित्ता तप्प-
ढमयाए खंभाएज्जा १, कुंथुरासिं वा पुढविं पासित्ता तप्पढम-
याए खंभाएज्जा २, महइमहालयं वा महोरगसरीरं पासित्ता
तप्पढमयाए खंभाएज्जा ३, देवं वा सहिड्ढियंजाव महासोक्खं
तप्पढमयाए खंभाएज्जा ४, पुरेसु वा पोराणाइं महइमहाल-
याइं महानिहाणाइं पहीणसामियाइं पहीणसेउयाइं पहीणगुत्ता-
गाराइं उच्छिन्नसामियाइं उच्छिन्नसेउयाइं उच्छिन्नगुत्तागाराइं
जाइं इमाइं गाभागरनगरखेडकव्वडदोणमुहपट्टणासमसंवाह-
सन्निवेशेसु सिंघाडगतिगचउक्कवच्चरचउम्मुह महापहपहेसु णगर-
णिद्धमणेसु सुसाणसुन्नागारगिरिकंदरसंतिसेलोवट्ठावण-
भवणगिहेसु संनिक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं वा पासित्ता तप्पढम-
याए खंभाएज्जा ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे
समुप्पज्जिउकामेवि तप्पढमयाए खंभाएज्जा ॥ सू० ६ ॥

ईशान हैं, उसी प्रकारसे इन्द्र ब्रह्मा आदि पृथिवी आदि स्थावरकार्योकेहैं।
इसीलिये इन्द्रादिक पांच स्थावरकार्योके अधिपतिरूपसे कहे गये हैं। सू० ५॥

યમ આદિ હોય છે, લોકના દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધના અધિપતિ શુક્ર અને
ઇશાન નામના ઇન્દ્રો હોય છે, એ જ પ્રમાણે પૃથ્વી આદિ સ્થાવરકાર્યોના અધિપતિ
બ્રહ્મા આદિ પાંચ છે તેથી ઇન્દ્રાદિક પાંચ દેવોને સ્થાવરકાર્યોના અધિપતિ
રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. સૂ. ૫ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकाममपि तत्प्रथमतायां स्फुब्धीयात् तद्यथा—अल्पभूतां वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्फुब्धीयात् १, कुन्धुराशिं वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्फुब्धीयात् २, महातिमहत् वा महो- रगशरीरं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्फुब्धीयात् ३, देवं वा महर्द्धिकं यावत् महासौख्यं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्फुब्धीयात् ४, पुरेषु वा पुराणानि महातिमहान्ति महानि- धानानि प्रहीणस्त्रामिकानि प्रहीणसेत्तृकानि प्रहीणगोत्रागाराणि उच्छिन्नस्वा- मिकानि उच्छिन्नसेत्तृकानि उच्छिन्नगोत्रागाराणि यानि इमानि ग्रामाकरनगर खेटकर्वटद्रोणमुखपट्टनाश्रमसंवाहसन्निवेशेषु शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वरचतु- र्मुखमहापथपथेषु नगरनिर्द्गमनेषु श्मशानशून्यागारगिरिकन्दरशान्तिशैलोप- स्थापनभवनगृहेषु सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति तानि वा दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां स्फुब्धी- यात् १। इत्येतैः पञ्चभिः—स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकामं तत्प्रथमतायां स्फुब्धी- यात् ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘पंचहिं ठाणेहिं इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनम्=अवधिरेव दर्शनं=रूपिसामान्यग्रहणम् अव- धिदर्शनम् तत् समुत्पत्तुकाममपि=अवितुकाममपि तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनो- त्पादप्रथमसमये स्फुब्धीयात्—क्षुब्धेत्—चलेदित्यर्थः । यद्वा—अवधिदर्शने समुत्प- त्तुकामे सति तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये अवधिमान् स्फुब्धी-

ये अवधिवाले होते हैं, परन्तु इनके कदाचित् अवधिदर्शनका क्षोभ भी होता है—यही बात सूत्रकार कहते हैं—

टीकार्थ—‘पंचहिं ठाणेहिं ओहिदंसणे’ इत्यादि सूत्र ६ ॥

उत्पन्न होनेकी इच्छावाला हुआ भी अवधिदर्शन अपने उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें चलायमान हो सकता है, इसमें ये पांच कारण हैं—अवधिज्ञानसे पहिले रूपी पदार्थको सामान्य रूपसे ग्रहण करनेवाला जो उसका दर्शन है वह अवधिदर्शन है, यह अवधिदर्शन उत्पन्न होनेके

तेओ अवधिवाणा डोय छे, पणु क्यारेक तेमना अवधिदर्शननो क्षोभ पणु थतो डोय छे. ओ न वात डवे सूत्रकार डवे प्रकट करे छे.

टीकार्थ—“पंच हिं ठाणेहिं ओहिदंसणे” इत्यादि—

उत्पन्न थवानी इच्छावाणुं डोवा छतां पणु पोतानी उत्पत्तिना प्रथम समयमां नीयेना पांच कारणेने लीये अवधिदर्शन चलायमान थछ शके छे. अवधिज्ञान थया पडेलां रूपी पदार्थेने सामान्य रूपे अडणु करनारुं न तेनु दर्शन छे. तेने अवधिदर्शन कडे छे. ते अवधिदर्शन उत्पन्न थवाने योग्य डोवाथी.

યાત્=ક્ષુભ્યેત્ । અવધિમાનિતિ ગમ્યત્વેનાક્ષિપ્તમ્ । ક્ષોભપકારમેવાહ-‘ તં જહા ’ इत्यादिना । तद्यथा-अल्पभूताम्-अल्पानि=स्तोक्तानि भूतानि=प्राणिनो यस्यां सा ताम्-अल्पसंख्यकरूपानिसहितां भूमिं दृष्ट्वा अवधिज्ञानवतोऽवधिदर्शनं तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनप्रथमोत्पादसमये स्कम्नीयात्=क्षुभ्येत् । अयं भावः- बहुसंख्यकसत्त्वसमाकुला भूरियमिति संभावना समन्वितोऽकस्मादल्पसत्त्व सहितां भूमिम् अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये दृष्ट्वा “ आः किमेतदेवम् ” इत्येवं संक्षुब्धवधिदर्शनो भवति, अक्षीणमोहनीयत्वादिति १। वा=अथवा कुन्धु-

योग્ય होनेसे उत्पन्न हुआ भी जो वह अपनी आपत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है, अथवा अवधिदर्शन उत्पत्तिके योग्य होनेसे उत्पन्न होता भी जो उसकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अवधिज्ञानवाला जीव क्षुभित हो जाता है, तो उसके क्षुभित होनेके कारण यहाँ-जब अवधि-ज्ञानी अल्पसंख्यक प्राणियोंसे सहित भूमिको देखता है, तब उसका अव-धिदर्शन उसके देखनेसे अपनी उत्पत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है-चलायमान हो जाता है। इसका भाव ऐसा है, यह भूमि अनेक संख्यावाले प्राणियोंसे समाकुल-व्याप्त है, ऐसी संभावनासे समन्वित अवधिज्ञानी अकस्मात् अल्पसत्त्व सहित भूमिको अवधिदर्शनके उत्पादके प्रथम समयमें जब देखता है, तो देखकर “ ओह क्या यह ऐसा है ” इस प्रकारसे वह अवधिदर्शनवाला संक्षुब्ध हो जाता है,

ઉત્પન્ન થાય છે પણ ખરૂં, પરન્તુ જો તે પોતાની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં ક્ષુભિત થઈ જાય છે અથવા જો જીવ અવધિદર્શનની પ્રાપ્તિને પાત્ર હોય છે તેને અવધિદર્શન ઉત્પન્ન થઈ પણ જાય છે, પરન્તુ ક્યારેક તેની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં અવધિજ્ઞાનવાળો જીવ ક્ષુભિત થઈ જાય છે, તે ક્ષુભિત થવાના કારણો નીચે પ્રમાણે હોય છે—(અહીં અવધિજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનીમાં ધર્મ અને ધર્મીની અપેક્ષાએ અલેહ માનવામાં આવ્યો છે)

(૧) જ્યારે અવધિજ્ઞાની અલ્પસંખ્યક પ્રાણીઓવાળી ભૂમિને દેખે છે, ત્યારે તેમને જોવાથી તેનું અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે ક્ષુભિત થઈ જાય છે-ચલાયમાન થઈ જાય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—

આ ભૂમિ અनेक संख्यावाणा प्राणीओवाणी व्याप्त છે એવી સંભાવનામાં માનનારો તે અવધિજ્ઞાની અકસ્માત્ અલ્પ સંખ્યક પ્રાણીઓવાળી ભૂમિને અવધિદર્શનની ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયે જ્યારે દેખે છે, ત્યારે તેને એવું આશ્ચર્ય થાય છે કે “ શું આ ભૂમિ આટલા જ પ્રાણીઓવાળી છે! ” આ પ્રકારે તે અવધિજ્ઞાની સંક્ષુબ્ધ થઈ જાય છે, કારણ કે તે અક્ષીણ મોહવાળો

राशिभूताम्=कुन्धुराशिमयीं कुन्धुभिर्व्याप्तां पृथिवीं दृष्ट्वाऽत्यन्तविस्मयदयाभ्यां
स्कभ्नीयात् ॥ २ ॥ वा=अथवा-महातिमहालयम्=महतोऽप्यतिमहत् महोरग-
शरीरं=महासर्पकायं बाह्यद्वीपवर्तिं योजनसहस्रप्रमाणं दृष्ट्वा विस्मयभयाभ्यां स्कभ्नी-
यात् ॥ ३ ॥ वा=अथवा महर्द्धिकं यावच्छब्दग्राह्य-महाद्युतिकं महानुभागं महाबलं
तथा महासौख्यं देवं दृष्ट्वा विस्मयात् स्कभ्नीयात् ॥ ४ ॥ वा=अथवा पुरेषु=
नगरेषु पुराणानि=प्राचीनानि महातिमहालयानि=विशालातिविशालानि महानि-
धानानि=महामूल्यरत्नादीनां निधानस्थानानि भवन्ति, कीदृशानि तानि भवन्ति ?

क्योंकि वह अक्षीण मोहवाला होता है १। अथवा कुन्धुराशिभूत कुन्धु-
राशिसे व्याप्त पृथिवीको देखकर वह अत्यन्त विस्मय एवं दया इनसे
संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला हो जाता है २। अथवा-जब वह अपने अव-
धिदर्शनसे महासर्पकायको बाह्यद्वीपवर्तिं योजन सहस्र प्रमाणवाले बहुत
तही अधिक विशालकायवाले सर्पकायको देखता है, तो देखकर विस्मय
और भय इन दोनोंसे संक्षुब्ध अवधिदर्शकवाला हो जाता है ३। अथवा-
जब वह अपने अवधिदर्शनसे महर्द्धिक यावत्-महाद्युतिक महाप्रभाव-
युक्त महाबल संपन्न तथा महासौख्ययुक्त किसी देवको देखता है, तो
देखकरके वह अवधिज्ञानी जीव विस्मयसे संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला
अवधिदर्शनकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें बन जाता है, अथवा नगरोंमें
इस प्रकारके महातिमहान् प्राचीनतम गढे हुए या रखे हुए निधानोंको
देखता है, तो देखकर वह अवधिदर्शन अपने प्रथम समयमें संक्षुब्ध
हो जाता है ५। निधानके इन विशेषणोंका अर्थ इस प्रकारसे है जैसे-

छोय छे (२) अथवा कुन्धु राशि इय अथवा कुन्धु राशि वडे व्याप्त पृथ्वीने
लेधने अत्यन्त विस्मय अने दयाथी ते संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाणो थर्ध लय
छे (३) अथवा न्यारे ते भाह्य 'द्वीपमां योजन सहस्र प्रमाणवाणा महा-
सर्पकायने लेत्रे छे, त्यारे तेने लेधने विस्मय अने लय, आ भन्ने कारणे
संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाणो थर्ध लय छे. (४) अथवा न्यारे ते अवधिदर्शनथी
महर्द्धिक, महाद्युतिक, महा प्रभावयुक्त, महा बलयुक्त, महा सुभसंपन्न
अथां देवने देणे छे, त्यारे ते अवधिदर्शनवाणो एव अवधिदर्शननी उत्पत्तिना
प्रथम समयमां विस्मयने लीधे संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाणो भनी लय छे.
(५) अथवा नगरादिमां महातिमहान् प्राचीनतम नमीनमां दारी राजेला के
भूगर्भमां भनी इये रहेला ल'डारेने न्यारे ते अवधिदर्शनना प्रथम समये
लेवे छे, त्यारे विस्मयने कारणे तेनुं अवधिदर्शन संक्षुब्ध थर्ध लय छे.

इत्याह-प्रहीणसामिकानि=प्रहीणाः=परिक्षीणाः नष्टप्रायाः स्वामिनो येषां तानि तथोक्तानि, तथा=प्रहीणसेत्तुकानि=प्रहीणाः सेत्कारः=सेचकास्तेष्वेव उपर्यु-परिधनप्रक्षेपाकाः पुत्रादयो येषां तानि तथोक्तानि । अथवा-‘ प्रहीणसेतुकानि ’ इतिच्छाया । प्रहीणाः सेतवः=तदभिज्ञानभूताः पालयस्तन्मार्गा वा अतिपुराण-त्वेन प्रतिजागरकामावेन च येषां तानि तथोक्तानि, तथा-प्रहीणगोत्रागाराणि-प्रहाणानि गोत्रागाराणि=निधायकानां कुलानि गृहाणि च येषां तानि तथोक्तानि । उक्तमेवार्थं त्रिशदयति-‘ उच्छिन्नसामियाई ’ इत्यादि, उच्छिन्नसामिकानि-उच्छिन्नाः=उन्मूलिताः स्वामिनो येषां तानि तथोक्तानि । अन्यत् पूर्ववद् बोध्यम् । एवं त्रिधानि पुरवर्तीनि पुराणानि निधानानि दृष्ट्वा, वा=अथवा-ग्रामाकरनगर-खेटकर्वटद्रोणमुखपट्टनाश्रममंवाहसन्निवेशेषु-तत्र-ग्रामः-यत करादिर्गृह्यते,

जो निधान पुराने हों, बहुत पहिलेके हों, प्राचीन हों, महानि-महालय हों-बहुतही अधिक विशाल हों जिनकी द्रव्य राशिका कोई प्रमाण न हो, और जिनके स्वामी नष्ट प्राय हो चुके हों, तथा जो प्रहीणसेत्तुक हों, जिनकी वृद्धि करनेवाले उनके स्वामियोंके भी कोई पुत्र पौत्रादि न रहे हों-सबके सब (नर) हो चुके हों अथवा जो प्रहीणसेतुक हों-उन निधानोंके जाननेवाले तक भी कोई न बचे हों तथा जो प्रहीण गोत्रागार-वाले हों-जिनके अधिकारियोंके गोत्रके घर तक भी नष्ट हो गये हों ऐसे उच्छिन्न (नष्ट) स्वामी आदि विशेषणोंवाले महासूत्यवाले रत्नादिकोंके विधानोंको-खजानोंको देखकर अथवा-ग्राममें-करादि टेक्स आदि

अर्धी जे निधान (धन लंडार) पद वपरायु छे, तेना विशेषणाने अर्थ आ प्रमाणे छे-जे निधाने प्राचीनकाणथी जमीनमां रडेला डोवाथी तेमने पुराणा कथा छे ते निधाने धनुं ज विशाल डोवाथी तेमने मडाति मडान् कथा छे ते लंडारोमां अपार द्रव्यराशि रडेली छे ते लंडारोना माडिके नष्ट थर्ध युक्त्या छे, अष्टेजु ज नडीं पणु ते धनलंडारोनी वृद्धि करनारा पुरुषोना पुत्र, पौत्र आदि कोर्ध जन्थुं नथी तेना अके अके वारस कालधर्म पाभी युक्त्या छे. आ कारणु तेमने ‘ प्रहीणु सेत्तुक ’ कथा छे. अथवा ते निधाने ‘ प्रहीणु सेतुक ’ छे-अष्टेजे के ते निधानोना अस्तित्वने जणुनार पणु कोर्ध विद्यमान नथी, तथा जे प्रहीणु गोत्रागारवाणा छे, अष्टेजे ते लंडारोना स्वामीना गोत्र (कुण) नी कोर्ध पणु व्यक्तिना घर पणु मोजूह नथी, अेषां उच्छिन्न स्वामी आदि विशेषणोथी युक्त मडाभूद्यवान रत्नादि कोथी युक्त जलनाओने ग्राम, नगर आदिना लूगलमां रडेला जेधने तेनुं अनधिदर्शन क्षुब्ध थर्ध जय छे.

आकारः=रत्नादीनामुत्पत्तिस्थानम्, नकरम्=नास्तिकरो यस्मिंस्तत्, यद्वा नगरं-
प्रसिद्धम्, खेटम्=धूलिप्राकारपरिवेष्टितम् कर्बटम्=कुत्सितं नगरम्, मडम्बम्-
सर्वतोऽर्धतृतीययोजनं यावद् वसतिरहितम्, द्रोणमुखम्=जलस्थलोभयपथयुक्तम्, पट्ट-
नम्=जलस्थलपथयोरन्यतरेण निर्गमप्रवेशौ यत्र तत् आश्रमः=तापसजननिवास-
स्थानम्, संवाहः=परचक्रभवेन रक्षार्थं यत्र पर्वतनितरगादिदुर्गे धान्यादीनि जनाः
संवाहन्ति सः, संनिवेशः-यत्र प्रभूतानां भाण्डानां सन्निवेशः सः, एषामितरेतर-
योग द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु, तथा-शृङ्गाटकत्रिकचतुष्कचत्वरचतुर्मुखमहापथप-
थेषु-तत्र-शृङ्गाटकम्=त्रिकोणमार्गः, त्रिकम्=त्रिपथम्-यत्र त्रयो मार्गा मिलन्ति
तत्स्थानम्, चतुष्कम्=चतुष्पथम्-यत्र चत्वारोमार्गा मिलन्ति तत्स्थानम्, चत्व-

जिनमेंसे वसूल किया जाता है, ऐसे स्थानमें आकरमें-रत्नादिककी
उत्पत्तिके स्थानभूत खानोंमें नगरमें खेटमें-धूलिप्राकारसे परिवेष्टित
स्थानमें, कर्बटमें-कुत्सित नगरमें मडम्बमें-चारों ओर अहाई २ योजन-
तक वसती रहित स्थानमें द्रोणमुखमें-जलपथ एवं स्थलपथ इन दोनों
मार्गोंवाले स्थानमें पट्टनमें-जलपथ एवं स्थलपथ इनमेंसे कोई एकपथसे
होकर जिनमें आनाजाना होता हो, ऐसे स्थानमें आश्रममें तपस्विजनोंके
स्थानमें संवाहमें-परचक्रके भयसे मनुष्य रक्षाके लिये जिन पर्वतादिके
मध्यभागोंमें धान्यादि छिपाकर रखते हैं ऐसे स्थानमें, संनिवेशमें जो
अनेक भाण्डादि वस्तुओंके रखनेके आश्रयस्थान होते हैं, ऐसे स्थानमें-
तथा शृङ्गाटकमें-त्रिकोणवाले मार्गमें, त्रिकमें-तीन रास्ते जहाँ पर आकर
मिलते हों ऐसे रास्तेमें, चत्वरमें-अनेक मार्गोंके संगम स्थानमें महा

अर्धी के आमादि स्थान जताव्यां छे, तेमने अर्थ हुवे स्पष्ट करवामां
आवे छे—

ज्यां आवता जता माल पर कर वसूल कराय छे जेवा स्थाने गाम
कडे छे, रत्नादिकेनी उत्पत्ति ज्यां थाय छे जेवी भाखोने 'आकर' कडे छे
माटीना दिवलाथी रक्षित गामने जेट कडे छे, कुत्सित नगरने कर्बट कडे छे,
जेनी चारे तरफ अर्धा योजनना विस्तारमा वसती न होय जेवा स्थानने
'मडम्ब' कडे छे ज्यां जणमार्गे अने जमीन मार्गे जठ शकय छे, जेवा
स्थानने 'द्रोणमुख' कडे छे ज्यां मात्र जणमार्गे ज अथवा मात्र जमीन
मार्गे ज जठ शकतुं होय जेवा स्थानने 'पट्टन' कडे छे तपस्वी जनोना
स्थानने आश्रम कडे छे, परचक्रना लयथी मनुष्य पोताना धनधान्यने पर्व-
तादिनी वरये आवेला जे सुरक्षित स्थानोमां राखे छे ते स्थानने संनिवेश
कडे छे, त्रिषु भूषावागा मार्गने शृङ्गाटक (शिगोडाना आकारने मार्ग) कडे
छे, त्रिषु रस्ता ज्यां मगता होय ते जग्याने त्रिक कडे छे, ज्यां चार मार्गो

रम्=अनेकमार्गमंगमस्थानम्, महापथः=राजमार्गः, पन्थाः=मार्गः, एषां द्वन्द्वः, तेषु तथोक्तेषु, तथा-नगरनिर्द्धमनेषु=नगरजलनिर्गमनस्थानेषु, नगरनालिका-स्वित्पर्यः ।, तथा - श्मशानशून्यागारगिरिकन्दरशान्तिशैलोपस्थापनभवनगृहेषु-तत्र-श्मशानम्=शवपरिष्ठापनस्थानम्, शून्यागारम्=शून्यगृहम्, गिरिकन्दरा=पर्वतगुहा, शान्तिगृहम्=यत्रराज्ञामनिष्टगान्तये शान्तिकर्महोमादि क्रियते तत्, शैलगृहम्=पर्वतगुहाकीर्य गृहरूपेण यन्निर्मियते तत्, उपस्थापनगृहम्=आस्थानमण्डपः, अथवा-शैलोपस्थापनगृहम्=शैलनिर्मितास्थानमण्डपः, भवनगृहम्-यत्र कुटुम्बिनो निवसन्ति तत्, एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तेषु । एतेषु ग्रामादिषु यानि इमानि प्रहीणस्वामिकादिविशेषणविशिष्टानि पुराणानि महातिमहालयानि महानिधानानि सन्निक्षिप्तानि=संस्थापितानि तिष्ठन्ति तानि दृष्ट्वा अदृष्टपूर्वतया

पथमें राजमार्गमें पथमें-सामान्य मार्गमें तथा नगर निर्द्धमनोंमें-नगरके जलको निकलनेके लिये बनाये गये मार्गोंमें-नगरके तालाओंमें-तथा श्मशानोंमें शून्यागारोंमें, गिरिकी कन्दराओंमें, शान्तिगृहोंमें, जहां पर राजाओंके अनिष्टको शान्त करनेके लिये शान्तिकर्मरूप होमादिक किये जाते हैं ऐसे स्थानमें, शैलगृहोंमें-पर्वतको तोडकर जो गृहरूपसे बनाये जाते हैं ऐसे स्थानोंमें उपस्थापनगृहमें-आस्थान मंडपमें-अथवा-शैलोपस्थापन गृहमें, शैलनिर्मित आस्थान मंडपमें, बाहर बैठने के मण्डपोंमें, भवनगृहमें जहां कुटुम्बीजन निवास करते हों ऐसे स्थानमें ऐसे इन ग्रामादिकोंमें, रखे हुए गढे हुए प्रहीणस्वामिक (स्वामी रहित) आदि विशेषणोंवाले पुराने महातिमहालय ऐसे निधानोंको देखकर अदृष्ट पूर्व होनेके कारण उनके जायमान विस्म-

द्वेषां यतां हेय ते स्थानने अतुष्क (चोड) कडे छे, अनेक मार्गोना संगम स्थानोने अत्वर कडे छे. राजमार्गने महापथ कडे छे सामान्य मार्गने पथ कडे छे. नगरमांथी पाणी भंडार काढवानी गटरने निर्द्धमन कडे छे. आ प्रकारनां स्थानोमां तथा श्मशानोमां, शून्यागारोमां (निर्जन स्थानोमां), गिरिकन्दराओमां आवेलां शान्तिगृहोमां (त्यां राजओना अनिष्टने शान्त करवाने माटे शान्तिकर्म रूप होम हवन आदि न्यां करवामां आवे छे ओवा स्थानोमां), पर्वतोने केतरीने बनावेलां शैलगृहोमां, उपस्थापनगृहमां, आस्थानमंडपमां अथवा शैलोपस्थापन गृहमां-शैलनिर्मित आस्थान मंडपमां अने भवनगृहोमां (कुटुम्बीओ न्यां निवास करे छे ओवा भवनोमां) हाटेला प्रहीणस्वामिक आदि पूर्वोक्त विशेषणोवाणा, पुराणा, महातिमहालय निधानोने जेधने अवधिदर्शननी उत्पत्तिना प्रथम समयमां अवधिदर्शनवाणे अथ

विस्मयाद् लोभाद् वा अत्रि दर्शनोत्पादप्रथमसमयेऽवधिमान् संक्षुब्धावधिदर्शनो भवतीति ॥ ५ ॥ इत्येतैः पूर्वोक्तैः पञ्चभिः स्थानैः अवधिदर्शनं समुत्पत्तुकामम् तत्प्रथमतायाम्=अवधिदर्शनोत्पादप्रथमसमये स्क्रम्नीयात्=क्षुभ्येदिति ॥ सू० ६ ॥

सम्प्रति केवलज्ञानदर्शनविषयामक्षोभतामाह—

मूलम्--पंचहिं ठाणेहिं केवलवरनाणदंसणे समुत्पत्तिउकामे तप्पढमयाए नो खंभाएज्जा, तं जहा-अप्पभू तं वा पुढविं पासित्ता तप्पढमयाए णो खंभेज्जा, सैसं तहेव जाव भवणागि- हेसु संनिक्खित्ताइं चिट्ठंति ताइं वा पासित्ता तप्पढमयाए णो खंभाएज्जा, इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं जाव नो खंभाएज्जा ॥ सू० ७ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः केवलज्ञानदर्शनं समुत्पत्तुकामम् तत्प्रथमतायां नो स्क्रम्नीयात्, तद्यथा—अल्पभूतां वा पृथिवीं दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां नो स्क्रम्नीयात्, शेषं तथैव यावद् भवनगृहेषु सन्निक्षिप्तानि तिष्ठन्ति तानि वा दृष्ट्वा तत्प्रथमतायां नो स्क्रम्नीयात्, इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः यावत् नो स्क्रम्नीयात् ॥ सू० ७ ॥

यसे अथवा उनके लोभसे अवधिदर्शनकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अवधिज्ञानवाला जीव संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाला हो जाता है, इस प्रकारके इन पूर्वोक्त पांच कारणोंसे उत्पत्तिके योग्य हुआ अवधिदर्शन अपनी उत्पत्तिके प्रथम समयमें क्षुभित हो जाता है, या क्षुभित हो सकता है, ६। तात्पर्य इस कथनका ऐसा है, कि अवधिज्ञानीको अवधिदर्शन होता है, पर वह इन निर्दिष्ट पांच कारणोंसे अपने उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें क्षुभित भी हो सकता है, इसी तरहसे अवधिज्ञान भी क्षुभित हो सकता है ॥ सू० ६ ॥

संक्षुब्ध अवधिज्ञानवाणे थर्ध नय छे-ते प्रकारना लउारे। तेणु पडेदां क्ती पणु नेयां नथी, तेथी विस्मयने दीधे अथवा ते प्राप्त करवाना दोलने दीधे ते संक्षुब्ध अवधिदर्शनवाणे थर्ध नय छे.

आ प्रकारना उपर्युक्त पांच कारणोंने दीधे उत्पत्तिने योग्य ओवुं अवधिदर्शन पणु उत्पत्तिना प्रथम समयमां क्षुभित (यदायमान) थर्ध नय छे अथवा यदायमान थर्ध शके छे आ कथनने लावार्थ ओ छे के अवधिज्ञानीने अवधिदर्शन थायं छे अइ, पणु उपर्युक्त पांच कारणोंने दीधे उत्पन्न थया णाह प्रथम समयमां अ तेनुं अवधिदर्शन क्षुभित पणु थर्ध शके छे, अने ओवुं रीते अवधिज्ञान पणु क्षुभित थर्ध शके छे. ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘पंचहिं ठाणेहिं’ इत्यादि । समुत्पत्तुकामं केवलवरज्ञानदर्शनं केवली वा पञ्चमिः स्थानैर्नो स्कम्भीयात्, याथात्म्येन वस्तुदर्शनात्, क्षीण-मोहनीयत्वेन भयविस्मयलोभाद्यभावेन अतिगम्भीरत्वाच्चेति । शेषं व्याख्यात-प्रायमिदं सूत्रम् ॥सू० ७॥

तथा—केवलज्ञानदर्शनं नारकादीनां वीभत्सादिशरीराणि दृष्ट्वाऽपि न क्षुभ्यतीति शरीरप्ररूपणा माह—

मूलम्—णैरदृष्ट्याणं सरीरगा पंचवन्ना पंचरसा पण्णत्ता, तं जहा—किण्हा जाव सुक्खिळा, तित्ता जाव महुरा । एवं निरंतरं जाव वेमाणियाणं । पंच सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा—ओरालिए १ वेउव्विए २ आहारए ३ तेघए ४ कम्मए ५। ओरालियसरीरे

अत्र सूत्रकार यत् प्रकट करते हैं, कि केवलज्ञान और केवलदर्शनमें क्षोभ नहीं होता है—‘पंचहिं ठाणेहिं केवलवरनाणदंसणे’ इत्यादि

टीकार्थ—केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न होनेके योग्य होने पर इन पूर्वोक्त पांच कारणोंसे अपने प्रथम समयमें क्षुभित नहीं होते हैं, और न केवली क्षुभित होता है । क्योंकि उनके द्वारा वस्तुको यथार्थरूप जान लिया जाता है, तथा मोहनीय सर्वथा क्षय हो जानेसे उनमें भय, विस्मय, लोभ आदिका सर्वथा अभाव हो जाता है, इससे वे अत्यन्त गंभीर होते हैं । इस सूत्रमें जो पद आये हैं, उन सबका स्पष्टीकरण छठे सूत्रमें किया जा चुका है ॥ सू० ७ ॥

इवे सूत्रकार अये वात प्रकट करे छे के केवलज्ञान अने केवलदर्शन क्षुभित (अलायमान) यतां नथी.

टीकार्थ—“ पंचहिं ठाणेहिं केवलवरनाणदंसणे ” इत्यदि—

केवलज्ञान अने केवलदर्शन उत्पन्न थवाने योग्य होय त्त्यारे उत्पन्न थाय छे. पण्ण अविद्विदर्शननी जेम पूर्वोक्त पांच कारणोंने लीधे उत्पत्तिना प्रथम समयमां ते क्षुभित यतां नथी अने केवली पण्ण क्षुभित यता नथी, कारण्ण के तेमना द्वारा वस्तुनुं यथार्थ स्वरूप ज्ञाणी लेवामां आवे छे अने मोहनीय कर्मानो सर्वथा क्षय थछे ज्वाथी तेमनामां भय, विस्मय, लोभ आदिना सर्वथा अभाव रडे छे, तेथी तेज्जे अत्यन्त गंभीर होय छे. आ सूत्रमां जे पांच कारणोंने उल्लेख कथी छे, तेनुं छट्ठा सूत्रमां स्पष्टीकरण थछे गयुं छे.सू. १७।

पंचवन्ने पंचरसे पण्णत्ते, तं तथा—किण्हे जाव सुक्खिहे, तित्ते जाव महुरे, एवं जाव कम्मयसरीरे । सव्वेत्ति णं वादरवोदि-धरो कलेवरा पंचवन्ना पंचरसा दुग्गंधा अट्ट फासा ॥ सू० ८ ॥

छाया—नैरयिकाणां शरीरकाणि पञ्चवर्णानि पञ्चरसानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कृष्णानि यावत् शुक्लानि, तित्तानि यावत् मधुराणि, एवं निरन्तर यावद् वैमानिकानाम् । पञ्च शरीरकाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—औदारिकम् १, वैक्रियम् २, आहारकम् ३, तैजसम् ४, कर्मजम् ५ । औरारिकशरीरं पञ्चवर्णं पञ्चरसं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—कृष्णं यावत् शुक्लम्, तित्तं यावद् मधुरम्, एवं यावत् कर्मजशरीरम् । सर्वाण्यपि खलु वादररूपधराणि कलेवराणि पञ्चवर्णानि पञ्चरसानि द्वि गन्धानि अष्टरपर्णानि ॥ सू० ८ ॥

टीका—‘ णेरइयाणं ’ इत्यादि—

नैरयिकाणाम्=नारकाणां शरीरकाणि कृष्णादिशुक्लान्तपञ्चवर्णमयानि, तित्तादि मधुरान्तपञ्चरसमयानि च विज्ञेयानि । एवं चतुर्विंशतिदण्डकोक्तानां वैमानिकान्तानां सर्वेषामपि शरीराणि पञ्चवर्णमयानि पञ्चरसमयानि च विज्ञे-

अब सूत्रकार शरीरकी प्ररूपणा करते हैं, क्योंकि केवलज्ञान और केवलदर्शन नारकादिकोंके बीभत्स आदिरूप शरीरोंको देखकर भी क्षुभित नहीं होते हैं, अतः इस प्रकरणको लेकर यह प्ररूपणा की गई है—

‘ णेरइयाणं सरीरगा पंचवन्ना ’ इत्यादि सूत्र ८ ॥

टीकार्थ—नैरयिक जीवोंके शरीर पांच वर्णवाले एवं पांच रसवाले कहे गये हैं, कृष्णवर्णसे लेकर शुक्लवर्ण तक ५ वर्ण होते हैं, और तित्त रससे लेकर मधुर रस तक ५ रस होते हैं । इन पांचों वर्णोंवाले और पांचों रसोंवाले नैरयिकोंके शरीर होते हैं, ऐसा भगवान्ने कहा है । इसी प्रकारसे २४ दण्डकोंमें उक्त वैमानिक तकके सद्यस्त जीवोंके

केवलज्ञान अने केवलदर्शन नारकादिना बीभत्स आदि ३५ शरीरने लोधने पण्णु क्षुभित यतां नथी. आ प्रकारना पूर्वसूत्र साथेना संबधने लधने डवे सूत्रकार शरीरानी प्रइपण्णु करे छे.

टीकार्थ—“ णेरइयाणं सरीरगा पंचवन्ना ” इत्यादि—

नारकाणां शरीर कृष्ण्णुथी लधने शुक्ल पर्यन्तना पांच पण्णुवाणां अने तित्त (तीभा) थी लधने मधुर पर्यन्तना पांच रसवाणां कथ्यां छे. अण्णु प्रभाण्णु वैमानिक पर्यन्तना २४ दण्डकेना लोधेना शरीर विषे पण्णु समञ्जसं.

યાનિ । નારકાદિવૈમાનિકાન્તાનાં પશ્ચર્ણત્ત્વં યદ્મિહિતં તત્ નિશ્ચયનયમાશ્રિત્ય, વ્યવહારનયે તુ એતેપાં પ્રત્યેકમેઋર્ણપ્રાચુર્યાત્ કૃષ્ણાદિપ્રતિનિયત વર્ણતા વોદ્ધવ્યેતિ । શરીરાણિ ત્રૈપાં કતિવિધાનિ ? इत्याह—‘ पंच संरीरगा ’ इत्यादि । शरीरकाणि पञ्चविधानि प्रज्ञमानि, तद्यथा—औदारिकम्-उदारं=प्रधानम्, तदेवौदारिकम् । प्राधान्यं चास्य तीर्थकरादिशरीरापेक्षया । यद्वा—“ औरालिकम् ” इत्येव-च्छाया । उरालम्=विशालम्, तदेव औरालिकम् । उरालत्वं चास्य सातिरेकयोजन-सहस्रप्रमाणत्वात् । अन्यस्य त्रैवंधस्य शरीरस्यावस्थितेरसम्भवात् ।

શરીર ઓ પાંચ વર્ણોવાલે એવં પાંચ રસોવાલે હોતે હેં, એસા જાનના ચાહિયે । યહાં જો નારકસે લેકર વૈમાનિક તકકે સમસ્ત જીવોંકે શરીરકા પાંચ વર્ણોવાલા ઓર પાંચ રસોવાલા કહા ગયા હૈ, વહ નિશ્ચયનયકો આશ્રિત કરકે કહા ગયા હૈ, ક્યોંકિ વ્યવહાર નયકી અપેક્ષાસે તો હન જીવોંકે પ્રત્યેકકે શરીરમેં એક વર્ણકી પ્રચુરતા હોનેસે કૃષ્ણાદિ પ્રતિનિયત વર્ણવાલા હૈ, એસા જાનના ચાહિયે । જીવોંકે શરીર પાંચ હોતે હેં, જૈસે—ઔદારિક ૧—પ્રધાન શરીરકા નામ ઔદારિક શરીર હૈ, ઔદારિક શરીરમેં જો પ્રધાનતા કહી ગઈ હૈ, વહ તીર્થકર આદિકે શરીરકી અપેક્ષાસે કહી ગઈ હૈ, યદ્વા—“ ઓરાલિએ ”કી છાયા ઓરાલિક એસી ઓી હોતી હૈ, ઊરાલ નામ વિશાલકા હૈ, એસા જો વિશાલ શરીર હૈ, વહ ઓરાલિક શરીર હૈ, કુલ અધિક એક હજાર યોજનકી

એટલે કે ૨૪ ઢંડકના સમસ્ત જીવોના શરીર પાંચ વર્ણવાળાં અને પાંચ રસવાળાં કહ્યાં છે, એમ સમજવું અહીં નૈરચિકોથી લઇને વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોનાં શરીરને જે પાંચ વર્ણોવાળાં અને પાંચ રસવાળાં કહ્યાં છે, તે નિશ્ચયનયને આધારે કહેવામાં આવેલ છે, તેમ સમજવું. વ્યવહારનયની માન્યતા અનુસાર તો આ ૨૪ ઢંડકના જીવોમાંના પ્રત્યેક ઢંડકના જીવોના શરીરમાં એક વર્ણની પ્રચુરતા હોય છે, તે કારણે તેમને કૃષ્ણાદિ પ્રતિનિયત વર્ણવાળા કહેવામાં આવે છે.

જીવોનાં શરીર પાંચ પ્રકારનાં હોય છે—(૧) ઔદારિક (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક, (૪) કાર્મણ અને (૫) તૈજસ.

પ્રધાન (મુખ્ય) શરીરને ઔદારિક શરીર કહે છે. ઔદારિક શરીરમાં જે પ્રધાનતા કહી છે તે તીર્થકર આદિના શરીરની અપેક્ષાએ કહી છે.

અથવા—“ ઓરાલિએ ” ની સંસ્કૃત છાયા “ ઓરાલિક ” પણ થાય છે. “ ઉરાલ ” એટલે વિશાળ, જે શરીર વિશાળ હોય છે તેને ઔદારિક

उक्तंच—जोयणसहस्रमहियं, ओहे एगिंदिए तरुगणे सु ।

मच्छजुयले सहस्रं, उरगेसु य गवभजाएसु ” ॥१॥

छाया—योजनसहस्रमधिकम् ओघे एकेन्द्रिये तरुगणेषु ।

मत्स्ययुगले सहस्रमुरगेषु च गर्भजातेषु ॥१॥ इति ॥

वैक्रियशरीरस्य लक्षयोजनप्रमाणत्वेऽपि सर्वदाऽवस्थानाभावादिति ॥२॥

अथवा—उरालम्=अल्पप्रदेशोपचितत्वाद् बृहत्त्वाच्च भिण्डवमिति, तदेव औरालिकम् । प्रयोगसिद्धिस्तु निपातनाद् बोध्या । यद्वा—ओरालं=मांसास्थि-स्नाय्वादिभिरवबद्धं, तदेव औरालिकमिति ॥३॥

अवगाहना इसकी उत्कृष्टसे कही गई है, अतः इस अपेक्षासे यह औरालिक कहा गया है, और किसी शरीरकी स्थिति ऐसी नहीं है । कहा भी है—“ जोयणसहस्रमहियं ” इत्यादि । यद्यपि वैक्रिय शरीर एक लाख योजन प्रमाणवाला हो सकता है, परन्तु इस स्थितिमें वह सदा अवस्थित नहीं रहता है, इसलिये उसका प्रहं ग्रहण नहीं हुआ है अथवा—‘ उरालमेव औरालिकम् ’ इस व्युत्पत्तिके अनुसार अल्प प्रदेशोंसे उपचित होनेसे और बृहत् होनेसे भिण्डकी तरह इसे औरालिक कहा गया है “ औरालिक ” इस पदकी सिद्धि निपातनसे हुई है । अथवा—“ औरालमेव औरालिकम् ” इस व्युत्पत्तिके अनुसार जो शरीर औराल होता है, मांस, अस्थि, स्नायु आदिसे बद्ध होता है, वह औरालिक कहा जाता है, पांच शरीरोंमें केवल औदारिक शरीर ही मांस, अस्थि आदिसे युक्त कहा गया है शेष शरीर नहीं । कहा भी है—

कडे छे. तेनी उत्कृष्ट अवगाहना ऐक डलर येजन करतां पण अधिक कडी छे. आ रीते आ शरीर जीन शरीरे करतां अधिक अवगाहनावाणुं होवथी तेने औरालिक कहुं छे कहुं पण छे के—“ जोयणसहस्रमहियं ” इत्यादि—

जे के वैक्रिय शरीर ऐक लाख येजननी उत्कृष्ट अवगाहनावाणुं होवथी शके छे, परन्तु ऐवी स्थितिमां ते सदा अवस्थित रहेतुं नथी, तेथी तेने अर्डी ग्रहण करवांमां आव्युं नथी—अथवा “ उरालमेव औरालिकम् ” आ व्युत्पत्ति अनुसार अल्प प्रदेशोथी उपचित होवथी अने विशाण होवथी सिडनी जेम तेने औरालिक कडेवांमां आव्युं छे “ औरालिक ” आ पहनी सिद्धि निपातनथी थछ छे. अथवा—औरालमेव औरालिकम् ” आ व्युत्पत्ति अनुसार जे शरीर औराल होय छे, मांस, अस्थि, स्नायु आदि वडे अंघां थेटु होय छे तेने औरालिक कडेवांमां आवे छे पांच शरीरमांतुं मात्र औदारिक शरीर जे मांस, अस्थि आदिथी युक्त होय छे—अन्य शरीरों

ઉક્તંચ—‘તત્થોદારમુરાલં, ઊરલં ઓરાલ મહવ વિન્નેયં ।

ઓરાલિયં તુ પઢમં, પહુચ્ચ તિત્થેસરસરીરં ॥૧॥

મન્નહ ય તહોરાલં, વિત્થરવંતં વણસ્સઇં પ્પ્પ ।

પગઈણ્ણ નત્થિ અન્નં, દ્દહમેત્તં વિસાલંતિ ॥૨॥

ઊરલં થેવપ્પ સોવચિયંપિ મહલ્લગં જહા મિંહં ।

મંસઢ્ઢિહ્ધારુવહ્હં, ઓરાલં સમયપરિમાસા ॥૩॥

છાયા—તત્થોદારમુરાલમુરાલમોરાલમથવા વિજ્ઞેયમ્ ।

ઔદારિકમિતિ પ્રથમં પ્રતીત્ય તીર્થેશ્વરશરીરમ્ ॥૧॥

મળ્યતે ચ તથોરાલં વિસ્તરવન્તં વનસ્પતિં પ્રાપ્ય ।

પ્રકૃતે નાસ્તિ અન્યત્ એતાવન્માત્રં વિશાલમિતિ ॥૨॥

ઊરલં સ્તોકપ્રદેશોપચિતમપિ મહદ્ યથા મિળ્ડમ્ ।

માંસાસ્થિસ્નાયુવદ્ધમોરાલં સમયપરિમાષા ॥૩॥

શરીરસ્ય દ્વિતીયભેદમાહ—વૈક્રિયમ્—વિવિધા વિશિષ્ટા વા ક્રિયા વિક્રિયા,
તસ્યાં ભવં વૈક્રિયમ્ ।

ઉક્તંચ—“વિવિદ્ધા વ વિસિદ્ધા વા, કિરિયા વિક્કિરિયા, તીણ્ણ જં ભવંતમિહ
બેઉવ્વિયં, તયં પુણ નારગદેવાણ પગઈણ્ણ ॥”

છાયા—વિવિધા વા વિશિષ્ટા વા ક્રિયા વિક્રિયા, તસ્યાં યદ્ ભવં તદિદ્-
વૈક્રિયં, તત્પુનઃ નારકદેવાનાં પ્રકૃત્યા ॥૩॥

વિવિધશરીરાણાં વિવિધક્રિયાણાં ચ કરણે સમર્થં શરીરમિત્યર્થઃ ॥૨॥

અથ તૃતીયભેદમાહ—આહારક્રમ—આહિયતે=વિશિષ્ટલઘ્વિયા ઉપાદીયતે

“તત્થોદારમુરાલં” ઇત્યાદિ । ઇન ગાથાઓંકા અર્થ પૂર્વોક્ત રૂપસે
હી હૈ । વિવિધ અથવા વિશિષ્ટ ક્રિયાઓ નામ વિક્રિયા હૈ, ઇસ ક્રિયામેં
જો હોતાહૈ, વહ વિક્રિયાહૈ । કહા મીહૈ—“વિવિદ્ધા વ વિસિદ્ધા વા” વિક્રિ-
યાસે જો શરીર નારક ઓર દેવોંકો હોતા હૈ, વહ વૈક્રિય શરીર હૈ ૨
જો શરીર ચતુર્દશ પૂર્વધારિયોં દ્વારા વિશિષ્ટ લઘ્વિકે પ્રભાવસે તથાવિધ

માંસાદિથી યુક્ત હોતાં નથી. કહું પણ છે કે—“તત્થોદારમુરાલં” ઇત્યાદિ.
આ ગાથાઓંનો અર્થ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવો.

વિવિધ અથવા વિશિષ્ટ ક્રિયાનું નામ વિક્રિયા છે. આ ક્રિયા વડે જે
શરીરનું નિર્માણ થાય છે તેને વૈક્રિય શરીર કહે છે. કહું પણ છે કે—
“વિવિદ્ધા વ વિસિદ્ધા વા” આ વૈક્રિય શરીરનો સદ્ભાવ નારકો અને દેવોંમાં હોય છે.

ઔદ પૂર્વધારીઓ દ્વારા વિશિષ્ટ લઘ્વિકા પ્રભાવથી, કોઈ ખાસ પ્રયો-
જન ઉદ્ભવવાથી તીર્થકર આદિની સમીપે જવાને માટે જે શરીરનું નિર્માણ

तथाविधकार्योत्पत्तौ तीर्थकरप्रभृतिसमीपगमनाय चतुर्दशपूर्वधारिभिर्यत् तत् शरीरमाहारकम् । उक्तं च—

“ कञ्जम्मि समुप्पण्णे, सुयकेवलिणा विसिट्ठलद्वीए ।

जं एत्थ आहरिज्जइ, भणंति आहारगं तंतु ॥१॥

छाया—कार्ये समुत्पन्ने श्रुतकेवलिना विसिष्टलब्ध्या ।

यदत्र आह्रियते भणन्ति आहारकं तत्तु ॥१॥ इति ।

आहारकशरीरकरणे चामूनि कारणानि भवन्ति ।

तदुक्तम्—

“ पाणिदय रद्धिदरिसण छउमत्थोवग्रहण हेउं वा ।

संसयवोच्छेपत्थं, गमणं जिणपायमूलम्मि ॥१॥ ”

छाया—प्राणिदयद्धिदर्शनार्थम् छद्मस्थोवग्रहणहेतो वा ।

संशयव्युच्छेदार्थं वा गमनं जिनपादमूले ॥१॥ इति ।

इदं च कार्यसमाप्तौ पुनर्मुच्यते याचितोपकरणवत् । एतच्चाहारकं लोके कदाचित् सर्वथाऽपि न भवति । तस्य विरहस्तु जघन्यत एकं समयम् उत्कर्षतः

कार्यकी उत्पत्तिके समय तीर्थङ्कर आदिके समीप जानेके लिये निर्मित किया जाता है, यह आहारक शरीर है । कहा भी है—“ कञ्जम्मि समुप्पण्णे ” इस गाथाका अर्थ पूर्वोक्त जैसाही है । आहारक शरीरके करनेमें ये चार कारण हैं—“ पाणिदयरिद्धिदरिसण ” इत्यादि । प्राणियोंके ऊपर दयाके निमित्त १ ऋद्धि दर्शनके लिये २ छद्मस्थोंके ऊपर अनुग्रह करनेके लिये ३ संशय निराकरण करनेके लिये ४ भगवान्के समीप जातेहैं । इससे आहारक शरीरका निर्माण होताहै, जब ये पूर्वोक्त कार्य समाप्त हो जाते हैं, तब यह आहारक शरीर जिसके शरीरमेंसे प्रकट होता है, उसीमें समा जाता है, यह आहारक शरीर लोकमें

करवाभां आवे छे ते शरीरने आहारक शरीर कडे छे. कहुं पणु छे के—

“ कञ्जम्मि समुप्पण्णे ” इत्यादि आ गाथानो अर्थ पडेला प्रमाणे

न छे. आहारक शरीर थवाभां आ चार कारणे छे. “ पाणिदय-

रिद्धिदरिसणं ” इत्यादि—प्राणीयो पर दया करवाने निमित्ते, ऋद्धि

दर्शनने भाटे, छद्मस्थो पर अनुग्रह करवाने भाटे, अने शंका निवारणु करवा

भगवाननी पासे नवाने भाटे तेओ आहारक शरीरनुं निर्माणु करे छे न्यादे

तेमनुं ते कार्य सिद्ध थर्ष नय छे त्यादे ते आहारक शरीर नेना शरीरमांथी

प्रकट थयुं डाय छे तेना न शरीरमां समाप्त नय छे. कारणेक तो लोकमां

प्राणासान् यावत् । आहारकशरीरं चतुर्वारं कृत्वाऽवश्यमेवमुक्तो भवतीति भावः तथा न सर्वे चतुर्दशपूर्वत्रिंशद् आहारकशरीरं कर्तुं परहन्ति, अपितु केचिदेवेति ३। अथ चतुर्दशैः प्राणाह-तैजसम्-तेजसोभावस्तैजसम्-उष्मादिलिङ्गसिद्धम् ।

उक्तं च—“ सव्वस्स उम्हसिद्धं, रसाह आहारपागज्जणं च ।

तेयगळद्विनिमित्तं, च तेयगं होइ नायव्वं ॥१॥”

छाया—सर्वस्य उष्मसिद्धं रसाद्याहारपाकजनकं च ।

तैजसलब्धिनिमित्तं च तैजसशरीरं भवति ज्ञातव्यम् ॥१॥ इति ।

शरीरमहचारिसूक्ष्मशरीरविशेष इत्यर्थः ४ ।

अथ पञ्चमं शरीरभेदमाह—

कर्मजं=कर्मणं शरीरम् । उक्तं च—

“ कम्मविगारो कम्मण,—मद्वविहविचित्तकम्मनिष्कन्नं ।

सव्वेसिं पि सरीराण कारणभूयं मुणेयव्वं ॥१॥”

कदाचित् सर्वथाभी नहीं होना है, इसका विरहकाल जघन्यसे एक समय और उत्कृष्टसे ६ मास तकका है, आहारक शरीरकी लब्धि चार वज्रत स्फोरण करके जीव मोक्षमें जाता है, समस्त चतुर्दश पूर्व-धारी इस आहारक शरीरको नहीं करते हैं, किन्तु कोई २ ही करते हैं । तेजका जो भाव है, वह तैजस शरीर है, इसकी सिद्धि उष्मादि-रूप चिह्नसे होती है । कहा भी है—“ सव्वस्स उम्हसिद्धं ” इत्यादि— यह तैजस शरीर तैजस लब्धिके निमित्तसे होता है, तथा आहारादिके परिपाकका हेतु होता है, यह अन्य शरीरोंके साथ रहनेवाला सूक्ष्म शरीर विशेष है । ज्ञानावरणीयादि कर्मोंका समूह रूप कर्मण शरीर होता है । कहा भी है—“ कम्मविगारो कम्मण ” इत्यादि । कर्मका जो

आहारक शरीरको जिसकुल सहभाव डालते नहीं, तेको विरहकाज ओछाभां ओछा एक समयको अने वधारेभां वधारे ६ मासको कष्टो छे आहारक शरीरनी लब्धि चार वार प्रकट करीने एव मोक्षभां लय छे, समस्त चौद पूर्वधारी, आहारक शरीरनुं निर्माणु करता नहीं, पणु कोठ कोठ चौद पूर्व-धारी न तेनुं निर्माणु करे छे

तेजको ने भाव छे ते तैजस शरीर छे, उष्मादि रूप चिह्न वडे तेनुं अस्तित्ता सिद्ध थाय छे, कहुं पणु छे के—“ सव्वस्स उम्हसिद्धं ” इत्यादि— तैजस लब्धित्ता निमित्तथी आ तैजस शरीरनुं निर्माणु थाय छे, तथा आहार-रक्षिता परिपाकभां ते शरीर कारणभूत णने छे, अन्य शरीरनी साथे रहनेनाइं ते एक सूक्ष्म शरीर विशेष न छे, ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंको समूह रूप कर्मण शरीर होय छे, कहुं पणु छे के “ कम्मविगारो कम्मण ” इत्यादि—

छाया—कर्मविकारः कर्मणम् अष्टविधविचित्रकर्मनिष्पन्नम् ।

सर्वेषामपि शरीराणां कारणभूतं ज्ञातव्यम् ॥१॥ इति ।

कर्म पुद्गलैर्निर्मित सकलशरीरकारणभूतं शरीरमित्यर्थः । औदारिकादि क्रमेण निर्देशस्तु यथोत्तरं सूक्ष्मत्वात् प्रदेशवाहुल्याच्च बोध्य इति । सम्प्रति औदारिकादि शरीराणां पञ्चवर्णत्वं पञ्चरसत्वं चास्तीति प्रतिपादयितुमाह—‘ओ-
रालियसरीरे पंचवन्ने’ इत्यादि । अर्थः स्पष्टः । अथ बादरशरीराणां वर्ण-

विकार है, वह कर्मण है, यह कर्मण शरीर समस्त शरीरोंका कार-
णभूत होता है, तात्पर्य यह कि जो शरीर कर्म पुद्गलोंसे निवर्तित
होना हुआ समस्त शरीरोंका कारणभूत होता है, वह कर्मण शरीर
है । औदारिक आदि शरीरोंका जो इस प्रकारके क्रमसे निर्देश हुआ
है, वह औदारिक शरीरकी अपेक्षा वैक्रिय शरीर सूक्ष्म है, वैक्रियकी
अपेक्षा आहारक सूक्ष्म है, आहारकी अपेक्षा तैजस शरीर सूक्ष्म है,
और औदारिक अपेक्षा वैक्रिय शरीरके प्रदेश असंख्यातगुणे होते हैं,
वैक्रियकी अपेक्षा आहारक शरीरके प्रदेश असंख्यात गुणे होते हैं,
आहारक शरीरकी अपेक्षा तैजस शरीरके प्रदेश अनन्तगुणे होते हैं,
और तैजस शरीरकी अपेक्षा कर्मण शरीरके प्रदेश अनन्तगुणे होते हैं.

इन औदारिक आदि शरीरोंमें पंचवर्णवत्ता और पंचरसवत्ता है,
इस बातका कथन करनेके लिये अब सूत्रकार—“ओरालियसरीरे
पंचवन्ने पन्नत्ते” ऐसा सूत्र कहते हैं—तात्पर्य इसका यही है, कि औदा-

कर्मना के विकार छे ते कर्मणु छे. ते कर्मणुनुं आठ प्रकारना विचित्र कर्मो
वडे निर्माणु थाय छे. ते कर्मणु शरीर समस्त शरीराना कारणभूत डोय छे.
आ कथनना लावार्थं अे छे के के शरीर कर्मपुद्गलो वडे निवर्तित थधने
समस्त शरीराना उत्पत्तिमां कारणभूत अने छे, ते शरीरने कर्मणु शरीर
कडे छे. औदारिक आदि शरीरानुं आ प्रकारना कर्मथी के निरूपणु करवामां
आण्युं छे तेनुं कारणु आ प्रमाणु छे—

औदारिक शरीर करतां वैक्रिय शरीर सूक्ष्म छे. वैक्रिय शरीर करतां
आहारक शरीर सूक्ष्म छे अने आहारक करतां तैजस शरीर सूक्ष्म छे प्रदे-
शनी अपेक्षाअे विचार करवामां आवे तो औदारिक करतां वैक्रिय शरीरना
प्रदेश असंख्यातगणुं डोय छे, वैक्रिय शरीर करतां आहारक शरीरना प्रदेश
असंख्यातगणुं डोय छे, आहारक शरीर करतां तैजस शरीरना प्रदेश अनंत-
गणुं डोय छे अने तैजस शरीर करतां कर्मणु शरीरना प्रदेश अनंतगणुं डोय छे.
आ औदारिक आदि शरीराना पांच वर्णवत्ता अने पांच रसवत्तां छे,
आ वातनुं प्रतिपादन करवाने भाटे डवे सूत्रकार आ सूत्र कडे छे—“ओरा-

સ્પર્શાદિસંખ્યામાહ—‘ સર્વેવિ ણં ’ इत्यादि—सर्वाण्यपि चादररूपधराणि=पर्याप्तकृत्वेन स्थूलाकारधारीणि कलेवराणि=शरीराणि पञ्चवर्णानि=मनुष्यादीनामवयवभेदभिन्नानि कृणादि शुक्लान्तानि पञ्चवर्णानि, अक्षिगोलकादिषु तथैवोपलब्धेः, तथा—द्विगंधानि=सुरभिदुरभिभेदगन्धद्वयविशिष्टानि, अष्ट-स्पर्शानि=कठिनमृदुशीतोष्णगुरुलघुस्निग्धरुक्षात्मकानि च भवन्ति । अचादर-रूपधराणि शरीराणि तु न नियत-वर्णं रसगन्धस्पर्शसंपन्नानि भवन्ति, अपर्याप्तकृत्वेन अवयवविभागाभावादिति ॥सू० ८॥

શરીરાણિ પ્રરુપિતાનિ, સમ્પત્તિ શરીરગતાન ધર્મવિશેષાન્ ‘ પંચહિં ઠાણેહિં ’ इत्यादिभ्य ‘ पञ्चवर्णानि ’ इत्यन्तेन सन्दर्भेणाह—

મૂલમ્—પંચહિં ઠાણેહિં પુરિમપચ્છિમગાણં જિણાણંદુગ્ગમં
મજ્જહ, તં જહા—દુઆહ્વલં દુવિમજ્જં દુપસ્સં દુનિતિમ્મલં દુર-

રિક શરીરમેં પાંચ વર્ણ ઓ પાંચ રસ હોતે હેં । આદરરૂપકો ધારણ કરનેવાલે પર્યાપ્તક હોનેસે સ્થૂલાકારકો ધારણ કરનેવાલે સમસ્ત શરીર પાંચ વર્ણોવાલે મનુષ્યાદિકોને શરીરોંકે વર્ણોંકે ભેદસે મિષ્ઠ ૨ કૃષ્ણાદિ શુક્લઅન્તવર્ણોંકે વાલે હોને હેં, જેસે—અક્ષિગોલક આદિકોંમેં દેખા જાતા હેં, તથા દો ગંધોંવાલે સુરભિ દુરભિ ગંધોંવાલે હોતે હેં, એવં કઠિન, મૃદુ, શીત, ઉષ્ણ, લઘુ, સ્નિગ્ધ ઓર રુક્ષ હન આઠ સ્પર્શોંવાલે હોતે હેં । પરન્તુ જો અચાદર રૂપકો ધારણ કરનેવાલે શરીર હેં, વે નિયત વર્ણ, રસ, ગંધ, ઓર સ્પર્શ હન વાલે નહીં હોતે હેં, કયોંકિ વે અપર્યાપ્તક હોતેહેં, અતઃ હનમેં અવયવ વિભાગકા અભાવ રહતા હે । સૂ. ૮॥

હિયસરીરે પંચવને પળ્ણતે ” આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ઔદારિક શરીરમાં પાંચ વર્ણ અને પાંચ રસનો સફાવ હોય છે બાદર રૂપને ધારણ કરનારા પર્યાપ્તક હોવાથી સ્થૂલાકારને ધારણ કરનારા સમસ્ત શરીર પાંચ વર્ણવાળા મનુષ્યાદિકોના શરીરના વર્ણોના ભેદથી ભિન્ન ભિન્ન એવાં કૃષ્ણથી લઈને શુક્લ પર્યાન્તના વર્ણવાળાં હોય છે. અક્ષિગોલક વગેરેમાં એકું ભેવામાં આવે છે, તથા તેમના શરીરો એ ગન્ધોવાળાં—સુરભિ અને દુરભિ ગન્ધોવાળાં હોય છે, અને કઠિન, મૃદુ, શીત, ઉષ્ણ, શુરુ, લઘુ, સ્નિગ્ધ અને રુક્ષ, આ આઠ સ્પર્શોવાળાં હોય છે પરન્તુ જે અચાદર રૂપને ધારણ કરનારાં શરીરો છે, તેઓ નિયત વર્ણ, રસ, ગન્ધ અને સ્પર્શોવાળાં હોતા નથી, કારણ કે તેઓ અપર્યાપ્તક હોય છે. તેથી તેઓમાં અવયવ વિભાગનો અભાવ રહે છે સૂ. ૮

गुचरं । पंचाहिं ठाणेहिं मज्झिमगाणं जिणाणं सुगमं भवइ,
तं जहा-सुआइक्खं सुविभज्जं सुपस्सं सुतितिक्खं सुरणुचरं ।
पंच ठाणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं णिग्गंथाणं
णिच्चं वणिणयाइं णिच्चं कित्तियाइं णिच्चं बुइयाइं णिच्चं
पसत्थाइं णिच्चमब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-खंती १, सुत्ती
२, अज्जवे ३, मद्दवे ४, लाघवे ५। पंच ठाणाइं समणेणं भग-
वया महावीरेणं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-सच्चे
१, संजमे २, तवे ३, चियाए ४ वंभच्चेरवासै ५। पंच ठाणाइं सम-
णेणं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा-उक्खिलत्तचरण्णं १, निक्खि-
त्तचरण्णं २, अंतचरण्णं ३, पंतचरण्णं ४, लूह्णचरण्णं ५। पंच ठाणाइं
जाव अब्भणुण्णयायाइं भवंति, तं जहा--अण्णायचरण्णं १, अन्न-
इलायचरण्णं २, मोणचरण्णं ३, संसट्टकप्पिण्णं ४, तज्जायसंसट्ट-
कप्पिण्णं ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा--
ओवणिहिण्णं १, सुद्धेसणिण्णं २, संखादत्तिण्णं ३, दिट्टुलाभिण्णं ४,
पुट्टुलाभिण्णं ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णयायाइं भवंति, तं
जहा-आयंबिलिण्णं १, निव्विगिइण्णं २, पुरिमड्डिण्णं ३, परिमि-
यपिंडवाइण्णं ४, भिन्नपिंडवाइण्णं ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणु-
न्नायाइं भवंति, तं जहा-अरसाहारे १, विरसाहारे २, अंताहारे
३, पंताहारे ४, लूहाहारे ५। पंच ठाणाइं जाव अब्भणुण्णयायाइं
भवंति, तं जहा-अरसजीवी १, विरसजीवी २, अंतजीवी ३,

पंतजीवी ४, लुहजीवी ५। पंचठाणाइं जाव अवभणुण्णायाइं भवंति, तं जहा-ठाणाइए १, उक्कुडुआसणिए २, पडिमट्टाई ३, वीरासणिए ४ गेसज्जिए ५। पंच ठाणाइं जाव अवभणुण्णायाइं भवंति, तं जहा-दंडायइए १, लगंडसाई २, आयावए ३, अवाउडए ४, अकंडूयए ५। ॥ सू० ९ ॥

छाया--पञ्चमिः स्थानैः पूर्वपश्चिमकानां जिनानां दुर्गमं भवति, तद्यथा-दुराख्येयं १, दुर्विभाज्यं २, दुर्दशं ३, दुस्तितिकं ४, दुरनुचरम् ५। पञ्चसु स्थानेषु मध्यमकानां जिनानां सुगमं भवति, तद्यथा-स्वाख्येयं १, गृविभाज्यं २, सुदर्शं ३, सुनितिक्षं ४, स्वनुचरम् ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नित्यं वर्णितानि नित्यं कीर्तितानि नित्यम् उक्तानि नित्यं प्रशंसितानि नित्यमभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-क्षान्तिः १, मुक्तिः २, आर्जवं ३, मार्दवं ४, लाघवम् ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन भगवता महावीरेण यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-सत्यं १, संयमः २ तपः ३ त्यागो ४ ब्रह्म-चर्यवासः ५। पञ्च स्थानानि श्रमणेन यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-उत्क्षिप्तचरकः १, निक्षिप्तचरकः २, अन्तचरकः ३, प्रान्तचरकः ४, रूक्षचरकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अज्ञातचरकः १, अन्न-ग्लायकचरकः २, मौनचरकः ३, संसृष्टकल्पिकः ४, तज्जातसंसृष्टकल्पिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-औपनिधिकः १ शुद्धैप-णिकः २ संख्यादत्तिकः ३ दृष्टलाभिकः ४ पुष्टलाभिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-आचामाम्लिकः १, निर्विकृतिकः २ पौर्वा-द्विकः ३, परिमितपिण्डपातिकः ४ भिन्नपिण्डपातिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अरसाहारः १ विरसाहारः २ अन्ताहारः ३ प्रान्ताहारः ४, रूक्षाहारः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-अरसजीवी १ विरसजीवी २ अन्तजीवी ३ प्रान्तजीवी ४ रूक्षजीवी ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-स्थानातिगः १ उत्कुडु-कासनिकः २ प्रतिमास्थायी ३ वीरासनिकः ४, नैपथिकः ५। पञ्च स्थानानि यावत् अभ्यनुज्ञातानि भवन्ति, तद्यथा-दण्डायतिकः १, लगण्डशायी ३ आता-पकः ३ अपावृतकः ४ अकण्डूयकः ५ ॥ सू० ९ ॥

टीका--' पंचहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः पूर्वपश्चिमक्रानां जिनानां=भरतैरवतेषु प्रत्येकं ये चतुर्विंश-
तिजिनास्तेषु प्रथमान्तिमजिनानां दुर्गमं भवति । दुःखेन गम्यते=ज्ञायत इति दुर्गमं=
काठिन्यं कृच्छ्रवृत्तिः, तान्येव स्थानान्याह-तद्यथा-दुराख्येयम्-दुःखेन आख्या-
यते=कथ्यते यद् वस्तुतत्त्वं तत्-आसेवनशिक्षाग्रहणशिक्षारूपमित्यर्थः ।
शिष्याणाम् ऋजुजडत्वेन वक्रजडत्वेन च वस्तुतत्त्वाख्याने प्रथमान्तिमतीर्थ-
कृतां काठिन्यं भवतीति बोध्यम् १। तथा-दुर्विभाज्यम्-शिष्याणां बुद्धौ वस्तु

इस प्रकारसे शरीरोंका प्रतिपादन करके अब सूत्रकार शरीरगत धर्म विशेषोंका " पंचहिं ठाणेहिं " यहाँसे लगाकर "पंच अज्जवट्टाणा" यहाँ तकके सन्दर्भ द्वारा प्रतिपादन करते हैं—

'पंचहिं ठाणेहिं पुरिमपच्छिमगाणं' इत्यादि सू० ९ ॥

टीकार्थ-भरतक्षेत्र एवं ऐरवत क्षेत्र संबंधी जो चौधीस तीर्थझर हैं, उनमेंसे प्रथम और अन्तिम जो जिन हैं, उनको पांच कारणोंसे कठिनता होती है-वे पांच कारण इस प्रकारसे हैं-दुराख्येय १ दुर्विभाज्य २ दुर्दर्श ३ दुस्तिक्ष ४ और दुरनुचर ५। जो वस्तुतत्त्व दुःखसे-कठिनतासे कहा जाता है, वह दुराख्येय है, यह आसेवन शिक्षा एवं ग्रहणशिक्षारूप होता है, तात्पर्य इसका ऐसा है, कि शिष्योंको ऋजुजड होनेसे और वक्रजड होनेसे वस्तुतत्त्वके कथनमें प्रथम और अन्तिम इन दो तीर्थ-

आ प्रकारे शरीरानुं प्रतिपादन करीने डवे सूत्रकार शरीरगत धर्म-विशेषानुं " पंचहिं ठाणेहिं " आ सूत्रथी लधने " पंच अज्जवट्टाणा " आ सूत्र पर्यन्तना सूत्रो द्वारा प्रतिपादन करे छे—

" पंचहिं ठाणेहिं पुरिमपच्छिमगाणं " इत्यादि—

टीकार्थ-भरतक्षेत्र अने ऐरवत क्षेत्रना ने २४ तीर्थकरे तथा छे, तेमांना पडेला अने छेवला तीर्थकरेने नीचेना पांच कारणाने लीधे उपदेश आप-
वामां कठिनता-भुरकेली-पडी डनी—(१) दुराख्येय, (२) दुर्विभाज्य, (३) दुर्दर्श
(४) दुस्तिक्ष अने (५) दुरनुचर.

(१) ने वस्तुतत्त्वेने दुःखपूर्वक-वृत्ती भुरकेलीथी प्रतिपादित करी शक्य छे, तेने दुराख्येय कडेवाय छे. ते आसेवनशिक्षा अने ग्रहणशिक्षा रूप होय छे. आ कथननुं तात्पर्य छे छे के पडेला अने छेवला तीर्थकरना शिष्या ऋजुजड अने वक्रजड होवाथी वस्तुतत्त्वनुं कथन करवामां पडेला अने छेवला तीर्थकरने

તત્ત્વં વિભાગશઃ સંસ્થાપયિતું દુઃશક્રમિતિ ૨। તથા-દુર્દર્શમ્-દુઃસ્થેન દર્શયતે= અવધોધ્યતે યત્ તત્, શિષ્યાન્ વસ્તુતત્ત્વં દર્શયિતું તે કાઠિન્યમનુભવન્તીતિ ૩। તથા-દુસ્તિતિક્ષમ્-દુઃસ્થેન તિતિક્ષયતે=સહ્યતે યત્ તત્, ઉત્પન્નં પરીપદાદિકં શિષ્યૈસ્તિતિક્ષયિતું મહાન્તમાયાસમનુભવન્તીતિ ૪। તથા-દુરનુચરમ્-દુઃસ્થેન અનુચર્યતે=અનુષ્ટાપ્યતે યત્તત્ । શિષ્યૈરાચારમનુષ્ટાપયિતું તે મહાપરિશ્રમવન્તો ભવન્તીતિ । અત્ર ચરતિરન્તર્ભાવિત્ત્વર્થો વોધ્યઃ । યદ્યપીહ સ્થાનાનિ દુરાભ્યાનાદીનિ વક્તવ્યાનિ, તથાપિ યેષુ સ્થાનેષુ કૃચ્છૃટ્તિ ભવતિ સ્થાનાન્યપિ કૃચ્છૃટ્તિયોગાત્ આશ્રયાશ્રયિણોરભેદોપચારેણ કૃચ્છૃટ્તીત્યુચ્યન્તે ।

કરોંકો કઠિનતા હુર્દ્દૈ હૈ ૧। દુર્વિભાજ્ય શિષ્યોંકી બુદ્ધિર્મે જો વસ્તુતત્ત્વકો વિભાગશઃ સંસ્થાપન કરના દુઃશક્ય હોતા હૈ, વહ દુર્વિભાજ્ય હૈ ૨। જો વસ્તુતત્ત્વ શિષ્યોંકો વહી કઠિનતાસે દિગ્વલાયા જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ વસ્તુતત્ત્વકો સમજાનેમેં ઉન્હોંને કઠિનતાકા અનુભવ ક્રિયા હૈ, વહ દુર્દર્શ હૈ, જિન ઉત્પન્ન હુણ પરીપહ આદિકોંકા સહન શિષ્યોંસે ઉન્હોંને કઠિનતાસે કરાયા હૈ, અર્થાત્ ઉત્પન્ન હુણ પરીપહોંકો શિષ્યોંસે સહન કરાનેમેં જિસ કઠિનાર્દકા ઉન્હેં અનુભવ હુઆ હૈ વહ દુસ્તિતિક્ષ હૈ ૪। તથા-શિષ્યજનોંસે ઉન્હોંને જિસ આચારકા પરિપાલન વહી કઠિનતાસે પાયા હૈ વહ દુરનુચર હૈ ૫।

ચચપિ યહાં ઇન પાંચ સ્થાનોંકો દુરાભ્યાન આદિ રૂપસે કહના ચાહિયે યા, દુરાભ્યેય આદિ રૂપસે નહીં કહના ચાહિયે યા, પરન્તુ ફિરમી

ઘણી જ કઠિનતાનો અનુભવ કરવો પડ્યો હતો. (૨) “ દુર્વિભાજ્ય ”— શિષ્યોની બુદ્ધિમાં જે વસ્તુતત્ત્વનું વિભાગશઃ સંસ્થાપન કરવાનું કાર્ય દુઃશક્ય હોય છે, તેનું નામ દુર્વિભાજ્ય છે. (૩) જે વસ્તુતત્ત્વ શિષ્યોને ઘણી મુશ્કેલીથી દેખાઈ શકાય છે—એટલે કે જે વસ્તુતત્ત્વ શિષ્યોને સમજાવવામાં તેમને કઠિનતાનો અનુભવ કર્યો હતો, તેને દુર્દર્શ કહેવામાં આવેલ છે. (૪) ઉત્પન્ન થયેલા જે પરીપહોને શિષ્યો દ્વારા સહન કરાવવામાં તેમને કઠિનાઈનો અનુભવ કરવો પડ્યો હતો, તે પરીપહોને અહીં દુસ્તિતિક્ષ કહ્યાં છે. (૫) તેમણે શિષ્યો પાસે જે આચારનું પાલન ઘણી મુશ્કેલીથી કરાવ્યું હતું તે આચારને અહીં દુરનુચર કહ્યાં છે.

જે કે આ પાંચ સ્થાનોને અહીં દુરાભ્યાન આદિ રૂપે કહેવા નોંધતાં હતાં, દુરાભ્યેય આદિ રૂપે કહેવા નોંધતાં ન હતાં, પરન્તુ અહીં આશ્રય અને

अतएवात्र-दुराख्येयमित्यादीनि स्थानत्वेनोक्तानीति । अथवा-प्रथमान्तिम-
तीर्थकृतां तीर्थे आचार्यादीनां शिष्यान् प्रति दुराख्येयं दुर्विभाज्यं च भवति,
आत्मनाऽपि च दुर्दर्शं दुस्तितिक्षं दुरनुचरं च भवति । अत्र पक्षे अन्तर्भावित्प्य-
र्थता नाश्रीयते इति । तथा-मध्यमकानां द्वाविंशतितीर्थकरणाम् आख्याना-
दिषु पञ्चसु स्थानेषु सुगमम्=अकृच्छ्रवृत्ति भवति । तान्येवाह-' स्वाख्येयं सुवि-
भाज्यम् ' अकृच्छ्रवृत्तियोगात् एतानि स्थानानि अकृच्छ्रवृत्तौत्युच्यन्ते, अत एवात्र

ऐसा जो इन्हे' कहा गया है, उसका कारण आश्रय (आधार) और आश्र-
यीमें अभेदके उपचारसे कहा गया है । अर्थात् जिन स्थानोंमें कृच्छ्र (दुःख)
वृत्ति होती है, वे स्थान भी कृच्छ्रवृत्तिके योगसे कृच्छ्रवृत्तिरूप (दुःख-
रूप) मान लिये गये हैं । इसी कारण दुराख्येय आदि रूपसे इन स्थानोंको
कहा है, अथवा-प्रथम और अन्तिम तीर्थकरोंके तीर्थमें आचार्य आदिके
शिष्योंके प्रति तत्त्वका दुराख्येय और दुर्विभाज्य होता है, और
स्वयंके द्वारा भी वह दुर्दर्श दुस्तितिक्ष और दुरनुचर होता है
तथा मध्यके जो २२ तीर्थकर हैं उनकी आख्यान आदि पांच स्थानोंमें
अकृच्छ्रवृत्ति होती है, इनमें उन्हे' कठिनता नहीं होती है, वे इन पांच
स्थानोंमें अकृच्छ्रवृत्तिवाले होते हैं, वे पांच स्थान ये हैं-स्वाख्येय १ सुवि-
भाज्य २ सुदर्श ३ सुतितिक्ष ४ और सु अनुचर ५ अकृच्छ्रवृत्तिके योगसे

आश्रयीमां अलोडना उपचारथी तेभने दुराख्येय आदि रूपे कडेवामां आवेद
छे. अटवे के ने स्थानोमां कृच्छ्र (दुःख) वृत्ति डोय छे ते स्थानोने पणु
कृच्छ्रवृत्तिना योगथी कृच्छ्रवृत्ति रूप (दुःखरूप) मानवामां आख्यां छे. अने
कारणे अही ते स्थानोने दुराख्येय आदि रूप अही कहां छे. अथवा-पडेला
अने छेदला तीर्थ'करोना तीर्थमां आचार्य आदिकोने माटे शिष्योने वस्तुतत्त्व
कडेवानुं दुराख्येय હતું અને તેમની બુદ્ધિમાં વસ્તુતત્વની વિભાગશઃ સ્થાપના
કરવાનું કાર્ય પણ મુશ્કેલ હતું. અને પોતાને માટે પણ તે દુર્દર્શ, દુસ્તિ
તિક્ષ અને દુરનુચર હતું. આ પ્રમાણે અર્થ પણ અહીં ગ્રહણ કરી શકાય
છે. જે વચ્ચેના ૨૨ તીર્થ'કરો થઈ ગયા તેમની આખ્યાન આદિ પાંચ
સ્થાનોમાં અકૃચ્છ્રવૃત્તિ (સુખરૂપ વૃત્તિ) હતી. તેમને આખ્યાન આદિમાં
કઠિનતાનો અનુભવ કરવો પડ્યો ન હતો. તેઓ આ પાંચ સ્થાનોમાં અકૃચ્છ્ર
વૃત્તિવાળા (સુખરૂપ વૃત્તિવાળા) હતા.

(૧) સુ આખ્યેય, (૨) સુ વિભાજ્ય, (૩) સુદર્શ, (૪) સુતિતિક્ષ અને
(૫) સુ અનુચર. અકૃચ્છ્રવૃત્તિના યોગથી આ સ્થાનોને અકૃચ્છ્રવૃત્તિરૂપ કહ્યાં છે.

स्वाख्येयमित्यादौनि स्थानत्वेन निर्दिष्टानि । मध्यमकानां तीर्थकराणां शिष्या ऋजुप्राज्ञा भवन्ति, अत एव तेषां भगवतामाख्यानानादौ अकृच्छ्रवृत्ति भवति । अन्तर्भावितपर्यथता पूर्ववदेव बोध्या । यद्वा-मध्यमकानां तीर्थकृत्वां तीर्थे आचार्याणामाख्यानदिषु पञ्चसु स्थानेषु अकृच्छ्रवृत्ति भवति । अत्र पक्षेऽन्तर्भावितपर्यथतानाश्रीयते । पूर्वानुसारेणैवात्रापि व्याख्या भावनीयेति । 'सुरणुचरं' इत्यत्र रेफागमः प्राकृतत्वाद् बोध्यः ॥

सम्पत्ति भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां कर्तव्यत्वेन यदुक्तं तदाह-
'पंच ठाणोइं' इत्यादिना ।

श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां पञ्च स्थानानि नित्यं सर्वदा वर्णितानि, फलन, नित्यं कीर्तितानि=प्रशंसितानि नामतः, नित्यम् उक्तानि=

(सुखसे समझाने के योग्य) होनेसे इन स्थानोंको अकृच्छ्रवृत्तिरूप कहा है, इसीलिये स्वाख्येय आदि स्थानरूपसे निर्दिष्ट हुए हैं, मध्यके २२ तीर्थकरोंके शिष्य ऋजुप्राज्ञ होते हैं, इसीलिये उनके प्रति वस्तु-तत्त्वके कथनमें भगवान्को अकृच्छ्रवृत्ति होती है, कठिनता नहीं होती है, यद्वा-मध्यके तीर्थकरोंके तीर्थमें आचार्योंकी आख्यान आदि पांच स्थानोंमें अकृच्छ्रवृत्ति रहती है, इस पक्षमें अन्तर्भावित पर्यथता आश्रित-गृहीत नहीं हुई है। पूर्वके अनुसारही यहाँ व्याख्या कर लेनी चाहिये

अब सूत्रकार भगवान् महावीरके द्वारा श्रमणजनोंको कर्तव्य रूपसे जो कहा गया है, सूत्रकार उसे प्रकट करते हैं-श्रमण भगवान् महावीरने श्रमण निर्ग्रन्थोंके पांच स्थान सर्वदा फलकी अपेक्षा वर्णित किये हैं, नामकी अपेक्षा कीर्तित किये हैं, स्वरूपकी अपेक्षा स्पष्टवाणीसे

तेथी ते स्थानेने सु आख्येय आदि इये अहीं जताववाभां आव्यां छे वन्थेना २२ तीर्थउरेना शिष्यो ऋजुप्राज्ञ हुता तेथी तेमने वस्तुतत्व उडे वामां-समजववाभां लगवानेने कठिनताने अनुभव थतो नही. अहीं पणु उपर भुज्जाना पांचे स्थानानुं कथन थनुं जेधजे. अथवा वन्थेना २२ तीर्थकरीना तीर्थमां आचार्योने आख्यान आदि पांच स्थानेमां कठिनता अनुभववी पउती नथी आ पक्षे आगण प्रमाणे ज अहीं व्याख्या समज लेवी.

हवे महावीर प्रबुजे श्रमणु निर्ग्रन्थाना जे कर्तव्ये जताव्यां छे, तेने सूत्रकार प्रकट करे छे-श्रमणु लगवान महावीरे नीथेनां पांच स्थान श्रमणुने माटे सर्वदा इलहायी वर्णित कर्थां छे, नामनी अपेक्षाजे कीर्तित कर्थां छे, स्वरूपनी अपेक्षाजे स्पष्टवाणीथी कर्थां छे, नित्य प्रशंसाने योग्य कर्थां

व्यक्तवाचा कथितानि स्वरूपतः, नित्यं प्रशंसितानि=श्लघितानि, नित्यम् अभ्य-
नुज्ञातानि=कर्तव्यतया अनुमतानि च भवन्ति । तानि पञ्च स्थानानि कानि ?
इत्याह—तद्यथा-क्षान्तिः १ मुक्तिः २ आर्जवम् ३, मार्दवम् ४ लाघवम् ५ इति ।
तत्र-क्षान्तिः=क्षमा, इयं हि क्रोधत्यागतो भवति । मुक्तिः=निर्लोभता, इयं
लोभत्यागतः, आर्जवम्=ऋजुता, इदं मायात्यागतः, मार्दवं=मृदुता, इदं मान-
त्यागतः, तथा-लाघवं=लघुता, इदमल्पोपकरणतः ऋद्धिरससातगौरवत्रय-
त्यागतश्च भवति । इतोऽपि प्रतिस्मृत्तं 'पंचहिं ठाणेहिं समणेणं भगवया महा-
वीरेण' इत्यादि सूत्रोत्क्षेपस्यार्थः- पूर्ववद् विभावनीयो वैयावृत्यसूत्रपर्यन्तम् ।

कहे हैं, नित्य वे प्रशंसित कियेहैं और कर्तव्यरूपसे वे माने हैं, वे पांच
स्थान ये हैं-क्षान्ति १ मुक्ति २ आर्जव ३ मार्दव ४ और लाघव ५ इनमें
क्षमाका नाम क्षान्ति है, यह क्षान्ति क्रोधके त्यागसे होती है, ऋजुताका
(सरलता) नाम आर्जव है, यह आयाके त्यागसे होता है, मृदुताका
नाम मार्दव है, यह मानके त्यागसे होता है, लघुताका नाम लाघव है,
यह अल्प उपकरणसे और ऋद्धि रस सात तीन प्रकारके गौरवके त्यागसे
होताहै, यहाँसे आगेके जो सूत्र वैयावृत्य सूत्र तकहैं, उनमें प्रत्येक सूत्रमें
“ पंचहिं ठाणेहिं समणेणं भगवया महावीरेण ” इत्यादि सूत्रोत्क्षेपका
अर्थ पहिलेकी तरहसे विभावित कर लेना चाहिये-लगा लेना चाहिये ।
अर्थात् जिस प्रकारसे पूर्वोक्त स्थानोंमें ऐसा कहा गया है, कि ये स्थान
श्रमण भगवान् महावीर द्वारा यावत् अभ्यनुज्ञात आज्ञापित हुएहैं, उसी

छे अने कर्तव्य रूप (करवा योग्य) जताव्यां छे. ते पांच स्थान नीचे प्रमाणे
छे—(१) क्षान्ति, (२) मुक्ति, (३) आर्जव, (४) मार्दव अने (५) लाघव.
क्षमाने क्षान्ति कहे छे, ते क्रोधना त्यागथी उद्भववे छे, लोभना
त्यागनुं नाम मुक्ति छे, ऋजुतानुं नाम आर्जव छे, मायाना त्यागथी
ऋजुता आवे छे. मृदुतानुं नाम मार्दव छे, ते मानना त्यागथी उत्पन्न थाय
छे. लघुतानुं नाम लाघव छे, अथवा अल्प उपकरणे अने ऋद्धि रस अने
गौरवना त्यागथी आ गुण उत्पन्न थाय छे.

इवे पछीना वैयावृत्य सुधीना प्रत्येक सूत्रमां पणु “ पंच हिं ठाणेहिं
समणेणं भगवया महावीरेण ” इत्यादि सूत्रपाठ आगण ने प्रमाणे कक्षां छे
ते प्रमाणे कहेवे जेधजे. जेटदे के जे प्रकारे पूर्वोक्त स्थानोंमां जेवु कहे
वामां आवुं छे के श्रमणेने भाटे आ स्थानो श्रमणु भगवान् महावीर द्वारा
वर्णित, कीर्तित, उक्त, प्रशंसित अने कर्तव्य (करवा योग्य) बनाया छे, जे जे

તત્ત્વ-સત્યં ૧ સંયમઃ ૨ તપઃ ૩ ત્યાગો ૪ વ્રહ્મચર્યવાસઃ ૫, इति पञ्च स्थानानि।

તત્ત્વ-સત્યં-યથાર્થભાષણમ્, તત્ત્વચતુર્વિધમુક્તમ્ । તથાહિ—

“ અવિસંવાદનયોગઃ ૧, કાય ૨ મનોવાગ ૩ જિહ્વતા ૪ ચૈવ ।

સત્યં ચતુર્વિધં તત્ત્વ જિનવરમતેઽસ્તિ નાન્યત્ર ॥૧૧” इति ।

અવિસંવાદનયોગઃ=અહ્નીકૃતપરિપાલનમ્, કાયમનોવાગજિહ્વતા=કાય-મનોવક્ત્રસામકુટિલતા ચેતિ ચતુર્વિધં સત્યં વિજ્ઞેયમિતિ ભાવઃ । તથા-સંયમઃ-સંયમનં સંયમઃ-પૃથિવ્યાદિરક્ષણલક્ષણઃ, સ ચ સપ્તદશવિધઃ । તદુક્તમ્—

“ પુઠ્ઠવિદગઅગણિમાસુયવળ્પ્ફઙ્વિતિ ચૌપંચિદિઅંજીવે ।

પેહોપેહપમઙ્ગણ પરિટ્ટવળ મળોવૈકાણ ॥૧૧”

છાયા-પૃથ્વીદ્રકાગ્નિમાસુતવનસ્પતિ દ્વિત્રિચતુઃપચ્ચેન્દ્રિયાં જીવેષુ ।

પ્રેક્ષોત્પ્રેક્ષપમાર્જન પરિઠ્ઠાપનમનોવાકાચેષુ ॥૧૧”

પ્રકારસે સત્ય ૧ સંપ્રમ ૨ તપ ૩ ત્યાગ ૪ ઓર વ્રહ્મચર્યવાસ ચે પાંચ સ્થાન
શી શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર દ્વારા યાવત્ અશ્વનુજ્ઞાન હુણ્ હૈં । યહાં
સમસ્ત સૂત્રોર્મે યાવત્પદસે “ વર્ણિનાનિ, કીર્તિતાનિ, ઉક્તાનિ, પ્રશં-
સિતાનિ ” હન ચાર પદોંકા સંગ્રહ હુઆ હૈ, યથાર્થ ભાષણકા નામ
સત્ય હૈ? યહ સત્ય ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ-જૈસે-“ અવિસંવાદન-
યોગઃ ” ઇત્યાદિ અહ્નીકૃતકા (સ્ત્રીકાર કિયે હુવેકા) પરિપાલન કરના
હસ કા નામ અવિસંવાદનયોગ હૈં, ઇવં કાય, મન
વચનકી અકુટિલતા સરલતા કા કાય મનોવાગ્જિહ્વતા
હૈ, હસ પ્રકારસે સત્યકે ચે ચાર શેદ હૈં । પૃથિવ્યાદિકોંકા રક્ષણકરને
રૂપ સંયમ હોતા હૈ, અર્થાત્ હહ કાયકે જીવોંકી રક્ષા કરના યહ
સંયમ ૧૭ પ્રકારકા કહા ગયા હૈ, જૈસે-“ પુઠ્ઠવિદગ અગણિ ” ઇત્યાદિ ।

પ્રમાણે સત્ય, સંયમ, તપ, ત્યાગ અને બ્રહ્મચર્યવાસ રૂપ આ પાંચ સ્થાનોને
પથુ વર્ણિત, કીર્તિત આદિ રૂપ માનવામાં આવેલ છે યથાર્થ ભાષણ અથવા
વચનનું નામ સત્ય છે. આ સત્ય ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે-“ અવિસંવાદનયોગઃ ”
ઈત્યાદિ. અગ્નીકૃતનું પાલન કરવું તેનું નામ અવિસંવાદન યોગ છે. અને મન,
વચન અને કાયાની અકુટિલતા રૂપ બીજા ત્રણ ભેદો મળીને સત્યના કુલ ચાર
ભેદ પડે છે. પૃથ્વીકાય આદિનું રક્ષણ કરવા રૂપ સંયમ હોય છે. એટલે કે
છકાયના શ્વેત્રી રક્ષા કરવી તેનું નામ સંયમ છે. તે સંયમના ૧૭ સત્તર પ્રકાર
કહ્યા છે. જેમકે “ પુઠ્ઠવિદગઅગણિ ” ઇત્યાદિ. આસુવેથી વિરક્ત થવા રૂપ

अथवा-संयमः-आस्रवविरमणादिरूपः सोऽपि सप्तदशविधः ।

“ पञ्चास्रवाद् विरमणं ५, पञ्चेन्द्रियनिग्रहः १० कषायजयः १४ ।

दण्डत्रयविरतिश्चेति संयमः सप्तदशभेदः ॥इति॥

तथा-तपः-तप्यन्ते रसरुधिरादीनि अशुभकर्माणि वाऽनेनेति तपः ।

उक्तंच-“ रसरुधिरमांसमेदोस्थिमज्जशुक्राण्यनेन तप्यन्ते ।

कर्माणि वाऽशुभानीत्यतस्तपो नाम नैरुक्तम् ” ॥इति॥

आस्रवसे विरमण-विरक्त होने रूप जो आत्मपरिणति है, वह संयम है। इस प्रकारका भी संयम १७ प्रकारका कहा गया है-जैसे “ पञ्चास्रवाद् विरमणं ” संयमके सत्रह प्रकार इस तरहसे है-पूर्वोक्त पांच स्थावर जीवोंके और चार त्रस जीवोंके विषयमें यतना रखना नौ तो ये संयमके भेद हुए तथा अजीवके विषयमें संयम प्रेक्षा संयम, उत्प्रेक्षा संयम प्रमार्जन संयम परिष्ठापन संयम एवं मनका संयम वचनका संयम और कायसंयम एवं आठ भेद ये हुए, इस प्रकारसे १७ भेद ये संयमके “ पुढविदग् ” आदि गाथा द्वारा प्रकट किये गये हैं, तथा पांच आस्रवोंसे विरक्त होना पांच इन्द्रियोंका निग्रह करना उन्हें वशमें रखना-चार कषायोंका जीतना एवं मन वचन कायकी अशुभ क्रियाओंसे विरक्त होना, इस प्रकारसेभी ये १७ प्रकारके संयमके भेद प्रकट किये गये हैं, जिसके द्वारा शरीरगत रस रुधिर आदि अथवा अशुभ कर्म तपाये जाते हैं, वह तप है। कहा भी है-“ रस-

ने आत्मपरिणति छे, तेने संयम कडे छे. आ प्रकारना संयमना पणु १७ सत्तर प्रकार कड्या छे. जेभके “ पञ्चास्रवाद् विरमण ” धृत्यादि-संयमना १७ प्रकारे नीचे प्रमाणे छे-पृथ्वीकाय आदि पांच स्थावर एवोना विषयमां यतना राभवी, चार प्रकारना त्रस एवोनी यतना करवी, आ प्रकारे नव लेह सम-जवा भाडीना आठ लेह नीचे प्रमाणे छे-प्रेक्षा संयम, उत्प्रेक्षा संयम, प्रमार्जन संयम, परिष्ठापन संयम, मन संयम, वचन संयम, काय संयम अएवना विषयमां संयम “ पुढविदग् ” धृत्यादि गाथा द्वारा संयमना सत्तर लेह अर्ही प्रकट करवामां आब्या छे तथा पांच आस्रवोथी विरक्त थवुं, पांच इन्द्रियोना निग्रह करवो-तेमने वश राभवी, चार कषायोने एतवा अने मन, वचन अने कायामी अशुभ क्रियाओथी विरक्त थवुं, ज्ये प्रकारने आस्रवोथी विरक्त थवा इप जे संयम छे तेना पणु १७ सत्तर लेह प्रकट करवामां आब्या छे. जेना द्वारा शरीरमां रडेदा रस, रुधिर आदिने अथवा अशुभ कर्मने तपाववामां आवे छे, तेने तप कडे छे. कहुं पणु छे के “ रसरुधिर-

एतच्च बाह्याभ्यन्तरभेदेन द्वादशविधं भवति
तदुक्तम्—“ अणसणमूणोयरिया, वित्तीसंखेवणं रसन्चाओ ।
कायकिलेसो संलीणया य वज्झो तवो होइ ॥१॥
पायच्छित्तं विणओ, वेयावृत्तं तहेव सज्जाओ ।
झाणं उस्सग्गो वि य, अट्ठिभतरओ तवो होइ ॥२॥”

छाया—अनशनम्नोदरिका वृत्ति संक्षेपणं रसत्यागः ।

कायक्लेशः संलीनता च बाह्यं तपो भवति ॥१॥

प्रायश्चित्तं विनयो वैयावृत्यं तथैव स्वाध्यायः ।

ध्यानं व्युत्सर्गोऽपि च आभ्यन्तरिकं तपो भवति ॥२॥ इति ।

तथा—त्यागः—त्यजनं—प्रदान—त्यागः—सांभोगिकेभ्यो भक्तादिदानं तदि-
तरेभ्यः श्राद्धादिकुलप्रदर्शनं च ।

तदुक्तम्—“ तो कय पच्चक्खाणो, आयरियगिलाणवाल्लवुड्डाणं ।

देज्जाऽसणाइ संते, लाभे कयवीरियायारो ॥१॥

रुधिरमांसमेदो ” इत्यादि । इसका अर्थ स्पष्ट है । यह तप बाह्यतप
और आभ्यन्तर तपके भेदसे दो प्रकारका होता है—बाह्यतप और आ-
भ्यन्तर तपके भेद इस प्रकारसे हैं—“ अणसणमूणोयरिया ” इत्यादि ।
अनशन १ ऊनोदर २ वृत्तिसंक्षेप ३ रसत्याग ४ कायक्लेश ५ और
संलीनता ये बाह्यतपके ६ भेद हैं ।

- प्रायश्चित्त १ विनय २ वैयावृत्य ३ स्वाध्याय ४ ध्यान ५ और
व्युत्सर्ग ६ ये आभ्यन्तर तपके ६ भेद हैं ।

सांभोगिक साधुजनोंके लिये भक्तादि लाकर देना और इनसे
भिन्न साधुओंको श्रावक आदिकोंका घर दिखाना यह त्याग है, तदु-

मांसमेदो ” इत्यादि—तेना अर्थ स्पष्ट છે. આ તપના સુખ્ય બે લેદ છે—
બાહ્ય તપ અને આભ્યન્તર તપ બાહ્ય તપના નીચે પ્રમાણે છ લેદ કહ્યા છે
“ અણસણમૂણોયરિયા ” ઇત્યાદિ—

(૧) અનશન, (૨) ઊણોદરી, (૩) વૃત્તિસંક્ષેપ, (૪) રસત્યાગ (૫)
કાયકલેશ અને (૬) સંલીનતા.

આભ્યન્તર તપના નીચે પ્રમાણે છ લેદ કહ્યા છે—(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત, (૨)
વિનય, (૩) વૈયાવૃત્ત, (૪) સ્વાધ્યાય, (૫) ધ્યાન અને (૬) ઉત્સર્ગ.

સાંભોગિક સાધુઓને માટે આહાર પાણી લાવી દેવાં અને સાંભોગિક
ન હોય એવા સાધુઓને શ્રાદ્ધ (શ્રાવક) આદિકેનાં ઘર બતાવવા તેવું નામ

સંવિગ્ન અન્નમોહ્યાણ દેસિજ્જ સહુગકુલાણિ ।

અતરંતો વા સંમોહ્યાણ દેસે જહસમાહી ॥૨૧॥”

છાયા—તતઃ કૃતપ્રત્યાખ્યાનઆચાર્યગ્લાનગ્લાનવૃદ્ધેભ્યઃ ।

દધાત્ અશનાદિ સતિ લાભે કૃતત્રીર્યાચારઃ ॥૧॥

સંવિગ્નાન્યમોગિકેભ્યો દેશયેત્ શ્રાદ્ધકકુલાણિ ।

અશક્તોવા (સ્વયં) સાંમોગિકેભ્યો દેશયેત્ યથાસમાધિ ॥૨॥૩૩૩૩

બ્રહ્મચર્યવાસઃ—બ્રહ્મચર્યે=મૈથુનવિરમણરૂપે વાસઃ=અવસ્થાનમ્, બ્રહ્મચર્યેણ વા વાસઃ । इत्थं क्षान्त्यादि ब्रह्मचर्यवासान्तो दशविधः श्रमणधर्म प्रोक्तः ॥

સમ્પતિ વૃત્તિસંક્ષેપનામકસ્ય ધર્મરૂપવાહ્યતપોવિશેષસ્ય ભેદાનાહ—“ઉ-
ક્ષિત્તચરણ ” इत्यादिना । उक्षिप्तचरकः—उक्षिप्तम्—गृहस्थेन स्वार्थं पाकभाज-

ક્તમ્—“ તાં કયપચ્ચક્ખાણો ” इत्यादि । इन श्लोकोंका भाव ऐसा है कि जिसने प्रत्याख्यान कर लिया है, ऐसा साधु आचार्य ग्लान एवं वृद्ध साधुजनोंके लिये भिक्षा लाकर देवे तथा अपने सांभोगिक साधुओंसे अन्य सांभोगिक साधुओंके लिये वह श्रावकके घरोंको बतावे और यदि वह स्वयं अशक्त हो, तो सांभोगिकके लिये अपनी समाधिके अनुसार श्रावकोंके घरोंको बतावे ब्रह्मचर्यमें—मैथुनविरमणरूप व्रतमें—जो वास अवस्थान है, वह या ब्रह्मचर्यसे जो रहता है, वह ब्रह्मचर्यवास है, इस प्रकार यह क्षान्तिसे लेकर ब्रह्मचर्य तक दश प्रकारका श्रमण धर्म कहा गया है.

અવ સૂત્રકાર સાધુકા ધર્મરૂપ જો વૃત્તિ સંક્ષેપ નામકા બાહ્યતપ
હૈ, उसके भेदोंका कथन—“ उक्क्षिप्तचरण ” इत्यादि सूत्रद्वारा करतेहैं—

ત્યાગ છે. કહ્યું પણ છે કે “ તોકયપચ્ચક્ખાણો ” इत्यादि आ श्लोकने लावार्थ
એવો છે કે જેણે પ્રત્યાખ્યાન કરી લીધાં છે એવો સાધુ આચાર્ય, ગ્લાન
અને વૃદ્ધ સાધુઓને માટે ભિક્ષા વડેરી લાવીને તેમને આપી દે. તથા
પોતાના સાંભોગિક સાધુઓને, અન્ય સાંભોગિક સાધુઓ માટે
આહાર પાણી પ્રાપ્ત કરવા યોગ્ય શ્રાવકના ઘરો ખતાવે અને જે પોતે અશક્ત
હોય, તે સાંભોગિકને પોતાની સમાધિ અનુસાર શ્રાવકનાં ઘરો ખતાવે તેને
તથા બ્રહ્મચર્યમાં—મૈથુન વિરમણ રૂપ વ્રતમાં જે વાસ (અવસ્થાન) છે તેને
બ્રહ્મચર્યવાસ કહે છે. એટલે કે બ્રહ્મચર્યના પાલનપૂર્વક રહેવું તેનું નામ
બ્રહ્મચર્યવાસ છે. આ પ્રકારના ક્ષાન્તિથી લઈને બ્રહ્મચર્ય પર્યન્તના દસ પ્રકારના
શ્રમણ ધર્મ કહ્યા છે.

હવે સૂત્રકાર સાધુના ધર્મરૂપ જે વૃત્તિસંક્ષેપ નામનું બાહ્યતપ છે, તેના

નાદ્ યદ્ ભોજનમ્ ઉદ્ઘૃતમ્ અભિગ્રહવશાત્ તદ્ ગવેપયિતું યશ્વરતિ સઃ । તથા-
 નિક્ષિપ્તચરકઃ—નિક્ષિપ્તં=પાકપાત્રાદુદ્ઘૃત્યાન્યમાજને સ્થાપિતં તદ્ગ્રહણાય
 અભિગ્રહવશાદ્ યશ્વરતિ સઃ । તથા-અન્તચરકઃ—યો ભિક્ષુરભિગ્રહવિશેષાદ્
 અન્તં—ક્રોદ્રવાદિનિસ્સારધાન્યરૂપમાહારં ગવેપયિતું ચરતિ સઃ । તથા—પ્રાન્ત-
 ચરકઃ પ્રાન્તં=પર્યુપિતતક્રમિશ્રિતવલ્લચણકારિરૂપભોજનં ગવેપયિતુમ-
 મિગ્રહવશાદ્ યશ્વરતિ સઃ । તથા—રૂક્ષચરકઃ—યોઽભિગ્રહવિશેષવશાદ્ રૂક્ષં=નિઃ

શ્રમણ ભગવાન્ દ્વારા યે પાંચ સ્થાન યાવત્ અભ્યનુજ્ઞાત હુર્ણ—આજ્ઞાદી હૈ
 જૈસે—ઉત્ક્ષિપ્તચરક ૧ નિક્ષિપ્તચરક ૨ અન્તચરક ૩ પ્રાન્તચરક ૪ એવં
 રૂક્ષચરક ૫ इनमें गृहस्थके द्वारा अपने लिये पाक भाजनसे जो भोजन
 दूसरे भाजनमें रख लिया हो, साधु अभिग्रहवशसे उसकी गवेपणाके
 लिये जो विचरण करता है, वह उत्क्षिप्तचरक है १। पाक भाजनसे उठाकर
 अन्य पात्रमें स्थापित किया भोजन निक्षिप्त हैं, उसे ग्रहण करनेके
 लिये जो साधु अभिग्रहवशसे विचरण करता है, वह निक्षिप्तचरक
 है २। जो भिक्षु अभिग्रह विशेषके वश क्रोद्रवादि निस्सार धान्यरूप
 आहारकी गवेपणा करनेके लिये विचरण करता है, वह अन्तचरक है ३।
 जो भिक्षु अभिग्रहवशसे पर्युपित ढंडा (वासी) छाछ मिश्रित वाल-
 चना आदि अन्नरूप भोजनकी गवेपणा करनेके लिये विचरण करता

લેદોનું કથન કરે છે—“ સ્ક્ષિપ્તચરક ” ઇત્યાદિ—શ્રમણુ ભગવાન મહાવીર
 દ્વારા નીચેના પાંચ સ્થાન વર્ણિત, કીર્તિત આદિ રૂપ ગણ્યાં છે—(૧) ઉત્ક્ષિપ્ત
 ચરક, (૨) નિક્ષિપ્ત ચરક, (૩) અન્ત ચરક, (૪) પ્રાન્ત ચરક અને (૫) રૂક્ષ ચરક

ગૃહસ્થે પાક ભોજનમાંથી (જેમાં કોઈ ભોજન ગનાન્યુ' હોય તે
 પત્રમાંથી) ખીલ ભાજનમાં જે ભોજન મૂકી રાખ્યું હોય એવાં ભોજની
 ગવેપણાને માટે વિચરણુ કરતા સાધુને ઉત્ક્ષિપ્ત ચરક કહે છે. આ પ્રકારનું
 ભોજન ગ્રહણ કરવાને તેણે અભિગ્રહ કયો હોય છે.

પાક ભોજનમાંથી લઇને અન્ય પાત્રમાં સ્થાપિત કરી નાખવામાં આવેલા
 ભોજનને નિક્ષિપ્ત કહે છે. એવા ભોજનને ગ્રહણ કરવાના અભિગ્રહપૂર્વક જે
 સાધુ વિચરણુ કરે છે, આહારની ગવેપણા કરે છે, તેને નિક્ષિપ્ત ચરક કહે
 છે જે સાધુ અભિગ્રહ વિશેષને લીધે ક્રોદ્ર આદિ નિઃસાર ધાન્યરૂપ અહા
 રની ગવેપણા કરવાને માટે વિચરણુ કરે છે, તે સાધુને અન્તચરક કહે છે.
 જે ભિક્ષુ અભિગ્રહપૂર્વક પર્યુપિત ઠંડા (વાસી) છાશમિશ્રિત, વાલ, ચણુ
 અદિ અન્નરૂપ ભોજનની ગવેપણા કરવાને માટે વિચરણુ કરે છે, તેને પ્રાન્ત-

स्नेहमाहारं गवेषयितुं चरति सः । रुक्षाहारमात्रग्रहणशीलो भिक्षुरित्यर्थः । तथा-
अज्ञातचरकादीनि पञ्च स्थानान्येवं विज्ञेयानि, तत्र-अज्ञातचरक-अज्ञातः=भ्रमुप-
दर्शितसौजन्यादि भावःसन् योऽभिग्रहवशाद् भिक्षार्थं चरति, अज्ञातेषु वा गृहेषु तथा-
विधाभि ग्रहवशाद् भिक्षार्थं यश्चरति सः । तथा-अन्नग्लायकचरः-अन्नं विना ग्लायति-
ग्लायति यः सोऽन्नग्लायकः अभिग्रहवशात्तथाविधः सन् आहारार्थं यश्चरति सः-
रात्रिपर्युषितान्नभोजीत्यर्थः तथा-मौनचरः-अभिग्रहवशाद् यो मौनेन भिक्षार्थं

है, वह प्रान्तचरकहै४। जो भिक्षु अभिग्रह वशासे निःस्नेह (विगयरहित)
आहारकी गवेषणाके लिये विचरण करता है, वह रुक्षचरक है५। रुक्ष-
चरक भिक्षु रुक्ष आहार मात्रको ग्रहण करनेवाला होना है-तथा अज्ञात
चरक आदि जो पांच स्थान हैं, वे इस प्रकारसे हैं, जो भिक्षु अपने
सौजन्यादि भावको दिखाये बिनाही अभिग्रहवशासे भिक्षाके लिये
भ्रमण करताहै, वह? अथवा अज्ञात घरोंमें तथाविध अभिग्रहके वशासे
भिक्षाके लिये भ्रमण करता है, वह अज्ञातचरक है २। अन्नके विना जो
ग्लानमुख हो जाता है, कुम्हलासा जाता है, ऐसा वह भिक्षु अन्न-
ग्लायक है, ऐसा वह अन्नग्लायक भिक्षु अभिग्रहके वशासे जो तथाविध
होता हुआ आहारके लिये भ्रमण करता है, वह अन्नग्लायकचर है २,
यह अन्नग्लायकचर रात्रि पर्युषित (वासी) अन्नका भोगी होता है,
अर्थात् खड़ी छाछमें मिलाया हुआ बाल चणा आदिके बने हुए वासी

चरक कहे छे. जे साधु अभिग्रहपूर्वक निःस्नेह-धी, तेद आदि स्निग्धताथी
रहित-आहारनी गवेषणाने भाटे विचरणु करे छे तेने इक्षचरक कहे छे. ते
मात्र इक्ष (दूभा) आहारने ज ग्रहणु करे छे.

तथा अज्ञात चरक आदि जे पांच स्थान छे तेनुं सूत्रकार डवे स्पष्टी-
करणु करे छे—जे साधु चेताना सौजन्य आदि लावेने देभाडया विना ज
अभिग्रह धारणु करीने भिक्षाने भाटे भ्रमणु करे छे तेने अज्ञातचरक कहे
छे, अथवा अज्ञात घरोंमाथी जे भिक्षा प्राप्त करवाने अभिग्रह धारणु करीने
भिक्षाने भाटे भ्रमणु करे छे तेने अज्ञातचरक कहे छे.

अन्न विना जे साधु ग्लानमुख थध नय छे, जेनुं मुख नदणु के
करमाथ नय छे, जेवा भिक्षुने अन्नग्लायक कहे छे. जेवो ते अन्नग्लायक भिक्षु
अभिग्रह विशेषने अधीन रहने ते प्रकारनी स्थिति थवा छतां पणु भ्रमणु
क्या करे छे, जेवा भिक्षुने अन्नग्लायकचर कहे छे. ते अन्नग्लायक चार रात्रि-
पर्युषित (वासी) अन्नने भोगी होय छे. जेटवे के भाटी छाश आदि वडे

ચરતિ સઃ । તથા-સંસૃષ્ટકલ્પકઃ-સંસૃષ્ટેન=ત્વરણિતેન હસ્તભાજનાદિના દીય-
માનસ્યૈવ ભક્તાદેર્ગ્રહણે કલ્પો નિયમોઽભિગ્રહવશાદ યસ્ય સઃ, તથાત્રિધાભિ-
ગ્રહવિશેષધારકઃ સાધુરિત્યર્થઃ તથા-તજ્જાતમંસૃષ્ટકલ્પકઃ-તજ્જાતેન=
દેવદ્રવ્યાવિરોધિના દાતવ્યદ્રવ્યેણૈવેત્યર્થઃ યત્ સંસૃષ્ટ=ત્વરણિતં હસ્તભાજનાદિ,
તેન દીયમાનસ્યૈવ ભક્તાદેર્ગ્રહણે કલ્પો=નિયમોઽભિગ્રહવશાદ યસ્ય સઃ । તથા-
ઔપનિધિકાદીનિ પશ્ચ સ્થાનાન્યેવં વિજ્ઞેયાનિ, તથાહિ-ઔપનિધિકઃ-ઉપનિધી-
યતે હત્યુપનિધિઃ-પ્રત્યાપન્નં યથારૂથંચિરાનીતં, ન તુ સાધર્થં, તેન યથ્ચરતિ
અભિગ્રહવગત્ સ ઔપનિધિકઃ । યદ્વા-ઔપનિહિત ઇતિ ઋગ્ણાયા । ઉપનિહિતં=

અન્નકી ગવેષણા કરતા હૈ, જો ભિક્ષુ અભિગ્રહ વિશેષસે મૌનપૂર્વક
ભિક્ષાકે લિયે ઞ્રમણ કરતા હૈ, વહ મૌનચર હૈ, તથા જિસકા સંસૃષ્ટ
અન્નાદિ ભરે હુણ્ હસ્ત ભાજન આદિસે દિયે ગયેહી આહાર આદિકો લેનેકા
કલ્પ નિયમ હૈ, એમા વહ તથાત્રિધ અભિગ્રહકા ધારી સાધુ સંસૃષ્ટ
કલ્પક હૈ, તથા જિસ સાધુકા દેને યોગ્ય દ્રવ્યસેહી સંસૃષ્ટ હુણ્ હસ્ત
ભાજનાદિસે દિયે જાતે હી ભક્તાદિકે ગ્રહણમ્ અભિગ્રહવગ નિયમ હૈ,
વહ સાધુ તજ્જાત સંસૃષ્ટ કલ્પક હૈ, તથા-ઔપનિધિકાદિ પાંચ સ્થાન
હસ પ્રકારસે હૈ-ઔપનિધિક ૧ શુદ્ધૈષનિક ૨ સંખ્યાદત્તિક ૩ ઇષ્ટ
લાભિક ૪ ઔર પુષ્ટ લાભિક ૫ હનમ્ જો ભિક્ષુ દાતા અપને પાસમ્
ભોજનકે સમય અન્નાદિ રહ્યા હો ઉસ અન્નાદિકો લેનેકે લિયે નિયમ-
વાલા હોના હૈ, વહ યા જો યાહે જિસ કિસી તરહસે લાયે નયે આહાર

મિશ્રિત વાલ, યથા આદિ વાસી અન્નની ગવેષણા કરે છે જે સાધુ અભિગ્રહ
વિશેષ ધારણ કરીને મૌનપૂર્વક ભિક્ષાને માટે ભ્રમણ કરે છે, તેને મૌનચર
કહે છે. જેણે સંસૃષ્ટ અન્નાદિ ભરેલા હસ્તભાજન આદિ વડે દેવામાં આવેલ
આહાર આદિને ગ્રહણ કરવાનો કલ્પ (નિયમ) કરેલો છે, એવા પ્રકારના
અભિગ્રહધારી સાધુને સંસૃષ્ટ કલ્પિક કહે છે. અર્પણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યથી જ
સંસૃષ્ટ એવા હસ્ત ભાજનાદિ વડે આપવામાં આવતા આહારાદિને જ ગ્રહણ
કરવાનો જેણે અભિગ્રહ ધારણ કરેલો છે એવા સાધુને ' તન્નત સંસૃષ્ટ
કલ્પિક કહે છે. તથા ઔપનિધિક આદિ પાંચ સ્થાન આ પ્રમાણે છે—

(૧) ઔપનિધિક, (૨) શુદ્ધૈષનિક, (૩) સંખ્યાદત્તિક, (૪) ઇષ્ટલાભક
અને (૫) પુષ્ટલાભિક. દાતાએ ભોજન કરતી વખતે જે અન્નાદિને પોતાની
પાસે રાખેલ હોય તે અન્નાદિને જ ગ્રહણ કરવાના નિયમવાળો જે સાધુ હોય
છે તેને અથવા તેણે જે પ્રકારનો અભિગ્રહ કર્યો હોય તે પ્રકારે આહાર

यथाकथंचिदानीतं, तेन यश्चरति अभिग्रहवशात् सः । प्रज्ञादित्वादप्रत्ययेन प्रयोगसिद्धिः । तथा-शुद्धैषणिकः-शुद्धैषणा=शुद्धस्य=निर्व्यञ्जनस्य भक्तादे-
रेपणा, तथा यश्चरति अभिग्रहवशात् सः । तथा-संख्यादत्तिकः-संख्याप्रधानाः-
एकद्वित्रादि संख्यापरिमिता दत्तयः=दीयमानाहारादेरविच्छिन्नरूपेण-निक्षेप-
रूपाः ता ग्राह्या यस्य सः, तथाविधाभिग्रहधारकः साधुः । दत्तिलक्षणं तु—

“ दत्ती उ जत्ति ए वारे, खिवई हौंति तत्तिया ।

अंबोच्छिन्न णिवायाओ, दत्ती होइ दवेयरा ॥१॥”

लाया-दत्तयस्तु यावतो वारान् क्षिपति भवन्ति तावत्तयः ।

अव्युच्छिन्ननिपाताद् दत्ति भवति द्रवेतरा ॥१॥ इति ।

द्रवेतरा=पानीयान्नरूपा । तथा-दृष्टलामिकाः-दृष्टस्यैव भक्तादेर्लाभः-
यद्वा-दृष्टात्-प्रथमदृष्टादेव दातुर्गृह्णाद्वा लाभो दृष्टलाभः यदर्थं योऽभिग्रह-

आदि वस्तुको लेनेका अभिग्रहवाला होता है, वह औपनिधिक या औपनिहित भिक्षु है, जिस भिक्षुका ऐसा नियम है, कि मैं निर्व्यञ्जनही आहार लूंगा, वह इस प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेवाला साधु शुद्धै-
षणिक है, जिस साधुका ऐसा अभिग्रह है, कि मैं दिये जाते हुए आहा-
रकी अविच्छिन्न रूपसे पात्रमें डाली गई दो तीन आदि दत्तियांही लूंगा ऐसा वह तथाविध आहारका अभिग्रहधारी साधु संख्यादत्तिक है, दत्तिका लक्षण इस प्रकारसे है-“दत्ती उ जत्ति ए वारे” बिना किसी व्यव-
धानके अन्नपानी जितनी वार दाता पात्रमें डालता है, वह दत्ति है, जिस भिक्षुका ऐसा नियम है, कि मैं देखे गयेही भक्तादिको लूंगा, या प्रथम दृष्ट दाताके गृहसेही आहार लूंगा, इस प्रकारका अभिग्रहधारी वह

आदिने अदृष्ट करवाना नियमवाणो डोय छे, तेने औपनिधिक अथवा औप
निहित भिक्षु कडे छे जे साधुने जेवो अलिग्रह डोय छे ते हु निर्व्यञ्जन
आहारने जे अदृष्ट करीश, अने ते प्रकारनी आहारनी ते गवेषणा करतो
डोय, तो तेने शुद्धैषणिक कडे छे. जे साधुजे जेवो अलिग्रह कथी डोय ते
हु अविच्छिन्न रूपे पात्रमां नभायेदी आहारनी जेक, जे, त्रष्ट जेम अमुक
दत्तियी जे अदृष्ट करीश, जेवा अलिग्रहधारी साधुने संख्यादत्तिक कडे छे
दत्तिनुं स्वल्प नीये प्रमाणे कहुं छे—

“ दत्ती उ जत्ति ए वारे ” इत्यादि कौं पद्य जतना व्यवधान बिना
(आंतरा बिना) दाता अन्नपाणी आदिने साधुना पात्रमां नाणे तो जेक
दत्ती गणाय. आंतरो पडे त्यादे भीछ दत्ती गणाय जे भिक्षुने जेवो नियम
डोय ते हु सारी नजरे देणाय जेवी जग्याजेथी लाववामां आवेला आडा-

વગાચ્ચરતિ સઃ । તથા-પૃષ્ઠલાભિકઃ-પૃષ્ઠસ્યૈવ-‘ હે સાધુ । કિં ભવતે દીયતે ? ’
 હંત્યાદિરુપેણ પ્રશિતરથૈવ સાચંદો લાભઃ, તદર્થં ચશ્ચરતિ સઃ । સમ્પતિ આચા-
 મામ્લિકાદિ વિષયાણિ પદ્મ તજનાન્મહ આચામામ્લિકઃ-વિકૃતિરહિતસ્ય અચિત્તે
 જલે ક્ષિપ્તસ્ય ભર્જિતચપન્નાન્નસ્ય મધ્યાહ્ને એકવારમાહરણપૂ-આચામામ્લં,
 તેન ચશ્ચરતિ-અભિગ્રહવશાન્ યઃ । તથા-નૈર્વિકૃતિકઃ-નિર્ગતા વિકૃતયો ઘૃતાદિ-
 રૂપા યસ્માત્ સ આહારો નિર્વિકૃતિકઃ, તેન ચરતિ યઃ સઃ । તથા-પૌર્વાદ્વિકઃ-
 પૂર્વાદ્વૈ=પૂર્વાદ્ને પ્વાભિગ્રહવશાત્ મિક્ષાર્થં ચશ્ચરતિ સઃ । તથા-પરિમિતવિહવાતિકઃ

સાધુ દૃષ્ટલાભિક હૈ । તથા જિસ સાધુકા નિયમ હૈ, કિ મેં જવ કોઈ
 સુદ્ધસે એસા પૂછેગા કિહે બિદ્ધો ! આપકે લિયે મેં કયા દૂં તો હી આહાર
 આદિ ગ્રહણ કરુંગા, વહ ક્ષમ પ્રકારકે અભિગ્રહસે પદ્મ હોકર ઉત્તકી
 ગવેષણા કરનેવાલા સાધુપૃષ્ઠ લાભિક સાધુ હૈ,

અથ આચામામ્લિક આદિ વિષયક જો પાંચ સ્થાન કહે ગયેહૈં, ડનકા સ્પ-
 ણીકરણ કિયા જાતાહૈ-વિકૃતિ રહિત અર્થાત્ લૂચે અન્ન આદિ અથવા યુને
 હુંણ ચખેકો અચિત્ત જલમેં ડાલ કર દો પહરમેં એકવાર ભોજન કરના
 યહ આચામામ્લહૈ, એસા આચામામ્લ જો કરતાહૈ, વહ આચામામ્લિકહૈ,
 જિસ આહારમેં ઘૃતાદિરુપ વિકૃતિ (વિગય) નહીંહૈ, એસા વહ આહાર નિર્વિકૃ-
 કૃતિક હૈ, હસ પ્રકારકે આહારકી જો અપને નિયમકે અનુસાર ગવે-
 પણા કરનેકે લિયે વિચરણ કરતા હૈ, વહ નૈર્વિકૃતિક હૈ, તથા જિસકા

રને જ ગ્રહણ કરીશ અથવા જે દાતા પ્રથમ નગરે પડશે તેને ત્યાંથી જ
 આહાર ગૃહણ કરીશ એવા અભિગ્રહધારી ભિક્ષુને દેખલાભિક કહે છે જ્યારે
 કોઈ ભિક્ષુ એવો નિયમ કરે છે કે કોઈ દાતા જ્યારે મને એવું પૂછશે કે
 “ હે ભિક્ષો ! હું આપને માટે શું અર્પણ કરુ ? ” ત્યારે જ હું તેને ત્યાંથી
 આહાર ગ્રહણ કરીશ, આ પ્રકારના અભિગ્રહપૂર્વક તેની ગવેષણા કરતા સાધુને
 પૃષ્ઠલાભિક કહે છે. હવે આચામામ્લિક આદિ વિષયક જે પાંચ સ્થાન કહ્યાં
 છે, તેમનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—

વિકૃતિ રહિત એટલે કે હુખાં અન્ન આદિનું અથવા શેકેલા અણુને
 અચિત્ત પાણીમાં પલાળી રાખીને જે પ્રહરમાં એક વાર ભોજન કરવું તેનું
 નામ આચામામ્લ છે. એવું આચામામ્લ જે કરે છે તેને આચામામ્લિક કહે
 છે જે આહારમાં ઘી આદિ રૂપ વિકૃતિનો અભાવ છે તે આહારને નિર્વિકૃતિક
 કહે છે આ પ્રકારના અભિગ્રહપૂર્વક જે ભિક્ષુ આહારની ગવેષણા કરવાને
 માટે વિચરણ કરે છે, તેને નિર્વિકૃતિક ભિક્ષુ કહે છે પૂર્વાદ્વિકાળ

परिमितो यः पिण्डपातः=भक्तादिलाभः स परिमितपिण्डपातः, तेन चरति यः सः । तथा-भिन्नपिण्डपातिकः-भिन्नस्य=खण्डीभूतस्य पिण्डस्य=मोदकादेः पातो लाभः-भिन्नपिण्डपातः, तदर्थमभिग्रहवशाद् यश्चरति सः । तथात्रिधाभिग्रहधारकः साधुरित्यर्थः । सम्पति-अरसाहारादित्रिपयाणि पञ्च स्थानान्याह-अरसाहारः-अरसः=हिङ्गवादिभिरसंस्कृतः, स आहारो यस्य सः । हिङ्गवाद्य-संस्कृताहारग्रहणाभिग्रहवान् भिक्षुरित्यर्थः । तथा-विरसाहारः-विरसः-विगतरसः

ऐसा नियम है, कि मैं पूर्वाह्नकालमें ही भिक्षाके लिये जाऊंगा, इस प्रकारके नियमसे बढ़ होकर जो साधु पूर्वाह्न कालमेंही भिक्षाके लिये उपाश्रयसे निकलता है, वह पौर्वाह्निक साधु है । तथा जिस साधुका ऐसा नियम है कि मैं परिमित पिण्डकाही आहार लूंगा, इस नियमसे बढ़ होकर जो भिक्षाके लिये विचरण करता है, वह साधु परिमित-पिण्डपातिकहै, तथा जिसका ऐसा नियमहै, कि मोदकादिक (लड्डु) खण्ड २ किये जाने परही मैं आहारके निमित्त ग्रहण करूंगा, इस प्रकारके नियमसे युक्त होकर जो उस प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेके लिये विचरण करता है, वह भिन्नपिण्डपातिक साधु है, अरसाहारादि विषयक जो पांच स्थान कहे गये हैं, वे इस प्रकारसे हैं-अरसाहार हिंगु आदिसे असंस्कृत हुए आहारकोही मैं लूंगा, इस प्रकारके नियमसे बढ़ होकर जो साधु इसी प्रकारके आहारकी गवेषणा करनेके लिये दाताओंके गृह पर भ्रमण करता है, वह अरसाहार भिक्षु है, अर्थात् अरसाहारी साधु अरसाहार है । जो साधु विरस विगत रसवाले पुराने

भांज भिक्षा प्राप्ति भाटे हुं नीकणीश, आ प्रकारना नियमपूर्वक जे भिक्षु पूर्वाह्णकाले जे भिक्षा प्राप्ति भाटे उपाश्रयभांशी नीकणे छे, तेने पौर्वाह्निक साधु कहे छे. जे साधुने अवेो नियम छे के हु परिमित पिंड ज (अमुक प्रमाणभांज) आहार ग्रहण करीश, आ प्रकारना नियमपूर्वक गोचरीने भाटे विचरण करता साधुने परिमितपिंडपातिक कहे छे. जे साधुने अवेो नियम छे के हु लाडु आदि आहारना ककडा कर्षा पाद ज तेने ग्रहण करीश, तो ते प्रकारना नियमपूर्वक ते प्रकारना आहारनी गवेषणा करता साधुने भिन्नपिंडपातिक कहे छे.

अरस आहारादि विषयक जे पांच स्थान कहां छे ते नीचे मुजब छे—हिंग आदिथी रक्षित आहारने जे हु ग्रहण करीश, आ प्रकारना नियमपूर्वक जे साधु आ प्रकारना आहारनी गवेषणा करवा निमित्ते दाताओने धर जाय छे, ते साधुने अरसाहारी भिक्षु कहे छे. जे साधु विरस (रस रक्षित)

પુરાણધાન્યકુલ્ત્યાદિનિષ્પન્ન આહારો યસ્ય સઃ । અન્તાહારઃ-અન્તઃ-ક્રોદ્રાદિ
નિસ્સારધાન્યનિષ્પન્નઃ આહારો યસ્ય સઃ । પ્રાન્તાહારઃ-પ્રાન્તઃ-પર્યુપિતતક્રમિ-
શ્રિતવલ્લચ્ચનાદિરૂપઃ આહારો યસ્ય સઃ । રુક્ષાહારઃ-રુક્ષઃનિઃસ્નેહઃ-વૃતાદિ-
રહિત આહારો યસ્ય સઃ । તથા-અરસજીવ્યાદિ વિપયાનિ પશ્ચ સ્થાનાનિ પ્રાદ્-
અરસે જીવી-અરસેન આહારેણ જીવિતું શીલમસ્યેતિ, મરણપર્યન્તમ્ અરસાહારા-
ભિગ્રહધારકો મુનિઃ । એવમેવ વિરસજીવ્યાદિરધાનચતુષ્ટયમપિ ભાવનીયમ્ ।
સમ્પ્રતિ-સ્થાનાતિગાદિ પાંચાણિ પશ્ચ સ્થાનાન્યાહ-સ્થાનાતિગઃ-સ્થાનં=કાયો
ત્સર્ગમ્ અતિગચ્છતિ=પ્રકરોતિ યઃ સઃ, કાયોત્સર્ગકારીત્વર્થઃ । 'સ્થાનાતિદઃ'

ધાન્ય કુલત્યાદિસે યને હુષ્ આહારકો લેતા હૈ, વહ વિરસાહાર હૈ,
ક્રોદ્રવાદિરૂપ નિસ્સાર ધાન્યસે નિષ્પન્ન હુષ્ આહારકો ગ્રહણ કરતા
હૈ, વહ અન્તાહાર હૈ । પ્રાન્તાહારવાલા વહ સાધુ હૈ, જો પર્યુપિત તક્ર-
મિશ્રિતવલ્લચ્ચના આદિકાહી આહાર લેતા હૈ । તથા રુક્ષાહારવાલા વહ
સાધુ હૈ, જો વૃતાદિ સ્નેહસે રહિત આહારકો લેતા હૈ । અરસ જીવી
આદિ પાંચ સ્થાન હસ પ્રકારસે હૈ-જિસકા જીવન પર્યન્ત તક્રકા એસા
નિયમ હૈ, કિ મૈં રસવિહીનહી આહાર લૂંગા વહ ભિક્ષુ અરસ જીવી
હૈ । હસી પ્રકારસે વિરસજીવી આદિ ચાર સ્થાન સમજ્જ લેના ચાહિયે
સ્થાનાતિગ આદિ પાંચ સ્થાન હસ પ્રકારસે હૈ-જો સાધુ કાયોત્સર્ગ
કરતા હૈ, વહ સ્થાનાતિગ સાધુ હૈ "સ્થાનાતિદ" એસી છાયાકે પક્ષમૈં

-કળથી આદિ જુના ધાન્યમાંથી નિર્મિત (બનાવેલ) આહારને જ
અહણ કરવાના નિયમપૂર્વક તે પ્રકારના આહારની ગવેષણા કરતો વિચરે છે,
તેને વિરસાહારી સાધુ કહે છે જે સાધુ કોઠરા આદિનિસ્સાર ધાન્યમાંથી તૈયાર
કરેલા આહારને જ અહણ કરે છે, તેને અન્તાહારી કહે છે જે સાધુ વાસી
છાશમિશ્રિત વાલ, ચણા આદિનો જ આહાર કરે છે તેને પ્રાન્તાહારી કહે છે.
જે સાધુ ઘી આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોથી રહિત વસ્તુઓનો જ આહાર અહણ કરે
છે તેને રુક્ષાહારી કહે છે.

અરસજીવી આદિ પાંચ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—જેણે એવો નિયમ
કર્ચો છે કે હુ જીવનપર્યન્ત રસવિહીન આહાર જ લઈશ, એવા સાધુને અરસ-
જીવી કહે છે. એ જ પ્રમાણે વિરસજીવી આદિ ચાર સ્થાનો વિષે પણ
સમજ લેવું જોઈએ.

સ્થાનાતિગ આદિ પાંચ સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—જે સાધુ કાયોત્સર્ગ
કરે છે, તે સ્થાનાતિગ સાધુ છે. સ્થાનાતિગની સરકૂન છાયા "સ્થાનાતિદ"

इतिच्छायापक्षे तु-स्थानम् अतिददाति-इति विग्रहः, अर्थस्तु स एव । तथा-उत्कु-
दुकासनिकः-उत्कुदुकासनम्-पुतस्य अलगनेन उपवेशनम्, तद् यस्यास्ति सः ।
तथा-प्रतिमास्थायी-प्रतिमया=एकरात्रिक्यादिकया कायोत्सर्गविशेषरूपयैव तिष्ठ-
तीत्येवं शीलो यः कायोत्सर्गे स्थितो भिक्षुरित्यर्थः । तथा-वीरासनिकः=वीरा-
सनं=वीरस्येदमासन वीरासनं, यथा सिंहासनोपरि समुपविष्टस्य सिंहासनापनयने
कृते सिंहासनोपविष्टवत् कायस्य य आकारो भवति तदाकारकमासनं वीरासनम्

“स्थानं अति ददाति” इति स्थानातिद, ऐसा विग्रह होता है, इसका
अर्थ स्थानातिगके जैसाही है, उत्कुदुकासनिक-जो इस प्रकारसे
है, कि बैठक जमीन पर जिस बैठनेमें नहीं लगती हैं, ऐसा
आसन जिसका होता है, वह उत्कुदुकासनिक है, प्रतिमास्थायी-एक
रात्रिक आदि कायोत्सर्ग विशेषरूप प्रतिभासे रहनेका जिसका स्व-
भाव है, ऐसा वह कायोत्सर्ग विशेषमें स्थित हुआ साधु प्रतिमास्थायी
है, वीरासनिक-वीरके आसन जैसा आसन जिसका होता है, वह
वीरासनिक है, सिंहासनके ऊपर बैठे हुए व्यक्तिके नीचेसे सिंहासनको
हटा लेने पर बैठे हुएकी तरहसे हो जाता है, ऐसा ही आकार जिस
आसनमें होता है, वह वीरासन है । यह आसन अति कठिन होता
है, वीर पुरुषही इस आसनको कर सकते हैं, ऐसा आसन जिसका
होता है, वह वीरासनिक है । इस आसनमें कुरसी के जैसे आ-

लेवाभां आवे तो, “स्थानं अति ददाति इति स्थानातिदः” अत्रो विग्रह
थाय छे तेनो अर्थ पणु स्थानातिग जेवो न थाय छे “उत्कुदुकासनिक”
जे आसने जेसवाणी जणु जमीन पर जेठक न न जभावी डोय अबुं लागे
छे, जेवा आसने जे साधु जेठो डोय छे तेने उत्कुदुकासनिक कडे छे आ
आसनभां उलडक जेसबुं पडे छे.

“प्रतिमास्थायी”—जेकरात्रिक आदि कायोत्सर्ग विशेषरूप प्रतिभा
धारण करीने रहेवानो जेनो नियम छे जेवा कायोत्सर्ग विशेषभां स्थित
साधुने प्रतिमास्थायी कडे छे.

“वीरासनिक”—वीरना आसन जेवुं जेनुं आसन डोय छे, तेने
वीरासनिक कडे छे. सिंहासन पर जेठेडी व्यक्तितना नीचेथी सिंहासनने जसेडी
जेवाथी शरीरने जेवो आकार-सिंहासन पर न जेठो डोय जेवो आकार
जे आसनभां थछि जय छे, ते आसनने वीरासन कडे छे. ते आसन धाणुं न
कडणु छे, वीर पुरुष न ते आसन करी शके छे जेवुं आसन जेनुं डोय छे
तेने वीरासनिक कडे छे. आ आसने जेठेड भाणुसने आकार पुरसी जेवो

ચ્યતે, અતિકઠિનતયા વીરપુરુષેણૈવાચરણીયત્વાત્, તથસ્યાસ્તિ સઃ । તથા-નૈપ-
ધિકઃ-નિષઘા=આસનવિશેષરૂપા, સા પશ્ચથા ભવતિ, તત્ર-યસ્યાં પાદયોઃ પુતયોશ્ચ
સ્પર્શઃ સમો ભવતિ સા સમપાદપુતા ॥ ૧ ॥ યસ્યાં તુ ગોરિવોપવેશનં ભવતિ સા
ગોનિષધિકા ॥ ૨ ॥ યસ્યાં તુ પુતાભ્યામુપવિષ્ટઃ સન્ એકં પાદમુત્થાપ્ય આસ્તૈ સા
હસ્તિશુણ્ડિકા ॥ ૩ ॥ પર્યઙ્કાઽર્ધપર્યઙ્કે તુ પ્રસિદ્ધે એવ ॥ ૪ ॥ એતાદશી નિષઘા=
આસનં યસ્ય સઃ નૈપધિકઃ । અથ દ્વણ્ડાયતિકાદિવિષયાણિ પશ્ચસ્થાનાન્યાહ-

કારમં સ્વલુપ્થકા આકાર વન જાતા હૈ, કુરસીકે પીછેકે દો પાદ હટા
દેને પર ઓર આગેકે દો પૈર રલ્લને પર ઉસકા જૈસા આકાર હસ આ-
સનમં હોતા હૈ, યહ આસન વહુત કઠિનતાસે યુક્ત હોતા હૈ, નૈષે-
ધિક નિષઘા આસનવિશેષ રૂપ હોતી હૈ, યહ પાંચ પ્રકારકી હૈ, જિસ
નિષઘામં દોનોં ચરણોંકા ઓર હાથોંકા સ્પર્શ ઢૂના સમાનરૂપસે હોતાહૈ,
વહ સમપાદપૂતા નિષઘાહૈ, જિસ નિષઘામં ગાયકે દૂહનેકે જૈસા વૈઠા જાતા
હૈ, વહ ગોનિષધિકા હૈ ૨ જિસ નિષઘામં દોનોં ચરણોંકો જમીન પર
રલ્લકર વૈઠના હોતા હૈ, ઓર એક પૈરકો ઉઠાયા જાતા હૈ, ઘુટનેકો
ઝંચા ક્રિયા જાતા હૈ, વહ હસ્તિશુણ્ડિકા નિષઘા હૈ ૩ પર્યઙ્કાસન ઓર
અર્ધપર્યઙ્કાસન યે દો આસન તો પ્રસિદ્ધહી હૈં । એસી નિષઘા આસન
જિસકે હોતે હૈં, વહ નૈષધિક હૈ, દ્વણ્ડાયતિક આદિ પાંચ આસન હસ

થઈ જાય છે. ખુરસીના પાછલા બે પાયા ખસેડી દેવાથી અને આગલા બે
પાયા રહેવા દેવાથી તેનો જેવો આકાર થઈ જાય છે, તેવો જ આકાર આ
આસને બેઠેલી વ્યક્તિનો થઈ જાય છે. તેથી જ આ આસને બેસવું ઘણું જ
ખુશકેલ ગણાય છે.

નૈષધિક-નિષઘા આસન વિશેષરૂપ હોય છે, તે પાંચ પ્રકારની છે—
(૧) જે આસનમાં બંને ચરણોનો અને હસ્તોનો સ્પર્શ સમાનરૂપે થાય છે,
તેનું નામ 'સમપાદપૂતા નિષઘા' છે (૨) જે આસનમાં ગાયને દોટી વળતે બેસે તેમ
બેસવામાં આવે છે, તે આસનને "ગોનિષધિકા" કહે છે. (૩) જે આસનમાં
બંને ચરણોને જમીન પર રાખીને બેસવું પડે છે અને ત્યારબાદ એક પગને
ઊંચે કરવામાં આવે છે-ઘુટણને ઊંચે કરવામાં આવે છે, તે આસનને
હસ્તિશુણ્ડિકાનિષઘા કહે છે (૪) પર્યંકાસન અને અર્ધ પર્યંકાસન, આ બે
આસન તો જાણીતાં છે. આ પ્રકારની નિષઘા (આસન) જેમની હોય છે,
તેમને નૈષધિક કહે છે. દ્વંડાયતિક આદિ પાંચ આસન નીચે પ્રમાણે છે—
(૧) દ્વંડાયતિક, (૨) લગ્નશાયી, (૩) અંતાપક, (૪) અપાવૃતક અને (૫) અઠ્ઠ્યુક

दण्डायतिकः—दण्डस्यैव आयतिः=दीर्घत्वं चरणप्रसारणेन यत्र भवति तद् दण्डायति, तदस्यास्ति सः । तथा—लगण्डशायी—लगण्डं=वक्रकाष्ठम्, तद्वत्—अर्था-
न्मस्तक पार्श्वदिभागानां भूमिसंबन्धेन पृष्ठस्य च तदसंबन्धेन यदासनं भवति
तद् लगण्डम्, तेन यः शैते सः । तथा—आतापकः—आतापयति=शीतातपादि-
सहनरूपामातापनां करोति यः सः । तथा—अप्रावृतकः—न विद्यते प्रावृतं=प्रावरणं
यस्य सः । तथा—अकण्डूयकः—न कण्डूयतीत्यकण्डूयकः—कण्डूती संजातायामपि
गात्रसंघर्षणवर्जितः । 'स्थानातिगः' इत्यारभ्य 'अकण्डूयकः' इत्यन्ताः सर्वेऽपि

प्रकारसे हैं—दण्डायतिक १ लगण्डशायी २ आतापक ३ अप्रावृतक ४
और अकण्डूयक ५ जिसके आसनमें पैर प्रसारनेसे
दण्डकी तरह दीर्घता होती है, वह दण्डायतिकहै । वक्र काष्ठका नाम
लगण्ड है, इस वक्र काष्ठकी तरह जो आसन होता है, वह लगण्ड
आसन है । इस लगण्ड आसनसे जो सोता है, वह लगण्डशायी है ।
अर्थात् जो मस्तक और एड़ी आदि भागोंको तो जमीन पर लगाता
है, एवं पृष्ठ भागको जमीन पर नहीं लगाता है, उसको ऊंचा रखता
है, ऐसे आसनसे जो सोता है, वह लगण्डशायी है, अर्थात् वक्र
काष्ठके दोनों कोने तो जमीन पर टिके रहते हैं, और बीचका भाग
जमीनसे ऊपर उठा रहता है, इसी प्रकारसे जो सोता है, वह लग-
ण्डशायीहै । जो शीत आतप आदि सहने रूप आतापनाको करता
है, वह आतापकहै । जिसके प्रावरण नहीं हैं, वह अप्रावृतक है, जो
खुजली चलने पर भी शरीरको नहीं खुजलाता है, वह अकण्डूयक है,

ये प्रकारना आसनमां पग पडोणा करवाथी दंडना जेवी दीर्घता थाय
छे, ते आसनवाणाने दंडायतिक कडे छे. वक्र काष्ठने लगंड आसन कडे छे.
आ वक्र काष्ठना जेवुं जे आसन होय छे तेने लगंड आसन कडे छे. आ
लगंडासने शयन करनारने लगंडशायी कडे छे. आ आसनमां मस्तक अने
एड़ी आदि लागे तो जमीनने स्पर्श करे छे, परन्तु पृष्ठभाग जमीनने
अडकतो नथी, ते तो जमीनथी अद्वर ज रडे छे. आ प्रकारना आसने शयन
करनारने लगंडशायी कडे छे. अटके के जेम वक्र काष्ठना अन्ने छेडा तो
जमीनने टेकवीने रडेला होय छे, पणु वरयेने लाग जमीनथी अद्वर रडेले
होय छे, आ प्रकारे शयन करनार व्यक्तिने लगंडशायी कडे छे.

जे साधु शीत, उष्णता आदि सहने करवा रूप आतापना करे छे तेने
आतापक कडे छे. जे साधुने प्रावरणु होतुं नथी तेने अप्रावृतक कडे छे.
अंजवाण आववा छतां पणु जे शरीरने अंजवाणतो नथी, ते साधुने अकण्डूयक

અભિગ્રહધારકાઃ સાધ્યો વ્રોધ્યાઃ । યદ્યપિ સ્થાનાતિગત્વાદીનામાતાપનાયામન્ત-
ર્માવો ભવતિ, તથાપિ પ્રધાનાપ્રધાનાનાં ભેદવિવક્ષયાઽન ભેદેન નિર્દેશઃ, યત એવ
નાત્ર પુનરુક્ત્ય શઙ્ક્યમિતિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

સંપતિ યૈઃ સ્થાનૈઃ શ્રમણા નિર્ગન્થા મહાનિર્જરા મહાપર્યવસાનાશ્ચ ભવન્તિ,
તાંનિ સ્થાનાન્યાહ—

મૂલમ્—પંચહિં ઠાણેહિં સમણે નિગ્ગંથે મહાનિજ્જરે મહા-
પજ્જવસાણે ભવઙ્, તં જહા—અગિલાએ આયરિયવેયાવચ્ચં કરે-
માણે ૧, એવં ઉવજ્જાયાવેયાવચ્ચં કરેમાણે ૨, થેરવેયાવચ્ચં
કરેમાણે ૩, તવસ્સિવેયાવચ્ચં કરેમાણે ૪, નિલાણવેયાવચ્ચં
કરેમાણે ૫। પંચહિં ઠાણેહિં સમણે નિગ્ગંથે મહાનિજ્જરે મહાપ-
જ્જવસાણે ભવઙ્, તં જહા—અગિલાએ સેહવેયાવચ્ચં કરેમાણે
૧, અગિલાએ કુલવેયાવચ્ચં કરેમાણે ૨, અગિલાએ ગણવેયા-
વચ્ચં કરેમાણે ૩, અગિલાએ સંઘવેયાવચ્ચં કરેમાણે ૪, અગિ-
લાએ સાહમ્મિયવેયાવચ્ચં કરેમાણે ૫ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

સ્થાનાતિગસે લેકર અકળ્હૂપક તકકે સમસ્ત સાધુજન અભિગ્રહધારી
હિં, એસા જાનના ચાહિયે યદ્યપિ સ્થાનાતિગ આદિ સાધુજનોંકા અન્ત-
ર્માવ આતાપકમેં હો જાતા હૈ, તો મી પ્રધાન અપ્રધાનકે ભેદકી વિવ-
ક્ષાસે યહાં ડનકા ભેદ રૂપસે નિર્દેશ ક્રિયા ગયા હૈ, હંસલિયે હમ્મ કથ-
નમેં પુનરુક્તિ દોષકી સંભાવના નહીં કરની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અવ સૂત્રકાર ઉક્ત સ્થાનોંકો પ્રકટ કરતે હિં, કિં જિન સ્થાનોં દ્વારા
શ્રમણ નિર્ગન્થ મહાનિર્જરાવાલે ઓર મહાપર્યવસાનવાલે હોતે હિં—

કહે છે. સ્થાનાતિગથી લઇને અક'રૂપક પર્યન્તના સમસ્ત સાધુઓ અભિગ્રહ-
ધારી હોય છે, એમ સમજવું. જે કે સ્થાનાતિગ આદિ સાધુજનોના આતા-
પકમાં સમાવેશ કરી શકાય છે, છતાં પણ પ્રધાન અપ્રધાનના ભેદની વિવ-
ક્ષાની અપેક્ષાએ અહીં તેમનું અલગ ભેદ રૂપે કથન કર્યું છે. તેથી આમાં
પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના રહેતી નથી. ॥ સૂ ૯ ॥

હવે સૂત્રકાર એ સ્થાનો (કારણો) ને પ્રકટ કરે છે કે જે સ્થાનો દ્વારા
શ્રમણ નિર્ગન્થો મહાનિર્જરાવાળા અને મહાપર્યવસનવાળા (તે ભવમાં જ

छाया—पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरो महापर्यवसानो भवति, तद्यथा—अग्लानः आचार्यवैयावृत्यं कुर्वाणः १, एवम् उपाध्यायवैयावृत्यं कुर्वाणः २, स्थविरवैयावृत्यं कुर्वाणः ३, तपस्विवैयावृत्यं कुर्वाणः ४, ग्लानवैयावृत्यं कुर्वाणः ॥ ५ ॥ पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरो महापर्यवसानो भवति, तद्यथा—अग्लानः शैक्षवैयावृत्यं कुर्वाणः १, अग्लानः कुलवैयावृत्यं कुर्वाणः २ अग्लानो गणवैयावृत्यं कुर्वाणः ३, अग्लानः सङ्घवैयावृत्यं कुर्वाणः ४, अग्लानः साधर्मिकवैयावृत्यं कुर्वाणः ५ ॥ सू० १० ॥

टीका—‘पंचहिं ठणेहिं’ इत्यादि—

पञ्चभिः स्थानैः=कारणैः श्रमणो निर्ग्रन्थो महानिर्जरः महती निर्जरा=कर्म क्षयो यस्य सः—बृहत्कर्मक्षयकारी, अतएव—महापर्यवसानः—महत्=आत्यन्तिकम्, पुनरुत्पत्त्यभावात्, तम् पर्यवसानम्=अन्तो यस्य सः—अपुनर्जन्मा—तद्भवमोक्षगामी भवति । तान्येव स्थानान्याह—तद्यथा—अग्लानः—अखिन्नः—बहुमान युक्तः सन् आचार्य-वैयावृत्यं=धर्मोपग्रहकारिवस्तुभिर्भक्तादिभिरूपग्रहकरणं, तत्कुर्वाण इति प्रथमं

‘पंचहिं जेहिं समणे निगंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे’ इत्यादि

टीकार्थ—श्रमण निर्ग्रन्थ पांच कारणोंसे महा निर्जरावाला और महापर्यवसानवाला होता है, समस्त कर्मों का सर्वथा क्षयही मोक्षहै, और उसका अंशतः क्षय निर्जरा है, इस तरह निर्जरा मोक्षका पूर्वगामी अङ्ग है। महानिर्जरावाला होता है, इसका तात्पर्यही यह है, कि वह बृहत्कर्मक्षय करनेवाला होकर महापर्यवसानवाला होता है, तद्भवमोक्षगामी होता है—अपुनर्जन्मा होता है, वे पांच कारण इस प्रकारसे हैं अग्लान होकर आचार्यकी वैयावृत्ति करना १ आचार्यकी वैयावृत्ति करनेमें अग्लान—खेदखिन्न नहीं होना अर्थात् उस कार्यमें बहुमान

भोक्षगामी बनना) थाय छे.

टीकार्थ—“पंचहिं ठणेहिं” समणे निगंथे महानिज्जरे महापज्जवसाणे” इत्यादि—

नीचेना पाय करणेने दीधे श्रमण निर्ग्रन्थ महानिर्जरावाणे अने महापर्यवसानवाणे थाय छे समस्त कर्मोने सर्वथा क्षय थवे तेतुं नाम न भोक्ष छे, तेमने अंशतः क्षय थवे तेतुं नाम निर्जरा छे आ रीते निर्जरा भोक्षतुं पूर्वगामी अंग छे भोगे प्रमाणुमां कर्मोने क्षय करनारने महानिर्जरावाणे कडे छे आ प्रकारने महानिर्जरावाणे अथ न महापर्यवसानवाणे—अथ न लवमां भोक्ष प्राप्त करनारने अपुनर्जन्मा होथ शके छे हवे ते पांच कारणे प्रकट करवामां आवे छे— (१) अग्लान लावे (भिन्नता अथवा जेठना परित्यागपूर्वक) आचार्यतुं वैयावृत्य करवाथी ते महानिर्जरावाणे अने महापर्यवसानवाणे भनी शके छे.

સ્થાનમ્ ૧। એવમુત્તરત્રાપિ ભાવતીગમ્ । વિગ્રેપસ્ત્વયમ્-ઉપાધ્યાયઃ=સૂત્રપ્રદાતા ।
સ્થવિરઃ=સંયમમાર્ગાત્ પ્રચલતઃ સાધુન પુનઃ સંયમે સ્થિરીકર્તા, અથવા-જન્મના
પષ્ટિદાર્પિઃ, પર્યાયેણ વિગતિર્પરપર્યાયઃ, શ્રુતેન સ્થાનાદ્ગ્રમવાયદ્ગ્રધારી । ત-
પસ્ત્રી=માસક્ષણાદિ કર્તા, યાવજ્જીવમેકાન્તરતપઃકર્તા વા । ગ્લાનઃ=વ્યા-
ધ્યાદિભિરશક્તઃ । દ્વિતીયરયાચાન્તરમુત્રસ્યાપ્યર્થઃ પૂર્વવદેવ વોદ્યઃ । વિગ્રેપસ્ત્વ-

યુક્ત હોના યહ પ્રથમ સ્થાન - કારણ હૈ આચાર્યકા
વૈયાવૃત્ય કરનેવાલા ધર્મોપગ્રહ કરનેવાલી વસ્તુઓ દ્વારા
અક્તાદિકો દ્વારા ઉપગ્રહ કરનેવાલા હમી પ્રકારસે સૂત્ર પ્રદાતા ઉપા-
ધ્યાયકી અગ્લાન ભાવસે વૈયાવૃત્તિ કરનેવાલા૨ સંયમ માર્ગસે શિથિલ
બને હુએ યા ઉસ માર્ગસે ચલાયમાન હુએ સાધુજનોંકો પુનઃ સંયમ
માર્ગમે સ્થિર કરનેવાલે સ્થવિરકી અથવા જન્મસે ૬૦ વર્ષકી દીક્ષા-
પર્યાયવાલે એવં શ્રુતકી અપેક્ષા સ્થાનાદ્ગ્રમ ઓર સમવાયાગકે ધારી સ્થ-
વિર જનકી વૈયાવૃત્તિ કરનેવાલા૨ માસક્ષણ આદિતી તપસ્યા કરને-
વાલે અથવા-યાવજ્જીવ એકાન્તર તપ કરનેવાલેકી વૈયાવૃત્તિ કરનેવાલા૪
ઓર ગ્લાનકી વ્યાધિ આદિસે અશક્ત મુનિકી વૈયાવૃત્તિ કરનેવાલા૫
શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મહા નિર્જરાવાલા ઓર મહાપર્યવસાનવાલા હોતા હૈ ।
એસા હસ કથનકા સારાંશ હૈ ।

આચાર્યની વૈયાવૃત્ય કરનાર એટલે કે ધર્મોપગ્રહ કરનારી
વસ્તુઓ દ્વારા આહાર પાણી આદિ દ્વારા ઉપગ્રહ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ
મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો બને છે એ જ પ્રમાણે સૂત્ર પ્રદાન
કરનાર ઉપાધ્યાયની અગ્લાન ભાવે સેવા કરનાર, સયમ માર્ગેથી ચલાયમાન
થયેલા સાધુઓને ઉપદેશ દ્વારા ફરી સંયમ માર્ગે સ્થિર કરનાર સ્થવિરોનું
અગ્લાનભાવે વૈયાવૃત્ય કરનાર, અથવા ૬૦ વર્ષની ઉંમર જેણે વ્યતીત કરી
નાખી છે એવા સ્થવિરોનું વૈયાવૃત્ય કરનાર અથવા સ્થનાંગ, સમવાયાંગ
આદિ શ્રુતધારી સ્થવિરોનું વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મહાનિર્જરાવાળો
અને મહાપર્યવસાનવાળો બને છે. માસખમણ આદિ તપસ્યા કરનારનું અથવા
આશ્રવન એકાન્તર તપ કરનારનું તથા ગ્લાન-ગ્રીમર સાધુનું વૈયાવૃત્ય કર-
નાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પણ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો હોય છે
આ કથનનો સારાંશ એ છે કે—(૧) આચાર્યનું, (૨) ઉપાધ્યાયનું, (૩)
સ્થવિરનું, (૪) તપસ્વીનું, અને (૫) વ્યાધિગ્રસ્ત સાધુનું અગ્લાનભાવે
વૈયાવૃત્ય કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મહાનિર્જરાવાળો અને મહાપર્યવસાનવાળો
(અપુનર્જન્મા) બને છે.

यम्-शैक्षः=अभिनवः साधुः । कुलम्=एकगुरुकशिष्यसमुदायरूपम् । गणः=कुलसमुदायः । सङ्घो=गणसमुदायः । साधर्मिकः-मुखनिबद्धसदोरकमुखवस्त्रिकत्वादिलिङ्गतः समानश्रद्धाप्ररूपणादिरूपप्रवचनतश्च समानधर्मा । इति । अनेन अवान्तरसूत्रद्वयेन आभ्यन्तरतपोभेदात्मकं दशविधं वैयावृत्यं प्रतिपादितम् । तदुक्तमन्यत्रापि—

“आयरिय उवज्जाय थेर तवस्सि शिलाण सेहाणं ।

साहम्मि य कुलगणसंघसंगयं तमिह कायन्वं ॥१॥

छाया—आचार्योपाध्यायस्थदिरतपस्विग्लानशैक्षणायम् ।

साधर्मिककुलगणसंघस्य संगतं तदिह कर्तव्यम् ॥ इति ॥

स्थानस्थानिनोरभेदात् स्थानी एवात्र स्थानत्वेनोक्तः इति ॥ सू० १० ॥

पुनश्च—इन पांच स्थानरूप कारणोंसे भी श्रमण निर्ग्रन्थ महा-निर्जरावाला एवं महापर्यवसानवाला होता है, जैसे-अग्लान भावसे शैक्षकी-नवीन शिष्यकी वैयावृत्ति करनेवाला १ अग्लान भावसे कुलकी-एवं गुरुके शिष्य समूहकी वैयावृत्ति करनेवाला २ अग्लान-भावसे गणकी ३ कुल समुदायकी वैयावृत्ति करनेवाला अग्लान भावसे संघकी ४-गणसमुदायकी वैयावृत्ति करनेवाला और अग्लान भावसे मुखनिबद्धसदोरक मुखवस्त्रिकादि लिङ्गसे एवं समान श्रद्धा तथा प्ररूपणा आदि रूप समान धर्मोंवाले मुनिजनोंकी ५ वैयावृत्ति करनेवाला श्रमण निर्ग्रन्थ महा निर्जरावाला और - महापर्यवसानवाला होता है, अर्थात् अपुनर्जन्मा होता है । इस अवान्तर सूत्रद्वयसे आभ्यन्तर तपका भेद जो वैयावृत्य तप है, उसके ये १० भेद प्रतिपादित हुए हैं । अन्यत्र भी ऐसाही कहा गया है—

नीचेनां पांच स्थानरूप कारणोंने लीधे पणु श्रमणु निर्ग्रन्थ महानिर्जरा-वाणे अने महापर्यवसानवाणे थाय छे—(१) अग्लान लावे शैक्षतुं (नव दीक्षिततुं) वैयावृत्य करवाथी, (२) अग्लान लावे कुलतुं (एक गुरुना शिष्य समूहतुं) वैयावृत्य करवाथी, (३) अग्लान लावे गणतुं (कुलसमुदायतुं) वैयावृत्य करवाथी, (४) अग्लान लावे संघतुं (गणसमुदायतुं) वैयावृत्य करवाथी, (५) अग्लान लावे मुनिनिबद्ध सदोरक मुखवस्त्रिकादि लिङ्गथी अने समान श्रद्धा तथा प्ररूपणा आदि रूप प्रत्यनथी समान धर्मोंवाणा मुनिजनोंतुं वैयावृत्य करनार श्रमणु निर्ग्रन्थ महानिर्जरावाणे अने महापर्यवसानवाणे (अपुनर्जन्मा) अने छे

आ जे अवान्तर सूत्रों द्वारा आभ्यन्तर तपना जे लोक रूप जे वैयावृत्य तप छे, तेना १० लोकोतुं प्रतिपादन करवासां आण्यु छे. कहु पणु छे ६—

श्रमणो निर्ग्रन्थो यैः स्थानैः साध्मोगिकान् साधर्मिकान् विसंभोगिकान् पाराश्रितकांश्च कुर्वाण आज्ञाया विराधको न भवतीति तानि स्थानान्याह—

मूलम्—पंचहिं टाणेहिं समणे गिग्गंथे साहम्मियं संभोइयं विसं-
भोइयं करेमाणे णाइक्कमइ, तं जहा-सक्किरियट्ठाणं पडिसेवित्ता भवइ
१, पडिसेवित्ता णो आलोएइ २, आलोइत्ता णो पट्टवेइ ३,
पट्टवित्ता णो गिठ्ठिसइ ४, जाइं इमाइं थेराणं ठिइक्कप्पाइं
भवन्ति ताइं अइयंचिय २ पडिसेवेइ, से हंदऽहं पडिसेवामि
किं सं थेरा करिस्सन्ति ? ५। पंचहिं टाणेहिं समणे गिग्गंथे
साहम्मियं पारच्चियं करेमाणे णाइक्कमइ, तं जहा-सकुले वसइ
सकुलस्स भेषाए अब्भुट्ठित्ता भवइ १, गणेवसइ गणस्स भेषाए
अव्भुट्ठित्ता भवइ २, हिंसप्पेही ३, छिह्पेही ४, अभिक्खणं
२, पस्सिणायचणाइं पउंजित्ता भवइ २ ॥ सू० ११ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं सांभोगिकं विसंभो-
गिकं कुर्वाणो नातिक्रामति, तद्यथा—सक्रियस्थानं प्रतिसेविता भवति १, प्रति-
सेव्य नो आलोचयति २, आलोच्य नो प्रस्थापयति ३, प्रस्थाप्य नो निर्विशति
४, यानि इमानि स्थविराणां स्थितिकल्प्यानि भवन्ति तानि अतिक्रम्य २ प्रति-

“ आयरिय उच्च्छाय ” इत्यादि । आचार्य, उपाध्याय, स्थविर,
तपस्वी, ग्लान, शैक्ष, साधर्मिक, कुल, गण और संघ इनकी वैया-
वृत्ति करनेसे वैयावृत्य तप १० प्रकारका होताहै । यहाँ स्थान और स्था-
नीमें अभेद होनेकी विवक्षासे स्थानीकोही स्थानरूपसे कहा गयाहै ॥ सू० १० ॥

“ आयरिय उच्च्छाय ” इत्यादि—वैयावृत्य तपना १० भेद नीचे प्रमाणे
छे—(१) आचार्यनुं, (२) उपाध्यायनुं, (३) स्त्रविरनुं, (४) तपस्वीनुं, (५)
ग्लाननुं (व्याधियस्तनुं), (६) शैक्षनुं (तपनीक्षितनुं), (७) साधर्मिकनुं,
(८) कुलनुं, (९) गणनुं अने (१०) संघनुं, आ दस प्रकारनुं वैयावृत्य
कछुं छे अही स्थान अने स्थायी वरये अलेह भानी लधने स्थानीने न
स्थानइये कडेवाभां आवेल छे. ॥ सू० १० ॥

सेवते, तत् इन्त ! अहं प्रतिस्वेवे किं सां स्थविराः करिष्यन्ति ? ॥५॥ पञ्चभिः स्थानैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं पाराश्रितं कुर्वाणो नातिक्रामति, तद्यथा-स्वकुले वसति स्वकुलस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति १, गणे वसति गणस्य भेदाय अभ्युत्थाता भवति २, हिंसामेक्षी ३, छिद्रमेक्षी ४, अभीक्ष्णं २ प्रश्नाय-तनानि प्रयोक्ता भवति ५ ॥सू०११॥

टीका—‘ पंचहिं ठाणेहिं ’ इत्यादि । पञ्चभिः स्थानैः=कारणैः श्रमणो निर्ग्रन्थः साधर्मिकं=समानधर्माणं सांभोगिकम्=एकमण्डलस्थितं समानसामा-चारीयुक्तं साधु विसांभोगिकं=मण्डलीबाह्यं कुर्वाणः नातिक्रामति=जिनाज्ञां नो ल्लङ्घयति । तद्यथा-तान्येषु स्थानान्याह-सक्रियस्थानम्-क्रियया सहितं स

जिन कारणोंसे श्रमण निर्ग्रन्थ सांभोगिक साधर्मिक साधुओंको विसांभोगिक (संभोगसे अलग करना) करतेहैं, उन कारणोंको सूत्र-कार कहतेहैं—‘ पंचहिं ठाणेहिं समणे णिगंथे साहम्मियं समोइयं ’ इत्यादि

टीकार्थ—इन पांच कारणोंको लेकर साधर्मिक किसी सांभोगिक साधुको यदि विसांभोगिक कर दिया जाता है, तो करनेवाला जिनाज्ञाका उल्लङ्घनकर्त्ता नहीं होता है, अर्थात् एक मंडलमें स्थित समान समाचारी युक्त जो साधु है, वह साधर्मिक सांभोगिक कहा गया है, इसे यदि विसांभोगिक-मंडलीसे बाहर कर दिया जाता है, तो ऐसा करनेमें ये पांच कारण हैं, इन कारणोंसे उसे मंडलीसे बाहर करनेवाला जिनाज्ञाका विराधक नहीं होता है, उन पांच कारणोंमें एक कारण ऐसा है,

जे कारणोंने दीधे श्रमणु निर्ग्रन्थ सांभोगिक साधर्मिक साधुणेने विसांभोगिक (संभोगी अलग करवाते) लडेर करवामां आवे छे, ते कारणोनु डवे सूत्रकार निरूपणु करे छे—

“ पंच हिं ठाणेहिं समणे णिगंथे साहम्मियं समोइयं ” इत्यादि—

टीकार्थ—नीचेना पांच कारणोंने दीधे केअ पणु साधर्मिक सांभोगिक साधुने विसांभोगिक लडेर करवामां आवे, तो जेवु करनार जिनाज्ञानो विराधक गणुतो नथी जेटवे के जेके ज मंडलमां-गणुमां रहेला समान समाचारी युक्त जे साधुणे छे तेमने साधर्मिक सांभोगिक कडे छे. नीचेना पांच कार-णोंने दीधे केअ पणु सांभोगिक साधुने विसांभोगिक लडेर करी शकय छे, जेटवे के मंडल अथवा गणुमांथी काढी मूडी शकय छे. आ प्रकारे तेने विसांभोगिक लडेर करनार जिनाज्ञानो विराधक गणुतो नथी. ते पांच कारणो

क्रियं-प्रस्तावादशुभकर्मबन्धयुक्तं स्थानम्-प्रायश्चित्तस्थानं प्रतिसेविता भवतीति प्रथमं स्थानम् १। प्रतिसेव्य-सक्रियस्थानस्य सेवनं कृत्वा, न आलोचयति= गुरुवे न निवेदयतीति द्वितीयं स्थानम् २। आलोच्य=गुरुवे निवेद्यापि तदुपदिष्टं प्रायश्चित्तं नो प्रस्थापयति=कर्तुं नैवारभते, इति तृतीयं स्थानम् ३। प्रस्थाप्य= गुरुपदिष्टं प्रायश्चित्तमारभ्यापि नो निर्विशति=समग्रं नो परिपालयति, इति चतुर्थं स्थानम् ४। तथा-यानि इमानि=गच्छप्रसिद्धानि स्थविराणां=स्थविर

किं यदि उस साधुने " सक्रियस्थानं प्रतिसेविता भवति " ? अशुभ कर्मका बन्ध जिस स्थानसे-कारणसे होता है, ऐसे कारणका सेवन कर लिया है, प्रायश्चित्त स्थानका वह प्रतिसेवन करनेवाला बन गया है, तो वह इस स्थितिमें विसांभोगिक कर दिया जाता है, ऐसा यह प्रथम स्थान है, दूसरा स्थान-" प्रतिसेव्य नो आलोचयति " सक्रिय स्थानका सेवन करके भी जो उसकी वह आलोचना नहीं करता है, तो ऐसी स्थितिमें भी वह विसांभोगिक कर दिया जाता है, ३। गुरुसे निवेदन करना इसका नाम आलोचना है। तृतीय कारण ऐसा है " आलोच्य नो प्रस्था० " गुरुसे निवेदन करने पर भी उनके द्वारा प्रदत्त प्रायश्चित्तको जो प्रारम्भ नहीं करता है, ऐसी स्थितिमें वह विसांभोगिक कर दिया जाता है। चतुर्थ कारण ऐसा है " प्रस्थाप्य नो निर्वि० " गुरु प्रदत्त प्रायश्चित्तको प्रारम्भ करकेभी जो उसे पूर्ण रूपसे नहीं पालता है, ऐसी स्थितिमें भी वह विसांभोगिक कर दिया जाता है।

नीचे प्रमाणे छे—(१) नो ते साधुने " सक्रियस्थानं प्रतिसेविता भवति " ने कारणे अशुभ कर्मना बन्ध यतो डोय ओना कारणतुं ओटवे डे दुष्कृत्यतुं प्रतिसेवनं कर्तुं डोय, तो तेने विसांभोगिक नडेर करी शक्य छे. (२) " प्रतिसेव्य नो आलोचयति " सक्रिय स्थानतु-दुष्कृत्यतुं सेवन करीने पणु नो ते तेनी आक्षेपना न करे, तो तेने विसांभोगिक नडेर करी शक्य छे कृण पापकर्मने गुरु समक्ष नडेर करतुं तेतु नाम आक्षेपना छे. (३) " आलोच्य नो प्रस्था० " गुरुनी पारे आक्षेपना तो करी डोय पणु गुरु द्वारा ने प्रायश्चित्त आपवामा आ०युं डोय तो प्रायश्चित्त लेवानो प्रारंभ न करनार साधु भिक सांभोगिक साधुने पणु विसांभोगिक नडेर करी शक्य छे. (४) " प्रस्थाप्य नो निर्वि० " गुरु द्वारा ने ने प्रायश्चित्त करवानुं सूचन करायुं डोय, तो प्रायश्चित्तनो प्रारंभ तो करवामा आवे, पणु नो तेतुं पूर्ण रूपे पालन करवामा न आवे, तो प्रायश्चित्तनुं पूर्ण रूपे पालन नहीं करनार साधुने विसांभोगिक नडेर करी शक्य छे.

कल्पिकसाधूनां स्थितिप्रकल्प्यानि-स्थितौ=साक्षाचार्या प्रकल्प्यानि=आसेवनी-
यानि विशुद्धपिण्डशय्यामनादीनि, यद्वा-स्थितिः=मासकल्पादिरूपा, प्रकल्प्या-
निच विशुद्धपिण्डशय्यासनादीनि-भवन्ति, तानि अतिक्रम्य अतिक्रम्य प्रति

पांचवां कारण ऐसाहै-“यानि इमानि स्थविराणां स्थिति कल्प्यानि०”
गच्छ प्रसिद्ध स्थविर कल्पिक साधुओंके स्थिति प्रकल्प्योंको यदि वह बार
२ अतिक्रमण करके अन्य अकल्प्यका सेवन करताहै, तो ऐसी स्थितिमें
भी वह विसांभोगिक कर दिया जाना है, तात्पर्य कहनेका यही है,
कि जिस कारणसे उसे प्रायश्चित्त लेना पड़े ऐसे प्रायश्चित्तार्ह कारणका
जब कोई सांभोगिक साधु प्रतिसेवन करनेवाला होता है, सक्रिय
स्थानकी प्रतिसेवना करके भी यदि वह गुरुसे निवेदन नहीं करता है,
निवेदन करके भी यदि वह गुरु द्वारा कथित प्रायश्चित्तका सेवन करना
प्रारम्भ नहीं करता है, प्रायश्चित्तका सेवन करना प्रारम्भ करके भी
यदि वह उसे पूर्णरूपसे नहीं पालताहै, और गच्छप्रसिद्ध स्थविरकल्पिक
साधुओंकी स्थितिमें सामान्यरीमें आसेवनीय विशुद्ध पिण्डशय्या आ
सन आदिकोंको यद्वा-मासकल्पादि रूप स्थितिको और विशुद्ध पिण्ड-
शय्या आसन आदिकोंको बार २ उल्लङ्घन करके साधुजनके लिये
अकल्प्य आचारका सेवन करता है, तो वह इस स्थितिमें विसांभो-

द्वे पांचभुं कारण प्रकट करवासां आवे छे-“यानि इमानि स्थवि
राणां स्थितिकल्प्यानि ” गच्छप्रसिद्ध स्थविर कल्पिक साधुओंना स्थितिप्रकल्प्योनुं
जे ते वारंवार उल्लंघन करे छे-जेटवे के साधुओंने भाटे जे अकल्प्य
गणाय जेवा आचारनं वारंवार सेवन करे छे, तो तेने विसांभोगिक
जडेर करी शक्य छे.

आ कथनने लावार्थ जे छे के जे कारणे तेने प्रायश्चित्त लेवु पडे
जेवा प्रायश्चित्तना कारणभूत स्थाननुं (इच्छत्यनुं) जे कोछ साधु प्रतिसेवन
करनारो डोय छे, सक्रिय स्थाननुं प्रतिसेवन करवा छतां पणु जे गुरु पासे
तेनी आलोचना करतो नथी, आलोचना करवा छतां पणु जे गुरु द्वारा
प्रदत्त प्रायश्चित्तनुं सेवन करवाने प्रारंभ करीने जे तेनुं पूर्णरूपे पालन
करतो नथी, अने गच्छप्रसिद्ध स्थविरकल्पिक साधुओंनी स्थितिमां-समा-
चारीमां आसेवनीय विशुद्ध पिण्डशय्या आसन वजरेनुं अथवा मासकल्पादि
इप स्थितिनुं अने विशुद्ध पिण्ड, शय्या, आसन आदिकोनुं जे वारंवार
उल्लंघन करीने साधुओंने भाटे अकल्प्य गणाय जेवा आचारोनुं सेवन करे
छे, तेने विसांभोगिक जडेर करी शक्य छे, जेटवे के तेने गणुमांथी काढी

સેવતે=માધુ પ્રકલ્પયાનિ પરિત્યજ્ય તદન્યાનિ સેવતે અન્યર્થઃ. કય પ્રતિપેક્ષતે ?
 હત્યાહ-' સેહન્દ્રહં ' હત્યાદિ-હન્ત ! ઈતિ સોમયામન્થો, ય તત્ત=માયુજના
 કલ્પ્યં પ્રતિસેવે, કિં માં સ્યનિરાઃ=ગુપ્તઃ કમિવ્યન્તિ ? ઈતિ વુદ્ધતા । ઈતિ પદ્મમં
 સ્થાનમ્ ૫। તથા-શ્રમણો નિર્ગ્રન્થઃ પશ્ચમિઃ સ્વાનઃ સાધર્મિકં પાગશ્ચિત્તમ્=
 અપહતલિદ્ધાદિરૂપદશમપાયશ્ચિત્તમેદવન્તં કુર્વાણો નાતિક્રામતિ । તથા-તા
 ન્યેત્ર સ્થાનાન્યાસ-સ્વકુલે-૧૨૩૪૫૬૭૮૯૧૦૧૧૧૨૧૩૧૪૧૫૧૬૧૭૧૮૧૯૨૦૨૧૨૨૨૩૨૪૨૫૨૬૨૭૨૮૨૯૩૦૩૧૩૨૩૩૩૪૩૫૩૬૩૭૩૮૩૯૪૦૪૧૪૨૪૩૪૪૪૫૪૬૪૭૪૮૪૯૫૦૫૧૫૨૫૩૫૪૫૫૫૬૫૭૫૮૫૯૬૦૬૧૬૨૬૩૬૪૬૫૬૬૬૬૭૬૮૬૯૭૦૭૧૭૨૭૩૭૪૭૫૭૬૭૭૭૮૭૯૮૦૮૧૮૨૮૩૮૪૮૫૮૬૮૭૮૮૮૯૯૦૯૧૯૨૯૩૯૪૯૫૯૬૯૭૯૮૯૯૧૦૦૧૦૧૧૦૨૧૦૩૧૦૪૧૦૫૧૦૬૧૦૭૧૦૮૧૦૯૧૧૦૧૧૧૧૧૨૧૧૩૧૧૪૧૧૫૧૧૬૧૧૭૧૧૮૧૧૯૧૨૦૧૨૧૨૨૧૨૩૧૨૪૧૨૫૧૨૬૧૨૭૧૨૮૧૨૯૧૩૦૧૩૧૩૨૧૩૩૧૩૪૧૩૫૧૩૬૧૩૭૧૩૮૧૩૯૧૪૦૧૪૧૪૨૧૪૩૧૪૪૧૪૫૧૪૬૧૪૭૧૪૮૧૪૯૧૫૦૧૫૧૫૨૧૫૩૧૫૪૧૫૫૧૫૬૧૫૭૧૫૮૧૫૯૧૬૦૧૬૧૬૨૧૬૩૧૬૪૧૬૫૧૬૬૧૬૭૧૬૮૧૬૯૧૭૦૧૭૧૭૨૧૭૩૧૭૪૧૭૫૧૭૬૧૭૭૧૭૮૧૭૯૧૮૦૧૮૧૮૨૧૮૩૧૮૪૧૮૫૧૮૬૧૮૭૧૮૮૧૮૯૧૯૦૧૯૧૯૨૧૯૩૧૯૪૧૯૫૧૯૬૧૯૭૧૯૮૧૯૯૨૦૦

ગિક કર દિયા જાતા છે "સે હંદ્રહં પદ્મિસેવામિ ૨૦" તદ્ જો માયુ સા-
 માચારીકે અગ્યોગ્ય આચારકા સેવન કરતા છે, તેમ સમય તદ્ પેમા
 વિચાર કરતા છે. કિં મેં જો સાધુજનોંકે લિયે અકલ્પ્ય આચારકા સેવન
 કરતા હુ, તો હવ પર સેવે શુભજન વેગો વ્યા કર સકતે હું ।

પુનઃ—શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હન પાંચ કારણોંકો લેકર વદિ કિમી
 સાધર્મિક સાધુનો પાગશ્ચિત્ત-કર વેના છે તજવેં પ્રાયશ્ચિત્તકે મેદવાયા
 કિ જિમમેં સાધુકા લિદ્ધ લિયા જાગો છે, કર વેના છે તો પેંની કાલ-
 તમેં વહ્ જિનાજાગા વિરાધક તહીં હોના છે, વે પાગશ્ચિત્ત કરનેંકે પાંચ
 કારણ હસ પ્રકારસે હેં—" સ્વકુલે વસતિ સ્વકુલસ્ય મેદાય અભ્યુધ્યાતા
 ભવતિ ૧ " ૧૨૩૪૫૬૭૮૯૧૦૧૧૧૨૧૩૧૪૧૫૧૬૧૭૧૮૧૯૨૦૨૧૨૨૨૩૨૪૨૫૨૬૨૭૨૮૨૯૩૦૩૧૩૨૩૩૩૪૩૫૩૬૩૭૩૮૩૯૪૦૪૧૪૨૪૩૪૪૪૫૪૬૪૭૪૮૪૯૫૦૫૧૫૨૫૩૫૪૫૫૫૬૫૭૫૮૫૯૬૦૬૧૬૨૬૩૬૪૬૫૬૬૬૬૭૬૮૬૯૭૦૭૧૭૨૭૩૭૪૭૫૭૬૭૭૭૮૭૯૮૦૮૧૮૨૮૩૮૪૮૫૮૬૮૭૮૮૮૯૯૦૯૧૯૨૯૩૯૪૯૫૯૬૯૭૯૮૯૯૧૦૦

મૂકવામા આવે છે તે માધુ ત્યારે સમાચારીને માટે અથોગ્ય ગણી શકાય
 એવા આચારોનું સેવન કરે છે ત્યારે તેના મનમાં એવો વિચાર થાય છે
 કે " સે હંદ્રહં પદ્મિસેવામિ " ઈત્યાદિ-હું સાધુઓને માટે અથોગ્ય ગણાય
 એવા આચારોનું સેવન કર છું, પણ મારા શુભ મને શું કરી શકવાના છે ?
 નીચેના પાંચ કારણોને લીધે ઠોઠ સાધર્મિક સાધુને પાગશ્ચિત્ત કરી
 દેવામાં આવે-તેનો સાધુ વેપ છોડાવી દેવામાં આવે તો એમ કરનાર જિના
 જ્ઞાનો વિરાધક ગણાતો નથી. સાધુને પાગશ્ચિત્ત કરવા થોગ્ય કારણો નીચે
 પ્રમાણે કહ્યાં છે-(૧) સ્વકુલેવસતિ સ્વકુલસ્ય મેદાય અભ્યુધ્યાતા ભવતિ "
 એક જ શુભતા સમુદાય રૂપ પોતાના કુળમા રહેવા છતાં પણ જે સાધુ તે
 કુળને છિન્નભિન્ન કરાવવાની પ્રવૃત્તિ કરતો હોય-પરસ્પરમા કલહના બીજ

स्थानम् २। तथा-हिंसाप्रेक्षी-हिंसां=आचार्यादेर्वधं प्रेक्षते=अन्वेपयति यः सः, आचार्यादेर्वधार्थमवसरगवेपीत्यर्थः । इति तृतीयं स्थानम् ३। तथा-छिद्रप्रेक्षी-छिद्राणि-प्रमत्ततादीनि प्रेक्षते यः सः, वधार्थमपमानार्थं वा आचार्यादेः छिद्र-गवेषक इत्यर्थः । इति चतुर्थं स्थानम् ४। तथा-अभीक्षणम् अभीक्षणम्=पुनः पुनः प्रश्नायतनानि-प्रश्नः=अङ्गुष्ठकुड्यप्रश्नादयः सावधानुष्ठानपृच्छया वा, त एव आयतनानि=असंयमानां स्थानानि तानि प्रयोक्ता=अनुष्ठानात्ता भवतीति पञ्चमं स्थानम् ५ इति ॥ सू० ११ ॥

भेद करनेवाला १। द्वितीय कारण-“ गणे वसति गणस्य भेदाय अभ्यु-
त्थाता भवति २ ” ऐसा है, कि जो कुल सस्रुदाय रूप गणमें रहता हुआ
भी उसी गणको छिन्नभिन्न करनेके लिये प्रयत्नवाला होता है, २। तीसरा
कारण-“ हिंसाप्रेक्षी ” ऐसा है-कि जो अपने आचार्य आदिके वध
करनेके अवसरकी प्रतीक्षामें रहता है, ३। चतुर्थ कारण-“ छिद्रप्रेक्षी ”
ऐसा है, कि जो आचार्य आदिके वधके लिये या उन्हे अपमानित कर-
नेके लिये उनके प्रमत्तता आदि छिद्रोंकी गवेषणा करनेमें लगा रहता
है, ४। पांचवां कारण-“ अभीक्षणं २ प्रश्नायतनानि प्रयोक्ता भवति ”
ऐसा है, कि जो बार २ अङ्गुष्ठकुड्यप्रश्नादि रूप या सावध्य अनु-
ष्ठान पृच्छारूप असंयम स्थानोंका अनुष्ठानात्ता होता है ५। इन पांच कार-
णोंसे साधर्मिक साधुको पाराश्रित करनेवाला जिनाज्ञाका विराधक
नहीं होता है ॥ सू० ११ ॥

शपतो डाय, तेने पाराश्रित करी शक्य छे (२) “ गणे वसति गणस्य भेदाय
अभ्युत्थाता भवति ” (कुलना समूहने गणु कडे छे) जे साधु गणुमां रखीने,
गणुने जे छिन्नभिन्न करवाभां प्रयत्नशील रहै छे, तेने पणु पाराश्रित करी
शक्य छे. (३) “ हिंसाप्रेक्षी ” जे साधु पोताना आचार्य आदिने वध
करवाना अवसरनी प्रतीक्षामा रहै छे, तेने पणु पाराश्रित (साधुना सिंगथी
रहित) करी शक्य छे. (४) “ छिद्रप्रेक्षी ” जे साधु आचार्य आदिने अप-
मानित करवाने भाटे तेमना छिद्रो जे-प्रमत्तता आदि दोषो जे शोध्या करे
छे, तेने पणु पाराश्रित करी शक्य छे (५) “ अभीक्षणं २ प्रश्नायतनानि
प्रयोक्ता भवति ” जे साधु बार-बार अङ्गुष्ठकुड्य प्रश्नादि रूप अथवा सावध्य
अनुष्ठान पृच्छारूप असंयम स्थानाने अनुष्ठानात्ता डाय छे, तेने पणु पारा-
श्रित करी शक्य छे आ पांच कारणे लीधे साधर्मिक साधुने पाराश्रित
करनारो श्रमणु निश्रंथ जिनाज्ञानो विराधक बनतो नथी. ॥ सू. ११ ॥

आचार्योपाध्याययोगे यथा पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि पञ्च अव्युद्ग्रहस्था-
नानि च भवन्ति, तानि प्राद—

मूलम्—आयरिय उवज्झायस्स णं गणंमि पंचवुग्गहट्टाणा
पणत्ता, तं जहा—आयरियउवज्झाएणं गणंमि आणं वा धारणं
वा नो सम्मं पउंजित्ता भवइ १, आयरियउवज्झाए णं गणंसि
आहाराइणियाए किइकम्मं नो सम्मं पउंजित्ता भवइ २, आय-
रिय उवज्झाए गणंसि जे सुत्तपज्जजाए धारेइ ते काले काले
णो सम्ममणुप्पवाइत्ता भवइ ३, आयरियउवज्झाए गणंसि
गिलाणसेहवेयावच्चं नो सम्ममम्भुट्ठित्ता भवइ, ४ आयरियउव-
ज्झाए गणंसि अणापुच्छियचारी यावि हवइ, नो आपुच्छिय-
चारी ५। आयरियउवज्झायस्स णं गणंसि पंच अवुग्गहट्टाणा
पणत्ता, तं जहा—आयरियउवज्झाए गणंमि आणं वा धारणं
वा सम्मं पउंजित्ता भवइ, एवं आहाराइणियाए सम्मं किइकम्मं
पउंजित्ता भवइ २, आयरियउवज्झाए णं गणंसि जे सुत्तपज्ज-
वजाए धारेइ ते काले काले सम्मं अणुप्पवाइत्ता भवइ ३,
आयरियउवज्झाए गणंसि गिलाणसेहवेयावच्चं सम्मं अम्भु-
ट्ठित्ता भवइ ४, आयरियउवज्झाए गणंसि आपुच्छियचारी
यावि भवइ णो अणापुच्छियचारी ६ ॥ सू० १२ ॥

छाया—आचार्योपाध्यायस्य खलु गणे पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि प्रज्ञप्तानि,
तद्यथा—आचार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्पक् प्रयोक्तृ
भवति १, आचार्योपाध्यायं खलु गणे यथारत्निकतया कृतिर्म्म नो सम्पक्
प्रयोक्तृ भवति २, आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति
तानि काले काले नो सम्पक् अनुपात्रात्रयित् भवति ३, आचार्योपाध्यायं गणे

ग्लानशैक्षवैयावृत्यं नो सम्यक् अभ्युत्थात् भवति ४, आचार्योपाध्यायं गणे
 अनापृच्छ्यचारि चापि भवति नो आपृच्छ्यचारि ५। आचार्योपाध्यायस्य खलु
 गणे पञ्च अव्युद्ग्रहस्थानानि, तद्यथा-आचार्योपाध्यायं गणे आज्ञां वा धारणां
 वा सम्यक् प्रयोक्तु भवति १, एवं यथारात्निकतया सम्यक् कृतिकर्म प्रयोक्तु
 भवति २, आचार्योपाध्यायं खलु गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति तानि
 काले काले सम्यक् अनुप्रवाचयितु भवति ३, आचार्योपाध्यायं गणे ग्लान-
 शैक्षवैयावृत्यं सम्यक् अभ्युत्थात् भवति ४, आचार्योपाध्यायं गणे आपृच्छ्य-
 चारिचापि भवति नो अनापृच्छ्यचारि ५ ॥सू० १२॥

टीका—‘आयरिय उवञ्जायस्स’ इत्यादि—

आचार्योपाध्यायस्य-आचार्यश्च उपाध्यायश्च-आचार्योपाध्यायं, समाहार-
 द्वन्द्वः, तस्य=आचार्यस्य उपाध्यायस्य च खलु निश्चयेन पञ्च व्युद्ग्रहस्थानानि=विग्रह-
 स्थानानि कलहोत्पादकानि प्रज्ञप्तानि । तद्यथा-तान्याह-आचार्योपाध्यायम्-आचार्य
 उपाध्यायश्च पृथक् पृथक् समुद्धितो वा गणे=गणविषये आज्ञाम्-‘हे मुने ! भवतेदं
 विधेयम्’ इत्येवं रूपाम्, यद्वा-देशान्तरस्थ गीतार्थनिवेदनाय अगीतार्थस्याग्रे
 गीतार्थो गूढार्थपदैर्यदतिचारनिवेदनं करोति सा आज्ञा, तां तथाभूतामाज्ञाम्,
 वा=अथवा धारणाम्-‘नेद विधेयम्’ इति रूपाम्, असकृदालोचनादानेन

आचार्य और उपाध्यायके गणमें जैसे पांच व्युद्ग्रह (क्लेश)के
 स्थान होते हैं वैसेही पांच अव्युद्ग्रहके भी स्थान होते हैं, इसी बातको
 अब सूत्रकार कहतेहैं-‘आयरिय उवञ्जायस्स ण गणंसि’ इत्यादि सूत्र १२॥

टीकार्थ-यहां आचार्य और उपाध्यायमें समाहारद्वन्द्व समासहै, इन
 आचार्य और उपाध्यायके गणमें पांच व्युद्ग्रह स्थान विग्रहके स्थान
 कलहको उत्पन्नकरनेवाले कारण कहे गयेहैं, उनमें प्रथम कारण-“आ-
 चार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्यक् प्रयोक्तु भवति

आचार्य अने उपाध्यायना गणुमां व्युद्ग्रहना (क्लेशना) जेम पांच
 स्थान डोय छे, ओ ज प्रमाणे अव्युद्ग्रहना (अक्लेशना) यणु पांच स्थान
 डोय छे, ओ ज बातने डवे सूत्रकार प्रकट करे छे.

टीकार्थ—“आयरियउवञ्जायस्स ण गणंसि” इत्यादि—

आचार्य उपाध्याय अही समाहार द्वन्द्वसमास इये वपरयेल छे.
 आचार्य अने उपाध्यायना गणुमां पांच व्युद्ग्रहस्थान अटवे हे कलह उत्पन्न
 करनारा कारणे डह्या छे. तेमांनुं पडेलु कारण नीये प्रमाणे छे—

“आचार्योपाध्यायं खलु गणे आज्ञां वा धारणां वा नो सम्यक् प्रयोक्तु भवति”

યત્ પ્રાયશ્ચિત્તવિશેષાવધારણં સા ધારણા તાં વા નો-નૈવ સમ્યક્-પ્રયાથાતથ્યેન પ્રયોક્તુ મ્ભવતિ । ઇતિ પ્રથમં સ્થાનમ્ ૧ । તથા-આચાર્યોપાધ્યાયમ્ ગણે, યથા-રાત્નિકતયા-રત્નાનિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ દ્વિયા । તત્ર-રત્નાનિ દ્રવ્યતઃ કર્કેતના-

૧ " પૃથક્ પૃથક્ જો આચાર્ય ઓર ઉપાધ્યાય અથવા સમુદિત જો આચાર્ય ઉપાધ્યાય ગણમેં ગણકે વિષયમેં આજ્ઞાકો-“ હે મુને ! આપકો યહ કરના ચાહિયે ” હમ પ્રકારકી આજ્ઞાકો યદ્વા-દેશાન્તરસ્થ કિસી ગીતાર્થસે નિવેદન કરનેકે લિયે-“ અગીતાર્થકે આગે જો ગીતાર્થ ગૂઢાર્થ પદોં દ્વારા જિસ અતિચારકા નિવેદન કરના હે ” એસી આજ્ઞાકો અથવા ધારણાકો-“ યહ તુમ્હેં નહીં કરના ચાહિયે ” હમ્ રુપ ધારણાકો યાર-વાર આલોચના દેનેસે જો પ્રાયશ્ચિત્ત વિશેષકા અવધારણ હે, વહ ધારણા હે, હસ ધારણાકો અચ્છી તરહસે પ્રયોક્તા કરાનેવાલા નહીં હોતા હે, મુનિ જનોંસે પાલન કરાનેવાલા નહીં હોતા હે, ઉસ આચાર્ય ઓર ઉપાધ્યાયકે ગણમેં કલહકો ઉત્પન્ન કરાનેકા યહ પ્રથમ કારણ હે । દ્વિતીય કારણ-“ આચાર્યોપાધ્યાયં સ્વલુ ગણે યથા રાત્નિકતયા કૃતિ-કર્મ નો સમ્યક્ પ્રયોક્તુ મ્ભવતિ ૨ ” એસા હે, કિ જો આચાર્ય યા ઉપા-

પૃથક્ પૃથક્ જે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાય અથવા સમુદિત જે આચાર્ય ઉપાધ્યાય ગણમાં ગણના વિષયમાં આજ્ઞાતું અથવા ધારણાતું પાલન કરાવનારા હોતા નથી, તે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણમાં કલહ થવાની સંભાવના રહે છે. આ રીતે આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયની તેમની આજ્ઞા અથવા ધારણાતુ પાલન કરાવવાની અશક્તિ તેમના ગણમાં કલહ ઉત્પન્ન કરવામાં કારણભૂત બને છે. “ હે મુનિ ! તમારે આ પ્રમાણે કરવું જોઈએ, ” તેનું નામ આજ્ઞા છે અથવા દેશાન્તરસ્થ કોઈ ગીતાર્થ સાધુ સમક્ષ નિવેદન કરવાને માટે “ અગીતાર્થની સમક્ષ ગીતાર્થ ગૂઢાર્થ પદો દ્વારા જે અતિચારતું નિવેદન કરે છે, ” તેનું નામ આજ્ઞા છે.

“ આ તમારે ન કરવું જોઈએ, ” તેનું નામ ધારણા છે. અથવા વારંવાર આલોચના દેવાથી જે પ્રાયશ્ચિત્ત વિશેષતું અવધારણ થાય છે તેનું નામ ધારણા છે. આ પ્રકારની આજ્ઞા અને ધારણાતું પોતાના ગણના સાધુઓ પાસે પાલન ન કરાવી શકનાર આચાર્ય અને ઉપાધ્યાયના ગણમાં કલહ ઉત્પન્ન થાય છે.

બીજુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે-“ આચાર્યોપાધ્યાયં સ્વલુ ગણે યથારત્નિકતયા કૃતિકર્મ નો સમ્યક્ પ્રયોક્તુ મ્ભવતિ ” જે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય

दीनि, भावतो ज्ञानादीनि अत्र भावरत्नाधिकाराद् रत्नैः=ज्ञानादिभिः व्यवहर-
तीति रात्निकः, तम् अनतिक्रम्य यथारात्निकं, तस्य भावस्तत्ता तथा, पर्याय-
ज्येष्ठानुसारेणेत्यर्थ, कृतिकर्म=वन्दनकं न सम्यक् प्रयोक्तु=अन्तर्भावितव्यर्थत्वात्
प्रयोजयितुं भवतीति द्वितीयं स्थानम् २। तथा-आचार्योपाध्यायं यानि श्रुत-
पर्यवजातानि=सूत्रार्थप्रकारान् सूत्रभेदान् धारयति=अवगच्छति तानि काले
काले=यथावसरं नो सम्यक् प्रवाचयितुं=पाठयितुं भवतीति तृतीयं स्थानम्
३, सम्प्रति ' आचार्येण उपाध्यायेन च कस्मै कस्य सूत्रस्य अनुप्रवाचना दा-
तव्या ' इति प्रोच्यते । तथाहि-त्रिवर्षपर्यायेभ्यः साधुभ्य आचारकल्पनामा-

ध्याय अपने गणमें पर्याय ज्येष्ठके अनुसार वन्दना आदि कृतिकर्मका
सम्यक् रीतिसे प्रयोक्ता-करानेवाला नहीं होता है, उस आचार्य उपा-
ध्यायके गणमें कलहको उत्पन्न करानेवाला यह द्वितीय कारण है २।
तृतीय कारण ऐसा है-“ आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि
धारयति तानि काले काले नो सम्यक् अनुप्रवाचयिता भवति ३ ” कि
जो आचार्य और उपाध्याय जिन श्रुतपर्यवजनोंको-सूत्रार्थ प्रकारोंको-
सूत्र भेदोंको जानता है, उनको वह यदि समय २ पर अच्छी तरहसे
अपने शिष्योंको नहीं पढाता है, तो इससे भी आचार्य या उपाध्याय
के गणमें कलहको उत्पन्न करानेवाला यह तृतीय कारण है,

अब आचार्य और उपाध्यायको किस शिष्यकेलिये किस सूत्रकी अनु-
प्रवाचना देनी चाहिये, यह प्रकट किया जाताहै-तीन वर्षकी जिसकी
दीक्षा पर्याय हो गई है, ऐसे साधुके लिये आचारकल्प नामक अध्य-

पोताना गणुमा दीक्षापर्यायनी अपेक्षाये न्येष्टता अनुसार वदुषा आदि
कृतिकर्मत्वं सारी रीते पालन करानेवाला होता नहीं, तेमना गणुमां कलह
उत्पन्न थवानो संभव रहे छे.

श्रीशुं शरथु-“ आचार्योपाध्यायं गणे यानि श्रुतपर्यवजातानि धारयति
तानि काले काले नो सम्यक् अनुप्रवाचयिता भवति ” के आचार्य अने उपा-
ध्याय के श्रुत पर्यवजताने-के सूत्रार्थ प्रकाराने-के सूत्र लेहाने नदुषे
छे, पणु पोताना शिष्येने योग्य समथे तेनो सारी रीते अक्यास करानेवा
नथी, ते आचार्य अने उपाध्यायना गणुमां पणु कलह उत्पन्न थवानो
संभव रहे छे.

इवे सूत्रकार के वात प्रकट करे छे के आचार्य अथवा उपाध्याय कथा
शिष्यने क्यारे कथा सूत्रनी अनुप्रवाचना देवी नदुषे, अटले के कथा शास्त्रने
अक्यास करानेवा नदुषे-

ध्ययनस्य, अनुप्रवाचना दातव्या । तथा-चतुर्वर्षपर्यायेभ्यः सूत्रकृताङ्गस्य, पञ्चवर्षपर्यायेभ्यो दशाकल्पव्यवहाराणाम्, अष्टवर्षपर्यायेभ्यः स्थानाङ्गसमवा-
याङ्गयोः, दश वर्ष पर्यायेभ्यो भगवतीसूत्रस्य, एकादश वर्षपर्यायेभ्यः क्षुल्लक-
विमानादीनामध्ययनानाम्, द्वादशवर्षपर्यायेभ्यः अरुणोपपातादीनां पञ्चाध्यय-
नानाम्, त्रयोदश-वर्षपर्यायेभ्यः उत्थानश्रुतादीनां चतुर्णामध्ययनानां चतुर्दश-
वर्षपर्यायेभ्यः स्वप्नभावनायाः, पञ्चदश वर्षपर्यायेभ्यः चरणभावनायाः, षोडश-

यनकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । चार वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो गई है, ऐसे साधुके लिये सूत्र कृताङ्गकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । पांच वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो गई है, ऐसे साधुके लिये दशाकल्प व्यवहारकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय आठ वर्षकी हो गई है, ऐसे साधुके स्थानाङ्ग और समवायाङ्गकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये दश वर्षकी जिसकी दीक्षापर्याय हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये भगवती सूत्रकी अनुप्रवाचना देना चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय ११ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये क्षुल्लकविमान आदि अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १२ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये अरुणोपपात आदि पांच अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १३ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये उत्थान श्रुत समुत्थान सूत्र, देविंदोपपातानागपरिचार यः चार अध्ययनोंकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षा पर्याय १४ वर्ष की हो चुकी है, ऐसे साधु के

के शिष्यनी दीक्षापर्याय त्रयो वर्षनी होय, ओवा शिष्यने आचार उदप नामना अध्ययनने अभ्यास करावये जेथजे चार वर्षनी दीक्षापर्यायवाणा शिष्यने सूत्रकृताङ्गनी अनुप्रवाचना देवी जेथजे. पांच वर्षनी दीक्षापर्यायवाणा साधुने दशाकल्प व्यवहारनी अनुप्रावचना देवी जेथजे. आठ वर्षनी दीक्षापर्यायवाणा साधुने स्थानाङ्ग सूत्रनी अने समवायाङ्ग सूत्रनी अनुप्रावचना देवी जेथजे. दस वर्षनी दीक्षापर्यायवाणा साधुने क्षुल्लक विमान आदि अध्ययनोनी अनुप्रावचना देवी जेथजे. बार वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने अरुणोपपात आदि पांच अध्ययनोनी अनुप्रावचना देवी जेथजे अने तेर वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने उत्थान श्रुत समुत्थान सूत्र, देविंदोपपातानागपरिचार आ चार अध्ययनोनी अनुप्रावचना देवी जेथजे. के साधुने प्रवक्ष्या अंगीकार कर्ताने १४ वर्षने

वर्षपर्यायेभ्यस्तेजोनिर्गमस्य सप्तदश वर्षपर्यायेभ्यः आशीविषभावनाया, अष्टाद-
शवर्षपर्यायेभ्यो दृष्टिविषभावनायाः, एकोनविंशतिवर्षपर्यायेभ्यश्च द्वादशाङ्गस्य
दृष्टिवादस्यानुप्रवाचना दातव्या । तथा-त्रिंशतिवर्षपर्यायेभ्यश्च सकलमूत्राणाम-
नुप्रवाचना दातव्या । अयमेवार्थो व्यवहार-सूत्रस्य दशमोद्देशे प्रोक्तः । इति ।

तथा-आचार्योपाध्यायं गणे ग्लानशैक्षवैयावृत्यं प्रति नो स्वयम् सम्यक्
अभ्युत्थातु=प्रयत्नशीलो भवतीति चतुर्थं स्थानम् ४ । तथा-आचार्योपाध्यायं

लिये स्वप्नभावनाकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय
१५ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये चरणभावनाकी अनुप्रवा-
चना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १६ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे
साधुके लिये तेजो निर्गमकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षा-
पर्याय १७ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये आशीविष भावनाकी
अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी दीक्षापर्याय १८ वर्षकी हो चुकी है,
ऐसे साधुके लिये दृष्टिविष भावनाकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । जिसकी
दीक्षापर्याय १९ वर्षकी हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये द्वादशाङ्ग दृष्टि-
वादकी अनुप्रवाचना देनी चाहिये । तथा जिसकी दीक्षापर्याय २० वर्षकी
हो चुकी है, ऐसे साधुके लिये समस्त सूत्रोंकी अनुप्रवाचना देनी चा-
हिये । यही अर्थ व्यवहारसूत्रके १० वें उद्देशमें कहा गयाहै—

तथा-चतुर्थं कारण—“ आचार्योपाध्यायं गणे ग्लानशैक्षवैया-
वृत्यं नो सम्यक् अभ्युत्थाता भवति ४ ” ऐसा है, कि जो आचार्य या

समय व्यतीत थछ गये। डोय, ते साधुने स्वप्न भावनानी अनुप्रवाचना
देवी लेछे. १५ वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने लगवती सूत्रनी
अने अगियार वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने चरण भावनानी अनुप्र-
वाचना देवी लेछे. १६ वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने तेमणे निर्गमनी
अनुप्रवाचना देवी लेछे. १७ वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने तेमणे आशी
विष भावनानी अनुप्रवाचना देवी लेछे. १८ वर्षनी दीक्षा पर्यायवाणा साधुने
तेमणे दृष्टिविष भावनानी अनुप्रवाचना देवी लेछे. १९ वर्षनी दीक्षा पर्या-
यवाणा साधुने द्वादशाङ्ग दृष्टिवादनी अनुप्रवाचना देवी लेछे. जे साधुने
दीक्षा अंगीकार कर्याने २० वर्षनी समय थर्ग गये। डोय तेमने समस्त
सूत्रानी अनुप्रवाचना देवी लेछे. आ विषयतुं व्यवहार सूत्रना १० भां
उद्देशाभां प्रतिपादन करवामां आ०युं छे

इये गणुमां उद्देश थवानुं योथुं उकारणु प्रकट करवामां आवे छे—
“ आचार्योपाध्यायं गणे ग्लानशैक्षवैयावृत्यं नो सम्यक् अभ्युत्थाता भवति ”

ગણે=અનાપૃચ્છચારિ-અનાપૃચ્છચ=અપૃષ્ટ્યા ચરતીત્યેવં ગ્રીલં ભવતિ, નો આપૃચ્છચ-
 ચારિ=પૃષ્ટ્યાચરણશીલં ન ભવતિ । આચાર્ય ઉપાધ્યાયથ ગણમ્ અપૃષ્ટૈવ ક્ષેત્રાન્તર-
 સંક્રમણશીલો ભવતિ, ન તુ પૃષ્ટૈત્યર્થઃ । ઇતિ પચ્ચસં સ્થાનમ્ ૫ । 'તત્પરીત્યેન
 આચાર્યોપાધ્યાયોર્ગગપિપયે પચ્ચ અવ્યુદ્ગ્રહરથાનાનિ=અક્લેશકરરથાનાનિ
 પ્રાહ-' આચરિય ઉવજ્ઞાયસ્સ ણં ગણંસિ પંચ અવુગ્ગહટ્ટાણા પળ્લતા ' ઇત્યાદિ ।
 વ્યાખ્યા સુગમા ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ઉપાધ્યાય ગણમેં ગ્લાન એવં શૈક્ષકે વૈયાવૃત્યકે પ્રતિ સ્વયં અચ્છી તર-
 હસે પ્રયત્નશીલ નહીં હોતા હૈ, ઉક્ત આચાર્ય ઓર ઉપાધ્યાયકે ગણમેં
 યહ ચૌથા કલહકા કારણ હૈ । પાંચવાં કલહકા કારણ--“ આચાર્યો-
 પાધ્યાયં ગણે અનાપૃચ્છચારિ ચાપિ ભવતિ, નો આપૃચ્છચારિ ” એસા
 હૈ, કિ યદિ આચાર્ય ઓર ઉપાધ્યાય ગણમેં વિના પૂછેહી ક્ષેત્રાન્તરમેં
 ગમનશીલ હોતા હૈ, પૂછ કરકે ગમનશીલ નહીં હોતા હૈ, તો યહ ભી
 ગણમેં કલહ ઉત્પન્ન કરનેકા પાંચવાં કારણ હૈ, ઇન પૂર્વોક્ત કારણોસે
 વિપરીત જો પાંચ કારણ હૈ, તે ગણમેં અવ્યુદ્ગ્રહકે સ્થાન હૈ-અક્લેશકે
 કારણ હૈ, શાંતિ ઓર સંપકે કારણ હૈ । “ આચરિય ઉવજ્ઞા-
 યસ્સ ણં ગણંસિ પંચ અવુગ્ગહટ્ટાણા પળ્લતા ” ઇત્યાદિકીવ્યાખ્યા
 સુગમ હૈ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

જે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય ગણુને ગ્લાન (વ્યાધિશસ્ત) અને શૈક્ષ
 (ખાલત્રીશિત) ના વૈયાવૃત્ય માટે જને જ સારી રીતે પ્રયત્નશીલ હોતા નથી,
 તે આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાયના ગણુમાં કલહ ઉત્પન્ન થવાની સંભાવના રહે છે.

કલહકનું પાંચમું કારણ--‘ આચાર્યોપાધ્યાયં ગણે અનાપૃચ્છચારિ ચાપિ
 ભવતિ નો અપૃચ્છચારિ ’ આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય જે ગણુને પૂછ્યા વિના
 ક્ષેત્રાન્તરમાં ગમનશીલ રહે છે ગણુના અન્ય સાધુઓને પૂછીને ગમનશીલ
 થતા નથી, તો એવી પરિસ્થિતિમાં પણ તેમના ગણુમાં કલહ ઉત્પન્ન થવાનો
 સંભવ રહે છે

આ પાંચ કારણોથી વિપરીત કારણોને લીધે ગણુમાં અક્લેશનું વાતા
 વરણુ રહે છે. એટલે કે ગણુમાં શાંતિ ટકી રહે છે. “ આચરિય ઉવજ્ઞા-
 યસ્સ ણં ગણંસિ પંચ અવુગ્ગહટ્ટાણા પળ્લતા ” ઇત્યાદિ સૂત્રોની વ્યાખ્યા સુગમ છે
 ઉપર્યુક્ત પાંચ કારણોથી ઉલટાં પાંચ કારણોને લીધે ગણુમાં શાંતિ જળવાઈ
 રહે છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

सम्प्रति निषद्यादि स्थानानि निरूपयति—

मूलम्—पंच निसिज्जाओ पणत्ताओ, तं जहा—उत्कुडुई १, गोदोहिया २, समपायपुता ३, पलियंका ४, अद्धपलियंका ५। पंच अज्जवट्टाणा पणत्ता, तं जहा—साहु अज्जवं, १ साहु मद्दवं २, साहु लाघवं ३, साहु खंती ४, साहु मुत्ती ५॥ सू०१३॥

छाया—पञ्च निषद्याः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—उत्कुडुका १, गोदोहिका २, समपादपुता ३, पर्यङ्का ४, अर्द्धपर्यङ्का ५। पञ्च आर्जवस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—साध्वार्जवम् १, साधु मार्दवम् २, साधु लाघवम् ३, साधु क्षान्तिः ४, साधु मुक्तिः ५॥ सू० १३॥

टीका—‘पंच निसिज्जाओ’ इत्यादि—

निषदनानि=उपवेशनानि निषद्याः=आसनविशेषरूपाः, ताः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः । ता एवाह—उत्कुडुका—पुतस्य अलगनेन उपवेशनम् १। गोदोहिका—गोदोहनकाले यथा उपवेशनं भवति, तद्वद् य आसनविशेषः सा गोदोहिकेत्युच्यते

अब सूत्रकार निषद्या आदि स्थानोंका निरूपण करते हैं—

‘पंच निसिज्जाओ पणत्ताओ’ इत्यादि सूत्र १३ ॥

सूत्रार्थ—आसन विशेष रूप जो निषद्याहैं, वे पांच प्रकारकीहैं—जैसे—उत्कुडुका १ गोदोहिका २ समपादपूता ३ पर्यङ्का ४ और अर्द्ध पर्यङ्का ५ । पांच आर्जव स्थान कहे गये हैं, जैसे—साध्वार्जव १ साधुमार्दव २ साधु लाघव ३ साधुक्षान्ति ४ और साधु मुक्ति ५ ।

टीकार्थ—जमीन पर जिस आसनमें पुत(बैठक)नहीं लगतेहैं, ऐसा वह बैठने रूप आसन उत्कुडुकासन है, गायका दोहन जिस आसनसे बैठ-

इये सूत्रकार निषद्या आदि स्थानोंका निरूपण करे छे.

सूत्रार्थ—“पंच निसिज्जाओ पणत्ताओ” इत्यादि—

सूत्रार्थ—आसनविशेष रूप छे निषद्या छे, तेना नीचे प्रमाणे पांच प्रकार कइयां छे—(१) उत्कुडुका, (२) गोदोहिका, (३) समपादपूता, (४) पर्यंका अने (५) अर्धपर्यंका.

नीचे प्रमाणे पांच आर्जवस्थान कइयां छे—(१) साध्वार्जव, (२) साधु मार्दव, (३) साधु लाघव, (४) साधु क्षान्ति अने (५) साधु मुक्ति.

टीकार्थ—जे आसनमां जमीन पर पुतने (कुदाने) राखवामां आवता नथी ते आसनने “उत्कुडुकासन” कहे छे. आ आसनमां उलडक भेसवुं पडे छे.

૨। સમપાદપુતા-સમો-સમતયા ધૂમિસ્પર્શયુક્તો પાદો પુતો ચ યસ્યાં સા । ૩ ।
 પર્યઙ્કા-પદ્માસનમિતિ પ્રસિદ્ધા ॥ ૪ ॥ તથા-અર્ધપર્યઙ્કા-હારાવેકં પાદં નિવેદ્ય
 ય ઉપવેશનમકારઃ સઃ ' અર્ધપર્યઙ્કા ' इत्युच्यते । તથા-આર્જવસ્થાનાનિ-ઋજોઃ-
 રાગદ્વેષવક્રત્વ-વર્જિતસ્ય સામાયિકવતઃ કર્મભાવો વા આર્જવં સંવર इत्यर्थः, તસ્ય
 સ્થાનાનિ=ભેદાઃ પञ्च-પ્રજ્ઞાનાનિ । તદ્વર્થો-સાધ્વાર્જવમ્-સાધુ-સમ્યગ્ દર્શનપૂર્વક-
 તયા શોભનમ્, તદ્ધ આર્જવમ્=માયાનિગ્રહરૂપં ચ । યદ્વા-સાધોર્આર્જવં સાધ્વાર્જ-
 વમ્ । एवं साधुमार्दवादि स्थानचतुष्टयमपि विज्ञेयम् । तत्र-मार्दवं मानનિગ્રહતો

કર. ક્રિયા જાતાહૈ, એસા વહ આસન ગોદોહિકા આસનહૈ, જિસ આસન
 મેં દોનોં પૈર એવં દોનોં પુત (અધોભાગ)ભૂમિકો સમાનરૂપસે સ્પર્શ કરતેહૈ,
 એસે આસનકા નામ સમપાદપુતા આસન હૈ, પદ્માસનકા નામ પર્યઙ્કાસન
 હૈ, જંઘા પર એક ચરણ રાખકર જો વૈઠા જાતાહૈ, વહ અર્ધપદ્માસનહૈ, હસી
 કા નામ અર્ધપર્યઙ્કાસનહૈ. રાગદ્વેષરૂપ વક્રતાસે વર્જિત સામાયિકવાલેકા
 જો કર્મ યા ભાવહૈ, ઉસકા નામ આર્જવહૈ, (સરલતા) યહ આર્જવ સંવર
 રૂપ હોતા હૈ, હસ આર્જવરૂપ સંવરકે પાંચ સ્થાનહૈ, જો આર્જવ સમ્યગ્દ-
 ર્શનપૂર્વક હોતા હૈ, વહ શોભન આર્જવ સાધ્વાર્જવ હૈ, યહ આર્જવ માયા
 કષાયકે નિગ્રહરૂપ હોતા હૈ, અર્થાત્-માયા કષાયકે અભાવમેં હોતા હૈ,
 યદ્વા-સાધુકા જો આર્જવ હૈ, વહ સાધ્વાર્જવ હૈ, હસી તરહકા કથન
 સાધુમાર્દવ (સમ્યગ્ વિનય) આદિ પદોંકે વિષયમેં મી સમજ્ઞ લેના
 ચાહિયે । માન કષાયકે નિગ્રહસે માર્દવ હોતાહૈ, ઉપકરણસે ઔર ગૌર-

એ આસને જેસીને ગાયને દોહવાની ક્રિયા થાય છે, તે પ્રકારના આસનનું
 નામ ' ગોદોહિકા આસન ' છે. જે આસનમાં બંને પગ બંને બંને પુત
 જમીનનો સમાન રૂપે સ્પર્શ કરે છે, એવા આસનનું નામ ' સમપાદપુતા
 આસન ' છે. પદ્માસનને પર્યંકાસન પણ કહે છે. જંઘા પર એક પગ ગોઠ-
 વીને જે ઠેકઠે જમાવવામાં આવે છે, તે આસનને ' અર્ધપર્યંકાસન ' કહે છે.

રાગદ્વેષ રૂપ વક્રતાથી રહિત સામાયિકવાળાનો જે ભાવ છે, તેનું નામ
 આર્જવ છે. તે આર્જવ સંવર રૂપ હોય છે. આ આર્જવ રૂપ સંવરના પાંચ
 સ્થાન છે. જે આર્જવ સમ્યગ્દર્શનપૂર્વક ઉદ્ભવે છે, તે શોભન આર્જવને
 સાધ્વાર્જવ કહે છે. તે આર્જવ માયા કષાયના નિગ્રહ રૂપ હોય છે-એટલે
 કે માયા કષાયના અભાવમાં જ સંભવી શકે છે. અથવા સાધુનું જે આર્જવ
 છે તેનું નામ સાધ્વાર્જવ છે. એ પ્રકારનું કથન સાધુમાર્દવ આદિ વિષે પણ
 સમજવું. માનકષાયના નિગ્રહથી માર્દવ આવે છે, ઉપકરણ અને ગૌરવત્રયના

भवति, लाघवम्—उपकरणतो गौरवत्रयस्यागतश्च; क्षान्तिः क्रोधनिग्रहतः तथा—
मुक्तिः—लोभनिग्रहतो भवति इति ॥ सू० १३ ॥

आर्जवयुक्ता मरणानन्तरं प्रायो देवा भवन्तीति देवानां पञ्चविधत्वं 'पंच-
विहा जोइसिया' इत्यारभ्य 'ईसाणस्स णं' इत्यन्तेन सूत्रपञ्चकेन प्राह—

मूलम्—पंचविहा जोइसिया पण्णत्ता, तं जहा—खंदा १
सूरा २ गहा ३ नक्खत्ता ४ ताराओ ५। पंचविहा देवा पण्णत्ता,
तं जहा—भवियदव्व देवा १ णरदेवा २ धम्मदेवा ३ देवाहिदेवा
४ भावदेवा ॥ सू० १४ ॥

छाया—पञ्चविधा ज्योतिष्काः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—चन्द्राः १ सूर्याः २, ग्रहाः
३ नक्षत्राणि ४, ताराः ५। पञ्चविधा देवाः, प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—मव्यद्रन्व्यदेवाः १,
नरदेवाः २, धर्मदेवाः ३ देवाधिदेवाः ४, भावदेवाः ५ ॥ सू० १४ ॥

टीका—'पंचविहा' इत्यादि—

ज्योतिष्काः—ज्योतीपि=विमानभेदाः, तत्र भवाः, देवविशेषा इत्यर्थः ।
ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पञ्चविधत्वमेवाह—चन्द्राः सूर्या इत्यादि । तथा—

वत्रयके त्यागसे लाघव होता है, क्रोध कषायके निग्रहसे क्षान्ति होती
है, तथा लोभके निग्रहसे मुक्ति (निर्लोभता) होती है ॥ सू० १३ ॥

आर्जवयुक्त जीव प्रायः मरणके बाद देव होते हैं, इसलिये सूत्र-
कार अब "पंचविहा जोइसिया" यहाँसे लेकर "ईसाणस्स णं" यहाँ
तकके सूत्रपञ्चकसे उनकी पंच विधताका कथन करते हैं—

टीकार्थ—'पंचविहा जोइसिया पण्णत्ता' इत्यादि सूत्र १४ ॥

विमानविशेषका नाम ज्योति है, इस ज्योतिमें जो देव होते हैं वे
ज्योतिष्कदेव है, ये ज्योतिष्कदेव पांच प्रकारके कहे गये हैं—

लाघव उद्भवते छे, क्रोधकषायना निग्रहथी क्षान्ति उद्भवते छे अने लोभना
निग्रहथी मुक्ति उद्भवते छे ॥ सू. १३ ॥

आर्जव युक्त एव सामान्य रीते देवनी पर्याये उत्पन्न थाय छे. तैथी
उवे सूत्रकार "पंचविहा जोइसिया" आ सूत्रथी लगने "ईसाणस्स णं"
आ सूत्र पर्यन्तना पांच सूत्रो द्वारा देवोनी पंचविधता प्रकट करे छे—

टीकार्थ—'पंचविहा जोइसिया पण्णत्ता' इत्यादि—

विमान लक्षण नाम ज्योति छे. ते ज्योतिष्का ये देवा जाय छे तेभने
ज्योतिष्क देवा कहे छे. ते ज्योतिष्क देवाना नीचे प्रमाणे पांच प्रकार कहे छे.

દેવાઃ-દીવ્યન્તિ-ક્રીડન્તિ યે તે, દીવ્યન્તે=સ્તૂયન્તે યે તે વા દેવાઃ । તે-ચ
 પશ્ચવિધાઃ પ્રજ્ઞાતાઃ । તેષાં પશ્ચવિધત્વમાહ-તદ્યથા-ભવ્યદ્રવ્યદેવાઃ-દ્રવ્યભૂતા દેવા
 દ્રવ્યદેવાઃ, ઇવ્યાશ્ચ તે દ્રવ્યદેવાશ્ચેતિ સમાસઃ । દેવતયોત્પત્સ્યમાન્ત્વાદ ભાવિ-
 દેવપર્યાયયોગ્યા इत्यर्थः १। નરદેવાઃ-નરાણાં દેવાઃ ચક્રવર્તિપ્રભૃતયઃ ૨। ધર્મ-
 દેવાઃ-ધર્મણ=શ્રુતાદિદેવાઃ, ધર્મપ્રધાના વા દેવાઃ, ચારિત્રવન્તઃ ૩। દેવાધિદેવાઃ-
 દેવેભ્યોઽપિ=ઈન્દ્રાદિભ્યોઽપિ અધિ-અધિકાઃ=શ્રેષ્ઠાઃ, તૈઃ પૂજ્યમાન્ત્વાત્ દેવાઃ,
 દેવાધિદેવાઃ અહન્ત इत्यर्थः ४। તથા ભાવદેવાઃ-ભાવેન=દેવગત્યાદિકર્મોદયજાત-
 પર્યાયેણ દેવાઃ-ભાવદેવાઃ દેવાયુષ્કાદિકમનુભવન્તો વૈમાનિકાદય इत्यर्थः ५॥સૂ૦૧૪॥

ચન્દ્ર ૧ સૂર્ય ૨ ગ્રહ ૩ નક્ષત્ર ૪ ઓર તારા । દેવ પાંચ પ્રકારકે કહે
 હૈં, જૈસે-ભવ્યદ્રવ્યદેવ ૧ નરદેવ ૨ ધર્મદેવ ૩ દેવાધિદેવ ૪ ઓર ભાવ-
 દેવ ૫ । જો વિવિધ પ્રકારકી ક્રીડાઈ કરતે હૈં, અથવા જિસકી સ્તુતિ
 કી જાતી હૈં વે દેવ હૈં, જો જીવ આગે દેવરૂપ પર્યાયસે ઉત્પન્ન હોને
 વાલા હોતા હૈ, અમી વર્તમાનમેં ઉસ પર્યાયવાલા નહીં હૈ, એસા જીવ
 ભવ્યદ્રવ્યદેવ હૈં, ચક્રવર્તી આદિ નરદેવ હૈં, ક્યોંકિ યે મનુષ્યોમેં દેવ-
 તુલ્ય માને જાતે હૈં, ધર્મસે શ્રુતાદિસે-જો દેવ હૈં, અથવા-ધર્મપ્રધાન
 જો દેવ હૈં, વે ધર્મદેવ હૈં, એસે ધર્મદેવ ચારિત્રધારી મુનિજન હોતે હૈં ।
 જો દેવોસે મી ઈન્દ્રાદિકોસે મી અધિક શ્રેષ્ઠ હૈં ક્યોંકિ વે ઉનકે દ્વારા
 પૂજ્ય હોતે હૈં, એસે દેવ દેવાધિદેવ હોતે હૈં-એસે દેવાધિદેવ અહન્ત હૈં ।
 તથા દેવગતિ નામકર્મકે ઉદયસે જિનકી દેવપર્યાયમેં સ્થિતિ હૈં, વે

(૧) ચન્દ્ર, (૨) સૂર્ય, (૩) ગ્રહ, (૪) નક્ષત્ર અને (૫) તારા.

દેવાના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકારે પણ કહ્યા છે - (૧) ભવ્ય દ્રવ્યદેવ,
 (૨) નરદેવ, (૩) ધર્મદેવ, (૪) દેવાધિદેવ અને (૫) ભાવદેવ. જે વિવિધ
 પ્રકારની ક્રીડાઓ કરે છે, અથવા જેની સ્તુતિ કરાય છે, તે દેવ છે. જે ભવ્ય
 ભવિષ્યમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થવાનો હોય છે-વર્તમાન સમયે તો દેવપર્યાય-
 વાળો નથી, એવા ભવને ભવ્ય દ્રવ્યદેવ કહે છે. ચક્રવર્તી આદિને નરદેવ કહે
 છે, કારણ કે તેમને મનુષ્યોમાં દેવતુલ્ય માનવામાં આવે છે. ધર્મની દૃષ્ટિએ
 શ્રુતાદિની અપેક્ષાએ જે દેવ છે અથવા ધર્મપ્રધાન જે દેવ છે તેમને ધર્મદેવ
 કહે છે. ચારિત્રધારી શ્રમણ નિર્ગ્રંથો જે એવાં ધર્મદેવ રૂપ છે. જેઓ દેવો
 કરતાં પણ શ્રેષ્ઠ છે અને દેવો પણ જેમને પૂજનીય અને વન્દનીય ગણે છે,
 એવા દેવાને દેવાધિદેવ કહે છે. એવા દેવાધિદેવ અહન્તો છે. દેવગતિ નામ-
 કર્મના ઉદયથી જેમની દેવપર્યાયમાં સ્થિતિ છે, તેમને ભાવદેવ કહે છે. દેવ

देवप्रस्तावाद्देवपरिचारणामाह—

मूलम्—पंचविहा परिचारणा पण्णत्ता, तं जहा—कायपरिया-
रणा १, फासपरियारणा २, रूपपरियारणा ३, शब्दपरियारणा ४, सद्परियारणा
५, मणपरियारणा ५ ॥ सू० १५ ॥

छाया—पञ्चविधा परिचारणां प्रज्ञप्ता तद्यथा—कायपरिचारणा १, स्पर्श-
रिचारणाः २, रूपपरिचारणा ३, शब्दपरिचारणा ४ मनःपरिचारणा ५ ॥ सू० १५ ॥

टीका—‘पंचविहा’ इत्यादि—

परिचारणा—परिचारणं परिचारणा—देवमैथुनप्रवृत्तिरित्यर्थः । सा पञ्च-
विधा प्रज्ञप्ता । तद्यथा—पञ्चविधत्वमाह—कायपरिचारणा—कायेन परिचारणा,—
कायेन देवदेव्योः मैथुनप्रवृत्तिः । इयं परिचारणा—भवनपति—व्यन्तर ज्योतिष्क-
प्रथमद्वितीयसौधर्मेशानदेवलोकस्थितानां देवानामेव भवति । एते हि देवाः

भावदेव हैं, ऐसे वे भावदेव-देव सम्बन्धी आयुका अनुभव करनेवाला
वैमानिक आदि देव हैं ॥ सू० १४ ॥

देवके प्रस्तावको लेकर अब सूत्रकार देवपरिचारणाका कथक करते हैं.

‘पंचविहा परिचारणा पण्णत्ता’ इत्यादि सूत्र १५ ॥

टीकार्थ—परिचारणा पांच प्रकारकी कही गई है, जैसे—कायपरिचारणा १
स्पर्शपरिचारणा २ रूपपरिचारणा ३ शब्दपरिचारणा ४ और मनः-
परिचारणा ५ ।

देवोंकी जो मैथुन क्रियामें प्रवृत्ति है, उसका नाम परिचारणा है,
शरीरसे जो देव देवियोंकी मैथुन क्रियामें प्रवृत्ति होती है, मनुष्य और
मानवीकी तरह वह कायपरिचारणा है, यह परिचारणा भवनपति
व्यन्तर ज्योतिष्क और सौधर्म एवं ईशानदेव लोकस्थित देवोंकोही है,

संबन्धी आयुको अनुभव करी रहेका वैमानिक आदि देवों का प्रकारना
भावदेवों रूप छे ॥ सू० १४ ॥

देवोंको अधिकार वाली रह्यो छे, तथी हुवे सूत्रकार देवपरिचारणानुं
कथन करे छे. “पंचविहा परिचारणा पण्णत्ता” इत्यादि—

टीकार्थ—देवोंकी मैथुन क्रियाओं में प्रवृत्ति छे, तेषु नाम परिचारणा छे. ते
परिचारणाना नीचे प्रमाणे पांच प्रकारे छे—(१) कायपरिचारणा, (२) स्पर्श
परिचारणा, (३) रूपपरिचारणा, (४) शब्दपरिचारणा, (५) मनःपरिचारणा.

मानव अयुरूपनी जेभ शरीरथी देवदेवीनी मैथुन क्रियाओं में प्रवृत्ति
रहे छे, ते प्रवृत्तिने कार्यपरिचारणा कहे छे. भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष्क,
सौधर्म अने ईशान लोकस्थित देवोंमें कायपरिचारणानो सद्भाव होय छे,

સંક્ષિપ્તોદયપુરુષવેદકર્મમાયાત્ મનુષ્યવદેવ કાયનેવ મૈથુનં સેવન્તે इति
 बोध्यम् । तथा-स्पर्शपरिचारणा-स्पर्शेन शरीरस्पर्शमात्रेणैव परिचारणा=। इयं
 परिचारणा तृतीयचतुर्थसनत्कुमार-माहेन्द्र कल्पस्थितानां देवानां भवति । तथा-
 रूपपरिचारणा-रूपेण=रूपमात्रदर्शनेन परिचारणा - इयं पञ्चमषष्ठब्रह्मलान्तक-
 स्थितानां देवानां भवति । तथा-शब्दपरिचारणा-शब्देन=देवाङ्गनाशब्दश्रवण
 मात्रेणैव या परिचारणा सा । इयं सप्तमाष्टममहाशुकसहस्रारकल्पस्थितानां
 देवानां भवति । तथा-मनःपरिचारणा-मनसा=मनःसंकल्पेनैव परिचारणा ।

અન્ય દેવોંકો નહીં હોતી હૈ, ક્યોંકિ સંકિલષ્ટ ઉદયવાલે પુરુષ વેદકે પ્રભાવસે મનુષ્યકી તરહહી કાયસે મૈથુન ક્રિયામે પ્રવૃત્ત હોતે હૈ । જો પરિચારણા સ્પર્શસે શરીરકે છૂને માત્રસે હી હોતી હૈ, ઘહ સ્પર્શ-પરિચારણા હૈ, ઘહ પરિચારણા તૃતીય ઓર ચતુર્થ દેવલોકમે સ્થિત દેવોંકો હોતી હૈ, સનત્કુમાર ઓર માહેન્દ્ર યે દો દેવલોક તૃતીય ઓર ચતુર્થ દેવલોકહૈ । રૂપમાત્રકે દેખનેસે જો પરિચારણા હોતી હૈ, ઘહ રૂપપરિચારણા હૈ, ઘહ પરિચારણા પાંચવેં દેવલોકમે બ્રહ્મ દેવલોકમે ઓર છઠ્ઠે દેવલોકમે લાન્તક દેવલોકમે સ્થિત દેવોંકોહી હોતી હૈ, તથા શબ્દસે દેવાઙ્ગનાઓંકે શબ્દ સુનને માત્રસે હી જો પરિચારણા હોતી હૈ, ઘહ શબ્દ પરિચારણા હૈ, ઘહ પરિચારણ સાતવેં ઓર આઠવેં દેવલોકમે સ્થિત દેવોંકે હોતી હૈ, મનઃ પરિચારણા કેવલ સંકલ્પસે છઠ્ઠે પરિચારણા આનત પ્રાણત આરણ ઓર અચ્યુત હન નૌવેં દશવેં ગ્યારહવેં

કારણ કે સંકિલષ્ટ ઉદયવાળા પુરુષવેદના પ્રભાવથી તેઓ મનુષ્યોની જેમજ
 કાયા વડે મૈથુન ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત રહેતા હોય છે. જે પરિચારણા માત્ર સ્પર્શ-
 શરીરના સ્પર્શ દ્વારા જ થાય છે, તે પરિચારણાને કાયપરિચારણા કહે છે.
 સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર નામના ત્રીજા અને ચોથા દેવલોકમાં જે દેવ-દેવીઓ
 રહે છે, તેમનામાં કાયપરિચારણાનો સહભાવ હોય છે. માત્ર રૂપ લેખને જે
 પરિચારણા થાય છે, તેને રૂપપરિચારણા કહે છે. પાંચમાં બ્રહ્મલોક અને છઠ્ઠા
 લાન્તક દેવલોકના દેવોમાં આ પ્રકારની પરિચારણાનો સહભાવ હોય છે. શબ્દ
 દ્વારા જ ચોટલે કે દેવાંગનાઓના શબ્દને શ્રવણ કરવા માત્રથી જ જે પરિ-
 ચારણા થાય છે તેને શબ્દ પરિચારણા કહે છે. સાતમાં અને આઠમાં દેવ-
 દેવલોકમાં રહેલા દેવોમાં શબ્દ પરિચારણાનો સહભાવ હોય છે. જે પરિ-
 ચારણા કેવળ સંકલ્પ દ્વારા જ થાય છે તે પરિચારણાને મનઃ પરિચારણા કહે

इयं नवमदशमैकादशद्वादशाऽऽनत प्राणतारणाच्युतकल्पस्थितानां देवानां भवति
 प्रैवेयकादि स्थितानां देवानां तु परिचारणा न भवतीति बोध्यम् ॥ सू० १५ ॥

अथ देवाधिकाराद्देवानामग्रमहिषीप्ररूपणामाह—

मूलम्—चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो पंच
 अग्रमहिषीओ पणत्ताओ, तं जहा—काली १, राई २, रयणी
 ३, विज्जू ४, मेहा ५। बलिस्स णं वड्ढरोयणिंदस्स वड्ढरोयण-
 रण्णो पंच अग्रमहिषीओ पणत्ताओ, तं जहा—सुभा १,
 णिसुंभा २, रंभा ३ णिरंभा ४, मयणा ५ ॥ सू० १६ ॥

छाया—चमरस्य खलु असुरेन्द्रस्य असुरकुमारराजस्य पञ्च अग्रमहिष्यः
 प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—काली १, रात्री २, रजनी ३, विद्युत् ४, मेघा ५ । बलेः खलु
 वैरोचनेन्द्रस्य वैरोचनराजस्य पञ्च अग्रमहिष्यः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—शुम्भा १,
 निशुम्भा २, रम्भा ३, निरम्भा ४, मदना ५ ॥ सू० १६ ॥

एवं बारह्वे देवलोकोर्मे स्थित देवलोकोके होती है, प्रैवेयक आदिमें
 स्थित देवोंको तो परिचारणा है ही नहीं ॥ सू० १५ ॥

अब देवोंकी अग्रमहिषियोंकी प्ररूपणा सूत्रकार करते हैं—

'चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो' इत्यादि सूत्र १६ ॥

टीकार्थ—असुरोंके इन्द्र असुरकुमार राज चमरकी पांच अग्रमहिषियां
 कही गई हैं, जैसे—काली १ रात्री २ रजनी ३ विद्युत् ४ और मेघा ५ ।
 दक्षिणनिकायका यह चमर इन्द्र है, तथा उत्तर निकायका इन्द्र जो

छे. नवधी लधने १२ भां देवलोकां देवोभां मनः परिचारणुना सदभाव
 डाय छे. प्रैवेयक आदि विमानोभां तो परिचारणुना सदभाव न
 डोंतो नथी ॥ सू० १५ ॥

—इवे सूत्रकार देवोनी अग्रमहिषीओनी प्ररूपणा करे छे—

“ चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो ” इत्यादि—

टीकार्थ—असुरोना इन्द्र, असुरकुमार राय चमरने पांच अग्रमहिषीओ छे.
 तेसनां नाम आ प्रमाळु छे—(१) काली, (२) रात्री, (३) रजनी, (४) विद्युत्
 अने (५) मेघा. आ चमर दक्षिणनिकायना इन्द्र छे. उत्तरनिकायना जे बलि

टीका—‘चमरस्स णं’ इत्यादि—

व्याख्या सुगमा, नवरम्—चमरो दक्षिणनिकायेन्द्रो, बलिस्तु उत्तरनिका-
येन्द्रः ॥ सू० १६ ॥

सम्प्रति चमरेन्द्रादीनां सांग्रामिकान् अनीकान् अनीकाधिपतींश्च निरूपयति—

सूत्रम्—चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो पंच संग्गा-

मिया अणिया, पंच संग्गामियाणियाहिवई पणत्ता, तं जहा-
पायत्ताणिए १, पीढाणिए २, कुंजराणिए ३, महिसाणिए ४,

रहाणिए ६। दुमे पायत्ताणियाहिवई सोदामी आसराया पीढा-

णियाहिवई, कुन्धू हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, लोहियक्खे

महिसाणियाहिवई, किन्नरे रहाणियाहिवई । बलिस्स णं वडरोय-

णिंदस्स वडरोयणरण्णो पंच संग्गामिया अणिया पंच संग्गामि-

याणियाहिवई पणत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए ।

महदुमे पायत्ताणियाहिवई, महासोयामो आसराया पीढाणिया-

हिवई, मालंकारो हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, महालोहियक्खो

महिसाणियाहिवई, किंपुरिसे रहाणियाहिवई । धरणस्स णं णाग-

कुमारिंदस्स णागकुमारण्णो पंच संग्गामिया अणिया पंच संग्गामि-

याणियाहिवई पणत्ता, तं जहा—पायत्ताणिए जाव रहाणिए ।

भदसेणे पायत्ताणियाहिवई, जसोधरे आसराया पीढाणियाहि-

वई, सुदंसणे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, नीलकंठे महिसा-

णियाहिवई, आणंदे रहाणियाहिवई । भूयाणंदस्स नागकुमा-

पलि है, इसकी भी पांच अग्रमहिवियां कही गई हैं । जैसे—शुम्भा १

निशुम्भा २ रम्भा ३ निरम्भा ४ और मदना ५ ॥ सू० १६ ॥

नामने धन्द्र छे तेनी पांच अग्रमहिवियां नाम नीचे प्रमाणे छे—

(१) शुम्भा, (२) निशुम्भा, (३) रंभा, (४) निरंभा अने (५) मदना. सू. १६

रिंदस्स नागकुमाररणो पंच संगामिया अणिया पंच संगामि-
याहिवई पणत्ता, तं जहा-पायत्ताणिए जाव रहाणिए । दक्खे
पायत्ताणियाहिवई, सुग्गीवे आसराया पीढाणियाहिवई, सुवि-
क्कमे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, सेयकंठे महिसाणियाहिवई,
नंदुत्तरे रहाणियाहिवई । वेणुदेवस्स णं सुवर्णिणदस्स सुवण्ण-
कुमाररणो पंच संगामिया अणिया पंच संगामियाणियाहिवई
पणत्ता, तं जहा-पायत्ताणिए जाव रहाणिए, एवं जहा धर-
णस्स तथा वेणुदेवस्स वि । वेणुदालियस्स जहा भूयाणंदस्स ।
जहा धरणस्स तथा सव्वेसिं दाहिणिच्छाणं जाव घोसस्स । जहा
भूयाणंदस्स तथा सव्वेसिं उत्तरिच्छाणं जाव महाघोसस्स ।
सक्कस्स णं देविंदस्स देवरणो पंच संगामिया अणिया पंच
संगामियाणियाहिवई पणत्ता, तं जहा-पायत्ताणिए जाव उस-
भाणिए रहाणिए । हरिणेगमेसी पायत्ताणियाहिवई, वाऊ आस-
राया पीढाणियाहिवई, एरावणे हत्थिराया कुंजराणियाहिवई,
दाम्ढी उसभाणियाहिवई, माढरो रहाणियाहिवई । ईसाणस्स
णं देविंदस्स देवरणो पंच संगामिया अणिया जाव पायत्ताणिए
१, पीढाणिए २, कुंजराणिए ३, उसभाणिए ४, रहाणिए ५।
लहुपरक्कमे पायत्ताणियाहिवई, महावाऊ आसराया पीढाणिया-
हिवई पुप्फदंते हत्थिराया कुंजराणियाहिवई, महादाम्ढी उस-
भाणियाहिवई, महामाढरे रहाणियाहिवई । जहा सक्कस्स तथा
सव्वेसिं दाहिणिच्छाणं, जाव आरणस्स । जहा ईसाणस्स तथा
सव्वेसिं उत्तरिच्छाणं जाव अच्चुयस्स ॥ सू० १७ ॥

છાયા-ચમરસ્યં સ્વલુ અસુરેન્દ્રસ્ય અસુરરાજસ્ય પશ્ચ સાંગ્રામિકા અનીકાઃ પશ્ચ સાંગ્રામિકાઽનીકાધિપતયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-પાદાતાનીકઃ, પીઠાનીકઃ, કુજ્જરાનીકઃ, મહિષાનીકઃ રથાનીકઃ । દ્રુમઃ પાદાતાનીકાધિપતિઃ સૌદામી અશ્વરાજઃ પીઠાનીકાધિપતિઃ, કુન્દ્યુર્હસ્તિરાજઃ કુજ્જરાનીકાધિપતિઃ, લોહિતાક્ષો મહિષાનીકાધિપતિઃ, કિન્નરો રથાનીકાધિપતિઃ વલેઃ સ્વલુ વૈરોચનેન્દ્રસ્ય વૈરોચનરાજસ્ય પશ્ચ સાંગ્રામિકા અનીકાઃ પશ્ચ સાંગ્રામિકા નીકાધિપતયઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તદ્વથા-પાદાતાનીકો યાચદ્રધાનીકઃ । મહાદ્રુમઃ પાદાતાનીકાધિપતિઃ, મહામૌદામઃ અશ્વરાજઃ

અવ સૂત્રકાર ચમરેન્દ્ર આદિકોંકે સાંગ્રામિકે અનીકોં એવં અનીકાધિપતિયોંકી પ્રરૂપણા કરતે હેં--

‘ચમરસ્ય ણં અસુરિંદસ્ય અસુરકુમારરણ્ણો’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-અસુરકુમાર ઈન્દ્ર એવં અસુરકુમાર રાજ ચમરકી પાંચ સાંગ્રામિક અનીક સેનાઈં ઓર પાંચહી ઉનકે અધિપતિ સેનાપતિ કહે ગયેહેં, જૈસે-પાદાતાનીક ૧ પીઠાનીક ૨ કુજ્જરાનીક ૩ મહિષાનીક ૪ ઓર રથાનીક ૫ ।

પાદાતાનીકકા અધિપતિ દ્રુમ હૈ, અશ્વરાજ સૌદામી પીઠાનીકકા અધિપતિ હૈ, હસ્તિરાજ કુન્દ્યુ કુજ્જરાનીકકા અધિપતિ હૈ, મહિષાનીકકા અધિપતિ લોહિતાક્ષ હૈ, રથાનીકકા અધિપતિ કિન્નર હૈ, વૈરોચનેન્દ્ર વૈરોચનરાજ વલિ ઈન્દ્રકે પાંચ સાંગ્રામિક અનીકહેં, ઓર પાંચહી સાંગ્રામિક અનીકાધિપતિ હૈ, જૈસે-પાદાતાનીક યાચદ્ર રથાનીક પાદા-

હવે સૂત્રકાર ચમરેન્દ્ર આદિકોના સાંગ્રામિક અનીકો (સેનાઓ) ની અને અનીકાધિપતિઓની પ્રરૂપણા કરે છે.

સૂત્રાર્થ-“ ચમરસ્ય ણં અસુરિંદસ્ય અસુરકુમારરણ્ણો ” ઇત્યાદિ—

અસુરકુમારોના ઈન્દ્ર અસુરકુમારરાય ચમરની પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ છે અને તેમના અધિપતિ (સેનાપતિ) પણ પાંચ કહ્યા છે. પાંચ અનીકો (સેનાઓ) નીચે પ્રમાણે છે—(૧) પાદાતાનીક, (૨) પીઠાનીક, (૩) કુજ્જરાનીક, (૪) મહિષાનીક અને (૫) રથાનિક.

પાદાતાનીક (પામદળ સેના) નો અધિપતિ દ્રુમ છે. પીઠાનીક (હયદળ) નો અધિપતિ હસ્તિરાજ કુન્દ્યુ છે. મહિષાનીક (પાડાઓ પર સવાર થનાઈં સૈન્ય) નો અધિપતિ લોહિતાક્ષ છે, અને રથાનિકનો અધિપતિ કિન્નર છે.

વૈરોચનેન્દ્ર વૈરોચનરાય બલિની પણ ચમરની સેનાઓ જેવી જ પાંચ સેનાઓ છે, અને તે સાંગ્રામિક સેનાઓના પાંચ અધિપતિ છે. તેની પામદળ

पीठानीकाधिपतिः, मालंकारो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः महालोहिताक्षो महिषानीकाधिपतिः, किंपुरुषो रथानीकाधिपतिः । धरणराय खलु नागकुमारेन्द्रस्य नागकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—पादातानीको यावद् रथानीकः । भद्रसेनः पादातानीकाधिपतिः, यशोधरः अश्वराजः पीठानीकाधिपतिः, सुदर्शनो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, नीलकण्ठो महिषानीकाधिपतिः आनन्दो रथानीकाधिपतिः । भूतानन्दस्य नागकुमारेन्द्रस्य नागकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—पादातानीको यावद् रथानीकः । दशः पादातानी-

तानीकका अधिपति महाद्रुम है, इत्यादि स्वनाम कथन चमरके अनीकाधिपतिके जैसाही जानना चाहिये अर्थात् पादातानीकका अधिपति महाद्रुम है, पीठानीकका अधिपति अश्वराज महासौदाम है, कुञ्जरानीकका अधिपति हस्तिराज मालङ्कार है, महिषानीकका अधिपति महालोहिताक्ष है, और रथानीकका अधिपति किंपुरुष है, नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरणके पांच सांग्रामिक अनीक हैं, और पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, पादातानीक यावत् रथानीक ये पांच अनीक हैं, और इनके अधिपति क्रमशः भद्रसेन यशोधर सुदर्शन नीलकण्ठ और आनन्द हैं, अर्थात् पादातानीकका अधिपति भद्रसेन हैं, पीठानीकका अधिपति अश्वराज यशोधर है, कुञ्जरानीकका अधिपति हस्तिराज सुदर्शन है, महिषानीकका अधिपति नीलकण्ठ है, और रथानीकका अधिपति आनन्द है, नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज भूतानन्दके पांच सांग्रामिक अनीक और पांचही इन के सांग्रामिक

सेनानो अधिपति महाद्रुम छे ड्यदणनो अधिपति अश्वराज महासौदाम हस्तिदणनो अधिपति हस्तिराज मालंकार छे महिषानीकनो अधिपति महालोहिताक्ष छे, अने रथानीकनो अधिपति किंपुरुष छे.

नागकुमारेन्द्र नागकुमारराय धरलुनी पांच सांग्रामिक सेनाओ छे, तेमनां नामो पञ्च पादातानीक (पायदण सैन्य) आदि छे. ते सेनाओना पञ्च पांच अधिपति छे तेमनां नाम अनुक्रमे लद्रसेन, यशोधर, सुदर्शन, नीलकंठ अने आनंद छे अटले के तेनी पायदण सेनानो अधिपति लद्रसेन ड्यदणनो अधिपति अश्वराज यशोधर, कुञ्जरानीकनो अधिपति हस्तिराज सुदर्शन, महिषानीकनो अधिपति नीलकंठ अने रथानीकनो अधिपति आनंद छे. नागकुमारेन्द्र नागकुमारराय भूतानन्दनी पासे पञ्च असुरेन्द्र अमरना

કાધિપતિઃ, સુગ્રીવઃ અશ્વરાજઃ પીઠાનીકાધિપતિઃ, સુવિક્રમો હસ્તિરાજઃ કુન્જરા-
નીકાધિપતિઃ, નીલકण्ठो महिषानीकाधिपतिः, नन्दोत्तरो रथानीकाधिपतिः ।
वेणुदेवस्य खलु सुपर्णेन्द्रस्य सुपर्णकुमारराजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च
सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पादातानीकः, यावद् रथानीकः, एवं
यथा धरणस्य तथा वेणुदेवरयापि । वेणुदालिकस्य, यथा भूतानन्दस्य । यथा
धरणस्य तथा सर्वेषां दक्षिणात्यानां यावद् घोषस्य । यथा भूतानन्दस्य तथा

મિક અનીકાધિપતિ હૈં, અનીક કે નામ પાદાતાનીક
યાવત્ રથાનીક હૈં, ઓર इनके अधिपतियोंके नाम दक्ष सुग्रीव सुवि-
क्रम नीलकण्ठ और नन्दोत्तर हैं, इनमें दक्ष पादातानीकका अधिपति
है, अश्वराज सुग्रीव पीठानीकका अधिपति है, हस्तिराज सुविक्रम कुं-
जरानीकका अधिपति है, नीलकण्ठ महिषानीकका अधिपति है, और
नन्दोत्तर रथानीकका अधिपति है, सुपर्णेन्द्र सुपर्णकुमारराज वेणुदेवके
पांच सांग्रामिक अनीकाधिपति हैं, धरणके अनीकाधिपतियोंका जैसा
नाम है, वैसाही नाम वेणुदेवके सांग्रामिक अनीकाधिपतियोंका भी है,
वेणुदालिकके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नामका कथन जैसा
भूतानन्दके अनीक और अनीकाधिपतियोंका नाम कहा गया है, वैसा
ही है । जैसा धरणके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नामका कथन
है, वैसाही समस्त दक्षिणके घोष तकके अनीक और अनीकाधिपति-

જેવી જ પાંચ સાંગ્રામિક સેનાઓ (અનીકા) છે. અને પાંચ સાંગ્રામિક અનીકા-
ધિપતિઓ છે. તેના નામ પાદાન્તાનીક યાવત્ રથાનીક તેના પાદાતાનીક (પાયદળ
સૈન્ય) નો અધિપતિ દક્ષ છે, પીઠાનીકનો (હથદળનો) અધિપતિ અશ્વ-
રાજ સુગ્રીવ છે, કુંજરાનીકનો અધિપતિ હસ્તિરાજ સુવિક્રમ છે, મહિષાનીકનો
અધિપતિ નીલકંઠ છે અને રથાનીકનો અધિપતિ નન્દોત્તર છે.

સુપર્ણેન્દ્ર સુપર્ણ કુમારરાય વેણુદેવની પણ જેવી જ પાંચ સાંગ્રામિક
સેનાઓ છે. તેની સેનાના અધિપતિઓનાં નામ ધરણની સેનાના અધિપતિ-
ઓનાં નામ પ્રમાણે જ સમજવા.

વેણુદાલિકની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓના નામોનું કથન
ભૂતાનન્દની સેનાઓ અને સેનાધિપતિઓની અનુસાર જ સમ-
જવું. જેવું ધરણની સાંગ્રામિક સેનાઓનું અને તે સેનાઓના અધિપતિઓના
નામોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે, જેવું જ કથન ઘોષ પર્યાન્તના સમસ્ત

सर्वेषाम् उत्तरीयाणां यावद् महाघोषस्य । शक्रस्य खलु देवेन्द्रस्य देवराजस्य
पञ्च सांग्रामिका अनीकाः पञ्च सांग्रामिकानीकाधिपतयः प्रवृत्ताः, तद्यथा-पादा
तानीको यावद् वृषभानीको स्थानीकः । हरिणैगमैषी पादातानीकाधिपतिः, वायु-
रश्वराजः पीठानीकाधिपतिः ऐरावणो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः, दामर्द्धिः
वृषभानीकाधिपतिः, माठरो स्थानीकाधिपतिः । ईशानस्य खलु देवेन्द्रस्य देव
राजस्य पञ्च सांग्रामिका अनीकाः यावत् पादातानीकः १ पीठानीकः २, कुञ्ज-
रानीकः, ३ वृषभानीकः ४, स्थानीकः ५। लघुपराक्रमः पादातानीकाधिपतिः,
महावायुरश्वराजः पीठानीकाधिपतिः पुष्पदन्तो हस्तिराजः कुञ्जरानीकाधिपतिः।

योंके नामका कथन है, और जैसा भूतानन्दके अनीक और अनीका-
धिपतियोंका नाम है, वैसाही नाम खलस्त उत्तरके महाघोष शक्रके
निकायेन्द्रोंके अनीक और अनीकाधिपतियोंका है । देवेन्द्र देवराज
शक्रके पांच सांग्रामिक अनीक और पांचही सांग्रामिक अनीकाधिपति
कहे गये हैं । पांच अनीक इस प्रकारसे हैं-पादातानीक यावत् वृषभ-
ानीक स्थानीक । इनका पादातानीकाधिपति हरिणैगमैषी है, अश्वराज
वायु पीठानीकाधिपति है । हस्तिराज ऐरावण कुञ्जरानीकाधिपति है,
दामर्द्धि वृषभानीकाधिपति है, और माठर स्थानीकाधिपति है, देवेन्द्र
देवराज ईशानके पांच सांग्रामिक अनीक हैं, यावत् पांचही सांग्रामिक
अनीकाधिपति हैं, इनमें पादातानीकका अधिपति लघुपराक्रम है, अश्व-
राज महावायु पीठानीकका अधिपति है, पुष्पदन्त हस्तिराज कुञ्जरा-

दक्षिणुना छन्दोनी सेनाओं अने सेनाधिपतियों विषे पणु समञ्जसु. जेवां
भूतानन्दनी सांग्रामिक सेनाओंना नाम कडेवामां आव्यां छे, जेवां ७ मडा-
घोष पर्यन्तना उत्तरनिकायना छन्दोनी सेनाओं अने सेनाधिपतियोंनां
नाम समञ्ज देवां

देवेन्द्र देवराज शुकनी पणु पांच ७ सांग्रामिक सेनाओं कडी छे. ते
सेनाओंना अधिपति पणु पांच ७ कड्यां छे.

तेमनी पांच सेनाओंनां नाम नीचे प्रमाणे छे—(१) पादातानीक, (२)
पीठानीक, (३) कुञ्जरानीक, (४) वृषभानीक अने (५) स्थानीक.

तेमनो पादातानीकाधिपति हरिणैगमैषी छे, पीठानिकाधिपति अश्वराज
वायु छे, कुञ्जरानीकाधिपति हस्तिराज ऐरावणु छे, वृषभानीकाधिपति दामर्द्धि
छे अने स्थानीकाधिपति माठर छे. देवेन्द्र देवराज ईशाननी पणु शकना
जेवी ७ पांच सांग्रामिक सेनाओं छे. ते सेनाओंना अधिपतियोंनां नाम

महादामर्द्धिः द्रुपमानीकाधिपतिः महामाठरः स्थानीकाधिपतिः यथा शक्रस्य तथा सर्वेषां दाक्षिणात्यानां यावत् आरणस्य । यथा ईशानस्य तथा सर्वेषाम् उत्तरीयाणां यावदव्युत्स्य ॥सू० १७॥

टीका—‘ चमररत्नं ’ इत्यादि—

व्याख्या सुगमा । विशेषस्तयम्—अनीकाः=सैन्यानि । ‘ सांग्रामिके ’—ति विशेषणोपादानं गान्धर्वनाट्यानीकयोर्व्यवच्छेदार्थम् । पादातानीकाधिपतिः—पदातीनां समूहः पादातं, तद्रूपस्थानीकस्याधिपतिः=स्वामी । अयं पदातिरेव बोध्यः । पीठानीकाधिपतिः—पीठानीकम्—अश्वसैन्यं, तस्याधिपतिः । अयमथ एव बोध्यः ।

नीकका अधिपति है, जिस प्रकारसे शक्रके अनीक और अनीकाधिपतियोंके ये नाम कहे गये हैं, उसी प्रकारसे समस्त दाक्षिणात्यियोंके यावत् आरण तकके इन्द्रोंके अनीकके और अनीकाधिपतियोंके नाम जानना चाहिये और ईशानके अनीकके और अनीकाधिपतियोंके जैसे—नाम कहे गये हैं वैसेही समस्त उत्तरके इन्द्रोंके यावत् अव्युत्स तकके इन्द्रके अनीक और अनीकाधिपतियोंके नाम जानना चाहिये

टीकार्थ—इस सूत्रमें जो सांग्रामिक विशेषण दिया गया है, वह गान्धर्वानीक और नाट्यानीकके व्यवच्छेदके लिये दिया गया है, पादातियोंका पैदल चलनेवालोंका जो समूह है, वह पादाति है, इन पादातोंकी जो सेना है, वह पादातानीक है, इस पादातानीकका जो अधिपति—स्वामी होता है, वह पादातानीकाधिपति है, यह पादातानीकाधिपति भी पदाति ही होता है, पीठानीक अश्व सैन्यरूप होता है, इस अश्वसैन्यका जो

नीचे प्रमाण है—पादातीकनो अधिपति लघुपराक्रम है, पीठानीकनो अधिपति अश्वराज मंडावायु है, कुंजरानीकनो अधिपति हस्तिराज युष्पदन्त है.

शक्रनी सांग्रामिक सेनाओं अने सेनापतियोंनां जेवा नाम आपवामां आव्यां छे, जेवां ज आरण्य पर्यन्तना दक्षिणना धन्द्रोती सेनाओं अने सेनाधिपतियोंनां नाम समञ्ज देवा. धशानेन्द्रनी सेनाओं अने सेनाधिपतियोंना जेवा नाम आपवामां आव्यां छे जेवो ज अव्युत्स पर्यन्तना उत्तरना धन्द्रोनी सेनाओं अने सेनाधिपतियोंना नाम समञ्जवा जेधजे.

टीकार्थ—आ सूत्रमां अनीकानी आगण जे सांग्रामिक विशेषणुनो प्रयोग करवामां आव्यो छे, ते गान्धर्वानीक अने नाट्यानीकनो व्यवच्छेद करवा निमित्ते करवामां आवेल छे. पादाति अथवा पायदण सेनाने पादातानीक कडे छे. ते पादातानीकनो जे अधिपति डोय छे तेने पादातानीकाधिपति कडे छे. ते पादातानीकाधिपति पणु पदाति ज डोय छे. अश्वदणने पीठानीक कडे छे. ते

एवमेव कुञ्जरानीकाधिपतिः कुञ्जरः, महिषानीकाधिपतिर्महिषः, वृषभानीकाधि-
पतिर्वृषभः, रथानीकाधिपतिश्च रथो बोधय इति । भवनपतिनिकायेषु दश दक्षिण-
निकायेन्द्रा दशउत्तरनिकायेन्द्राश्च सन्ति । तत्र दक्षिणनिकायेन्द्राः—चमरो १,
धरणो २, वेणुदेवो ३, हरिकान्तः ४, अग्निशिखः ५, पूर्णः ६, जलकान्तः ७,
अमितगतिः ८, वेलम्बो ९, घोषश्च १० । उत्तरनिकायेन्द्राश्च—बलिः १, भूता-
नन्दः २, वेणुदालिः ३, हरिसहः ४, अग्निमाणवः ५, वसिष्ठः ६, जलप्रभः ७,
अमितवाहनः ८, प्रभञ्जनः ९, महाघोषश्चेति १०। सौधर्मादिषु कल्पेषु दश

अधिपति होता है, वह पीठानीकाधिपति कहा गया है । यह पीठानी-
काधिपति अश्वरूपही होता है, इसी प्रकारसे जो कुञ्जराधिपति होता
है, वह भी कुंजर रूपही होता है । महिषानीकका जो अधिपति होता
है वह महिष-मैत्रारूप होता है, और वृषभानीकका जो अधिपति होता है
है, वह वृषभ होता है । तथा रथानीकका जो अधिपति होता है, वह रथ होता
है । भवनपति निकायमें दश दक्षिण निकायके इन्द्र होते हैं और दश उत्तर
निकायके इन्द्र होते हैं । इनमें दक्षिण निकायके इन्द्रोंके नाम इस प्रका-
रसे हैं—चमरेन्द्र १ धरण २ वेणुदेव ३ हरिकान्त ४ अग्निशिख ५
पूर्ण ६ जलकान्त ७ अमितगति ८ वेलम्ब ९ और घोष १० उत्तरनिकायके
इन्द्रोंके नाम इस प्रकारसे हैं—बलि १ भूतानन्द २ वेणुदालि ३ हरिसह
४ अग्निमाणव ५ वसिष्ठ ६ जलप्रभ ७ अमितवाहन ८ प्रभञ्जन ९ एवं

अश्वदणना अधिपतिने पीठानीकाधिपति उडे छे. ते पीठानीक विपति अश्वरूप न
डोय छे. इन्द्रितदणने कुंजरानीक उडे छे अने तेना अधिपतिने कुंजरानीका-
धिपति कुंजर रूप (डाधी रूप) न डोय छे महीप अेटके पाडा. ओवी
पाडाओनी सेनाने महीषानीक उडे छे. तेना अधिपति पशु महीष रूप न
डोय छे. वृषभ अेटके नगद. वृषभानी सेनाने वृषभानिक उडे छे अने तेना
अधिपति पशु वृषभ न डोय छे. रथानीकने अधिपति पशु रथ न डोय छे.

भवनपति निकायमां उत्तरनिकायना दस धन्द्रो डोय छे. दक्षिणनिकायना
धन्द्रोनां नाम नीचे प्रभाणु छे—(१) चमरेन्द्र, (२) धरण, (३) वेणुदेव,
(४) हरिकान्त, (५) अग्निशिख, (६) पूर्ण, (७) जलकान्त, (८) अमितगति
(९) वेलम्ब अने (१०) घोष.

उत्तरनिकायना धन्द्रोनां नाम नीचे प्रभाणु छे—(१) बलि, (२) भूतानन्द
(३) वेणुदालि, (४) हरिसह, (५) अग्निमाणव, (६) वसिष्ठ, (७) जलप्रभ,
(८) अमितवाहन, (९) प्रभञ्जन अने (१०) महाघोष.

ઇન્દ્રા ભવન્તિ । તત્ર દાક્ષિણાત્યાનાં સૌધર્મસનત્કુમારબ્રહ્મલોકશુક્રાનતારણાનાં
પણાં ચત્વાર ઇન્દ્રા ભવન્તિ । તથા ઉત્તરીયાણામ્ ઈશાનમાહેન્દ્રલાન્તકસહસ્રાર-
પ્રાણતાચ્યુતાનાં પ્ણાં પહિન્દ્રા ભવન્તિ । આનતારણો યદ્યપીન્દ્રાનધિષ્ઠિતૌ તથાપિ
પ્રાણતાચ્યુતેન્દ્રાધીનત્વાદેતાવપ્યત્ર સેન્દ્રાબુક્તાચિતિ ન કથિદ્ દોષ ઇતિ ॥ સૂ. ૧૭ ॥

સમ્પ્રતિ શક્રરથાભ્યન્તરપરિપદ્વર્તિનાં દેવાનામ્, ઈશાનસ્યાભ્યન્તરપરિપદ્-
વર્તિનીનાં દેવીનાં ચ સ્થિતિપ્રમાણમાહ—

મૂલમ્—સક્રસ્ય પાં દેવિન્દ્રસ્ય દેવરજ્ઞો અન્બિતરપરિસાપ્
દેવાણાં પંચ પલિઓવસાઈ ઠિઈ પ્ણતા । ઈસાગસ્ય પાં દેવિન્-
દ્રસ્ય દેવરજ્ઞો અન્બિતરપરિસાપ્ દેવીણાં પંચ પલિઓવસાઈ
ઠિઈ પ્ણતા ॥ સૂ. ૧૮ ॥

મહાવોષ ૧૦ સૌધર્માદિ કલ્પોમે ૧૦ ઇન્દ્ર હોતે હૈં, ઇનમેં દાક્ષિણાત્ય
કલ્પોકે સૌધર્મ સનત્કુમાર બ્રહ્મલોક શુક્ર આનત ઓર આરણ ઇન
છહ દેવલોકોકે ચાર ઇન્દ્ર હોતે હૈં, તથા ઉત્તર દિશાકે કલ્પોકે-ઈશાન,
માહેન્દ્ર, લાન્તક, સહસ્રાર, પ્રાણત ઓર આરણ યે દો કલ્પ ઇન્દ્રસે
અનધિષ્ઠિત હૈં, તો બી પ્રાણતેન્દ્ર ઓર અચ્યુતેન્દ્ર ઇનકે અધીન હોનેસે
યે દોનોં બી ઇન્દ્ર સહિત કહે ગયે હૈં ઇસ તરહસે ઇસ કથનમેં કોઈ દોષ
નહીં હૈ ॥ સૂ. ૧૭ ॥

અથ સૂત્રકાર શક્રકી આભ્યન્તર પરિપદાકે દેવોંકી ઓર ઈશાનકી
આભ્યન્તર પરિપદાકી દેવિયોંકી સ્થિતિકા પ્રમાણ કહતે હૈં—

સૌધર્માદિ કલ્પોના ૧૦ ઇન્દ્ર હોય છે. તેમાંથી સૌધર્મ, સનત્કુમાર,
બ્રહ્મલોક, શુક્ર, આનત અને પ્રાણત, આ છ દાક્ષિણાત્ય કલ્પો છે. તે છ
કલ્પોના ૪ ઇન્દ્રો હોય છે, અને ઈશાન, માહેન્દ્ર, લાન્તક, સહસ્રાર, પ્રાણત
અને અચ્યુત, આ છ ઉત્તર દિશાના કલ્પો છે. તે છ કલ્પોના છ ઇન્દ્રો
હોય છે. તે કે આનત અને આરણ આ બે કલ્પો ઇન્દ્ર દ્વારા અનધિષ્ઠિત
છે, છતાં પણ પ્રાણતેન્દ્ર અને અચ્યુતેન્દ્ર તેમને અધીન હોવાથી, એ બંને
કલ્પોને ઇન્દ્ર સહિતના કહેવામાં આવ્યાં છે આ રીતે આ કથનમાં
કોઈ દોષ નથી. ॥ સૂ. ૧૭ ॥

હવે સૂત્રકાર શક્રની આભ્યન્તર પરિપદના દેવોની તથા ઈશાનની આભ્ય-
ન્તર પરિપદના દેવોની સ્થિતિ કેટલી છે તે પ્રકટ કરે છે.

छाया—शक्रस्य खलु देवेन्द्रस्य देवराजस्य आभ्यन्तरपरिषदो देवानां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ईशानस्य खलु देवेन्द्रस्य आभ्यन्तरपरिषदो देवीनां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ताः ॥सू० १८॥

टीका—‘सकस्स णं’ इत्यादि । व्याख्या स्पष्टा ॥ सू० १८ ॥

इत्थं देववक्तव्यता प्रोक्ता । दुष्टाध्यवसायवतः प्राणिनस्तु तद्गतिस्थित्या-दीनां प्रतिघातो भवतीति तन्निरूपणाय प्राह—

मूलम्—पञ्चविहा पडिहा पणत्ता, तं जहा-गइपडिहा १, ठिइपडिहा २, बंधणपडिहा ३, भोगपडिहा ४, बलवीरियपुरि-सक्कारपरक्कमपडिहा ॥ ५ ॥ सू० १९ ॥

छाया—पञ्चविधः प्रतिघः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-गतिप्रतिघः १, स्थितिप्रतिघः बन्धनप्रतिघः ३, भोगप्रतिघः ४, बलवीर्यं पुरुषकारपराक्रमप्रतिघः ५ सू० १९

टीका—‘पञ्चविहा’ इत्यादि—

प्रतिहननं प्रतिघः, ‘अन्यत्रापि दृश्यते’ इति सूत्रेण हन्धातो ङ प्रत्यये न्यङ्क्वादिद्वात् कुत्वम्, प्रतिघात इत्यर्थः, स च पञ्चविधः प्रज्ञप्तः । तद्यथा—

‘सक्कस्स णं देविंदस्स देवरणो’ इत्यादि सूत्र १८ ॥

सूत्रार्थ—देवेन्द्र देवराज शक्रकी आभ्यन्तर परिषदाके देवोंकी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही गई है, इसी प्रकार देवेन्द्र देवराज ईशानकी आभ्यन्तर परिषदाकी देवियों हैं, उनकी भी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही गई है ॥ सू० १८ ॥

इस प्रकारसे देव वक्तव्यता कहकर अब सूत्रकार दुष्ट अध्यवसायवाले प्राणीके देवगतिका और उसकी स्थिति आदिका प्रतिघात होता है, इस बातकी अब प्ररूपणा करते हैं—

“सक्कस्स णं देविंदस्स देवरणो” इत्यादि—

सूत्रार्थ—देवेन्द्र देवराज शक्रकी आभ्यन्तर परिषदना देवोंकी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही है, जे जे प्रमाण देवेन्द्र देवराज ईशानकी आभ्यन्तर परिषदानी देवियोंकी स्थिति पांच पल्योपम प्रमाण कही है ॥ सू. १८ ॥

आ प्रकारे देववक्तव्यतानुं कथन करीने हवे सूत्रकार दुष्ट अध्यवसायवाणा देवोंकी देवगतिके तथा तेमकी स्थिति आदिने जे प्रतिघात थाय छे, तेनुं निरूपण करे छे. “पञ्चविहा पडिहा पणत्ता” इत्यादि—

पञ्चविधत्वं यथा-गति-प्रतिघ्नः-गतेः=प्रकरणवशात् शुभरूपाया देवादिगतेः प्रतिघ्नः, शुभदेवादिगतिप्राप्तियोग्यतायां सत्यामपि विपरीत-कर्मकरणात् तदप्राप्तिरूपो गतिप्रतिघातः कण्डरीकस्येव बोध्य इति १ । तथा-स्थितिप्रतिघ्नः स्थितेः=शुभ देवादि गतिप्रायोग्यकर्मबन्धनरूपायाः स्थितेः प्रतिघ्नः बद्धानामेव शुभदेवगतिप्रायोग्यकर्मणाम् अध्यवसायविशेषात् प्रतिघातो भवति । तदुक्तम्-

“ दीहकालठिईयाओ हस्सकालठिईयाओ पगरेइ ॥”

छाया—दीर्घकालस्थितिकाः (प्रकृतीः) ह्रस्वकालस्थितिकाः प्रकरोति ।

‘पंचविहा पडिहा पणत्ता’ इत्यादि सूत्र १९ ॥

टीकार्थ-प्रतिघात पांच प्रकारका कहा गया है-जैसे-गति प्रतिघात १ स्थिति प्रतिघात २ बन्धनप्रतिघात ३ भोगप्रतिघात ४ और बलवीर्यपुरुष-कारपराक्रम प्रतिघात ५ प्रतिहननका नाम प्रतिघ है, इसका अर्थ प्रतिघात होता है, यह पांच प्रकारका कहा गया है-गतिका प्रकरणके वशासे देवादिगतिरूप शुभगतिका जो प्रतिघात है, वह गतिप्रतिघ है, शुभदेवादि गतिकी प्राप्तिकी योग्यताके होने पर भी जो विपरीत कर्मके करनेसे उसकी प्राप्ति नहीं होती है, वह गतिप्रतिघात है, जैसे कण्डरीकको यह गतिप्रतिघात हुआ है, शुभदेवगतिके प्रायोग्य कर्मबन्धन रूप स्थितिका जो प्रतिघ-प्रतिघात है, वह स्थितिप्रतिघात है, क्योंकि बद्धही शुभदेवगतिके प्रायोग्य कर्मोंका अध्यवसाय विशेषसे प्रतिघात होता है, कहा भी है-“ दीहकालठिईयाओ ” इत्यादि ।

टीकार्थ-प्रतिघात (विनाश) पांच प्रकारका कहा है—(१) गति प्रतिघातक, (२) स्थिति प्रतिघात, (३) बन्धन प्रतिघात, (४) भोग प्रतिघात अने (५) बलवीर्य पुरुषकार पराक्रम प्रतिघात.

प्रतिहननं नाम प्रतिघ है. तेना अर्थ प्रतिघात थाय है. तेना पांच प्रकार कहा है. गतिनी अपेक्षासे ले विचार करवाभां आवे, तो देवादिगति इय शुभ गतिने ले प्रतिघात (विनाश) है, तेने गतिप्रतिघ कहे है. शुभ देवादि गतिनी प्राप्ति थवानी योग्यता होवा छतां पणु विपरीत कर्म करवाने कारणे तेनी प्राप्ति न थाय, तो ते प्रतिघातने गति प्रतिघात कहे है. लेभके कंडरीकने आ प्रकारने गति प्रतिघात थयो छतो. शुभ देवगतिने योग्य कर्मबन्धन इय स्थितिने ले प्रतिघात है, तेने स्थिति प्रतिघात कहे है, कारणे के बद्ध देवगतिने ओवां कर्मोना अध्यवसाय विशेष द्वारा प्रतिघात थाय है. कथं पणु है है—“ दीहकालठिईयाओ ” इत्यादि.

इति २। तथा-बन्धनप्रतिघः बन्धनं नामकर्मणउत्तरप्रकृतिरूपम् औदारिकादि पञ्चमेदभिन्नम्, इह प्रशस्तस्य प्रक्रमात् प्रशस्तं बन्धनं गृह्यते, तस्य प्रतिघः= प्रतिघातो बन्धनप्रतिघः। बन्धनग्रहणमुपलक्षणम्, तेन तत्सहचरितानां प्रशस्त शरीरतदङ्गोपाङ्गसंहननसंस्थानानामपि प्रतिघातो बोध्य इति ३। तथा-भोग-प्रतिघः-भोगानां-प्रशस्तगत्यादिहेतुकानां प्रतिघः=प्रतिघातः। प्रशस्तगत्यादि रूपहेतुत्वभावे तत्कार्यभूतानां भोगानामप्यभावो बोध्यः। भवति हि कारणाभावे कार्याभाव इति ४। तथा-उत्थानक्रमबलवीर्यपुरुषकारपराक्रमप्रतिघः-तत्र

दीर्घकालकी स्थितिवाली प्रकृतियोंको जो अल्पकालकी स्थितिवाला बनाना होता है, वही स्थितिप्रतिघात है, बन्धन प्रतिघात-नामकर्मकी उत्तरा प्रकृतिरूप यह बन्धन होता है, औदारिक बन्धन आदिके अेदसे यह बन्धनकर्म पांच प्रकारका होता है, प्रशस्तके प्रक्रमसे यहां प्रशस्त-बन्धनही गृहीत हुआ है, इस प्रशस्त बन्धनका जो प्रतिघात है, वह बन्धन प्रतिघ है। यहां बन्धन ग्रहण उपलक्षण है, इससे इसके जो प्रशस्त शरीर प्रशस्त अङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त संहनन और प्रशस्त संस्थान हैं, उनका भी प्रतिघात ग्रहण हुआ समझ लेना चाहिये तथा-प्रशस्त गति आदि हैं, कारण जिन्होंके ऐसे भोगोंका जो प्रतिघात है, वह भोगप्रतिघ है, प्रशस्तगति आदिरूप हेतुके अभावमें इसके कार्य-भूत भोगोंका भी अभाव हो जाता है, क्योंकि कारणके अभावमें कार्यका अभाव होता ही है ४ तथा-उत्थानका क्रमका बलवीर्य पुरुष

दीर्घकालकी स्थितिवाली कर्मप्रकृतियोंके अल्पकालकी स्थितिवाली अनाववाभां आवे छे, तेनुं नाम न स्थिति प्रतिघात छे. बन्धन प्रतिघात-नामकर्मकी उत्तर प्रकृतिरूप ते बन्धन होय छे (औदारिक बन्धन आदिना लेखी ते बन्धन कर्म पांच प्रकारनुं होय छे) प्रशस्तना प्रक्रमकी अपेक्षासे अर्धी प्रशस्त बन्धन न गृहीत थयुं छे. ते प्रशस्त बन्धनने न प्रतिघात छे, तेने बन्धन प्रतिघ (बन्धन प्रतिघात) कडे छे. अर्धी बन्धन अडुल्लु उपलक्षण छे. तेथी अर्धी प्रशस्त शरीर, प्रशस्त अङ्गोपाङ्ग, प्रशस्त संहनन, अने प्रशस्त संस्थान रूप तेनां न अस्ति छे, तेमने प्रतिघात पणु अडुल्लु थये लेख्ये. प्रशस्त गति आदि नेमना कारण छे, अने लोगोने न प्रतिघात छे, तेनुं नाम भोगप्रतिघ छे. प्रशस्त गति आदि रूप हेतु (कारण) ना अभावभां तेना कार्यभूत लोगोने पणु अभाव थयुं नय छे, कारण के कारणने अभाव होय तो कार्यने पणु अभाव न रहे छे. तथा उत्थानने,

ઉત્થાનમ્—ઊર્ધ્વીભવનરૂપકાયચેષ્ટાવિશેષઃ ક્રમઃ—પરિભ્રમણાદિક્રિયા, બલં= શારીરમ્, વીર્યં=જીવજનિતં, પુરુષકારઃ=પૌરુષં, પરાક્રમઃ—વલ્લીર્ચયોર્વ્યાપાર-
ણમ્, તેષાં પ્રતિઘઃ=પ્રતિઘાતઃ, શુભદેવગત્યાદેરભાવે ઉત્થાનક્રમવલ્લીર્ચયપુરુ-
ષકારપરાક્રમાણામપ્યભાવો ભવતીતિ ૫ ॥ સૂ. ૧૯ ॥

ચારિત્રાતિચારવતાં ચ દેવગત્યાદિપ્રતિઘાતો ભવતીતિ ઉત્તરગુણાનાશ્રિત્ય તદ્ભેદાનાહ—

મૂલમ્—પંચવિદ્દે આજીવે પળ્લન્તે, તં જહા—જાઈ આજીવે
૧, કુલાજીવે, ૨, કમ્માજીવે ૩, સિપ્પાજીવે ૪, લિંગાજીવે ૪ ॥
॥ સૂ. ૨૦ ॥

છાયા—પશ્ચવિધ આજીવઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથથા—જાત્યાજીવઃ, ૧ કુલાજીવઃ, ૨
કર્માજીવઃ ૩, શિલ્પાજીવઃ, ૪ ઊક્લા જીવઃ ૫ ॥ સૂ. ૨૦ ॥

ટીકા—‘પંચવિદ્દે’ इत्यादि—

આજીવઃ—આજીવતિ—આશ્રયતિ લબ્ધિપૂજતાહ્યાત્યાદર્થ તપશ્ચર્યાદિકં યઃ
સઃ આજીવઃ—પાલ્ખણ્ડિવિશેષઃ, સ ચ પશ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ । તથથા—પશ્ચવિધત્વં યથા—

પરાક્રમ પ્રતિઘ હૈ, યદે હોનેકા નામ ઉત્થાન હૈ, પરિભ્રમણ આદિ ક્રિયાકા
નામ ક્રમ હૈ, શારીરિક શક્તિકા નામ બલ હૈ, આત્મિક શક્તિકા નામ
વીર્ય હૈ, પુરુષાર્થકા નામ—પૌરુષકા નામ—પુરુષકાર હૈ, ઓર બલ એવં
ધીર્યકો કિસી કાર્યમેં લગાના હસકા નામ પરાક્રમ હૈ, इन सबका भी
શુભદેવગતિ આદિકે અભાવમેં અભાવ હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧૯ ॥

ચારિત્રમેં જો અતિચાર લગાતે હૈ, એસે ચારિત્રાચારવાલે જીવોંકી
દેવગતિ આદિકા પ્રતિઘાત હોતા હૈ, હસવાતકો ચિત્તમેં ધારણ કર અથ
સૂત્રકાર ઉત્તરગુણોંકો લેકર અનેકે ભેદોંકો કહતે હૈ—

કમનો, બલવીર્યનો અને પુરુષકાર પરાક્રમનો જે પ્રતિઘાત છે, તેને ઉત્થાન-
ક્રમ બલવીર્ય પુરુષ પરાક્રમ પ્રતિઘ કહે છે. બિલા થવું તેનું નામ ઉત્થાન છે,
પરિભ્રમણ આદિ ક્રિયાનું નામ ક્રમ છે, શારીરિક શક્તિનું નામ બલ છે,
આત્મિક શક્તિનું નામ વીર્ય છે, પુરુષાર્થ (પૌરુષ) નું નામ પુરુષકાર છે,
તથા બલ અને વીર્યને કોઈ કામમાં લગાડવું તેનું નામ પરાક્રમ છે. આ
બધાનો પણ શુભ દેવગતિ આદિના અભાવમાં અભાવ જ રહે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

જે જીવોના ચારિત્રમાં અતિચાર લાગી જાય છે એવા ચારિત્રાતિચાર-
વાળા જીવોની દેવગતિ આદિનો પ્રતિઘાત થાય છે. આ વાતને ચિત્તમાં

जात्याजीवः—जातिं=क्षत्रियादि जातिष्वजाजीवति-तज्जातीयमात्मानं निर्दिश्य
तेभ्यो भक्तपानादिकं गृह्णातीति जात्याजीवः । आत्मीयां क्षत्रियादिजातिद्युप-
दर्शय जीविकोपार्जक इत्यर्थः १। एवं कुलाजीवादयोऽपि बोध्याः । विशेषस्त्व-
यम्-कुलम्-उग्रादिकं गुरुकुलं वा । कर्म=कृष्यादिकम् । शिल्पं=चित्रादि विज्ञा-
नम् । अथवा-सार्वकालिकं कर्म । कादाचित्कं शिल्पम् ५। लिङ्गम्=ज्ञानादि शून्यानां
रजोहरणमुखवस्त्रिकादिरूपं साधुलिङ्गमिति ॥सू० २०॥

'पंचविहे आजीवे पणत्ते' इत्यादि सूत्र २० ॥

टीकार्थ-जो लब्धि पूज्यता ख्याति आदिके निमित्त तपश्चर्याआदिको
करताहै, वह आजीवहै, यह आजीव पाखण्ड विशेषरूप होताहै, इसके
जात्याजीव १ कुलाजीव २ कर्माजीव ३ शिल्पाजीव ४ और लिङ्गाजीवके
भेदसे ५ होते हैं, जो आजीव अपनी क्षत्रिय आदि जातिका निर्देश
करके अर्थात् मैं क्षत्रियजातिका हूं, ऐसा प्रकट कर जो क्षत्रियादिकोंसे
भोजनादि लेता है, वह जात्याजीव है, यह आजीव अपनी क्षत्रियादि
जातिको कहकर आजीविकाका उपार्जक होता है, इसी तरहसे कुला-
जीवादिकोंके विषयमें भी समझ लेना चाहिये यहाँ कुलसे उग्रादि कुल
या गुरु सम्बन्धी कुलका ग्रहण करना चाहिये कर्मसे कृषी आदिको
शिल्पसे चित्र आदिके विज्ञानको अथवा-सार्वकालिक कर्मको और

धारण करीने छवे सूत्रकार उत्तरगुणोनी अपेक्षाये एवा आरित्रातियारवाणा
ल्लोना लेहोदु' निरूपणु करे छे—“ पंचविहे आजीवे पणत्ते ” इत्यादि—

जेओ लब्धि, पूज्यता, ख्याति आदिनी प्राप्ति निमित्ते तपस्या आदि
करे छे तेमने 'आलव' कहे छे. ते आलव पाण्डि विशेषरूप डाय छे
तेमना पांच प्रकार नीचे प्रमाणे छे—(१) नत्यालव, (२) कुलालव, (३)
कर्मालव, (४) शिल्पालव अने (५) विंगालव.

जे आलव पोतानी नतिने निर्देश करीने अटके छे “ हुं क्षत्रिय
नतिने छु ” अबुं प्रकट करीने क्षत्रियादिकेना धरोमार्थी लोचनादिनी प्राप्ति
करे छे, तेने नत्यालव कहे छे. ते पोतानी क्षत्रिय आदि नति प्रकट करीने
आलविकानुं उपार्जन करतो डाय छे. जे न प्रमाणे कुलालव आदि विषे
पणु समजवुं. अही कुल पद द्वारा उग्रादि कुल अथवा गुरु सम्बन्धी कुल
ग्रहण करवुं लेछे. कर्म पद वडे जेती आदि धंधाओने, शिल्प पद वडे
चित्र आदि कलाओने अथवा सार्वकालिक कर्मने अने विंग पद वडे ज्ञाना-

लिङ्गप्रक्रमात् राज्ञः पञ्चलिङ्गानि प्राह—

मूलम्—पंच रायककुहा पण्णत्ता, तं जहा—खग्गं १, छत्तं २, उप्फेसं ३, उपाणहाओ ४ बालवीयणी ५ ॥ सू० २१ ॥

छाया—पञ्च राजककुदानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—ख १ छत्रम् २, उष्णीपम् ३, उपानहौ ४ बालव्यजनी ५ ॥ सू० २१ ॥

टीका—‘पंच रायककुहा’ इत्यादि । राजककुदानि—राज्ञः ककुदानि=चिह्नानि पञ्च प्रज्ञप्तानि । तद्यथा—तानि यथा—खङ्गं छत्रमित्यादि । तत्र उष्णीपं—मुकुटम् । बालव्यजनी=चामरमिति ॥ सू० २१ ॥

अनन्तरं राज्ञां पञ्च चिह्नान्युक्तानि, तद्भाजश्च ऐक्ष्वाकादयो राजानो भवन्ति, तेषु गृहीतदीक्षः कश्चित् सरागोऽपि सन् सत्त्वाधिक्याद् यानि वस्तून्यालम्ब्य परीपहादीन् सहते तान्याह—

मूलम्—पंचहिं ठाणेहिं छउमत्थे णं उदिण्णे परिसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा खमेज्जा तितिकखेज्जा अहियासेज्जा, तं जहा—उदिण्णकम्ममे खलु अयंपुरिसे उम्मत्तगभूए, तेण मे एस पुरिसे अक्कोसइवा अवहसइवा णिच्छोडेइ वा णिठ्ठंछेइ वा बंधइ वा लिङ्गसे ज्ञानादिसे शुण्योका रजोहरण सदोरक सुखवस्त्रिका आदि रूप साधुलिङ्गको ग्रहण करना चाहिये ॥ सू० २० ॥

लिङ्गके सम्बन्धको लेकर अत्र सूत्रकार राजाके पांच लिङ्गोंका कथन करते हैं—‘पंच रायककुहा पण्णत्ता’ इत्यादि सूत्र २१ ॥

टीकार्थ—राजाके ककुह-चिह्न पांच कहे गये हैं—जैसे—खङ्ग-तलवार, छत्र, उष्णीष-मुकुट, उपानह और बालव्यजन चामर ॥ सू० २१ ॥

द्विती रक्षित मुभवस्त्रिका, रणेहरण आदि ३५ साधुना लिङ्गने (चिह्ने) अक्षय करणुं नेधये. ॥ सू. २० ॥

लिङ्गना संबन्धने अनुसक्षीने इये सूत्रकार राजाना पांच लिङ्गो (चिह्नो) तुं कथन करे छे—“ पंच रायककुहा पण्णत्ता ” इत्यादि.

राजाना नीचे प्रमाणे पांच चिह्न कहे छे—(१) खङ्ग (तलवार) (२) छत्र, (३) मुकुट, (४) उपानह (पगरभां-भोजडीयो) अने (५) बालव्यजन (चामर). ॥ सू. २१ ॥

रुभइ वा छविच्छेयं करेइ वा, पमारं वा नेइ उदवेइ वा वरथं वा
पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा अच्छिंदइ वा विच्छिंदइ
वा भिंदइ वा अवहरइ वा १। अक्खाइट्ठे खलु अयं पुरिसे, तेणं
मे एस पुरिसे अक्कोसइ वा तहेव जाव अवहरइ वा २। ममं च
णं तवभववेयणिजे कम्ममे उदिण्णे भवइ, तेण मे एस पुरिसे
अक्कोसइ वा जाव अवहरइ वा ३। ममं च णं सम्मं असहमा-
णस्स अक्खममाणस्स अतितिक्खमाणस्स अणहियासमाणस्स
किं मन्ने कज्जइ १, एगंतसो मे पावे कम्ममे कज्जइ ४। ममं च णं
सम्मं सहमाणस्स जाव अहियासेमाणस्स किं मन्ने कज्जइ ?,
एगंतसो मे निज्जरा कज्जइ ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं छउ-
मत्थे उदिण्णे परीसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा जाव अहियासेज्जा।
पंचहिं ठाणेहिं केवली उदिण्णे परीसहोवसग्गे सम्मं सहेज्जा
जाव अहियासेज्जा, तं जहा-खित्तच्चित्ते खलु अयं पुरिसे, तेण
मे एस पुरिसे अक्कोसइ वा तहेव जाव अवहरइ वा ?। दित्तच्चित्ते
खलु अयं पुरिसे, तेण मे एस पुरिसे जाव अवहरइ वा २।
जक्खाइट्ठे खलु अयं पुरिसे, तेण मे एस पुरिसे जाव अवहरइ
वा ३। ममं च णं तवभववेयणिजे कम्ममे उदिण्णे भवइ, तेण मे
एस पुरिसे जाव अवहरइ वा ४। ममं च णं सम्मं सहमाणं खममाणं
तितिक्खमाणं अहियासेमाणं पासित्ता बह्वे अण्णे छउमत्था समणा
णिग्गंथा उदिण्णे उदिण्णे परीसहोवसग्गे एवं सम्मं सहिस्संति

जात्र अहियासिस्संति ५। इच्चेएहिं पंचहिं ठाणेहिं केवली
उइण्णे परीसहोवसग्गे सम्भं सहेज्जा जात्र अहियासेज्जा
॥ सू० २२ ॥

छाया—पञ्चभिः स्थानैः छद्मस्थः खलु उदीर्णान् परीपहोपसर्गान् सम्यक्
सहते क्षमते तितिक्षते अध्यास्ते, तद्यथा—उदीर्णकर्मा खलु अयं उन्मत्तकभूतः,
तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति वा अपहरति वा निश्छोटयति वा निर्भर्त्सयति वा
वध्नाति वा खणद्धिवा छविच्छेदं करोति वा प्रमारं वा नयति उपद्रवयति वा
वस्त्रं वा पतद्ग्रहं वा कम्बलं वा पादपोञ्जनं वा आच्छिनन्ति वा विच्छिनन्ति वा
भिन्नन्ति वा अपहरति वा १। यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः
आक्रोशति वा तथैव यावत् अपहरति वा २। मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति
तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति वा यावत् अपहरति वा ३। मम च खलु सम्यक्
असहमानस्य असहमाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य किं मन्ये क्रियते ?
एकान्तशो मया पापं कर्म क्रियते ४। मम च खलु सम्यक् सहमानस्य यावत् अध्या-
सीनस्य किं मन्ये क्रियते ? एकान्तशो मया निर्जरा क्रियते ५। इत्येतैः पञ्चभिः
स्थानैः छद्मस्थ उदीर्णान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते । पञ्चभिः
स्थानैः केवली उदीर्णान् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावदध्यास्ते, तद्यथा—
क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुष आक्रोशति वा तथैव यावत् अप-
हरति वा १। दृप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति वा
२। यक्षाविष्टः खलु अयं पुरुषः, तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति वा ३। मम
च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति, तेन मे एष पुरुषो यावत् अपहरति
वा ४। मां च खलु सम्यक् सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासीनं दृष्ट्वा वह-
वोऽन्ये छद्मस्थाः श्रमणा निर्ग्रन्था उदीर्णान् उदीर्णान् परीपहोपसर्गान् एवं सम्यक्
सहिष्यन्ते यावदध्यासिष्यन्ते ५। इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केवली उदीर्णान् परी-
पहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते ॥ सू० २२ ॥

इन चिह्नोंवाले राजा होते हैं, और ये इक्ष्वाकु आदि कुलोंमें जन्म-
वाले होते हैं, इनमेंसे जिस किसीने दीक्षा गृहीतकी होती है, वह
सराग होता हुआ भी सत्त्व शक्तिकी अधिकतासे जिन वस्तुओंका
अवलम्बन करके परीषह आदिको सहता है, उनका अब सूत्रकार

उपयुक्त विहोवाणा राज्ञो ङाय छे. तेओ धक्वाकु आदि कुणोमां
उत्पन्न धयेला ङाय छे. तेसनाभांथी ने केाधये दीक्षा ग्रहण करी ङाय छे
ते सराग ङोवा छतां पणु सत्त्व शक्तिनी अधिकताने दीधे ने वस्तुओनुं

टीका—‘ पंचहिं ठाणेहिं ’ इत्यादि—

छद्मस्थः—छादयति ज्ञानादिगुणमात्मन इति छद्मः=ज्ञानावरणदर्शनावरणमोह-
नीयान्तरायात्मकं घातिकर्मचतुष्टयं, तत्र तिष्ठतीति छद्मस्थः—सकषाय इत्यर्थः ।
स पञ्चभिः स्थानैः उदीर्णान्=उदयं प्राप्तान् परीषदोपसर्गान् परि=समन्तात्
स्वहेतुभिरुदीरिता मोक्षमार्गाप्रस्वलननिर्जरार्थं साध्यादिभिः सहन्ते ये ते परी-
षदाः=भूतादि जनिताः पीडाः, उपसृज्यन्ते=क्षिप्यन्ते=पात्यन्ते प्राणिनो धर्मा-
दिभ्यो यैस्ते उपसर्गाः=देवादिकृतोपद्रवरूपाः, उभयोर्द्वन्द्वः तान् सम्यक्=कषा-
योदयनिरोधादिना सहते=योधो योधमित्र निर्भीकतयाऽविचलः सन् सहते, क्षमते=
क्षमावलेन सहते, तितिक्षते=अदैन्येन सहते, तथा-अध्यास्ते=परीषदोपसर्गेषु
सम्प्राप्तेषु अधि=आधिक्येन आस्ते=तिष्ठति न तु ततः प्रचलतीति । तथा-

कथन करते हैं—‘पंचहिं ठाणेहिं छउमत्थे णं उदिण्णे’ इत्यादि सूत्र २२॥

टीकार्थ—आत्माके ज्ञानादिक गुणोंका जो छादन-आवरण करे
उसका नाम छद्म है, ऐसा यह छद्म ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोह-
नीय और अन्तराय इन चार घातिया कर्मों रूप होता है, इस छद्ममें
जो रहता है, इस छद्मवाला जो होता है, वह छद्मस्थ है, कषाय सहित
जीव छद्मस्थ होता है । यह छद्मस्थ उदित हुए परीषदों को एवं उप-
सर्गों को अच्छी तरह से सहता है, क्षमा धारण करके सहता है,
दीनता रहित हो करके सहता है । जैसे २ ये आते हैं वैसे २ वह दृढता
के साथ उनका अविचलित भावसे सामना करता है । इसमें ये पाँच
कारण हैं, इनमें पहिला कारण इस प्रकारसे है—

अवलम्बन करीने परीषद आदिने सहन करे छे, ते वस्तुओनुं (ते अव-
लम्बनना कारणेनुं) छे सूत्रकार कथन करे छे—

“ पंच हिं ठाणेहिं छउमत्थे णं उदिण्णे ” इत्यादि—

टीकार्थ—आत्माना ज्ञानादिक गुणोनुं जे छादन(आवरण) करे तेनुं नाम छद्म
छे. ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय अने अन्तराय, आ चार घातिया
कर्मरूप जे ते छद्म छे. आ छद्ममां जे रडे छे—अट्ठे के जे छे. आ
छद्म (आवरण) वाजा छे, तेमने छद्मस्थ कडे छे. कषाययुक्त छे. अने
छद्मस्थ कडेवाय छे. जे परीषदा अने उपसर्गां आवी पडे छे तेमने छद्मस्थ
छे. सारी रीते सहन करे छे, समताभावपूर्वक तेमने सहन करे छे, दीन-
भावने त्याग करीने तेमने सहन करे छे, अने जे जे परीषदा अने उप-
सर्गां आवी पडे तेने अविचलभावे (दृढतापूर्वक) सामने करे छे, अने

તાનિ સ્થાનાનિ યથા-અયં સંમુચ્ચસ્થિતઉપદ્રવઠ્ઠર્તા પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન ઉદીર્ણ-
 કર્મ-ઉદીર્ણમ્=ઉદયાવલિકાયાં પ્રવિષ્ટં કર્મ ચરય સઃ-ઉદિતમિથ્યાત્વમોહનીયા-
 દિકર્મ, ઉન્મત્તકપૂતઃ-ઉન્મત્તકઃ=મદિરાદિના ક્ષિત્તચિત્તઃ સ ઇવ સપ્ત વા ચાસ્તિ;
 નેન દેનુના પ્ત પુરુષો યે=મામ્, સમ્બન્ધમામાન્યે પ'ઠી, આક્રોશતિ=ગાલ્યાદિકં-
 દદાતિ વા=અથવા અપયતિ=ઉપહાસં કરોતિ, નિશ્ચોટયતિ=મમ હસ્તાદિતો
 રક્ત્રાગાદિકં વલાદ્ ચિયોજયતિ વા, નિર્ભર્તસંયતિ=દુર્વચનૈસ્તર્જયતિ વા, વધ્નાતિ=
 રજ્યાદિના વન્નયુક્તં કરોતિ વા, રુગદ્ધિ=કારાગારાદો મમ નિરોધં કરોતિ વા,
 ઠચિન્દેદં-ઉવે=શરીરાવયવસ્ય હસ્તાદેઃ છેદં=કર્ત્તનં કરોતિ વા, પ્રમારં=મૂર્છા-
 દિયેપં સમગ્ન્યાનં વા નપતિ=પાસયતિ વા, ઉપદ્રવયતિ=ઉપદ્રવં કરોતિ વા, તથા-

“ ઉદિષ્ણક્રમ્મે સ્વલુ અયં પુરિસે અમ્મત્તગમ્ભૂર્ ” ઇત્યાદિ—

યતાં ઉદીર્ણ શબ્દ સે જો કર્મ ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હો ગયા હૈ, એવા વહ કર્મ ઉદીર્ણ કહા ગયા હૈ । જિસકા ચિથ્યાત્વ મોહનીયાદિ કર્મ ઉદયાવસ્થાવાલા હો રહા હૈ, ઓર હસીસે જો મદિરાદિકકે સેવન સે નિક્ષિત ચિત્તચાલે કે જેમા વના હૂઆ હૈ । એસા કોઈ પુરુષ ચદિ મેરે નિચે ગાલી આદિ દેતા હૈ, અથવા મેરી હંસી કરતા હૈ, અથવા મેરે હાથ મેં તે વત્ત્ર પાત્ર આદિકો વલાત્કારસે છુડાતાહૈ, યા સુજે દુર્વચનોંસે તર્જિત કરતા હૈ યા રસી આદિસે ચાંધના હૈ યા કારાગાર આદિમેં સુજે વન્દ પાન દેતા હૈ, અથવા મેરે શરીરકે અવયવ રૂપ હસ્ત આદિકા છેદન કરતા હૈ, યા સુજે નૃટ્ટિન કર દેતા હૈ, યા સુજે મરણ સ્થાનપર લે જાકર પટક દેતા હૈ । અથવા—નહીં કરને યોગ્ય ઉપદ્રવ મેરે ઉપગ કરતા હૈ ।

નીચના પાંચ કારણે ને લીધે ણને છે તેમાં પહેલુ કારણ આ પ્રમાણે છે—

“ ઉદિષ્ણક્રમ્મે સ્વલુ અયં પુરિસે અમ્મત્તગમ્ભૂર્ ” ઇત્યાદિ—

અહીં ‘ ઉદીર્ણ ’ પદ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ થઇ ગયેલા કર્મને વલુ, ઉદયામા આવ્યું છે. “ જેનું મિથ્યાત્વ મોહનીય આદિ કર્મ ઉદયાવસ્થામાં પ્રવિષ્ટ થઈ ચુક્યું છે, અને તે કારણે મદિરાનું સેવન કરનાર વ્યક્તિના જેવું જેનું ચિત્ત વિશિષ્ટ થઈ ચુક્યું છે, એવો પુરુષ જો મને ગાળો દે, મારી મનદ ઉડાવે, મારી પાનેથી વચ્ચ, પાત્ર આદિ વસ્તુને પરાણે પડાવી છે, અથવા મારી નામે દુર્વચનોના પ્રયોગ કરે, અને ઠેરઠા આદિ વડે ણાધે, મને ઉચ્ચતર આદિમાં પડી દે, અથવા મારા આદિ શરીરના અવયવને છેદી નાખે, અથવા મને મૂર્છિત કરી નાખે, અથવા મને મરણને શરણ પડેલાંચાડી દે, અથવા ન કરવા યોગ્ય ઉપદ્રવો કરીને મને ઉચ્ચત કરવાનો પ્રયત્ન કરે,

વસ્ત્ર=ચોલપટ્ટાદિકં વા. પતદ્ગ્રહં=યાત્રં વા, કમ્બલં વાં, પાદપ્રોઞ્છનં=પાદપરિમા-
ર્જનાર્થ સાધૂપકરણરૂપં વસ્ત્રખણ્ડં વા આચ્છિનત્તિ=વલાદાદત્તે વા, વિચ્છિનત્તિ=
વિચ્છિન્નં વા કરોતિ, ભિનત્તિ=પાત્રાદિકં સ્ફોટયતિ, વસ્ત્રાદિકં સ્ફાટયતિ વા,

વસ્ત્ર-ચોલપટ્ટક આદિકો પાત્રોં કો કમ્બલ કો એવં પાદપ્રોઞ્છન પૈરોં
કો પોંછને કે લિયે સાધનમૂત સાધુકે ઉપકરણરૂપ વસ્ત્રાખણ્ડકો વલાત્કાર
સે છુડાતા હૈ, ઉન્હેં પાડ દેતા હૈ, યા નષ્ટભ્રષ્ટ કર દેતા હૈ, પાત્રાદિકકો
પોડ ઢાલતા હૈ યા ચુરા લેતા હૈ, તો એસે ઉપસર્ગોં કો ઓર પરીષર્હોં
કો મુજે સમતાભાવ પૂર્વક સહન કરના ચાહિયે । અપને કર્તવ્ય સે હસ
સ્થિતિમેં વિચલિત નહીં હોના ચાહિયે । હસ પ્રકારકી દૃઢ ધારણા સે
જો ઉપસર્ગ ઓર પરીષર્હોં કો સહન કરતા હૈ । એસા વહ સાધુ
ગૃહીત મોક્ષમાર્ગ સે વિચલિત નહીં હોતા હૈ । અંગીકાર કિયે હુએ ધર્મ
માર્ગમેં સ્થિર રહને ઓર કર્મબન્ધનોં કે વિનાશાર્થ જો સ્થિતિ સમભાવ
પૂર્વક સહન કરને યોગ્યહૈ, ઉસે પરીષહ કહતેહેં, એવં દેવાદિકૃત ઉપદ્રવોં
કો ઉપસર્ગ કહતેહેં । તાત્પર્ય કહને કા યહૈ કિ છદ્મસ્થ મોક્ષાભિલાષી
મુનિજનોંકો ઉપસર્ગ એવં પરીષર્હોં કો હસલિયે અચ્છી તરહસે સહન કર-
ના ચાહિયે કિ વે સમજ્ઞદાર પ્રાણિયોં દ્વારા ઉદીરિત નહીં કિયે જાલે હૈં,
કિન્તુ અજ્ઞાની પ્રાણિયોં દ્વારા કિ જો મિથ્યાત્વ મોહનીયાદિ કર્મકે ઉદય

ચોલ પટ્ટક આદિને, પાત્રોને, પાદપ્રોંછન (પગ લૂછવા માટેના સાધુના ઉપ-
કરણુ રૂપ વસ્ત્રખંડ) આદિને બળગ્રમરીથી પડાવી લે છે, તેને ક્ષાડી નામે
છે, નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કરી નામે છે, અથવા પાત્રોને ક્ષાડી નામે છે, મારા ઉપકરણોને
ચોરી બધ, તો મારે એવાં ઉપસર્ગોં અને પરીષદોને સમભાવપૂર્વક સહન
કરવા બેઠએ. તેને કારણે મારે મારા કર્તવ્ય માર્ગમાંથી વિચલિત થવું
બેઠએ નહીં, ” આ પ્રકારના દૃઢ મનોબળપૂર્વક જે સાધુ ઉપસર્ગ અને
પરીષદોને સહન કરે છે, તે સાધુ ગૃહીત મોક્ષમાર્ગથી વિચલિત થતો નથી.
તે તો પોતે અંગીકાર કરેલા ધર્મમાર્ગમાં સ્થિર રહે છે.

કર્મબન્ધનોના વિનાશને માટે જે સ્થિતિ સમભાવપૂર્વક સહન કરવા
યોગ્ય છે, તેને પરીષદ કહે છે અને દેવાદિકૃત ઉપદ્રવોને ઉપસર્ગ કહે છે.
આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે-છદ્મસ્થ મુનિ ઉપસર્ગોં અને પરીષદોને સમ-
ભાવપૂર્વક એ કારણે સહન કરે છે કે તે એવું સમજે કે આ ઉપસર્ગોં અને
પરીષદો સમજ્ઞદાર જીવો દ્વારા ઉત્પન્ન કરાતાં નથી, પણ અજ્ઞાની જીવો

અપહરતિ=ચોરયતિ વા । ઇતિ પ્રથમં સ્થાનમ્ ૧ । તથા-યક્ષાવિષ્ટઃ-યક્ષેણ=દેવવિ-
શેષેણ આવિષ્ટોઽધિષ્ઠિતોઽયં પુરુષઃ, તેન હેતુનાઽયં પુરુષો મે=મામ્ આક્રોશતિ
વેત્યાદિ । અર્થઃ પૂર્વવદ્બોધ્યઃ । ઇતિ દ્વિતીયં સ્થાનમ્ ૨ । તથા-મમ ચ ચલ્લ

કે વશવર્તી હો રહે છે, ઉત્પન્ન ક્રિયે જાતે છે, અતઃ વે રોષ કે
કારણ નહીં છે યહ પ્રથમ કારણ છે ૧ । દ્વિતીય કારણ ઇસ પ્રકારસે છે—

“ યક્ષાવિષ્ટઃ ચલ્લ અયં પુરુષઃ તેન મે ઇષ પુરુષઃ આક્રોશતિ ” ઇત્યાદિ
યહ પુરુષ યક્ષ સે દેવવિશેષ સે અધિષ્ઠિત હો રહા છે, ઇસ કારણ
યહ મેરે પ્રતિ આક્રોશ કર રહા છે, મુઝે ગાલી આદિ દે રહા છે, મેરી
હંસી કર રહા છે, ઇત્યાદિ સબ કથન યહાં પર ખી કહ લેના ચાહિયે ।
અતઃ મુઝે ઇસકે દ્વારા ક્રિયે ઉપદ્રવોં કા યા પરીષર્હોં કો શાન્તિપૂર્વક
અચ્છી તરહ સે સહન કરના ચાહિયે । એસે વિચાર સે અન્હે સહન
કરતા છે, ડસકે પ્રતિ વહ કષાય નહીં કરતા છે, ક્ષમાબલ સે ડનકા
સામના કરતા છે, ડનકે આને પર વહ અપની ડીનતા પ્રકટ નહીં કરતા
છે, પ્રત્યુત ઇક વીર કે સમાન વહ ડનકો સહન કરતા છે, એસા યહ
દ્વિતીય કારણ છે । ઇસ દ્વિતીય કારણ મેં કેવલ યહી પ્રદર્શિત કિયા
ગયા છે । પરીષહાદિ પ્રદાતા અપને સ્વભાવમેં નહીં છે, ક્યોંકિ
વહ કિસી યક્ષકે આવેશ સે આક્રાન્ત હો રહા છે ।

દ્વારા જ ઉત્પન્ન થાય છે. અજ્ઞાની જીવો મિથ્યાત્વ, મોહનીય આદિ કર્મોના
ઉદયના કારણે આ ઉપસર્ગો અને પરીષદો ઉત્પન્ન કરતા હોય છે. તેથી તેઓ
રોષ કરવાને પાત્ર નથી પણ દયા ખાવાને પાત્ર છે.

ખીજું કારણ આ પ્રમાણે છે—“ યક્ષાવિષ્ટઃ ચલ્લ અયં પુરુષઃ તેન મે
ઇષ પુરુષ આક્રોશતિ ” ઇત્યાદિ—તે સાધુના મનમાં એવી વિચારધારા ચાલે
છે કે આ પુરુષ યક્ષ વડે અધિષ્ઠિત થઈ રહ્યો છે, એટલે કે કોઈ યક્ષ તેના
શરીરમાં પ્રવેશ કરીને તેના દ્વારા ઉપસર્ગો કરાવી રહ્યા છે. તે કારણે જ તે
મારા પ્રત્યે ક્રોધ કરી રહ્યો છે, મને ગાળો દઈ રહ્યો છે, મારી મજાક કરી
રહ્યો છે, વગેરે કથન અહીં પણ આગળ મુજબ જ સમજવું. તેથી આ
પ્રકારના પરીષદો અને ઉપસર્ગો મારે શાન્તિપૂર્વક સહન કરવા જોઈએ. આ
પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરાઈને તે તેમને સમભાવપૂર્વક સહન કરે છે અને
ઉપસર્ગ કરનાર પ્રત્યે તે ક્રોધ કરતો નથી, દૈન્યભાવ પ્રકટ કરતો નથી; પરન્તુ
ક્ષમાભાવપૂર્વક એક વીરની જેમ તે પરીષદો અને ઉપસર્ગોનો અડગતાપૂર્વક
સામનો કરે છે. આ ખીજા કારણમાં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે પરીષદ
આદિ ઉત્પન્ન કરનાર વ્યક્તિના શરીરમાં યક્ષનો પ્રવેશ થવાને કારણે તે
પોતાના મૂળ સ્વભાવને શુભાવી ઝેડી હોય છે.

तद्भववेदनीयं—तेन भवेन=मानुष्यकेण जन्मना वेद्यते=अनुभूयते यत्तत् कर्म=पूर्वो-
पार्जितं कर्म उदीर्णम्=उदयावलिं प्रविष्टं भवति, तेन हेतुना अयं पुरुषो मे
आक्रोशतीत्यादि । इति तृतीयं स्थानम् । एतत्पुरुषकृताक्रोशनादिकम् सम्यक्
असहमानस्य अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य च मम खलु, 'मन्ये'

तृतीय कारण—मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति तेन
मे " इत्यादि—ऐसा है कि परीषहादि सहन करनेवाला साधक ऐसा
विचारता है कि—मैंने पूर्वजन्ममें ऐसे ही कर्म किये हैं कि जिनका वेदन
मुझे इस प्राप्त मनुष्य भवमें करना योग्य है । अतः वही कर्म मेरे इस
समय उदयमें आ रहा है, इस कारण यह पुरुष मुझे गाली आदि दे
रहा है, मेरी हंसी आदि कर रहा है । ऐसा विचार कर वह परीषह
और उपसर्गों को सहन करता है ।

चौथा कारण इस प्रकार है—“ मम च खलु सम्यक् असहमानस्य
अक्षममाणस्य अतितिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य ” इत्यादि—वह मोक्षा-
भिलाषि साधु उपसर्गादिकके आने पर ऐसा विचार करता है कि मैं यदि
इन पुरुष कृत आक्रोश आदिकोंको जो अच्छे प्रकार से नहीं सहता
हूँ, क्षमा धारण नहीं करता हूँ, दीनता प्रदर्शित करता हूँ और अपने
कर्तव्य पथसे विचलित होता हूँ तो मुझे एकान्ततः पाप का उपार्जन

त्रीण्युं कारण—“ मम च खलु तद्भववेदनीयं कर्म उदीर्णं भवति तेन मे ”
इत्यादि—उपसर्ग आदि सहन करने के साधक जेवो विचार करे छे के
“ मे' पूर्वजन्ममां जेवां कर्मो कर्मां छे के जेमनु' वेदन भारे आ प्राप्त मनुष्य
लवमां करवा योग्य छे. भारा ते कर्मो आ लवमां आ समये उदयमां आवी
रह्यां छे. तेथी ज आ पुरुष भने गाणे आदि दृष्ट रह्यो छे अने भारी मन्क
उडावी रह्यो छे. ” आ प्रभाणु विचार करीने ते परीषडा अने उपसर्गोने
सहन करी ले छे.

चौथुं कारण—“ मम च खलु सम्यक् असहमानस्य अक्षममाणस्य अति-
तिक्षमाणस्य अनध्यासीनस्य ” इत्यादि—उपसर्ग आदि सहन करवानो प्रसंग
आवे त्यारे ते साधक साधु जेवो विचार करे छे के “ जे हुं आ व्यक्ति
द्वारा प्रकट कराते क्रोध आदि समतापूर्वक सहन नहीं करे, क्षमा धारण
नहीं करे, दीनता प्रकट करीश अने भारा कर्तव्यमागेथी खलायमान थधशि,
तो भारे एकान्ततः पापनुं उपाजन करवुं पडशे. ” अही “ मन्ये ” आ

इति निपातो वितर्के, किं क्रियते=सम्यद्यते ?, इत्थं वितर्कणार्था विनिश्चयार्थमाह—
 एकान्तशः=निश्चयेन मया पापं कर्मक्रियते=उपाज्यते । इति चतुर्थं स्थानम् ४।
 पूर्ववैपरीत्येनाह—एतत्पुरुषकृताक्रोशनादिकं सम्यक् सहमानस्य क्षममाणस्य तिति
 क्षमाणस्य अध्यासीनस्य च मम—मया खलु मन्ये किं क्रियते ?, एकान्तशो मया
 निर्जरा क्रियते—मम निर्जरा भवतीत्यर्थः । इति पञ्चमं स्थानम् ५। इत्येतैः पञ्चभिः
 स्थानैः छद्मस्थ उदीर्णान् परीषदोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते इति
 निगमनम् । सम्प्रति केवली तीर्थकरगणधरादिः यैः स्थानैः उदीर्णान् परीषदोप-
 सर्गान् सम्यक् सहते यावदध्यास्ते तानि पञ्च स्थानानि प्राह—तद्यथा—क्षिप्तचित्तः=

होगा । यहां “ मन्ये ” यह वितर्क में निपात है, ऐसे विचार से भी
 वह आगत परीषदादिकों को अच्छी तरहसे सहता है ।

पांचवां कारण ऐसा है—“ मम च खलु सम्यक् सहमानस्य यावत्
 अध्यासीनस्य ” इत्यादि—वह पुरुष ऐसा विचारता है कि यदि मैं इन
 पुरुषों आदि द्वारा कुन उपसर्ग आदिकों को अच्छी तरह से
 सहन कर लेता हूं, यावत् अपने कर्तव्य कर्म से विचलित नहीं होता
 हूं, अविचलित बना रहता हूं, तो यह बात निश्चित है कि मेरे कर्मों
 की एकान्ततः निर्जरा होगी । इस प्रकारके ये पांच स्थान हैं, इन पांच
 कारणों को लेकर छद्मस्थ संघत उदीर्ण परीषह और उपसर्गों को सम्यक्
 प्रकार सहन करता है, यावत् उनसे अपने गृहीत मार्गसे विचलित
 नहीं होता है ।

अब सूत्रकार उन स्थानों को प्रकट करते हैं, कि जिन स्थानों को
 लेकर तीर्थकर और गणधर आदि उदीर्ण परीषहों को और उपसर्गों

પદ આ પ્રકારના વિકર્ક પ્રકટ કરે છે આ પ્રકારના તેના વિકર્કને લીધે પણ
 તે પરીષદો અને ઉપસર્ગોને અડગતાથી સહન કરે છે.

પાંચમું કારણ—“ મમ ચ ખલુ સમ્યક્ સહમાનસ્ય યાવત્ અધ્યાસીનસ્ય ”
 ઇત્યાદિ—તે સાધક સાધુ એવો વિચાર કરે છે કે—“ જો આ પુરુષો આદિ
 દ્વારા ઉત્પન્ન કરાયેલા ઉપસર્ગ આદિને હું સમલાવપૂર્વક સહન કરીશ, મારાં
 કર્તવ્ય માર્ગમાં (સંયમ માર્ગમાં) દૃઢતાપૂર્વક આગળ વધીશ, તો એ વાત
 તો નિશ્ચિત જ છે કે મારાં કર્મોની એકાન્તતઃ નિર્જરા થશે ” આ પ્રકારના
 વિચારથી પ્રેરિત થઈને પણ તે પરીષદો તથા ઉપસર્ગોને સહન કરે છે, દીન-
 ભાવનો ત્યાગ કરીને સમલાવપૂર્વક તેમને સહન કરે છે અને સંયમ પથે
 દૃઢતાપૂર્વક આગળ વધે છે.

જે સ્થાનો (કારણો) ને લીધે તીર્થકરો અને ગણધરો ઉદીર્ણ પરી
 ષદો તથા ઉપસર્ગોને સારી રીતે સહન કરે છે, તે સ્થાનોનું હવે સૂત્રકાર

पुत्रकलत्रादिशोकैः विनष्टचित्तत्वेन उन्मत्त एव एष पुरुषः, तेन एष पुरुषो मे-
आक्रोशतीत्यादि । इति प्रथमं स्थानम् १। तथा-द्वसचित्तः-दृष्टं-दर्पयुक्तम्-अह-
ङ्कारयुक्तं चित्तं यस्य सः, पुत्रजन्मादिना उद्धतचित्ततया उन्मत्त एव एष पुरुषः,
तेन हेतुना एष पुरुषो मे आक्रोशतीत्यादि । इति द्वितीयं स्थानम् २। तृतीयं
चतुर्थं च स्थानद्वयं व्याख्यातप्रायम् । तथा-एतःपुरुषकृताक्रोशनादिकं सम्यक्

को अच्छी तरहसे सहन करते हैं, यावत् अपने मार्ग से विचलित नहीं
होते हैं, ऐसे ये स्थान भी पांच हैं, जो इस प्रकार से हैं—

“ क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति तथैव
अपहरति वा ” उपसर्गादिक के किये जाने पर वे ऐसा विचार
करते हैं—पुत्र कलत्र आदि के शोक से विनष्ट चित्तवाला होने से यह
पुरुष क्षिप्त चित्तवाला हो गया है । अतः यह पुरुष उन्मत्त ही है, इस
कारण यह पुरुष मेरे प्रति आक्रोशादि रूपसे व्यवहार कर रहा है, यह
प्रथम स्थान है ।

द्वितीय स्थान ऐसा है कि “ द्रसचित्तः ” इत्यादि—
यह उपसर्गादि करनेवाला मनुष्य अहङ्कारयुक्त चित्तवाला है, अथवा
पुत्र जन्मादिसे उद्धत चित्तवाला है, इसलिये यह उन्मत्तही है, इन
कारण यह मेरे प्रति उपसर्गादि कर रहा है, तृतीय स्थान इस प्रकारसे
है, परीषहादि सहनेवाले तीर्थंकर आदि ऐसा विचारते हैं, कि मैंने
पूर्वजन्ममें ऐसेही कर्म किये हैं, कि जिनका वेदन मुझे इस प्राप्त मनुष्य

कथन करे छे. ते स्थानो पणु पांच छे. पडेतु कारणु नीचे प्रमाणु छे—

“ क्षिप्तचित्तः खलु अयं पुरुषः तेन मे एष पुरुषः आक्रोशति तथैव
अपहरति वा ” उपसर्गा आदि करवासां आवे त्यारे तेओ ओवे
विचार करे छे के “ पुत्र, पत्नी आदिना शोकने कारणु आ भाणुसनी भुद्धि
बभी गध छे—ते भगव परनेा काणू गुभावी जेठो छे. तेथी ते पुरुष उन्म-
त्त न छे. ते कारणु ते भारी साथे आ प्रकारनेा—आक्रोश करवा इप, गाणो
देवा इप वगेरे व्यवहार करी रह्यो छे. ”

णीणु' कारणु—“ द्रसचित्तः ” इत्यादि. तेओ विचार करे छे के “ आ
उपसर्गा आदि करनार मनुष्य अहंकारयुक्त चित्तवाणो छे. अथवा पुत्र
जन्मादिने कारणु उद्धत चित्तवाणो भनी गयो छे, तेथी ते उन्मत्त न छे.
ते कारणु न ते मने उपसर्गादि द्वारा छेशान करी रह्यो छे. ”

त्रीणु' कारणु—परीषडादि सहन करनार तीर्थंकर अथवा गणुधर ओवे।
विचार करे छे के पूर्वजन्ममां मे' जे कर्मा कर्मा' छे, ते आ लवमां अत्यारे
उदयमां आवी रह्यां छे. तेथी न आ पुरुष मने गाणो दध रह्यो छे, भारी

सहमानं क्षममाणं तितिक्षमाणम् अध्यासीनं च खलु मां दृष्ट्वा अन्येऽपि बहवश्छ-
 षस्थाः भ्रमणा निर्ग्रन्थाः ममानुकरणं कृत्वा भूयो भूय उदयावस्थां प्राप्तान् परी-
 पहोपसर्गान् एवम्=अनेन प्रकारेण—यथा मया ते सह्यन्ते तथैव सहिष्यन्ते यावत्
 अध्यासिष्यन्ते । अयं भावः—साधारणा जना उत्तमानुयायिन एव प्रायो भवन्ति,

भवमें करना योग्य है, अतः वही कर्म मेरे इस समय उदयमें आ रहा
 है, मेरी हँसी आदि कर रहा है, ऐसा विचार कर वह परीपह और
 उपसर्गों को सहन करता है ३।

चौथा कारण इस प्रकारसे है—वह साधु उपसर्गादिकके
 आने पर ऐसा विचार करता है, कि मैं यदि इन पुरुषकृत
 आक्रोश आदिकोंको जो अच्छी तरहसे नहीं सहता हूँ क्षमा
 धारण नहीं करता हूँ दीनता प्रदर्शित करता हूँ और अपने कर्त्तव्य
 पथसे विचलित होता हूँ तो मुझे एकान्ततः; पापका उपार्जन होगा ।
 पाँचवां स्थान ऐसा है, कि वे विचारते हैं, यह पुरुष जो हमारे प्रति
 उपसर्गादि कर रहा है, इन्हे सम्यक् रीतिसे सहन करते हुए क्षमा-
 भावपूर्वक सहन करते हुए दीन भावरहित होकर सहन करते हुए
 एवं अपने मार्गसे विचलित न होकर सहन करते हुए मुझे देखकर
 और भी अन्य अन्य अनेक छद्मस्थजन मेरा अनुकरण करके चार २
 उदयावस्था प्राप्त परीपह और उपसर्गोंको मेरी तरहसेही सहन करेंगे
 यावत् अपने मार्गसे विचलित नहीं होंगे इसका भाव ऐसा है, साधा

डांसी उडाडी रह्यो छे. ” तेथी ते उपसर्गादिकेने ते सहन करे छे.

चोथुं कारण आ प्रमाणे छे—ते उपसर्गादि सहन करनार साधु पोताना
 मनमां जेवो विचार करे छे के “ जे हुं आ पुरुषकृत आक्रोश आदिने
 सारी रीते सहन नहीं करे, क्षमा धारण नहीं करे. दीनता प्रकट करीश,
 अने मारा कर्त्तव्य मार्गमांथी विचलित थयेश, तो मारे जेकान्ततः
 पापनुं उपार्जन थशे. ”

पांचमुं कारण आ प्रमाणे छे—ते जेवो विचार करे छे के “ आ
 पुरुष भने जे परीपहो अने उपसर्गो पडोयाडी रह्यो छे ते उपसर्गो अने
 परीपहोने समभावपूर्वक सहन करवाथी, क्षमाभावपूर्वक सहन करवाथी,
 हैन्यभावना त्यागपूर्वक सहन करवाथी अने संयमना मार्गोथी यथायमान
 थया विना सहन करवाथी, अन्य साधुजोपर पणु सारे दाण्डो जेसशे.
 अन्य अनेक छद्मस्थ साधुजो पणु मार अनुकरण करीने चारंवार उदयावस्थांमां
 आवता परीपहो अने उपसर्गोने मारी जेम जे सहन करशे, धत्यादि समस्त
 पूर्वोक्त कथन अही अहणु थवुं जेथजे. “ तेजो पोताना संयम मार्गोथी

अत एव—उत्तमपुरुषाः प्रतिकर्तुं समर्था अपि नीचकृतपरिपहोपसर्गान् प्रतिकर्तुं नोद्यन्ते । यदि ते प्रतीकारपरायणा भवेयुस्तदा तदनुयायिनोऽप्येवं कुर्युः, ततस्तदनुयायिनोऽनन्तकालं यावत् संसारावर्ते निमज्जेयुः । तेषामुद्धारार्थमेव कृपापरायणाः केवलिनो अज्ञानिकृतापकारान् सहन्ते, तांस्तथा सहमानान् दृष्ट्वा छद्मस्था अपि सहन्ते । उक्तं च—

“ जो उत्तमेहिं मगो, पहओ सो दुकरो न सेसाणं ।

आयरियम्मि जयंते, तयणुचरा केण सीएज्जा ? ॥ १ ॥ ”

छाया—य उत्तमै मर्गिः पहतः स दुष्करो न शेषाणाम् ।

आचार्ये यतमाने तदनुचराः केन सीदेयुः ? ॥ इति ।

रण मनुष्य उत्तमजनोंका प्रायः अनुकरण करनेवाले होते हैं, उत्तम पुरुष यद्यपि प्रतिकार करनेकी शक्तिवाले होते हैं, फिर भी वे नीचजन कृत परीषह और उपसर्गोंका प्रतीकार करनेके लिये उद्यत नहीं होते हैं, यदि वे प्रतिकार करनेमें कटिबद्ध होने लगे तो फिर जो उनके अनुयायीजन हैं वे भी इसी प्रकारसे करने लगे गे तो फिर उनके अनुयायियोंका अनन्त संसार सान्त कैसे हो सकेगा अनन्तकाल तकही वे इस संसाररूपी अंधारमें डूबे रहे गे, अतः इनका उद्धार हो इस अभिप्रायसेही कृपापरायण केवली अज्ञानीजन कृत अपकारोंको सहन करते हैं, और उन्हें सहन करते हुए देखकर छद्मस्थजन भी उन्हें सहन करते हैं । कहा भी है—

“ जो उत्तमेहिं मगो पहओ ” इत्यादि । इस गाथाका पूर्वोक्त

अलायमान नही थाय ” आ कथन पर्यन्तम् समस्त कथन अही अहणु करणुं लेधये. आ कथनने लावार्थं येवे छे के सामान्य मनुष्ये सामान्य रीते उत्तमजनेतुं अनुकरणुं करना छे. उत्तम पुरुषे ले के प्रतिकार करवाने समर्थ छे, छां पणु तेओ नीचे पुरुषे द्वारा कराता परीषडे आने उपसर्गेनि प्रतिकार करवाने प्रयत्न करता नथी. ले तेओ तेमने प्रतिकार करवा आंडे, तो तेमना अनुयायीओ पणु ओ न प्रमाणे करवा लागी नथ. ले तेओ ओ प्रमाणे वर्ता थर्ध नथ, तो तेमने संसार पणु केवी रीते सान्त (अन्तयुक्त) अनी शके । ओणुं करनारने तो अनन्तकाल पर्यन्त संसार इपी वमणमां डूण्डीओ पाधा न करवी पडे. तेथी तेमने उद्धार करवामां आवता अपकारिने सहन करी करे छे, अने तेमने ते सहन करता लेधने छद्मस्थजने पणु तेमने सहन करे छे. कथु पणु छे के—

“ जो उत्तमेहिं मगो पहओ ” इत्यादि—आ गाथाने लाव उपर कथा

इत्येतैः पञ्चभिः स्थानैः केवली उदितात् परीपहोपसर्गान् सम्यक् सहते यावत् अध्यास्ते । इति ॥ सू० २२ ॥

सम्प्रति मिथ्यादृष्टि सम्यग्दृष्टयोरेकैकमाश्रित्य हेतोः पञ्चविधत्वं, छन्नस्थके-
वलिनोः प्रत्येकमाश्रित्य अहेतोश्च पञ्चविधत्वमाह—

मूळम्—पंच हेऊ पणत्ता, तं जहा-हेउं न जाणइ, १ हेउं
ण पासइ, २ हेउं ण बुज्झइ ३, हेउं णाभिगच्छइ ४, हेउं
अन्नाणसरणं सरइ १। पंच हेऊ पणत्ता, तं जहा-हेउणा ण
जाणइ जाव हेउणा अण्णाणसरणं सरइ । पंच हेऊ पणत्ता,
तं जहा-हेउं जाणइ जाव हेउं छउमत्थसरणं सरइ । पंच
हेऊ पणत्ता, तं जहा-हेउणा जाणइ जाव हेउणा छउमत्थ-
सरणं सरइ । पंच अहेऊ पणत्ता, तं जहा-अहेउं ण जाणइ
जाव अहेउं छउमत्थसरणं सरइ । पंच अहेऊ पणत्ता, तं
जहा-अहेउणा न जाणइ जाव अहेउणा छउमत्थसरणं सरइ ।
पंच अहेऊ पणत्ता, तं जहा-अहेउं जाणइ जाव अहेउं केव-
लिमरणं सरइ । अहेउणा जाणइ जाव अहेउणा केवलिसरणं
सरइ । केवलिस्स णं पंच अणुत्तरा पणत्ता, तं जहा-अणुत्तरे

जैसाही भावहै, इस तरहके विचारसे तीर्थ'कर भगवान् उदिता परीपहों
और उपसर्गोंको अच्छी तरहसे सहते हैं, यावत् सहते हुए अपने
मार्गसे विचलित नहीं होते हैं—प्रत्युत इनके आने पर और अधिक
दृढताके साथ अपने गृहीत मार्ग पर अटलही बने रहते हैं ॥ सू० २२ ॥

प्रमाणे ७ छे. आ प्रकारना विचारभी प्रेरित थइने केवली लगवान उदीत
परीपहो अने उपसर्गोनि सारी रीते सहन करे छे, (यावत्) तेज्जा परीपहो
आनी पडे त्थारे चोताना मार्गोथी विचलित थता नथी, परन्तु परीपहो
तथा उपसर्गोनि दृढतापूर्वक सामने करीने चोते थइषु करेला ७ मार्गो
अडगता पूर्वक आगण वधे छे. ॥ सू. २२ ॥

णाणे १, अणुत्तरे दंसणे २, अणुत्तरे चरित्ते, ३ अणुत्तरे तवे ४, अणुत्तरे वीरिए ५ ॥ सू० २३ ॥

छाया—पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—हेतुं न जानाति १, हेतुं न पश्यति २, हेतुं न बुध्यते ३, हेतुं नाभिगच्छति ४, हेतुमज्ञानमरणं म्रियते ५। पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—हेतुना न जानाति, यावत् हेतुना अज्ञानमरणं म्रियते । पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—हेतुं जानाति यावत् हेतुं छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च हेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—हेतुना जानाति यावत् हेतुना छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अहेतुं न जानाति यावत् अहेतुं छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अहेतुना न जानाति यावत् अहेतुना छद्मस्थमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा अहेतुं जानाति यावत् अहेतुं केवलमरणं म्रियते । पञ्च अहेतवः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अहेतुना जानाति यावत् अहेतुना केवलमरणं म्रियते । केवलिनः पञ्च अनुत्तराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—अनुत्तरं ज्ञानम् १, अनुत्तरं दर्शनम् २, अनुत्तरं चारित्रम् ३, अनुत्तरं तपः ४, अनुत्तरं वीर्यम् ५ ॥ सू० २३ ॥

टीका—‘पंच हेऊ’ इत्यादि—

हिनोति=गमयति प्रमेयरूपमर्थ, हीयते=गम्यते प्रमेयरूपोऽर्थोऽग्नेनेति वा हेतुः=प्रमेयस्य अग्न्यादेः कारणं साध्याविनाभूतं धूमादिरूप लिङ्गम्, तत्र वर्तमानाः

अब सूत्रकार मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टिमेंसे एक २ का आश्रय करके हेतुमें पांच प्रकारता और छद्मस्थ एवं केवलीमें से एक २ का आश्रय करके अहेतुमें पांच प्रकारता कहते हैं—

‘पंच हेऊ पणत्ता’ इत्यादि सूत्र २३ ॥

टीकार्थ—हेतु पांच कहे गये हैं, प्रमेयरूप अर्थको जो कहता है, वह हेतु है, अथवा—प्रमेयरूप अर्थ जिसके द्वारा जाना जाता है, वह हेतु है, ऐसा हेतु अपने साध्यके साथ अविनाभाव सम्बन्धवाला होता है, जैसे धूमरूप हेतु अपने साध्य अग्निके साथ अविनाभाव सम्बन्ध-

इसे सूत्रकार मिथ्यादृष्टि अने सम्यग्दृष्टि, अे प्रत्येकना हेतुमां पंच-विधतातुं अने छद्मस्थ अने केवलीना अहेतुमां पणु पंचविधतातुं कथन करे छे. “पंच हेऊ पणत्ता” इत्यादि—

टीकार्थ—हेतु पांच कहा छे. प्रमेय रूप अर्थने जे कहे छे ते हेतु छे. अथवा प्रमेय रूप अर्थ जेना द्वारा ज्ञानी शक्य छे, ते हेतु छे. जेवना हेतु पोताना साध्यनी साथे अविनाभाव संबन्धवाणे होय छे. जेभके धूमरूप हेतु पोताना

પુરુષા અપિ તદુપયોગાનન્યત્વાદ્ હેતવઃ તે ચ પञ्चविधाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-
 हेतुं=धूमादिं न-नञः कुत्सार्थत्वात् असम्यक् जानाति=सम्यक्तया नावबुध्यते ।
 तथा-हेतुं न पश्यति-धूमादिमसम्यक् पश्यति । अत्रापि नञ् कुत्सार्थः । एवमग्रे-
 ऽपिवोध्यम् । हेतुं न बुध्यते=असम्यक् श्रद्धते, बोधेः श्रद्धानपर्यायत्वात् । हेतुं न
 समभिगच्छति=भवनिस्तरणकारणतया न प्राप्नोति । इत्थं मिथ्यादृष्टिमपेक्ष्य
 चतुर्विधो हेतुरुक्तः । अथ तदपेक्षयैव पञ्चमं हेतुमाह-हेतुम्=अध्यवसानादिहेतु
 युक्तत्वाद् हेतुम् अज्ञानमरणं म्रियते=ऋरोति-मिथ्यादृष्टित्वेनासम्यग्ज्ञानत्वादिति

વાલા હોતા હૈ, હસ લિઙ્ગમેં વર્તમાન જો પુરુષ હૈ, વે ખી હેતુકે ઉપયોગસે
 અભિન્ન હોનેકે કારણ હેતુરૂપ હોતે હૈ, યે પાંચ પ્રકારકે હોતે હૈ-જો
 હેતુકો નહીં જાનતા હૈ, અર્થાત્ ધૂમાદિરૂપ હેતુકો જો અસમ્યક્ રૂપસે
 જાનતા હૈ, હેતુકો સમ્યક્ રૂપસે નહીં જાનતા હૈ ૧। તથા જો હેતુકો-
 ધૂમાદિરૂપ લિઙ્ગકો અસમ્યક્રૂપસે દેખતા હૈ, ૨ હસી તરહસે આગે ખી
 સમજ્ઞના ચાહિયે “ હેતું ન બુદ્યતે ” યહાં બુદ્ ધાતુ શ્રદ્ધાનાર્થક હૈ,
 અતઃ જો હેતુ પર સમ્યક્ શ્રદ્ધા નહીં રખતા હૈ, ૩ “ હેતું નાભિગચ્છતિ ”
 ઔર જો હેતુકો “ ભવસે યહ પાર કરાનેવાલા હૈ ” હસ રૂપસે પ્રાપ્ત
 નહીં કરતા હૈ, ૪ હસ પ્રકારસે મિથ્યાદૃષ્ટિકી અપેક્ષાસે યહ ચાર પ્રકાર-
 રકા હેતુ કહા હૈ,

અવ ઉસીકી અપેક્ષા સે પાંચવાં હેતુ હસ પ્રકારસે
 હૈ-“ હેતુમજ્ઞાનમરણં મ્રિયતે ૫ ” અધ્યવસાન આદિ હેતુસે યુક્ત
 હોનેકે કારણ જાં અજ્ઞાનમરણ કરતા હૈ; મિથ્યાદૃષ્ટિ હોનેસે જો સમ્ય-

સાધ્ય અગ્નિની સાથે અવિનાલાવ સંબંધનાળો હોય છે. આ લિંગમાં વર્તમાન
 જે પુરુષો છે તેઓ પણ હેતુના ઉપયોગથી અલિપ્ત હોવાને કારણે હેતુરૂપ
 હોય છે. તે પાંચ પ્રકારના હોય છે—(૧) જે હેતુને જાણતો નથી એટલે કે
 ધૂમાદિ રૂપ હેતુને જે અસમ્યક્ રૂપે જાણે છે-હેતુને સમ્યક્ રૂપે જાણતો
 નથી. (૨) જે હેતુને ધૂમાદિ રૂપ લિંગને અસમ્યક્ રૂપે દેખે છે, એ જ પ્રમાણે
 આગળ પણ સમજવું જોઈએ. (૩) હેતું ન બુદ્યતે અહીં ‘બુદ્’ ધાતુ શ્રદ્ધા-
 થક છે તેથી અહીં આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે-“ જે હેતુ પર સમ્યક્ શ્રદ્ધા રાખતો
 નથી, (૪) હેતું નાભિગચ્છતિ અને જે હેતુને ભવથી પાર કરાવનાર રૂપે
 ગણતો નથી. આ પ્રમાણે મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષાએ ચાર પ્રકારના હેતુઓનું
 કથન કરીને હવે તેની જ અપેક્ષાએ પાંચમો હેતુ પ્રકટ કરવામાં આવે છે—
 “ હેતુમજ્ઞાનમરણં મ્રિયતે ” અધ્યવસાન આદિ હેતુથી યુક્ત હોવાને કારણે
 એટલે કે સમ્યગ્દૃષ્ટિથી રહિત હોવાને કારણે જે અજ્ઞાનાવસ્થામાં જે મૃત્યુ

मिथ्यादृष्टिमपेक्षयैव प्रकारान्तरेण पुनः पञ्च हेतूनाह—हेतवः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—हेतुना=धूमादिना अनुमेयमर्थं न जानाति=सम्यक्कृतया नात्रगच्छति । एवमन्येऽपि चत्वारो भावनीयाः । यो हि हेतुना असम्यग्ज्ञानादिमान् भवति सोऽपि हेतुरेव बोध्य इति ५। अथ सम्यग्दृष्ट्यपेक्षया हेतोः पञ्चविधत्वमाह— हेतवः पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा—हेतुं=धूमादिं जानाति=सम्यग्दृष्टित्वात् विशेषतः सम्यगवगच्छति । हेतुं पश्यति=सामान्यतः सम्यगवगच्छति । हेतु बुध्यते=सम्यक्श्रद्धते । हेतुम् अभिगच्छति=साध्यसिद्धौ व्यापारणात् सम्यक् प्राप्नोति । तथा—हेतुं छद्मस्थमरणं प्रियते—हेतुः—अध्यवसानादिमरणकारणं, तद्योगान्मरणमपि हेतुः, तम्=अध्यवसानादियुक्तं छद्मस्थमरणं प्रियते=करोति । छद्मस्थो हि सम्यग्दृष्टित्वादज्ञानमरणं न करोति, अनुमातृत्वाच्च केवलिमरणं न करोति । इति

ज्ञान रहित होकर अज्ञानमरण अज्ञानावस्थामें मरण करता है, यह पांचवां हेतु है,

अब पुनः मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा करकेही प्रकारान्तरसे पुनः सूत्रकार पांच हेतुओंका कथन करते हैं—जो धूमादिरूप हेतुद्वारा अनुमेयरूप अर्थको अच्छी तरहसे नहीं जानता है १। इसी प्रकारसे चार और भी हेतु जानना चाहिये तथा जो हेतुद्वारा असम्यक् ज्ञानादिवाला होता है, वह भी हेतु ही है, ऐसा यह पांचवां हेतु है। सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा हेतुकी पंच प्रकारता इस प्रकारसे है—जो सम्यग्दृष्टि होनेसे धूमादिरूप हेतुको विशेष रूपसे अच्छी तरह जानता है १, सामान्य रूपसे जो हेतुको अच्छी तरहसे देखता है २, हेतुकी सम्यक् रूपसे श्रद्धा करता है ३, साध्य सिद्धिमें हेतुको अच्छी तरहसे प्रयुक्त करता है ४, ऐसे ये चार स्थान हैं, और अध्यवसान आदिसे युक्त छद्मस्थमरणको जो करता है, क्योंकि छद्मस्थ सम्यग्दृष्टि होनेसे अज्ञानमरण नहीं

पाये छे, आ पांचमेो हेतु छे. डवे सूत्रकार मिथ्यादृष्टिनी अपेक्षाये पांच हेतुओतुं अन्य प्रकारे कथन करे छे—(१) जे धूमादि रूप हेतु द्वारा अनुमेय रूप (अनुमान करवा रूप) अर्थने सारी रीते ज्ञायते नथी जे प्रमाणे अन्य चार हेतुओ पाणु समजवा जेठजे तथा जे हेतु द्वारा असम्यक् ज्ञानादिवाणेो डाय छे ते पणु हेतु जे छे, जेवेो पांचमेो हेतु छे.

सम्यग्दृष्टिनी अपेक्षाये हेतुना पांच प्रकार नीचे प्रमाणे छे—(१) जे सम्यग्दृष्टि डोवाथी धूमादि रूप हेतुने विशेष रूपे—सारी रीते ज्ञाये छे. (२) सामान्य रूपे जे हेतुने सारी रीते डेजे छे. (३) जे हेतुनी सम्यक् रूपे श्रद्धा करे छे, (४) साध्य सिद्धिमां जे हेतुने सारी रीते प्रयुक्त करे छे. (५) अध्यवसान आदिथी युक्त छद्मस्थमरण जे प्राप्त करे छे, कारण डे छद्मस्थ सम्य-

सम्यग्दृष्टीनाश्रित्य पञ्च हेतवो बोध्याः । तानेवाश्रित्य पुनः प्रकारान्तरेण पञ्च हेतूनाह—हेतुना=अनुमानोत्पादकेन धूमादिना लिङ्गेन अनुमेयमर्थं वह्न्यादिकं जानाति=विशेषतः सम्यगवगच्छति । एवं पश्यति, बुध्यते, अभिगच्छति, इति स्थानत्रयमपि बोध्यम् । तथा—अकेवलित्वाद् हेतुना=अध्यवसानादिना छद्मस्थ-मरणं म्रियते इति पञ्चमं स्थानम् ५। इत्थमसम्यग्दृष्टीन् सम्यग्दृष्टींश्चाश्रित्य हेतु-रुक्तः, अथ सम्यग्दृष्टीनाश्रित्य अहेतूनाह—‘ पञ्च अहेतु ’ इत्यादि । अहेतवः—हेतुः=अनुमानोत्पादको धूमादिः, न यत्र नास्ति तादृशो बोधोऽहेतुः प्रत्यक्षबोध इत्यर्थः । तत्रोपयुक्ता अपि अहेतवः, ते पञ्चविधाः गणनाः । तानेवाह—‘अहेतु ’

करता है, तथा अनुमाना होनेसे केवली मरण नहीं करता है, वह पांचवां स्थान है । सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा पुनः प्रकारान्तरसे हेतु इस प्रकारसे भी पांच हैं—जो अनुमानके उत्पादक धूमादिलिङ्गसे वहि आदि-रूप अनुमेय अर्थको विशेषरूपसे अच्छी तरहसे जानता है१, एक वह हेतु है, इसी प्रकारसे जो सामान्यरूपसे जानता है२, अच्छी तरहसे उस पर श्रद्धा करता है३, और साध्यसिद्धिमें उसका अच्छी तरहसे व्यापार उपयोग करता है४, तथा अकेवली होनेसे जो अध्यवसान आदि कारणसे छद्मस्थ मरण करता है४, ऐसे ए चार स्थान हैं, इस तरहसे असम्यग्-दृष्टि और सम्यग्दृष्टिको आश्रित करके ये पांच हेतु कहे गये हैं,

अब सम्यग्दृष्टिको आश्रित करके अहेतु इस प्रकारसे पांच होते हैं—यह कहा जाता है—अनुमानोत्पादक धूमादि हेतु जहां नहीं होता है, ऐसा

गृष्टि होवाथी अज्ञानभरणु प्राप्त करतो नथी तथा अनुमाता (अनुमान कर-नारे) होवाथी केवलभरणु पणु प्राप्त करतो नथी. सम्यग्दृष्टिनी अपेक्षाये सूत्रकार इरी अन्य प्रकारे पांच प्रकारना हेतुनुं कथन करे छे—(१) जे अनुमानना जनक धूमादि लिङ्ग द्वारा अग्नि आदि रूप अनुमेय अर्थने विशेषरूपे जणु छे. (२) जे प्रमाणे सामान्य रूपे जणु छे. (३) सारी रीते तेना प्रत्ये श्रद्धा राणे छे, (४) साध्यसिद्धिमां तेना सारी रीते उपयोग करे छे, तथा (५) ते अकेवली होवाथी अध्यवसाय आदि कारणे छद्मस्थ भरणु प्राप्त करे छे आ रीते असम्यग्-दृष्टि अने सम्यग् दृष्टिने अनुसक्षीने हेतुना पांच स्थानोनुं कथन आडीं पूरु थाय छे हवे सम्यग्दृष्टिने आश्रित करीने ‘पांच अहेतुओनुं’ सूत्रकार कथन करे छे—

अनुमानोत्पादक धूमादि-हेतुओने जूयां सहलाव होतो नथी, जेवा प्रत्यक्ष ज्ञानने आडीं ‘अहेतु’ पद द्वारा अडणु करवासां आवेत्त छे. आ

ઇત્યાદિ । ધૂમાદિકં હેતુમ્ અહેતુમ્ અહેતુભાવેન-પ્રત્યક્ષતયા ન જાનાતિ=ન સર્વથા જાનાતિ, કથંચિદેવજાનાતીતિ ભાવઃ । જ્ઞાતા ચાત્ર અધ્યાદિકેવલિત્વેન અનુમાનાવ્યવહર્તા, અતોઽત્ર નજ્ઞ દેશનિષેધાર્થકો વોધ્યમ્ ઇતિ । એવમ્ અહેતું, ન પશ્યતિ, ન બુદ્ધ્યતે, નાભિગચ્છતીતિ સ્થાનત્રયમપિ વોધ્યમ્ । તથા-અહેતુમ્=આયુષોનિરૂપકમ્તયા અધ્યવસાનાદિ હેતુનિરપેક્ષં છદ્મસ્થમરણં ઝિયતે । અનુમાનાવ્યવહર્ત્ત્વેઽપિ અકેવલિત્વાચ્છદ્મસ્થમરણં વોધ્યમ્ । ઇતિ પશ્ચમં સ્થાનમ્ । સમ્યહટ્ટીનેવાશ્રિત્ય પ્રકારાન્તરેણ પુનરહેતુનાહ-અહેતુના=હેત્વભાવેન ન જાનાતિ=સર્વથા ન જાનાતિ, કથંચિદેવ જાનાતીત્યર્થઃ । યો હિ અહેતુના કથંચિજ્ઞાનાતિ સોઽપિ અહેતુરેવ વોધ્યઃ । એવં ન પશ્યતિ, ન બુદ્ધ્યતે, નાભિગચ્છતીતિ સ્થાનત્રયં વોધ્યમ્ । તથા-અહેતુના=ઉપક્રમાભાવેન છદ્મસ્થમરણં ઝિયતે । ઇતિ પશ્ચમં સ્થાનમ્ ।

વહ પ્રત્યક્ષજ્ઞાન યહાં અહેતુસે લિયા ગયા હૈ, હસ અહેતુમેં જો ઉપયુક્ત હૈ, વે અહેતુ હૈ, હનમેં જો ધૂમાદિરૂપ હેતુકો પ્રત્યક્ષરૂપસે નહીં જાનતા હૈ, અર્થાત્ જો ધૂમાદિરૂપ હેતુકો સર્વથા પ્રત્યક્ષરૂપસે નહીં જાનતા હૈ, કિન્તુ કથશ્રિત્ રૂપસેહી પ્રત્યક્ષરૂપસે જાનતા હૈ, કયોંકિ યહાં અવધિજ્ઞાનવાલા આદિ હોનેસે યા કેવલી હોનેસે જ્ઞાતા અનુમાનસે વ્યવહાર નહીં કરતા હૈ, હસલિયે યહાં અહેતુમેં જો નજ્ઞ હૈ, વહ દેશનિષેધાર્થક હૈ, એસા જાનના ચાહિયે હસી તરહસે “ અહેતું ન પશ્યતિ ન બુદ્ધ્યતે નાભિગચ્છતિ ” યે તીન સ્થાન ભી સમજ્ઞ હેના ચાહિયે “ જાવ અહેતું છદ્મસ્થમરણં મરેહ ” વિના હેતુકે આયુકે નિરૂપકમ્ હોનેસે જો અધ્યવસાન આદિહેતુકી અપેક્ષા વિનાકે-છદ્મસ્થમરણસે મરતાહૈ, વહ પવસ સ્થાન હૈ, યહ અનુમાનસે અવ્યવહર્તા હોને પર ભી અકેવલી હોનેસે

અહેતુમાં જેમ્ને ઉપયુક્ત છે, તેમને અહીં અહેતુ રૂપ કહ્યાં છે.

પહેલું સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—(૧) જે ધૂમાદિ રૂપ હેતુને પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણ્યો નથી એટલે કે જે ધૂમાદિ રૂપ હેતુને સર્વથા પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણ્યો નથી, પણ અમુક અંશે જ તેને પ્રત્યક્ષ રૂપે જાણ્યું છે, કારણ કે અહીં અવધિજ્ઞાન આદિવાળો અથવા કેવલી હોવાથી જ્ઞાતા અનુમાનથી વ્યવહાર કરતો નથી. અહીં અહેતુમાં જે નકાર વાચક ‘અ’ છે, તે દેશનિષેધાર્થક છે એમ સમજવું. એ જ પ્રમાણે આ ત્રણ સ્થાન પણ સમજી લેવા જોઈએ. “ અહેતું ન પશ્યતિ, ન બુદ્ધ્યતે, નાભિગચ્છતિ ” પાંચમું સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે— “ જાવ અહેતું છદ્મસ્થમરણ મરેહ ” આયુનો નિરૂપકમ્ થવાથી જે અધ્યવસાન આદિ હેતુની અપેક્ષા વિનાના છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે, તે અહેતુનું પાંચમું સ્થાન છે. તે અનુમાન વડે અવ્યવહર્તા હોવા છતાં પણ અકેવલી હોવાથી છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે.

અથ કેવલપેક્ષયા પચ્ચાહેતુનાદ-અહેતવઃ પચ્ચ પ્રજ્ઞાતાઃ, તથા-અહેતું જાનાતિ=કેવલિ-
ત્વેન અનુમાનાવ્યવહારિત્વાદ્ ધૂમાદિકમ્ અહેતું=અહેતુભાવેન=પ્રત્યક્ષતયા જાનાતિ ।
ધૂમાદિકમ્ અહેતુભાવેન યો જાનાતિ સોઽપ્યહેતુરેવ । એવમ્ અહેતું પશ્યતિ, અહેતું-
વુદ્ધયતે, અહેતુમ્ અભિગચ્છતિ-ઇતિ સ્થાનત્રયમપિ વોદ્યમ્ । તથા-અહેતુમ્-
ઉપક્રમાભાવાત્ હેતુરહિતં યથાસ્યાત્તથા કેવલિમરણમ્-અનુમાનાવ્યવહારિત્વાત્
કેવલિનો યન્મરણં ત્રિયતે=કરોતિ, ઇતિ પચ્ચમં સ્થાનમ્ । કેવલપેક્ષયૈવ પુનઃ

છદ્મસ્થમરણસે મરતા હૈ, સમ્યગ્દષ્ટિયોંકી અપેક્ષાસે પુનઃ અહેતુકે પાંચ
પ્રકાર ઇસ પ્રકારસે હૈં-“ અહેતુના ન જાણહ જાવ અહેતુના છુડમત્થ-
મરણં મરેહ ” જો હેતુકે અભાવસે અહેતુસે-કથચ્ચિત્ જાનતા હૈ, વહ
મી અહેતુહી હૈ, ઇસી તરહસે “ ન પશ્યતિ ન વુદ્ધયતે નાભિગચ્છતિ ”
ઇન તીન સ્થાનોંકો મી સમજના ચાહિયે, તથા ઉપક્રમકે અભાવસે જો
છદ્મસ્થમરણસે મરતા હૈ, યહ પાંચવાં સ્થાન હૈ, અથ કેવલીકી અપેક્ષાસે
પાંચ અહેતુ પ્રકટ કિયે જાતે હૈં-“ અહેતું જાનાતિ ” જો કેવલી હોને સે
અનુમાનસે વ્યવહાર કરતા નહીં હૈ, વહ ધૂમાદિકકો અહેતુભાવસે
પ્રત્યક્ષરૂપસે જાનતા હૈ, સો વહ મી અહેતુહી હૈ, ઇસી પ્રકારસે “ અહેતું
પશ્યતિ અહેતું વુદ્ધયતે અહેતું અભિગચ્છતિ ” યે તીન સ્થાન મી સમજ
લેના ચાહિયે તથા-“અહેતુના છુડમત્થમરણં મરેહ” જો ઉપક્રમકે અભા-
વસે હેતુરહિત દુણ કેવલી મરણસે મરતા હૈ, અનુમાનસે અવ્યવહાર-
કર્તા હોનેસે કેવલીકા જો મરણ હૈ, ઉસ મરણસે જો મરતા હૈ, વહ

સમ્યગ્દષ્ટિયોંની અપેક્ષાએ અહેતુના પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે પણ
ખતાવ્યા છે-“ અહેતુના ન જાણહ જાવ અહેતુના છુડમત્થમરણં મરેહ ” જે
હેતુના અભાવમાં અહેતુ વડે થોડું થોડું બળે છે, તે પણ અહેતુ જ છે.
એ જ પ્રમાણે “ ન પશ્યતિ, ન વુદ્ધયતે, નાભિગચ્છતિ ” આ ત્રણ સ્થાનોને
પણ સમજ લેવા, તથા ઉપક્રમને અભાવે જે છદ્મસ્થ મરણથી મરે છે તે
પાંચમું સ્થાન છે. હવે કેવલીની અપેક્ષાએ પાંચ અહેતુ પ્રકટ કરવામાં આવે
છે-“ અહેતું જાનામિ ” જેઓ કેવલી હોવાથી અનુમાનથી વ્યવહાર કરતા
નથી. તેઓ ધૂમાદિકને અહેતુ ભાવે પ્રત્યક્ષ રૂપે બળે છે, તે તે પણ અહે-
તુ જ છે. એ જ પ્રમાણે “ અહેતું પશ્યતિ, અહેતું વુદ્ધયતે, અહેતું અભિગચ્છતિ ”
આ ત્રણ સ્થાન પણ સમજ લેવાં જોઈએ તથા “ અહેતુના છુડમત્થમરણં મરેહ ”
જે ઉપક્રમના અભાવે હેતુરહિત થઈને કેવલિમરણથી મરે છે, એટલે કે અનુ-
માન વડે અવ્યવહાર કરતા હોવાથી કેવલીનું જે મરણ છે, તે મરણથી જે
મરે છે, તે અહેતુનું પાંચમું સ્થાન સમજવું.

प्रकारान्तरेण पञ्चाहेतूनाह—अहेतुना=हेत्वभावेन—प्रत्यक्षतया धूमादिकं जानाति सर्वथाऽवेगच्छति । एवम्—अहेतुना पश्यतीत्यादि स्थानचतुष्टयमपि बोध्यमिति । सम्प्रति केवलिनोऽधिकारात् तस्य पञ्चानुत्तराणि प्राह—‘ केवलिस्म णं ’ इत्यादि । केवलिनः स्वल्ब पञ्च अनुत्तराणि—नास्ति उत्तरः=प्रधानो येभ्यस्तानि—सर्वथाऽस्व-रणक्षयात् सर्वोत्कृष्टानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तान्येवाह—अनुत्तरं ज्ञानम्=ज्ञानावरणी-यस्य सर्वथा क्षयात् सर्वोत्कृष्टं ज्ञानम् १। अनुत्तरं दर्शनम्—दर्शनावरणीयस्य सर्व-थोपरमात् सर्वोत्कृष्टं दर्शनम् २। अनुत्तरं चारित्रम् ३, अनुत्तरं तपः ४। एतद्द्वयं मोहस्य सर्वथाऽपगमाद् भवति । तपस्तु चारित्रभेद एव । केवलिनामनुत्तरं तपः

पांचवां स्थान है, पुनः केवलीकी अपेक्षासेही प्रकारान्तरसे पांच अहेतु प्रकट किये जाते हैं, जो अहेतुसे—हेतुके अभावरूपसे धूमादिकी प्रत्यक्ष रूपसे सर्वथा जानता है, वह प्रथम स्थान है, इसी प्रकारसे जो “अहे-तुना पश्यति ” आदि रूप चार स्थान हैं वे भी समझ लेना चाहिये ।

अब सूत्रकार केवलीके जो पांच अनुत्तर होते हैं, उन्हें प्रकट करते हैं, जिनकी अपेक्षा और कोई प्रधान नहीं होता है, अर्थात् जो सर्वो-त्कृष्ट होते हैं, वे अनुत्तर हैं—इनमें सर्वोत्कृष्टता इसलिये कही गई है, कि ये अपने प्रतिपक्षी कर्मके सर्वथा क्षयसे उत्पन्न होते हैं, वे पांच अनुत्तर इस प्रकारसे हैं—अनुत्तर ज्ञान केवलज्ञान—यह ज्ञानावरणीय कर्मके सर्वथा क्षयसे उत्पन्न होता है अनुत्तर चारित्र—और अनु-त्तर तप—ये दोनों मोहनीय कर्मके सर्वथा क्षयसे होते हैं, तप यह

इवे सूत्रकार केवलीकी अपेक्षासे पांच अहेतुनुं अन्य प्रकारे कथन करे छे—वे अहेतु वडे हेतुना अभाव इपे धूमादिने प्रत्यक्ष इपे सर्वथा ज्ञाणे छे, ते प्रथम स्थान छे अे जे प्रभाषे “ अहेतुना पश्यति ” आदि चार स्थान पणु समलु देवां

इवे सूत्रकार केवलीकी पांच अनुत्तरोंने प्रकट करे छे, जेना करतां कोष प्रधान होय नेही अेटवे के जे सर्वोत्कृष्ट होय छे तेने अनुत्तर कहे छे, ते अनुत्तरोंमां सर्वोत्कृष्टता अे कारणे कडेवांमां आवी छे के तेअे पोताना प्रतिपक्षी कर्मोंना सर्वथा क्षयथी उत्पन्न थाय छे, ते पांच अनुत्तर नीचे प्रभाषे छे—(१) अनुत्तर ज्ञान (केवलीज्ञान) ते ज्ञानावरणीय कर्मना सर्वथा क्षयथी उत्पन्न थाय छे (२) अनुत्तर दर्शन—ते दर्शनावरणीय कर्मना सर्वथा क्षयथी उत्पन्न थाय छे, (३) अनुत्तर चारित्र अने (४) अनुत्तर तप—ते अने ते मोहनीय कर्मना क्षयथी उत्पन्न थाय छे, तां चारित्रइय होय छे अने ते

શૈલેશ્યનસ્થાયાં શુક્લધ્યાનભેદસ્વરૂપં વોધ્યમ્ । ધ્યાનમપિ તપ એવ, આશ્યન્તર-
તપોભેદરૂપત્વાદિતિ ધા તથા-અનુત્તરં વીર્યમ્ । એતત્તુ વીર્યાન્તરાયક્ષયાદ્ ભવ-
તીતિ વોધ્યમિતિ ॥ સૂ. ૨૩ ॥

કેવલ્યધિકારાત્ તીર્થકરસમ્બન્ધીનિ ચતુર્દશાવાન્તરસૂત્રાણિ પ્રાહ—

મૂલમ્—પડમ્પહે ણં અરહા પંચચિત્તે હોત્થા, તં જહા-
ચિત્તાર્હિં ચુષ્ ચઙ્ગત્તા ગઠમ્ વકંતે ૧, ચિત્તાર્હિં જાતે ૨, ચિત્તાર્હિં
મુંડે ભવિત્તા અમારાઓ અણમારિયં પદ્મઇષ ૩ ચિત્તાર્હિં અણંતે
અણુત્તરે ણિદ્વાઘાષ ણિરાવરણે કાસિણે પહિપુત્રે કેવલવરનાણ-
દંસણે સમુપ્પન્ને ૪, ચિત્તાર્હિં પરિણિવ્વુષ ૫। પુપ્ફદંતે ણં અરહા
પંચમૂલે હોત્થા, તં જહા-ચૂલેણં ચુષ્ ચઙ્ગત્તા ગઠમ્ વકંતે, એવં
એવ, એવમેણં અભિલાષેણં ઇમાઓ ગાહાઓ અણુગંતદ્વાઓ ।

‘પડમ્પહસ્સ ચિત્તા ૧, શૂલે પુણ હોઙ્ પુપ્ફદંતસ્સ ૨।

પુઠ્ઠાઙ્ આસાઠા, સીયલસ્સુત્તરવિમલસ્સ ભહ્વયા ૪ ॥ ૧ ॥

રેવઙ્ગયા અણંતજિણો ૫, પૂસો ધમ્મસ્સ ૬ સંત્તિણો ભરણી ૭।

કુંથુસ્સ કત્તિયાઓ ૮, અરસ્સ તહ રેવઙ્ગઓ ય ૯ ॥ ૨ ॥

‘મુણિ સુવ્વચસ્સ સવણો ૧૦, અસ્સિણિ ણમિણો ૧૧ ય
નેમિણો ચિત્તા ૧૨ ।

ચારિત્રરૂપ હોતાં હૈ, ઓર યહ શૈલેશી અવસ્થામૈં શુક્લ ધ્યાનકા એક
એદરૂપ કહા ગયા હૈ, ધ્યાન મી તપકાહી એક પ્રકાર હૈ, વયોંકિ યહ
આશ્યન્તર તપકા ભેદ હૈ, અનુત્તર વીર્ય-યહ વીર્યાન્તરાય કર્મકે ક્ષયસે
હોતા હૈ, ઇસ તરહ અનુત્તર જ્ઞાન ૧ અનુત્તર દર્શન ૨ અનુત્તર ચારિત્ર
૩ અનુત્તર તપ ૪ ઓર અનુત્તર વીર્ય ૫ યે કેવલિયોંકે પાંચ અનુત્તર હૈં ॥ સૂ. ૨૩ ॥

શૈલેશી અવસ્થામાં શુક્લધ્યાનના એક ભેદ ૩૫ ઠહુ છે. ધ્યાન પશુ તપનોજ
એક પ્રકાર છે, કારણ કે તે આશ્યન્તર તપનો ભેદ છે. (૫) અનુત્તર વીર્ય-
તે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે કૈવલીઓનાં પાંચ
અનુત્તર આ પ્રમાણે છે. (૧) અનુત્તર જ્ઞાન, (૨) અનુત્તર દર્શન, (૩) અનુ-
ત્તર ચારિત્ર, (૪) અનુત્તર તપ અને (૫) અનુત્તર વીર્ય. ॥ સૂ. ૨૩ ॥

पासस्स विसाहाओ १३, पञ्चयहत्थुत्तरो वीरो १४ ॥ ३ ॥
समणे भगवं महावीरे पंच हत्थुत्तरे होत्था-हत्थुत्तराहिं चुए
चइत्ता गब्भं वक्कंते १, हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए
२, हत्थुत्तराहिं जाए हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता जाव पच्चइए
हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरणाणदंसणे समु-
प्पणे ॥ सू० २४ ॥

॥ इइ पंचमट्टाणस्स पढमो उद्देशओ समत्तो ॥ १ ॥

छाया—पद्मप्रभः खलु अर्हन् पञ्च चित्रोऽभवत्, तद्यथा—चित्रासु च्युतः,
च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः १, चित्रासु जातः २, चित्रासु मुण्डो भूत्वा अगारात् अन-
गारितां प्रव्रजितः ३, चित्रासु अनन्तम् अनुत्तरं निर्व्याघातं निरावरणं कृत्स्नं
प्रतिपूर्णं केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नम् ४, चित्रासु परिनिर्वृतः ५। पुष्पदन्तः
खलु अर्हन् पञ्चमूलोऽभवत्, मूले च्युतः, च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः १, एवमेव, एव-
मेतेन अभिक्वापेन इमा गाथा अनुगन्तव्याः—

पद्मप्रभस्य चित्राः, मूलं पुनर्भवति पुष्पदन्तस्य ।

पूर्वाषाढाः शीतलस्य, उत्तरा त्रिमलस्य भाद्रपदाः ॥ १ ॥

रेवतिका अनन्तजिनस्य, पुष्पो धर्मस्य शान्ते र्भरणी ।

कुन्धोः कृत्तिकाः, अरस्य तथा रेवत्यश्च ॥ २ ॥

गुनि सुव्रतस्य श्रवणा, अश्विनी नमेश्च नेमेश्चित्राः ।

पार्श्वस्य विशाखाः पञ्चक हस्तोत्तरो वीरः ॥ ३ ॥

श्रमणो भगवान् महावीरः पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्—हस्तोत्तरासु च्युतः, च्युत्वा
गर्भं व्युत्क्रान्तः १, हस्तोत्तरासु गर्भाद् गर्भं संहतः २, हस्तोत्तरासु जातः ३,
हस्तोत्तरासु मुण्डो भूत्वा यावत् प्रव्रजितः ४, हस्तोत्तरासु अनन्तम् अनुत्तरं यावत्
केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नम् ५ ॥ सू० २४ ॥

॥ इति पञ्चमस्थानकस्य प्रथमउद्देशकः समाप्तः ॥ १ ॥

अथ सूत्रकार केवलीके अधिकारको लेकर तीर्थङ्कर सन्बन्धी १४
अवान्तर सूत्रोका कथन करते है—

केवलीकोना अधिकार थाकतो छोवाथी हुवे सूत्रकार तीर्थङ्करा संबन्धी
१४ सूत्रोका कथन करे छे—“पञ्चमपदेणं अरहा पंचचित्ते होत्था” इत्यादि—

टीका—‘पउमप्पहे णं’ इत्यादि—

पञ्चममः खलु अर्हन्=पञ्चममनामा पष्ठो जिनः खलु=निश्चयेन पञ्चचित्रः—
पञ्चसु च्यवनादिदिनेषु चित्रा यस्य स तथा अभवत् । तथा—यथाऽभवत्तथाह—
चित्रासु माघकृष्णषष्ठ्यां च्युतः=एकत्रिंशत्सागरोपमस्थितिकात् नवमाद् उपरि-
मोपरिमग्नैवेयकात् अवतीर्णः । च्युत्वा=अवतीर्थं गर्भं व्युत्क्रान्तः कौशाम्बीनगर्यां
राज्ञो धरस्य भार्यायाः सुसीमादेव्याः कृक्षी व्युत्क्रान्तः=समागतः १। चित्रासु
कार्तिककृष्णद्वादश्यां जातः=जन्म गृहीतवान् २। चित्रासु कार्तिकशुक्लत्रयोदश्यां
मुण्डो भूत्वा=द्रव्यतः केशापेक्षया, भावतः कषायाद्यपेक्षया च मुण्डितो भूत्वा
अगारात्=प्रासादादिरूपद्रव्यगृहात् सूच्छादिरूपभावगृहाच्च निष्क्रम्य अनगा-

‘पउमप्पहे णं अरहा पंचचित्ते होत्था’ इत्यादि सूत्र २४ ॥

टीकार्थ—पञ्चमसु जिनेन्द्र जो कि द्वादशे तीर्थंकर है, वे च्यवनादि
दिनोंमें पांच चित्रा नक्षत्रवाले हुए हैं, जैसे वे चित्रा नक्षत्रमें माघ
कृष्णषष्ठी तिथिमें २१ सागरोपमकी स्थितिवाले नवम ग्रैवेयकमें अव-
तीर्ण हुए हैं, और अवतीर्ण होकर वे कौशाम्बी नगरीमें राजा धरकी
धर्मपत्नी सुषमादेवीकी कुक्षिमें गर्भरूपसे उत्पन्न हुए हैं १ चित्रा-
नक्षत्रमेंही कार्तिक शुक्ल १३ के दिन इनका जन्म हुआ है २ कार्तिक
शुक्ल त्रयोदशीके दिनही इन्होंने मुंडित होकर अगारावस्थासे अन-
गारावस्था धारणकी है, केशोंका उपाडना ये द्रव्यकी अपेक्षा मुंडित
होना है, और कषायादिसे रहित होना यह भावकी अपेक्षा मुंडित
होना है, प्रासादादि रूप द्रव्य गृहसे छूटना यह गृहसे निष्क्रमण है,
और सूच्छादिरूप भावगृहसे छूटना यह भावगृहसे निष्क्रमण है,

छट्ठा तीर्थंकर पञ्चमसु जिनेन्द्र थल गया. तेजो च्यवनादि दिनेमां
पांच चित्रा नक्षत्रवाणा तथा छे. आ वातुं स्पष्टीकरण नीचे प्रमाणे समजुं.
(१) चित्रा नक्षत्रमां मडा वरी छट्ठी तिथिमे तेजो ३१ सागरोपमनी
स्थितिवाणा नवमां ग्रैवेयकमांथी अटले के उपरिमोपरिम ग्रैवेयकमांथी च्यवीने
कौशाम्बी नगरीमां राजा धरनी धर्मपत्नी सुषमादेवीनी कुक्षिमां गर्भं इये
उत्पन्न तथा डता (२) चित्रा नक्षत्रमां ७ कार्तिक शुद्ध १३ ने दिवसे तेमने
जन्म थये डतो (३) चित्रा नक्षत्रमां ७ कार्तिक शुद्ध १३ ने दिवसे तेमणे
मुंडित थधने अगारावस्थाना परित्यागपूर्वक अणुगारावस्था धारण करी डती.
केशोना द्रव्यनने द्रव्यनी अपेक्षाये मुंडन छडेवाय छे अने कषायेथी रडित
थवुं तेनुं नाम लावनी अपेक्षाये मुंडन छे. प्रासाद आदि इप द्रव्यधरने
त्याग करवे तेनुं नाम द्रव्यगृहमांथी निष्क्रमण छे अने सूच्छादि इप लाव-
गृहमांथी छूटवुं तेनुं नाम लावगृहमांथी निष्क्रमण छे.

रिताम्=अनगारभावं-श्रमणत्वं प्रव्रजितः=प्राप्तः ३। चित्रामु चैत्रपौर्णमास्यां तस्य अनन्तम्-अनन्तपर्यायत्वात्, अनुत्तरं-सकलज्ञानप्राधान्यात्, निर्व्याघातम्-अप्रतिपातित्वेन व्याघातरहितत्वात्, निरावरणम्-सर्वथा स्वावरणक्षयात् कटकुड्या-घावरणाभावाद्वा, कृत्स्नम् सकलपदार्थविषयत्वात्, परिपूर्णं-स्वावयवापेक्षया पौर्णमासीचन्द्रदक्षमण्डलत्वात्, अनन्तादिपरिपूर्णान्तविशेषणविशिष्टं किम् इत्याह-केवलज्ञानदर्शनम्-केवलं-ज्ञानान्तरसाहाय्यानपेक्षत्वात् संशुद्धत्वाद्वा, अतएव-

चित्रानक्षत्रमेंही चैत्र पौर्णमासीके दिन इन्होंने केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त किया है, यह केवलज्ञान केवलदर्शन अनन्तपर्यायको विषय करनेवाला होनेसे अनन्त होता है, सकल ज्ञानोंमें प्रधान होनेसे अनुत्तर होता है, अप्रतिपाती होनेसे निर्व्याघान होता है, अपने प्रतिपक्षी कर्मके सर्वथा विनाश होनेसे निरावरण होता है, अथवा कट चटाई कुड्यादि (दिवाल) रूप आवरणसे इसका प्रतिघात नहीं होता है, रूपी अरूपी समस्त पदार्थोंको और समस्त उनकी पर्यायोंको यह विषय करनेवाला होता है, इसलिये कृत्स्न होता है, पौर्णमासीका चन्द्रमण्डल जिस प्रकार अपने अवयवोंसे परिपूर्ण होता है, उसी प्रकार से यह भी अपने अवयवोंसे परिपूर्ण होता है। केवल इसलिये कहा गया है, कि यह अपने विषयको जाननेके लिये अन्य ज्ञानोंकी सहायतावाला नहीं होता है, अथवा अत्यन्त शुद्ध होता है, अतएव अन्य ज्ञानोंकी अपेक्षा

(४) चित्रा नक्षत्रमां च चैत्री पूनमने द्विवसे च तेमणु केवणज्ञान अने केवणदर्शननी प्राप्ति करी हुती। ते केवणज्ञान अने केवणदर्शन अनन्त पर्यायने विषय करनाइ-तेमनुं प्रतिपादन करनाइ डोवाथी अनन्त डोय छे ते सकल ज्ञानोमां श्रेष्ठ डोवाथी अनुत्तर डोय छे ते अप्रतिघाती डोवाथी निर्व्याघात डोय छे। पोताना प्रतिपक्षी कर्मनो सर्वथा विनाश थछ च्वाथी ते निरावरणु डोय छे। ओउसे के चट्टाछ, दीवाल आदि आवरणुथी तेनो प्रतिघात थतो नथी। रूपी अरूपी समस्त पदार्थोने अने तेमनी समस्त पर्यायोने ते विषय करनाइ डोय छे, तेथी ते कृत्स्न डोय छे। पूनमनो चन्द्र जेम सोणे कला-ओथी परिपूर्णु डोय छे-समस्त अवयवोथी परिपूर्णु डोय छे, तेम आ ज्ञान पथु पोताना समस्त अवयवोथी परिपूर्णु डोय छे तेने केवण विशेषणु लगाउवानुं कारणु अे छे के ते पोताना विषयने जाशुवा भाटे अन्य ज्ञानोनी सहायतानी अपेक्षा राभनु नथी। अथवा अत्यन्त शुद्ध डोवाने कारणु तेने

वरं=श्रेष्ठं-प्रधानम्, ज्ञानं च-विशेषावभासम्, दर्शनं च-सामान्यावभासम्, ज्ञानदर्शनयोर्द्वन्द्वे केवलवरशब्देन सह कर्मधारयो बोध्यः । एतादृशविशेषणविशिष्टं केवलवरज्ञानदर्शनं समुत्पन्नं=जातम् । तथा-चित्रासु मार्गशीर्षकृष्णैकादश्यां परिनिवृत्तः=निर्वाणं प्राप्तः ५ ॥ १ ॥ तथा-पुष्पदन्तः खलु नवमः अर्हन् पञ्चमूलः-पञ्चसु च्यवनादिदिनेषु मूल=मूलनक्षत्रं यस्य स तथा अभवत् । तद्यथा-यथाऽभवत्तथाह-मूलनक्षत्रे फाल्गुनकृष्णनवम्याम् एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकात् आननकल्पात् च्युतः, च्युत्वा गर्भं व्युत्क्रान्तः=काकन्दी नगरीं राज्ञः सुग्रीवस्य भार्याया रामादेव्याः कुक्षीं समागतः १, एवमेव=अनेन प्रकारेणैव जन्मादिकमपि योजनीयम् । अर्थात्-मूलनक्षत्रे मार्गशीर्षकृष्णपञ्चम्यां जातः २, मूलनक्षत्रे मार्ग-

यह श्रेष्ठ प्रधान कहा गया है, और विशेषको यह विषय करता है, इसलिये ज्ञानरूप कहा गया है, इसी प्रकारका केवलदर्शन भी होता है, केवलदर्शन पदार्थोंको सामान्य रूपसे विषय करता है । ज्ञानदर्शनमें द्वन्द्व समास करके फिर केवलवर शब्दके साथ उनका कर्मधारय समास कर देना चाहिये । तथा चित्रा नक्षत्रमेंही मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी एकादशीके दिन उन्होंने मुक्ति प्राप्तकी है, तथा पुष्पदन्त नवम्यां सुविधिनाथ तीर्थंकर, जिन मूल नक्षत्रमें फाल्गुन कृष्ण के दिन १९ सागरकी स्थितिवाले आननकल्पसे (नववें देवलोकमें) च्यवे हैं-गर्भमें आये हैं, काकन्दी नगरीमें राजा सुग्रीवकी भार्या रामादेवीकी कुक्षिमें अवतीर्ण हुए हैं, मूलनक्षत्रमेंही वे मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी पंचमीके दिन उत्पन्न हुए हैं, मूलनक्षत्रमेंही वे मार्गशीर्ष कृष्णपक्षकी

अन्य ज्ञानो करतां श्रेष्ठ कथं छे, अने विशेषतुं ते प्रतिपादन करे छे, तेथी तेने ज्ञानं कथ्यु छे. अे न प्रकारतुं केवलदर्शन पश्यु छेय छे. केवलदर्शन पदार्थतुं सामान्य रूपे प्रतिपादन करे छे. ज्ञानदर्शनमां द्वन्द्व समास करीने केवल वर शब्दनी साथे तेभने कर्मधारय समास करवेो लेछये.

(५) चित्रा नक्षत्रमां न भागशर वही ११ ने दिने तेभण्णु मुक्ति प्राप्त करी छती.

छवे सूत्रकार अे प्रकट करे छे के पुष्पदन्त जिनेश्वरता लुपनवा पांच भुष्य प्रसंगो मूल नक्षत्रमां न गन्या छता.

(१) तेअो मूल नक्षत्रमां शगणु वही ६ ने दिने १६ सागरोपमनी स्थितिवाणा आणुत कल्पमांथी रचवीने, काकन्दी नगरीना राजा सुग्रीवनी रामादेवी नाभनी राणीना गर्भमां गर्भरूपे उत्पन्न थया छता. (२) मूल नक्षत्रमां न भागशर वही पांचमे तेभने जन्म थयेो छते. (३) मूल नक्षत्रमां न भागशर

शीर्ष-कृष्णपठ्यां मुण्डो भूत्वा अगारात् अनगारितां प्रव्रजितः ३, तथा-मूल-
नक्षत्रे कार्तिकशुक्लतृतीयायां तस्य अनन्तादि विशेषणविशिष्ट केवलवरज्ञानदर्शनं
सप्तपद्मम् ४, तथा च मूलनक्षत्रे भाद्रपद शुक्लनवम्याम्, परिनिर्घृतः ५। एवम्=
अनया रीत्या एतेनैव अभिलापेन=सूत्रपाठेन इमाः=दक्षयणागारितस्यो गाथा अनु-
गन्तव्याः=अभ्युह्याः । ता एव गाथाः प्राह-‘ पउमप्पभस्स ’ इत्यादि । पद्मप्रभस्य
च्यवनादिपञ्चकल्याणकनक्षत्रं चित्रानक्षत्रं भवति । पुनः=तथा पुष्पदन्तस्य मूलं
नक्षत्रं भवति । शीतलस्य दशमतीर्थकरस्य पूर्वाषाढा भवन्ति । स हि भगवान्
विंशतिसागरोपमस्थितिकात् प्राणतकल्पात् पूर्वाषाढासु वैशाखकृष्णपठ्यां
च्युतः, च्युत्वा अद्विलपुरे राज्ञो दृढरथस्य भार्याया नन्दाया देव्या गर्भे व्युत्क्रान्तः

पृष्ठीके दिन मुंडित होकर अगारावस्थासे अनगारावस्थावाले हुए हैं ।
मूलनक्षत्रमेंही उन्होंने कार्तिक शुक्ल तृतीयाके दिन अनन्तादि विशेष-
णोंवाले केवल वरज्ञानको केवल वर दर्शनको प्राप्त किया है, और
मूलनक्षत्रमेंही उन्होंने भाद्रपदकी शुक्ल नवमीके दिन निर्वाणपद पाया
है, इसी रीतिसे इसी अभिलापसे-सूत्रपाठसे-ये तीन गाथाएँ कही
गई हैं, जिनका भाव ऐसा है-कि पद्मप्रभ स्वामीके गर्भ, जन्म, तप
केवल और निर्वाण ये पांचों कल्याणक चित्रा नक्षत्रमेंही हुए हैं, पुष्प-
दन्तके पांचों कल्याणक मूलनक्षत्रमेंही हुए हैं । दशवे शीतलनाथ भग-
वान्ने गर्भ जन्म आदि पांचो कल्याणक पूर्वाषाढा नक्षत्रमें हुए हैं,
शीतलनाथ भगवान् २० सागरोपमकी स्थितिवाले प्राणतकल्पसे पूर्वा-
षाढा नक्षत्रमें चव कर वे अद्विलपुरमें राजा दृढरथकी भार्या नन्दा-

वती ६ ने दिने अगारावस्थानो परित्याग करीने तेमणे मुंडित थउने अणु-
गारावस्था धारणु करी उनी (४) मूल नक्षत्रमां ७ कार्तिक शुद्ध त्रीजेने दिने
तेमणे अनंत आदि विशेषणवाणां केवलवरज्ञान अने केवलवरदर्शन प्राप्त
भ्यां उतां. (५) मूल नक्षत्रमां ७ भाद्रपदा शुद्ध ६ ने दिने तेमणे निर्वाणु
प्राप्त कयुं उतुं. आ प्रकारता लावार्थवाणी तणु गाथाओ कडेवामां आवी छे.
ते गाथाओने लावार्थ ओवे छे के पद्मप्रभ स्वामीना गर्भावतरणु, जन्म,
प्रव्रज्या, केवलज्ञान अने निर्वाणु आ पांचे कल्याणुके मूल नक्षत्रमां ७ तथा
उतां. पुष्पदन्त जिनेश्वरना ओ पांचे कल्याणुके मूल नक्षत्रमां ७ तथा उतां.

दशमां शीतलनाथ जिनेश्वरना गर्भावतरणु, जन्म आदि पांचे कल्या-
णुके पूर्वाषाढा नक्षत्रमां थयां उतां. तेओ २० सागरोपमनी स्थितिवाणा
प्राप्त कल्पमांथी ज्यवीने अद्विलपुरना राजा दृढरथनी राणी नन्दादेवीना

१, तथा पूर्वाषाढासु माघकृष्ण द्वादश्यामुत्पन्नः २, तस्मिन्नेव नक्षत्रे तत्रैव मासे तिथौ च माघकृष्णद्वादश्यामेव निष्क्रान्तः ३, तस्मिन्नेव नक्षत्रे पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञानं प्राप्तः ४, तस्मिन्नेव नक्षत्रे च वैशाखकृष्णद्वितीयायां निवृत्तः ५। तथा—विमलस्य त्रयोदशतीर्थकरस्य च्यवनादि—पञ्चकल्याणकनक्षत्रम् उत्तराभाद्रपदाः । अनन्तजिनस्य चतुर्दशतीर्थकरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकनक्षत्रं रेवती भवति । धर्मनाथस्य पञ्चकल्याणकनक्षत्रं पुष्यः । शान्तिनाथस्य भरणी । कुन्धुनाथस्य कृत्तिकाः । अरनाथस्य रेवत्यः । सुव्रतनाथस्य श्रवणः । नमिनाथस्य

देवीके गर्भमें आये पूर्वाषाढा नक्षत्रमेंही वे माघकृष्ण द्वादशीके दिन उत्पन्न हुए उसी नक्षत्रमें वे माघकृष्ण द्वादशीके दिनही दीक्षित हुए उसी नक्षत्रमें पौषकृष्ण चतुर्दशीके दिनही उन्होंने केवलवरज्ञान-दर्शन प्राप्त किये और उसी नक्षत्रमेंही उन्होंने निर्वाणपद वैशाख कृष्ण द्वितीयाके दिन प्राप्त किया है । तथा १३ वे तीर्थकर विमलनाथ भगवान्के पाँचों कल्याणकमें उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र था तथा १४ वे तीर्थकर अनन्त जिनके भी पाँचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, धर्मनाथ के भी पाँचों कल्याणक पुष्य नक्षत्र में हुए हैं शान्तिनाथके पाँचों कल्याणक भरणी नक्षत्रमें हुए हैं । कुन्धुनाथके पाँचों कल्याणक कृत्तिका नक्षत्रमें हुए हैं, अरनाथ भगवान्के पाँचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, सुव्रतनाथ भगवान्के पाँचों कल्याणक श्रवण नक्षत्रमें हुए हैं, नमिनाथ भगवान्के पाँचों कल्याणक अश्विनी नक्षत्रमें

गर्भमां पूरुषाढा नक्षत्रमां ज उत्पन्न तथा उता. जे ज नक्षत्रमां मडा वदी पारशे तेमने जन्म थये उने. जे ज नक्षत्रमां मडा वदी पारशे तेमले प्रवन्था अंगीकार करी उती. जे ज नक्षत्रमां पोष वदी यौदशे तेमले केवल-वर ज्ञानदर्शन प्राप्त कर्यां उतां. अने जे ज नक्षत्रमां वैशाख वद णीरे तेजे निर्वाण पाभ्यां उतां.

१३ मां तीर्थकर विमलनाथ भगवानना पांचे उदयाणुके उत्तराभाद्र पदानक्षत्रमां ज थयां उतां. १४ मां तीर्थकर अनन्त जिनेश्वरना पांचे उदयाणुके रेवती नक्षत्रमां थयां उतां. धर्मनाथ जिनेश्वरना पांचे उदयाणुके पुष्य नक्षत्रमां थयां उतां. शान्तिनाथ भगवानना पांचे उदयाणुके भरणी नक्षत्रमां थयां उतां. अरनाथ भगवानना पांचे उदयाणुके रेवती नक्षत्रमां थयां उतां. सुव्रतनाथ भगवानना पांचे उदयाणुके श्रवण नक्षत्रमां थयां उतां. उतां. नमिनाथ भगवानना पांचे उदयाणुके अश्विनी नक्षत्रमां थयां उतां. नमिनाथना पांचे उदयाणुके चित्रा नक्षत्रमां थयां उतां.

अश्विनी । नेमिनाथस्य चित्रा । पार्श्वनाथस्य विशाखाः । तथा-वीरः=अन्तिमतीर्थं करो वद्धमानस्वामी पञ्चक हस्तोत्तरः-हस्तोपलक्षिता उत्तराः-हस्तोत्तराः, उत्तराफाल्गुन्य इत्यर्थः, च्यवनादि पञ्चकल्याणकत्वेन पञ्चकाः=पञ्चसख्यका हस्तोत्तरा यस्य स तथाऽभवत् । भगवतो महावीरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकमभिलापपूर्वकमाह-‘समणे भगवं’ इत्यादिना । श्रमणो भगवान् महावीरः पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत् । यथा पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्तथाह-‘इत्युत्तरार्हि’ इत्यादिना । हस्तोत्तरासुच्युतः, च्युत्वा गर्भेऽवतीर्णः १, तस्मिन्नेव नक्षत्रे गर्भात्=ब्राह्मणीगर्भात् गर्भान्तरं=क्षत्रियागर्भं संहृतः=नीतः शक्राज्ञया हरिणैगमेषिदेवेन २। एवं जन्म ३ प्रव्रज्या ४ केवलज्ञानप्राप्तिषु ५ हस्तोत्तरा बोध्याः । निर्वाणं तु भगवतः स्वाति नक्षत्रे कार्तिरामावस्यां बोध्यम् ॥ सू० २४ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललितकला-पालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक - श्रीशाहूछत्र-पति कोल्हापुरराजप्रदत्त ‘जैनशास्त्राचार्य’ पद्मभूषित-कोल्हापुर-राजगुरु बालब्रह्मचारी-जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री - घासीलालव्रतिविरचितायां ‘स्थानाङ्गसूत्रस्य’ सुधाख्यायां व्याख्ययां पञ्चमस्थानस्य प्रथमोद्देशः सम्पूर्णः ॥ ५-१ ॥

हुए हैं । नेमिनाथके चित्रा नक्षत्रमें पांचों कल्याणक हुए हैं । पार्श्वनाथके पांचों कल्याणक विशाखा नक्षत्रमें हुए हैं, तथा अन्तिम तीर्थंकर वीर प्रभुके पांचों कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें हुए हैं । “समणे भगवं महावीरे” इत्यादि सूत्रका अर्थ स्पष्ट है-यही सब विषय इन गाथाओं द्वारा प्रकट किया गया है-“पउमप्पहस्स चित्ता” इत्यादि ।

वीरनाथ भगवान् हस्तोत्तरा नक्षत्रमें ही-उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रमें ही चक्कर गर्भमें आये, उसी नक्षत्रमें वे ब्राह्मणीके गर्भसे क्षत्रियाणीके गर्भमें रखे गये यह कार्य इन्द्रकी आज्ञासे हरिणैगमेषी देवने किया भगवान्के

पार्श्वनाथ लगवानना पांचे कल्याणके विशाखा नक्षत्रमां तथा इतां तथा अन्तिम तीर्थंकर महावीर प्रभुना पांचे कल्याणके उत्तरा कल्याणी नक्षत्रमां तथा इतां. ओ ७ वात नीचेनी गाथाओ द्वारा स्पष्ट करवामां आवी छे-“समणे भगवं महावीरे” इत्यादि. आ गाथाओने अर्थ सुगम छे.

“पउमप्पहस्स चित्ता” इत्यादि-

वीरनाथ लगवान इस्तोत्तरा नक्षत्रमां ७-उत्तरा कल्याणी नक्षत्रमां ७ व्यतीने माताना गर्भमां आव्या इता. ओ ७ नक्षत्रमां तेभने प्राज्ञाणीना गर्भमांथी त्रिशला क्षत्रियाणीना गर्भमां भूकवामां आव्या इता. ते कार्ये इन्द्रनी आज्ञाथी हरिणैगमेषी देवे कथुं इतुं. लगवानना ७-७-समये, लग-स्था०-७८

जन्मके समय प्रव्रज्याके समय केवलज्ञान प्राप्तिके समय हस्तोत्तरा
नक्षत्र था; परन्तु निर्वाण प्राप्तिके समय स्वाति नक्षत्र था कार्तिक वदी
अमावास्याके दिन इन्होंने मुक्ति प्राप्त की है ॥सू० २४॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानागसूत्र"
की सुधा नामकी व्याख्याके पांचवें स्थानका पहला उद्देशा
समाप्त ॥ ५-१ ॥

वाननी प्रव्रज्या समये अने भगवानने ज्यारे डैवगज्ञान प्राप्त थयुं त्यारे
पणु हुस्तोत्तरा नक्षत्र न थाअतुं हुतुं. पणु तेभना निर्वाणुकाणे स्वाति नक्षत्र
थाअतुं हुतुं कार्तिक वदी अमावास्याने द्विसे तेभणु निर्वाणु प्राप्त
कथुं हुतुं. ॥ सू. २४ ॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित "स्थानागसूत्र" की सुधा
नामकी व्याख्याना पांचवा स्थानने।
प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ ५-१

